॥ श्री ॥

# अमृतसागर

भाषामें.

श्रीमन्महाराजाधिराजराजेंद्रमहाराजाजी

श्री १०८ श्री श्रीसवाई प्रतापसिंहजी महाराजविरचित.

---

जिसका

उल्था सरल हिंदी भाषामें

श्रीयुत ज्योतिर्विद् श्रीबलदेवजीके पुत्र

श्री पंडित ज्ञारसरामजीनें किया,

सो

पंडित श्रीधरके पुत्र किसनलाल

गौड ब्राह्मण सलेमाबादवालेने

निर्णयसागर छापखानेमें छापके प्रसिद्ध किया.

---

संवत् १९४९. सन १८९२.

॥ श्री ॥

# ॥ अथ भूमिका ॥

विदित हो कि श्रीमद्राजाधिराज जयपुराधीश श्री १२१ श्री सवाई प्रतापसिंहजी महाराजने सर्व प्रजाहितार्थ सद्वैद्योंद्वारा अनेकानेक वैद्यक ग्रन्थानुसार प्रतापसागर (जो कि "अमृतसागर" नामसे लोकमें प्रसिद्ध है) अत्युत्तम वैद्यक ग्रन्थ बनवाके प्रसिद्ध किया; परन्तु उक्त ग्रन्थकी मारवाडी भाषा होनेके कारण सर्व साधारण पुरुषोंको ग्रन्थाशय यथार्थरूपसे ज्ञात नहीं होता था; अतएव हमारे मित्रवर श्रीयुत पण्डित कृष्णलालजीकी आज्ञानुसार इस ग्रंथका शुद्ध नागरी भाषानुवाद किया गया; अब यह ग्रन्थ पूर्व रूपकही नहीं बरन इसका समग्र कलेवरही विपर्यय होकर नूतन ढंगपर निर्मित किया गया है, और इसके अवयवोंकी शोभाभी (१ उत्पत्तिखंड, २ विचारखंड, ३ निदानखंड, ४ चिकित्साखंड) चार खंडोंसे अद्भुत प्रकारकीही हो गई है और ये खण्डभी आयुर्वेदीय अनेकार्ष ग्रन्थोंके सारभूत कई नूतन विषयोंसे इस डौलपर विभूषित किये गये हैं कि जिनके अवलोकनसे ग्रन्थदर्शक लोगोंका वांछिताशय तत्क्षण पूर्ण हो; तथा खंड खंडकी प्रत्येक तरङ्गके आदिमें ऐसे ऐसे सुन्दर श्लोक दिये हैं कि जिनसे वे मनोहर तरङ्गेंभी लहलहा रही हैं.

विशेषता— प्रत्येक खंडका वृतान्त तत्तत् खंडकी सूचनासे विदित होगा, समस्त विद्वान तथा वैद्य महाशयोंसे प्रार्थना है कि इस ग्रंथमें कुछ उचितानुचित हुआ हो तो क्षमा करें "प्राज्ञेषु लेखेनालमेतावता."

भवदीय आरोग्याकांक्षी,

**पं० ज्ञारसरामशर्म्मा वैद्य.**

**कामठी.**

ज्येष्ठ शुक्ल १३ संवत् १९४९ विक्रमाब्दे.

# ॥ अथ नूतनामृतसागरस्यानुक्रमणिका ॥

## तत्रोत्पत्तिखण्डः.



इति उत्पत्तिखंडः.

## अथ विचारखड

# अनुक्रमणिका.

श्रीधन्वंतरी महाराजका दवाखाना।

इस्का वर्णन ११५ पृष्ठमें देखो॰

## मूढगर्भप्रदर्शकचित्र.

वालुका यंत्र इसकी क्रिया पृष्ठ ३५ मे देखो-
दोलायंत्र इसकी क्रिया पृष्ठ ३६ में देखो
स्वेदनयंत्र इसकी क्रिया पृष्ठ ३६ मे देखो-
विद्याधर यंत्र इसकी क्रिया पृष्ठ ३७ में देखो-
डमरूयंत्र इस्की क्रिया पृष्ठ ३७ में देखो.
भूधरयंत्र इस्की क्रिया पृष्ठ ३७ में देखो.
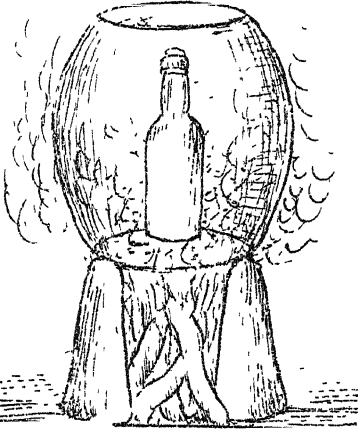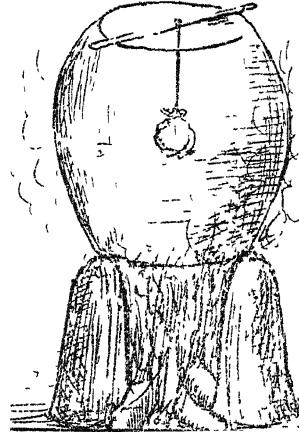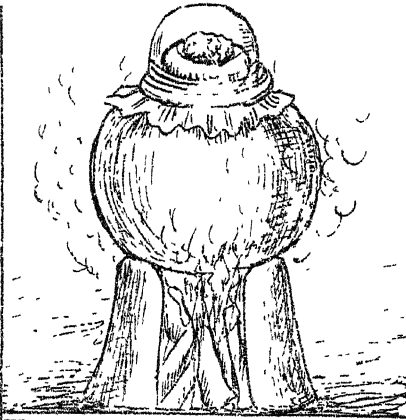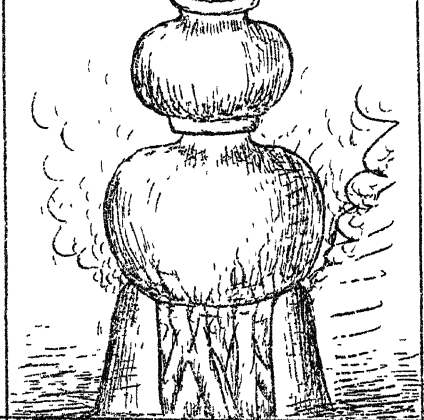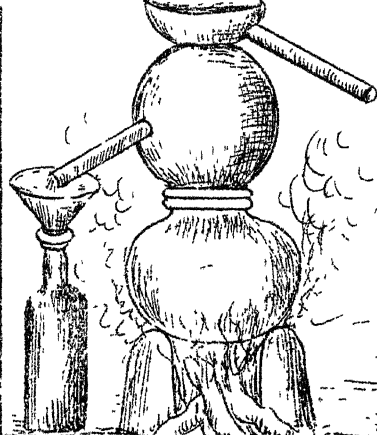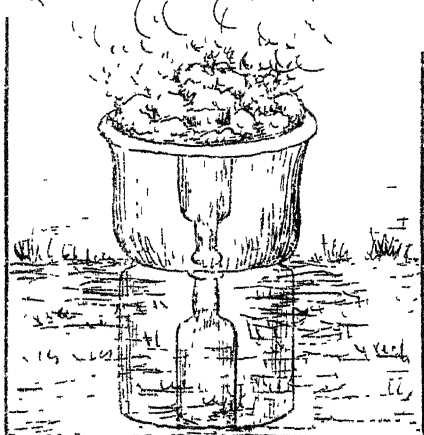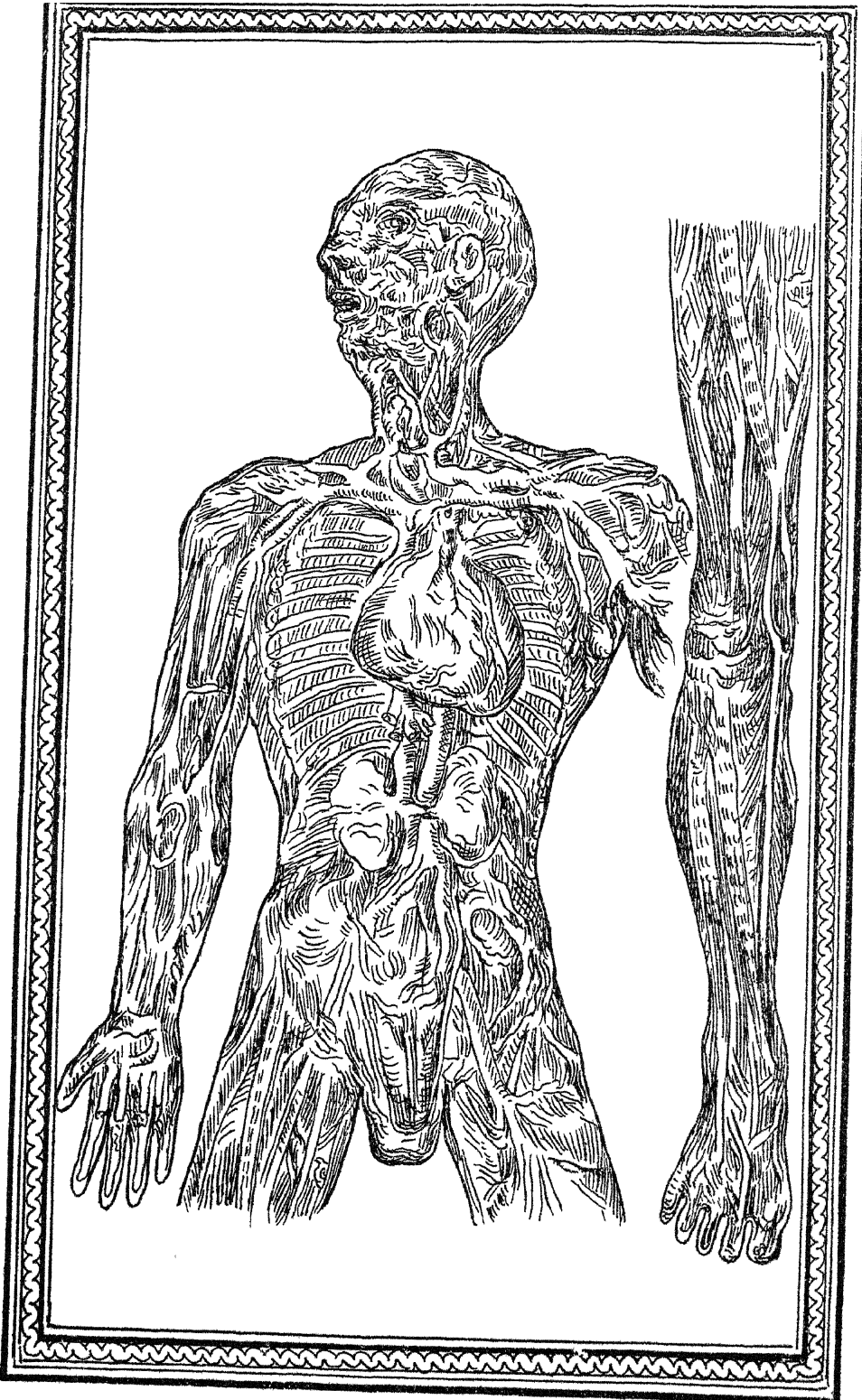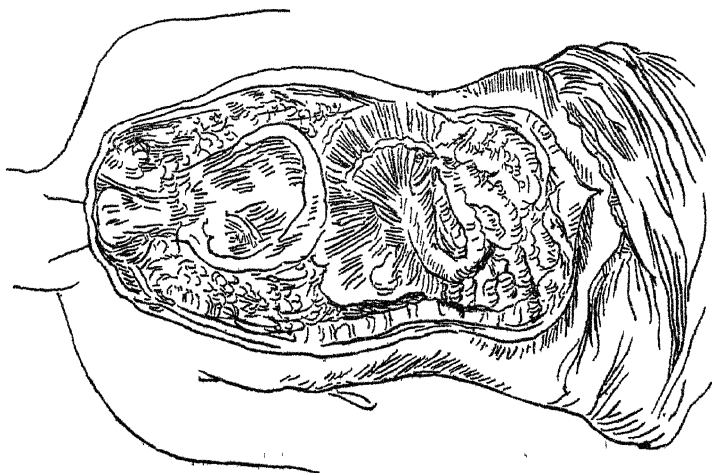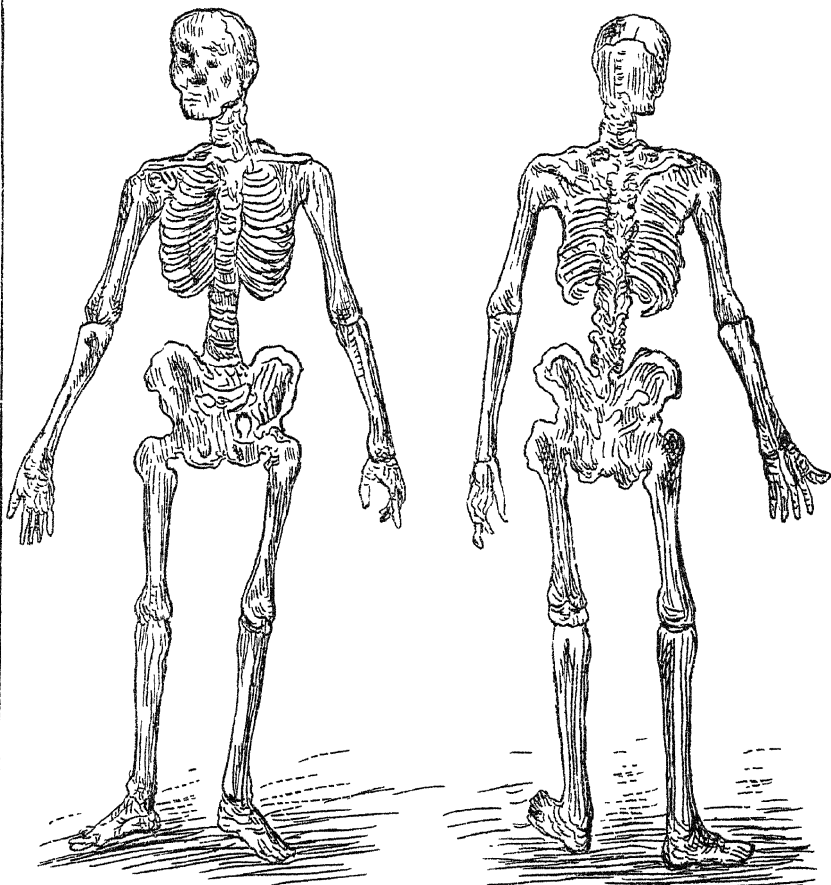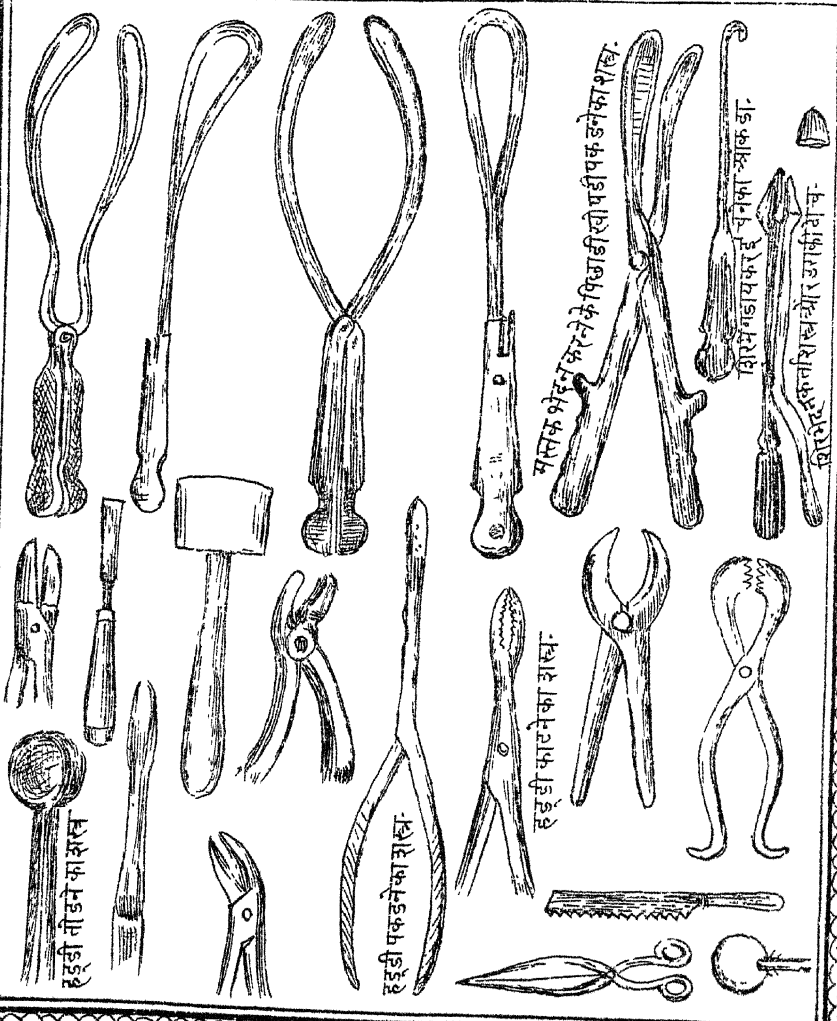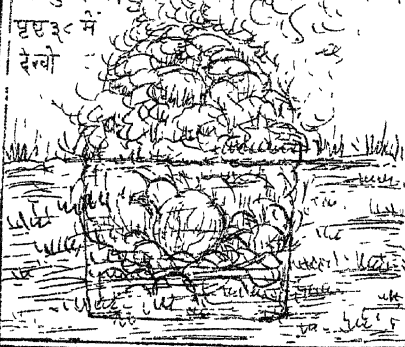
) निकालने तथा चीर फाडके काममें आने योग्य नस्तर( आवजार)

ॐम्

नमो ब्रह्मप्रजापत्यश्विबलभिद्धन्वन्तरिसुश्रुतप्रभृतिभ्यः ।

# अथ नूत

—

तत्रोत्पत्तिखंडः १.

गजमुखममरप्रवरं सिद्धिकरं विघ्नहर्तारम् ॥
गुरुमवगमनयनप्रदमिष्टकरीमिष्टदेवतां वंदे ॥ १ ॥
आयुर्वेदागमनं क्रमेण येनाभवद्भूमौ ।
प्रथमं लिखामि तमहं नानातंत्राणि संदृश्य ॥ २ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ—देवतोंमें श्रेष्ठ, सिद्धिदेनेहारे, विघ्नोंको दूर करनेहारे, जो गजानन; तथा वाञ्छाके सिद्ध करनेहारे जो इष्टदेवता; और ज्ञानदाता जो गुरु हैं; तिनको मैं नमस्कार करताहूं ॥ १ ॥ इस पृथ्वीपर जिसप्रकारसे आयुर्वेदका आगमन हुआ उसे मैं कई ग्रन्थोंको देखके इस ग्रंथके आदिमें यथाक्रमसे लिखताहूं ॥ २ ॥

आयुर्वेदस्य लक्षणमाह—

आयुर्हिताहितं व्याधेर्निदानं शमनं तथा ।
विद्यते यत्र विद्वद्भिः स आयुर्वेद उच्यते ॥ ३ ॥

आयुर्वेदस्य निरुक्तिमाह—

अनेन पुरुषो यस्मादायुर्विन्दति वेति च ॥
तस्मान्मुनिवरैरेष आयुर्वेद इति स्मृतः ॥४॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ—जिसमें आयु, हित, अहित, व्याधि, निदान, और शमन इत्यादि हों उसे आयुर्वेद कहते हैं ॥ ३ ॥ शरीर और जीवका जो संयोग हो उसे जीवन कहते हैं उस जीवनयुक्त जो समय उसे आयु कहते हैं और शरीरसे जीवका वियोग होना इसे मृत्यु कहते हैं जिसके द्वारा पुरुष

आयुको पूर्णरूपसे प्राप्त हो तथा दूसरेकी आयुकोभी जानलेवे उसे मुनिराज आयुर्वेद कहते हैं क्योंकि इसकेद्वारा सेवन सेवन अयोग्य पदार्थोंके गुणकर्मका ज्ञान होनेसे सेवन योग्यका सेवन और सेवन अयोग्यका त्याग होता है जिससे आयु निश्चय किईजाती है ॥ ४ ॥

तत्रादौ ब्रह्मणः प्रादुर्भावः ।

विधाताथर्वसर्वस्वमायुर्वेदं प्रकाशयन् ॥ स्वनाम्ना संहितां चक्रे लक्षश्लोकमयीमृजुम् ॥ ५ ॥ ततः प्रजापतिं दक्षं दक्षं सकलकर्मसु ॥ विधिर्धीनीरधिं साङ्गमायुर्वेदमुपादिशत् ॥६॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ–प्रथम ब्रह्माजीनें अपनी प्रजाके हितार्थ आयुर्वेदको प्रकाश करनेकेलिये एक लाख श्लोकोंमें ब्रह्मसंहिता बनाकर सर्व कार्यकुशल बुद्धिसागर अपने पुत्र दक्षको पढाई ॥ ५ ॥ ६ ॥

अथ दक्षप्रादुर्भावः ।

अथ दक्षः क्रियादक्षः स्ववैद्यौ वेदमायुषः ।
वेदयामास विद्वांसौ सूर्यांशौ सुरसत्तमौ ॥ ७ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ–तदूपश्चात् क्रियाकुशल दक्षने आयुर्वेद सूर्यपुत्र देवतोंके वैद्य अश्विनीकुमारजीको पढाया ॥ ७ ॥

अथाश्विनीकुमारप्रादुर्भावः ।

दक्षादधीत्य दस्रौ वितनुतः संहितां स्वीयाम् । सकलचिकित्सकलोकप्रतिपत्तिविवृद्धये धन्याम् ॥ ८ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ– अश्विनीकुमारने दक्षसे आयुर्वेद पढकर संसारमें आयुर्वेदकी वृद्धिके हेतु अपने नामकी ( अश्विनीकुमार ) संहिता बनाई और भैरवसे कटेहुए ब्रह्माजीके शिरको जोडा तब यज्ञके विभागी हुए, देवदानव संग्राममें जिन देवतोंके अंगभंग होगयेथे उन्हें पूर्ववत् किये, इंद्रकी भुजास्तम्भको आरोग्य किई, चन्द्रमाका क्षयी रोग दूर किया, पूषादेवताके दांत जोडे; भगदेवताके नेत्र सुधारे; और वृद्धच्यवन ऋषिको तरुण बनाया इत्यादि अनेक कार्य करके देवपूज्य और वैद्यशिरोमणि हुए ॥

अथेन्द्रप्रादुर्भावः ।

नासत्यौ सत्यसन्धेन शक्रेण किल याचितौ ॥
आयुर्वेदं तथाधीतं ददतुः शतमन्यवे ॥ ९ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ– इंद्रने अश्विनीकुमारोंका पूर्वोक्त कर्म देखके उनसे आयुर्वेदकेलिये याचना किई तब उनने इंद्रको आयुर्वेद पढाया और इंद्रने अत्रि आदि अनेक मुनियोंको पढाया ॥ ९ ॥

अथात्रेयप्रादुर्भावः ।

आयुर्वेदोपदेशं मे कुरु कारुण्यतो नृणाम् ।
तथेत्युक्त्वा सहस्राक्षोऽध्यापयामास तं मुनिम् ॥१०॥ भावप्रकाशः

भाषार्थ–किसी समय आत्रेयमुनि प्राणियोंको रोगयुक्त देखकर उनके रोगनिवृत्तिके हेतु इंद्रलोकको गये. इंद्रने ऋषिकी पूजा कर आगमनका कारण पूछा. उनने सब कारण ( वृत्तांत ) कहा और आयुर्वेद पढनेका आशय दर्शाया तब इंद्रने उन्हें आयुर्वेद पढाया तब मुनिने पढके अपने नामकी ( आत्रेय ) संहिता बनायकर अग्निवेश, भेड, जातुकर्ण, पराशर, क्षीरपाणी और हारीत इन ऋषियोंको पढाई तब इन सबोंने अपने अपने नामकी पृथक् पृथक् संहिता बनाई ॥ १० ॥

अथ भारद्वाजप्रादुर्भावः ।

तमुवाच मुनिं साङ्गमायुर्वेदं शतक्रतुः ।
जीवेद्वर्षसहस्राणि देही नीरुक् निशम्य यम् ॥ ११ ॥ भा० प्र०

भाषार्थ–एक समय हिमाचलके समीप सब देवता और मुनि एकत्र हुए जिनमें सबसे प्रथम भारद्वाजजी आये तदनंतर अंगिरा, गर्ग, मरीचि, भृगु, भार्गव, पौलस्त्य, अगस्ति, असित, वसिष्ठ, पराशर, हारीत, गौतम, सांख्य, मैत्रेय, च्यवन, जमदग्नि, गार्ग्य, काश्यप, कश्यप, नारद, वामदेव, मार्कंडेय, कपिंजल, शांडिल्य, कौंडिन्य, शाकुनी, शौनक, आश्वलायन, सांकृत्य, विश्वामित्र, परीक्षित, देवल, गालव, धौम्य, काम्य, कात्यायन, बैज, वाप, कुशिक, बादरायण, हिरण्याक्ष, लौगाक्षी, शरलोमा, गोभिल, वैखा-

नस, और वालखिल्य- इत्यादि ज्ञाननिधी तपस्वी परस्पर कहने लगे कि अर्थ, धर्म, काम, मोक्षका कारण यह कलेवर है यदि यह निरोगी रहे तो सर्व कार्य सिद्ध होते हैं इस लिये हे भारद्वाजजी आप इंद्रसे आयुर्वेद संहिता लाओ तब भारद्वाजजी इंद्रसे आयुर्वेद पढआये और सर्व ऋषिमंडलीमें प्रवृत्त किया उससे द्रव्यगुण कर्मादिको जानके रोगरहित होके आयुर्वेदको लोकमें प्रसिद्ध किया ॥ ११ ॥

अथ चरकप्रादुर्भावः।

**यदा मत्स्यावतारेण हरिणा वेद उद्धृतः ॥ तदा शेषश्च तत्रैव वेदं साङ्गमवाप्तवान् ॥ १२ ॥ अथर्वान्तर्गतं सम्यगायुर्वेदं प्रलब्धवान्। एकदा स महीवृत्तं द्रष्टुं चर इवागतः ॥ १३ ॥ तस्माच्चरकनामासौ विख्यातः क्षितिमण्डले ॥** भा० प्र०

भाषार्थ—जब नारायणने मत्स्यावतार लेकर वेदोंको निकाला उस समय शेषजी वेद वेदाङ्गोंको प्राप्त होकर अर्थवणवेदके अंगभूत आयुर्वेदको प्राप्त हुए और पृथ्वीमें गुप्त रूपसे विचरते हुए लोगोंको रोगग्रस्त देखके मुनिपुत्रका रूप बनाय चरके सदृश विचरनेलगे सो चरकाचार्य प्रसिद्ध हुए और रोगियोंको आरोग्य करते हुए चरकसंहिता बनाई ॥ १२ ॥ १३ ॥

अथ धन्वन्तरिप्रादुर्भावः।

**अधीत्य चायुषो वेदमिन्द्राद्धन्वन्तरिः पुरा ॥ १४॥ आगत्य पृथवीं काश्यां जातो बाहुजवेश्मनि॥नाम्ना तु सोऽभवत्ख्यातो दिवोदास इति क्षितौ ॥ १५ ॥** भावप्रकाशः

भाषार्थ—एकवार देवराजकी दृष्टि भूलोकपर पडी सो बहुतसे मनुष्य रोगसे पीडित दृष्टि आये तब इंद्रने धन्वंतरिजीसे कहा कि तुम लोकोपकारके हेतु पृथ्वीपर काशीपुरीमें जाओ और काशी नरेश होकर रोगको दूर करनेके हेतु आयुर्वेदका प्रकाश करो तब धन्वंतरिजी इंद्रसे आयुर्वेद पढकर काशीमें जन्म लेकर दिवोदास नामक राजा हुए लोकहितार्थ अपने नामकी ( धन्वंतरि ) संहिता बनाकर प्रसिद्ध किई ॥ १४ ॥ १५ ॥

अथ सुश्रुतप्रादुर्भावः ।

पितुर्वचनमाकर्ण्य सुश्रुतः काशिकां गतः । तेन सार्द्धं समध्येतुं मुनिमनु शतं ययौ ॥ १६ ॥ आयुर्वेदं भवानस्मानध्यापयतुयत्नतः । अंगीकृत्य वचस्तेषां नृपतिस्तानुपादिशत् ॥ १७ ॥ प्रथमं सुश्रुतस्तेषु स्वतंत्रं कृतवान् स्फुटम् । सुश्रुतस्य सखायोऽपि पृथक् तंत्राणि तेनिरे ॥ १८ ॥ भा० प्र०

भाषार्थ–एक समय विश्वामित्र ऋषिने अपनी ज्ञानदृष्टिसे देखा की धन्वंतरिका अवतार काशीमें दिवोदास राजा है तब अपने पुत्र सुश्रुतको आज्ञा दिई कि तुम काशीमें जाओ और दिवोदास राजासे आयुर्वेद पढकर लोकहित करो क्योंकि इसके समान यज्ञादि कोई सत्कर्म पुण्यप्रद नहीं है. पिताकी आज्ञानुसार सुश्रुत काशी आये और उनके साथ पढनेके लिये १०० मुनि औरभी आये और दिवोदास राजासे अपने आनेका कारण प्रकाशित किया तब दिवोदास राजाने सुश्रुतादि मुनियोंको आयुर्वेद पढाया तब सबसे प्रथम सुश्रुतने अपने नामकी ( सुश्रुत )संहिता बनाई और उनके पश्चात् अन्यान्य ऋषियोंनेभी बनाई इस प्रकार आयुर्वेदवक्ता ऋषियोंका प्रादुर्भाव विस्तीर्ण रूपसे भावप्रकाशके पूर्व खंडमें लिखा है ॥ १६ ॥ १७ ॥ १८ ॥

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखंडे आयुर्वेदप्रवक्तृणां प्रादुर्भावनिरूपणे प्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

अथ सृष्टिक्रमः ।

आत्मा ज्योतिश्चिदानंदरूपो नित्यश्च निस्पृहः ॥
निर्गुणः प्रकृतेर्योगात् सगुणः कुरुते जगत् ॥ १ ॥

भाषार्थ–ज्योतिःस्वरूप, चिदानंद, नित्य, निस्पृह, निर्गुण, जो ब्रह्म परमात्मा सो प्रकृतिके योगसे सगुण होकर जगतको उत्पन्न करता है. अब हम अमृतसागरके २५ वे तरंगमें लिखे अनुसार "सृष्टिक्रम" प्रारं

भ करते हैं क्योंकि भावप्रकाशादि वैद्यक ग्रंथोंमें उक्तविषय प्रथमही रक्खा गया है इसलिये इस नवीन अमृतसागरमें सृष्टिक्रम पूर्वही होना चाहिये. उस परमेश्वरकी प्रकृति अर्थात् मायाने इस अनित्य संसारको "नटकौतुक" सदृश बनाकर इच्छारूप महत्तत्त्वको बनाया उस महत्तत्त्वसे अहंकार उत्पन्न हुआ सो ३ प्रकारका है (अर्थात्—१ रजोगुण २ सतोगुण ३ तमोगुण) पश्चात् तमोगुणरूपी अहंकारने सतोगुण और रजोगुणसे मिलकर १० इंद्रियां और मनको उत्पन्न किया.

वे ये हैं ज्ञानेंद्रियां—१ कर्ण २ त्वचा ३ नेत्र ४ जिव्हा ५ नासिका.

कर्मेंद्रियां— १ वाणी २ हस्त ३ पद ४ लिंग ५ गुदा.

तमोगुणने अधिक सतोगुणयुक्त अहंकारसे पंचतन्मात्रा (१ शब्द २ स्पर्श ३ रूप ४ रस ५ गंध) उत्पन्न किईं.

तन्मात्रासे पंचमहाभूत (१ शब्दसे आकाश २ स्पर्शसे वायु ३ रूपसे अग्नि ४ रससे जल ५ गंधसे पृथ्वी) उत्पन्न हुए.

सो १ कानका विषय शब्द २ त्वचाका स्पर्श ३ नेत्रका रूप ४ जिव्हाका स्वाद और ५ नासिकाका गंध ये ज्ञानेंद्रियके ५ विषय हैं.

इसी प्रकार १ वाणीका भाषण २ हस्तका ग्रहण ३ पदका चलन ४ लिंगका मैथुन और ५ गुदाका मलत्याग ये कर्मेंद्रियके विषय जानो.

१ प्रधान २ प्रकृति ३ शक्ति ४ नित्या और ५ विकृति ये प्रकृतिके नाम हैं सो ये प्रकृति शिवसे मिलीहुई रहती हैं.

उक्तक्रमानुसार ये २४ तत्त्व उत्पन्न हुए (अर्थात् १ महत्तत्त्व १ अहंकार ५ तन्मात्रा १ प्रकृति १० इंद्रिय १ मन ५ महाभूत) और इतने मिलके १ शरीररूपी घर बनाया. तब उस घरमें जीवात्मा शुभाशुभ कर्मोंके स्वाधीन होके प्रवेश हुआ और मनरूपी दूतके वशमें हो निवास करने लगा इस जीवयुक्त शरीरको बुद्धिवान् लोग देही कहते हैं.

यह देह पापपुन्य, सुखदुःखोंसे व्याप्त होकर और मनसे जीवात्मा बंधकर स्वकृतकर्मबंधनोंसें बंधता है और काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहं-

कार दशों इंद्रिया और बुद्धि ये सब अज्ञानदशामें जीवात्माके बंधनकेलिये हैं और जीवात्मा आत्मज्ञानी होनेसे मुक्त होता है ॥

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखंडे सृष्टिक्रमो नाम द्वितीयस्तरंगः ॥

अथ गर्भोत्पत्तिक्रमः ।

द्वादशाद्वत्सरा दूर्ध्वमा पंचाशत्समः स्त्रियः ॥
मासि मासि भगद्वारा प्रकृत्यैवार्तवं स्त्रवेत् ॥ १ ॥
आर्तवस्त्रावदिवसादृतुः षोडश रात्रयः ॥
गर्भग्रहणयोग्यस्तु स एव समयः स्मृतः ॥ २ ॥ भा० प्र०

भाषार्थ—१२वर्षसे उपरांत ५० वर्षपर्यंत स्त्रियोंकी योनिद्वारा प्रतिमास स्वाभाविक रजोधर्म प्राप्त होता है. रजोधर्मके दिनसे सोलह रात्रितक स्त्रियोंको गर्भधारण योग्य समय है उनमें प्रथमकी ३ रात्रि छोडके शेष रात्रियोंमें ऋतुदान दे ॥

इसके आगे अमृतसागरके २५वे तरंगोक्त गर्भोत्पत्ति लिखते हैं ॥

आहार कियाहुआ वायुकी प्रेरणासे आमाशयमें पहुंचता है, फिर वह आहार मधुरताको प्राप्त होता है, फिर वही आहार पाचक पित्तके प्रभावसे कुछ पककर खट्टा होजाता है, नंतर नाभिस्थित समान वायुसे प्रेरित होके छठवीं ग्रहणी कलामें प्राप्त होता है, तदनंतर वहां पकके कोठेकी अग्निसे कडुवा होता है फिर कोठेकी अग्निसे पकके उत्तम रसरूप होजाता है. यदि उत्तम प्रकारसे न पककर कच्चा रहजाय तो वही आहार आव बन जाता है यदि कोठेकी अग्नि बलाढ्य हो तो आहारका रस मधुर होकर चिकना होता है यही भली भांति पकाहुआ रस इस शरीरकी सर्व धातुओंको पुष्टकरके अमृतकी तुल्यताको प्राप्त होता है और उस आहारका रस यदि मंदाग्निसे दग्ध होजावे तो उदरमें कडुवा अथवा खट्टा होके विषरूप होजाता है और शरीरमें रोगसमूहको उत्पन्न करता है ॥

आहारका रस सारयुक्त होनेसे बलकारक और असार होनेसे द्रवमल अर्थात् पतला होजाता है सो वह ठीक नहीं और पिये हुए जलका

सार तो वायु नसोंद्वारा शरीरमें पहुंचा देता है और जलके असारको उदरमें प्राप्तकरके मूत्र बनाता है वही लिंगद्वारा बाहर निकलता है और जो आहारका कीट अर्थात् मल होता है वह पक्वाशयमें रहता है सो गुदाके अपानवायुके बलसें नीचेको आकर्षण होके गुदाद्वारसें बाहर निकलता है और जोआहारका रस है सो नाभिके समानवायुके बलसे प्रेरित होके मनुष्यके हृदयमें प्राप्त होता है और वहां पित्तसे पककर रुधिर बन जाता है जो सब शरीरमात्रमें रहता है इसीका जीवको पूर्णाधार है रुधिर चिकना, भारी, बलवान, और मिठा होता है यह रुधिर दग्ध होनेसे पित्तके समान हो जाता है एवं एक एक धातु सवाचार चार दिनमें उत्पन्न होती है इस प्रकार भोजन किये हुए आहारका एक महिनेमें मनुष्योंको वीर्य उत्पन्न होता है और इसी प्रकार स्त्रियोंको एक मासमें स्त्रीधर्मद्वारा रज ( रक्त ) होता है ॥

गर्भाधानके समयमें स्त्री और पुरुषके संयोगसे स्त्रीका शुद्ध रुधिर और पुरुषका शुद्ध वीर्य दोनों मिलके स्त्रीके गर्भाशयमें गर्भ उत्पन्न करते हैं तब वह गर्भ अंगउपांग युक्त होके नवमास पश्चात् प्रसूतिवायुकी प्रेरणासे बाहर निकलता है तब बालक उत्पन्न हुआ ऐसा कहते हैं, यदि गर्भाधानके समय स्त्रीका रज अधिक हो तो कन्या और पुरुषका वीर्य अधिक हो तो पुत्र यदि दोनोंका समान होतो नपुंसक बालक उत्पन्न हो अथवा गर्भ न रहे ऐसा आयुर्वेदका नियम है तथापि ईश्वरकी लीला अपार है इस लिये परमात्मा जो करे सो हो ॥

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखंडे गर्भोत्पत्तिक्रमनिरूपणे तृतियस्तरंगः ॥ ३ ॥

### अथ शारीरकविधानम् ।

कालेन वर्धितो गर्भो यद्यङ्गोपाङ्गसंयुतः ॥
भवेत्तदा स मुनिभिः शरीरीति निगद्यते ॥ १ ॥

भाषार्थ—जो गर्भ समयानुसार वढता हुआ अंगउपाङ्गसंयुक्त होके

प्रगट होता है उसे शरीर कहते हैं और इस शरीरमें जो जो वस्तु हैं उनका वर्णन किया जावे उसे शारीरक विधान कहते हैं सो अमृतसागरके २५ वें तरंगमें लिखेअनुसार हम यहां लिखते हैं क्योंकि जबतक शारीरकको वैद्य पूर्ण न जानेगा तो निदान और चिकित्सा क्या करेगा इस लिये निदान आदिके पूर्व शारीरक लिखना योग्य है.

इस शरीरमें इतनी वस्तुएँ हैः—

७ कला ७ आशय ७ धातु ७ उपधातु ७ धातुओंके मल ७ त्वचा ३ दोष ( इस शरीरकी अस्थि हड्डी आदिको बांधनेके लिये ) ८०० नसे २१० हड्डियां ( कोई कोई आचार्य ३०० भी लिखते हैं ) १०७ मर्मस्थान ७०० नसें ( रसको सर्वत्र पहुंचानेके लिये ) २४ धमनी नाडी ५०० मांस पिंडिया ( स्त्रियोंके ५२० होती हैं ) १६ कंडरा ( सबसे बडी नाडियां जो कि शरीरमें सर्वत्र व्याप्त हैं ) मनुष्यके शरीरमें १० छिद्रपर स्त्रियोंके १२ होते हैं.

अब शास्त्रानुसार हृदयका स्वरूप यथाक्रमसे स्पष्टकर दिखाते हैंः—

धातु और आशयके बीचमें जो झिल्ली है ( जिसमें बालक रहता है ) उसे कला कहते हैं; रुधिर मांस और मेद इन तीनोंको पृथक् पृथक् रखनेके लिये तीनोंके बीचमें एक एक झिल्ली ( कला ) है और यकृत् तथा प्लीहाके बीचमें एक झिल्ली है एवं अतडियोंके बीचमें १ झिल्ली हैं. १ झिल्ली जल तथा अग्निको धारणकर रही है. १ झिल्ली (कला) वीर्यको धारण किये है.— एवं ७ कला हैं.

अब सात आशय दर्शाते हैं.—

आशय नाम स्थानका है, हृदयमें कफका स्थान, उसके नीचे आम- ( आंव )का स्थान. नाभिके ऊपर वाई और अग्निका स्थान. अग्निके ऊपर तिल है. नाभिके नीचे पवनका स्थान. उसके नीचे पेडूमें मलका स्थान और उससे मिलताही हुआ कुछ नीचे मूत्रका स्थान. ( जिसे बस्ती कहते हैं ) हृदयसे कुछ ऊपर जीव और रुधिरका स्थान है. ये सात आशय पुरुष

स्त्रियोंके समान ही रहते हैं परंतु इनसे व्यतिरिक्त स्त्रियोंके (१ गर्भस्थान, २ दुग्धस्थान, ३ स्तन ) ये ३ आशय अधिक हैं.

अब ७ धातुओंको दर्शाते हैं— १ रस २ रक्त ३ मांस ४ मेद ५ हड्डी ६ मज्जा और ७ वीर्य ये सात धातु हैं ये सातों धातुसें जिस प्रकार उत्पन्न होती है सो तीसरे तरंगमें लिखचुके हैं. अब उपधातुओंके विषयमें लिखते हैं.

१ जिह्वाका मल २ नेत्रोंका मल ३ गालोंका मल ये तीन रसकी उपधातु हैं. २ रंजन ( अर्थात् पित्त ) रक्तकी उपधातु है. ३ कानोंका मल मांसकी उपधातु है. ४ जिह्वा दांत कांख और लिंगेंद्रियसे जो मल निकलता है सो मेदकी उपधातु है. ५ २० नख हाडोंकी उपधातु हैं. ६ नेत्रोंका कीचर ( चींपड ) मज्जाकी उपधातु है. ७ मुखपर जो चिकनापन तथा कीलें निकलती हैं सो वीर्यकी उपधातु जानो. ये सात उपधातु हैं तथा स्त्रियोंके स्तनोंमें " दूध " और " स्त्रीधर्म " ये दो धातु पुरुषोंसे अधिक हैं सो समय समयपरही होती हैं और समयपरही मिट जाती हैं

सातों धातुओंसे और भी वस्तुएं उत्पन्न होती हैं. जैसे— १ शुद्ध मांससे शरीरमें घृत उत्पन्न होता है ( जिसे "वसा" कहते हैं ) २ पसीना ३ दांत ४ केश ५ ओज ये सब सप्त धातुओंसे ही उत्पन्न होते हैं. ओज सब शरीरमें रहता है. चिकना, शीतल, और बल तथा पुष्टिकारक है.

अब सात त्वचाको दर्शाते हैं:—

पहिली त्वचा अवभासिनी नामकी है यह चिकनी है और विभूति नामका स्थान है। दूसरी त्वचा लाल है जिसमें तिल नील आदि उत्पन्न होते हैं. तीसरी त्वचा श्वेत है जिसमें चर्मदल नामक रोग उत्पन्न होता है. चौथी त्वचा ( ताम्रवर्ण ) तांबेके सदृश रंगवाली उसमें श्वेत कुष्ठ उत्पन्न होता है. पांचवी त्वचा छेदनी कहाती है जिसमें सब प्रकारके कुष्ठ उत्पन्न होते हैं. छटवी त्वचा रोहणी कहाती है उसमें गंडमाला. फोडे आदि रोग उत्पन्न होते हैं। सातवीं त्वचा स्थूला कहाती है जिसमें विद्रधी रोग उत्पन्न होता है. इन सातों त्वचाओंकी मुटाई यव प्रमाण है.

अब ३ दोष लिखते हैं:-

१ वात २ पित्त ३ कफ ये तीन दोष हैं, और कोई कोई इन्हें मलभी कहते हैं. इन तीनोंमें वायु प्रबल है. पित्त कफ पंगु हैं, इसलिये वायु सब वस्तुओंका विभाग कर नसोंद्वारा सर्वत्र शरीरमें पहुंचा देता है. ये प्रत्येक ( वात पित्त कफ ) पांच पांच प्रकारके हैं और न्यारे न्यारे स्थानमें रहते हैं. प्रथम वायुका स्थानादि बताते हैं.- १ वायु-रजोगुणमयी, शीतल, सूक्षम, हलका और चंचल है. यह मलके स्थानमें, कोठेमें, अग्निस्थानमें, हृदयमें और कंठमें इन पांचों स्थानमें रहती है. ये तो वायुके ५ स्थान हैं. और साधारण प्रकारसे वायु सर्व देहमात्रमेंही रहती है जिसके पांच जुदे जुदे नाम हैं अर्थात् “ १ गुदामें अपानवायु, २ नाभिमें समानवायु, ३ हृदयमें प्राणवायु, ४ कंठमें उदानवायु, और ५ सबशरीरमें व्यानवायु ” रहती है अथ पित्तस्वरूपादि प्रारंभः२ पित्त-उष्ण ( गरम ) पतला, पीला, सतोगुणमयी, कडुआ, तीखा और दग्ध होनेसे खट्टा होता है. अग्निस्थानमें तिलप्रमाण अग्निरूप होके रहता है. त्वचामें रहके कांतिकारक है, नेत्रोंमें रहके सबको दिखलाता है, प्रकृतिमें रहके सबको पाचन कारता है, रसका लोह बनाता है, हृदयमें रहके बुद्धि आदि उत्पन्न करता है, ये पित्तके पांच स्थान हैं. १ पाचक २ भ्राजक ३ रंजक ४ अलोचक ५ साधक ये पांच नाम हैं. कफ स्वरूपादि प्रा० ३ कफ-चिकना, भारी, श्वेत, पिच्छिल, ( चांवलोंके गाढेमांडसमान ) ठंडा तमोगुणयुक्त, मीठा और दग्ध होनेसे कट्टु हो जाता है. यह १ आमाशय, २ मस्तक, ३ कंठ, ४ हृदय और ५ संधियोंमें रहता है ये कफके मुख्य स्थान हैं और साधारण भावसे शरीरमात्रमें रहता हुआ देहको स्थिर और सब अंगोको कोमल करता है. १ क्लेदन, २ स्नेहन, ३ रसन, ४ अवलंबन और ५ श्लेष्मा ये पांच कफके नाम हैं.

स्नायुनसें- शरीरमें मांस, हाड, मेद इनको बांधनेवाली स्नायुनसें कहाती हैं.

मर्मस्थान- जीवको धारण करनेवाले जो स्थान सो मर्मस्थान कहाते हैं ॥

नसें—जो संधि संधिको बांधनेवाली, त्रिदोष और सप्त धातुओंको व-हानेवाली हैं सो नसें कहाती हैं.

धमनीनाडी—जिसके द्वारा रस और पवनका वहाव हो सो धमनी नाडी कहाती है.

मांसपिंडी—इस शरीरमें जो मांसकी गठानें हैं सो मांसपिंडी कहाती हैं.

कंडरा—सबसे बडी नसें जो सब अंगकों फैलने और सिकुडने देती हैं सो कंडरा कहाती हैं.

छिद्र—२ नाकके, २ नेत्रके, २ कानके, १ मुख, १ लिंग, १ गुदा और १ मस्तक ये दश छिद्र हैं परंतु स्त्रियोंके २ स्तन और १ गर्भाशयमें ऐसे तेरह छिद्र हैं एवं इस शरीरमें रोम रोममें असंख्यात छिद्र हैं.

नाभिके वाई ओर फुफुस और प्लीहा ( फिया ) है तथा दाहिनी ओर यकृत है.

फुफुस—उदानवायुके आधारको फुफुस कहते हैं.

प्लीहा— रक्तको वहानेवाली नसोंके मूलको प्लीहा कहते हैं.

यकृत—रंजक ( पित्तका स्थान)के पास जो रक्तका स्थान उसे य-कृत कहते हैं.

नाभिके वाम भागमें अग्न्याशयपर जो तिल है वह जल वहानेवा-ली नसोंका मूल है यही तिल प्यासको रोकता है.

कुक्षिमें दो गोले हैं जिन्हे वृक कहते हैं ये दोनों पेटके मेदको पुष्ट करते हैं.

वृषण ( पोथे ) —ये वीर्यको वहानेवाली नसोंके आधार हैं—ये पराक्रम देनेवाले, गर्भको उत्पन्न करनेवाले वीर्य मूत्रके घर, और हृदय, मन, चित्त, अहंकार और बुद्धिके स्थान हैं.

नाभि—धमनीनाडी आदि नसोंका स्थान है, नाभिका समानवायु सब धातुओंके संयोगसे संपूर्ण शरीरको पुष्ट करता है. तथा नाभिका प-वन हृदयकमलको स्पर्श करके कंठद्वारा नाकसे वहार निकलती और आकाशमें विष्णु पदके अमृतसे युक्त हो मुख नासिकाद्वारा पुनः

शरीरमें प्रवेश करती है सो इसी पवनसे सर्व शरीर तथा जीवको प्रबलता पहुंचती है.

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखण्डे शारीरकनिरूपणे चतुर्थस्तरंगः ॥

अथ अवस्थादिक्रम.

वयस्तु त्रिविधं बाल्यं मध्यमं वार्धकं तथा ।
ऊनषोडशवर्षस्तु नरो बालो निगद्यते ॥ १ ॥
मध्ये षोडशसप्तत्योर्मध्यमं कथितं बुधैः ।
ततस्तु सप्ततेरूर्ध्वं वृद्धो भवति मानवः ॥ २ ॥ भा० प्र०
कौमारं पंचमाब्दांतं पौगंडं दशमावधि ।
कैशोरमापञ्चदशाद्यौवनं तु ततः परम् ॥ ३ ॥ अ० ग्र०

भाषार्थ—अवस्था तीन प्रकारकी होतीहै. १ बाल्यावस्था, २ मध्यावस्था, ३ वृद्धावस्था. जन्मसे १६ वर्षपर्यंत बाल्यावस्था. १६ से ७० वर्षतक मध्यावस्था और ७० से पश्चात् सर्व वृद्धावस्था जानो.

बाल्यावस्थामें भी—जन्मसे ५ वर्षपर्यंत कौमार संज्ञा, ५ से १० वर्षतक पौगंड संज्ञा, १० से १५ वर्षतक कैशोर संज्ञा और १५ के पश्चात् यौवनादि संज्ञा ग्रंथान्तरमें लिखी है. इसी प्रकार स्त्रियोंकी—जन्मसे ८ वर्षपर्यंत कन्या संज्ञा, ८ से ११ पर्यंत गौरी संज्ञा, ११ से १६ वर्षपर्यंत बाला संज्ञा, १६ से ३० वर्षपर्यंत तरुणी संज्ञा, ३० से ५५ वर्षपर्यंत प्रौढा संज्ञा और ५५ के पश्चात् वृद्धा संज्ञा लिखी है.

अब हम इसके आगे शरीरकी गति आदिका क्रम अमृतसागरके २५ वें तरंगके लेखानुसार यहां लिखतेहैं.

जन्मसे १० वर्षपर्यन्त कोमलता, २० वर्षपर्यंत वृद्धिपन, ३० वर्षपर्यंत शरीरकी मुटाई, ४० वर्षपर्यंत बुद्ध्यागमन ( बुद्धिआना. ), ५० वर्षपर्यंत त्वचाकी दृढता रहतीहै, ६० वर्षपर्यंत नेत्रोंमें ज्योति रहतीहै, ७० वर्षपर्यंत शरीरमें वीर्य रहता है. तद्पश्चात ८० वर्षपर्यंत शरीरमें वीर्य क्रमशः न्यून होता होता नष्टहोता जाताहै, ९० वर्षतक ज्ञान रहताहै, १०० व-

र्यंतक भाषण, हस्तपादादिमें कुछ बल और मलमूत्रादि त्यागका ज्ञान रहताहै, ११० वर्षपर्यंत कुछ स्मरण मात्र ज्ञान रहताहै. और १२० वर्षपर्यंत शरीरमें प्राणमात्र रहताहै. जो शरीर निरोगी रहे तो उक्तक्रम रहताहै. परंतु रोग युक्त होनेसे १० वर्षमें उक्त प्रमाणानुसार किंचित घटना होतीजातीहै. एवं शास्त्रप्रमाणानुकूल मनुष्यकी आयु १२० एकसौ वीस वर्षकीहै.

औरभी—शुभकर्म करना, सत्य बोलना, देव ब्राह्मण वेदादिकी निंदा न करना, ब्रह्मचर्यपूर्वक वीर्य धारण करना, परोपकार करना, वृद्धपुरुषोंको सर्वदा नमन करना, सच्छास्त्रावलोकन (उत्तमशास्त्रोंके अवलोकनसे)—आयुर्वेदोक्त ( ऋतुचर्या, दिनचर्या, रात्रिचर्यानुसार ) रहना और पथ्यापथ्य आहारविहारादि परिपूर्ण ध्यान रखनेसे मनुष्य पूर्ण आयुको प्राप्त होताहै. तथा उक्त आचरणोंसे विरुद्ध कर्म करनेसे मनुष्यकी अल्पायु होजातीहै. क्योंकि विरुद्ध आहारविहारसे मनुष्यको रोग उत्पन्न होते और उनमें पथ्यापथ्य परिपूर्णध्यान न रखनेसे वह रोग साध्यसे याप्य और याप्यसे असाध्य होके इस शरीरको नाश करदेतेहैं. इसलिये मनुष्यको अपने शरीरकी रक्षाकेलिये आयुर्वेदोक्तरीत्यनुसार अवश्य चलना चाहिये. क्योंकि धन्वंतरि महाराजने सुश्रुतमें १०१ मृत्यु लिखीहैं जिनमें १०० आगंतुक मृत्यु हैं जोकि प्रयत्न करनेसें दूर होजाती हैं और एक काल संज्ञक मृत्युहै जोकि ब्रह्मादि देवोंकोभी आयुष्यके अंतमें नष्ट करदेतीहै. इस पर कोई प्रयत्न नहीं चलता. अतएव प्रत्येक मनुष्यको चाहिये कि जहांतक यह शरीर रोगरहितहै. जहांतक वृद्धावस्था प्राप्त नहोवे. जहांतक इन्द्रियोंमें शक्ति न्यून नहोवे और जबतक आयुका क्षय न होवे तबतक अपनी आत्माके कल्याणार्थ तपश्चरण योगाराधनादि सत्कर्मोंको करले क्योंकि योगाराधनतपश्चरणादि सत्कर्मोंसे आगे आगे हमारे मार्कण्डेयआदि महर्षियोंकीभी आयु वृद्धिको प्राप्तहुईहै. इसलिये मनुष्यदेहको प्राप्त होके अवश्य धर्मका संग्रहण करना चाहिये कारणकि इस देहके साथ केवल धर्मके व्यतिरिक्त अन्य कोईभी वस्तु नहीं जाती इस लिये स्वधर्मका त्याग कदापि न करना चाहिये.

एकोत्तरं मृत्युशतमथर्वाणःप्रचक्षते ।
तत्रैकःकालसंयुक्तःशेषास्त्वागंतवःस्मृताः ॥ १ ॥
तथा सत्यपि तैलादौ दीपो निर्वापयेन्मरुत् ।
एवमायुष्यहीनेऽपि हिंसन्त्यागंतुमृत्यवः ॥ २ ॥ इत्युक्तं सुश्रुते

अथ वातप्रकृतिवाले पुरुषके लक्षण लिख्यतेः—

छोटे वाल, कृश ( दुबला ) और रूखा शरीर, बाचाल, चंचलमनहो और आकाशीय स्वप्न आवें उसे वातप्रकृतिवाला जानो.

अथ पित्तप्रकृति—तरुणावस्थामें श्वेत वाल आवे, बुद्धिवान होवे, पसीना अधिक आवे, क्रोधी होवे, और स्वप्नमें तेज दिखै सो पित्तप्रकृति है.

कफप्रकृति—गम्भीरबुद्धि, स्थूलअंग, चिकने बाल, बलवान होवे और स्वप्नमें जलस्थान देखै सो कफप्रकृति है.

निद्रालक्षण—जिस मनुष्यको कफ और तमोगुण अधिक हों उसे मूर्च्छा और निद्रा आतीहै. यदि वातपित्त और रजोगुण अधिक होंतो चक्र और संदेह होवे. कफवात और तमोगुण अधिक होयतो तंद्रा ( अधमुची आंखें ) होतीहै. यदि बल नष्ट हो गया होतो ग्लानि आतीहै. तथा दुःख अजीर्ण और थकावटसेभी ग्लानि होतीहै और निर्बलतासे उत्साह न होवै तो आलस्य आताहै.

इति श्रीनूतनामृतसागरे उत्पत्तिखंडे अवस्थादिक्रमनिरूपणे पञ्चमस्तरंगः

# सूचना.

इस विचारखंडमें अनेक वैद्यक ग्रन्थोंसे विचार विचारके नूतनामृत सागरको उपयोगी ऐसे साररूपी विचार लिखेगयेहै कि जिनसे विचार पूर्वक जो वैद्यगण चिकित्साका प्रचार करेंगे तो अवश्यही रोगियोंका- सुधार होकर सर्व सुखागार आरोग्यताका प्रसार होगा.

इसकी इक्कीस तरंगें हैं जिनमेंसे प्रथम तरंगमें वैद्यसे शकुन पर्यंत ९ विचार हैं. द्वितीयमें नाडीसे रोगीपर्यंत १३ विचार हैं. तृतीयमें यंत्रविचार, चतुर्थमें धात्वादि शोधनविचार, पंचममें मानविचार, षष्ठममें युक्तायुक्त विचार, सप्तममें औषधक्रियाविचार, अष्टममें दीपनादिविचार और नवमसे एकविंशतिपर्यंत लघुनिघंटु ( जिसमें मुख्यौषधनामगुण ) विचार वर्णन कियागयाहै.

यद्यपि हमने इसे लघुनिघंटु नाम दियाहै. परंतु यह बृहन्निघंटुके सदृश काम देने वालाहै. क्योंकि वर्तमानकालमें जिन औषधादि वस्तुओंका विशेष उपचार होरहाहै उनके मुख्य नाम गुण तथा उपकार उत्तमप्रकारसे निर्धार करके प्रदर्शित किये गयेहैं विशेषकर आशाहै कि यह विचारखंडभी केवल इसी ग्रंथको नहीं परंच अन्य वैद्यक ग्रंथोंको भी विशेषतः उपकारी होगा.

श्लोकः

शुद्धां ब्रह्मविचारसारपरमामाद्यां जगद्व्यापिनीं
वीणापुस्तकधारिणीमभयदां जाड्यान्धकारापहां ॥
हस्ते स्फाटिकमालिकां विदधतीं पद्मासने संस्थितां
वन्दे तां परमेश्वरीं भगवतीं बुद्धिप्रदां शारदाम् ॥ १ ॥

# अथ विचारखण्डप्रारंभः ।

## अथ वैद्यविचार.

### तत्रादौ वैद्यलक्षणम्

गुरोरधीताखिलवैद्यविद्यः पीयूषपाणि
गतस्पृहो धैर्यधरः कृपालुः शुद्धोऽधिक

वैद्यजीवने ह्युक्तमिदम्.

भाषार्थः— अब वैद्यके लक्षण लिखते हैं. "सत्यवक्ता, गुरुसे निघंटु, निदान, चिकित्सा आदि समग्र वैद्यविद्या पढाहुआ, अमृतके समान हाथवाला, ( अर्थात् जहां ओषध दे वहां यशकोही प्राप्त ) दवा देनेमें पूर्ण चतुर, निर्लोभी, धैर्यवान, दयावान, सदा पवित्रतासे रहनेवाला, निष्कपटी और आलस्यरहित" इन लक्षणोंसे जो युक्तहो सो सद्वैद्य कहाता है. सो उक्त वैद्यसेही औषधि लेना चाहिये अन्यसे नहीं॥ यह वैद्यजीवनमें लिखा है. १

### निषिद्धो वैद्यः

कुचैलः कर्कशः स्तब्धः कुग्रामी स्वयमागतः ॥
पंच वैद्या न पूज्यन्ते धन्वतरि समा अपि ॥ २ ॥ इत्युक्तं भावप्रकाशे.

भाषार्थः— "जिसके मैले तथा फटे हुए वस्त्र और आचरणभी खोटेहों १ जिसका स्वभाव अत्यंतक्रोधयुक्तही रहे २ जो अतिगर्वी हो ३ जो छोटे तुच्छ गांवमें रहनेवाला है ४ जो बिनबुलाये आपही आवे ५" ये पांच वैद्य यदि धन्वन्तरिजीके समानहों तो भी पूज्य तथा अंगीकार करनेके योग्य नहीं हैं॥ २ ॥ यह भावप्रकाशमें लिखा है ॥

मूर्खवैद्यादौषधं नाङ्गीकरणीयमित्युक्तं च वैद्यजीवने.

औषधं मूढवैद्यानां त्यजन्तु ज्वरपीडिताः ॥
परसंसर्गसंसक्तं कलत्रमिव साधवः ॥ ३ ॥

भाषार्थः— रोगीको चाहियेकि—चाहे जैसे ज्वर आदि रोगसे पीडितहो

मूलकेभी

औषधसे आरोग्य होना तो दूर है परंतु रोगवृद्धि तथा प्राणहानि होना कोई आश्चर्य नहीं इस लिये जैसे उत्तम पुरुष व्यभिचारिणी स्त्रीको त्यागन कर देते हैं ऐसेही मूर्ख वैद्यको रोगीभी त्यागन करदेवे ॥ ३ ॥ यह वैद्यजीवनमें लिखा है ॥

राजदंडयोग्योवैद्यः ।

औषधं केवलं कर्तुं यो जानाति न चामयम् ॥
वैद्यकर्म स चेत् कुर्याद्वधमर्हति राजतः ॥ ४ ॥ भा० प्र०

॥ इति वैद्यविचारः समाप्तः ॥

भाषार्थः—जो वैद्य केवल औषधही करना जानता हो. और रोगको निदान पूर्वक न पहिचानता हो तो राजाको चाहियेकि अपने राजभरमें उसे औषध न देने देवे यदि देवे तो यथोचित पूर्णदंड देवे. इति वैद्यविचार. ॥ ४ ॥

## अथ वैद्यमुख्यकर्मविचारः

तत्र चिकित्साफलमाह ।

क्वचिदर्थः क्वचिन्मैत्री क्वचिद्धर्मः क्वचिद्यशः ॥
कर्म्माभ्यासः क्वचिच्चेति चिकित्सा नास्ति निष्फला ॥५॥ भावप्रकाशे.

भाषार्थः—अब वैद्यको जिन मुख्य कर्मोंका विचार करना चाहिये सो लिखते हैं. प्रथम तो वैद्य इस बातपर पूर्ण ध्यान देवकि— चिकित्साकी हुई कभी निष्फल नहीं होती. क्योंकि कहींतो औषध देनेसे धन मिलता है, कहीं मित्रताही होती है, कहीं धर्म होता है, कहीं केवल यशही प्राप्त होता है, और यदि यह कुछभी न होतो वैद्यकर्मका अभ्यास तो बनाही रहाता है, इसलिये वैद्य चिकित्सा करनेसे कभी न हटे ॥ ५ ॥

चिकित्स्यस्य रोगिणो लक्षणमाह ।

निजप्रकृतिवर्णाभ्यां युक्तः सत्वेन चक्षुषा ॥
चिकित्स्यो भिषजा रोगी वैद्यभक्तो जितेन्द्रियः ॥ ६ ॥

आयुष्मान् सत्ववान् साध्यो द्रव्यवान् मित्रवानपि
चिकित्स्यो भिषजा रोगी वैद्यवाक्यकृदास्तिकः ॥ ७ ॥

भाषार्थः—अब वैद्य कैसे रोगीको औषधि देवे और कैसेको न देवे सो लिखते है. अपनी प्रकृति और वर्णसे युक्तहो, नेत्रादि कर्मेन्द्रियोंकी शक्ति युक्तहो वैद्यको ईश्वरभाव मानता हो, जितेन्द्रिय हो (अर्थात् मिथ्या आहार विहार न करे) ऐसे रोगीको वैद्य औषध देवे ॥ ६ ॥ एवं जो रोगी आयुयुक्त, बलयुक्त, द्रव्ययुक्त, मित्रयुक्त, आज्ञाकारी (वैद्यके कहनेके अनुसार चलनेवाला) विश्वासी (वैद्यका पूर्ण विश्वास रखनेवाला) और साध्य रोगयुक्त हो तो औषध दे अन्यथा नहीं देवे ॥ ७ ॥

अथाचिकित्स्यः।

चंडसाहसिको भीरुः कृतघ्नो व्यग्र एव च ॥
शोकाकुलो मुमूर्षुश्च विहीनकरणैश्च यः ॥ ८ ॥
वैरी वैद्यविदग्धश्च श्रद्धाहीनश्च शङ्कितः ॥
भिषजामविधेयाः स्युर्नोपक्रम्या भिषग्विदा ॥ ९ ॥ भावप्रकाशः

भाषार्थः—जो रोगी क्रोधी, हठी, कृतघ्न (किये उपकारको न माननेवाला) टेढी प्रकृतिवाला, शोकित, किसी प्रकार (कारण) से मरनेकी इच्छा करनेवाला, निर्बल (इंद्रियोंके बलसे हीन) वैद्यविरोधी, अर्धवैद्य, संशययुक्त और श्रद्धाहीन, हो वैद्यको चाहियेकी ऐसे रोगीको कदापि औषध न देवे ॥ ८ ॥ ९ ॥ यह भावप्रकाशमें लिखा है.

दर्शनस्पर्शनप्रश्नैरोगिणो रोगनिश्चयम् ॥
आदौ ज्ञात्वा ततः कुर्याच्चिकित्सां भिषजां वरः ॥ १० ॥

भाषार्थः—रोगीको देखके, स्पर्श करके (छूके) और सब वृत्तान्त पूछके रोगको निश्चय करनेके पश्चात् श्रेष्ठ वैद्यको चिकित्सा करनी चाहिये ॥ १० ॥

देशं बलं वयः कालं गुर्विणीगदमौषधम् ॥
वृद्धवैद्यमतं ज्ञात्वा चिकित्सामारभेत्ततः ॥ ११ ॥ इति ग्रन्थान्तरे

भाषार्थः—इसीप्रकार—१ देश विचार, २ बल विचार, ३ अवस्था विचार, ४(पुरुष तथा गर्भणी स्त्रीका) रोग विचार, ५ काल विचार, ६ दूत विचार ७ शकुन विचार, ८ नाडी विचार, ९ नेत्र विचार, १० जिव्हा विचार, ११ मूत्र विचार, १२ स्वप्न विचार, १३ औषध विचार, १४ अर्थ विचार, १५ कर्म विचार, १६ अग्निबल विचार, १७ ( रोगीका ) साध्यासाध्य विचार १८ पथ्यापथ्य विचार, १९ और औषधि अनुपान विचार, इत्यादिको सोचके वृद्ध वैद्य अर्थात् सुश्रुत, चरक आदि प्राचीन मुनियोंके मतको विचार ( जान )के वैद्य चिकित्सा करे ॥ ११ ॥

## देशविचार.

भूमिदेशस्त्रिधानूपो जाङ्गलो मिश्रलक्षणः ॥ १ ॥

भाषार्थः—इस भूमिपर तीन प्रकारके देश हैं १ अनूपदेश, २ जाङ्गलदेश, और ३ मिश्रदेश ( साधारणदेश ) अब इनके पृथक् पृथक् लक्षण लिखते हैं.

१ अनूपदेश—जहां सदैव बहुतसा जल वहता रहे, पर्वत हो कफ तथा बादीके रोग विषेश उत्पन्न होते हों उसे अनूपदेश जानो.

२ जांगल—जहां थोडा जल तथा वृक्षभीहों और बादीकी विषेशताहो उसे जांगल देश जानना चाहिये.

३ मिश्रदेश—जहां शीत, उष्ण, और वर्षासमान होनेसे वात, पित्त और कफभी तुल्यही हों उसे साधारण देश ( मिश्र ) कहते हैं.

जो मनुष्य जिस देशमें उत्पन्न होता है उसकी प्रकृति उसीदेशके अनुसार होतीहै. इस लिये वैद्य प्रथम देश विचार करके जिस्कू जिस देशमें जो जो हितकारी औषधी है उन्होंका प्रचार करे अन्यका नहीं. ऐसा भावप्रकाश और वृद्ध वाग्भट्टमें लिखा है. इति देशविचार.

## कालविचार.

काल अर्थात् समयभी ३ प्रकारका है १ शीतकाल, २ उष्णकाल, ३ वर्षाकाल, इन तीनों कालोंका विचार इस प्रकार है कि.

१ यदि शीतकालमें यथोचित ठंडसे न्यूनाधिक ठंड पडे. अथवा गर्मी-होने लगे तो रोग उत्पन्न होंगे. २ उष्णकालमें समयकी मिति ( प्रमाण )से न्यूनाधिक उष्णताहो अथवा शीत पडने लगे तो रोग उत्पन्न होंगे. ३ इसी प्रकार वर्षा कालमें उस समयकी योग्यतासे न्यूनाधिक ( कम—वढ ) वर्षा हो अथवा बिलकुल वर्षा न हो तोभी रोग उत्पन्न होंगे, वैद्यको इस बातका पूर्ण विचार करना चाहिये. इति कालविचार.

## अवस्थाविचार.

अवस्थाके कई भेद हैं. परन्तु मुख्य अवस्था तीनही प्रकारकी है. १ बाल्यावस्था, २ तरुणावस्था, ३ वृद्धावस्था, १ बाल्यावस्थामें कफ, २ तरुणावस्थामें पित्त, और ३ वृद्धावस्थामें वायुकी वृद्धि रहती है. इस लिये वैद्यको अवस्थाका विचार करके उपचार करना चाहिये. इति अवस्थाविचार.

## रोगविचार.

रोगविचार ३ प्रकारसे किया जाता है. १ देखकर, २ छूकर ३ पूछकर.

१ जैसे कमलारोग जिसे कमल तथा पीलियेका रोग कहते है ऐसेही अनेक रोग जो देखनेसेही ज्ञात हो जाते हैं.

२ ज्वर आदि कई रोग रोगीके शरीरस्पर्श ( छूनेसे ज्ञात होते हैं.

३ और उदरशूल ( पेट दुखना, ) पार्श्वशूल ( पसली दुखना, ) मस्तकपीडा, बवासीर, उपदंश ( गर्मी ) प्रमेह ( परमां ) चित्तभ्रम ( हौलदिल ) और भूतादिबाधा इत्यादि अनेकरोग पूछनेसेही यथार्थ ज्ञात होते हैं.

इसलिये वैद्य उक्त तीन प्रकारोंमेंसे जिसरोग जिस प्रकारसे निश्चय हो सके फेर तत्पश्चात् उस रोगका निदान करे कि यह रोग कितने प्रकारका है. उनमेंसे इसमें किसके लक्षण मिलते हैं. इसका विचार करके पश्चात् औषधिका उपचार करे. इति रोगविचार.

## कालज्ञानविचार.

कालज्ञान विचार—उसे कहते है जिससे रोगीके मरण जीवनका निश्चय होजाता है.

१-जिस रोगीको रात्रिमें दाहहो और दिनको शीत ( जाडा ) लगे और कंठमें कफका घर्राटा होतो वह रोगी अवश्य मृत्युको प्राप्त होवे.

२-जिस रोगीकी नाककी नोंक ठंडीहो और शरीरमें शूलचले वह रोगी निश्चय मरे.

३-जिस रोगीकी कांति, बल, लज्जाआदि नष्ट होजावे तथा स्वभाव क्रोधीकासा हो जावे वह रोगी ६ मासकी अवधिमें मरजावे.

४-जिस रोगीकी गतिभंग हो जावे, शरीरका रंग पलट ( बदल ) जावे, और सुगंधि दुर्गंधिका ज्ञान न रहे वह रोगीभी मृत्युको प्राप्त हो जाय.

५ जिस रोगीको वृक्षका पेड तथा डालियोंमें अग्निके सूक्ष्म विभाग ( चिंगारियां ) दिखाईदेवें वह ६ मासमें मरजावे.

६-जिस रोगीको पसीना किंचित कभी न निकले और कामदेवसे हीनहो जावे वह ३ मासमें मृत्युको प्राप्त होवे.

७-जिस रोगीको कानके छिद्र मूंदने पर सुनाई नही देवे वह अवश्य मरे.

८-जिस रोगीके नेत्र, देह, और मुखका वर्ण बदल जावे सो निश्चय मरे.

९-जिस रोगीको अपनी ही जीभ, और नाककी अनी तथा दोनों भौंहका मध्यभाग दृष्टि न पडे वह रोगी निश्चय मृत्युवश हो जावे.

१०-जिस रोगीके नेत्र लाल और मुखवर्ण कुछकाकुछही हो जावे वह निश्चय मरे.

११-जिस रोगीकी इन्द्रियां अपने विषयको ग्रहण न करे ( जैसे नेत्र रूप देखना न चाहें, कान शब्द न सुने, जीभ रसको न जाने इत्यादि ) तो वह अवश्य मरे.

१२-जिस रोगीकी वाणी बोलनेसे थकित हो जावे और शक्तिहीन हो जावे वह निश्चय मरे.

१३-जिस रोगीको कांच तथा जलमें अपनी परछाई ( छाया ) न दीखे वहभी मरे.

१४–जिस रोगीका मुख लाल कमलकी नांई हो जावे, जिन्हा ( जीभ ) काली हो जावे, और शरीरमें पीडा उत्पन्न हो वह निश्चय मरे.

१५–जिस रोगीको आश्लेषा, शतभिषा, आर्द्रा, स्वाति, मूल, पूर्वा फाल्गुनी, पूर्वाषाढा, पूर्वाभाद्रपदा, भरणी, ये नक्षत्र रवि, शनि, मंगल, ये बार तथा चतुर्थी, षष्ठी, अष्टमी, द्वादशी इन तिथियोंमें रोग उत्पन्न हो वह अवश्य मृत्यु वश होवे.

१६–जिस रोगीके कांधे कंपने लगे वहभी अवश्य मरे.

१७–जिस रोगीको दूसरे मनुष्यकी पुतली ( आंखका चमकता हुआ तारा )में अपना स्वरूप न दिखे वह निश्चय मरे.

१८–जिस रोगीका सूर्योदयके समय दाहिना तथा सूर्यास्तके समय वायां स्वर सर्वदा चले वह रोगी अवश्य मृत्युको प्राप्त होवेगा इत्यादि वैद्यको कालज्ञानका विचारभी अवश्य करना चाहिये ॥ ॥ इति कालज्ञानविचार ॥

## अथ दूतविचार.

वैद्यको बुलानेकेलिये काना, लंगडा, नकटा, और मूर्ख दूतको न भेजना चाहिये. बरन चतुर, उत्तमवर्णवाला, उत्तमचेष्टावाला, सुखी, और निर्मल वस्त्रादि धारण किये हो ऐसे दूतको रथादिक यान ( सवारी )पर बिठाकर तथा कुछ सुन्दर फल वैद्यकी भेटार्थ देकर भेजना चाहिये (इस बातपर रोगी तथा उसके घरके लोगोंको पूर्ण ध्यान रखना चाहिये. )

वह दूत जब वैद्यके घर पहुंचे तब अपनी नासिकाके स्वरको देखे जिस ओरका स्वर चलता हो वैद्यकी उसी ओरजाके खडा होवे. और वह फल भेटकर देवे वैद्यभी उस दूतको देखकर विचार करे. यदि काना लंगडा आदि निषिद्ध लक्षणवाला होतो समझलेवे कि रोगीका आरोग्यहोना दुस्तर है तथा श्रेष्ठ गुण शुभलक्षणवाला होतो रोगी आरोग्य हो जावेगा ऐसा निस्संदेह विचार उसके साथ रोगीके गृह जावे. इति दूतविचार.

## शकुनविचार.

जिस समय वैद्यको बुलानेके लिये दूत जावे उससमय इसबातपर पूर्ण ध्यान देवे जो साह्मने जल आदि शीतल पदार्थ मिलें तो उसका फल अच्छा नहीं है जो साह्मने अग्नि आदि उष्ण पदार्थ मिले तो उसका फल अच्छा है. जब वैद्यके घर पहुंचे तो वैद्य दूतसे पूछलेवे कि आते समय तुझे क्या ( उष्ण अथवा शीत ) पदार्थ मिलाथा. इसी प्रकार वैद्य जब रोगीके घरजावे तब भी विचारे जो जल आदि शीतल पदार्थ सन्मुख मिले तो फल उत्तम है और अग्नि आदि उष्णपदार्थ मिले तो शकुनफल नष्ट जाने. इति शकुनविचार.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे वैद्यविचारादिनिरूपणं नाम प्रथमस्तरंगः

### नाडीविचार.

पुंसो दक्षिणहस्तस्य स्त्रियो वामकरस्य तु ॥ अंगुष्ठमूलगां नाडीं परीक्षेत भिषग्वरः॥ १ ॥ अंगुलीभिस्तु तिसृभिर्नाडीमवहितः स्पृशेत् ॥ तच्चेष्टया सुखं दुःखं जानीयात् कुशलोऽखिलम् " ॥ २ ॥ इति भावप्रकाशे ह्युक्तम्.

भाषार्थ–पुरुषके दक्षिण हस्तकी और स्त्रीके वामहस्तकी नाडी (जोकि अंगूठेकेनीचे जीवकी साक्षीरूपा चलती है ) वैद्यवरको देखना चाहिये.

अब नाडी देखनेकी रीति दर्शाते हैं.

१ वैद्य एकाग्र चित्तसे सावधान होके रोगीके अंगूठेके नीचेकी नाडीपर अपनी तर्जनी आदि तीनों अंगुलियोंको संधि रहित धरे रोगीके हाथको किंचितभी न हिलने देवे, पश्चात् उस नाडीकी चेष्टा ( दशा, गति, चाल)से जीवके सर्व दुःख सुख जाने २ जिस प्रकार वीणाका तार संगीत कर्ता ( राग जाननेवाला ) को सर्व राग प्रदर्शित करताहै तिसी प्रकार नाडीभी सद्वैद्योंको सुखदुःखादि शरीरके समग्र वृत्तान्त भावित कर देतीहै.

प्रश्न–क्या कारण है कि पुरुष के दक्षिण और स्त्रीके वामहस्तकी नाडी देखते

उत्तर—कूर्मो वै देहिनामस्ति नाभिस्थाने सदा स्थितः ॥
स्त्रीणामूर्ध्वमुखः पुंसामधोवक्त्रः प्रकीर्तितः ॥ १ ॥
तस्यैव दक्षिणे भागे नाडी ज्ञेया भिषग्वरैः ॥
अनेन कारणेनैव नारीपुंसोर्व्यतिक्रमः ॥ २ ॥ इति ॥

अर्थात्–देहधारी मात्रके नाभिस्थानमें एक कूर्म ( कच्छप कछुवा ) रहता है सो वह स्त्रियोंके तो ऊर्ध्वमुख ( ऊपरको मुख ) करके रहता है परंतु पुरुषोंके शरीरमें ( उससे विरुद्ध ) अधोमुख ( नीचेको मुख करके ) रहता है सो उस ( कच्छप )के दक्षिण भागमें नाडी देखना चाहिये ॥

इसका क्या सिद्धान्त हुआ–कि स्त्रियोंका जो वामा हाथ है वही उस ( कच्छप )का दाहिना अंग रहेगा क्योंकि उसकी स्थिति स्त्रियोंके पेटमें ऊर्ध्वमुख है और पुरुषोंका जो दाहिना हाथ है वही उसकाभी दाहिना अंगही रहेगा क्योंकि वह पुरुषोंके नाभिस्थलमें अधोमुख है इसलिये "कच्छपके दक्षिणभाग" अर्थात् पुरुषके दक्षिण और स्त्रियोंके वामहस्तकी नाडी सदैव देखना चाहिये ॥

प्र० कैसे पुरुष अथवा स्त्रीकी नाडी देखना और कैसेकी नहीं देखना चाहिये?

उ० तत्काल स्नान किया हुआ, तत्काल भोजन किया हुआ, शरीरमें तेल मलवाया हुआ, सोता हुआ, दौडता हुआ, भूखा, प्यासा, कामातुर और मलमूत्रके वेगयुक्त पुरुष तथा स्त्रियोंकी नाडी नहीं देखनी चाहिये. क्योंकि उक्त कारणकी बाधासे रोगका यथार्थ ज्ञान नहीं होता इसलिये इनसे व्यतिरिक्त शांति और स्वच्छ दशावालेकी नाडी देखनी चाहिये ॥

जिस प्रकार वैद्य हाथकी नाडी देखे उस प्रकार शास्त्रानुसार पांवकी नाडीभी देखनी चाहिये. क्योंकि जैसे रत्नपरीक्षक ( जौंहरी ) अपनी बुद्धिके प्रभाव तथा अभ्यासके बलसें सच्चे–झूठे हीरा आदि रत्नोंकी परीक्षाकर लेता है तैसेही वैद्यकशास्त्रके अभ्याससें अपनी बुद्धि बलके विचार पूर्वक नाडी द्वारा रोगीके रोग सुखदुःखादिकी परीक्षा वैद्यकोभी करनी चाहिये.

प्र० नाडी किस प्रकार देखना चाहिये ?

उ० अंगूठेके नीचे जीवकी साक्षी रूपा नाडीपर धरी हुई ३ अंगुलीयोंमेंसें पहिली अंगुलीके नीचे वायुकी, दूसरो अंगुलीके नीचे पित्तकी और तीसरी अंगुलीके नीचे कफकी नाडी चलती है, जिनमेंसें.

१–जो नाडी सर्प तथा जोंककी गतिके समान टेढी चलती हो उसे वायुकी जानो.

२– काक तथा मेंडकके समान कूदती हुई शीघ्र चलेतो उसे पित्त-की जानो.

३– राजहंस, बदक, मोर, परेवा ( कबूतर ) कमेडी ( कावर–जंगली मैना ) यद्वा, मुर्गाकी भांति मंद चलती है वह कफकी नाडी जानो.

४– सर्प और हंसके समान गतिसें चले उसे वातकफकी ( मिली हुई ) जानो.

५– बंदर, मेडक, और हंसकी गतिसे चले उसे पित्तकफकी जानो.

६– कठकोलापक्षीके समान ठोकर देवे[1] उसे सन्निपातकी जानो.

७– मंद, टेढी, व्याकुल और ठहरके[2] उसेभी सन्निपातकी जानो.

८– जिस मनुष्यके शरीरमें ज्वरका कोप हो उसकी नाडी उष्णतासें शीघ्र चलती है.

९–जिस रोगीकी नाडी एकसी समान भावसें स्थानपर चलै वह रोगी नहीं मरे.

१०–कामातुर और क्रोधी पुरुषकी नाडी शीघ्रतासें चलती है.

११–चिंतावाले पुरुषकी नाडी क्षीण चलती है.

१२–भयातुर ( किसी प्रकारसें डराहुआ ) पुरुषकी अत्यंत ही क्षीण चलती है.

१३–मंदाग्नि और धातुक्षीण पुरुषकी नाडी अति मंद चलती है.

---

१ अर्थात् वह पक्षी जो काठमें छेद पाडता है-सो जैसे यह छेद पाडते समय अपनी चोंचको वारवार वेगसे कूटता, फिर बंद होता. फिर कूटता है इसी प्रकार नाडीभी चल-ते चलते बंद हो जावे और फिर वेगसें चलने लगे.

२ यह नाडी सूक्ष्म होती हुई मनुष्यको मार डालती है.

१४–रुधिरके विकारवाले पुरुषकी नाडी उष्णतायुक्त भारी चलती है.

१५–जिसके पेटमें आमांश (आंव) हो उसकी नाडी अति भारी चलती है.

१६–भूखे मनुष्यकी नाडी हलकी और शीघ्रतासें चलती है.

१७–भोजन करनेपर मनुष्यकी नाडी धीरे चलती है.

१८–मल गिरनेपर मनुष्यकी नाडी अत्यंत शीघ्र चलती है.

१९–सुखयुक्त पुरुषकी नाडी धीरे और बलपूर्वक चलती है.

२०–इसी प्रकार नाडीपरीक्षाके अनेक भेद हैं सोबुद्धिवान सद्वैद्यकों अपनी बुद्धिसे शास्त्रोक्त प्रमाणानुसार स्त्रीपुरुषकी नाडीपरीक्षा करनी चाहिये, जैसे योगाभ्यासी योगमार्गसें ब्रह्मको जानलेते हैं तैसेही श्रेष्ठ वैद्यकोभी नाडीके अभ्याससें शरीरका समग्र वृत्तान्त जानलेना चाहिये.

इति नाडीविचारः

## नेत्रविचार.

१–जिस रोगीके नेत्र रूखे, धूम्रवर्ण ( काला और लाल मिला हुआ, ) अथवा कुछ ललामीलिये हुएहो, भीतर कुछ जलकी झलक मारतेहों, और वह रोगी उन्मत्तके समान देखता हो तो उसपर बादीका अधिक बेगजानना चाहिये. अर्थात् ऐसे नेत्रबादीवालेके होते हैं.

२–जिस रोगीके नेत्र हलदीके समान पीले, लाल तथा हरेहों, दीपक न देखसके, और जलते हों तो पित्तका अधिक वेग जानो. अर्थात् पित्तवालेके नेत्र ऐसे लक्षणयुक्त होते हैं.

३–जिस रोगीके नेत्र चिकने, जलसें भरे हुए श्वेत, ज्योतिहीन, और बलयुक्त हों तो कफका वेग अधिक जानो.

४–जिन नेत्रोंमें ऊपरी नियमानुसार दो दोषोंके लक्षण मिलते हों उन्हें दो दोषयुक्त और ३ तीन दोषके मिलते हों उन्हें त्रिदोषीय जानो.

५–त्रिदोष (वात, पित्त, कफ )के कोपमें रोगीके नेत्र भीतरको घुस जाते हैं, उनसे पानी वहने लगता है, अथवा बीचमें मुंचे हुए किंवा

कोरोंपर खुले हुए रहते हैं, त्रिदोषके लक्षणयुक्त नेत्ररोगीको नष्ट करने ( मारने )में कुछ न्यूनता ( शेष ) नहीं रखते है.

इसलिये वैद्यको अवश्य चाहियेकि "रोगीकी परीक्षा नेत्रद्वारा करे" ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है.

इति नेत्रविचारः

## जिव्हापरीक्षा.

१–जिस रोगीकी जीभ नीली, कुछ हरेपनको लिये हुए, तथा खरखरी और रूखी हो तो वातका कोप जानो.

२–जिस रोगीकी जीभ लाल या कुछ कुछ श्यामतायुक्त लाल हो तो पित्तका कोप जानना चाहिये.

३–जिस रोगीकी चिकनी, गीली, और श्वेत जीभ हो तो कफका कोप जानो.

४–यदि दो आदि दोषोंके लक्षण मिलें तो दो दोषयुक्त जानो.

५–जिस रोगीकी जिव्हा चहुंओरसे जली हुईसी, तथा काली और टेढी पडगई हो तो त्रिदोषका कोप जानना चाहिये. उक्तनियमानुसार वैद्य जिव्हाका विचार करे.

इति जिव्हापरीक्षा.

## मूत्रपरीक्षा.

४ चार घडी रात्रि अवशेष रहे ( इंग्रेजी घंटासें प्रातःकालके ४ और ४½ साडेचार बजेके मध्य ) तब रोगीको कांच, तथा कांसे ( फूल ) के पात्रमें मुताके उस मूत्रको ढांकके रहने देवे. सूर्योदय होनेपर उसे श्वेत काचके पात्रमें डालकर वैद्य परीक्षा करे.

१–यदि मूत्र जलके समान पतला, रूखा, अधिक, और नीले वर्णका हो तो रोगीको बादीका विकार जानो.

२–यदि लाल कुसुमके समान, अथवा टेसूके फूलोंके समान पीला, और थोडा हो तो पित्त किंवा गर्मीके विकारयुक्त मूत्र जानना चाहिये.

३–यदि गाढा, श्वेत, और चिकना हो तो कफके विकारयुक्त जानो.

४–जिसका मूत्र सरसोंके तेल सदृश हो उसे वातपित्तसे युक्त रोगी जानो.

५–जिसका काला और बुदबुदेयुक्त मूत्र हो तो सन्निपात रोग जानो.

६–लघुशंका करते (मूतते) समय जिस रोगीके मूत्रकी लाल धारा उतरे उसे दीर्घरोगी जानो.

७–लघुशंकाके समय जिसकी काली धारा हो वह रोगी मरजावेगा.

८–जिसके मूत्रमें बकरीके मूत्रसदृश गंध आवे उसे अजीर्णरोग जानो.

९–जिसका मूत्र उष्ण (गरम), लाल तथा पीला हो उसे ज्वररोग जानो.

१०–जिसका मूत्र कुएके जलसदृश स्वच्छ हो उसे उत्तम आरोग्य जानो.

उक्त नियमानुसार मूत्रपरीक्षा करनेके पश्चात् उसी मूत्रको ४ घडी (१½ देड घंटेके लगभग) पर्यंत धूपमें रखो फिर उसपर कपडे तथा रुईसे तेलकी बूंद टपकाकर निम्न नियमोल्लिखित परीक्षा करो.

१–यदि वह तेलकी बूंद मूत्रमें डालतेही फैल जावे तो रोगीको साध्य जानो. वह रोगी शीघ्रही आरोग्य होगा.

२–यदि वह बूंद (तेलकी) मूत्रमें फैले नहीं और वैसीही स्थिर हो रहे तो रोगीको कष्टसाध्य जानो, कठिनाईसें अच्छा होगा.

३–यदि बूंद मूत्रमें डूब जावे अथवा चक्रवत् चहुंओर फिरनेलगे तो वह रोगी असाध्य है सो निश्चय मरजावे.

४–यदि तेलकी बूंदमें छिद्र पडजावे अथवा खड्ग वा दंड या धनुषाकार बनजावे तो वह रोगी निश्चय मरेगा.

५–यदि रोगीके मूत्रपर तेलकी बूंद डालनेसे तालाव, हंस, कमल, हाथी छत्र, चमर अथवा तोरणका आकार बनजावे तो वह रोगी आरोग्य हो जावेगा. इन युक्तियोंसे वैद्य मूत्रपरीक्षा करे.

इति मूत्रपरीक्षा.

## स्वप्नपरीक्षा.

रोगीकों चाहियेकि सद्वैद्यके व्यतिरिक्त (सिवाय) अपने अशुभ स्वप्नका वर्णन किसी अन्यके प्रति नकरे, और प्रातःकाल उठतेही स्वशक्त्यानुसार हवन, अन्न वस्त्र, पुस्तक, छत्र, पात्र, स्वर्ण, भूमि आदिक दान करे तथा उत्तम वेदमंत्र या महामृत्युञ्जयादिकके जप, करावे तो खोटे स्वप्नका-फल सर्व शान्त होजावे.

१–यदि रोगी स्वप्नमें नग्न, शीसमुंड, लाल या काले वस्त्रधारी, नकटे, कनफटे, काले, आयुध तथा फांसी हाथमें लिये, मारते हुए मनुष्योंको देखे तो वह अच्छा न होगा.

२–यदि रोगी स्वप्नमें भैंस गधा, या ऊंटकी सवारी करके दक्षिण-दिशा गमन करे तो वह अच्छा न होगा.

३–यदि रोगी अपनेको स्वप्नमें-जलमें डूबता हुआ, अग्निमें जलता हुआ, सिंहादिसे अपना भक्षण, दीपक बुझना, तेल तथा मदिरापान, लोहधारण, पक्वान्नभक्षण और कुएमें गिरता हुआ ऐसे लक्षणीय दशा-युक्त देखे तो अपना असाध्य रोग समझे.

४–यदि रोगी स्वप्नमें राजा, याचक, मित्र, ब्राह्मण, गौ, अग्नि, तीर्था-दिकोंकों देखे तो शीघ्र आरोग्य होजावेगा.

५–यदि रोगी स्वप्नमें कीचडसें बाहर निकलजावे, शत्रुओंकों जीते, महल या रथपर चढे, मांस-मीन-फल खावे, अगम्या स्त्रीसे मैथुन करे, अ-पने शरीरको विष्ठाका लेप करे, रोवे, अपनी मृत्यु देखे, तथा कच्चा मांस खावे तो वह रोगी शीघ्रही आरोग्य होगा.

६–जिस रोगीको स्वप्नमें जोंक, सर्प, भ्रमर, और मच्छर काटें तो शीघ्र आरोग्य हो उसी प्रकार अच्छे मनुष्यकोभी ये स्वप्न आवें तो फल यथो-चित जानना चाहिये. वैद्य उक्त नियमोंसे रोगीका स्वप्न पूछकर विचार करे.

इति स्वप्नपरीक्षा.

## औषधविचार.

वैद्यको चाहियेकि औषधके गुणागुणको विचारके रोगीको उस रोगानुसार औषध देवे, यदि रोग अधिक हो तो औषध अधिक देवे और थोडा हो तो औषध अधिक न देवे. औषधका हीन, मिथ्या, अतियोग न होनेदेवे क्योंकि ऐसा होनेसे रोगकी अधिकता होजाती है. इस लिये औषधिका यथार्थ विचार करके देना चाहिये.

१ हीनयोग–वैद्य ग्रंथोंमें लिखे प्रमाणानुसार नहीं वरन उस प्रमाणसे अति न्यून करके औषध मिलाना यह हीनयोग है.

२ मिथ्यायोग–वैद्यक ग्रंथोंमें कुछ लिखा और वैद्यने कुछ अन्यही औषधका उपयोग किया, यह मिथ्यायोग है.

३ अतियोग–वैद्यक ग्रंथोंमें लिखे प्रमाणसें अत्यंत अधिक मिलादेना यह अतियोग है.

इति औषधविचार.

## अर्थविचार.

शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध ये पांचों पांच इन्द्रियोंसें सम्बन्ध रखते है.

अर्थात्–१ शब्द कानोंसे, २ स्पर्श त्वचासें, ३ रूप नेत्रोंसें, ४ रस जिव्हासें, और ५ गंध नासिकासें सम्बन्ध रखते हैं. उक्त विषयोंका ज्ञान उक्तेन्द्रियोंसेंही होता है, सो–उनको यथार्थ प्रमाणानुसार रखनेसे यह शरीर ठीक रहता है. यदि हीन या मिथ्या किंवा अतियोग हुआ तो शरीर रोगयुक्त हो जाता है. जैसे.

१–कानोको सुननेकी सामर्थ्य होके थोडा या अधिक अथवा कुछका कुछही सुने.

२–स्पर्श करनेको सामर्थ्य होके थोडा या अधिक अथवा कुछका कुछही स्पर्श करे.

३–देखनेकी सामर्थ्य होके थोडा या अधिक अथवा कुछका कुछही देखे.

४–स्वाद लेनेमें सामर्थ्य होके थोडा या अधिक अथवा कुछ अन्यही स्वाद लेवे.

५–सुगंध लेनेमें सामर्थ्य होके थोडी या अधिक अथवा कुछ अन्यही सुगंध लेवे. तो उक्त कारणोंसे पुरुष रोगयुक्त हो जाता है. वैद्य इस इसपर ध्यान देकि रोगी इन पांचोंका यथार्थरीति वर्ताव रखे. तथा अन्य सर्व जनोंको उक्त नियमपूर्वक आपना वर्ताव रखना चाहिये.

इति अर्थविचार.

## कर्मविचार.

कर्म तीन प्रकारके हैं, अर्थात्–१ कायिक, २ वाचिक, ३ मानसिक.

१–कायिक-जो काया ( शरीर )से किये जावें सो कायिक कहाते है.

२ वाचिक–जो वाचा ( वाणी )से किये जावे सो वाचिक.

३ मानसिक–जो मन ( अंतःकरण )से किये जावें.

उक्त कामोंकाभी हीन, मिथ्या, और अतियोग न होना चाहिये क्योंकि ऐसा होनेसे रोगग्रस्त हो जावेगा. जैसे.

१ कायिक कर्म–अपनी काया (देह)की शक्तिसे न्यूनाधिक तथा अन्यही करे.

२ वाचिक कर्म–अपनी वाणीकी शक्तिसे न्यूनाधिक तथा अन्यही करे.

३ मानसिक–अपने मनकी शक्तिसे न्यूनाधिक अथवा अन्यही करे. तो ऐसा करनेसे रोगी होगा और उक्तकर्म तत्तत् ( अपनी अपनी ) शक्ति अनुसार करे तो मनुष्य सर्वदा रोगरहित रहेगा. वैद्यको रोगीके कर्मविचारपर पूर्ण ध्यान देना चाहिये.

इति कर्मविचार.

## अग्निबलविचार.

अग्नि पांच प्रकारकी होती है अर्थात्– १ मन्दाग्नि, २ तीक्ष्णाग्नि, ३ विषमाग्नि ४ समाग्नि, ५ भस्माग्नि.

१ मंदाग्नि–कफप्रकृतिवालेकी मंदाग्नि रहती है वह कफ रोगोंको उत्पन्न करती है सो ठीक नहीं है.

२ तीक्ष्णाग्नि–पित्तप्रकृतिवालेकी तीक्ष्णाग्नि होतीहै सो वह खाये हुए पदार्थको पाचन करती है, परन्तु गर्मी ( उष्णता )के रोगोंको उत्पन्न करनेवाली है.

३ विषमाग्नि–वात प्रकृतिवालेकी विषमाग्नि होतीहै यह कभी अन्नको पाचन करती है और कभी नहीं करती इस प्रकार वादीके रोगोंकोभी उत्पन्न करती है.

४ समाग्नि–सब खाये हुए पदार्थको उत्तम प्रकारसे यथायोग्य पचा देती है जिस मनुष्यकी समाग्नि होतीहै वह सर्वदा सुखयुक्त रहता है यह श्रेष्ठ है.

५ भस्माग्नि–इससे भस्मकरोग उत्पन्न होता है, किसी औषधादिसे शरीरका भीतरी कफ अत्यंत न्यून हो जावे और पित्त अग्निरूप वढता जावे तो वायुकी प्रेरणासे महातीव्र अग्नि होकर भस्माग्नि हो जाती है, सो यह अच्छी नहीं ( हानिकारक ) है. क्योंकि भस्माग्निवाले पुरुषको नियतकालपर भोजन, पान प्राप्त न हुआ तो वह प्यास, पसीना, दाह, मूर्च्छा आदि उत्पन्न करके मनुष्यको निधन (नष्ट) कर देती है. इसलिये वैद्य अग्निबल विचारके चिकित्सा करे. अन्यथा कीहुई चिकित्सा निष्फल हो जाती है. इति अग्निबलविचार ॥

## साध्यासाध्यविचार.

साध्यलक्षण– जिस रोगीकी प्रकृति ठिकाने हो, अग्नि तीव्र हो, उपद्रवयुक्त रोग न हो, रोग एकही दोषसे उत्पन्न हो, इत्यादि लक्षणयुक्त रोगीको वैद्य साध्य जाने और औषध देवे.

असाध्यलक्षण–जिस रोगीको रात्रिमें नींद न आवे, कंठमें कफ खरांवे, शरीरमें दाह हो, नाडी मंद चले, वाणी ( बोलनेसे ) थकित हो जावे, नेत्रादि समग्र इन्द्रियां अपने अपने विषयसे रहित हो जावें ( उद्योग छोड देवें ), अग्नि मंद पड जावे, प्रकृति विगड जावे, नेत्र लाल हो जावें, स्वा-

स वढें, हृदयमें शूल चले, तंद्रा हो (अधमुची आखें अर्थात् उसनींदासा-होना ), हिचकी उठे, निर्लज्ज हो जावे, प्यास अधिक लगे, अधिक सोवे, अधिक और चिकनापन लियेहुए पसीना निकले इत्यादि लक्षणयुक्त रोगीको वैद्य असाध्य समझे ऐसा रोगी बचना कठिन है इसलिये वैद्य ऐसे रोगीको औषध न देवे यदि देवे तो पूर्ण सोचविचारके, नहीं तो व्यर्थही अपयशका विभागी होगा. इति साध्यासाध्यविचार.

## पथ्यापथ्यविचार.

रोगीको जिस रोगपर जैसे पथ्य योग्य समझे वैसे करावे और कुपथ्य न होनेदे क्यों कि पथ्यसे रोगीका रोग निरोषधभी शांत हो जाता है और कुपथ्यसे औषध सेवनपरभी कुछ नहीं होता है देखियेकि वैद्यजीवनमें यह लिखा है

पथ्ये सति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणैः ॥

पथ्येऽसति गदार्तस्य किमौषधनिषेवणैः ॥ वैद्यजीवने ह्युक्तम्.

इति पथ्यापथ्यविचार.

## अनुपानविचार.

वैद्यको चाहिये कि– चूर्ण, गुटिका, अवलेह, हिम, क्वाथ, घृत, तैल, आसव और भस्म आदि जिस अनुपानसे जिस रोगपर वैद्यकशास्त्रोंमें लिखी हो उसी प्रकार देवे जिससे रोगी शीघ्र शांत हो जावे और विना-विचारे ऐसा न करे कि[1] चाहे जिस वृक्षकी जड चाहे जिस वस्तुके साथ पीसके चाहे जिस रोगपर देनेसेही काम रक्खे फिर आगे जो होगा सोहोगा ( इच्छितकार्यकरे ) ऐसाविना पढेलिखे और सद्गुरुकी शिक्षा पायेविना जो वैद्य बनके औषध करने लगते हैं वे[2] महाब्रह्मघाती होते हैं और इसलोकमें

१ यस्य कस्य तरोर्मूलं येनकेन च पेषणं । यस्मैकस्मै प्रदातव्यं यद्वातद्वा भविष्यति ॥१॥
२ प्रायश्चित्तं चिकित्सां च ज्योतिषं धर्मनिर्णयं ॥ विनाशास्त्रेण यो ब्रूयात् तमाहुर्ब्रह्मघातिनम् ॥ २ ॥

अपकीर्ति प्राप्तकर मरनेपर कुम्भीपाक नर्कमें पडते हैं इसलिये सर्व जनको इस वातपर पूर्ण ध्यान रखना चाहिये. ॥ इति अनुपानविचार ॥

## रोगीविचार.

१ उत्तम लक्षणयुक्त वैद्य देखके औषध लेवे, २ जिस समय और जिस अनुपानके साथ वैद्य औषध देवे यथोचित लेवे, ३ पथ्यसे रहे, ४ परिचारक ( सेवक ) भी चतुर रक्खे. क्यों कि– १ सद्वैद्य, २ योग्यौषध, ३ चतुर सेवक, ४ जितेन्द्रिय तथा पथ्यसे चलनेवाला रोगी ये चार वातें यदि पूर्णरूपसे यथोचित मिल जावें तो कष्टसाध्यरोगभी साध्य होकर शीघ्र आरोग्य हो जाता है. ॥ इति रोगीविचार ॥

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे नाडीविचारादिनिरूपणं नाम द्वितीयस्तरंगः ॥

## यंत्रविचार.

तत्रादौ वालुकायंत्रम्।

भाण्डे वितास्तिगंभीरे, मध्ये निहतकूपिके ॥
कूपिकाकण्ठपर्यन्तं वालुकाभिश्च पूरितम् ॥ १ ॥
भेषजं कूपिकासंस्थं, वह्नितो यत्र पच्यते ॥
वालुकायंत्रमेतद्धि, यंत्रं तत्र बुधैः स्मृतम् ॥२॥ रसप्रदीपे ह्युक्तम् ॥

भाषार्थ– १ एक बीता गहरी मट्टीकी काली हंडीमें दृढ[१] कांचकी शीशी रखके उस शीशीके गलेतक हंडीमें रेती भरदे और जिस औषधको आंच देना होसो पहिलेही उस शीशीमें भरधरे तदनंतर उस हंडीको भट्टीपर चढाके लिखेप्रमाण और समयपर्यंत आंच देवे. इसे वालुकायंत्र कहते हैं ॥

---

१ बहुधा साधारण कांच आंच लगतेही फूट जाता है. परन्तु उक्त कार्यकेलिये एक जुदेही प्रकारका कांच वनाजाता है जिसकी शीशी आंचसे नहीं तडकती. और समय पर्यंत आच सहन करती है ॥

## दोलायंत्रम्.

निबद्धमौषधं सूतं, भूर्जे तत् त्रिगुणाम्बरे ॥
रसं पोटलिकां काष्ठे, दृढं बद्ध्वा गुणेन हि ॥ १ ॥
संधानपूर्णकुंभान्तः खावलम्बत संस्थितम् ॥
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं, तत्तदुक्तक्रमेण हि ॥ २ ॥
दोलायंत्रमिदं प्रोक्तं, स्वेदनाख्यं तदेव हि ॥ रसप्रदीपे ह्युक्तम् ॥

भाषार्थ–जो औषध शुद्ध करनाहो उससे तिगुणा वोझका कपडा उसपर लपेटकर ( अथवा उस वस्तुको वस्त्रके तीन लपेटे लगावे ) उसकी पोटली वनाकर एक लकडीके मध्यमें इस युक्तिसे लटकावे कि जिसमें वह घडे- (जिस पात्रमें कांजी आदि पदार्थ उस वस्तुके शोधनके लिये भरा रहता है) के वीचोवीच अधर लटकती रहे, और जिस पदार्थसे शुद्ध करना हो वह उस घडेके मुंहसे कुछ कम भरके उस घडेको भट्टीपर रखो और लिखे प्रमाण आंचदो ॥ इसे दोलायंत्र कहते हैं ॥

## स्वेदनयंत्रम्.

स्वाम्बुस्थालीमुखे बद्धे, वस्त्रे स्वेद्यं निधाय च ॥
पिधाय पच्यते यंत्रं, तद्यंत्रं स्वेदनं स्मृतम् ॥ १ ॥ र०प्र०

भाषार्थ– जलयुक्त घटके मुखपर वस्त्र बांधकर उसमें ( जो शुद्ध करना हो सो ) औषध रखके उसके ऊपर दूसरा पात्र रखदो अब उस घडेका मुंह बंदकरके उस यंत्रको लिखे प्रमाणानुसार भट्टीपर आंचदो ॥ इसे स्वेदनयंत्र कहते हैं ॥

## विद्याधरयंत्रम्.

अथ स्थाल्यां रसं क्षिप्त्वा, निदध्यात्तन्मुखोपरि ॥
स्थालीमूर्ध्वमुखीं सम्यङ् निरुध्य मृदु मृत्स्नया ॥ १ ॥
ऊर्ध्वस्थाल्यां जलं क्षिप्त्वा चुल्ह्यामारोप्य यत्नतः ॥
अधस्ताज्ज्वालयेदग्निं यावत् प्रहरपंचकम् ॥ २ ॥

स्वाङ्गशीतात्ततो यंत्राद् गृह्णीयाद्रसमुत्तमम् ॥
विद्याधराभिधं यंत्रमेतत्तज्ज्ञैरुदाहृतम् ॥ ३ ॥ र०प्र०

भाषार्थ—एक घडेमें रस ( अथवा जो वस्तु रखनी होसो ) धरके उसके मुंहपर दूसरे घडेका पैंदा जमाओ और दोनोंको चिकनी मिट्टीमें लिपेटी हुई कपडेकी पट्टीसे भली भांति बंद करदो तदनंतर उपरवाले घडेमें पानी भरके भट्टीपर चढादो, वैद्यशास्त्रानुसार उसे ५ पांच प्रहर ( पन्द्रह घंटे )पर्यंत लगेतार आंच देकर जब वह स्वतः सर्वशीतल होजावे तब घडेमें रखीहुई वस्तुको निकाल लेवे. इसे विद्याधरयंत्र कहते हैं ॥

## भूधरयन्त्रम्.

वालुकाभिः समस्तांगं गर्ते मूषा रसान्विता ॥
दीप्तोपलैः संवृणुयाद्यंत्रं भूधरनामकम् ॥१॥

भाषार्थ—भूमिमें गड्डा खोदकर उसमें एक शीशी धरके उसे गलेतक वाल्रूसे पूरित कर देवे जिसमें वह दृढ होजावे नंतर दूसरी शीशीमें रस ( अथवा जो वस्तु शोधन करना होसो ) रखकर उसके मुखपर वस्त्र अथवा धातुका डाट ( जिसमें सूक्ष्म सूक्ष्म अनेक छिद्रहों ) लगादेवे फिर इस दूसरे शीशेको पहिले ( गड्ढेमें धरेहुए ) शीशेके मुंहसे मुह मिलाकर मिट्टीआदिसे दृढ करके उसी गड्ढेमें धरदे और ऊपरकी शीशी पर ईंधन ( कंडा=गोवरी=उपली ) रचके ऊपर तक दाव ( ढांक ) देवे पश्चात् लिखे प्रमाणानुसार आंच देवे जब स्वांग ( स्वतः ) शीतल होजावे तब नीचेके शीशेमें जो कुछ पदार्थ द्रव ( पतला=बहताहुआ ) होकर गिराहो उसे निकाल लेवे ॥ इसे भूधरयंत्र कहते हैं

## डमरूयंत्रम्.

यंत्रं डमरुसंज्ञं स्यात्तत् स्थाल्ये[illegible]ते ॥

भाषार्थ— दो मिट्टीके घ[illegible] मुख परस्पर जोडके कपडमिट्टीसे वंद करदे नीचेके घडेमें जो वस्तु धरना होसो धरके आंच लगावे और ऊपरके

घडेके पेंदे ( तळी )पर पानी भरा चपटा वर्तन घरे अथवा मिट्टीकी किनारी ऊपरके वर्तनकी तळीपर बनाके उसपर कपडा धरदे और कपडेपर पानी छोडता जावे. इसी यंत्रके द्वारा ऊपरके पात्रमें नली लगाकर रस ( अर्क ) भी उतार सक्ते हैं ॥ इसे डमरू यंत्र कहते हैं ॥

गजपुटम्.

सपादहस्तमानेन कुण्डे निम्ने तथायते ॥ वनोपलसहस्त्रेण पूर्णे मध्ये विधारयेत् ॥ १ ॥ पुटनद्रव्यसंयुक्तां कोष्टिकां मुद्रितां मुखे ॥ अथार्धानि करंडानि चार्द्धान्युपरि निक्षिपेत् ॥२॥ एतद्गजपुटं प्रोक्तं ख्यातं सर्वपुटोत्तमम् ॥ रसप्रदीप

भाषार्थ—सवाहाथ (३०अंगुळ)का एक शंकु बनाके उसीके प्रमाण लम्बा चौडा गहरा(१¼×१¼×१¼ हाथ अर्थात् १¼ घनात्मकहाथ) कुराड ( गड्डा ) खोदके उसमें १००० जंगली गोवरी ( आलने कंडा )मेंसे आधे नीचेके अर्ध कुंडमें भरदो और जो वस्तु जलानाहो उसे संपुट करके उसमें धरो फिर आधी उपली ऊपरसे ढाकके अग्नि लगा दो जब स्वांग (स्वतः आपही) ठंडा होजावे तब वह संपुट निकाललो इसी प्रकार जिस भस्म जितनी आंच देना होवे तितनी वार उक्तवत् करतेजाओ. इसे सर्वोत्तम गजपुट कहते हैं, यह सर्व रसप्रदीप तथा भावप्रकाशमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे यंत्रविचारनिरूपणं नाम तृतीयस्तरंगः॥

## अथ धात्वादिसंशोधनविचार.

अथ सप्त धातवः

स्वर्णं तारं प्रिये ताम्रं नागं वंगं मनोहरे ॥
स्वर्णांगिजसदं लोहं सप्तैते धातवः स्मृताः ॥ १ ॥

अथोपधातवः

माक्षिकं तुत्थकं तालं नीलांजनमथाभ्रकं ॥
मनःशिला च रसकं प्राहुः सप्तोपधातवः ॥ २ ॥ अनुपानत०

भाषार्थः– १ सोना, २ चादी, ३ तांबा, ४ सीसा, ५ रांगा, ६ जसद ( जस्ता ), ७ और लोहा ये मुख्य सात धातु हैं. और ( तांबा+जस्ता= पीतल, तांबा+रांगा=कांसा ) तांबेमें जस्ता मिलानेसे पीतल और रांगा मिलानेसे कांसा ये संयुक्त धातु भी बनती हैं ॥ १ ॥

१ सोनामक्खी, २ नीलातूथा ( हरियाथूथा ), ३ हरताल, ४ सुरमा, ५ अभ्रक, ६ मनशिल, और ७ अपरिया, ये सात उपधातुएं कहाती हैं ॥ २ ॥ अब उक्त धातुओंके शोधनेकी विधि लिखते हैं.

जो धातु शोधनाहो उसके बारीक बारीक पत्र करो और तयारकर उन्हें “ १ तेल, २ छाछ ( मठा=मही ), ३ गोमूत्र ( गुमातर ), ४ कुलथीका काढा, और ५ कांजी ” इन पांचों वस्तुओंमें क्रमशः प्रति सात सात अथवा तीन तीनवार बुझाओ. इनमेंसे १“रांगा, २सीसा, ३ जस्ता, ” इन तीनोंको गलाके तेल आदि उक्त पांचों पदार्थोंमें बुझाके पुनः तीन वार आक ( अकाव ) के दूधमें बुझानेसेही शुद्धहो जाते हैं.

सूचना–इन्हे गलाके वडी युक्तिसे बुझाना चाहिये क्योंकि ये उडकर शरीरको जला देते हैं. यह शुद्धि शारंगधर तथा अनुपानमंजरीमें लिखी है,

१ तांबेका विशेष शोधन– उक्त पांचों वस्तुओंमें तांबेकों सात सात बार बुझाके “ १ सेहुड, (थूहरका दूध, ) २ गायका दूध, ३ इमलीका पानी, ४ नींबूका रस, ५ दाखका पानी, ६ मधु ( शहद ), और ७ भूकंद ( जिसे जमीकंदभी कहते हैं )का रस ” पुनः इन सातों पदार्थोंमें सात सात वार बुझाओ तो तांबा पूर्ण शुद्ध हो जावेगा.

२ सीसेका विशेष शोधन–पूर्वोक्त ( तेल, छाछआदि ) वस्तुओंसे शुद्ध करके “ १घी कुमारी पाठे ( गवारपाठा )का रस, २ और त्रिफलाका क्काथ” पुनः इन दोनों वस्तुओंमें गलाके सात ७ वार बुझाओ तो सीसा पूर्ण शुद्ध होगा.

३ रांगेका विशेष शोधन– सीसेकी शोधनरीत्यानुसार जानो.

४ जस्ताका विशेष शोधन– सीसेकी रीतिपरही है.

५ लोहेका विशेष शोधन– लोहेको तांबेकी रीतिपर शुद्ध करके पुनः त्रिफलाके क्वाथमें सातवार बुझाओ तो पूर्ण शुद्ध हो जावेगा.

६ सोनेका विशेष शोधन }
७ चांदीका विशेष शोधन } इन दोनों धातुओंका शोधन प्रथम तेल छाछादि वस्तुओंमे बुझाय देनेसेंही हो जाता है ये स्वतः विशेष शोधित हैं इसलिये इनको अधिक शोधनेकी आवश्यकता नहीं इति धातुशोधनविचारः ॥

अब उपधातुओंके शोधनेकी रीति देखो.

१ सोनामक्खीशोधन–तीन भाग सोनामक्खीमें १ एक भाग सेंधानमक डालकर जमीरी (अथवा बिजौरा)के रसकेसाथ कडाहीमें रखके आच दो और लोहेकी करछुलीसें घोटते जाओ जब कडाही अग्निकी आंचसें लाल हो जावे तब उतारके शीतल हो जानेपर निकाल लो.

२ रूपामक्खीशोधन–"१ ककेडा २ तथा मेंढासिंगी ३अथवा जमीरी" के रसमें घोटके सूर्यकी तीक्ष्ण तापमें रखो रूपामक्खी शुद्ध होजावैगी.

३ नीलाथोथाशोधन–नीले थूथेमें बराबर बिल्लीकी विष्ठा और ४ भाग सुहागा लेकर तीनों वस्तु मधुमें खरल करो नंतर सम्पुट करके जंगली गोवरीकी आंच देओ यावत् तीन वार करनेसें नीला थूथा शुद्ध हो जावेगा.

३ हरतालशोधन–हरतालको "त्रिफलाका क्वाथ, २कांजी, ३ भूरा कुह्मडाका रस ४ और तेल" इन प्रत्येक पदार्थोंमें जुदी २ दोलायंत्रसे १ एक प्रहरकी आंच देओ अथवा चूनाके जलमें ४ चार प्रहरपर्यंत दोलायंत्रसें स्वेदन करो तो हरताल शुद्ध हो जावेगी.

४ सुरमाशोधन–सुरमाको जमीरीके रसकी पुट देके १ दिनभर धूपमें सुखा देओ तो सुरमा शुद्धहो जावेगा.

५ अभ्रकशोधन–अभ्रककों अग्निमें तपाके गऊके दूधमें बुझाओ फिर "चौलाईका रस तथा इमलीकी खटाईमें" आठ प्रहर (एकदिनरात भिंगाये रक्खो अभ्रक शुद्ध हो जावेगा.

६ मनशिलशोधन–मनशिलको बकरीके मूत्रमें दोलायंत्रसें तीन दिन

पकाकर गरम खपरा ( मिट्टीके बरतनका टुकडा ) या करछुली या तवापर कुछ समयतक रक्खो तो शुद्ध होजावेगा.

७ खपरियाशोधन– खपरियाको मनुष्यके मूत्र ( अथवा गोमूत्र ) में दोलायंत्रसें ७ सात दिन पकाओ तो शुद्ध होजावेगा.

इति उपधातुशोधनविधि.

रत्नशोधन– १ सूर्यकांति आदिमणि, मोती तथा मूंगाको जाईके रसमें दोलायंत्रसे एक प्रहरपर्यंत आंच दो, अथवा संपूर्ण वैक्रांतादि रत्नमात्रको भटकटैयाकी जडमें लुगदी ( गोली=ढेला ) बांधकर कोद्रु तथा कुलथीके काढेमें दोलायंत्रसे तीन दिन तक पकावे तो सर्व रत्नमात्र (चाहेसो रत्न ) शुद्ध होजावेंगे.

पारदशोधन– पारेके १८अठारह संस्कार होते हैं परंतु उन संस्कारोंसे शुद्ध किये हुए पारेके समानही हिंगुलसे निकाला हुआ पाराभी शुद्ध होता है इसलिये हिंगुल ( अर्थात् शिंगर्फ जिसमें पारा अधिक हो ) को नींबूके रसमें १ एक दिनभर मर्दन करके डमरू यंत्रसे ३ तीन प्रहरकी आंच दो नंतर पूर्ण शीतल होनेपर ऊपरके पात्रके पेंदेमें लगा हुआ पारा निकालकर नींबू ( अथवा नीम )के रसमें १ प्रहरभर मर्दन करे तो पारा शुद्ध हो जावेगा. इस क्रियासे निकालाहुआ पारा उसी गुणका है जो १८ अठारह संस्कारोंसे शुद्ध हुएमें है.

गंधकशोधन– गंधक और घृत ( घी ) समान भाग मिलाकर लोहेके पात्रमें मंदाग्निसे उष्ण करो. जब पतला हो जावे तब गऊके दूधमें बुझा दो तो गंधक शुद्ध होजावेगा.

शिलाजीतशोधन– शिलाजीतको “ गऊका दूध त्रिफलाका काढा और भृंगराजके रस” में एक एक दिन खरल कर करके धूपमें रखते जाओ तो शुद्ध होजावेगा.

हिंगुलशोधन– हिंगुल ( शिंगर्फ ) को खलमें डालकर ७ सात पुट भेडीके दूध और ७ सात पुट नींबूके रसकी देवे तो निश्चय शुद्ध हो.

जमालगोटाशोधन–जमालगोटेके ऊपरका छिलका और उसके बीजोंके भीतरकी हरी पत्ती निकालकर बारीक कपडेमें पोटली बाधके भैंसके गोबरमें ४ चार दिन तक रक्खो फिर निकालके उष्ण जलसे धोकर अति बारीक वस्त्रमें पोटली बांधो. तदनंतर उस वस्त्रसहित खरल करके नये खपरेपर उसका लेप चढा दो और सूखजानेपर खपरेसे छीलकर पुनः नींबूके रसमें २दो पुट देओ तो अत्युत्तम शुद्ध होजावेगा.

बत्सनाग ( बछनाग ) शोधन–बछनागके बारीक टुकडोंको एक वस्त्रमें बांधके बकरी तथा गऊके दूधमें दोलायंत्रसे १ एक प्रहरपर्यंत पचावे तो बछनाग शुद्ध होजावेगा.

भिलवाशोधन–भिलवोंकी विजीको ईंट या कवेलू ( खपरा )के कपडछन किये हुए चूरमें मिलाकर कपडेकी थैलीमें भरके ८ प्रहर ( १ दिनरात ) पडे रहने दो दूसरे दिन उष्ण जलसे धोकर दूधमें दोलायंत्रसे शुद्ध करले.

इति शोधनविधि समाप्त.

हमने तुमको उपरोक्त विषयमें अनेक धातूपधातुओंकी शोधनविधिका बोध करादिया. अब किंचित् भस्मविधिकी ओर ध्यान दो.

सातों धातुओंकी भस्म करनेकी अनेक विधि हैं परन्तु सर्व साधारण पुरुषोंको सुगमतार्थ हम ऐसी क्रिया बताते हैं कि जिस एकही क्रियासे सर्व धातुओंकी भस्म हो जावे.

क्रिया–मनशील और गंधक इन दोनोंको अर्कदुग्ध( अकावका दूध )में पीसके ( जिस धातुकी भस्म करना हो उस ) धातुपर इसका लेप कर दो और इसे गजपुटमें १२ बारह वार क्रमशः फूंको तो चाहे जिस धातुकी भस्म हो जावेगी जैसे सद्गुरुके बचन झूटे नहीं होते त्योंही यह क्रियाभी कदापि झूटी नहीं होती ऐसा शारंगधरमें लिखा है. हमने तुम्हें धा-

---

१क्यों कि वस्त्रसहित खरल करनेसे उसका तेल वस्त्रमें लगकर वह निर्दोष हो जाता है.

२शिलागंधार्कदुग्धाक्ताः स्वर्णं वा सर्वधातवः ॥
म्रियंते द्वादशपुटैः सत्यं गुरुवचो यथा ॥ १ ॥ शारंगधरे द्वितीयखंडे ह्युक्तम् ॥

तुओंकी शोधनादि विधिका आवश्यकतानुसार बोध कराया यदि इस विषयको अधिक देखना चाहो तो "रसरत्नाकर" नाम ग्रन्थ देखो.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे धात्वादि वस्तुशोधननिरूपणं नाम चतुर्थस्तरंगः ॥ ॥

मानविचार.

न मानेन विना युक्तिर्द्रव्याणां जायते क्वचित् ॥
अतः प्रयोगकार्यार्थं मानमत्रोच्यते मया ॥ १ ॥ भा० प्र०

भाषार्थ– मान( तोल )के जानेविना औषधादि पदार्थोंके बनानेकी युक्ति सिद्ध नहीं हो सक्ती इसलिये अब हम कई प्रकारके मान लिखते हैं.

भावप्रकाश.

प्रथम मान जोकि अमृतसागरके औषध प्रयोगमें माना गया है॥

८ आठ रतीका = १ मासा
३ तीन मासे = १ टांक
४ चार टाक = १ तोला
३ तीन तोले = १ टका = २ पैसे.
१८ अठारह टके = १ सेर जिसके ५४ तोले और स्थूल रीतिसे ५६ रूपये होते हैं.
४० चालीस शेर = १ मन, यह मन कच्चा कहलाता है क्योंकि १८ टकेके सेरसे है, प्राचीन अमृतसागरके ग्रंथकर्ता महाराज. श्रीप्रतापसिंहजीने यही १८( टकेका) कच्चा मन माना है और आधुनिक प्रमाणसे २८ टकेका पक्का सेर मानकर ४० सेरका मन माना है इसलिये यह पक्का मन कहाता है. इति प्रथममान.

अथ द्वितीयं मागधं मानं.

चरकस्य मतं वैद्यैराद्यैर्यस्मान्मतं ततः ॥
विहाय सर्वमानानि मागधं मानमुच्यते ॥ १ ॥

भाषार्थ– शेषजीके अवताररूप चरकमुनिराजाने मागधी मानको मुख्य माना है इसलिये सर्व प्राचीन सद्वैद्योंनेभी इसीको स्वीकार किया है, सो अन्य सब गौण मानोंको

छोड हमभी यहां मुख्य मागधी मानकोही लेते हैं.

भावप्रकाश तथा शारंगधरमेंभी यही लिखागया है.

दूसरा मागधीयमान.

३० तीस परमाणुका = १ त्रसरेणु इसे वंशीभी कहते हैं.

६ छःवंशीकी = १ मरीचि जो अति सूक्ष्म होता है.

६ मरीचि = १ राई.

३ राई = १ सर्षप अर्थात् सरसों.

८ आठ सरसोंका= १ यव (जौ)

४ यव =१ गुंजा (गुमची चिरमूं)

६ छः गुंजा = १ मासा ( हेम= धात्य )

४ चार मासे =१ शाण जिसके व्यवहारमें ३ मासे होते हैं. इसीको "निष्क, धरण और टंक" भी कहते हैं

२ टंक = १ कोल जिसके व्यवहारमें छ मासे होते हैं कोलके "क्षुद्रम, वटक, और द्रंक्षण" ये नामभी हैं.

२ कोलका= १ कर्ष, यह कर्ष मागधीय मानसे १६ मासे, और व्यवहारी मानसे १ तोलेका होता है इसके "१ पाणि, मानिका २ अक्ष, ३ पिचू, ४ पाणितल, ५ किंचित पाणि, ६ तिंदुक, ७ विडाल परढक, ८ षोडशिका, ९ करमध्य, १० हंसपद, ११ सुवर्ण, १२ कवलग्रह, और १३ उदुम्बर" ये नामभी हैं.

२ दो कर्ष =१ अर्धपल जिसे "शुक्ति और अष्टमिका" भी कहते हैं.

२ दो शुक्ति = १ पल, यह पल मागधी मानसे ५ तोले, और व्यवहारी मानसे ४ चार तोलेका होता है. इसके "१मुष्टी, २ आम्र, ३ चतुर्थिका, ४ प्रकुंच, ५ षोडशी, और ६ बिल्व" ये नामभी हैं.

२ दो पल = १ प्रसृती ( प्रसृतभी कहते हैं ) मागधीमानसे १० तोले और व्यवहारी मानसे ८ तोलेकी होती है.

२ प्रसृति = १ अंजली, इसे = १कुडव, २ अर्धशराव, और ३ अष्टमानभी कहते हैं. मागधीय मानसे २० तोले, और व्यवहारीय मानसे १६ तोलेकी होती है इसलिये इसको एक पाव जानो.

२ कुडव = १ मानिका, इसे शराव और अष्टपलभी कहते हैं इसलिये उसे ॥ ( आधसेर )की समझना चाहिये.

२ शराव = १ प्रस्थ, इसे १ एक सेरभर जानो.

४ प्रस्थ = १ आढक, जिसे भाजन और कंसपात्रभी कहते हैं इसमें ६४ पल होते हैं, इसे ४ चार सेरका जानो.

४ आढक = १ द्रोण, इसके “ १ कलश, २ नल्वण, ३ उन्मान, और ४ घटराशि ” ये नामभी हैं.

२ द्रोण = १ शूर्प ( कुंभ ) जिसके ६४ शराव तथा ३२ सेर होते हैं.

२ शूर्प = १ द्रोणी ( वाहगोणी ) इसमें १२८ शराव तथा ६४ सेर हैं.

४ द्रोणी = १ खारी जिसमें ४०९६ चार सहस्र छ्यानवे पल तथा २५६ सेर होते हैं.

२००० दो सहस्र पलका= १ एक भार होता है.

१०० शत पलकी= १ तुली होती है. हम ऊपर ४ तोले ( व्यवहारीय ) का एक पल लिख आये हैं. इसलिये ( पल तोला तोला तोला छटाक छटाक सेर / १०० ×४= ४०० ÷५= ८०÷ १६ =५ ) ५ सेर ( पक्के जो आजकल चलते हैं )की १ तुला हुई और २००० पलका एक भार और १०० पलकी एक तुला ( ∴२०००÷१००=२० ) इसलिये २० तुलाका एक भार हुआ अब ( तुला सेर सेर सेर मन / २०× ५=१००÷ ४० =२½ ) उक्तगणनानुसार २½ ढाई मन ( पक्का जो आजकल अंग्रेजी तौल तथा व्यवहारमें चलता है ) का १ भार जानो. इति द्वितीयमागधीयमानम्.

### तृतीय कलिंगमानम् ३.

यतो मन्दाग्नयो ह्रस्वा हीनसत्वा नराः कलौ ॥
अतस्तु मात्रा तद्योग्या प्रोच्यते सुज्ञसंमता ॥ १ ॥ भा०प्र०

भाषार्थ– कलियुगी मनुष्य ह्रस्वाङ्ग, मन्दाग्नि, तथा निर्बल होते हैं अतएव उनके योग्य मात्राकी योजना करनेकेलिये कालिंगमान लिखते हैं. इस मानानुसार मात्राकी योजना सर्व सद्वैद्योंको मान्य है. तीसरा कालिंगमान.

१२ श्वेत सरसोंका =१ यव.
२ यव „ = १ गुंजा.
३ गुंजा „ = १ वल्ल.
७ या ८ गुंजा „ = १ मासा.
४ मासे „ = १ टंक(शाण)
६ मासे „ = १ गद्यान.
१० मासे „ = १ कर्ष.

„ = १ पल,जिसमें १० शाण या टंक होते है
४ पल „ = कुडव होता है.
इसके आगे प्रस्थादिका मान.
पूर्वोक्त मागधीयरीत्यानुसार – (जहां काम पडे तहां)ही लेनाचा-

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे मानविचारनिरूपणं नाम पंचमस्तरंगः

## औषधि युक्तायुक्तविचारः

नवान्येवहि योज्यानि द्रव्याण्यखिल कर्मसु ॥
विना विडंगकृष्णाभ्यां गुडधान्याज्यमाक्षिकैः ॥ १ ॥

भाषार्थ–अब औषधियोंके युक्त तथा अयुक्त विचारोंको लिखना अवश्य है. क्योंकि युक्तायुक्त विचारके बिना कोई औषधि यथार्थ फलदायिनी नहीं होती है. सर्व कार्योंमें औषधि नवीनही डालना चाहिये परंतु

१–" १ वायविडंग, २ पिप्पली, ३ धनियां, ४ गुड, ५ मधु, और ६ घृत" ये छह पदार्थ सर्व वस्तुओंमें पुराने( १ वर्षसे नीचेके नहीं )ही डालना चाहिये.

२–" १ गुडवेल, २ कूडेकी छाल, ३ अडूसा, ४कोहला, ५ शतावरी, ६ असगंध, ७ खैरटी, ८ बडीशोंफ, और ९ प्रसारणी " ( अर्थात् चांदवेल जिसे पूर्वकी ओर गंधमदालीभी कहते हैं ) ये नव पदार्थ जिस औषधिमें उपयोग करो उसमें सर्वदा गीलेही डालो, गीले जानकर दूने मत डालो इनकेलिये यही नियम है.

३–उक्त औषधियोंके व्यतिरिक्त अन्य औषधियां समस्त कार्योंमें न-

वीन तथा सूखीही डालना चाहिये, यदि गीली हो तो सूखीके लिखित प्रमाणसे दूनी डालो.

४–जहां औषधि भक्षणकेलिये समय न लिखाहो वहां औषधि भक्षण-काल प्रातःकालही जानो, तथा जिस औषधिका अंग स्पष्ट न लिखाहो वहां उसकी जड लेना. और जिस प्रसंगपर औषधिका प्रमाण न लिखाहो वहां सर्वौषधि समान भागसे लेना. इसी प्रकार जहां पात्रका नियम न दर्शायाहो तो वहां मृत्तिकापात्र ( मिट्टीका बर्तन ) ही जानो.

५–यदि किसी प्रयोगमें एकही औषध दो दो बार लिखीहो तो वहां उस्से लिखित प्रमाणसे द्विगुण लेना चाहिये.

६–जहां "चंदन" मात्र लिखाहो जाति न दर्शाईहो तो आसव, अवलेह, घृतादि स्नेहमें प्रायः श्वेत चंदन डालो, परंतु क्वाथ तथा लेपमें रक्तचंदनही डालना चाहिये.

७–अत्यंत बडे वृक्षों ( जैसे नीमादि )की जडको छाल लेना चाहिये, परंतु छोटे कोमल वृक्षों( जैसे कटियाली, गोखरूआदि )की जड अथवा पंचांग लो.

८–वड आदि वृक्षोंकी छाल लो तथा खैर आदि वृक्षोंका सार लो और महुआ, बम्बूल आदिकी अंतरछाल लेना चाहिये.

९–"तालीस, तेजपात, तांबूल ( पान ), तुलसी, सोनामक्खी, और भंग" इत्यादिके पत्र लो, तथा त्रिफला, सुपारी आदिके फलही लेना चाहिये और पलास, गुलाब, सेवती आदि अनेक वृक्षोंके पुष्पही लेना योग्य है.

१०–"कँवच, अरीठा, कमलगट्टा, जायफल, काली मिर्च" इत्यादिके बीज लो. "अर्क थूहर, बड, और गूलर" इत्यादिका दूधही उपयोगी होता है.

११–यदि किसी स्थानमें कोई औषध न मिले तो तत्समान गुणवाली अन्यौषधभी युक्त करके निस्तार कर लेना चाहिये जैसे अतीसकी अप्राप्तिमें नागरमोथा, अमलवेतके अभावमें चूका अथवा चनाखार, मृगमद-( कस्तूरी )के अभावमें जायपत्री, ऋद्धिके अभावमें बला, और वृद्धिके न मिलनेपर नागबलाका उपयोग करसक्ते हैं.

१२—इसी भांति-मेदाके अभावमें असगंध, महामेदाकी अप्राप्तिमें प्रसारणी, काकोली तथा क्षीरकाकोली न हो तो शतावरी जीवकके अभावमे गिलोय, और ऋषभके न मिलनेपर वंशलोचनका उपयोग करके काम चलासक्ते है.

१३—इसीप्रकारसे—जायपत्रीके अभावमें लौंग, तगरके पल्टे कूठ, वौलसिरी न होतो कमलकंद, चित्रककी अप्राप्तिमें दंतीमूल, मधुके अभावमें पुराना गुड, स्वर्णभस्मके न मिलनेपर लोहसार, केशर न होतो कुसुंभा, और मोतीकी भस्मके अभावमें सीपीका चूना, इसी प्रकार औरभी औषधियोंका विचार करके ( अपनी बुद्धि तथा शास्त्रमर्यादानुसार ) ( वस्तु न मिले तो ) अन्य वस्तुकी योजनासे आवश्यकता निकाल सक्ते हैं इसका विशेष विस्तार देखनाहो तो "निघंटुप्रकाश" देखो.

१४—इसी प्रकार विचारपूर्वक जो वस्तुयुक्त करनेके योग्य हो उसेही युक्त करो, परन्तु अयुक्तकी योजना कदापि न करो.

१५—औरभी इस वातपर पूर्ण ध्यान देना चाहिये कि.

काष्ठादि औषधि १२ मास ( वर्षभर ) पश्चात् वीर्यहीन ( निकम्मी ) हो जातीहै जिनमेंसे चूर्ण दो मास, घृत तथा तैल ४ चार मास, और गुटिका, अवलेह, तथा पाकादि १ वर्षके पश्चात् निरुपयोगी हो जातेहैं परन्तु आसव तथा स्वर्णादि भस्म और रसायन ये जितने पुराने होते जावें उतनेही अधिक गुण दायक होते जाते हैं ॥ इति युक्तायुक्तविचारः ॥

## औषधभक्षणकालविचार.

भैषज्यमभ्यवहरेत् प्रभाते प्रायशो बुधः ॥
कषायांश्च विशेषेण तत्र भेदस्तु दर्शितः ॥ १ ॥
ज्ञेयः पंचविधः कालो भैषज्यग्रहणे नृणाम् ॥
किंचित् सूर्योदये जाते तथा दिवसभोजने ॥
सायंतने भोजनेच मुहुश्चापि तथा निशि ॥ शार्ङ्गधरे ह्युक्तम्.

भाषार्थः—१— वैद्य विशेषकर रोगीकों प्रातःकालही औषध भक्षण करावे तिसमेंभी औषधका अंगरस, कल्क, क्वाथ, फांट, और हिम ये तो प्रायः प्रातःकालही भक्षण करने चाहिये.

२— मनुष्योंकों औषध भक्षणकेलिये ५ काल हैं अर्थात् १ सूर्योदय होनेपर, २ दिनकों भोजन करनेके समय, ३ सायंकालको भोजन करनेके समय, ४ बारंबार, ५ रात्रिमें ये पांच काल जानो.

३— १पित्त या कफके कोपपर, २ पित्तपर विरेचन करानेकेलिये, ३ कफपर बमनकेलिये, औ ४ वातादि दोषको स्नेहादि योगसें पतला करनेकेलिये इत्यादि विकारवाले रोगीकों विना भोजन किये ( निराहार=भूखा ) प्रातःकालही औषधसेवन ( भक्षण=खिलाना ) चाहिये.

४—यदि गुदासंबन्धी अपानवायु कोपित हुआ हो तो भोजन करनेसें कुछहि पहिले औषध भक्षण कराना.

५—यदि अरुचि रोग हुआ हो अनेक प्रकारके रुचिकारक अन्नादि और उत्तमोत्तम भक्ष्य, भोज्य, लेह्य, चोष्य, पदार्थोंकेसाथही औषध दो.

६—जो नाभिका समानवायु कुपित हुआ हो अथवा मंदाग्नि हुई हो तो अग्नि प्रदीप्तणी औषध भोजनकेसाथ मिलाके खिलाओ.

७—जिसका समस्त शरीरव्यापक व्यानवायु कुपित हुआ हो उसे भोजन करनेकेपश्चात् औषध भक्षण कराना चाहिये.

८— हिचकी तथा आक्षेप तथा रोगमें और वायु कफके कोपमें भोजनके पूर्व और अन्त दोनों समयमें औषध देना.

९—कंठसंबन्धी उदानवायुके कोपसे स्वरभंग आदि रोग उत्पन्न हो तो सायंकालके भोजन करनेके समय ( घृतादिसे युक्त करके ) प्रत्येक ग्रास[१]ग्रासपर ( चटनीकेसमान ) औषध खिलाना चाहिये.

१०— जो हृदयस्थित प्राणवायुका कोप हो तो विशेषकर सायंकालका भोजनान्तमें औषध भक्षण कराई जावे.

---

१ क्योंकि ऐसा करनेसे वह औषध भोजनके साथ उत्तम प्रकारसे भिद जाता है.

११–तृषा, वमन, हिचकी, श्वास और विषदोष इत्यादि रोगोंमें अन्नसहित अथवा अन्नरहित बारंबार औषध दो.

१२–ठुड्डी( दाढी )के ऊपरी अंगके रोगोंमें ( जैसे कर्णरोग, नेत्ररोग, मुखरोग, नासिकारोग, इत्यादि ) तथा बढे हुए वातादि दोषोंको न्यून करनेके लिये और अति क्षीण रोगोंको घटानेकेलिये रात्रिकेसमय पाचन व शमनरूप औषध अन्नरहितही भक्षण कराना चाहिये.

इन नियमोंसें औषध भक्षण करानेके ५ पांच जुदे जुदे काल हैं सो वैद्यकों चाहिये कि रोगका निश्चय कर समय विचारसें औषध देवे.

रोग, औषध और समयके विवेकसें रहित इच्छित प्रमाणसेंही चिकित्सा नहीं करना चाहिये. इति औषधभक्षणकालविचार.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे युक्तायुक्तविचारादिनिरूपणं नाम षष्ठस्तरंगः ॥ ६ ॥

### औषधक्रियाविचार.

अथातः स्वरसः कल्कः क्वाथश्च हिमफांटकौ ॥
ज्ञेयाः कषायाः पंचैते लघवः स्युर्यथोत्तरम् ॥ १ ॥

भाषार्थ– १स्वरस, २ कल्क, ३ क्वाथ, ४ हिम और ५ फांट ये पांचों क्वाथके सदृशही हैं, इनमें एकसेएक उत्तरोत्तर हलके हैं.

### १ स्वरसविधि.

१ क्रिया–जो वनस्पति अग्नि तथा कीट आदिसें दूषित न हो उसें लाके तत्क्षण कूटो और वस्त्रसें निचोडके रस निकालो यह स्वरस ( अथवा अंगरस ) कहाता है.

२ क्रिया–४ चार पल सूखी औषधी लेके चूर्ण करो उस चूर्णको मृत्तिकाके पात्रमें ८ पल पानीकेसाथ डालकर ८ प्रहर ( दिनरात ) भींगने दो नंतर वस्त्रसें निचोडलो यह दूसरे प्रकारका स्वरस है.

३ क्रिया–सूखी औषधि लेके, औषधसें अष्टगुन पानी लो ये दोनो मृत्तिकाके पात्रमें डालके आंचसें औंटाओ चतुर्थांश रहनेपर छानलो यहभी स्वरसका तीसरा प्रकार है.

मात्रा—प्रथम प्रकारसें बनेहुए स्वरसकी मात्रा २ तोलेकी लेना चाहिये क्योंकि वह भारी होता है, दूसरे प्रकारसें बनेहुए स्वरसकी मात्रा ४ तोलेकी लेओ, तीसरे प्रकारसें बनेहुए स्वरसकी मात्राभी ४ तोलेकी जानो.

युक्त करनेके पदार्थोंका प्रमाण—मधु, शक्कर, गुड, जवाखार, जीरा, नोन, घृत, तैल, और चूर्णादि पदार्थ ६ मासे मिलाना चाहिये.

## २ कल्कविधि.

क्रिया—गीली औषधीकों चटनीके सदृश बारीक पीसो, तथा सूखी औषधकों जलके संयोगसें चटनीके समान बारीक पीसो उसे कल्क ( प्रक्षेप, और आवापभी ) कहते हैं.

मात्रा—कल्ककी मात्राका प्रमाण १ तोलेभरका है.

युक्तपदार्थप्रमाण—कल्कमें मधु, घृत, तैल मिलाना हो तो मात्रासें द्विगुण मिलाओ, शक्कर, गुड, मिलाना हो तो तुल्य, और दूध तथा पानी आदि द्रवपदार्थ मिलाना हों तो मात्रासे चौगुणें मिलाना चाहिये.

## ३ क्वाथविधि.

क्रिया—१ पल ( व्यवहारी चार तोले )औषधको कुछ कुछ कूटके उससे १६ गुणे जलकेसाथ मृत्तिकाके घटमें डालो, उसे आंचपर चढाके मंद मंद आंच दो इस घटका मुख बंद मतकरो नहीं तो वह क्वाथ यथार्थ गुणदायक न होगा. जब वह औंटते औंटते अष्टमांश रहजावे तब उतारकर "चीनी या कांच, तथा चांदी, किंवा पाषाण, और नहीं तो मृत्तिकाके पात्रमें छानलो" इसे क्वाथ ( शृत, कषाय और निर्व्यूहभी ) कहते हैं.

मात्रा—क्वाथकी मात्रा १ पलप्रमाण उत्तम, तीन अक्षप्रमाण मध्यम, और अर्ध पलप्रमाणकी निकृष्ट कहाती है.

युक्तपदार्थप्रमाण—क्वाथमें शक्कर डालना हो तो क्वाथके प्रमाणसें वातरोगमें चतुर्थांश, पित्तरोगमें अष्टमांश, और कफरोगमें षोडशांश डालो, यदि मधु

---

१ तोलेसे चार तोले पर्यंत औषध हो तो १६ गुणा जल लो, चार तोलेसे कुडव प्रमाण पर्यंत औषधहो तो अष्टगुण जल लो, और कुडवसे उपरांत प्रस्थप्रमाणपर्यंत औषध हो तो चतुर्गुण जल लेना चाहिये. ॥ ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है ॥

मिलना हो तो उक्तप्रमाणसें विपरीत डालो और जीरा, गूगल, जवाखार, सैंधव, शिलाजित, हींग, त्रिकटु ( सोंठ=मिर्च=पीपल ), आदिक पदार्थ क्राथमें डालना हो तो ४ चार मासे डालो.

रोगीकों चाहिये कि प्रसन्न चित्तपूर्वक कांचादिके पात्रमें क्राथ लेके कुछ कुछ उष्णकोही पीके पात्रकों भूमिपर उलटा डाल देवे. यदि वैद्यकी आज्ञा हो तो ऊपरसे तांबूलादि खावे.

## ४ हिमविधि.

क्रिया—४ चार तोले औषध कूटके २४ चौवीस तोले पानीकेसाथ मृत्तिकाके पात्रमें रातभर भींजनेदो प्रातःकाल छानलो इसें हिम (ठंडा क्राथ)

मात्रा—हिमकी मात्रा ८ आठ तोले प्रमाणकी है.

युक्तपदार्थप्रमाण—हिममें जो वस्तुएं मिलानी होवें तो क्राथके प्रमाणानुसारही मिलाना चाहिये.

## ५ फांटविधि.

क्रिया—१ पल औषधका महीन चूर्ण बनावे, मृत्तिकाके घडेमें १ कुडव ( जो व्यवहारी मानसें पावभरका होताहै ) पानी डालकर चूल्हेपर चढावे जब वह औटने लगे तब औषधका चूर्ण डालके कुछ कालपश्चात् उतार कर कपडेसें छानलेवे इसे फांट ( तथा चूर्णद्रवभी ) कहते हैं.

मात्रा—फांटकी मात्रा ८ आठ तोलेकी होती है.

युक्तपदार्थप्रमाण—फांटमें मधु, शक्कर, और गुडआदि पदार्थ मिलाना हो तो क्राथविधिमें लिखे प्रमाणानुसार मिलाओ.

## ६ चूर्णविधि.

क्रिया—अत्यंत सूखी औषधिको कूटके कपडछान करो उसेंही चूर्ण ( और रज, क्षोधभी ) कहते हैं.

मात्रा—चूर्णकी मात्रा १ तोलेकी लेना चाहिये.

युक्तपदार्थप्रमाण—चूर्णमें गुड मिलाना हो तो समान, मिश्री चूर्णसें दूनी. पकाई हुई हींग, अनुमान माफिक और मधु, अथवा कोई अन्य चिकना पदार्थ

मिलाना हो तो भी दूनाही मिलाओ, दूध, गोमूत्र, पानी आदि द्रवपदार्थ मिलाना हो तो चूर्णसें चतुर्गुण (चौगुणा) मिलाओ, यदि नींबूके रसादिकी पुट देना हो तो रसमें चूर्णको पूर्णरूपसे भींग जाना चाहिये.

### ७ अवलेहविधि.

क्रिया– औषधियोंके काथादिको पुनः पात्रमें डालके औंटाते औंटाते दृढ हो जाने देवे अर्थात् वह पदार्थ चाटनेके योग्य हो जावे उसे अवलेह ( लेहभी ) कहते हैं.

मात्रा– अवलेहकी मात्रा १ पल प्रमाणकी होती है.

युक्तपदार्थप्रमाण– अवलेहमें शक्कर डालना हो तो औषधके चूर्णसें चौगुणी, गुड डालना हो तो दोगुणा और दूध, गोमूत्र, जल आदि द्रवपदार्थ डालना हो तो चूर्णसें चौगुणे डालना चाहिये.

### ८ गुटिकाविधि.

क्रिया– गुड या शक्कर अथवा गूगलकी चासनी लेके, या विना चासनी लियेही, किंवा पानी या दूध अथवा मधुमें वैसेही चूर्ण डालकर गोली बाध लेना इसे गुटिका कहते हैं.

१ गुटिका, २ बट्टी, ३ मोदक, ४ वटिका, ५ पिंडी, ६ गुड, और ७ वर्ति ये सात नाम गुटिकाके पर्यायवाचक ( पल्टा वतानेवाले )ही हैं.

मात्रा– जिस प्रकरणमें जैसी लिखी हो वैसी जानो परन्तु सर्वतः काष्ठादि चूर्णकी बनीहुई गोलीकी १ तोलेकी मात्रा होतीहै.

युक्तपदार्थप्रमाण– शक्करमें गोलियां बनाना होतो चूर्णसें चतुर्गुण शक्कर लो यदि गुडमें बनाना हो तो चूर्णसे दूना गुड लो, मधु या गूगल मिलाना हो तो चूर्णके तुल्य लो और दूधआदि द्रवपदार्थ मिलाना हो तो चूर्णसें दूने मिलाना चाहिये.

### ९ घृततैलविधि.

क्रिया– जिन पदार्थोंका घृत या तेल बनाना हो प्रथम उनका कल्क ( ऊपरकी विधिमें देखो ) बनाके उससें चौगुणे घृत या तेल ( जो कुछ बनाना हो )के साथ दोनों पदार्थों ( कल्क और तेल या घी ) मिट्टीके चिकने

पात्रमें या कडाहीमें डालदो और उसीमें दूध, गोमूत्रादि पदार्थ (जो लिखे हों ) डाल घृत कर वह पात्र चूल्हेपर चढा दो जब आंच देते देते केवल या तेल शेष रहजावे ( कल्क दूधआदि पदार्थ जलजावे ) तब उतारके छान लो यही घृततैल प्रस्तुत होगया.

मात्रा—इसकी मात्रा १ पल प्रमाणकी होती है.

युक्तपदार्थप्रमाण—इसमें दूध, दही, गोमूत्रादि पदार्थ डालना होतो घृत-तैलसें चतुर्गुण डालना चाहिये.

इस विषयका विशेष विस्तार देखना हो तो शारंगधर तथा चरक सुश्रुतादि प्राचीन ग्रंथोंमें देखो.

### १० आसव तथा अरिष्टविधि.

क्रिया—जल तथा अन्य द्रवपदार्थोंके साथ पात्रमें औषधियां डालकर उसका मुंह बंदकर दो और भूमिमें गाडके पक्ष तथा मास पश्चात् निकालो यह आसव या अरिष्ट कहाता है.

आसव बनानेकी क्रिया जुदी है.

मात्रा—इनकी मात्रा १ पलकी होती है.

युक्तपदार्थप्रमाण—इन दोनोंमें जहां जलादि द्रवका प्रमाण नहीं लिखा हो तो १ द्रोण द्रवकेसाथ १ तुला प्रमाण गुड डालो उसीमें गुडसें आधा मधु और गुडसें दशमांश औषधियोंका चूर्ण डालना चाहिये और यदि सर्व वस्तुओंका प्रमाण लिखा हो तो लेखानुसारही लेना योग्य है.

आसव और अरिष्टकी भिन्नता—जिसमें औषधियां जुदी और केवल स्वच्छ जल जुदा डालकर उक्तरीत्यानुसार सिद्ध किया हो सो तो "आसव" कहाता है और जिसमें प्रथम जलकेसाथ औषधियोंका क्वाथ बनाकर डाला हो सो अरिष्ट कहाता है. इसके विशेष भेद शारंगधरादि वैद्यक ग्रंथोंमें देखो.

### ११ पुटपाकविधि.

क्रिया—जिस औषधका पुटपाक करके रस निकालना हो तो प्रथम उसके ऊपर बड या जामुनके पत्ते लपेट कर ऊपरसें काली मिट्टीका दो अंगुल मोटा जाड लेप चढा दो अब इस पिंडको तीक्ष्ण अग्निमें दबा दो जब यह

अंगारकेसमान लाल होजावे तब निकालकर (ठंडा होनेपर) मिट्टी पत्रादि अलग करो और औषध निकालकर रस निकाललो.

मात्रा—पुटपाकविधिसे निकाले हुए रसकी मात्रा १ पलकी है.

युक्तपदार्थप्रमाण—पुटपाकविधिसें निकालेहुए रसमें मधु आदि पदार्थ एक कर्ष प्रमाण डालना चाहिये.

### १२ मंथविधि.

क्रिया—४ पल प्रमाण ठंडे जलमें औषधका एक पल चूरा डालके मृत्तिकाके पात्रमें उसका मंथन (जैसा मक्खन निकालनेके लिये दही मथा जाता है) करो इसको मंथनजल कहते हैं.

मात्रा—इसकी मात्रा २ पल प्रमाणकी होती है.

### १३ क्षीरपाकविधि.

क्रिया—औषधके प्रमाणसें अष्टगुण दुग्ध और चतुर्गुण जल इन तीनोंकों एकत्रित कर औंटाओ औंटते औंटते जब पानी जलकर दूध मात्र रह जावे तब उतारलो इसे क्षीरपाक कहते हैं.

उपयोग—यह आमांशशूलको नष्ट करता है.

### १४ तण्डुलजलविधि.

क्रिया— १ पल प्रमाण कूटे हुए चावल अष्टगुण जलकेसाथ वर्तनमें डालके आंच दो पश्चात् छान लो, अथवा कुछ कालपर्यंत भीगने दो और छान लो इसे तण्डुलजल कहते हैं. पूर्वोक्त मुख्य और यह गौण है.

### १५ उष्णोदकविधि.

क्रिया—सेरभर जल तपावे, जब कुछ तप जावे, या आधा रह जावे अथवा चौथाई रहे किंवा अष्टमांश बच रहे तब उतार लेवे ये एकसेएक उत्तरोत्तर गुणी

उपयोग—यह जल कफ, आमवात, मेदवृद्धि, कास, श्वास और ज्वरकों दूर करता है और बस्तिको शोधन करनेवाला है.

### १६ कांजीविधि.

क्रिया—मृत्तिकाके नवीन पात्रमें सरसोंका तेल चुपरकर इस पात्रमें

निर्मल उष्ण जल, राई, जीरे, सैंधव, हींग, सोंठ, ( थोडीसी ) छाछ, और कुछ बडे ( पक्वान्नविशेष ) डालदो और इस पात्रका मुह बंद करके ३ तीन दिनपर्यंत रहनेदो जब वह उबल आवे तब कांजी कहावेगी.

मात्राविचार—हम उपरोक्त लेखमें १ स्वरस, २ कल्क, ३ क्काथ, ४ हिम, ५ फांट, ६ चूर्ण, ७ अवलेह, ८ गुटिका, ९ घृततैल, १० आसव, ११ पुट-पाक, १२ मंथ, १३ क्षीरपाक, १४ तण्डुलजल, १५ उष्णोदक और १६ कांजी इत्यादिका वर्णन करके प्रत्येककी मात्राका प्रमाणभी ग्रंथानुसार दर्शित करचुके तथापिभी सद्वैद्य काल, ज्वराग्नि, अवस्था, बल, प्रकृति, देश, और विकार इत्यादिका अपनी बुद्धिबल तथा शास्त्रोक्त आधारोंसें विचारकर औषधकी मात्रा देवे इसीलिये शारंगधरमें लिखा है.

**स्थितिर्नास्त्येव मात्रायाः कालमग्निं वयो बलम् ॥**
**प्रकृतिं दोषदेशौ च दृष्ट्वा मात्रां प्रयोजयेत् ॥** शा० १ अ० १श्लो० ३७

यह सब औषध क्रियाविचार भावप्रकाश तथा शारंगधरादि वैद्यक ग्रंथोंमें विस्तारपूर्वक लिखा है ॥ इति औषधक्रिया विचार ॥

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे औषधक्रियाविचारनिरूपणं नाम सप्तमस्तरङ्गः ॥ ७ ॥

## औषधदीपनपाचनादिविचार.

**पचेदामं वह्निकृच्च दीपनं तद्यथामिशिः ॥ पचत्यामं न वह्निं च कुर्याद्यत्तद्धि पाचनम् ॥ नागकेशरवाद्विद्याच्चित्रो दीपनपाचनः ॥२॥**

अब हम दीपन पाचन आदि औषधियोंका विचार उदाहरण सहित दर्शित करते हैं.

१ दीपनपाचन—जो औषध आमको न पचावे और अग्निको दीप्त करे वह दीपन कहाती है जैसे " बडीसोंफ ", तथा आमको पचावे और अ-ग्निको प्रदीप्त न करे सो पाचन कहाती है जैसे " नागकेशर ", और जो ओषधकी आमकोभी पचावे और अग्निकोंभी प्रदीप्त करे सो दीपन पाचन कहाती है जैसे " चित्रक "

२ संशमन—जो औषध शरीरके वातादि दोषोंको न विगाडे और न उनका शोधन करे किन्तु अपनी पूर्व दशापरही यथास्थित रहने देवे, और शरीरमें बिगडे हुए दोषको शमन ( ठीक=समान=यथायोग्य )कर देवें वह संशमन औषध कहाती है जैसे " नीमगिळोय "( अर्थात् गुरच= अमृता).

३ अनुलोमन—जो औषध वातादि दोषोंको पचाके परस्पर बंधेहुओंको प्रथक् करके मूलद्वारसे बाहर निकाल दे अथवा मल+मूत्रकी बद्धकता ( रुकावट )को पचाके गुदाद्वारा कोठेको शुद्ध करदेवे वह अनुलोमन कहाती हे जैसे " हरीतकी " ( हर्रा ).

४ स्रंसन— जो औषध कोठेके वातादिदोष तथा मलमूत्रको ( जो कि अपने नियतकालपरही पाचन होनेवाले हैं ) बलात्कार ( बरजोरी=जवरदस्ती )से पाक न होनेपरभी गुदाद्वारा बाहर निकाल देवे सो स्रंसन औषध कहाती है जैसे " किरमाले " ( किरवारा )की गिरी.

५ भेदन—जो औषध वातादिदोषसे बद्धाबद्ध ( बंधे हुए तथा न बंधे हुए ) मलमूत्रको खण्ड खण्ड कर गुदाद्वारा बाहर करदे, सो भेदन कहाती [illegible] " [illegible] "

६ रेचन—जो औषध पेटमेंके पक्कापक्क ( पके होंचाहे नहीं ) अन्नादि तथा वातादि दोषोंको पतलेकर गुदाद्वारसे बाहर निकाल दे सो रेचन कहाती है जैसे " निसोत."

७ वमन—जो औषध विन पकेहुएही बात तथा पित्तको बलात्कारसे मुखद्वारा ( उलटीकराके ) बाहरनिकालदे वह वमन संज्ञक औषध कहाती है जैसे मैनफल " जिसे मैनरभी कहते हैं ॥

८ संशोधन—जो औषध अपने स्थानमें वातादि दोष तथा मलसंचयको ऊर्ध्वाकर्षण ( ऊपरकी ओर खीचकर से) मुख नाककानादिद्वारा अथवा अध्वाकर्षण ( नीचेकी ओर खीचकर )से गुदा या मूत्रद्वारा बाहर निकाल दे सो संशोधन कहाती है जैसे " देवदाली " जिसे कूकडबेल और देवडोंगरीभी कहते हैं.

९ छेदन–जो औषध परस्पर ( एकसेएक ) मिलेहुए कफादिको अपनी प्रबलतासे भिन्न भिन्नकर देवे सो छेदन कहाती है जैसे "यवक्षार" तथा मिर्च, पिप्पली, शिलाजीत इत्यादि,

१० लेखन–जो औषध रसादि ७ धातु तथा वातादि दोष किम्वा वमनको शोषण करके पतले कर देती है सो लेखन कहाती है जैसे "मधु" शो उष्णजल, वच आदि.

११ ग्राही–जो औषध अग्निको प्रदीप्त करे, आमादिको पाचन करे और स्वयं उष्ण वीर्या होनेके कारण जळ रूप कफादी दोष तथा धातु मलका षण करे सो ग्राही कहाती जैसे "सोंठ, जीरा, गजपिम्पळी" इत्यादि.

१२ स्तम्भन–जो औषध रूखापन, सीतलता, कटुता, हलकापन और पाचन इन गुणोसे वायूत्पादक ( वात उत्पन करनेवाली ) हो सोस्तम्भन कहाती है जैसे " नगरमोथा, बीलकी, कोमळगिरी, मोचरस, कुडाछाल " इत्यादि.

१३ रसायन–जो औषध शरीरकी जरा व रोगोंको दूर करनेवाली हो सो रसायन कहाती है जैसे " नीमगिळोय, हर्रे गूगळ " इत्यादि.

१४ वाजीकरण–जो औषध धातुवृद्धिकरकें स्त्रीसे प्रीति बढावे सो बाजी करण कहाती हे जैसे शतावरी, केंवचवीज. दूध मिश्री " इत्यादि.

१५ धातुवर्धनी–जो औषध धातु ( वीर्य )को बढानेबाली सो धातुवर्द्धनी कहाती है जैसे " असगंध, मूसली, शक्कर, शतावरी " इत्यादि.

१६ धातुचैतन्य–जो औषध धातुको चैतन्य तथा उत्पन्न करनेबाली हैं सो धातुचेतनी कहाती हैं जैसे " दूध, उर्द, आंवळा, भिळवांकी विजी " इत्यादि.

१७ वाजीकरणविशेषता– धातुचैतन्यकारणी स्त्री धातुरेचक बडी कटियाळीके फळ, धातुस्तम्भक जायफळ, धातुशोषणकारणी हरीतकी,(हर्र) और धातुक्षयक कळिंग ( तरबूज ) है सो वाजीकरणमें भी उक्त बातोंकी विशेषतापर वैद्यपूर्ण ध्यान देवे.

१८ सूक्ष्म=जो औषध शरीरमें रंध्रोद्वारा प्रवेश होसके सो सूक्ष्म कहाती है जैसे " सैंधव, मधु, नीम तेल " इत्यादि.

१९ व्यवायी–जो औधष पेटमें पहुंचतेही (पचनेके पूर्व) सर्वत्र व्यापक होजावे पश्चात् पचे सो व्यवायी कहाती है जैसे"भांग अफू (अफीम)" आदि.

२० विकाशी– जो औषध शरीरकी संधियोंके सर्व बंधनको शिथिल ( ढीले ) करदे सो विकाशी कहते हैं " जैसे सुपारी, कोदव " इत्यादि.

२१ मादक–जो औषध तमोगुण प्रधान होके बुद्धिको विगाड देसो मादक (मादकारी) कहाती है जैसे "मदिरा" (मद्य. दारु शरावब्रांडी) इत्यादि.

२२ प्राणहारक–जो एकही औषध पूर्वोक्त ( १ व्यवायी २ विकाशी ३ सूक्ष्म ४ छेदन ५ मादक ६ और आग्नेयी ) दीपन इन छः=हो औषधियोंके गुणयुक्त हो सो प्राणहारक ( जीवान्तक ) कहाती है जैसे " वत्सनाग ¹ " इत्यादि.

२३ प्रमाथी–जो औषध अपने प्रभावसे मुख, नाख, कानादि कफादि दोषोंको संचयको दूर करदे सो प्रमाथी कहाती है जैसे " काली मिर्च, वच " इत्यादि.

२४ अभिष्यंदी–जो पदार्थ अपने पिच्छिलेपन ² अथवा जडताके कारणसे रस वहावकी नडियोंको रोकके शरीरको जकडा देवे सो अभिष्यंदी कहाती है जैसे " दही " इत्यादि.

यदि इस विषयको दीर्घ विस्तार पूर्वक देखना होतो शारंगधरके प्रथम खंडमें चोथा अध्याय देखो वहां विस्तीर्ण रूपसे लिखा है,

इतिश्री नूतन अमृतसागरे विचारखंडे ओषधीनां दीपनपाचनादी निरूपणं नामाष्टमस्तरंग.

---

१ जिसे योग वाहि भी कहते हैं परंतु यही ( प्राणनाशक ) विष सुयोगी औषधियोंके अनुपानादिसे संबाधित होकर अमृत तुल्य गुण दाता होजाते हैं परंतु सद्गुरुकी शिक्षा विना बिषको अमृत बनालेना अशक्यही है इस लिये सद्गुरुकी शिक्षालेनी अवश्य है.

२ जो पदार्थ कुछ बुदबुदेयुक्त, चिकटा, खट्टा, कोमल, फूलाहुआ, और कफकारी हो सो पिच्छिल कहता है

## लघुनिघण्ट.

### अर्थात् मुख्यौषधनामगुणविचार.

सर्वं कायेन संसाध्यं तस्या युस्थिति कारणं ।
आयुर्वेदो पदेशस्तु कस्य नस्यात्सुखा वहः ॥ १ ॥
तत्रापि पूर्वं ज्ञात्तव्या द्रव्य नाम गुणा गुणाः ।
अतस्त एव वक्ष्यन्ते ततज्ञानेहि क्रियाक्रमः ॥ २ ॥

भाषार्थ–धर्म, अर्थ, काम, और मोक्ष ये सब कायासेही सिद्ध होते हैं और कायाकी स्थितिका मुख्य कारण आयु है अर्थात् जबतक आयु है तबतक काया रहती है. मनुष्य आयुर्वेदोक्त मर्यादानुसार चलनेसे पूर्णायुको प्राप्तहो सक्ता है इस लिये आयुर्वेदोपदेश किसको सुख प्राप्तिक नहीं है? ( सर्व प्राणिमात्रको सुखदाता है ) सो उस आयुर्वेदकी शिक्षामें ( १ निघंटु, २ निदान, ३ चिकित्सा ) मुख्य तीन अंग है. जिसमें प्रथम निघंटु है क्योंकि जबतक वैद्यको वस्तुओंके नाम और गुणादिका परिज्ञान न होगा तबतक वह चिकित्सा ( रोगपर औषध देनेकी क्रिया ) क्याकरसकेगा. इसीलिये हम इस विचार खंडके अन्तर्गत मुख्य मुख्य औषधियोंके मुख्य मुख्य नाम गुण संक्षिप्ततासे दर्शित करते हैं.

१ हर्र–इसे हडेभी कहते हैं इसके शिवा आदिभी अनेक नाम हैं यह सात प्रकारकी होती है परन्तु बडी और छोटी जिसको फारसीमें हलेलः जर्दः और हललः जंगी कहते है यह एक वृक्षका फल है जो सर्द मुल्कमें होताहै जिसमेंसे सर्वोत्तम तथा सर्व कार्यमें ग्रहण करनेयोग्य " विजिया " नामकी हर्र होती है. जो नवीन चिकनी दृढ और विशेषवोझलहो ( जो पानीमें डालतेही डूब जावे ) सो अति गुणकारी होती है,

हर्र-रूखी, उष्ण, हलकी और रसीली है यह स्वास, कास, प्रमेह अर्श ( ववासीर ) उदररोग, कृमिरोग संग्रहणी, स्तम्भकत्व ( कवजी ) विषमज्वर गोळा, पेटका, अफरा, फोडे. वमन ( उलटी ) हिचकी, खाज, हृद्रोग, कामला ( कमलरोग=पीलिया ) शूल, और प्लीहा ( तापतिल्ली ) इत्या-

दि रोगोंको दूर करती है, इसमें खट्टा और मीठा रस है सो वादीको, कसैला रस है सो पित्तको और कडुआ तथा तीखा रस है. सो कफको नाश करता है हरेमें उक्तपांचों रस हैं.

२ आंवला—इसके "धात्री फलादि" अनेक नाम हैं यह पुष्टाई करता है इसमे लगभग हरेंके समान समान ही गुण हैं परन्तु विशेषकरके रक्त पित्तको जीतनेवाला है यह अपने खट्टे रससे वादी, मीठे तथा ठंडे रससे पित्त और रूखे तथा कसैले रससे कफको नाश करता है. उक्त पांचों रस आंबळेमें होता है.

बहेडा—इसके "विभीतकादि" अनेक नाम हैं यह खानेमें उष्ण और लगानेमें शीत है. कासस्वासको दूर करता है. रूखा है. नेत्रोंको आरोग्यप्रद है. बाळोको बढाता है. इसकी विजी कुछ मादक है. पानीमें पीसकर इसे लगानेसे दाहको मिटाती है

४ अरूसा—इसके "वासा" आदि अनेक नाम हैं. वादीको उत्पन्न करता है. कटु है कफ, पित्त, रुधिर, स्वास, कास, ज्वर, उल्टी, प्रमेह, कुष्ठ और क्षयी इन सबको दूर करनेवाला है. ४

५ त्रिफला—३ भाग हर्रे=६ भाग बहेडा= १२ भाग आंवला=त्रिफला, उक्त प्रमाणानुसार त्रिफला बनता है. इसके "वरा" आदिभी नाम हैं. यह कुष्ठ, प्रमेह, रुधिरविकार, कफ और पित्तको दूर करता, नेत्रोंकी ज्योति बढाता, और हृदय ( मन=दिल )को बल देता है ॥

६ गिलोय—इसके "गुडूची" आदि नाम हैं यह कडबी, हलकी पचनेकेसमय मीठी, रसीली, स्तम्भक ( कब्ज करनेवाली ), कसैली, और उष्ण है. यह बलको बढाती, जठराग्निको प्रदीप्त करती, कमला-कुष्ट-वादी-रुधिर प्रकोप-ज्वर-पित्त और उल्टी इन सबोंको जीतती है.

६ वेल—इसके "लक्ष्मीफल" आदि अनेक नाम हैं यह ग्राही (मलको रोकनेवाला ), कसेला, उष्ण, दीपन, पाचन, हलका, चिकना, और तीक्ष्ण है. बलको बढाता, हृदयको हितकारक है, वेलकी गिरी ( भीतरका

गूदा ) वायु कफ, त्रिदोष ज्वर, संग्रहणी, शूल, और आमको नष्ट करती है.

७ गोखरू—इसके "त्रिकंटका" आदि अनेक नाम हैं यह ठंडा और स्वादिष्ट है, यह बस्तिको शुद्ध करता, प्रमेह, श्वास कास, रुधिरप्रकोप, पथरी, हृद्रोग और वादीको दूर करता है.

८ बडी कटाई—इसके भटकटैया सिंहा आदि अनेक नाम हैं. ९ यह उष्ण, ग्राही, और पाचनी है, हृदयको बल देती, कास-श्वास-ज्वर-कुष्ट-कफ-वादी-शूल-और अग्निमांद्य ( मन्दाग्नि )को दूर करती है.

९ छोटी कटाई—इसे श्वेत कटाईभी कहते हैं इसके "लक्षणा" आदि अनेक नाम हैं यह उष्ण-रूखी-दीपनी-और पाचनी है. कास-श्वास-ज्वर-कफ-वायु-पीनस-पार्श्वशूल और हृद्रोगको दूर करती है.

१० मुलहटी—इसे मीठी लकडीभी कहते हैं इसके "मधुयष्टी" आदि अनेक नाम हैं यह भारी-और ठंडी-है यह बल करती-प्यास-उलटी और पित्तको नष्ट करनेवाली है.

११ एरंड—इसके "दीर्घदंड" आदि अनेक नाम हैं यह दो प्रकारका है
पहला—जिसका झाड बडा, फल छोटा, होता और रंग श्वेत होता है.
दुसरा—जिसका झाड छोटा, फल बडा, और रंग रक्त ( लाल ) होता है.
यह मीठा, भारी, और उष्ण है, शूल-सूजन-कटिपीडा,-मूत्राशयपीडा सीसपीडा-उदरपीडा-ज्वर-बढीहुई-श्वास-कफ-अफरा ( पेट फूलना )-कास-कुष्ट-आम-और बादीको दूर करनेवाला है. फल उष्ण स्वादिष्ट भेदन-छारयुक्त और वादीको जीतनेवाला है.

श्वेत तथा रक्त एरंड दोनोंके गुण तुल्यही हैं.

१२ जवास—इसके "यवासा-दुरालभा" आदि अनेक नाम हैं. मीठा-तीक्ष्ण-और पित्त-कफ-तथा रुधिरकोपको दूर करनेवाला है.

१३ मुण्डी—जिसे लोकमें बहुधा "गोरख मुण्डी"भी कहते हैं. इसके "भिक्षु" आदिभी अनेक नाम है यह तीक्ष्ण है. बुद्धिको बढाती-उपदंश ( गरमी )-कृमि-और पांडु आदि रोगोंको दूर करती है.

१४ श्वेतलटजीरा–जिसे "उंगाभी" कहते हैं इसके " अपामार्ग" आदि नामभी हैं यह तीक्ष्ण दीपन है, कफ-वायु-दाह-ववासीर-उदररोग-खाज और अपचको दूर करता है.

१५ रक्तलटजीरा–यह रूखा है कफ और रक्तपित्तको नष्ट करता है.

१६ जयपाल–इसके "दंतिबीज" आदि अनेक नाम हैं यह चिकना है. रेचन कारक ( दस्त लानेवाला ) है-पित्त और कफको दूर करता है.

१७ निसोत–यह दो प्रकारकी होती है " १ श्वेत, २ काली " इन दोनोंके नाम गुणादि पृथक् पृथक् है परंतु विरेचन ( जुलाब )केलिये विशेषकरके काली निसोतही स्वीकार किई जाती है.

१८ कुटकी–इसके " तिक्ता " आदि नामभी है यह पचनेकेसमय कडवी है तीखी-रूखी-हलकी और ठंडी है यह कृमि-दाह-पित्त-कफ-और ज्वरको दूर करती है.

१८ नीम–इसके " पिचुमंद " आदि अनेक नाम हैं यह ठंडा-हलका ग्राही ( दस्त रोकनेवाला )-और पचनेमें कडुआ है-अग्निवातको उत्पन्न करता तथा व्रण ( फोडे ) पित्त-कफ-उल्टी-कुष्ट प्रमेह-और मुंहसे बहतेहुए पानीको बंद ( दूर ) करता है.

२० चिरायता–यह दो तीन प्रकारका होता है. इसके " किराता "दि अनेक नाम हैं २० यह वादीको उत्पन्न करता,-सन्निपात-ज्वर-श्वास-कास-पित्त-रुधिरकोप-और दाहको दूर करता है. स्वभावमें लूखा ठंडा-तीखा-और हलका है.

२१ इन्द्रजव–इसके " भद्रयव " आदि नामभी हैं यह सग्राही-ठंडा और-कडुआ है. तीनों दोष-ज्वर-अतिसार-कुष्ट और रुधिरयुक्त ववासीरको दूर करता है.

२२ मैनफल–जिसे "मैनर "भी कहते हैं इसके " मदनफल " आदि नामभी हैं. यह उष्ण है, उल्टी लाता है, कफ और शोथको दूर करता है.

२३ मेंढाश्टङ्गी—इसके "मेषशृंगी" आदि नाम हैं. यह बादीको उत्पन्न करती खासी-पित्त और कफको खोती है.

२४ पुनर्नवा—जिसे मारवाड देशमें "साटी" भी कहते हैं इसके दो भेद हैं "१ श्वेत २ लाल" यह उष्ण और मीठा है. शोथ-कफ- और उदररोग आदिको दूर करता है.

२५ असगंध—इसके "अश्वगंधा" दि अनेक नाम हैं. यह कसैला उष्ण और रसायन है, बलको बढाता तथा बादी-कफ आदि रोगोंको दूर करता है.

२६ शतावरी—दो प्रकारकी होती है "१ छोटी और २ बडी" यह मीठी और ठंडी हैं वीर्य तथा दूधको बढाती और कई रोगोंको दूर करती है.

२७ मालकांगनी—इसके "ज्योतिष्मति" आदि नाम हैं. यह कडवी और तीखी है वादी-कफादि रोगोंको दूर करती है.

२८ देवदारु—इसके "सुरद्रुम" आदि नामभी हैं यह उष्ण-हलका-और कडुआ है अफरा-ज्वर-शोथ-आम-हिचकी- खाज-कफ और बादीको दूर करता है.

२९ पुहकर मूल—इसके पुष्कर आदि अनेक नाम हे यह कडुआ तीखा और उष्ण है- वायु- कफ- ज्वर शोथ- अरुचि- श्वास- और पार्श्व शूलको दूर करता है.

३० कांकडाशृंगी—इसके शृंगीआदि नामभी हैं उष्ण है, हिचकी, उलटी श्वासकास-कफ-क्षयी और ज्वर आदि रोगोंको दूर करती है.

३१ कायफल—इसके "कट्फल" आदि अनेक नामहैं, यह बादी-कफ-ज्वर-श्वास-और प्रमेहादि रोगोंको दूर करता है.

३२ भारंगी—इसके "भार्गी" आदि अनेक नाम हैं, उष्ण हैं वात-कफ-ज्वर-श्वास-कास आदि रोगोंको दूर करती है.

३३ नागरमोथा—इसके "मुस्ता" आदि अनेक नाम हैं; यह ठंडा-संग्राही तीखा दीपन और पाचन है ज्वरादि रोगोंको दूर करता है.

३४ हल्दी–इसके "हरिद्रा" आदिकई नाम हैं, यह उष्ण और श्लेष्म है, पित्त प्रमेह आदि रोगोंको दूर करती है और रंगको सुंदर बनाती है.

३५ भंगरा–इसके "भृंगराज" आदिक नाम हैं यह कफ बात कुष्ठ नेत्ररोग सीसरोग आदि अनेक रोगोंको दूर करता है उष्ण है.

३६ पित्तपापडा– इसके "पर्पट" आदि अनेक नाम हैं यह पित्त रुधिरकोप सीसभ्रमण ( सिरघूमना ) प्यास कफ ज्वर और दाहको दूर करता और बादीको उत्पन्न करता है ठंडा है.

३७ अतीस–इसके "अतिविष" आदि अनेक नाम हैं यह उष्ण और पाचन है. तथा कफ पित्त और अतिसारको जीतता है.

३८ लोद– इसके "रोध्र" आदि नाम हैं यह ठंडा औ रेचक (दस्तावर) है, ज्वर अतिसार और रुधिरकोपको दूर करता है.

३९ मूसली–इसके "खलिनी" आदि अनेक नाम हैं यह मीठी भारी उष्ण वीर्या रसायनी और पुष्टकारी है, गुदा और वायुके रोगोंको दूर करती है.

४० केंवचबीज–इसके "कपिकच्छ" आदि अनेक नाम हैं यह बहुत पुष्ट मीठा बलवर्द्धक वीर्यवर्द्धक भारी और वाजीकरण है.

४१ भिलावा–इसके "भल्लातक" आदि अनेक नाम हैं, यह कसायला और उष्ण है. वीर्य उत्पन्नकरता वायु कफ उदररोग आध्मान कुष्ठ मूलव्याधि संग्रहणी गुल्मज्वर कृमि और मन्दाग्निको दूर करता है.

४२ ब्राह्मी–इसके "सरस्वती" आदि बहुत नाम हैं. यह ठंडी रेचक ( दस्तलानेवाली ) और मीठी है बुद्धि और स्मृतिको बढाती, ज्वर पांडुरोग तथा कुष्ठ आदि रोगोंको दूर करती है.

४३ गोभी– इसके "गोजिव्हा" आदिक नाम हैं. यह ठंडी और संग्राही है. वायुकों उत्पन्न करती, हृदयको बल देती, कफ-पित्त-प्रमेह-ज्वर और कास आदि रोगोंकों दूर करती है.

४४ चिरमी– इसकों "गुंजा" आदिभी कहते हैं, यह बालोंको बढाती

बल वृद्धि करती और पित्त-कफ-नेत्ररोग-खुजली-फोडे आदि रोगोंको दूर करती है.

४५ तालमखाना- इसके "ईक्षुर" आदि नाम हैं. यह ठंडा भारी और पुष्ट है, बादी और रुधिरके रोगोंको दूर करता है.

४६ आक- इसके दो भेद हैं, "१ श्वेत २ रक्त" इसके "अकाव-अर्क-आकडा" आदि अनेक नाम हैं, उष्ण है, प्लीहा (तापतिली) शंक-बात (ललाटकी पीडा)-कुष्ठ-खुजाल व्रण-गुल्म-अर्श (बबासीर)-कफ-कृमी और उदरपीडा इस सब रोगोंको दूर करता है.

४७ धतूरा-इसके "धत्तूर-कितव" आदि नाम हैं यह मादक (नशा-करनेवाला) और उष्ण है अग्निको बढाता-कुष्ठ आदि रोगोंको दूर करता है.

४८ घीकुमारी-इसके "गवांरपाठा-कुमारी" आदि अनेक नाम हैं यह ठंडी है यकृत प्लीहा-कफज्वर-गठांन-विस्फोट-रक्तरोग और चर्मरोगको दूर करती है.

४९ भंग-इसके "भंगा-गंजा" आदि अनेक नाम हैं यह उष्ण-ग्रा-हणी और मादक है. अग्निको दीपन करती है.

५० काचनी- इसके "कम्बनी-शोण-फलनी" आदि नाम हैं यह दू-धको बढाती मस्तकपीडा और त्रिदोषको दूर करती है.

५१ दूब-इसके "दूर्वा" आदि नाम हैं यह पित्त दाह और रुधिर कोपको शांत करती है दूब दो तीन प्रकारकी है परंतु ये तीनो प्रायः शी-

५२ वांस-इसके "वंश वेणु" आदि नाम हैं यह ठंडा है पित्त कफ दाह शोथ और रुधिरकोपको दूर करता है. वांसकी करीर जोकी वांसके डांडमेंसे निकलता है भारी है, कफको उत्पन्न करती और वादी पित्तको दूर करती है, वांसकी जड उष्ण है यह वादी कफको दूर करती है.

५३ खशखश- इसके "तिलभेद उरई खश तिल" आदि अनेक नाम हैं यह भारी शोषक रूखा और संग्राही है, बादीको जीतता है.

५४ अफीम-इसके "आफुक अहिफेन" आदि नाम हैं, यह मादक

शोषक और संग्राही है, कफको दूर करती तथा बादी और पित्तको उत्पन्न करती है. ॥ इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे अभयादि वर्णनिरूपणं नाम नवमस्तरंगः ॥ ९ ॥

५५ सोंठ—इसके "सुंठी विश्वौषध" आदि नाम हैं यह चिकनी कटु उष्ण, भोजनमें हलकी रुचिकर पाचनी और पुष्ट है आमबात कफ बादी संग्रहणी ( कब्जी ) बमन ( कै ) श्वासकास शूल हृदयरोग श्लीपद शोथ ( सूजन ) मूलव्याधि अफरा और उदररोगको दूर करती है.

५६ अदरक— जिसे "आर्द्रक शृंगबेर" आदिभी कहते हैं यह भेदन दीपन भारी और सब गुणोमें सुंठीकेसमान गुण वाला है.

५७ कालीमिरच—इसके "गोलमिर्च मिर्च वल्लिज" आदि नाम हैं यह कडवी तीक्षण दीपन उष्ण और रूखी है, कफ वात श्वास शूल और क्रमीको नष्ट करती और पित्तको उत्पन्न करती है; यह सूखी काली मिर्चके विषयमें कहा गया. हरी ( गीली ) मिर्चके गुण इससे भिन्न हैं.

५८ पीपल—इसके "पिमाली कृष्णा कणा" आदि नाम हैं, यह दीपन अत्युष्ण चिकनी कडवी हल्की और रेचक है, पचनेमें स्वादिष्ट बल वढाती पित्त उत्पन्न करती कफ वात श्वासकास ज्वर और उदररोगको दूर करती है.

५९ पीपलामूल— इसके "कणामूल-षट्ग्रन्थिक" आदि नाम हैं, यह कटु-उष्ण-पाचन-हलका-दीपन और रूखा है, कफ-वात और उदरपीडाको शान्त करता है.

६० चित्रक— इसके "हुतभूक-व्याल" आदि नाम हैं, यह रूखी-उष्ण और पाचन है, संग्रहणी-शोथ-अर्श-आदि रोगोंको दूर करती है.

६१ शोंफ—इसके "शतपुष्पा-घोषा" आदि नाम हैं, यह हलकी-दीपनी और उष्ण है, ज्वर-कफ-वात और शूलादि रोगोंको दूर करती है.

६२ मेंथी—इसके "मेथिका" आदि नाम हैं, यह दीपनी और उष्ण है, हृदयको बल देती-विष्ठाके क्रिमि-शूल-गोला-कफ और वायुको नष्ट करती हैं.

६३ अजमोद—इसके "अत्युग्र गंधा मोदा" आदि नाम हैं, यह कटु-

तीक्ष्ण-उष्ण-दीपन-और पुष्ट है, मलको बांधता-कफ-वात-नेत्ररोग-कृमिरोग और उल्टी आदि रोगोंको दूर करता है.

६४ जीरा—इसके तीन भेद हैं "१ शुक्लजीरा २ कृष्णजीरा ३ कालिका" जो कि वर्तमानमें "१ सफेद जीरा २ श्याहजीरा ३ कलौंजी" इन नामोंसे पुकारे जाते हैं. इन तीनोंके गुण समानही है. जीरा-रूखा-कडुआ-उष्ण-दीपन-और संग्राही है, पित्तको उत्पन्न करता-वायु-कफ-अफरा-उल्टी और मुखसे वहते हुए पानीको बंद करता है. इसके "जीरकं-जीरणं" ये नामभी हैं.

६५ अजवान—इसके "जवानी दीप्यक" आदि नाम हैं, यह तीक्ष्ण उष्ण कटु हलकी और पाचनी है. रुचिको बढाती वात कफ अफरा गुलम शूल और कृमिरोगको दूर करती है.

६६ बच—इसके "उग्रगंधा षट्ग्रन्था" आदि नाम हैं, यह उष्ण तिखी और कटु है, बमन लाती स्वरको सुन्दर करती मिरगी कफोन्माद भूतबाधा शूल और बादी इन रोगोंको दूर करती है.

६७ वायविडंग—इसके "विडंग जंतुहनन" आदि नाम हैं, यह कटु तीखी हलकी रूखी और उष्ण है, अग्निको बढाती शूल अफरा उदररोग कृमि वायु कफ और विबंध ( दस्तरुकना )को दूर करती है.

६८ धनियां—इसके "धना धान्यक" आदि नाम हैं, यह कसैला चिकना और पुष्ट नहीं है परन्तु पाचन और हलका है, मूत्र बहुत लाता हृदयको बल देता रेचनको बंध करता त्रिदोषको दूर करता श्वासकास रुधिरकोप प्यास अर्श और कृमीरोगको दूर करता है.

७० हींग—इसके "हिंगु बाल्हीक" आदि नाम हैं, यह उष्ण पाचन तीक्षण और पित्त वर्द्धक है, कफ वात शूल गुल्म अफरा और कृमिरोगको जीतती है.

७१ वंशलोचन—इसके "वंशज वैणवी" आदि नाम हैं. यह ठंडा और मीठा है, प्यास क्षयी ज्वर श्वासकास पित्त रुधिरकोप और कामला इन रोगोंको दूर करता है.

७२ सेंधानोंन—इसके "सैंधव सिंधुज" आदि नाम हैं, यह ठंडा दीपन पाचन और चिकना है त्रिदोषको दूर करता है.

७३ सोंचरनोंन—इसके "सौवर्चला" आदि नाम हैं, यह उष्ण हलका और अग्नि प्रदीप है, अन्नपर रुचि बढाता शुद्धडकार लाता रेचन करता अफरा और उदरशूलको नष्ट करता है.

७४ सुहागा—इसके "टंकण" आदि नाम हैं, यह रूखा उष्ण और अग्निकारक है, कफको दूर करता और पित्तको उत्पन्न करता है.

७५ सर्वक्षार—जितने क्षार मात्र हैं वे सर्व अग्नि सदृश उष्ण हैं पाचन और भेदन हैं, वीर्य और दृष्टिको नाश करते रक्त, पित्तको उत्पन्न करते रेचन विबंध (दस्त बंध होना) अफरा, पीनस, यकृत, प्लीहा, कफ, आम, अर्श, गुल्म और ग्रहणी इन सर्व रोगोंको दूर करते हैं.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे सुंठ्यादिनिरूपणं नाम दशमस्तरंगः ॥ १० ॥

७६ कपूर—इसके "कर्पूर, स्फटिक, श्चन्द्र" आदि नाम हैं, यह शीतल, पुष्ट, लेखन, और हलका है. नेत्रोंको गुणकारक है; कफ, दाह, दाद और बिगडे हुए मुखके स्वादको दूर करता है.

७७ कस्तूरी— इसके "मृगमद, बेदमुख्या" आदि नाम हैं, यह उष्ण, कटु, और वीर्योत्पादनी है. कफ, शीत, विष, उल्टी, शोच, दुर्गंध और बादीको दूर करती है.

७८ श्वेतचन्दन— इसके "चंदन तिलपर्ण" आदि नाम हैं. यह ठंडा, रूखा, हलका, तीखा, और कडुआ है. प्रसन्नताको उत्पन्न करता, बलको बढाता, कफ प्यास पित्त दाह और रुधिरकोपको दूर करता है.

७८ रक्तचन्दन— इसके "उद्दिष्ट, लोहित" आदि नाम हैं. यह शीतल, भारी, मीठा, और पुष्ट है. नेत्रोंको गुण करता प्यास, रुधिर, पित्त, ज्वर, फोडे, और विषको नष्ट करता है.

८० केशर—इसके "कुंकुम, चारु" आदि नाम हैं यह उष्ण और कटु

है. सिरके रोग, फोडे, और कृमि आदि रोगोंको नष्ट करती, बलको बढाती, और रंगको सुन्दर बनाती ( अच्छा करती ) है.

८१ जायफल– इसके "जातिफल, जातिसूत" आदि नाम हैं. यह उष्ण, हलका, दीपन, और पाचन है. हृदयकों बल देता, स्वरकों उत्तम बनाता, कफ-बात-उल्टी-कृमी-पीनस और खांसीकों मिटाता है.

८२ जायपत्री– इसके "जातिपत्र, जातिपर्ण" आदि नाम हैं. यह हलकी और उष्ण है, कफ-कृमि और विषकों दूर करती है.

८३ लौंग– इसके "लवंग, चन्दनपुष्प, शिखिर" आदि नाम हैं, यह हलकी, उष्ण, दीपन, और पाचन है, नेत्रोंकों गुण करती, हृदयकों बल देती, शूल-अफरा-कफ-श्वास-कास-उलटी और क्षयकों दूर करती है.

८४ छोटी इलायची– इसके "एला, त्रुटि" आदि नाम हैं. यह कफ, श्वास कास, अर्श और मूत्रकृच्छ्र आदि रोगोंकों दूर करती है.

८५ दालचिनी– इसके "त्वच, वराङ्ग" आदि नाम हैं. यह उष्ण, हलकी, और स्वादिष्ट है. पित्तकों उत्पन्न करती, हृदामय-बस्ति (मूत्राशयरोग )-बादी-अर्श-पीनस-कृमि-और मूत्ररोगकों दूर करती है.

८६ तेजपात– इसके "पत्र, दलाव्ह" आदि नाम हैं. यह उष्ण और हलका है. कफ और वातकों नष्ट करता है.

८७ नागकेसर– इसके "नाग" आदि नाम हैं. यह उष्ण और हलकी है. आमकों पचाती, दुर्गन्ध-कुष्ट-विसर्प-कफ-पित्त और विषकों मिटाती है.

८८ तालीसपत्र– इसके "तालीस, धातिपत्र" आदि नाम हैं. यह उष्ण है. श्वास कास, कफ और वायु आदि रोगोंकों मिटाता है.

८९ खश[१]– इसके "उसीर, उरई" आदि नाम हैं. यह शीतल पाचन और स्तम्भन है. कफ, पित्त, प्यास, रुधिर, विष, विसर्प, दाह, शोथ और फोडोंकों नष्ट करता है.

९० गूगल– इसके "गुग्गुलु, शाल, निर्यास" आदि नाम हैं. यह

---

१ यह वही पदार्थ हैं जिसके बहुधा उष्ण ऋतुमें पंखे, पर्दे और टट्टियां आदि बनाई जाती हैं.

उष्ण, रेचक, दीपन, रसायन, (नया होतो) बलकारक, और (पुराना) लेखन है. टूटीहुई अस्थि (हड्डी)को जोडता, हृदयकों बल देता, कफ-वात-फोडे-प्रमेह-लोइ-बबासीर-शोथ-गांठ-गंडमाळा और क्रमिरोगकों मिटाता है.

९१ चोक– इसके "चौर" आदि नाम हैं, यह ठंडा है, कफादिककों नष्ट करता है.

९२ कचूर– इसके "शठी, पलासी" आदि नाम हैं, यह उष्ण और दीपन है, कुष्ठ, अर्श, व्रण, कासश्वास, गुल्म, वात, कफ, और क्रमिरोग-कों मिटाता है.

९३ पद्माख– इसके "पद्मकाष्ठ, पद्मक" आदि नाम हैं; यह ठंडा है, पित्त, दाह, विस्फोटक, कुष्ठ, श्लेष्मा, रुधिरकोप और पित्तकों दूर करता है.

९४ गोलोचन– इसके "गोरोचन, गौरी" आदि नाम हैं, यह ठंडा है, इसीलिये रुधिरकोपकों मिटाता, और गिरते हुये गर्भकों बचाता है.

९५ कमल– इसके "पद्म, नलिन, अरविंद" आदि नाम हैं, यह ठंडा है. कफ, पित्त, दाह, और प्यासकों दूर करता है.

९६ कमलगटा– इसके "पद्मबीज, पद्माक्ष" आदि नाम हैं. यह ठंडा ग्राही और बलकारक है. गर्भ स्थापन करता, कफ-वातको बढाता, पित्त-रुधिर और दाहकों दूर करता है. ॥ भा० प्र० ॥

९७ सिंघाडा– इसके "शृङ्गाटक, जलफल" आदि नाम हैं. यह ठंडा भारी, स्वादिष्ट, ग्राही और बलकारक है. वीर्य-बादी और कफकों उत्पन्न करता, पित्त-रुधिरकोप और दाहकों शांत करता है.

९८ गुलाब– इसके "कुंजिका, भद्रतरुणी, कुंजसेवती, पाटल" आदि नाम हैं. यह ठंडा, संग्राही, और हलका है. हृदयकों बल देता, वीर्य उ-त्पन्न करता, तीनों दोष-रुधिरकोपकों जीतता, रंगकों सुन्दर करता, और दुर्गंधको दूर करता है.

९९ तुलसी– इसके "तुलसिका, सुरसा" आदि नाम हैं. यह उष्ण, तीक्षण, कडवी और दीपनी है, दाह और पित्तकों उत्पन्न करती, कुष्ठ-कफ-वात और पार्श्वशूल आदि रोगोंकों दूर करती है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे सुगंधादिवर्गनिरूपणं नामैकादशस्तरंगः ॥ ११ ॥

१०० सोना– इसके “ सुवर्ण, कंचन ” आदि नाम हैं. यह ठंडा, पुष्ट, बलकारक, भारी, रसायन, मीठा, लेखन, तीक्षण, और कसैली है. कांतिको बढाता, विषोन्माद-त्रिदोष-ज्वर और शोकको मिटाता है.

१०१ चांदी– इसके “ रूपा, रूप्यक, रजत ” आदि नाम हैं. यह ठंडी, रेचक, रसायन, लेखन, कसैली, खट्टी, ( पचनेकेसमय ) मीठी और चिकनी है. वात-पित्तको हरण करती, धातुको बढाती और तरुणाईको स्थिर रखती है.

१०२ अभ्रक–इसके “ स्वच्छ ” आदि नाम हैं. यह ठंडा और बलप्रदा है. कुष्ट, प्रमेह, और त्रिदोषको दूर करता है.

१०३ गंधक–इसके “ गंध, सौगंधिक ” आदि नाम हैं, यह उष्ण है, कुष्ठ, क्षयी, कफ, और बात आदिको दूर करता है.

१०४ पारा–इसके “ पारद ” आदि नाम हैं. यह उष्ण है कृमि, और कुष्ठ आदि रोगोंको दूर करता है.

१०५ गेरू– इसके “ गैरिफ, रक्तपाषाण ” आदि नाम हैं. यह दाह, पित्त, रुधिरकोप, कफ, हिचकी, विष और उलटीको दूर करती तथा नेत्रोंको गुणकारक है.

१०६ नीलाथोथा– इसके “ हरियाथूथा, तुत्थ ” आदि नाम हैं. यह लेखन और भेदन है. कुष्ठ, खुजाल, विष, कृमि और कफ आदिको दूर करता है.

१०७ सुरमा– इसके “ सौबीर ” आदि नाम हैं. यह ठंडा और नेत्रोंको हितकारी है; कफ, बात, और पित्तको शमन करता है.

१०८ शिलाजीत– इसके “ शिलाजतु ” आदि नाम हैं. यह उष्ण और कटु है; मूत्रघात, प्रमेह, बवासीर, कुष्ठ, उदररोग, पांडुरोग, क्षयी, और श्वासकास आदि रोगोंको नष्ट करता है; इसका विधिपूर्वक निकाला हुआ सत्व निर्बलताको शिघ्र नाश करके वीर्यको बढाता है.

१०९ रसोत–इसके "रसांजना" आदि नाम हैं. यह उष्ण और कटु है. कफ, मुखविकार, नेत्रविकार, और फोडोंको दूर करता है.

११० फिटकरी–इसके "स्फटिका" आदि नाम हैं. यह कसैली, और उष्ण है. पित्त, कफ, विष, फोडे, चित्र, और विसर्प इत्यादि रोगोंको नाश करती है.

१११ मोती–इसके "मौक्तिक" आदि नाम हैं. यह शीतल, मीठा, और पुष्ट है. विषादि रोगोंको नष्ट करता है.

११२ शंख–इसके "कम्बु" आदि नाम हैं. यह शीतल है. नेत्रोंको हित करता, शूल पित्त कफ और रुधिरकोपको नष्ट करता है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे सुवर्णादिवर्ग निरूपणं नाम द्वादशस्तरंगः ॥ १२ ॥

११३ बड–इसके "बटवृक्ष, वट, रक्तपदा" आदि नाम हैं. यह शीतल और ग्राही है. कफ पित्त और फोडेको दूर करता, (इसका दूध) वीर्यको दृढ करता, और बलको बढाता है.

११४ पीपल– इसके "श्यामल, अश्वत्थ" आदि नाम हैं. यह ठंडा है. कफ पित्त और रुधिरकोपको दूर करता है.

११५ गूलर–इसके "उदुम्बर, जन्तु वृक्ष" आदि अनेक नाम हैं. यह शीतल और भारी है. रंगको सुन्दर बनाता, पित्त कफ और रुधिरकोपको जीतता है. इसका दूध पुष्ट है, शोथ तथा रुधिरजन्य ग्रंथिको बैठाता है.

११६ लसोडा–इसके "ल्हेसवा, श्लेष्मान्तक, कर्बुदार" आदि नाम हैं. यह कुछ उष्ण, और पुष्ट है. कफ, छाले, विषस्फोटक, व्रण, विसर्प, कुष्ठ, बादी, पित्त, क्षयी, और रुधिरकोपको जीतता है.

११७ खैर–इसके "खदिर" आदि नाम हैं. यह शीतल है. दांतोंको गुण करता, क्रिमि प्रमेह ज्वर फोडे कुष्ठ शोथ आम पित्त रुधिर पांडु और कफको नष्ट करता है. इसकी गोंद मीठी और वीर्य उत्पन्न करता है. इसका सार जिसे "खैरसार" कहते हैं. बलप्रद है. बिगडा हुआ मुख, कफ और रुधिरको जीतता है.

११८ बम्बूल–इसके "बमूर, बबूल, किंकराल," आदि नाम हैं. यह ग्राही है. कफ, कुष्ठ, कृमि, विष और रक्तपित्तको जीतता है.

११९ पलास–इसके "छिवला, किंशुक, किर्मी, खकरा" आदि नाम हैं. यह ऊष्ण, दीपन, और पुष्ट है, व्रण, गुल्म, ग्रहणी, अर्श, क्रिमी, इत्यादि रोगोंको शमन करता, और टुटी हुई हड्डीको जोडता है, इसका पुष्प शीतल और ग्राही है, कफ, पित्त, और रुधिरजन्य कष्ट दूर करता है इसका फल हलका और उष्ण है, प्रमेह अर्श और क्रिमी रोगको मिटाता है.

१२० धवा– इसके "धावडा, धव, और नंदितरु" आदि नाम हैं. यह ठंडा है, प्रमेह पांडु, रुधिर, पित्त और कफको दूर करता है.

१२१ सेमर–इसके "शाल्मली" आदि नाम हैं. यह ठंडा और पुष्ट है, रुधिर और पित्तको जीतता है. यह वृक्ष ३ चार प्रकारका है.

१२२ शमी–इसको "मारवाड प्रांतमें खेजडी" कहते हैं इसके तुंगा आदि नाम हैं, यह ठंडी और हलकी है, श्वास, कुष्ठ, अर्श और कफको दूर करती है, इसका फल रूखा है, पित्तको उत्पन्न करता और,क्लेश (बालोंका) नाशक है.

इति नूतनामृतसागरे बटादिवर्गनिरूपणं नाम त्रयोदशस्तरंगः ॥१३॥

१२३ मुनक्का–इसके "द्राक्षा मधुफल, गोस्तनी" आदि नाम हैं. यह ठंडा और भारी है, नेत्रोंको गुण करता, वलको बढाता, रेचन शुद्ध करता, प्यास, ज्वर-श्वास-उल्टी-वातरक्त-कामला-मूत्रकृच्छ्र-रक्तपित्त-संमोह-दाह-शोष- मदात्यय-और आमदोषको दूर करता है.

१२४ अंगूर–यह कच्चा द्राक्षही है, खटा और भारी है, मुनका (पक्वाद्राक्ष)के गुणके समानही इसके भी गुण हैं, पर यह रक्त पित्तको उत्पन्न करता है.

१२५ किशमिश– इसके "अंवीजा, लघुद्राक्ष" आदि नाम हैं, यह गोस्तनी द्राक्षके समानही गुणवाला है. परन्तु प्रायः इसमें बीजा नहीं रहते ऐसा भावप्रकाश पूर्वखंड प्रथमभागमें लिखा है.

---

१ अबीजान्या स्वल्पतरा गोस्तनी सदृशा गुणैः ॥ अबीजा ईषद्बीजा किसमिस इति लोके ॥ इत्युक्तं भावप्रकाशे-पूर्वखंडे-प्रथमभागः ॥ १ ॥

१२६ जंगलीदाख–यहभी द्राक्षके भेदमेंही है. हलका और कुछ खट्टा रहता है, कफ और अम्लपित्तको उत्पन्न करता है.

१२७ आमवृक्ष–इसके "आम्र, चूत" आदि नाम हैं. ग्राही है. यह प्रमेह, रुधिर, कफ, पित्त, और फोडोंको दूर करता है.

१२८ कैरी–आमका कच्चा फल (अमियां) यह अत्यंत खट्टी और रूखी है. त्रिदोष तथा रुधिरकोपको जीतती है.

१२९ आम–आमका पक्का फल मीठा, पुष्ट, चिकना, भारी ठंडा और रुचिकारक है. यह हृदयको सुख देता, बलको बढाता, बादीको दूर करता, वर्णको सुन्दर बनाता, पित्तको शांत रखता, मांसको बढाता और वीर्यको बढाता है.

१३० अमचूर–कच्चे आमको सुखाके जो अमचूर बनाया जाता है सो भेदन है. कफ और बादीको उत्पन्न करता है.

वृक्षमें पका, घासमें पका, पत्तोंमें पका, अधपका, खट्टा मीठा युक्त, केवल आमका रस, दूध शक्कर आदि पदार्थोंसे योगित, इत्यादि प्रकारसे आमके उपयोगमें उसके गुण कुछके कुछही एक दूसरेसे भिन्न हो जाते हैं. यह आमका विषय संक्षिप्तता से वर्णन किया यदि पूर्ण रूपसे विस्तार देखना हो तो राजनिघंटु या भावप्रकाश देखो.

१३१ जामुन– इसके "जम्बूफल" आदि नाम हैं, यह स्वादिष्ट, विबंधक, और भारी है, छोटी जामुन दाहको नाश करती और रुचिको बढाती है, इसके दो भेद हैं. "१ राजजम्बूफल, २ क्षुद्रजम्बूफल" जिसे "रायजामुन और कटजामुन"भी कहते हैं. रायजामन बडी और कट छोटी होती है, गुणमें समानही हैं.

१३२ नारियल– इसके "नारिकेल, श्रीफल" आदि नाम हैं, यह ठंडा है, विलम्बसे पचता, मूत्राशयको शुद्ध करता, रुधिर-दाह-वात-पित्तको दूर करता है, कच्चे नारियलका दूध ठंडा, हलका, और दीपन है, वीर्यको बढाता और बलको उत्पन्न करता है.

१३३ केला— इसके "कदलीफल, रम्भाफल" आदि नाम हैं, यह शीतल, बिबंधक, भारी, चिकना और कफोत्पादक है; पित्त, रुधिर, प्यास, दाह, घाव, क्षयी और बादीको जीतता है.

१३४ अनार— इसके "दाडिम" आदि नाम हैं, यह दीपन है; भोजनपर रुचि बढाता, बलको उत्पन्न करता है, यह दो प्रकारका है. १ मीठा २ खट्टा. मीठा अनार त्रिदोषको और खट्टा बादी, कफ तथा रुधिरको दूर करता है.

१३५ बादाम— इसके "बादाम, सुफल" आदि नाम हैं. यह उष्ण और चिकना है, बलको बढाता, वीर्यको उत्पन्न करता और वादीको दूर करता है.

१३६ पिस्ता— इसके "निकोचक, चारुफल" आदि नाम हैं. यह उष्ण, भारी, और पुष्ट है. वादीको दूर करता और पित्तको बढाता है.

१३७ अंजीर— इसके "गज्जल" आदि नाम हैं, यह शीतल और स्वादिष्ट है. पित्त, रुधिर और वादीको जीतता है.

१३८ मीठानींबू— इसके "निम्बुक" आदि नाम हैं, यह स्वादिष्ट और भारी है. बादी, पित्त, रक्त, शोष, अरुचि, तृष्णा, उल्टी, विषजन्यरोग और जीमचलाना आदि रोगोंको दूर करता है.

१३९ खट्टानींबू— यह खट्टा, हलका, पाचन और दीपन है, वादीको जीतता है.

१४० इमली— इसके "अम्लिका, चुक्रिका" आदि नाम हैं. कच्ची इमली—भारी है, बादीको दूर करती, और पित्त, कफ, रुधिर प्रकोपको बढाती है. पक्की इमली—दीपनी, उष्ण, रूखी और रेचक है. कफ बादीको दूर करती है. सूखी इमली—बलकारक और हलकी है. श्रम, भ्रांति और प्यास आदिको दूर करती है. (भावप्रकाश.)

१४१ सुपारी— इसके "क्रमुक, पूग, पूगीफल" आदि नाम हैं. यह भारी, ठंडी, रूखी, कसैली, दीपनी और रुचिकारक है. कफ पित्तको जीतती, मूर्च्छा लाती, और मुखके बिगडे हुए स्वादको सुधारती है.

१४२ पान— इसके "ताम्बूल, ताम्बूली, तांबूलवल्ली, नागिनी और नागरबेलपत्र" आदि नाम हैं. यह उष्ण, हलका, तीक्ष्ण, कसैला, रेचक और रुचिकारक है. कामदेव, रुधिर, बल और पित्तको बढाता. कफ, मुख दुर्गंध, मल, बादी, और श्रमको दूर करता है.

१४३ चूना—इसे चूर्णभी कहते हैं. कफ और बादीको नष्ट करता है.

१४४ कत्था— इसके " खदिर, खैर" आदि नाम हैं. यह कफ और पित्तको दूर करता है.

इति नूतनअमृतसागरे विचारखंडे द्राक्षादिवर्गनिरूपणं नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥ १४ ॥

१४५ कुह्मडा—इसके "कुष्मांड, कोहला" आदि नाम हैं. यह ठंडा और भारी है. पित्त, वात और रक्तको जीतता है.

१४६ ककडी— इसके "कर्कटी, खीरा" आदि नाम हैं. यह ठंडी और रूखी है. पित्तको दूर करती है.

१४७ तरबूज— इसके "कालिंग, मतीरा, कलींदा" आदि नाम हैं. यह ठंडा, भारी और ग्राही है. पित्त और वीर्यको नाश करता है, (पक्का हुआ कुछ) उष्णता लाता, (क्षारयुक्त होनेसें) पित्तको उत्पन्न करता और कफ वातको दूर करता है, विशेषकर—इसके अधिक खानेसें नपुंसकता प्राप्त होती है.

१४८ घियातुराई— इसके " राजकोशातकी, मिष्ठा, गिलकिया, रिसआ" आदि नाम हैं. यह शीतल है. ज्वर कफको दूर करती और बादीको उत्पन्न करती है.

१४९ बडीतुराई— इसके " महाकोशातकी" आदि नाम हैं. यह पित्त और बादीको दूर करती है.

१५० भटा— इसके "वृंत्ताक, वार्तिक, वैंगन" आदि नाम हैं. यह उष्ण, तीक्ष्ण, दीपन और हलका है. पित्तको उत्पन्न करता, वीर्यको बढाता, हृदयको बल देता, कफ और बादीको दूर करता है. स्वेत वैंगन उक्त गुणसे अनुकूलही है परन्तु बवासीर वालेको बडा गुणी है.

१५१ करेला– इसके "कारवेल्ल, कटिल्ल" आदि नाम हैं. यह ठंडा, हलका, भेदी, और तीक्ष्ण है. पित्त, रुधिर, कामला, पांडु, कफ, प्रमेह और कृमिरोगको दूर करता है.

१५२ ककोडा– इसके "कर्कोटक" आदि नाम हैं. यह करेलाके समान गुणकारी है. कुष्ठ और अरुचिको दूर करता है.

१५३ चौलाई–इसके "तंडुलीय, मेघनाद" आदि नाम हैं. यह ठंडी, हलकी और रूखी है. पित्त कफ, रक्तको बढाती है.

१५४ फोग– इसके "शृङ्गी, सूक्ष्मपुष्प" आदि नाम हैं. यह रेचन, विबंधक, और ठंडा है. रक्त, पित्त और कफको दूर करता है. यह मारवाडदेशमें उत्पन्न होता है.

१५५ परबल– इसके "पटोल, पांडुक" आदि नाम हैं. चिकना, उष्ण, पाचन, और हलका है. हृदयको बल देता, अग्निको दीप्त करता, बादी, रुधिरकोप, ज्वर, त्रिदोष और कृमिको दूर करता है.

१५६ गाजर– इसके "ग्रंजन, कटुक" आदि नाम हैं. यह तीक्ष्ण, उष्ण, दीपन, हलकी, और संग्राही है. रक्त, पित्त, बवासीर, संग्रहणी, कफ, और बादीको दूर करती है.

१५७ मूली– इसके "मूलक, हस्तीदंती" आदि नाम हैं. यह उष्ण, हलकी और पाचन है. रुचिको बढाती, बादीको उत्पन्न करती, त्रिदोष, श्वास, कास, नेत्ररोग, कंठरोग और पीनसको नष्ट करती है.

१५८ मुंगना– इसके "शोभांजना, शिग्रू, सुर्जना, सहजना" आदि नाम हैं. यह उष्ण और हलका है. कफ, बादीको जीतता, इसकी फली मीठी है, पित्तको दूर करती है.

१५८ लहसन–इसके "उग्रगंधा, लसुन" आदि नाम हैं. यह चिकना, उष्ण, पाचन, रेचक और भारी है. टूटी हुइ हड्डीको जोडता, पित्त रुधिरको उत्पन्न करता, कफ श्वास कास गुल्म ज्वर अरुचि शोथ प्रमेह अर्श कुष्ठ शूल और बादीको दूर करता है.

१६० कांदा–इसके "पलांडू, दुर्गंध" आदि नाम हैं. (प्रसिद्ध नाम पयाज)

यहभी लहसनके सदृश गुणकारी है पर उतना उष्ण नहीं. कफको उत्पन्न करता है.

१६१ सूरन—इसके "कंदल, सूरण, भूकंद, जमीकंद" आदि नाम हैं. यह दीपन, रूखा, कसैला, कटु, विषहरा, और रुचिकारक है. खुजालको उत्पन्न करता, कफ अर्श ( बबासीर=गुदारोग ) को दूर करता है.

१६२ शीतलजल—इसके " पानी, जीवन, नीर" आदि नाम हैं. यह ठंडा है, हृदयको बल देता है, पित्त विषभ्रम दाह अजीर्ण परिश्रम उलटी मद ( उन्मत्तता ) मूर्छा और मदात्ययको दूर करता है. परंतु उदररोग, कंठरोग, नूतनज्वर, संग्रहणी, पीनस, आध्मान, हिचकी, गुल्म, विद्रधी, कास, प्रमेह, अरुचि, श्वास, पांडु, वादी, पार्श्वशूल और स्नेह ( घृतखोपरादि चिकनी वस्तु खाके ) में शीतलजल लाभकारी नहीं. बरन अति हानिकारक है. वर्षा, तलाव, कूप, नदी, झिरना, और बावडी आदिके जलका गुण न्यारा न्यारा है. इसका विस्तीर्ण वर्णन राजनिघंटुमें देखो.

१६३ उष्णजल—जो कि अग्निसंस्कारसे उष्ण किया जाता है. यह दीपन, पाचन, हलका और उष्ण है. मूत्राशयको शुद्ध करता, पार्श्वशूल ( पसलीकी पीडा ), पीनस, अध्मान, हिचकी, बादी, और कफको दूर करता है. रोगीको उष्ण जल पिलानेसें कुछ हानि नहीं. क्योंकि पानी प्राणीमात्रका जीवनमूल है. बहुधा वैद्यलोग रोगीको पानी देना वर्जित करते हैं यह पूर्ण भूल है. प्रत्येक रोगपर किसीमें ठंडा किसीमें उष्ण किसी औषध योगित आदि नाना प्रकारके अनोपानसे प्रतिरोगमें रोगीको जल देनाही चाहिये. नहीं तो वह मोह प्राप्त होकर प्राणत्याग देवेगा.

१६४ दूध— इसके "दुग्ध, प्रस्रवण, क्षीर पय" आदि नाम हैं. यह ठंडा, मीठा, चिकना, रसायन, जीवन और भारी है. बल बुद्धि वीर्यको बढाता, बादी पित्तको हरता, रक्तविकार श्वास क्षयी अर्श और भ्रमको दूर करता है. बालक, वृद्ध, दुर्बल, और विषयासक्त पुरुषोंके लिये तो अतिही लाभदायक है. उपरोक्त गुण साधारण दशासे वर्णन किये गये यदि तुमको "गो भैंस

भेडी बकरी हथनी ऊंठनी घोडी आदि पशु जाति तथा स्त्री" के दुग्ध गुण पृथक् पृथक् विचारनाहों तो बृहन्निघंटु देखो.

१६५ दही– इसके "दधि" आदि नाम हैं. यह उष्ण, दीपन, चिकना, कसैला, ग्राही और पचनेके समय खट्टा है. पित्त, रुधिर, शोथ और कफको उत्पन्न करता मूत्रकृच्छ, प्रतिस्याव (सर्दी, नाक वहना) शीतांग, विषमज्वर, अतिसार, अरुचि, और दुर्बलत्वको दूर करता है. मीठा दही वादी और पित्तको जीतता,–खट्टा दही पित्त, रुधिर और कफ उत्पन्न करता है. दही चार प्रकारका है १ मीठा, २ खटमिठा, ३ खट्टा, और ४ अतिखट्टा. इन सवोंके गुण जुदे जुदे हैं यह दहीका सामान्य विवरण हमने लिखादिया यदि विशेष देखना चाहे तो बृहन्निघंटु आदि ग्रंथ देखो.

१६६ मही– इसके "छाछ, मठा, तक्र" आदि नाम हैं. यह ग्राही, द-स्त रोकनेवाला ) कसैला, खट्टा, मीठा, दीपन, हलका, शीतोष्ण, ( मौतदिल ), बलाढ्य, रूखा, और तृप्तिकारक है. वादी, शोथ, विष, उलटी, पसीना, विषमज्वर, पांडु, मेदरोग, ग्रहणी, अर्श, मूत्रग्रहण ( पथरीका रोग ) भगंदर, प्रमेह, गुल्म, अतिसार, शूल, प्लीहा, कफ, कृमी, चित्र कुष्ठ और तृष्णा आदि रोगोंको (तत्तद्रोगानुकूल अनुपानोंसे) दूर करता है.

१६७ मक्खन– इसके "हैयं, गवीन, नवनीत, माखन, मस्का" आदि नाम हैं. यह हलका, ठंडा, मीठा, ग्राही, कुछ कसैला और खट्टाभी, और पुष्ट है. पित्त, वायुको हरता, अग्निको बढाता, नेत्रोंको ज्योति देता. क्षयी, अर्श, फोडे, और खांसीको नष्ट करता है. उक्त गुण तत्क्षणी मक्खनके हैं. यही मक्खन बहुकाल पश्चात भारी हो जाता, मेदको उत्पन्न करता, शोशको दूर करता, बालकोंके लिये तो विशेषकर पुष्टि और बळ देकर अमृतके सदृश गुणदाता होता है. केवल दूधसे निकाला हुआ मक्खन अति चिकना, ठंडा, ग्राही, मीठा और बलाढ्य होता है. नेत्रोंको अति हित करता और रक्तपित्तको जीतता है.

१६८ घी– इसके "आज्य, हवि, सर्पी, घृत" आदि नाम हैं. यह रसायन, मीठा, भारी, ठंडा, दीपन और चिकना है. नेत्रोंको ज्योति देता

विषको हरता. बादी, पित्त, उदावर्त, ज्वर, उन्माद, शूल, अफरा, आदि-को दूर करता. कांति, पराक्रमको बढाता और कफको उत्पन्न करता है.

१६९ तेल– इसके "तेल" आदि नाम है, यह उष्ण, भारी, पुष्ट, मीठा और बलवर्द्धक है, रंगको स्वच्छ करता, कफ, वायु, रक्त पित्त, कान योनि मस्तक और नेत्रोंकी पीडाको हरण करता है.

१७० मदिरा– इसके "मद्य, हाली, सुरा" आदि नाम हैं. यह रेचक, (दस्त लानेवाली) रोचक (रुचि वढानेवाली) दीपन, विदाही (दाह उप-जानेवाली) तीक्ष्ण, और मादक है, मलमूत्रको उत्पन्न करती कफ, वादीको दूर करती (विधिपूर्वक भोजनके साथ पीवेतो) लाभदायक (विपरीत क्रियासे पीवेतो) रोगोंको उत्पन्न करती और अतिशय पीवेतो विषसदृ-श हानिकारक होती है.

१७१ गोमूत्र– यह शुद्ध, तीक्ष्ण, रूखा, दीपन, हलका, कटु और भेदी है. पित्तकों उत्पन्न करता हृदयको बल देता बादी, अर्श, गोला, कफ, क्रमि, कुष्ठ, पांडु, अफरा, विष, शूळ, और अरुचिको दूर करता है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे जलादिवर्ग निरूपणं शोडषस्तरंगः १६

१७२ मिश्री– इसके "शिता" आदि नाम हैं. यह मीठी, ठंडी, भारी और ग्रहणी है. बलकों बढाती पित्त और बादीकों दूर करती है.

१७३ मधु– इसके "शहद" आदि नाम हैं. यह ठंडा, हलका और मीठा है. कुष्ठ, अर्श, कास, पित्त, रक्त, कफ, प्रमेह, प्यास, उल्टी, दाह और अतिसार आदि रोगोंको दूर करता है. यह चार प्रकारका होता है जि-समें प्रत्येकके गुण एक दुसरेसे जुदे हैं इस विषयमें अधिक बोध चाहोतो राजनिघंटु देखो.

१७४ गुड– नयागुड भारी, स्वादिष्ट, रेचक है. वात पित्त अग्निको ब-ढाता है. और पुरानागुड हलका, पथ्य और पुष्ट है. बलको बढाता, मूत्र, रक्तको शुद्ध करता है.

१७५ शक्कर– इसके "शर्करा, खांड, चीनी, बूरा" आदि नाम हैं.

यह मीठी, पुष्ट, और रुचिकारक है. शुद्ध होनेसे मिश्रीके समान गुण देती बलको बढाती और कफको उत्पन्न करती है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे शितादिवर्गनिरूपणं नाम सप्तद० १७

१७६ चांवल– इसके "तण्डुल, शालि" आदि नाम हैं. यह ठंडा, और हलका है. पित्तको दूर करता मूत्र और कफको उत्पन्न करता है. ये कई प्रकारके होते हैं पर साधारण प्रकारसे इसके उक्त गुण हैं.

१७७ गेहूं–इसके "गोधूम" आदि नाम हैं. यह मीठा, ठंडा, और भारी है. वात, पित्तको दूर करता और कफ तथा वीर्यको उत्पन्न करता है.

१७८ दाल–जिन अन्नोंके समान दोदल हो जाते उन्हें "वैदला" कहते हैं. जिन अन्नोंसे दाल बनाई जाती है वे बहुधा बादीको उत्पन्न करनेवाले होते हैं. सर्वथा दाल बादीको उत्पन्न करती कफ पित्तको दूर करती और मल, मूत्रको बद्ध करती है.

१७९ मूंग–इसके "मुद्ग" आदि नाम हैं. यह ठंडा, हलका, और ग्राही है. कफ, पित्तको दूर करता है.

१८० उर्द–इसके "माष" आदि नाम हैं. यह उष्ण और पुष्ट हैं. बादीको दूर करता पित्त, कफको उत्पन्न करता और बीर्यको बढाता है.

१८१ चना–इसके "चणक" आदि नाम हैं. यह ठंडा है. रक्त, पित्त, कुष्ठ और कफको नष्ट करता और बादीको उत्पन्न करता है.

१८२ तिल–इसके "तैलफल" आदि नाम हैं. यह ठंडा, ग्राही भारी है. बादीको दूर करता कफ, पित्तको उत्पन्न करता है.

१८३ जौ–इसके "यव" आदि नाम हैं. मीठा और ठंडा है. पित्त, कफ, और रुधिरको दूर करता है.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे तण्डुलादिवर्ग निरूपणं नाम अष्टादशमस्तरंगः ॥ १८ ॥

१८४ खिचडी–इसके "कृशरा" आदि नाम हैं. यह भारी, पुष्ट, ग्राही है. विलम्बसे पाचन होती कफ, पित्तको उत्पन्न करती और बादीको दूर करती है. चावल और दालके संयोगको खिचडी कहते हैं.

१८५ खीर—इसके "क्षीर, क्षिप्रा" आदि नाम हैं. यह पुष्ट और भारी है. विलंबसे पाचन होती बलको बढाती वीर्यको उत्पन्न करती मलको रोकती पित्त, रक्त, प्यास, अग्नि और बादीको दूर करती है. दुग्धमें डालकर जो चावल चुरोये जाते हैं सो खीर है.

१८६ घेवर—इसके "घृतपूर" आदि नाम हैं. यह भारी है. हृदयको बल देता पित्त, बादीको दूर करता प्राणको पोषण करता बलको बढाता और घावको भरता है.

१८७ मालपुआ—इसके "अपूप" आदि नाम हैं. यह भारी है. हृदयको बल देता पित्त और बादीको दूर करता है.

१८८ लप्सी—इसे "लप्सिका" भी कहते हैं. यह भारी है. बादी, पित्तको नष्ठ करती है.

१८९ फेनी—इसके "फेनिका, पुटिनी" आदि नाम हैं. यह हलकी है. वात, पित्तको दूर करती है.

१९० लड्डू—इसके "मोदक" आदि नाम हैं. यह बलकारक है. विलंबसे पचता पित्त और बादीको दूर करता है.

१९१ जलेबी—इसके "कुण्डलिका" आदि नाम हैं. यह पुष्ट है. काति, बल देती हृदयको प्रौढ करती धातुको बढाती और इन्द्रियोंको तृप्त करती है.

१९२ सतू—जिस अन्नका हो उसीके सदृश गुणकारी है. परन्तु विशेष करके यह प्यास, दाह, उल्टी, दूर करता है. विशेष भेद राजनिघंटुमें देखो.

१९३ घूंघरी—यह भारी, रूखी है. बादीको उत्पन्न करती है. गेहूं चना आदि अन्नको बिन पिसेही उष्ण जलमें चुरा लेनेसे घूंघरी बनती हैं.

१९४ चुडवा—इसके "चूरा, पोहा" आदि नाम हैं. यह भारी, बलकारक है. बादीको दूर करता कफको उत्पन्न करता है. उबाली हुइ धानको कूटकर बनाते हैं.

१९५ धानी—यह रूखी रेचन विबंधक भारी है. कफको दूर करती है. धान, यव आदि अन्नको भुंजवा लोग भारमें भूंजकर धानी बनाते

१९६ लाही—इसके "लाजा, लाई" आदि नाम हैं. यह हलकी, ठंडी,

बलकारक है. पित्त, कफ, उल्टी, अतिसार, दाह, रुधिर, प्रमेह, और प्यासको दूर करती है.

इति नूतना० विचारखंडे कृशरादिवर्गनिरूपणं नाम एकोनविंश०॥१९॥

१९७ द्व्यार्क–( दो आंकडा ) १ श्वेत आंकडा, २ लाल आंकडा.

१९८ द्विकन्हेर–( दो कन्हेर ) १ श्वेत कनेर, २ लाल कनेर.

१९९ द्विक्षार–( दो खार ) १ सज्जीखार, २ जवाखार.

२०० त्रिफला–( तीन फल ) १ हर्र, २ बहेरा, ३ आवला.

२०१ त्रिकटु–( तीन कटु ) १ सोंठ, २ मिर्च ( काली ) ३ पीपल.

२०२ त्रिजात–( तीन जात ) १ इलायची, २ दालचीनी, ३ तेजपात.

२०३ त्रिसुगंध–( तीन सुवास ) १ इलायची, २ दालचीनी, ३तेजपात.

२०४ त्र्यक्षार–( तीन खार ) १ सज्जी, २ जवाखार, ३ सुहागा.

२०५ चतुर्जात–( चार जात ) १ इलायची, २ दालचीनी, ३ तेजपात, ४ नागकेशर.

२०६ चतुर्बीज–( चार दाने ) १ कालीजिरी, २ मेंथी, ३ अजवान, ४ असाला ( हाला )

२०७ चतुरुष्ण–(चार उष्ण) १ सोंठ,२मिर्च, ३ पीपल, ४ पीपलामूल.

२०८ चतुराम्ल–(चार खटाई) १ अम्लबेत, २ इमली, ३ जमीरी ४ नींबू.

२०९ बलाचतुष्टय–( चार बला ) १ बला, २ नागबला, ३ अतिबला, ४ महाबला.

२१० लघुपंचमूल–( छोटे पांच ) १ शालपर्णी, २ पृष्ठपर्णी, ३ बडीकटियाली, ४ छोटी कटियाली, ५ गोखरू.

२११ बृहत्पंचमूल–( बडे पांच ) १ बीलकी गिरी, २ इरणीमूल, ३ पाटली मूल ४ कास्मरी मूल, ५ स्योनाग मूल.

२१२ पंचकोल–( पांच कोल ) १ पीपल, २ पीपला मूल, ३ चित्रक, ४ सुंठी, ५ चव्य.

२१३ पंचक्षीरवट–( पांच दूधके वृक्ष ) १ न्यग्रोध, २ उदंबर, ३ अश्व-।, ४ पारिस, ५ प्लक्ष.

२१४ पंचाम्ल–( पांच खटाई ) १ अमलबेत, २ इमली, ३ जमीरी, ४ नींबू, ५ बिजौरा.

२१५ पंचलौन–(पांच नमक) १ साम्हर, २ सेंधा, ३ सोंचरा ४ समुद्रीय, ५ बिड.

२१६ पंचगव्य–(गौके पांच रस) १ गोमूत्र, २ गोवर, ३ गोदुग्ध, ४ गोदधि, ५ गोघृत.

२१७ पंचामृत–( पांच अमृत ) १ गोदुग्ध, २ गोदधि, ३ गोघृत, ४ मधु, ५ शर्करा.

२१८ षडूषण–(छः उष्ण) १ पीपल, २ पीपलामूल, ३ चव्य, ४ चित्रक, ५ सोंठ, ६ मिर्च.

२१९ सप्तोपविष–( सात उपविष ) १ अर्क दुग्ध, २ थूहर दुग्ध, ३ कलिहारी, ४ दोनों कन्हेर, ५ धतूरा, ६ कुचला, ७ बत्सनाग.

२२० अष्टवर्ग–( आठ वर्ग ) १ जीवक, २ ऋषभक, ३ मेदा, ४ महामेदा ५ काकोली, ६ क्षीरकाकोली, ७ ऋद्दि, ८ वृद्धि.

२२१ क्षाराष्टक–( आठ खार ) १ पलास, २ थूहर, ३ इमली, ४सज्जी, ५ अधाझारा (अपामार्ग), ६ आंकडा, ७ तिलनाल, ८ जौ, इन सबोंका खार.

२२२ नवविष–१ वत्सनाग, २ हारिद्रक, ३ सक्तुक, ४ प्रदीपन, ५ सौराष्टिक, ६ श्रंगक, ७ कालकूट, ८ हालाहल, ९ ब्रह्मपुत्र.

२२३ नवरत्न–१ हीरा, २ पन्ना, ३ माणिक, ४ नीलमणि, ५ पुष्पराग, ६ गोमेद, ७ वैडूर्य, ८ मोती, ९ मुंगा.

२२४ दशमूल–पंच लघुमूल और पंचवृहन्मूलके योगसे दशमूल बना है.

२२५ दशाङ्गधूप– ५० भागशिलारस, ५० गूगल, ४ चंदन, ४ जटामांसी, ३ लोबान, ३ राल, ३ उसीर, २ नख, १ भीमसेनीकपूर, और एक भाग कस्तूरी इन सब पदार्थोंके एकत्रको दशांक कहते हैं. इसी प्रमाणसे चाहे जितनी बनाओ.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे मिश्रकवर्गनिरूपणं नाम विंश० ॥२०॥

२२६ निद्रा–नींद लेनेसे सुख होता, श्रम दूर होता, नेत्रोंको लाभ प-

हुंचता है. परंतु ग्रीष्म ऋतुके व्यतिरिक्त अन्य कालमें दिनको सोना वर्जित है. कारण कि दिनको सोनेसे प्यास, शूल, हिचकी, अजीर्ण और अतिसारादि रोग उत्पन्न होते- शरीर भारी हो जाता-और आलस्यकी वृद्धि होती है. यदि किसी कारणसे रात्रिको जागरण हुआ होतो दिनको सोनेसे कुछ हानि नहीं. भोजनके पश्चात् सोनेसे कफ और, पुष्टताकी वृद्धि होकर वादी दूर होती है.

२२७ दंतधावन– दतोंन करनेसे मुख शुद्ध होता. अरुचि, दुर्गंध, मल, कफ, पित्त, नाश होते हैं. परंतु मदातुर, कृश, थकित ( दंत, तालु, हस्तरोग, हिचकी, उलटी, शिरपीडा, मूर्छा और मुखशोथसे ) रोगी इन पुरुषोंको दंतोन नहीं करना चाहिये. कुल्ले करो.

२२८ मुखप्रक्षालन– मुखको ठंडे पानीसे धोनेसें रक्त पित्त, शोष, और मुखकी कीलें आदि रोग नाश होते हैं.

२३० हस्तपाद प्रक्षालन– हाथ पांव धोनेसे नेत्रोंकी ज्योति, बल, उत्साह बढता है. और श्रमको नाश करता है.

२३१ कण्डूष– कुल्ले करनेसे मुखशोथ, दन्तरोग, स्वरघात, ओष्टरोग, जिव्हाका कडापन और रक्तवात आदिरोग नष्ट होते हैं.

२३२ अभ्यंग– उवटन करनेसे बल वढता, सुख होता, वर्ण स्वच्छ होता, पुष्टता बढता, और धातु सम होकर वादीके रोग दूर होते हैं.

२३३ मर्दन– तेल आदि मलनेसे पुष्टता, बल बढता, श्रम, बादी दूर होती और निद्रा आती है.

२३४ क्षौर–बाल बनवानेसे नख, केशादि योग्य होते सीस और नेत्ररोग दूर होते, सुन्दरता, पवित्रता तथा रुचिकी विशेष वृद्धि होती है.

२३५ शिरोभ्यंग– मस्तकमें तेल डालनेसे केश स्वच्छ शोभित होते, नेत्रोंको बल पहुंचता, कर्णरोग, हनुग्रहको दूर करता और धातुको पुष्ट करता है. ज्वर, विरेचन, और अजीर्णमें शिरोभ्यंग मतकरो.

२३६ स्नान– करनेसे बात, श्रम, मैल, खुजाल, अपवित्रता, नष्ट होती. बल, रुचि, प्रफुल्लितता बढती है. परन्तु अतिसार, ज्वर, कर्णशूल, वादी,

आध्मान, अरोचक, अजीर्ण और भोजनके पश्चातकालमें स्नानका निशेध है. शिरपर उष्ण जल पडणेसे नेत्रोंमें उष्णता होती है.

२३७ चन्दन तिलक धारण– से प्यास, मूर्छा, दुर्गंध, श्रम, वादी दूर होकर शोभा, तेज, प्रीति, उत्साह और बलकी वृद्धि होती है.

२३८ पुष्पधारण–से कान्ति, काम, उत्साह, शोभाकी वृद्धि होती और दुर्गंधिजन्य रोग दूर होते हैं. इसी प्रकार उत्तम वस्त्र, रत्नाभूषण धारण जानो.

२३९ अंजन– लगानेसे नेत्र निर्मल, निरोगी रहते, ज्योतिओ शोभा बढती है परन्तु रात्रिमें जागा हुआ, थकित ज्वरातुरकों तथा उल्टी होना, भोजन करना, और शिर धोनेके पश्चात अंजन, काजल, और सुर्मा आदि लगाना वर्जित है.

२४० उष्णीषधारण– पगडी, दुपट्टा, टोपी आदि धारणसे शीस, केश स्वच्छ रहते बादी और धूपसे रक्षण होता है.

२४१ पादत्राण– पनहीं पहिननेसे पांव कंटकादिसे रक्षित रहते, सुख होता, नेत्रोंको गुण होता और आयुष्यकी वृद्धि होती है.

२४२ छत्र– छाता लगानेसे बल बढता, नेत्रोंको सुख होता, वर्षा तथा ग्रीष्मका त्रास नाश होता है.

२४३ व्यजन– पंखेकी हवा लेनेसे उत्साह, बल और सुख प्राप्त होता उष्णता और मच्छरादि जीवोंके क्लेशसे रक्षण होता है.

२४४ यष्टि– लकडी, छडी, लाठी, आदि धारणसे उत्साह, स्थिरता, ढिठाई, और बल बढता. सर्प, श्वान आदि दुष्ट जीवोंका भय निवृत्त होता. वृद्ध, निर्बल और प्रज्ञाचक्षु (नेत्रहीन=अंधा) लोगोंके लियेतो मानो दूसरा पांवही है.

२४५ व्यायाम– कसरत अनेकप्रकारकी है जिसमें "१ दंड, २ बैठक, ३ कसवल" ये तीन मुख्य है. व्यायाम करनेसें शरीरमें आरोग्यता, पाचन, बल, मांसमें दृढता, पुष्टता, तीक्ष्णता, उत्साह, तरुणाई, और साहस प्राप्त होता है. व्यायामी पुरुषोंको दुग्ध, घृत, बादाम आदि चिकने पदार्थ भक्षणार्थ मिलें तो अति लाभहो. वसंत, वर्षा और शीतमें अधिक

तथा इनसे व्यतिरिक्त ऋतुओमें थोडा व्यायाम करना चाहिये. अधिक व्यायामसे कास, ज्वर, और उल्टी ए रोग होते हैं. शरीर थक जानेपर कंठ ग्रीवा, ललाट आदिमें पसीना आनेपर व्यायामसे निवृत्त हो जाना चाहिये. भोजन, मैथुन, और मार्गगमन करनेपर तत्क्षण व्यायाम कदापि मत करो. अतिकृष, कास, श्वास, क्षयी, रक्तपित्त, और शोष रोगयुक्त पुरुषको व्यायाम करना अतिही वर्जित है. अंग्रेजी व्यायामसे पहिलेतो चापल्यता विशेष रहती है, परन्तु वृद्धावस्थामें हड्डियोंके जोड जोड ढीले पड जाते हैं.

२४६ बलनाशक– १ दुर्गंधित मांस, २ वृद्धा ( ३५ वर्षसे अधिक वयवाली ) स्त्री, ३ बालार्क, ४ नवीन दधि, प्रभात कालिक मैथुन, ६ निश दिवस निद्रा अथवा भूखे सोना. ए छ पदार्थ बल तथा प्राण नाशक हैं.

२४७ बलकारक– १ नवीन मांस, २ नविन ( तत्काल बनाया हुआ उष्ण ) अन्न, ३ बाला ( १६ से २५, अठाइस वर्षतककी वय वाली ) स्त्री, ४ दुग्धपान, ५ घृतयुक्त उत्तम पदार्थ भक्षण, ३ उष्ण जलस्नान ए छः पदार्थ शीघ्रही शरीरको बलदायक तथा रक्षण करता होते हैं.

२४८ तुलना– चावलसे आठ गुणा अधिक बलदायक आटा. आटेसे अष्टगुण अधिक दूध. दूधसे अष्टगुण बलदाता मांस. मांससे अष्टगुण घृत और घृतसे अष्टगुण अधिक बलदाता तेल है. उक्त सर्व पदार्थ तो भक्षण करनेसे उपरोग लिखित गुण दाता होते हैं. परन्तु तेलका उक्त गुण भक्षणमें नहीं किन्तु मर्दनमे हैं अधिक तेल खाना तो हानि कारक है.

सूचना–हम अपने लघु निघंटुमें मुख्य मुख्य औषधादिके "नाम, गुण और उपयोग" सूक्ष्मतापूर्वक दर्शा चुके. इस विषयका पूर्ण विस्तार देखना चाहो तो राजनिघंटु, शुश्रुत आदि बृहद्ग्रंथ देखो और गुरुशिक्षासे प्राप्त करो. स्थानाभाव, अवकाशन्यूनता तथा ग्रंथ दीर्घताके भयसे विशेष लिखना योग्य न समझा गया.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे उपयोगीवर्ग निरूपणं नाम एकविंशतिस्तरंगः ॥ २१ ॥

॥ इति विचारखंडः ॥

ऋतुचर्या दिनचर्या रात्रिचर्या.

ऋतुचर्या दिनचर्या रात्रिचर्या तथैवच ।
........ मितेभङ्गे कथ्यते हि मया क्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थ–अब हम इस २२ वें तरंगमें ऋतुचर्या दिनचर्या और रात्रिचर्या यथा क्रमानुसार वर्णन करते हैं.

षड्तुचर्याविचार– वर्षके बारह महिनोंमें १ मार्गशीर्ष-पौष हेमन्तऋतु, २ माघ-फाल्गुन शिशिरऋतु, ३ चैत्र-वैशाख वसंतऋतु, ४ ज्येष्ठ-आषाढ ग्रीष्मऋतु, ५ श्रावण-भाद्रपद वर्षाऋतु, और ६ आश्विन-कार्तिक शरदऋतु ये छः ऋतुएं रहती हैं.

षट्ऋतु-त्रिदोषसम्बन्ध– १ ग्रीष्मऋतु वातका संचय-वर्षामें कोप और शरदऋतुमें शांति रहती है. २ वर्षामें पित्तका संचय शरदमें कोप और हिमऋतुमें शांति रहती है. इसी प्रकार शिशिरमें कफका संचय वसंतमें कोप और ग्रीष्मऋतुमें शांति रहती है. यह वात पित्त कफका संचय कोप और शांति आहार-विहारसे होते हैं इसलिये इन दोषोंके प्रकोपकर्ता आहार विहारादि की ओर ध्यान रखना चाहिये. सो नीचे लिखे अनुसार जानो.

१ वातप्रकोप–कटु तीक्ष्ण कसैली रूखी हल्की थोडी वस्तु और बासे (रात्रिका रहाहुआ) अन्न भक्षण संध्याकालिक मैथुन शोक भय परिश्रम मेघाच्छादा प्रहार अन्न जल परित्याग कामदेव जागरण अजीर्ण १४ वेगोंके प्रतिरोध और जलमें तैरनेसे वायु कुपित होती है और उसके यत्नोंसे शांत होती है.

२ पित्तप्रकोप–तिल्ली कांजी मद्य दही मछली कटु तीक्ष्ण नोंन खटाईके भक्षण शरदऋतुमें धूपमें भ्रमण क्रोध मैथुन विदाही पदार्थ भक्षण उपवास तृषा क्षुधावरोध और अजीर्णके करनेसे मध्यान्ह तथा अर्द्ध रात्रिमें शरदऋतुके समय पित्त कुपित होता है और उसके यत्नोंसे शान्त होता है.

कफप्रकोप–दही दूध नवीनान्न शीतल जल खठाई नोंन घी तिल भारी ( मैदा आदिकी गरिष्ट ) वस्तु मछली और मीठी वस्तुके भक्षण दिवस निद्रा अग्निमांद्य और प्रातःकालही भोजन करने आदि कारणोंसे कफ को-

पको प्राप्त होता है और उसके यत्नोंसे शमन होता है. इसलिये इन आहार-विहारोंपर सबको सदैव पूर्ण ध्यान रखना चाहिये.

१ हिमऋतु आहारविहार– गौ तथा भैंसका नवीन घी गुड सोंठयुक्त हर्रे मीठा दही तिल गेंहू उर्द और मिश्री आदि मिष्ट पदार्थ भक्षण करना, नमक मिलाकर तेल मर्दन करना, निर्वात स्थानमें रहना और नवीन उष्ण ऊर्ण वस्त्र पहिरना चाहिये.

२ शिशिरऋतु आहारविहार– पीपलीयुक्त हर्रे काली मिर्च अदरख नवीन घी सेंधानोंन उत्तम गुड दही खाना और पूर्वोक्त हिमऋतु लिखित आहारविहार सेवन करना चाहिये.

३ वसंतऋतु आहारविहार– इस ऋतुमें कुपित कफ रोगोंको उत्पन्न कर अग्निको मंद कर देता है इसलिये इस ऋतुमें मधुयुक्त हर्रे भ्रमण चित्रक चूर्ण तथा कफहारी पदार्थ सेवन करना चाहिये.

४ ग्रीष्मऋतु आहारविहार– ग्रीष्मऋतुमें सूर्य अपने तेजसे प्राणीमात्रका बल हर लेता है इसलिये खश आदिके पर्दे लगे हुए शीतल स्थानमें तथा वृक्षोंकी सघन छायामें फुहारे आदिके समीप निवास करना. गुड संयुक्त हर्रे मधुर भोजन दाख क्षीर श्रीखंड ( सिखरण ) सत्तू मिश्री अनार आदिका रस ( शर्वत ) चिकने और शीतल पदार्थोंका भक्षण जलक्रीडा खशके पंखोंकी पवन चंदन कपूरादिका लेपन दिवस निद्रा और सुगंधित पुष्पोंका सेवन करना चाहिये. परन्तु इस ऋतुमें कटु तीक्ष्ण नोंन खटाई विदाही पदार्थ मद्य श्रम और धूपमें घूमना ये हानिकारक हैं.

५ वर्षाऋतु आहारविहार– इस ऋतुमें वायुका कोप होता है इसलिये सेंधानोंनयुक्त हर्रे चिकनी वस्तु नोंन खटाई चावल यव सोंठ मिर्च पिंपल पिंपलामूल चित्रक और सेंधानोंनयुक्त दहीका मठा भक्षण उष्ण जल कूपजल श्वेत वस्त्र भ्रमण हलका भोजन और विरेचन ( जुलाब ) करना चाहिये. परंतु दिनको सोना श्रम धूप तलावका जल दही बनमें निवास और विशेष मैथुन ये व्यवहार हानिकारक हैं.

६ शरदऋतु आहारविहार– शरदऋतुमें पित्त कुपित होता हैं इसलिये

मिश्रीयुक्त हरें मिश्री षष्टिचावल मूंग सरोवरका जल और औटे हुए दूधका सेवन करना चाहिये. परन्तु तीक्ष्ण वस्तु नोंन खटाई आसव ( मद्य ) भक्षण धूपमें घूमना पूर्वदिशाकी पवन लेना और दिनको सोना ये व्यवहार हानिकारक हैं.

विशेषतः—उक्त ऋतुचर्याके नियमानुसार व्यवहार रखनेसें ऋतुजन्य व्याधिका भय नहीं रहता पुरुषोंको चाहिये कि ये नियमोंसे ऋतु पर्यन्त निर्वाह न करसकें तो प्रत्येक ऋतुके अन्तिम ७ दिन पर्यंत तो अवश्यही नियमको निवा हैं और आठवे दिनसे अग्रिम ऋतुचर्याके आहारविहारोंकी ओर ध्यान देकर वर्ताव करें तों सदैव रोगरहित रहकर ऋतुजन्य व्याधियोंके चक्रसे विमुक्त होवेंगे.

दिनचर्या विचार— इसमें दिनभरके व्यवहारकी विधि लिखेंगे, तुमको चाहियेकि ४ घडी रात्रि शेष रहे ( ४½ बजे प्रातःकाल ) निद्रा त्यागतेही परब्रह्म परमात्माका ध्यान करने पश्चात् सय्यासे उठकर मल मूत्र त्याग करो. मल मूत्र त्यागकेलिये रात्रिको दक्षिण और दिनको उत्तरकी ओर मुख करके बैठना उत्तम होगा नंतर मूलद्वार और लिंगेन्द्रियको जलसे शुद्ध कर हाथ पांवको मृतिका लगाकर शुद्ध करो और जलके कुलें करके मोरछली आदि सीधे वृक्षकी १२ अंगुल लम्बी तथा हाथकी कनिष्ठ अंगुली समान मोटी दतौनके अग्रभागकी कुचीसे दांत और उसकी चीरन (फका) से जिव्हाको निर्मल करो और शीतल जलके १२ कुरले करके शीतल जलसेही मुख धोओ तदनंतर सेंधानोंन, कुछ सोंठ, और सिके जीरेके महीन चूर्णको दांतोमें घिसकर मुंह धोडालो तो ऐसे नियमसे मुखरोग तथा मुख दुर्गन्धि कदापि न होगी. फिर शरीरमें नारायणादि तैलका मर्दन करके उसकी चिकनाई मिटानेके लिये बेसन ( चनेके आटे ) आदिके उवटनसे शरीरको स्वच्छ करलो और निजशक्त्यानुसार व्यायाम (कुस्ती, दंड, बैठक, मलखंब आदि कसरत ) करके इसश्रम हरणकेलिये कमरके नीचें तो अधिक उष्ण और कमरके उपर कुनकुने ( कुछ उष्ण ) जलसे शरीरको धोओ और भलीभांति स्नान करके शरीर मात्रको निर्म-

ल करलो. नंतर संध्योपासन, अग्निहोत्र, गायत्री मंत्रादिक जाप करके देव, गौ, ब्राह्मण, गुरु, आचार्य, माता, पिता, और अतिथि आदिका नमन पूजन क्रमशः करो और स्वशक्त्यानुसार अन्न, वस्त्र, सुवर्ण ग्रंथादिकका दान उत्तम विद्वान ब्राह्मणको श्रद्धा भक्ति समेत देकर मध्यान्ह समय बलि वैश्वदेव ( अग्निमें बने हुए पक्वान्नकी आहुति ) करो यदि उस समय भाग्यवशात कोई अभ्यागत आनपहुंचेतो उसे सादर भोजन कराके कुटुम्बसहित आप भोजन करो. रसोईका स्थान एकांतमें प्रकाशित और चहुं ओरसें मंद मंद स्वच्छ पवन प्रवाहित तथा भोजनके पात्रादिभी सर्व सुन्दर और स्वच्छ रखो भोजन करनेके समय माता, पिता, वैद्य, मित्र, और पाककर्त्ताके व्यतिरिक्त किसी अन्यको समीप न रहनेदो क्योंकि भोजनपर एसे कुटुम्बीजन तथा मोर, चकोर, बानर, और मुर्गाकी दृष्टिके व्यतिरिक्त अन्यका दृष्टिपात योग्य नहीं, उससे हानि होती है.

भोजन करनेके समय प्रथम नोनयुक्त अदरकके दो तीन टुकडे खाकर नंतर मधुर, चिकना, हितकारी पदार्थ, मूंग, चावल, घृतयुक्त गहूंकी रोटी उत्तम शाकपत्रादिके साथ धैर्यतापूर्वक खाओ और अन्तको रुचिपूर्वक मिश्रीयुक्त दूध पीकर नियमानुसार जल पीओ क्योंकि भोजनके आदिमें जल पीनेसे मन्दाग्नि तथा भोजनके अंतमें अचानक जल पीनेसे वह जल विष सदृश गुणकारी होता है इस लिए भोजनके मध्य मध्यमें थोडा थोडा पानी धीरे धीरे पीना चाहिये जिससे अन्न पाचन होकर अजीर्ण और विकारकी निवृति हो जावे. जल अजीर्ण दशामें पीनेसे अन्न पचता, अन्न पचनेपर पीनेसे शरीरमें बल बढता और रात्रिके अंतमें जल पीनेसे सर्व विकार दूर होते हैं इस लिये भोजनके दो घडी पश्चात् ठंडा जल पुनः पीना चाहिये. इस प्रकारसे भोजन कर हाथ मुंह धोकर संतुष्ट होओ.

भोजनके पश्चात् १ अगस्त, २ कुंभकर्ण, ३ शनैश्चर, ४ वडवानल, और ५ भीमसेनका स्मरण करनेसे उत्साह बढकर भक्षितान्न पचकर शरीर हल्का होता है. क्योंकि ए ऐसे बलवान प्रतापिक और दीर्घ अहारी थे कि जो

अहार करते सो तुरत पच जातेथे इसी प्रकार तुम्हारा अन्नभी पाचन करेंगे.

नंतर सुन्दर ऋतु योग्य वस्त्र, सुगंधित माला पहिनकर ताम्बूल खाओ और शीतल व्यजनेसे पवन लेकर शीतल छायामें इधर उधर ठहलो या सुन्दर सैयापर कुछ काल सीधे चित्ते या बायें करवटपर लेटकर निद्रा लो. क्योंकि चित्ते (पीठकेभर) सोनेसे बल और बायें करवटपर सोनेसे आयु बढती है. या १०० पैंड भूमि चलो, क्योंकि भोजन करके किसी कार्य वश बैठे रहनेसे शरीर भारी होता. सीधि खटपर परही लेटे रहनेसे अन्न नहीं पचता और दौडणे वालेके साथतो मानो मृत्युही दौडती, है (अर्थात् काल आता है) इसलिये भोजनके अंतमें उपरोक्त नियमेंपर ध्यान देकर गौकी छाछ तथा सिखरण आदिका सेवन करो और संध्यासमय १ भोजन, २ मैथुन, ३ अध्ययन और ४ निद्रा ये चार कार्य मत करो क्योंकि संध्याके भोजनमें रोग, मैथुनसे भयंकर सन्तान, अध्ययनसे आयु क्षय और निद्रासे दरिद्रता प्राप्त होती है. किंतु संध्यासमय "ईश्वराराधन" यह सर्वोत्तम कार्य सबको करना योग्य हैं.

रात्रिचर्याविचार– इसमें रात्रिके आहार विहारादिका वर्णन करेंगे. तुमको चाहियेकि अपने सायंकालीय सर्व कृत्योंसे निपटनेपर रात्रिके प्रथम प्रहरमें (ऊर्द्धकथित नियमानुसार) भोजन करके सुन्दर स्थानमें सय्यापर शयन करो. ग्रीष्मऋतुमें बाहर चांदनीमें सोना सुखदाई होता है क्योंकि चांदनी कामवर्द्धनी और दाहहारणी होती है, पश्चात् स्वशक्त्यानुसार सुन्दर रूपवती नवयौवना स्त्रीसे सम्भोग करो. हम भोगविधान भी लिखते हैं.

संभोगके कुछ काल पूर्व और पश्चात् गौ तथा भैंसका औंटायाहुआ मिश्रीयुक्त दूध रुचिपूर्वक पीकर मैथुनको तत्पर होओ क्योंकि दुग्ध तत्क्षण[1] बलदाता तथा बलपूर वर्द्धक है.

हम मैथुनविधानभी लिखते हैं– हिम तथा शिशिर ऋतुमें अपनी शक्तिपूर्वक नित्यप्रति वारम्वार स्त्रीसंग करणेसे भी हर्ष वढकर रोग तथा ब-

---

१ सद्यो बलहरा नारी सद्यो बलकरं पयः। स्त्रियं गच्छेत्पयः पित्वा भुक्त्वा तांच पुनः पिबेत् ॥ १ ॥ इत्युक्तं ग्रंथान्तरे ॥

लहानि नहीं होती. परन्तु बसन्त और शिशिर ऋतुमें तिसरेदिन शक्त्यानुसार मैथुन करना चाहिये क्योंकि अन्यथा करनेसे शरीर रोगग्रस्त होकर बलक्षय हो जावेगा. वर्षा तथा ग्रीष्मऋतुमें पन्द्रहवे दिन शक्त्यानुसार स्त्रीसंग करो नहींतो बलरहित होकर रोगसहित हो जाओगे. शीत ऋतुमें रात्रि, ग्रीष्ममें दिवस और वर्षाऋतुमें रात्रि या दिनको मेघ गर्जनाके समय स्त्रीसंग करोतो कदापि रोगग्रसित न होओगे.

औरभी सुनो– १ रजस्वला, २ रोगयुक्ता, ३ वृद्धा, ४ जिसे कामवेग न जगता हो, ५ मलीनतायुक्त रहनेवाली, ६ गर्भिणी (सात मासके उपरांत गर्भवाली) और ७ उपदंश रोगग्रस्ता, इन सात दशाओंमेंकी स्त्रीसे मैथुन मत करो नतो रोगग्रस्त हो जाओगे.

तथा– १ भयातुर, २ अधैर्यवान्, ३ क्षुधित, ४ रोगी, ५ तृषित, ६ बालक, ७ वृद्ध और ८ मलमूत्रके वेगयुक्त दशामें मैथुन मत करो. बहुत मैथुन मत करो न तो तुमको १ शूल, २ खांसी, ३ विषमज्वर, ४ क्षीणता, ५ क्षयी और ६ बातज पक्षाघातादि रोग उत्पन्न हो जावेंगे.

मैथुनके पश्चात् स्नान करके मिश्रीयुक्त उष्ण दुग्ध, मिष्ट रस और आसव पिओ और पंखेसे मंद मंद पवन लेकर शयन करो, दिनको बहुत सोने और रात्रिको अधिक जागरणका प्रसंग मत लाओ. ५ घडी रात्रि अवशिष्ट रहे (४ बजे प्रातःकाल) ८ अंजुली (चुल्लू) शीतल, मिष्टजल पान करोतो सब रोग दूर होकर पूर्णायुको प्राप्त होओगे. यह सर्व विधि भावप्रकाश और सारंगधरसे तुमको सुनाई है इसपर विचार रखकर चलोगे तो सुखपूर्वक आयुष्य व्यतीत करके निरोगीही बने रहोगे.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे ऋतुचर्या दिनचर्या रात्रिचर्या निरूपणं नाम द्वाविंशतितमस्तरंगः ॥ २२ ॥

**स्नेह-वमन-विरेचन-हर्रसेवन बस्तिकर्म धुम्रपान रक्तमोचन**
**स्नेहादीनां विचारश्च मनुजानां हिताय च ।**
**........ मिते भङ्गे लिख्यते हि यथा क्रमात् ॥ १ ॥**

---

१ सवितुस्समुदयकाले प्रसृतीः सलिलस्य पिबेदृष्टौ रोगजरापरिमुक्तो जीवेत् वर्षशतं साग्रम् ॥ १ ॥

भाषार्थ— अब हम इस २३ वें तरंगमें स्नेह वमन विरेचन हरें सेवन वस्तिकर्म धूम्रपान और रक्तमोचन यथाक्रमसें वर्णन करते हैं.

स्नेहविचार— १ घृत, २ तैल, ३ वसा, (चर्वी) और ४ मज्जा ये चारों स्नेह (चिकनाई) पौष्टिक होते हैं.

स्वेदनविचार— १ ताप, २ उष्ण, ३ उपनाह, और ४ द्रवस्वेद ये चारों स्वेद (पसीना) उत्पन्न करनेवाले हैं.

१ तापस्वेद— बालु (रेत), नोंन, वस्त्र, हाथ, ढक्कन और अगीठीकी उष्णतासे सेककर पसीना उत्पन्न करना. इसे तापस्वेद कहते हैं.

२ उष्णस्वेद—लोहा अथवा ईंट आदिको तपाकर उसके सेकसे पसीना उत्पन्न किया जावे उसे उष्णस्वेद कहते हैं. तापस्वेद और उष्णस्वेद इन दोनोंके सेकसे कफजन्य विकार दूर होते हैं.

३ उपनाहस्वेद—ताप और उष्ण दोनोंके योगसे पसीना उत्पन्न किया जावे उसे उपनाहस्वेद कहते हैं.

४ द्रवस्वेद—शरीरको वस्त्रसे ढांककर खटाई या वातनाशक औषधोंके जलसे सिंचनकर पसीना उत्पन्न किया जावे उसे द्रवस्वेद कहते हैं. ये चारों स्वेद वातरोगोंकोभी दूर करनेवाले हैं.

महाशाल्वस्वेद—कुल्थी उर्द गेहूं अलसी तिल सरसों सोंफ देवदारु सम्भालु जीरा अरंडबीजी अरंडमूल रास्ना सोमाञ्जन मूल इन सबको नोंनयुक्त कांजी या खटाईसे महीन पीसकर उष्ण करलो और शरीरके वातग्रस्त अवयवपर सहता २ लेप करो तो सर्व वातरोग दूर होवेंगे.

वमनविचार—भक्षित अन्न तथा शरीरके मलको मुखद्वारा (उल्टी करके) निकाल देनेको बमन कहते हैं. शरद वसंत और वर्षाऋतुमें मनुष्यमात्रको बमन लेना योग्य है क्योंकि इससे कफरोग हृद्रोग विषदोष मंदाग्नि श्लीपद कुष्ठ विसर्प प्रमेह अजीर्ण भ्रम कास श्वास पीनस मृगी उन्माद अतिसार तथा नाक तालु ओष्ट कानका पकाव जिव्हारोग पित्तरोग कफरोग मेदोवृद्धि शिरोग्रह=पार्श्वशूल अरुचि और तात्कालिक ज्वर ये सर्व रोग नाश

वमनवर्जन– तिमिर (रेतांधी) गुल्म, उदररोग, निर्बलता, प्रहार, मेदोरोग, स्थूलरोग, उदावर्त, वातरोग इन रोगोंसे ग्रसित, दुर्बल, वृद्ध, क्षुधित मनुष्य और गर्भिणी स्त्रीको वमन न देना चाहिये.

वमनक्रिया १– पतली पेज (भेदडी, राबडी)में दूध या छाछ या दही मिलाकर भरपेट खिला दो और ऊपरसे सेंधानोंन या मधु या बच खिलाकर उष्ण जल पिलाके गलेमें अंगुली चलाओ तो वमन हो. तथा २– कुटकी, मैनफल, फिटकरी, तमाखू नीम या किसी अन्य तीक्ष्ण वस्तुका चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तो वमन होगा. वमन करानेके पश्चात् शुद्ध जलसे कुरले कराके जिव्हापर जीरा आदि लगादो और बिजौरा (तुरंज) आदि उत्तम वस्तु खिलाकर सुगंधित द्रव (इतर) सुंघाना चाहिये.

विरेचनविचार– प्रथम विधिपूर्वक वमन कराके कफरोग पकनेतक पाचक औषधि दो नंतर शरद या वसंतऋतुमें विरेचन दोतो जीर्णज्वर, मलसंग्रह, वातरक्त, भगंदर, अर्श, पांडु, उदररोग, गुल्म, हृद्रोग, योनिरोग, अरुचि, उपदंश, प्रमेह, व्रण, विसूचिका, नेत्ररोग, कृमि, शूल, कुष्ठ, कर्णरोग, नाशिकारोग, शिरोग्रह, शोथ, और मूत्राघात ये सर्व रोग दूर होवेंगे. यदि किसी रोगकी निवृति विरेचनसेही होनी सम्भव हो तो अनियमित कालपरभी विरेचन देसक्ते हैं.

विरेचनवर्जन–बालक, वृद्ध, क्षीण, भयातुर, श्रमयुक्त, नवीन ज्वरयुक्त, तृषित, स्थूल, प्रहारयुक्त, मन्दाग्नि, मेदोरोग, बालक, तथा चिकने या रूखे शरीरवाले मनुष्य तथा गर्भिणी और प्रसूता स्त्रीको विरेचन मतदो.

विशेषतः–वात प्रकृतिवालेको तीक्ष्ण, पित्तवालेको कोमल और कफ प्रकृतिवालेको मध्यम विरेचन देना चाहिये.

विरेचकपदार्थ–दाख, दूध, हर्रे आदि कोमल, निसोत, कुटकी किरमाला आदि मध्यम. और थूहरका दूध, चोख, दात्यूणी, जमाल गोटा, और इच्छाभेदी रस ये तीक्ष्ण पदार्थ हैं.

विरेचनक्रिया– विरेचन देनेके ५ सात दिन पहिलेसे २टंक सोनामक्खी १ टंक जीरा. २ टंक सोंफ. २ टंक दाख. २ टंक गुलाबपुष्प. और १०

टकेभर शक्करको ऽ॥। तीन पाव पानीमें औंटाकर ऽ। पावभर रहजानेपर छानके[1] ४ दिन पिलाओ तो मल पचकर शुद्ध रेचन होता रहेगा. इसपर घृतयुक्त चांवलोंकी खिचडीको छोड और कुछ मत खिलाओ नंतर पांचवें दिन १० टंक सोनामुक्खी. १० टंक निसोत. १० टंक गुलकंद. २ टंक जीरा. ५ टंक सोंफ. १० टंक शक्कर. इन सबको जलमें औंटाकर दो चार दिनतक पिलाओ तो विरेचन होगा. जो ३० विरेचन हों तो उत्तम. २० हों तो मध्यम. और १० हों तो हीन विरेचन जानो.

षट्ऋतुविरेचन — १ वसंतमें सोनामक्खी, निसोत, गुलाब पुष्प, सोंफ, और जीरेका विरेचन शक्करके साथ दो. २ ग्रीष्ममें मिश्रीके साथ निसोतका विरचेन दो. ३ वर्षामें मधुके साथ निसोत, पिम्पली, द्राक्ष और सोंठका विरेचन दो. ४ शरदमें मिश्रीके साथ निसोत, धमासा, नागरमोथा, द्राक्ष, नेत्रवाला, मुलहटी, चंदन और सोनामक्खीका विरेचन दो. ५ हेमन्तमें उष्ण जलके साथ, निसोत, चित्रक, पाठ, चोख, बच, और सोनामक्खीका विरेचन दो. और ६ शिशिरऋतुमें मधुके साथ, निसोत, पिम्पली, सोंठ सेंधानोंन, और सोनामक्खीका विरेचन देना चाहिये.

विरेचनार्थ अभयादिमोदक — हर्रकी छाल, मिर्च, सोंठ, वायविंडग, आंवला, पिंपली, पीपलामूल, तज, पत्रज, नागरमोथा ये सब समान इन सबसे त्रिगुणी दात्यूणी, इन सबसे अष्टगुणी निसोत और इन सबसे छः गुणी, मिश्री[2] इन सबको महीन पीसकर मधुके साथ २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो और १ गोली प्रातःकाल शीतल जलके साथ दो तो उष्णजल न पीनेतक विरेचन होतेही रहैंगे जो इससे विशेष विरेचन हो जावें तो विषमज्वर, मन्दाग्नि, पांडु, कास, भगंदर, प्रमेह, राजयक्ष्मा, अर्श, कुष्ठ, नेत्रविकार, गंडमाला, उदररोग, वातरोग, आध्मान, मूत्रकृच्छ्र, अश्मरी तथा जंघा और कटिकी पीडा ये सर्व विकार दूर होकर तारुण्यता प्राप्त होवेगी.

---

१ इसे मुंजस कहते हैं.

२ इस अभयादि मोदकमें औषधोंके संयोगका प्रमाण हमने अमृतसागरसेही लिखा है. इसका यथार्थ निश्चय सारंगधरसे करलो.

विशेषतः– विरेचन (जुलाब) देनेपर रोगीके नेत्र शीतल जलसे धुलाओ, सुगंधि सुंघाओ, पान खिलाओ और निर्वात स्थानमें रक्खो परन्तु स्नान और पीनेके लिये उष्ण जलकाही उपयोग करो. शीतल जल मत दो नहीं तो रोगीको नाभि कुक्षिमें शूल, मलावरोध, वायुसरणका अभाव, पित्तरोग, शरीरमें भारीपन, दाह, अरुचि, आध्मान, चक्र और वमन ये विकार होवेंगे. यदि इनमेंसे कोई विकार उत्पन्नभी होता दृष्टि पडे तो पाचन देकर शुद्ध करलो तो सर्व रोग दूर होकर क्षुधा बढेगी और शरीर हल्का हो जावेगा.

दुष्टविरेचनसमन–यदि प्रामाणितसे विशेष विरेचन हों तो मूर्छा, गुदभ्रंश (कांछ निकलना) शूल और अतिसार आदिरोग उत्पन्न होते हैं इसलिये विशेष विरेचन हों तो शीघ्र शीतल जलसे स्नान कराके चावल, मिश्री, मधु, शिखरण, दही, षष्टीतण्डुल, मसूर और मिश्रीयुक्त बकरीके दूधका सेवन कराओ तो विरेचन स्तंभित हो जावेगा.

शुद्धविरेचन लाभ–यदि विरेचन यथार्थ रूपसे हो जावे तो मन प्रसन्न, वायुसरण, बुद्धि निर्मल, तथा क्षुधा और बलवर्द्धन होगा.

षट्ऋतु हर्रेसेवनविधि–१ ग्रीष्मऋतुमें १ हर्रे समान गुडके साथ. २ वर्षामें २ हर्रे सेंधेनोंनके साथ. ३ शरदमें ३ हर्रे मिश्रीके साथ. ४ हिममें ४ हर्रे सोंठके साथ. ५ शिशिरमें ५ हर्रे पिम्पलीके साथ. और ६ वसंतऋतुमें ६ हर्रे प्रतिदिन मधुके साथ सेवन कराते रहो तो ऋतुजन्य विकार न होकर समस्त रोग नाश होवेंगे.

वस्तिकर्मविचार–जिस रोगीको वातप्रकोपसे मलमूत्रका रुकाव हो गया हो तो उसकी इंद्रीया गुदामें वस्तिकर्म करना चाहिये. यह पिचकारी स्वर्ण या जस्ता आदि धातुओंकी नली और बकरेके अंडकोशकी थैलीके संयोगसे सुंडाकार बनाई जाती है. जो १ वर्षसे ६ वर्षकी अवस्थातक ६ अंगुल, ६ से १२ वर्ष पर्यंत ८ अंगुल, और १२ वर्ष पश्चात् १२ अंगुल लंबी रखनी चाहिये, यदि उक्त नियमसे न्यूनाधिक करना हो तो वैद्य अपनी बुद्धिसे विचार कर करले.

बस्तिक्रिया–जिस रोगीको वस्तिकर्म करना हो उसे चिकना और अधिक भोजन मत कराओ किन्तु हलका भोजन देकर उष्ण जल पिलाओ. और कुछकाल इधर उधर टहलाकर मलमूत्र त्यागने नंतर वायें करवटके आधारसे सुला दो. तब बांयीं जांध लंबी और दाहनी ऊंची करके गुदामें पिचकारीको लगाओ, इस समय तुम (वैद्य) पिचकारीको घी लगाकर वायें हाथसे पकडो और दाहने हाथसे खीचकर३०ताली वजाने या १०० तककी गिनती मुंहसे गिननेतक पिचकारी मारते जाओ. परंतु पिचकारी मारते समय रोगी और वैद्य दोनों जमुहाई खांसी और छींकसे बचे रहें पिचकारी मार चुकनेपर रोगीको दोनों पांव पसारकर सीधा सुलादो नंतर चतुराईसे दोनों पावकी अंगुलियां खिचवाके औंधा सुलादो और कूलोंको मसलकर सोने दो इसी प्रकार १ दिनके अंतरसे ८ नौं दिनतक अनुवासन और पश्चात् निरुहबस्ति दो. वस्तिकर्मवाले रोगीको उष्ण जलसे स्नान कराओ दिनको न सोने दो और अजीर्ण तथा कुपथ्यसे सदा बचातेही रहो.

अनुवासनबस्ति वर्णन– जिसमें घृत, तैल आदि स्निग्ध पदार्थोंसे पिचकारी मारी जाती है उसे अनुवासन वस्ति कहते हैं. उसीका एक भेद् "मात्रा" बस्तिभी है. शीत और वसंत ऋतुमें दिनको तथा ग्रीष्म वर्षा और शरद ऋतुमें रात्रिको अनुवासन बस्ति देना चाहिये.

अनुवासन योग्य तैल– गिलोय, एरंडकी जड, कणगचकी जड, भारंगीं, अडूसा, रोहिस, शताबरी, सहजना, काकलहरी, ये सब टके २ भर और जो (यव) उर्द, अलसी, वेरकी जड, और कुल्थी ये सब सेर सेर भर लेकर सबको ६४ सेर जलमें औंटाओ और चतुर्थांश रह जानेपर उसीमें ४ सेर मीठा तेल डालकर पकाओ नंतर सर्व रसादिक जलकर तेल मात्र रहजानेपर छानकर इसमेंसे १ टकेभर तेलकी पिचकारी सोंफके जल और सेंधेनोंनके संयोगसे दो तो सर्व वातरोग दूर होगे. यदि अनुवासन बस्ति देनेपर मलाशय या पक्वाशयमें जलव्युक्त स्नेह रहकर मूत्राशय मसलनेपर भी गुदा द्वारा न निकले तो निरूह बस्ति या बिरेचनकर दो तो वायुसरण तथा मलद्राव होकर शरीर शुद्ध हो जावेगा.

अनुवासन वस्ति वर्जन– भस्मक, कास, श्वास, क्षयीरोग तथा भययुक्त मनुष्यको अनुवासन वस्ति मत करो.

निरूह वस्ति वर्णन– जिसमें औषधियोके जलकी पिचकारी मारी जाती है उसे निरूह वस्ति कहते हैं उसका एक भेद उत्तर वस्तिभी है सामान्य रीतिसे इसके औरभी अनेक भेद हैं.

निरूह वस्ति योग्य– जिसका अधिक चिकना शरीर हो. हृदयमें चोट लगी हो, शरीर क्षीण हो. तथा आध्मान, छर्दि, हिक्का, अर्श, श्वास, कास, उदररोग, शोथ, अतिसार, विसूचिका, उदावर्त, वात रक्त, विषमज्वर, मूर्छा, तृषा, मूत्रकृच्छ, अश्मरी, मन्दाग्नि, शूल, अम्लपित्त, हृदरोग, और पादरोगयुक्त मनुष्यको निरूह वस्ति देनेसे उसके समस्त ( उक्त ) रोग नाश हो जावेगे. इसका प्रमाण सवा पैसेभरका है. अनुवासन वस्तिकी क्रियासेही निरूह वस्तिभी दो चार वार दो.

विशेषतः– केवल वातविकार वालेको स्नेहयुक्त, पित्तवालेको दूधयुक्त और कफ विकारवालेको कसैले या कडवे रस तथा मूत्रादियुक्त निरूह वस्ति देना चाहिये. परन्तु सुकुमार बालक और वृद्धको तो मृदु वस्तिही देना योग्य है.

१ उत्क्लेदनवस्ति–अरंडकी विजी, महुआ, पिम्पली, सेंधानोंन, वच और झाड वृक्षकी छालके क्काथसे पिचकारी मारो इसे उत्क्लेदन वस्ति कहते हैं.

२ दोषहर वस्ति– सोफ, मुलहटी, बील और इन्द्रयवको कांजी और गोमूत्रमें पीसकर वस्ति दो तो सर्व दोष दूर हो. उसे दोषहरवस्ति कहते हैं.

३ लेखनवस्ति– त्रिफलाका क्काथ, मधु, गोमूत्र, और जवाखारको मिलाकर वस्तिदो उसे लेखन वस्ति कहते हैं.

४ शोधन वस्ति– हर्र, किरमाला, आदि विरेचक पदार्थोंकी जलसे वस्ति करो उसे शोधन वस्ति कहते हैं.

५ समन वस्ति–प्रियंगु पुष्प, मुलहटी, नागरमोथा, रसोत, इन सबको दूधमें पीसकर वस्ति दो उसे समन वस्ति कहते हैं.

६ बृंहण वस्ति— पौष्टिक औषधोंका क्काथ, मिष्टद्रव, घृत, मांसरस इत्यादिकी वस्ति दो उसे बृंहण वस्ति कहते हैं.

७ पिच्छिल वस्ति—बेरके पत्ते, शतावरी, ल्हेसुवे, मोचरस, इन सबको दुधमें पकाके वह दुध मधुके साथ वस्तिमें दो उसे पिच्छिल वस्ति कहते हैं.

८ निरूहवस्ति— ाा आधसेर मधु, आधसेर घी, और थोडासा सेंधानोंन इन तीनोंको मथनकर १ दिनके अंतरसे ५ सात दिनतक एक १ पिचकारी मारो इसे निरूह वस्ति जानो.

९ मधुतैल वस्ति—अरंड मूलके क्काथमें मधु और मीठा तेल टकाभर, सोंफ १ पैसाभर और सेंधानोंन अधेलेभर डालकर मथो और इसकी वस्ति करो तो मेद, गुल्म, प्लीहा, कृमि और मलके समस्तरोग दूर होकर बल बढेगा.

१० स्थापनबस्ति—मधु, घृत, दूध, तैल ये चारों पैसे पैसे भर, सेंधानोंन और झांऊंवृक्षके बक्कलका रस अधेले अधेले भर इस सबकों एकजीव करके पिचकारी मारो उसे स्थापनबस्ति कहते हैं.

११ सिद्धबस्ति— पिम्पली, पिम्पलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ और मुलहटीके क्काथमें मधु, तैल और सेंधानोंन डालकर औंटाओ और इसकी पिचकारी मारो इसे सिद्धबस्ति कहते हैं.

१२ फलबस्ति— गुदामें बाहर और भीतर घी लगाकर अंगुठेके समान मोटी और बारह अंगुल लम्बी कडी पिचकारी गुदामें आधी चलाकर मारो इसे फलबस्ति कहते हैं. बस्तिकर्म समस्त वातरोगोंको नाश करता है.

धूम्रपानविचार— १ समन, २ बृंहण, ३ रेचक, ४ सघ्न, ५ वमनकर्ता और ६ वृणधूम ये छः प्रकारसे धूम्रपान होता है.

धूम्रपान वर्जन— भय, श्रम, दुःख, दंतरोग, रात्रिजागरण, तालुरोग, दाह, प्यास, उदररोग, शिरोग्रह, वमन, आध्मान, प्रहार, प्रमेह, पांडु, क्षीणता रोगवाले मनुष्य, बालक, वृद्ध और गर्भिणी स्त्री इन सबको धूम्रपान करना कदापि योग्य नहीं है.

धूम्रपान गुण— धूम्रपान करनेसे बात और कफके रोग शांत इन्द्रिया और मन प्रसन्न रहता. केश (बाल) और दंत दृढ

षड्विध धूम्रपान वर्णन– १ इलायची आदिका धुआं समन, २ शर-आदिका बृंहण, ३ तीक्ष्ण औषधोंका रेचन, ४ मिर्च आदिका धुआं सघ्न (कासहर्ता), ५ चर्म आदिका धुआं वमन कर्ता और ६ नीम या वच आदिका धुआं (जो व्रण आदिको दिया जाता है सो) व्रणधूम्र कहता है.

१ अपराजित धूप– मोरपंख, नीमके पत्ते, कटियालीके फल, हींग, मिर्च, छड, कपास, बकरेके वाल, सांपकी कांचरी, बिल्लीकी विष्टा और हाथीका दांत इन सबको महीन पीसकर घृतके संयोगसे धूनी दो तो भूत, प्रेत, पिशाच, राक्षस, और डाकणी आदि सर्व दोष तथा ज्वर दूर हो.

२ माहेश्वर धूप– हींग, देवदारु, घृत, बीलपत्र, गोडस्थि, कुटकी, सरसो, नीमके पत्ते, सिरके वाल, सांपकी कांचली, मार्जारकी विष्टा गोश्रृंग मैंनफल, दोनों कटियाली, कपास, आटेका भूसा (चलनीमें शेष रहा हूआ भाग) बकरेके रोम, चंदन, मोरपंख और अजमूत्र, (बकरीमूत्र) इन सबको महीन पीसकर धूनी दो तो भूत, प्रेत, पिशाच, डाकनी, सांप, चुडेलन, राक्षस और सर्व ज्वर आदि दूर हो.

रक्तमोचन विचार– मनुष्यके शरीरमें रक्तके कारण बहुधा विकार हुआ करते हैं इसलिये वैद्य विचारपूर्वक रोगीके शरीरमेंसे रुधिर अवश्य निकलवावे और शरद ऋतुमें तो प्रत्येक मनुष्यको रक्त निकलवानाही चाहिये जिससे रक्तविकार न होने पावेंगे.

शुद्ध रक्त स्वरूप– जो रक्त पिष्टरस, लाल वर्ण, शीतोष्ण, भारी, चिकना और गंधयुक्त हो उसे शुद्ध रक्त जानो.

दुष्ट रक्त लक्षण– जब शरीरका रक्त विगड जाता है तब शरीरमें पीडा, पाक, दाह, मंडल (चट्टे) खाज, फुनसी, शोथ और गर्मीके अनेक विकार उत्पन्न होते हैं.

रुधिर वृद्धि लक्षण– जब शरीरमें रक्त बहुत बढ जाता है तब अंगमें भारीपन, मेदो वृद्धि, निद्राधिक्यता, दाह, नसोमें भारीपन और नेत्रोंमें ललाई छा जाती है.

रक्त क्षीणलक्षण– जब शरीरका रक्त विशेष क्षीण हो जाता है तब खट्टे,

मीठे पदार्थोंके भक्षणमें विशेष इच्छा, मूर्छा, रूखापन, और नसोंमे शैथिल्यता प्राप्त हो जाती है.

१ वातदूषित रक्त विचार– लालवर्ण, फेनयुक्त, दृढ, धारा निकलते समय सूक्ष्म और वेगवती हो तथा शरीरमें चटकें उठें तो विचारलो कि रक्त वादीसे बिगडा है.

२ पित्तदूषित रक्त विचार– रक्त पीला या काला या नीला या हरारंग लिये हो. उष्णता, स्थिरता और दुर्गंधि युक्त हो तथा जिसपर मक्खी और चीटिया न झुमें ( प्रीति न करे ) तो विचारोकि यह रक्त पित्तसे बिगडा है.

३ कफदूषित रक्त विचार– जो शीतल, चिकना, भारी, गेरूया मांस ग्रंथि सदृश तथा अधिक और मंदगामी रक्त हो तो विचारलो कि यह रक्त कफसे बिगडा है.

४ त्रिदोषदूषित रक्तविचार– पूर्वोक्त तीनों दोषोंके आचरण युक्त कांजीके समान वर्णका रक्त हो तो विचारो कि यह रक्त सन्निपातसे बिगडा है.

५ विषदूषित रक्त विचार– काला तथा कांजीके समान या वीरबहूटीके सदृश, विशेष दुर्गंधियुक्त रक्त नाशिकासे गिरे जिससे शरीरमें कुष्ठ, शोथ, दाह और पाक हो आवे तो विचारो कि रक्त विषसे बिगडा है.

रक्त मोचन योग्य रोगी– शोथ, दाह, व्रण, फुनसियां, अंगपाक शरीरका रक्तवर्ण, वातरक्त, व्यांऊं ( विवांई ), स्तनरोग, भारीपन, रक्तनेत्र, तंद्रा, नाशिका विकार, मुखरोग, प्लीहा, गुल्म, विसर्प, विद्रधी, छाले, शिरोग्रह, उपदंश और वात पित्त इन रोगोंयुक्त रोगिका रुधिर सिंगी या जोंक या तूम्बी, या छुरे ( उस्तेरे ) या सीर ( फस्त ) द्वारा निकलवा देना चाहिये.

रक्तमोचनवर्जन–क्षीण, जारकर्मयुक्त, नपुंसक, भयातुर, अर्श, शोथ, पांडु, उदरव्याधि, कास, श्वास, छर्दि, अतिसार, पसीनायुक्त विरेचनादि पंचकर्महीन, १६ वर्षसे न्यून और ७० वर्षसे अधिक वयका पुरुष और गर्भिणी तथा प्रसूता स्त्री इनका रक्त मत निकलवाओ, हां यदि उक्त रोगोमेंसेभी कोई रोग रक्तमोचनसेही नाश होना संभव हो तो जोंक लगाकर रक्त निकलवाना ठीक होगा.

विशेषतः– विष दूषित रक्तसीर या छुरे(उस्तरे)से और, वात, पित्त, कफदूषित रक्त हो तो सिंगी या जोक या तुमडीसे निकलवाना चाहिये. जोंक जहां लगाई जाती है वहांसे १ हाथ, सिंगी या तुम्बडी बारह अंगुल ( १ वीता ) छुरा १ अंगुलपर्यंत, और सीर खुलवानेसे सर्व शरीरमात्रका दुष्ट रुधिर, निकलकर शरीर शुद्ध हो जाता है. परंतु ऐसे लाभोंको देखकरभी क्षुधित, निद्रित, मूर्छित, भ्रमित, मदोन्मत्त, और मलमूत्रके वेगयुक्त मनुष्यका रक्तमोचन शीतकालमें कदापि मतकराओ. यदि पूर्वोक्त जलौका आदि उपायोंसे रक्त भलीभांति न निकले तो उस स्थानपर कूट, सोंठ, मिर्च, पिम्पली, और सेंधेनोंनका चूर्ण मसलो तो वहांसे पूर्णरूपसे रक्तश्राव होगा. रक्तमोचनके समय विशेष शीत तथा विशेष उष्णताका समय बचाकर समशीतोष्ण कालमें रक्तमोचन कराओ और रोगीको हल्का भोजन दो.

रक्तस्तम्भनोपाय– यदि सीर छुडानेपर रक्तश्राव बंद न हो तो लोद, रार, निसोत, जौ, गेहूं, धावडेकी छाल, गेरू सांपकी कांचली, रेशमकी राख, और सांभरकी खाल इन सबका महीनचूर्ण उस सीरके मुखपर लगाओ और जल आदिसे शीतल उपाय करो तो रक्त स्तंभित हो जावेगा. यदि सीर छुडानेकी नस नाडीपर हो तो उसे दागदो. या खार लगाओ अथवा कसैली वस्तुका लेप करो. यदि बायें अंडकोशपर शोथ हो दाहिने हाथके अंगूठेके नीचेकी नसको दागदो, या दाहने हाथकी सीर छुडादो, और जो दाहिने अंडकोशपर शोथ हो तो बांये हाथके अंगूठेके नीचेकी नसको दागदो या बायें हाथकी सीर छुडादो तो शोथ उतर जावेगा. तथा विसूचिकासे रोग ग्रसित मनुष्यके पार्श्वभागपर दागदो तो विसूचिका(महामारी) दूर हो जावेगी.

सीरोद्भव व्यथा– यदि सीर खुलवानेमें अधिक रुधिर निकलजावे तो वह रोगी नेत्ररहित, अर्द्धाङ्ग, वात, तिमिर, तृषा, शिरोग्रह, कास, श्वास, हिचकी, दाह और पांडु इन रोगोंमेसे किसी रोगयुक्त होकर अत्यंत रुधिर निकल जानेपर प्राणरहितभी हो जाता है, इसीलिये वैद्यविचारके साथ रक्तमोचन करवाना चाहिये.

तथा शमन– यदि दैववशात् रुधिर निकलकर रोगी क्षीण हो जावे तो

उसे षष्टि तण्डुलकी क्षीर (खीर) या दूध तथा (भक्षणयोग्य वर्ण समझा जावे तो) मृगमांस या बकरेका मांस रसपीडा शांत होकर शरीर हल्का और मन प्रसन्न होनेपर्यंत सेवन कराते रहो. यदि विशेष रुधिर निकलकर शोथ आजावे तो उसे उष्ण घीसे सेको या अन्य उपचार करो तो शोथ मिटकर पीडा शांत होजावेगी.

रक्तमोचनपर वर्जित कर्म— रक्तमोचन करानेवाले रोगीको मैथुन, क्रोध, शीतल जल स्नान, बाहिरी वायु, एक स्थानपर बैठ रहना, दिनको सोना, खारी, खट्टी और कडवी वस्तु खाना, चिंता, विशेष भाषण, और अजीर्णपर भोजन करना शरीरमें पूर्ण बल प्राप्त होनेतक कदापि ये कर्म न करने दो.

इति नूतनामृतसागरे विचारखंडे स्नेह, वमन, विरेचन, हर्रसेवन, बस्तिकर्म, धूम्रपान, रक्तमोचन वर्णन निरूपणं नाम द्वात्रिंशतितमस्तरंगः॥२३॥

॥ इति विचारखंडः ॥ २ ॥

## सूचना—

इस तृतीय खंडमें सर्व रोगोंका निदान उत्तम प्रकारसे वर्णन किया गया है. इसीलिये इसको निदानखंड संज्ञा दीगई है इसके ४४ तरंग हैं जिनमेंसे प्रथम तरंगमें निदानपंचक, द्वितीयमें रोगोंके १४ प्रकार तथा शरीरस्थ १४ वेगोंके प्रतिरोधसे रोगोत्पत्तिका दर्शाव, तृतीय तरंगमें शिवजीकी कोपाग्निद्वारा ज्वर प्रादुर्भाव तथा तच्चित्रादि, और अवशिष्ट तरंगोमें सम्पूर्ण रोगोंकी लक्षणोत्पत्ति यथाक्रमसे वर्णन की गई है. जिनकी सूचना यहां न देनेका मुख्य कारण यह है कि जिस जिस तरंगमें जोजो रोग वर्णित हैं उनका वृत्तान्त तत्तत्तरंगके प्रथम श्लोकसेही ज्ञात हो जावेगा. विशेषतः— जहां कहीं उक्त श्लोकमें आदि तथा प्रभृति शब्दकी योजना दृष्टि पडे वहां पाठकगण ऐसा विचार लेवें कि इस तरंगमें श्लोकोक्त रोगोंसेभी कुछ विशेष रोग हैं.

चित्र १.

## ॥ अथ निदानखण्डप्रारम्भः ॥

### निदानपंचक.

रोगज्ञानार्थमेवादौ यत्नः कार्यो भिषग्वरैः ।
सति तस्मिन् क्रियारंभः पुण्याय यशसे श्रियै ॥ १ ॥ सुश्रुते.
रोगमादौ परीक्षेत ततोऽनंतरमौषधं ।
ततः कर्म भिषक् पश्चात् ज्ञानपूर्वं समाचरेत् ॥२॥ भावप्रकाश.

अथ रोगज्ञानाय पंचोपायानाह ॥

निदानं पूर्वरूपाणि रूपाण्युपशयस्तथा ।
संप्राप्तिश्चेति विज्ञानं रोगाणां पंचधा स्मृतम् ॥३॥ भावप्र०.

भाषार्थ– प्रथम वैद्यको रोग जाननेकेलिये प्रयत्न करना चाहिये, क्योंकि जो रोग निश्चय होनेपर चिकित्साका प्रारम्भ करता है वही, पुण्य, यश, और सम्पत्यादिको प्राप्तकर सक्ता है. अन्यथा नहीं ! ऐसा सुश्रुतमें लिखाहै. १

तथा भावप्रकाशमेंभी लिखा है कि वैद्य प्रथम रोगकी परिक्षा करके उसी रोग योग्य औषध विचारे नंतर रोग और औषधको यथार्थ जान उपाय करे. यदि इसके नियमविरुद्ध करे तो उसके समान दुष्ट, पातकी, और हिंसक दूसरा कौन होगा. २

१ निदान, २ पूर्वरूप, ३ रूप, ४ उपशय और ५ सम्प्राप्ति ये पांच विधान रोगज्ञानकेलिये हैं. जिनसे वैद्य रोगोंको पहिचान सके. ३

उक्त पांचों विषयका स्पष्टीकरण नीचे करते हैं.

१ निदान– १ निमित्तहेतु, २ आयतन, ३ प्रत्यय, ४ उत्थाप, और ५ कारण ये निदानके पर्याय ( पल्टे आनेवाला=नाम ) हैं रोग होनेके कारणको निदान कहते हैं.

२ पूर्वरूप– जिस चिन्हसे उत्पन्न होनेवाला रोग ( पहिलेही ) जान पडजावे उसे पूर्वरूप कहते हैं. यहभी दो प्रकारका है– १ सामान्य

जोकि दोषोंके कारणसे अप्रसिद्ध (गुप्त) रहता है जैसे ज्वरमें श्रम होना. और दुसरा विशेष पूर्वरूप, जिसमें वातादि दोष स्पष्टतासे दर्शित हो जाते हैं. जैसे वातज्वरके आदिमें जम्हुहाई और अंगमर्दन होना.

३ रूप– पूर्वरूपकी प्रसिद्धि होनेपर उस (पूर्वरूप)कोही रूप कहते हैं अर्थात् जिससे रोग स्पष्टतापूर्वक जान पडे. सो रूप कहाता है. इसके "संस्थान, व्यंजन, लिंग, लक्षण, चिन्ह और आकृति" नाम भी हैं.

४ उपशय– १ हेतु विपरीतकारी, २ व्याधि विपरीतकारी, ३ हेतुव्याधि विपरीतकारी, ४ हेतुविपरीत अर्थकारी, ५ व्याधिविपरीत अर्थकारी, और ६ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी, जो औषधि अन्न और विहारकी सुखकारक योजनाको उपशय (तथा सात्म्य) और इनकी दुःखकारक योजनाको अनुपशय (तथा असात्म्य) कहते हैं.

उपशय और अनुपशय दोनोंके अठारह अठारह भेद (दोनोंके ३६) हैं. अर्थात् १ हेतुविपरीतकारी औषध, २ हेतुविपरीकारी अन्न, ३ हेतुविपरीतकारी विहार. ४ व्याधिविपरीतकारी औषध, ५ व्याधिविपरीतकारी अन्न, ६ व्याधिविपरीतकारी विहार. ७ हेतुव्याधिविपरीतकारी औषध, ८ हेतुव्याधिविपरीतकारी अन्न, ९ हेतुव्याधिविपरीतकारी विहार. १० हेतुविपरीत अर्थकारी औषध, ११ हेतुविपरीत अर्थकारी अन्न, १२ हेतुविपरीत अर्थकारी विहार. १३ व्याधिविपरीत अर्थकारी औषध, १४ व्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न, १५ व्याधिविपरीत अर्थकारी विहार. १६ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी औषध, १७ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न, १८ और हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी विहार. ये १८ भेद उपशयके और इसीप्रकार (इन्हीं नामोंके) १८ भेद अनुपशयके होकर ३६ हो जाते हैं.

अब उक्त अठारह भेदोंको उदाहरणोंकेद्वारा दृढ करते हैं.

१ हेतुविपरीकारी औषध– जिसका "शीत" हेतु (कारण) है. ऐसे कफज्वर तथा शीतज्वरमें सुंठि आदि उष्णौषध जोकि शीतको नाशकरके सुखकारी हों सो हेतुविपरीतकारी औषध कहाती हैं.

२ हेतुविपरीतकारी अन्न– श्रमजनित वातज्वरमें कुछ उष्णता लिये

हुए मधुरतायुक्त स्निग्ध (चिकना) भात आदि श्रमहर और सुखकारक जो अन्न हैं सो हेतु विपरीतकारी अन्न कहाते हैं.

३ हेतुविपरीतकारी विहार– दिनके शयनसे बढेहुए कफको शमनकारक रात्रिका जागरण आदि जो व्यवहार हैं सो हेतुविपरीतकारी विहार कहाते हैं.

४ व्याधिविपरीतकारी औषध– जैसे अतिसारमें पाठादि स्तम्भक तथा सुखकारक औषध व्याधि विपरीतकारी औषध कहाती हैं.

५ व्याधिविपरीतकारी अन्न– जैसे अतिसार रोगमें मसूर आदि स्तम्भक तथा सुखकारक अन्न व्याधिविपरीतकारी अन्न कहाते हैं.

६ व्याधिविपरीतकारी विहार– जैसे उदावर्त रोगमें बलात्कारसे (कांखकांखकर) अधोवायुको निकालना इत्यादि कार्योंको व्याधिविपरीतकारी विहार कहते हैं.

७ हेतुव्याधिविपरीतकारी औषध– जैसे बात शोथरोगमें इस रोगकी नाशक दशमूल आदि औषधकों हेतुव्याधिविपरीतकारी औषध कहते हैं.

८ हेतुव्याधिविपरीतकारी अन्न– जैसे कफ तथा ग्रहणीमें इन रोगोंके नाशक सुखकारक तक्र (मठा) तथा तद्युक्त मुंगादि लघु अन्नको हेतुव्याधिविपरीतकारी अन्न कहते हैं.

९ हेतुव्याधिविपरीतकारी विहार– जैसे घाममें विचरनेसे जो दाह दाहयुक्त पित्तज्वर उत्पन्न हुआ तो उसपर जल सिंचित उरई (खश)की टट्टी लगेहुए शीतल स्थानमें कोमल सय्यापर लेटना आदि पित्तज्वर नाशक तथा सुखदाई कार्योंको हेतुव्याधिविपरीतकारी विहार कहते हैं.

१० हेतुविपरीत अर्थकारी औषध– जैसे पित्त प्रधानसे पकेहुए शोथपर पित्तकारक उष्ण अर्कमूलादिका लेप लगा देना जो हेतुके विपरीत कार्यको करे. ऐसी क्रियाको हेतुविपरीत अर्थकारी औषध कहते हैं.

११ हेतुविपरीत अर्थकारी अन्न– जैसे पित्त शोथपर दाहकारक अन्नका उपयोग इसे हेतुविपरीत अर्थकारी अन्न कहते हैं.

१२ हेतुविपरीत अर्थकारी विहार– जैसे बातोन्मादमें त्रास देनेमयी

विहार (त्रास देना) वात नाशक तथा सुखकारक होनेसे हेतुविपरीत अ-र्थकारी विहार कहाता है.

१३ व्याधिविपरीत अर्थकारी औषध— जैसे कफमें मयनफळ आदि वांतिकारक पदार्थ जोकि व्याधिसे विपरीत कार्य करनेवाले हों सो व्याधिविपरीत अर्थकारी औषध कहाती है.

१४ व्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न— जैसे अतिसार रोगमें दुग्ध आदि रेचक अन्न (भक्षणपदार्थ) व्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न कहाते हैं.

१५ व्याधिविपरीत अर्थकारी विहार— जैसे वमन होते समय मुखमें औरभी अंगुष्ट आदि डालकर वमन करना इसे व्याधिविपरीत अर्थकारी विहार कहते हैं.

१६ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी औषध— जैसे अग्निदग्धपर उष्ण अ-गर (चंदन) आदि औषधिका लेप जो हेतु तथा व्याधि दोनोंके विपरी-त अर्थको करनेवाले हैं. हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी औषध कहावेगी.

१७ हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न— जैसे मदात्यय (मतवाली द-शा)में मद्यादि पान करना, इसे हेतुव्याधिविपरीत अर्थकारी अन्न (भ-क्षण) कहते हैं.

अर्थकारी

(कसरत करनेसे उत्पन्न हुई जो बादी) पर जलमें तैरना इत्यादि ऐसे का-र्यको हेतुव्याधि विपरीतअर्थकारी विहार कहते हैं.

ये १८ अठारहों उपचार सुखकारक होनेसे उपशय तथा येही औषध, अन्न और बिहार दुःखकारक होनेसे (१८ भेद) अनुपशय कहाते हैं. ऐ-सेही सद्वैद्यको देश, काल, और अवस्थाका विचारभी करना चाहिये.

५ सम्प्राप्ति— विगडे हुए बात, पित्त और कफ अपने स्थानको छोडके अंग प्रत्यंगोमें फैलकर जो रोगोत्पत्ति करते हैं उस (उत्पत्ति)को सम्प्राप्ति (तथा आगतीभी) कहते हैं. इस सम्प्राप्तिके "१ संख्या, २ विकल्प, ३ प्राधान्य, ४ बल, और ५ काल" ये पांच भेद हैं.

१ संख्या– जैसे ८ प्रकारका ज्वर, ६ प्रकारका अतिसार आदि यह जो प्रत्येक रोगकी संख्या लिखी है इसे संख्यासंप्राप्ति कहते हैं.

२ विकल्प– जिस रोगमें वातादि तीनों दोषमिश्रित हों, इस दोष समूहमें निश्चय किया जावे कि कौनकौनका कितना कितना अंश है, तो इस अंशांश कल्पनाको विकल्प सम्प्राप्ति कहते हैं.

३ प्राधान्य– जो रोग स्वतंत्र हो उसे प्रधान, तथा परतंत्रहो उसे अप्रधान कहते हैं, जैसे ज्वर स्वतंत्र होनेसे प्रधान तथा उसके उपद्रव परतंत्र होनेसे अप्रधान है. इस उक्तविषयके निश्चयको प्राधान्यसम्प्राप्ति कहते हैं.

४ बल– जिस रोगमें निदान, पूर्वरूप, और रूप आदि सम्पूर्ण अंग हों वह बलवान रोग, तथा जिसमें उक्त अंग न हों सो निर्बल रोग कहाता है. उक्त विषयके निश्चयको बलसम्प्राप्ति कहते हैं.

५ काल– वात, पित्त और कफके समय आदिका निश्चय करना. इसे कालसम्प्राप्ति कहे हैं.

यह सर्व विषय विशेष विस्तृतभावसे माधवनिदान तथा सुश्रुत आदि ग्रंथोंमें लिखा है. सो वैद्य प्रथम निदानादि पंचोपायोंद्वारा रोगका पूर्ण निश्चय कर लेवे.

॥ रोगाणां भेदाः ॥

रोगस्तु दोषवैषम्यं रोगसाम्यमरोगता ।
रोगा दुःखस्य दातारो ज्वरप्रभृतयो हि ते ॥ भावप्रकाश.

भाषार्थ– वात, पित्त और कफकी न्यूनाधिकताको रोग तथा इनकी समताको आरोग्य कहते हैं. ज्वरआदि रोगही दुःख देनेहारे हैं इसलिये हम प्रथम रोगोंके १४ भेदोंको दर्शाते हैं जिनकी परिभाषा आगे लिखेंगे.

१ सहजरोग, २ गर्भजरोग, ३ जातज्ञातरोग, ४ पीडाजनितरोग, ५ कालरोग, ६ प्रभावजरोग, ७ स्वभावजरोग, ८ देशजरोग, ९ आगंतुकरोग, १० कायिकरोग, ११ अंतररोग, १२ कर्मजरोग, १३ दोषजरोग, और १४ कर्मदोषजरोग.

१ सहजरोग– मातापिताके वीर्यदोषसे सन्तानको जो रोग होवे सो सहजरोग कहाता है.

२ गर्भजरोग– बालक गर्भसेही कुवडा, पंगला, छः उगलीयुक्त तथा किसी अंगहीन उत्पन्न हो सो गर्भजरोग कहाता है.

३ जातज्ञातरोग– बालकके गर्भनिवास कालमें माताके मिथ्या आहार विहारसे बालकको मूकत्ता आदि रोग हों उन्हें जातज्ञातरोग जानो.

४ पीडाजनित रोग– शस्त्रप्रहार आदिसे जो अस्थिभंगादि रोग उत्पन्न हुए सो पीडाजनित रोग कहाते हैं.

५ काळरोग– शीत, उष्ण और वर्षाऋतुमें जलवायुके विपर्ययसे जो रोग उत्पन्न हो सो कालरोग कहाता है.

६ प्रभावजरोग– इष्टदेव, गुरु, तपस्वी, और वृद्धादिके शाप तथा ग्रहों-की प्रतिकूलतासे उत्पन्न हो सो प्रभावजरोग कहाते हैं.

७ स्वभावजरोग– भूख, प्यास, और वृद्धापनादिके कारणसे जो उत्प-न्न हुए सो स्वभावजरोग कहाते हैं.

८ देशजरोग– किसी देशमें मनुष्य काळे भुरे तथा लालरंगलिये उ-त्पन्न होते हैं इसीप्रकार किसी देशमें कोई रोग विशेषतापूर्वक होता है.

९ आगंतुकरोग– क्रोध, लोभ, मोह, राग, द्वेष और भूतादि बाधासे जो रोग उत्पन्न हो सो आगंतुकरोग कहाता है.

१० कायिकरोग– ज्वर आदि विषरोगपर्यंत जो मुख्य रोग हैं सो कायिकरोग कहाते हैं.

११ अंतररोग– चित्तभ्रम (हौलदिल) आदि विकारोको अंतररोग कहते.

१२ कर्मजरोग– इस जन्मके ब्रह्महत्यादि पाप तथा पूर्वजन्मके दुष्क-र्मोंसे जो उत्पन्न हो उसे कर्मजरोग कहते हैं.

१३ दोषजरोग– वात, पित्त और कफसे जो उत्पन्न हो उसे दो॰कहते हैं.

१४ कर्मदोषजरोग– ब्रह्महत्यादि पाप तथा वात, पित्त, कफ इन दोनों कारणोंयुक्त जो रोग उत्पन्न हो उसे कर्मदोषजरोग कहते हैं.

उक्त समग्र रोगोंके दो भेद औरभी किये गये हैं, अर्थात् “ १ साध्य,

२असाध्य" अवसाध्यके पुनः दो भेद कहते हैं अर्थात् "१साध्य, २कष्टसाध्य"

१ साध्य– जो थोडेही यत्नसे शमन हो जावे.

२ कष्टसाध्य– जो बहुतिक यत्न करनेपर कठिनाईसे शमन हो.

३ असाध्यकेभी दो भेद करते हैं अर्थात् "१ याप्य, २ असाध्य."

१ याप्य– रोगपर जबतक औषध चलती रही तथा पथ्यसे वर्ताव रहा तबतक रोग दबा रहा और ज्योहीं औषध सेवन छोडकर कुपथ्य हुआ कि वही रोग पुनः उत्पन्न हो गया.

२ असाध्य– जिस रोगपर कोईभी औषध गुण न करे और अंतमें वह रोग शरीरको नष्ट कर देवे.

उक्त भेदोंके व्यतिरिक्त रोगके औरभी अनंत भेद हैं जिनको ईश्वरही जानते हैं, परन्तु सद्वैद्यको चाहिये कि अपने शास्त्र तथा बुद्धिबलसे उन सब भेदोंको इन चौदहों भेदोंके अंतर्गतही समझ लेवें.

रोगोंकी उत्पत्तिका दूसरा कारण तथा विभेद औरभी सुनो.

इस शरीरमें निम्न लिखित १४ चौदह वेग हैं. मनुष्यको उचित है कि किसी वेगको निष्कारण उत्पन्न करे और जो कोई वेग स्वयं उत्पन्न हो उसे न रोके तथा उस वेगजनित कार्यको अवश्य करे तो शरीर सर्वदा रोग-रहित रहेगा, यदि वेगोंको उत्पन्न करे या स्वयं उत्पन्न हुएको रोकके तत् तत् कार्यसे अभावित रहे तो शरीर अवश्य रोगयुक्त हो जावेगा. १ अधो-वायुवेग, २ रेचन (मल) वेग, ३ मूत्रवेग, ४ डकारवेग, ५ छीकवेग, ६ तृषावेग, ७ क्षुधावेग, ८ निद्रावेग, ९ खांसीवेग, १० श्रमजनितस्वासवेग, ११ जमुहाईवेग, १२ अश्रुवेग. १३ वमनवेग, और १४ कामवेग.

इन प्रत्येकके रोकनेसे जो जो हानि प्राप्त होती, तथा रोग उत्पन्न होते सो दर्शित करते हैं.

१ अधोवायुवेग– रोकनेसे गोला, प्लीहा, अफरा, उदर, पीडा आदि रोग उत्पन्न होकर अधोवायुका सरण उत्तम प्रकारसे नहीं होता. (अर्थात् मूलद्वारसे वायु नहीं निकलती) इसलिये अधोवायु रुकनेसे मूत्रकृच्छ्र, बं-धकुष्ठ, नेत्ररोग, और हृदयपीडा आदि रोग उत्पन्न होते हैं.

२ मलबेग—रोकनेसे हाथ, पांव, मस्तक, हृदय, आदिमें पीडा उत्पन्न होकर वायुकी ऊर्द्धगति और अधोवायुका प्रतिबंध तथा उदावर्त और पीनस रोग उत्पन्न होते हैं. और अधोवायुका प्रतिबंध लिखित हानियांभी होंगी.

३ मूत्रबेग—रोकनेसे अंगमें फूटन, मूत्रविबंध (पथरीका रोग) और मलप्रतिबंध लिखित रोगभी उत्पन्न होते हैं.

४ डकारबेग—रोकनेसे अरुचि, शरीरकंपन, हृदयरुकावट, अफरा, खासी और हिचकी आदि रोग उत्पन्न होते हैं.

५ छींकबेग—रोकनेसे सीसमें पीडा, शरीरकी सब इन्द्रियोंमें दुर्बलता, ग्रीवा स्तम्भन (गर्दन जकड जाना) मुखमें टेढापन आदि व्यथा उत्पन्न हो जाती हैं.

६ तृषाबेग— रोकनेसे मुखशोष (मुंह सूखना) समग्र अंगमें फूटन बधिरपन (बहरा होना), मोह, भ्रम और हृदयमें पीडा उत्पन्न होती हैं.

७ क्षुधाबेग—रोकनेसे सब अंग टूटना, भोजनपर अरुचि, समग्र वस्तुओंपर ग्लानि, शरीरमें कृषता (दुबलापन) बांई तर्फका शूल चलना, भ्रम बिन श्रम किये श्रम होना, सर्व इन्द्रियोंमें शिथिलता होकर शरीरका वर्ण बदल जाता है.

८ निद्राबेग—रोकनेसे मोह, मस्तक और नेत्रोंमें भारीपन, आलस्य, जमुहाई और अंगोंमें पीडा होती है.

९ खांसीबेग—रोकनेसे अन्नपर अरुचि, हृदयरोग, स्वासरोग, शोषरोग, हिचकी उत्पन्न होकर वही (खांसी) रोग विशेष बढती है.

१० श्रमजनित स्वासबेग— रोकनेसे गोला हृदरोग और मोह उत्पन्न होता है.

११ जमुहाईबेग—रोकनेसे मस्तकमें पीडा, इन्द्रियोंमें दुर्बलता और मुख तथा ग्रीवामें टेढापन हो जाता है.

१२ अश्रुबेग—रोकनेसे पीनस, गोला, अरुचि, नेत्ररोग, मस्तकपीडा, हृदयमें पीडा और ग्रीवामें पीडा उत्पन्न होती है.

१३ बमनबेग—रोकनेसे रक्तवात, रक्तपित्त, कोढ, नेत्ररोग, पामा (खु-

जली ) श्वास, खांसी, ज्वर, हृदयपीडा, सूजन, मुखपर श्याम छाया और कीलें ये रोग उत्पन्न होते हैं.

१४ कामबेग–रोकनेसे प्रमेह, शूक्रावरोध (सुजाख), लिङ्गेंद्रियमें पीडा तथा सूजन, चित्तभ्रम और भोजनपर अरुचि इत्यादि रोग उत्पन्न होते हैं.

॥ ज्वराधिकारः ॥

यतः समस्तरोगाणां ज्वरो राजेति विश्रुतः ॥
अतो ज्वराधिकारोऽत्र प्रथमं लिख्यते मया ॥ १ ॥ भा० प्र०

॥ ज्वरस्य प्रथममुत्पत्तिमाह ॥

दक्षापमानसंक्रुद्धरुद्रनिश्वाससंभवः ॥
ज्वरोष्टधा पृथग्द्वन्द्वसंघातागंतुजः स्मृतः ॥ २ ॥ सुश्रुत.

॥ मूर्तिरप्यस्योक्ता सुश्रुतेन ॥

रुद्रकोपाग्निसम्भूतः सर्वभूतप्रणाशनः ॥
त्रिपाद्भस्मप्रहरणस्त्रिशिराः सुमनोहरः ॥ ३ ॥
वैयाघ्रचर्म्मवसनः कपिलो माल्यविग्रहः ॥
पिङ्गेक्षणो ह्रस्वजङ्घो बीभत्सो बलवानलम् ॥ ४ ॥
पुरुषो लोकनाशार्थमसौ ज्वर इति स्मृतः ॥ ५ ॥ अन्यच्च ॥
ज्वरस्त्रिपादस्त्रिशिराः षड्भुजो नवलोचनः ॥
भस्मप्रहरणो रुद्रः कालान्तकयमोपमः ॥ ६ ॥

भाषार्थ–सब रोगोंका राजा ज्वर है इसलिये पहिले यहां ज्वरका अधिकार लिखते हैं ॥ १ ॥

दक्षप्रजापतिके अपमानसे क्रोधित होकर श्रीमहादेवजीने निजश्वाससे ज्वरको उत्पन्न किया सो ज्वर आठ प्रकारका है अर्थात् १ वातज्वर, २ पित्तज्वर, ३ कफज्वर, ४ बातपित्तज्वर, ५ बातकफज्वर, ६ पित्तकफज्वर, ७ सन्निपातज्वर, और ८ आगंतुकज्वर.

नीचे ज्वरके अवयव देखो—इस ज्वरके तीन ३ चरण, ३ मस्तक, ९ नौ नेत्र, ६ छः भुजा, और ३ न्हस्व (छोटी) जांघें हैं.

ज्वरश्रंगार—कुछ ललामी लियेहुए पीला वर्ण और पीलेही नेत्र हैं, व्याघ्रचर्मके वस्त्र पहिने, भस्म रमाये, गलेमें माला डाले, ऐसी भयावनी मूर्तिको धारण किये सर्व प्राणीमात्रको नष्ट करनेके लिये श्रीशङ्करजीकी कोपाग्निसे यह ज्वर उत्पन्न हुआ है.

चित्र २.

प्रथक् दोषैः प्रभूतानां ज्वराणां हि यथाक्रमात् ॥
तरंगे प्रथमे चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ ७ ॥

भाषार्थ—वातादि प्रथक् २ दोषोंसे उत्पन्न भये जो, वात, पित्त और कफज्वर तिनका निदान इस प्रथम तरंगमें यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ ७ ॥

ज्वरप्राप्ति—जब बात, पित, और कफ[1] मनुष्यके मिथ्या अहार विहारके कारण रसमें प्राप्त होकर उस (रस) को बिगाड देते और अग्निको बाहर निकालकर शरीरको तप्तकर देते हैं तब इस दशावाले मनुष्यकों ज्वर प्राप्त हुवा कहते हैं.

ज्वरमात्रके सामान्यलक्षण— शरीर उष्ण होना, पसीना निकलना, क्षुधा बंद होना, अंग जकडना, मस्तकमें पीडा होना, और हाथ पैर फूटना ये सब लक्षण संगही हो तो ज्वर प्राप्त हुआ जानो.

१ वातज्वरका पूर्वरूप—जम्हुहाई आना और हाथपावमें पीडा होना.

२ पित्तज्वरका पूर्वरूप—किसी कार्यमें चित्त न लगना और नेत्र जलना.

३ कफज्वरका पूर्वरूप— अन्नसे अरुचि और शरीर भारी होना.

उक्तलक्षण तत् तत् ज्वर आनेके पूर्वहीसे प्रकट हो आते हैं.

१ वातज्वर लक्षण—शरीर कंपने लगे. ज्वरका विषम (न्यूनाधिक=अर्थात् कभी अति, कभी सूक्ष्म) वेग होवे, नींद औ छींकका अभाव, शरीरमें रूखापन हो आवे, मस्तक और अंगमें पीडा होवे, जिव्हा छःहो

---

१ जिनका निवास नाभि और स्तनोंके मध्य अमाशय (आंबका स्थान) में रहता है.

रसका स्वाद न पहिचानसके, रेचनकी रुकावट हो, पेटमें शूल, अफरा आदि पीडा हो, और जमुहाई विशेष आवे तो वातज्वर जानो.

२ पित्तज्वर लक्षण–नेत्रोंमें दाह हो, मुख खट्टा हो जावे, प्यास अधिक लगे, मूर्छा (चक्कर=गश्त) आवे, शरीर अति उष्ण हो, ज्वरका विशेष वेग हो, रेचन द्रव (दस्त पतला) हो, वमन हो, निद्रा न आवे, मुख सूखे या पक जावे, पसीना आता हो, मल-मूत्र-और नेत्र पीले पडगये हों तो पित्तज्वर जानो.

३ कफज्वर लक्षण–अन्नपर रुचि न हो, शरीर भारी हो जावे, रोम रोम खडे हो जावें, मूत्र और नख श्वेत हो जावें, निद्रा अधिक आवे, शरीर ठंडासा हो (अर्थात् हाथपांव तो जलसे धोनेके सदृश शीतल होपर अवशिष्ट शरीर इससे किंचित उष्ण हो जावे) मुख मीठा हो, ज्वरका विशेष वेग न रहे, आलस्य अधिक आवे, श्वास खास आवे, नाक वहैं तथा कफजन्य मलसे नाक रुक जावे तो कफज्वर जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे वातादि ज्वरत्रयनिदाननिरूपणे प्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

## द्वन्द्वजज्वर.

द्वन्द्वदोषप्रभूतानां ज्वराणां च यथाक्रमात् ॥
तरंगे द्वितीये चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–वातादि दो दो दोषोंसे उत्पन्न भये जो द्वन्द्वज (वातपित्त, वातकफ, और पित्तकफ) ज्वर तिनका निदान इस दूसरे तरंगमें लिखते हैं॥१॥

४ वातपित्तज्वरलक्षण–मूर्छा (चक्कर) आवे, निद्राका अभाव, मस्तकमें पीडा, कंठ और मुख सूखके वमन हो, रोमांच हो उठे, अन्नपर रुचि न चले अन्धेरी आवे, अंगमें पीडा हो, जमुहाई आवें, और प्रलाप (कुछका कुछ वकवाद) करे तो वातपित्तज्वर जानो.

वातकफज्वर लक्षण–खांसी चले, अन्नपर अरुचि, संधियोंमें पीडा, मस्तकमें पीडा, नाकका बहाव, शरीरमें अत्यंत थकाव, कंप और भारीपन,

नींदका अभाव, पसीनाका बहाव, स्वासका चलाव, पेटमें शूल, सर्वथा हंसकी सादृश्यतापर नाडीकी गति, धूसर (धुवेंका रंग) श्वेत, चिकना, किम्वा सुरमेंका रंग जैसा मूत्र, मलभी काला या चिकना हो, नेत्र धूसर हों, मुखका स्वाद कसैला या मीठा हो, जीभ काली अथवा श्वेत और आर्द्रता (गीलापन)को लिये हो, कंठमें कफसे घुर्राटा चले, और शरीर ठंडा हो जावे तो वातकफज्वर जानना चाहिये.

६ कफपित्तज्वर लक्षण— मुख और जिव्हा कफसे युक्त हो, तंद्रा (आधे नेत्र खुले और आधे बंद), मोह, खांसी, अन्नपर अरुचि, प्यासकी अधिकाई, वारम्वार दाह और ठंड लगे, शरीर और हृदयमें पीडा, मूर्छा आवे, भूख न लगे, शरीर जकडासा जान पडे, नाडी हंस या मेंडकके सदृश गति करे, मूत्र कुछ ललामी लिये हुए श्वेत और चिकना हो, मल भी ललामीपर हो, नेत्र मेंडकके वर्ण सदृश हों, मुख मीठा (और कभी कभी कडुआभी) हो, और जिव्हा लाल या श्वेत होतो पित्तकफज्वर जानो. इन सर्वका निदान ज्वरतिमिरभास्करमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे वातादि द्वन्द्रजज्वर वर्णनं नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

॥ सन्निपातज्वर ॥

गुणदोषैः प्रभूतस्य सन्निपातज्वरस्य हि ।
तरंगे तृतीये चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ— त्रिदोष करके उत्पन्न जो सन्निपातज्वर तिसका निदान इस तृतीय तरंगमें लिखते हैं.

सन्निपातज्वर कारण— जो मनुष्य अति चिकना, मीठा, खट्टा, तीखा और रूखा भोजन करे, रुचिसे अधिक विरुद्ध वस्तु खावे, मलीन जल पीवे, क्रोधवती, रोगयुक्ता स्त्रीसे मैथुन करे, बिगडाहुआ या कच्चा मांस खावे, तथा शीतोष्ण, देश और काल (समय)के विरुद्ध व्यवहार रक्खे तो उसे सन्निपातज्वर उत्पन्न हो जावेगा.

लक्षण– जिसको क्षणमें दाह और अकस्मात क्षणमें ठंड लगे, स्वभाव बदल जावे, इन्द्रियां अपने अपने धर्मको त्याग करदें, शरीरकी हड्डी, संधि (हड्डियोंका जोड) और मस्तकमें विशेष पीडा हो, नेत्रोंसे आंसू वहै, नेत्र काले या लाल हो जावे, कानोंमें विचित्र शब्द और पीडा जान पडे, कंठमें कांटे पड जावें, तंद्रा, मोह, कास, श्वास, भ्रम, और अन्नपर अरुचि हो जावे, प्रलाप करने लगे, जिव्हा काळी, खरधरी या लहर (कठोर) हो जावे, रुधिरयुक्त कफ निकले, दिनको निद्रा आवें रात्रिको निद्रा नहीं आवें, पसीना कभी अधिक और कभी रहितही हो जावे, रोगी अकस्मात नाचना, गाना, रोना, हंसना, किम्वा मस्तकादि अवयव हिलानां ऐसे ऐसे कार्य करने लगे, प्यास वारंवार लगे, हृदयमें पीडा हो, मलमूत्र थोडाबहुत हो या पूर्णही रुक जावे, शरीर क्रश हो, कंठमें कफका घर्राटा चले, मूक होजावे, ओष्ठ तथा इन्द्रियां पक जावें, पेट भारीहो, नाडीकी गति महामंद शिथिल, सूक्ष्म और टूटीसीहो, मूत्र हलदीके सदृश पीला, रक्तके समान लाल तथा काला होजावे, और मलभी श्वेतीयुक्त श्याम तथा शूकरमांसवत् होजावे. जिसमें उपरोक्त लक्षण हों उसे सन्निपातज्वर ग्रसित जानो.

वेग तथा बल– उपरोक्त लक्षणधारी सन्निपातज्वर और काल (मृत्यु)-में कुछ भेद नहीं है. जो वैद्य इस ज्वरसे विजय पावे (इसको हटावे=दूर करे=रोगीको आरोग्य करे) उससे अधिक प्रतापी कौन होगा? (कोई नहीं) रोगी उस वैद्यकों (जिसने उसे सन्निपातरूपी अजगरके मुंहसे बचाया) जो कुछ देवे सो थोडाही है. रत्न, सुवर्णादि असंख्यात द्रव्य तो क्या बरन अपनी आत्मोभी सर्वदा वैद्यकी सेवामें अर्पण करदेवे तोभी उसके ऋणसे उऋण नहीं हो सक्ता. क्योंकि उसने कालसेही बचाया है.

चरक, सुश्रुत, और वागभट्टके मतसे तो उक्त प्रकारकाही सन्निपात है परन्तु अन्य ग्रन्थोके मतसे ऋषियोंने इसके ५२ भेद कथन किये हैं जिन-

---

१ सन्निपातस्य कालस्य कश्चिद्भेदो न वर्तते । चिकित्सको जयेत् यस्तं कोन्यस्तस्मात् प्रतापवान् ॥ १ ॥

२ त्रिदोषाजगरग्रस्तं मोचयेत् यस्तु वैद्यराट् । आत्मापि तस्मै दातव्यः किम्पुनः कनकादिकम् ॥ २ ॥ वैद्यजीवने ह्युक्तम् ॥

मेसे १३ प्रकारका तो मुख्यही है. अर्थात् १ संधिग, २ अंतक, ३ रुग्दाह, ४ चित्तभ्रम, ५ शीतांग, ६ तांद्रिक, ७ कंठकुब्ज, ८ कर्णक, ९ भग्ननेत्र, १० रक्तष्ठीवी, ११ प्रलाप, १२ जिव्हक और १३ अभिन्यास.

सन्निपातायुर्बल– अर्थात् हर प्रकारका सन्निपात अपने जुदे जुदे नियत कालपर्यंत भोगवान रहते हैं. जिनमेंसे १ संधिग ७ दिन, २ अंतक १० दिन, ३ रुग्दाह २० दिन, ४ चित्तभ्रम ११ दिन, ५ शीतांग १५ दिन, ६ तंद्रिक २५ दिन, ७ कंठकुब्ज १३ दिन, ८ कर्णक ९० दिन (३ मास), ९ भग्नेत्र ८ दिन, १० रक्तष्ठीवी १० दिन, ११ प्रलाप १४ दिन, १२ जिव्हक १६ दिन, और १३ अभिन्यास सन्निपात १५ दिवसतक रहता है सो सन्निपातमें कोईभी उपद्रव उठ आवे तो रोगीको तत्काल नष्ट होनेमें विलम्ब नहीं लगती इसलिये सद्वैद्य उपद्रव शमनपर पूर्ण ध्यान रखें.

१ संधिग सन्निपातज्वरलक्षण लिख्यते– जिस रोगीकी गांठ गांठ (संधि संधि)पर अधिक शूल चले, शरीर सूज जावे, पेट भारी हो, शिथिल अंग हो, बल नष्ट हो, वायु तथा कफका अतिकोप हो, और निद्रा न आवे तो संधिग सन्निपात जानो.

२ अंतक सन्निपातज्वरलक्षण– शरीरमें अत्यंत दाह लग जावे, देह कम्पायमान होने लगे, मस्तक इधर उधर पटके, स्वास खास और हिचकी आवे, प्रलाप करे, और वस्तुज्ञान न रहे तो अंतक सन्निपात जानो.

३ रुग्दाह सन्निपातलक्षण– जो रोगी प्रलाप करे, शरीरमें अतिदाह हो, उदरमें शूल चले, शरीर व्याकुल हो और प्यास अधिक लगे तो रुग्दाह जानो.

४ चित्तभ्रम सन्निपातलक्षण– रोगीको भ्रम हो, मंद ताप और मोह होवे, विक्षिप्त (पागल)के समान नेत्र होकर बका करे, नाचे, गावे, हंसे और श्वास अधिक आवे तो चित्तभ्रम जानो.

५ शीतांग सन्निपातलक्षण– समग्र शरीर हिम (बर्फ)के समान ठंडा होवे उस रोगीको शीतांग सन्निपात जानो.

६ तान्द्रिक सन्निपातलक्षण– रोगीको त्रंदा अधिक हो ज्वर वेगसे चढे,

प्यास अधिक लगे, जिव्हा काली पडकर खरधरी हो जावे, श्वास चले, अतिसार, दाह और कानमें पीडाहो तो तान्द्रिक सन्निपात जानो.

७ कंठकुब्ज सन्निपातलक्षण– मस्तक दूखे, दाह और पीडा अधिक हो, शरीर अत्यंत तप्त हो, कंठ रुककर सूख जावे, शरीरमात्रमें पीडा होकर बकने लगे तो कंठकुब्ज सन्निपात जानो (यह कष्टसाध्य है).

८ कर्णिक सन्निपातलक्षण– शरीरमें ज्वर हो, कानके नीचे शोथ (सूजन) हो, श्वास चले, शरीर कंपे, प्रलाप करे, पसीना निकले, कंठ सूखे, प्यास लगे, और मोह-भय हो उसे कर्णिक सन्निपात जानो. कर्णिक सन्निपातके लक्षण अमृतसागरमें नही हैं इसलिये चक्रपाणिदत्तके मतानुसार लिखे हैं.

९ भग्ननेत्र सन्निपातलक्षण– रोगीकी स्मरणशक्ति नष्ट होजावे, ज्वरका अधिक वेग हो, नेत्र टेढे तथा चंचल हो जावे, शरीर कंपे, भ्रमहो, और प्रलाप करने लगे तो भग्ननेत्र सन्निपात जानना चाहिये.

१० रक्तष्ठीवी सन्निपातलक्षण– मुखद्वारा थूकके साथ रक्त गिरे, प्यास अधिक लगे, मोह उत्पन्न हो, श्वास अधिक चले, पेटमें शूल उठे, अफरा, भ्रम और वमन हो तो रक्तष्ठीवी[1] सन्निपात समझो.

११ प्रलाप सन्निपातलक्षण– शरीर कम्पित हो, विशेष प्रलाप करे, देह विशेष उष्ण हो, दाह अधिक हो, ज्वरका वेग तीक्ष्ण हो, श्वास चले, अंगमें विकलता (बेचैनी=तलमलीहट) हो और रोगी संज्ञाहीन होजावे (अर्थात् बेसुध जो मनुष्यादिक नहीं पहिचाने) तो प्रलापसन्निपात जानो.

१२ जिव्हक सन्निपातलक्षण– श्वास चले, ताप अधिक हो, जिव्हा कठोर (लट्ठर) पडजावे, तथा जिव्हामें कांटे पडकर रोगी मूक (गूंगा) बहरा और बलहीन होजावे तो जिव्हक[2] सन्निपात जानो.

१३ अभिन्यास सन्निपातलक्षण– निद्रा न आवे, खांसी अधिक हो, शरीर कम्पायमान हो, समस्त चेष्टा बिगड जावे, गद्गद वाणी होजावे, जि-

---

१ यह महा असाध्य है. २ यह कष्टसाध्य है.

न्हा काष्ठकेसमान (कठिन) होजावे और सर्वेन्द्रियोंने स्व स्व कर्तव्यकर्म त्यागन करदिया हो तो अभिन्यास[1] सन्निपात जानो.

इति नूतना० निदानखंडे सन्निपातज्वरभेद वर्णनं नाम तृतीयस्तरंगः ॥३॥

॥ आगन्तुकज्वर ॥

आगन्तुकप्रभृतीनां ज्वराणां हि यथाक्रमात् ।
तुर्ये तरंगे वै चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस चतुर्थ तरंगके आदिमें यथाक्रमसे आगन्तुक आदि ज्वरोंका निदान लिखते हैं.

१ शस्त्रप्रहार, २ भूतबाधा, ३ काम-क्रोध-शोक-भयकी आधिक्यता, ४ विष भक्षण, और ५ शाप इन कारणोंके द्वारा जो ज्वर उत्पन्न हुआ हो सो आगंतुकज्वर कहाता है.

१ शस्त्रकी चोटसे उत्पन्न हुआ आगंतुकज्वर– शस्त्रप्रहारसे पीडा उत्पन्न होके वादीको कुपित करती है. सो वादी रुधिरको बिगाडके चोट लगे हुए स्थानपर अत्यंत पीडा, शोथ (सूजन), तथा शरीरके वर्णको विपर्यय (बदलना) कर देती है उक्त लक्षण धारणकर ज्वर उत्पन्न हो सो शस्त्रकी चोटसे उत्पन्न हुआ जानो.

२ भूतादि बाधासे उत्पन्न हुआ आगंतुक– शरीरमें उद्वेग (त्रास, दुःख, गडबड, हडफूटन) होवे, कभीहंसे, कभी रोवे, कभी कम्पायमान हो, प्रलाप करे और चित्त स्थिर न रहे तो उक्त ज्वर जानो.

३ काम, क्रोध, शोक, भयकी आधिक्यतासे उत्पन्न हुआ इसके ५ भेद हैं.

क कामज्वर (पुरुषको)-होतो भोजनमें अरुचि होवे, मनमें दाह होवे, निद्रा-लज्जा-बुद्धि-धैर्यता आदिसे च्युत होजावे (ये बातें न रहें), हृदयमें पीडा उठे, केवल सम्भोगमेंही ध्यान लगा रहे, और श्वासोच्छास (सांस-भरना) करे तो उस पुरुषको कामज्वर जानना चाहिये.

ख कामज्वर–(स्त्रीको) हो तो मूर्छा आवे, समग्र अंगमें मरोडे उठें,

[1] यह अभिन्यास सन्निपात महा असाध्य मृत्युरूपक है इससे संरक्षण पाना दैवकृपा तथा सद्वैद्यके हाथ है.

प्यास लगे, नेत्र चपल हो जावें, मनमें स्तन मर्दन करानेकी इच्छा विशेष हो, पसीना निकले, हृदयमें दाह हो, भोजनसे अरुचि होजावे, लज्जा, निद्रा, और धैर्यका नाश होजावे उस स्त्रीकों कामज्वर जानो.

ग क्रोधज्वर—शरीरमें कम्प आवे, शिरमें पीडा हो, तथा पित्तज्वर (ऊपर लिख चुके है) के सदृश सर्व लक्षण हों तो क्रोधज्वर जानो.

घ शोकज्वर—(जिसे "मानसीज्वर" संज्ञाभी दी है), पुत्र, मित्र, स्त्री आदिके बिछोह (नाश)से, धन हरणसे और राजादि वरिष्ट पुरुषोंके तिरस्कारसे मानसीज्वर उत्पन्न होता है. रोगीको शोक अधिक हो, अतिसार हो और सर्व वस्तुओंसे ग्लानि होजावे तो मानसीज्वर जानो.

ङ भयज्वर—प्रलाप करे, अतिसार हो, चित्त स्थिर न रहे, और भोजनसे अरुचि होजावे तो भयज्वर जानो.

४ विष आदि भक्षणसे ज्वर—स्थावर[1] तथा जंगम[2] विष भक्षणसे जो ज्वर उत्पन्न होता है उस रोगीके मुखपर श्यामता छा जाती, अतिसार होता, भोजनपर अरुचि होती और प्यास अधिक लगती, मूर्छा आती सर्व शरीरमें सुई छेदन सदृश पीडा होती है. उक्त लक्षण अमृतसागरमें नहीं लिखे हैं अतएव हमने माधवनिदानसे लिखे हैं.

५ शापजज्वर—गुरु, माता, पितादिके तिरस्कार करनेके फलमें उनका शाप लगनेसे जो ज्वर हो सो शापजज्वर कहाता है. इस ज्वरमें हडफूटन होकर शरीर विकल होता है और शेषलक्षण सब ज्वरके सदृशही होते हैं.

इति आगंतुकज्वर ॥

विषमज्वरोत्पत्ति—मनुष्यको ज्वर आके छूट गया हो, पश्चात किसी प्रकारके कुपथ्यसे वातादि अल्प दोष कोपित होके (रसधातुके व्यतिरिक्त रुधिरादि षड्धातुओंमेंसे) किसी धातुमें प्राप्त होके विषमज्वरको उत्पन्न करतेहैं.

विषमज्वरलक्षण—शरीरको शीत या उष्ण करके चाहे जब ज्वरका बेग हो आवे और यह बेग कभी न्यून और कभी अधिक होता रहे तो इसे विषमज्वर जानो.

---

१ संखिया-बत्सनाग-हरताल आदि भक्षणसे.

२ सर्प-विच्छू आदि बिषवाले जीवोंके काटनेसे.

विषमज्वरके ५ भेद हैं—अर्थात् १ संतत, २ सतत, ३ अन्येद्यु, ४ तृतीयक, और ५ चतुर्थक.

१ संतत विषमज्वर—जो ज्वर ७ या १० अथवा १२ दिन पर्यंत निरंतर एकसा बना रहे फिर अपनी अवधि पूर्ण होनेपर शांत हो सो संततज्वर कहाता है. संतत=निरंतर=सदैव=सदा=नित्य=प्रतिकाल.

२ सततज्वर जो ज्वर रात्रिदिन (८ प्रहर=२४ घंटे)में दोवार चढे सो सततज्वर कहाता है.

३ अन्येद्यु—जो ज्वर एक दिनके अंतरसे आवे सो अन्येद्यु कहाता है, इसे इकतरा (=एकंतरा)भी कहते हैं जो एक दिन चढता और एक दिन शांत रहता है.

४ तृतीयक—जो ज्वर तीसरे दिन चढे सो तृतीयक कहाता है. इसे तिजारीभी कहते हैं जो एक दिन चढती और दो दिन शांत रहती है.

५ चतुर्थक—जो ज्वर चौथे दिन चढे सो चतुर्थक कहाता है. इसे चौथाराभी कहते हैं जो एक दिन चढता और तीन दिन शांत रहता है.

जीर्णज्वर—ज्वर अपना आरम्भ तिथिसे ७ दिनतक तरुण, १४ दिनपर्यंत मध्य, २१ दिनपर्यंत प्राचीन, और २१ दिनके पश्चात वही जीर्णज्वर कहाने लगता है. रोगीके शरीरमें ज्वर २१ दिन रहकर देह दुर्बल तथा रूखी हो जावे, क्षुधा न लगे और पेट सदा भारीपनही बना रहे तो उसे जीर्णज्वर जानो.

अजीर्णज्वर—वारम्वार द्रवरेचन (पतला दस्त) हो, खट्टी डकारे आवे, बमनकी इच्छा हो (जीमचलाना) और उदरमें पीडा रहे तो उसे अजीर्णज्वर जानना चाहिये.

दृष्टिज्वर— जम्हुहाई अधिक आवे, उदरमें पीडा होवे, हाथपांवमें फूटन (फूटाकरे) होवे, और शरीर निश्शक्ति हो जावे तो दृष्टिज्वर जानो.

रुधिरप्रकोपज्वर—अंगमें फूटन होवे, मुखसे श्वास चले, शरीरमें शिथिलता, तृषा और मूर्छा हो, और पेट फूले तो रुधिरप्रकोपज्वर जानो.

मलज्वर–जिसमें मुखशोष, दाह, भ्रम, मूर्छा, वमन, हिचकी, उदरशूल और सीसपीडा हो उसे मलज्वर कहते हैं.

कालज्वर–ज्वरका वेग अधिक हो, ऊर्द्ध (ऊपरको) श्वास चले, शरीरकी कांति नष्ट हो जावे, पसीना अधिक निकले, शरीर शिथिल हो जावे, नाडी अपना योग्य स्थान छोड देवे (नाडी न मिले) और समस्त इन्द्रियां अपना कर्तव्य छोड देवें तो काल (मृत्यु) ज्वर जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे आगंतुकादिज्वरलक्षण निरूपणं नाम चतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

॥ ज्वरोपद्रव ॥

ज्वरस्योपद्रवाणां च श्वासादीनां यथाक्रमात् ।
तरंगे पञ्चमे चात्र वर्णनं क्रियते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–इस पांचवें तरंगमें ज्वरके श्वास आदि उपद्रवोंका वर्णन कहते हैं १

श्वासो मूर्छाऽरुचिश्छर्दिस्तृष्णातीसारविट्ग्रहाः ।
हिक्काकासांगदाहश्च ज्वरस्योपद्रवा दश ॥ २ ॥ भा०प्र०१भाग.

भाषा–ज्वरके १० उपद्रव[१], १ श्वास २ मूर्छा ३ अरुचि ४ बमन (उलटी) ५ तृषा ६ अतिसार ७ विट्बंध (मलकी रुकावट) ८ हिचकी ९ कास और १० अङ्गमें दाह ये ज्वरके दश उपद्रव हैं दूसरा ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है.

ज्वरकुटुम्ब–१ प्यास ज्वरकी स्त्री २ श्वास कास दोनों पुत्र ३ हिचकी बमन दोनों कन्या ४ अतिसार भ्राता ५ अरुचि बहिन (भगनी) ६ विट्बंध (मल रुकना) भानजा ७ अफरा (पेटफूलन) श्वसुर और ८ मूर्छा दासी है. सो इस कुटुंबमें जो बलाढ्य हो उसका यत्न वैद्य प्रथम करे क्यों कि कुटुंबी होनेसे ये सब ज्वरके अत्युपकारी और रोगीके महा अपकारी (हानि करनेवाले)ही हैं.

ज्वरमुक्तस्य लक्षणमाह.

देहोलघुर्व्यपगतक्लमभोहतापः पाको मुखे करणसौष्ठवमव्य-

---

१ ज्वरके रहतेही श्वास आदि अन्यविकार उत्पन्न होके निज प्रबलतासे उस ज्वरका यत्न होनेमें बाधक होवें ( यत्न होनेही न देवें ) सो ज्वरोपद्रव कहाते हैं.

थत्वम् ॥ स्वेदक्षयः प्रकृतियोगिमनोन्नलिप्साकण्डूश्च मूर्ध्नि विगतज्वरलक्षणानि ॥ १ ॥ भा० प्र० १ भाग.

सुश्रुतोप्याह–स्वेदो लघुत्वं शिरसः कण्डूपाको मुखस्य च ।
क्षवथुश्चान्नकांक्षा च ज्वरमुक्तस्य लक्षणम् ॥ २ ॥

भाषा–अब ज्वर छूट गयेके लक्षण दर्शाते हैं १ रोगीका शरीर हलका पड जावे २ मस्तकमें खुजाल चले ३ ओष्ठोंपर पपडी जमजावे अर्थात् मुख पकजावे ४ इन्द्रियां अपने अपने विषयको स्वीकार कर लेवे, ५ समस्त शरीरमें पसीना निकलने लगे ६ क्षुधा (भूख) बढजावे ७ छींके आने लगे ८ शुद्ध रेचन (दस्त साफ) होने लगे और ९ शरीरकी सर्व व्यथा दूर होजावे तब वैद्य निश्चय विचार लेवे कि इस रोगीका ज्वर छूट गया.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे ज्वरोपद्रवनिरूपणे पञ्चमस्तरंगः ॥ ५ ॥

॥ अथातिसारः ॥

षड्विधस्यातिसारस्य वातादेर्हि यथाक्रमात् ॥
षष्ठे तरंगे वैचात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–इस छटवें तरंगमें वातादि छः प्रकारके अतिसारका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

मैदा–(गेहूंका आटा कपडेसें छानाहुआ) आदिके भारी पक्वान्न, अति चिकने पदार्थ, रूखे पदार्थ, अति उष्ण पदार्थ, तथा विष, ऐसे ऐसे पदार्थ भक्षणसे भोजन करके (बिन पाचन हुए) ही पुनः भोजन करनेसे और मलके वेगको रोकनेसे अतिसार उत्पन्न होता है.

अतिसारसम्प्राप्ति–उक्त कुपथ्य करनेसे मनुष्यके शरीरमें मल वृद्धिको प्राप्त होके उदराग्निको शांत करता तब शरीरस्थित रसादिरूप जल विष्ठासे मिलके पतला मळरूप होता और अधोवायुके वेगसे वारंवार गुदामार्गद्वारा निकलने लगता है इस बाधाको अतिसार कहते हैं.

अतिसार भेद–छः प्रकारका है अर्थात् १ वायुजन्य, २ पित्तजन्य, ३ कफजन्य, ४ सन्निपातजन्य, ५ शोकजन्य, और ६ आमजन्य.

अतिसार पूर्वरूप— पहिलेहिसे हृदय-नाभि-गुदा-उदर-और पेडूमें पीडा-हो, अंगमें फूट न होने लगे, गुदाकी अपानवायु रुक जावे, बंधकुष्ट (दस्त न लगना) तथा अफरा होजावे, और अन्न पाचन न होवे तो जानोकी इस मनुष्यको अतिसार विकार उत्पन्न होवैगा.

वातातिसार— मल कुछ ललामीको लिये हो, मलमें फेन (फस्क) मिला हो मल रूखा हो, बार बार थोडा थोडा उतरे, मल कुछ आमयुक्त हो और उतरते समय पेडू. (पोथे और उदरके मध्यका स्थान) में पीडा हो तो वातातिसार जानो.

२ पित्तातिसार— मल पीला लाल-नीला-पतला तथा दुर्गंधयुक्त हो, गुदा पक जावे, शरीरमें पसीना निकले, प्यास लगे दाह और मूर्छा होतो पित्तातिसार जानना चाहिये. यदि अधिक उष्ण वस्तु खानेमें आवे तो पित्त वढकर रुधिरको विगाड देता है तब रुधिरयुक्त मल गिरनेसे रक्तातिसार कहाता है यह पित्तातिसारसे पृथक नहीं वरन उसीका भेदही है.

३ कफातिसार— जिसमें मल चिकना-श्वेत-गाढा-शीतल-दुर्गन्धित और किंचित दुःखपूर्वक गुदाद्वारसे निकले, और भारी शरीर हो जावे तो कफातिसार जानो.

४ सन्निपातातिसार[1]— रोगका मल शूकरके मासवत होवे, नेत्रोंमे तंद्रा होवे, मुख सूखे, प्यास अधिक लगे, भ्रम तथा मोह हो और उपरोक्त लिखित वात-पित्त-कफातिसारके लक्षण हों तो सन्निपातातिसार जानो.

५ शोकातिसार[2]— जिस पुरुषके पुत्र-मित्र-स्त्री तथा धनादि नाश होजावे उसका शोचबश अल्प आहार हो जाता है तब शरीरका समस्त तेज अग्न्याशयमें प्राप्त होकर रुधिरको बिगाड देता है और बिगडा हुआ रुधिर विष्टायुक्त (अथवा केवलभी) होकर गुंजा (चिरम्-चिरमिटि) सदृश बडे कष्टपूर्वक गुदाद्वारा बाहर निकलता है उक्त लक्षण शोकातिसारके हैं.

---

१ यह अतिसार असाध्य है. जो तरुणावस्थावाले पुरुषको होवे तो चाहे दैवेच्छासे बचभी जावे, परन्तु निर्बल वृद्ध तथा बालकको हो तो बचना दुर्लभहीं है.

२ इसीका एक भेद भयातिसारभी है, जो भयातुर दशामें उत्पन्न होता है.

६ आमातिसार– पुरुषको प्रथमके भोजनका अजीर्ण हो और उसीपर कोई गरिष्ट वस्तु औरभी खानेमें आवे तब उसके वात-पित्त-कफ कोठेमें प्राप्त होके धातुसमूह तथा मलको बिगाड देते हैं तब आमातिसार उत्पन्न होता है. रोगीके पेटमें मरोडे उठें, शूल चले, दुर्गन्धित तथा अनेक वर्ण-युक्त मल हो, मलके साथ आमका संयोग भी हो तो आमातिसार जानो. परिक्षा यह है कि आम श्वेत और चिकनी होती है जो आमातिसार वाले रोगीके मलको जलमें डालो तो आम नीचे जम जावेगी और मल मल जलपर तैरता रहेगा.

७ मुर्रा (अतिसार)– यहभी अतिसारका सप्तम भेद है. कुपथ्यी पुरुषकों बादी बढकर कफयुक्त होती और मुर्रा उत्पन्न करती है. मुर्रा होनेसे पेटमें पीडा होकर गुदाद्वारसे अति कष्टपूर्वक मल निकलता है. इसके चार भेद हैं अर्थात्– १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, और ४ रक्तज.

१ वातज– जिसमें अति पीडापूर्वक मल उतरे सो वातसे है.

२ पित्तज– जिसमें अति दाह (जलन) पूर्वक मल उतरे सो पित्तसे है.

३ कफज– जिसमें कफयुक्त मल हो सो कफसे है. और ४ रक्तज– जिसमें रक्तयुक्त मल हो सो रक्तसे जानो.

अतिसारके असाध्यलक्षण–शूकरके मांसवत मल हो, प्यास, दाह, अरुचि, श्वास, हिचकी, पार्श्वशूल और मूर्छा प्राप्त हो जावे, किसी कार्यमें मन नही लगे, गुदा पक जावे, अग्नि नाश होजावे, ज्वर बना रहे, मूत्र बंद हो जावे, और शरीरका बल नष्ट हो जावे तो यह रोगी बचना दैवबश ही जानो उसके संरक्षणकी आशा नहीं है.

अतिसारमुक्तलक्षण–जिस रोगीको मल बिन मूत्रही उत्तम प्रकारसे होने लगे, अपानवायु न रुके बरन गुदाद्वारा उत्तम प्रकारसे संसर्ग हो, क्षुधा लगे और कोठा हलका पड जावे तो अतिसार नष्ट हुआ जानो, अब अतिसार न रहा.

इत्यतिसार.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे अतिसार उत्पत्तिलक्षणनिरूपणं नाम षष्ठमस्तरंगः ॥ ६ ॥

॥ संग्रहणी ॥

**पृथक् दोषैस्समस्तैश्च चतुर्धा ग्रहणीगदः ।**
**तरंगे सप्तमे चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थ—वात, पित्त, कफ तथा सन्निपातसे यह चार प्रकारका संग्रहणी रोग होता है सो इस सातवें तरंगमें उक्त रोगका निदान लिखते हैं.

संग्रहणीरोगोत्पत्ति—अतिसार निवृत्त होनेपर (अथा मध्यमेंभी) जो मन्दाग्निवाला पुरुष अहित पदार्थोंका सेवन करे तो उसके कुपथ्यरूप आहारसे अग्नि पुनः दूषित होके "ग्रहणी" नामकी कलाको बिगाड देती है तब वह बिगडी हुई ग्रहणी कला कच्चे अन्नको ग्रहण और पक्के अन्नको गुदाद्वारा त्याज्यकर देती है तब संग्रहणी उत्पन्न होती है. और इसीलिये इसका नामभी संग्रहणी है.

संग्रहणीलक्षणोत्पत्ति—संग्रहणी चार प्रकारकी होती है अर्थात् १ वातज, २ कफज, ३ पितज, और ४ सन्निपातज. सो इन कारणोंसे दूषित होके वह ग्रहणीकला खायेहुए बहुतेरे आहारको कच्चा (बिन पाचन हुआही) तथा पचेहुएको पीडा और दुर्गंधियुक्त (कभी पतला और कभी गाढा) बाहर निकाल देती है इसे संग्रहणी कहते हैं. उक्त लक्षण हो तो संग्रहणीरोग उत्पन्न हुआ जान लो.

१ वातजसंग्रहणी कारण—जो मनुष्य वातज पदार्थोंका विशेष भक्षण करे, मिथ्या आहारविहार करे, और अति मैथुन करे तो वादी कुपित होके जठराग्निको बिगाड देती है तब वातजसंग्रहणी उत्पन्न होती है.

१ वातजसंग्रहणीलक्षण— भक्षण किया हुआ आहार क्लेशसे पाचन होवे, कंठ सूखे, भूक न लगे, प्यास अधिक लगे, कानोंमे (भनभन) शब्द हो, पार्श्व, जांघ और पेडु (नाभिका तलस्थल)में पीडा हो, कभीकभी शरीर भरमें सुईसीचुभें, हृदयमें पीडा उठे, शरीर कृश हो जावे, जिव्हामें स्वाद न रहे, मीठे आदि नाना भांतिके पदार्थोंकी भक्षणेच्छा होवे, मो-

१ जो कि आमाशय और पक्काशयके मध्य अन्नादिको ग्रहण (पकडने, धारण) करनेवाली ६ वी कला है.

जन किये हुए अहारके पाचनानंतर पेट फूले अथवा भोजन करनेसेही जीवको सुख हो अन्यथा नहीं भोजन पश्चात् पेटमें गोला या प्लीहा (फिया-ताप तिल्ली)की शंका रहे, वारंवार मरोडेयुक्त क्लेशपूर्वक अपशब्द करता हुआ झाग सहित रेचन होवे और श्वास खास भी हो तो उस रोगीको वातसंग्रहणी जानो.

२ पित्तजसंग्रहणीकारण— जो पुरुष उष्ण वस्तुका अधिक सेवन करे, मिरच आदि तीक्ष्ण (चिरपरा) खट्टे और खारे पदार्थ विशेष खावे तो उसका पित्त दूषित होकर जठराग्निको बुझा देता है सो उसका कच्चाही मल निकलने लगता है तब पित्तज संग्रहणी होती है.

लक्षण— कच्चा मल नीले पीले वर्णयुक्त पानीसहित गुदा द्वारसे निकले, खट्टी डकारें आवें, हृदय और कंठमें दाह हो, प्यास लगे और अरुचि हो जावे तो पित्तजसंग्रहणी जानो.

३ कफजसंग्रहणीकारण— जो पुरुष भारी, चिकनी, शीतल वस्तु खावे, तथा भोजन करके सोजावे (निद्रा लेवे) उस पुरुषका कफ कुपित होके जठराग्निको नष्ट कर देता है.

लक्षण— अन्न क्लेशसे पचे, हृदयमें पीडा, वमन और अरुचि हो, मुख मीठा रहे, खांसी-पीनस-गरिष्टता (पेटमे भारीपन) और मीठी डकारें आवें, स्त्रीभी प्रिय न लगे, आमयुक्त मल उतरे, बलरहित ही शरीर पुष्ट दृष्टि पडे, और आलस्य अधिक आवे तो कफसंग्रहणी रोग जानो.

४ सन्निपातसंग्रहणीलक्षण— जिसमें बात, पित्त, और कफ तीनों संग्रहणीके लक्षण मिले सो सन्निपातसंग्रहणी जानो. इसी सन्निपातसंग्रहणीका एक भेद "आमवातसंग्रहणी" भी है.

आमवातसंग्रहणीलक्षण— पतला, श्वेत, चिकना, आमयुक्त और अधिक मल होवे, रेचन होतेसमय विशेष पीडा होवे, कटिमें पीडा होतीही रहे, कुछ दिनपर्यन्त अच्छा रहे परन्तु १० पन्द्रह दिन तथा मास नंतर वैसाही होने लगे, अथवा अनुदिन ही होता रहे, आंतें शब्द करती रहें, आ-

लस्य आता रहे, शरीर दुर्बल हो जावे, पेटमें पीडा होती रहे, दिनको तो ये रोग कुपित पर रात्रिकों शांत रहै, तो आमबातसंग्रहणी जानो.

संग्रहणीका एक भेद "घटीयंत्र" भी है.

घटीयंत्रलक्षण– शरीर सूना रहे, दोनों पार्श्वमें शूल चले, पेटमें शब्द हो, और शेष लक्षण संग्रहणीकेही हो तो उसे घटीयंत्रे जानो.

विशेषतः– संग्रहणीके साध्यासाध्य लक्षण अतिसारके साध्यासाध्य लक्षण (जो पूर्व लिख चुके हैं)केही समान जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे संग्रहणीउत्पत्तिलक्षणनिरूपणं नाम सप्तमस्तरंगः ॥ ७ ॥

॥ अर्श ॥

**अर्शांसि षट् प्रकाराणि सम्भवन्ति यथा नृणाम् ।**
**तरंगे चाष्टमे तेषां निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थ– मनुष्योंको छः प्रकारके अर्श (बबासीर) होते हैं जिनका (हम इस आठवे तरंगमें) निदान लिखते हैं.

अथार्शरोगोत्पत्तिः– मनुष्योंके मूलद्वार (गुदामें)में शंखकी नाभिके सदृश चार अंगुलप्रमाणकी त्रिवली (तीन चक्र) हैं अर्थात्–

१ ऊपरके भागमें– "प्रवाहनी" नामक वली है जोकि मल, पवनादिको बाहर निकालती है.

२ मध्यभागमें–सर्जनी नामक वली है जो मल, पवनादिको छोडती है.

३ अंतभागमें एक वली है जो मल, पवनादिके छूटनेपर गुदाको पूर्ववत ढक देती है. इन्हीं त्रिवलियोंमें अर्श रोग होता है यदि अंतभागकी बलीमें अर्शके मसे हों तो साध्य, तथा मध्य भागस्थ बलीमें हों तो कष्टसाध्य और जो उपरकी बलीमें हो तो असाध्य होता है.

---

१ यह असाध्य है. २ यहभी असाध्य है.

अर्शरोग छः प्रकारका है अर्थात् १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज, ५ रक्तज और, ६ सहेज.

अर्शोत्पत्तिकारण— वात-पित्त और कफोत्पादक, उष्ण, चिकनी, और मीठी वस्तुओंके विशेष भक्षणसे तथा त्रिदोषकारी मिथ्या अहार विहारादिके करनेसे उक्त दोष कुपित होकर त्वचा, मांस, और मेदको बिगाड देते हैं, तब गुदाकी त्रिवलियोंमें मांसके अंकुर (मस्से) उत्पन्न होते हैं. इसीको अर्श-मूलव्याधि (तथा बवासीरभी) कहते हैं.

अर्शका पूर्वरूप— जिस पुरुषको पूर्ण रूपसे अन्नका परिपाक न हो, अन्न कूखमें रहे, बंध कुष्ट हो, मंदाग्नि पड जावे, डकारें अधिक आवे, शरीर कृश होवे, उदर फूल जावे, और अंगमें पीडा (हड फूटन) हो तो जानो कि इसे बबासीर किंचितकाल पश्चात् अवश्यही होगी.

१ वातार्शलक्षण— जिसकी गुदामें "सूखे, सुई चुभनेके समान पीडायुक्त काले या नीले रंगवाले, खरदरे या कठोर, तीक्ष्ण (पैने) या फटे हुए मुखवाले छोटे बेर, कपासपुष्प, सरसोंपुष्प या कदंभ पुष्पाकृति" मसे होवें. सिर, पार्श्वभाग, कंधे, कटि, हृदय, जंघा और पेडूमें पीडा विशेष हो, छींक, डकार, और क्षुधाका अभाव होजावे, खास, स्वास, मंदाग्नि, शब्दभ्रम, गोला, प्लीहा और उदररोग हो तो उस पुरुषको वातार्श (वादीकी बबासीर) जानो.

२ पित्तार्शलक्षण—गुदामें मोटे काले, नीले, लाल, पीले तथा श्वेत रंगके मसे हों, मसोंमेंसे उष्ण, महीन रुधिरकी धारा गिरे, नंतर वेगसे कोमल होजावें, जोंकके सदृश मुख हो, शरीरमें दाह, ज्वर, और पसीनाका वेग हो, मूर्छा, तृषा, और अरुचि (किसी कार्यमें प्रीति न होना) विशेष हो, मल

---

१ लोग इसे साधारण प्रकारसे दो भागोमें विभागित करते हैं अर्थात् १ खूनी-जिसमें रुधिर गिरे. और २ बादी-जिसमें रुधिर न गिरे-पर पीडा होवे-खुजाल चले, और तडक उठे सो बादी जानो. ये दोनों उन्हीं छःहों भेदहीमें हैं कुछ प्रथक नहीं है.

२ जो आहार विहारादिके विपर्ययसे नहीं पर माताके उदरसेही उत्पन्न हो आती है (सहज=सह+ज)=(सह=संग+ज=उत्पन्न हुआ)=(संग+उत्पन्न हुआ)=शरीरके साथही उत्पन्न हुआ अर्शरोग.

पतला, नीला, या लाल हो, और त्वचा, नेत्र, पीले पड जावें तो उस पुरुषको पित्तार्श जानो.

३ कफार्शलक्षण— गुदामें गाढे, मन्दमन्द पीडायुक्त, उंचे भारी कफसे लिपटे हुए, खुजाल युक्त, पेडूमे ( नाभिके नीचे ) अफरा होवे, खास, स्वास, हृदय पीडा, अरुचि, पीनस, प्रमेह, मूत्रकृच्छ, शिरपीडा, शीतलांग, मंदाग्नि, बमन, और आमवात ये रोग हो, कफसे युक्त मल गिरे, शरीर पीला पड जावे और मसोंसे रुधिर न गिरे तो कफार्श जानो.

४ सन्निपातार्शलक्षण— जिसमें बात, पित्त और कफार्श तीनोंके लक्षण हों उसे सन्निपातार्श कहते हैं.

५ रक्तार्शलक्षण— गुदामें चिरमिठीके वर्ण सदृश मसे होवें, उन मसोंमेंसे अति उष्णता लिये हुए रुधिरकी दीर्घ धारा बहे, मल गाढा और कष्टपूर्वक उतरे, रुधिर अधिक गिरनेसे शरीरका वर्ण मेंडक सदृश होजावे, बल, वर्ण, उत्साह और पराक्रम नष्ट होजावे, शरीर रूखा और कृश पड जावे और अधोवायु उत्तम प्रकारसे न हो तो रक्तार्श जानो.

यदि मसोंसे रुधिर पतला तथा फेनके सदृश गिरे कटि गुदा जांघोमें पीडा होवे, और शरीर दुर्बल होजावे तो बातरक्तार्श जानो.

और श्वेत, चिकना, भारी, ठंडा मल हो, मसोंसे गाढी तथा उष्ण रुधिर धार गिरे और गुदामें सदा कफसालगा जान पडे तो कफरक्तार्श जानो.

६ सहजार्शलक्षर्ण— माताके रजदोष और पिताके वीर्यदोषसे सहजार्श होता है जिसके लक्षण बातादि दोषोंके मिलापसें निश्चय करना चाहिये परन्तु विशेष लक्षण ये होते हैं— सहजार्शके मसे अति कठोर, पांडुवर्ण युक्त, अंतरमुख (मुख भीतरकी ओर) कभी प्रत्यक्ष, कभी अंतर्गत (कभी तो देखनेमें आते और कभी नहीं दिखते) रहते हैं, शरीरकी नसें न्यारी न्यारी दिखती हैं, शरीर कृश, वीर्य क्षीण, अल्पाहार, क्रोधी, अल्प संतान,

१ विशेषतः यह है कि उक्त छः भेदोंमेसे पित्त और रक्तार्शको खूनी और इन दोनोंसे अन्य सब बादीमें गणना किया जाता है.

मन्दाग्नि, अरुचि, मस्तक, नेत्र, कान, नाक, रोगयुक्त और मन्द स्वर (मलीन शब्द) हो तो उस पुरुषको सहजार्श जानना चाहिये.

असाध्यार्शलक्षण– जिस रोगीको बबासीरके साथही शोथ, अतिसार, वमन, हडफूटन, तृषा, ज्वर, अरुचि, मंदाग्नि और हृदयशूल होकर गुदा पक जावे तो उसे महासाध्य (विशेष प्राणान्तक) जानो उक्त लक्षण धारणीय असाध्यार्शमें रोगी निश्चय मृत्युग्रस्त हो जावेगा.

चर्मकील रोग– यहभी अर्शरूप कहा है अर्थात् गुदाके व्यतिरिक्त किसीभी शरीरके अवयव मसे हों उसे चर्मकील रोग कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे अर्शरोगोत्पत्तिलक्षणनिरूपणं नामाष्टमस्तरंगः ॥ ८ ॥

॥ मन्दाग्निभस्मकाजीर्ण ॥

मन्दाग्निभस्मकाजीर्णप्रभृतीनां रुजाक्रमात् ।
तरंगे नवमे चात्र निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस नवमे तरंगमें मन्दाग्नि, भस्मक और अजीर्णादि रोगोंको यथाक्रमसे लिखते हैं.

मन्दाग्निरोगोत्पत्ति– मनुष्योंके चार प्रकारकी जठराग्नि होती है. अर्थात् १ मन्दाग्नि, २ तीक्ष्णाग्नि, ३ विषमाग्नि, और ४ समाग्नि.

१ मन्दाग्नि– कफकी प्रकृतिवालेको कफाधिक्यतासे मन्दाग्नि होती है.

२ तीक्ष्णाग्नि–पित्तकी प्रकृतिवाले पुरुषको पित्ताधिक्यतासे तीक्ष्णाग्नि हो॰

३ विषमाग्नि– वातल प्रकृतिवालेको वाताधिक्यतासे विषमाग्नि होती है.

४ समाग्नि– जिस पुरुषकी प्रकृतिमें वात, पित्त और कफ इन तीनों दोषोंकी तुल्यता (सामान्य दशा) रहती है. उसे समाग्नि रहती है.

१ मन्दाग्निलक्षण– योग्य अहार (थोडाभी) उत्तमतापूर्वक न पचे, मस्तक और उदरमें बोझ (वजन) रहे और शरीरमें हडफूटन हो तो मन्दाग्नि है.

---

१ इसीप्रकार अर्शरोग नासिकामें भी होता है.

२ मंदाग्निवालेको बहुधा रोगदशा रहती है.

२ तीक्ष्णाग्निलक्षण— जिसको अधिकसे अधिक भोजन करनेपर भी पाचन होजावे उसे तीक्ष्णाग्नि[1] जानो.

३ विषमाग्निलक्षण— कभी तो भोजन पाचन होजावे, तथा कभी न पचे, पेट फूले, शूल चले, पेट भारी रहे, पेटमें शब्द होतारहे और अतिसार हो तो विषमाग्नि[2] जानना चाहिये.

४ समाग्निलक्षण— प्रमाणित भोजन उत्तम प्रकारसे पाचन हो जावे, तथा विशेष भी पच सके, अजीर्ण दशामें भी पच सके, भारी पदार्थ भक्षणसे अजीर्ण न हो, क्षुधा लगती रहे, यदि किसी कार्यवशात् क्षुधाका वेग रुके तोभी रोग नहो तो उसे समाग्नि[3] जानो, पूर्वोक्त तीनों अग्नियोंसे यह उत्तम है.

भस्मकरोगोत्पत्ति कारण— तीक्ष्णादि वस्तुके विशेष भक्षण, और रूखे अन्नके सेवनसे कफ न्यून होकर वादी और पित्तको वृद्धिंगत करता है तब वह पित्त ( तथा वात ) पवनकी प्रेरणासे अग्नि बढाकर भस्मकरोग उत्पन्न कर देता है.

भस्मकरोग लक्षण— जो खाया जावे सो भस्म हो जावे, दाह मूर्छा उत्पन्न हो, और खाया हुआ पदार्थ तो क्या परंतु समग्र धातुऐंभी भस्म हुइसी जान पडे, तो इसे भस्मक[4] रोग जानो.

अजीर्णरोगोत्पत्ति कारण— अतिशय जलपान, विषमासन[5] मल मूत्र वेग प्रतिबंध, दिवस निद्रा और रात्रि जागरणसे अजीर्ण रोग होता है.

अजीर्णरोग लक्षण— पथ्य, हलका, समयानुकूल और यथोचित भोजन भी पाचन न हो आठो प्रहर चित्तमें ईर्षा, भय, क्रोध, लोभ, दीनता तथा कोई अन्य विकार बनाही रहे और वांछित भोजन अंग न लगे, तो उस पुरुषको अजीर्ण रोग उत्पन्न हुआ जानो.

अजीर्णरोग सामान्यलक्षण— मनमें ग्लानि शरीरमें भारीपन, पेटमें अ-

---

१ तीक्ष्णाग्निवालेको पैत्तिक रोग विशेष होते हैं.

२ विषमाग्निवालेको वातिक रोग विशेष होते हैं.

३ समाग्निवाला पुरुष बहुधा सुखी ( रोगरहित ) रहता है.

४ यह रोगीका प्राणान्तक ही है. ५ भोजन करनेपर तुरत पुनः भोजन करना.

फरा और चित्तमें भ्रम रहे, अधोवायु स्वच्छतासे न निकले, बंधकुष्ट हो, और बारम्बार द्रवरेचन (पतला दस्त) हो तो सामान्य अजीर्ण जानो.

अजीर्णरोग ६ प्रकारका होता है. अर्थात् "१ आमाजीर्ण, २ विदग्धाजीर्ण, ३ विष्टब्धाजीर्ण, ४ रसशेषाजीर्ण, ५ दिनपाकी अजीर्ण, ६ और प्राकृताजीर्ण" इनकी परिभाषा नीचे देखो.

१ आमाजीर्ण– जिसमें खायाहुआ कच्चाही अन्न गुदाद्वारसे बाहार निकल जाता है यह कफसे उत्पन्न होता है.

२ विदग्धाजीर्ण– पित्तसे उत्पन्न होता है जिसमें भक्षितान्न जल जाता है.

३ विष्टब्धाजीर्ण– वायुसे उत्पन्न होता है जिसमें भक्षितान्न विष्टब्ध (बंधना=दृढ होना) होकर उदरमें पीडा उत्पन्न होती है.

४ रसशेषाजीर्ण– जिसमें खायाहुआ अन्न उत्तम रीतिसे पाचन न होके रसरूप हो जाता है और वह द्रवरूपी मल गुदाद्वारसे बाहर निकलता है.

५ दिनपाकी अजीर्ण– इसमें भक्षण किया हुआ अन्न ८ प्रहर (दिनरात्रि)में पाचन होता है अर्थात् १ बार भोजन करनेसे ही दिनभर भूख न लगकर दूसरे दिन क्षुधा लगे इसमें पेटमें पीडा नहीं होती सो निर्दोष है.

६ प्रकृत्याजीर्ण– जो कि नित्यही रहता है जिसकी शांतीके लिये शतपद् गमन (सौडग चलना) अथवा वामांग शयन (बायें करोंटसे सोना अर्थात् सोते समय अपनी दाहनी बाजू ऊपर और बायीं बाजू नीचे रखके सोना) इत्यादि उपाय हैं. अब इन्हींके लक्षण वर्णन करते हैं.

१ आमाजीर्ण लक्षण– शरीर भारी हो, वमनकी इच्छा रहे, जैसा भोजन किया हो वैसी डकारें आवें, और कच्चाही मल उतरे तो आमाजीर्ण जानो.

२ विदग्धाजीर्ण लक्षण– भ्रम, प्यास, दाह, और पसीना होवे. धूमयुक्त खट्टी डकारें आवें, और उष्णता सम्बन्धी अनेक रोग उत्पन्न होवे तो विदग्धाजीर्ण जानो.

३ विष्टब्धाजीर्ण लक्षण– पेटमें शूल चले, पेट फूल जावे, मल और अ-

१ इसे सामान्याजीर्ण भी कहते हैं. यह वैकारिक नहीं होता.

धोवायु रुक जावे, सिर जकड जावे और बादीके बहुत रोग हुआ करें तो विष्टब्धाजीर्ण जानो.

४ रसशेषाजीर्ण लक्षण— अन्नपर अरुचि होवे, हृदयमें पीडा होवे और शरीर तथा पेट भारी होवे तो रसशेषाजीर्ण जानो.

५ दिनपाकी अजीर्ण लक्षण— अन्नपर अरुचि, आलस्य और सर्व शरीरमें भारीपन होवे तो दिनपाकी अजीर्ण जानो.

६ प्राकृताजीर्ण लक्षण— मनमें ग्लानि, भारीपन, विबंध ( कबजियत ) भ्रम होवे, अधोवायु और मल अवरोधित होवे, तथा मलकी वारम्वार प्रवृत्ति होवे तो सामान्याजीर्ण जानो.

अजीर्णके उपद्रव— मूर्छा, प्रलाप, वमन, मुखसे लारका वहाव, शरीरमें शैथिल्यता, और चित्तमें भ्रम ये अजीर्णके उपद्रव है सो जिस रोगीको उक्त उपद्रव उत्पन्न हो जावें वह निश्चय कालवश होगा, जो मनुष्य अजीर्णमें भी पशुके समान भोजन करताही जावे उसे अनेकानेक रोग उत्पन्न होते हैं क्यों की अजीर्ण समस्त रोगोंका मूल कारणही है, अजीर्ण गया कि रोगभी गये.

अजीर्णमें स्वल्प आम दोषोंसे बंद होके भी अग्निमार्गको नहीं रोकती इसलिये अजीर्णमें भी क्षुधा लगती है, उस कच्ची भूखमेंभी जो पुरुष अविचारसे भोजन करताही जावे तो उपद्रवोंके उठाव ( वेग )से नष्ट हो जावेगा. इत्याजीर्ण निदानं.

विसूचिका रोगोत्पत्तिः कारण— प्रथम जिस पुरुषकें मंदाग्निसे आमाजीर्ण हो उसीपर अति गरिष्ट वस्तु खाइ जावे तो विसूचिका रोग होगा.

विसूचिकारोग[1] लक्षण— जिस अजीर्णमें अंगमें वायु रहके सुई छेदने कीसी पीडा होवे, मूर्छा आवे, अतिसार होवे, वमन आवे, तृषा लगे, पेटमें शूल चले, भ्रम होवे, पैर ऐंठें, पग फूटन हो, जमुहाई आवे, दाह हो, श-

१ जिसे लोकमें बहुधा महामारी, मरी, गोली तथा सपाटेकी बीमारी कहते हैं. इसीको उर्दू भाषावाले हैजा और अंग्रेजीवाले कोलरा (Colara) कहते हैं इसका शीघ्रोपाय न किया जावे तो इससे रक्षा पाना दैव बशही जानो.

रीरका वर्ण पलट जावे, कम्पने लग जावे और मस्तकमें पीडा होवे तो विसूचिका रोग जानो.

विसूचिकाके उपद्रव— यदि विसूचिकामें निद्रा न आवे, कोई वस्तु प्रिय न लगे, शरीर कम्पायमान हो, मूत्र रुक जावे, और संज्ञा न रहे तो वह रोगी अवश्य नाशको प्राप्त हो जावेगा.

अलसरोगोत्पत्ति कारण— वायुजन्य विष्टब्धाजीर्णसे अलस रोग उत्पन्न होता है.

अलसरोग लक्षण— जिस रोगमें पेट तथा कूंखे अधिक फूलें आंतोमें शब्द होवे, रोगी अति विकल दशामें होवे, पवन, (स्वास) नीचेको जानेसे रुककर ऊपरकी ओर कूंख, हृदयखंडादि स्थानोंमें प्राप्त होवे, मल, मूत्र, और अधोवायु रुक जावे, तृषा अधिक लगे, और डकारें अधिक आवें तो उसे अलसरोग जानो.

विलंबिका रोगोत्पत्ति—विदग्धाजीर्णद्वारा बिलंबिका रोग उत्पन्न होता है.

विलम्बिकारोग लक्षण— जिसमें भोजन किया हुआ अन्न कफ और वायुसे दूषित होके ऊपर नीचे न जासके अर्थात् नतो वमन होके मुखद्वारसें निकले न मूलद्वारसे मल होके निकले बरन बीचमेंही रहके क्लेश देवे इसेही विलम्बिकारोग[1] जानो.

विसूचिका, अलस, और विलम्बिका तीनोंके संयुक्तोपद्रव— जब इन रोगोंमें रोगीके दांत, नख और ओठ काले पडजावें, संज्ञा न रहे, वमन प्रचारित रहे, नेत्र भीतरको घुसे जावें, घरघर शब्दोच्चारण होवे और शरीरकी सर्व संधियां ढीली पडजावें, तो वह रोगी अवश्य मृत्यु प्राप्त होगा.

अजीर्णरोग निवृत्तिलक्षण— डकार शुद्ध आने लगे, शरीरमें उत्साह बढे, मल, मूत्र, और अधोवायुका सरण भलीभांति होने लगे, शरीरमें हलकापन आ जावे, और क्षुधा तृषा भलीभांति प्राप्त होजावे तब अजीर्णरोग नष्ट हुआ जानना चाहिये.

---

१ कोई कोई ग्रंथोंमें इसका नाम "दंडालसक" भी दिया है. इसकी चिकित्सा बडी कठिनाईसे होती है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे मंदाग्न्यादिरोगाणा लक्षणनिरूपणं नाम नवमस्तरंगः ॥ ९ ॥

॥ कृमि ॥

पांडोः कृमेः कामलाया निदानं च यथाक्रमात् ।
हलीमकस्य रोगस्य दिग्मूर्मौ लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– कृमि, पांडु, कामला, और हलीमक रोगका निदान हम इस दशवें तरंगमें यथा क्रमसे लिखते हैं.

कृमिरोगोत्पत्ति– कृमि २ प्रकारकी होती है अर्थात् १ शरीरके बाहर और दुसरी भीतर. फिरभी मैल, कफ, रक्त और विष्ठासे उपजकर कृमि चार प्रकारकी है अर्थात् १ विष्ठासे लट्टें, पसीनासें २ जुआं, ३ चामजुआं, और ४ लीखादि. पेटकी कृमि है सो केंचुएके सदृश होती है.

कृमि उत्पत्ति– अजीर्णमें भोजन, मीठा, खट्टा, द्रव पदार्थका विशेष सेवन, व्यायामका अभाव, दिनको निद्रा, और विपरीत आहार विहारादिक के करनेसे पेटमें कृमि उत्पन्न होती है.

कृमिलक्षण– ज्वर चढे, शरीर विवर्ण होजावे, पेटमें शूल चले, हृदयमें पीडा होवे तथा भ्रम, अरुचि, और अतिसार जिस मनुष्यको होजावे उसे अवश्य कृमिरोग उत्पन्न हुआ जानो.

पांडुरोगोत्पत्ति– पांडुरोगके ५ भेद हैं. अर्थात् वह पांच कारणोंसे उत्पन्न होता है. १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, और ५ मृत्तिका भक्षण. सो अधिक श्रम, दिनको निद्रा, और खटाई तथा तीक्ष्ण वस्तुओंके विशेष भक्षणसे वात पित्त कफ तीनों कुपित होकर रुधिरको बिगाड देते हैं जिससे त्वचा पीली पड जाती है इसीको पांडु (अथवा पीलिया) रोग कहते हैं.

पांडुरोगका पूर्वरूप– त्वचा फटने ( चर्राने ) लगे, अंगमें पीडा होवे, मृतिका भक्षणपर इच्छा दौडे, नेत्रोंपर कुछ सूजन होवे, मूत्र पीला पड जावे और अन्न पाचन न होवे तो उसे पांडुरोग जानो.

---

१ ये सर्व प्रकार मिलकर औरभी इनके विस्त्रितरूपसे २१ भेद किये हैं. इसके समस्त भेदोंसे ज्ञात होना होतो माधवनिदान देखो.

वातपांडुलक्षण– जिसकी त्वचा, नेत्र, मूत्र रूखे, काले या लाल होजावे, शरीरमें कम्प तथा पीडा होवे, पेट फूला रहे और आमादिक होवें तो वातपांडु जानो.

पित्तपांडुलक्षण– जिसकी त्वचा, नेत्र, मूत्र, मल पीले हों, शरीरमें दाह प्यास और ज्वर रहे, और मल पतला होजावे उसे पित्तका पांडुरोग जानो.

कफपांडुलक्षण– मुखसे कफ गिरे, शरीरपर शोथ, तन्द्रा, आलस्य तथा बोझ हो, त्वचा, नेत्र, मूत्र श्वेत होजावे तो कफपांडु जानो.

सन्निपातपांडुलक्षण[1]– ज्वर, अरुचि, हृदयपीडा, वमन, तृषा, विकलता, क्षीणता, और इन्द्रियोंका विषय त्याग होजावे तो सन्निपातपांडु है.

मृत्तिकाभक्षण पांडुरोगोत्पत्ति– मृत्तिका भक्षणसे एकही दोष कुपित होकर पांडु उत्पन्न होता है. इसका निर्णय देखो– कसैली मृत्तिका भक्षणसे वायु, खारी मृत्तिकासे पित्त तथा मीठीसे कफ कुपित होकर यह मृत्तिका सप्त धातु और भक्षित आहारको रूखाकर देती है और आपतो परिपाक नहीं होती परन्तु नसोंको फुलाकर (रसादि बहनेवाली) नाडियोंके छिद्रोंको भरके उन्होका कर्म (रसादिका वहाव) बंदकर देती है तब शरीरका बल, अंतःकरणकी शक्ति, देहकी कान्ति और जठराग्नि नाश होजाती है इस प्रकारसे उक्त रोग उत्पन्न होता है.

मृत्तिकाभक्षण पांडुरोगलक्षण– त्वचाका पीत वर्ण हो शरीरमात्रका विवर्ण होकरके, तंद्रा, आलस्य, खास, श्वास, शूल, अर्श, अरुचि, नेत्र, पैर, इन्द्री आदिपर शोथ, पेटमें कृमि, अतिसार और (कफ तथा रक्तसे युक्त) मल ये लक्षण हों तो मृत्तिकाभक्षण पांडुरोग जानो.

पांडुमात्रके असाध्यलक्षण– शरीरका रुधिर नाश होजावे, शरीरका रंग श्वेतसा दीखे, दांत, नख, नेत्र पीतवर्ण होजावें. सर्व देहपर शोथ आजावे, अतिसार तथा ज्वर होवे और रोगीको सर्व पदार्थ पीलेही पीले दृष्टि पडें तो जानो कि यह पांडुरोगी अवश्यही मृत्युवश हो जावेगा.

१ इसपर वैद्यको चिकित्सा करना व्यर्थही है क्यों आरोग्यता होनाही नहीं फिर या लाभ.

कामलारोगोत्पत्ति–जो पांडुरोगी,अत्यंत उष्ण, पित्तकारक वस्तुका भक्षण करे तो उसका पित्त, रुधिर और मांस दग्ध होकर कामलारोग उत्पन्न होता है.

कामलारोगलक्षण– जिसके नेत्र, त्वचा, नख मुखादि हलदीके समान पीले पडजावें, मल-मूत्र कुछ रक्तवर्णको लिये हो, शरीरका वर्ण पीले मेंडक जैसा होजावे, इन्द्रियां निर्बल दशामें होजावे, दाह, अन्नसे अरुचि, अनपाचन, और शरीरमें क्षीणत्व (दुर्बलता) होजावे तो कामलारोग जानना चाहिये.

हलीमकरोगके विषयमें– यदि पांडुसे रोगी पुरुषकी त्वचाका वर्ण हरा, धूसर, काला, पीला होजावे. बल उत्साहसे रहित होजावे. तंद्रा, मंदाग्नि, जीर्णज्वर रहे, कामोद्दीपनी शक्ति न रहे, अंगपीडा, दाह, तृषा, अरुचि, और भ्रम ये लक्षण हों तो हलीमकरोग जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे कृमिप्रभृतिरोगलक्षण निरूपणं नाम दशमस्तरंगः ॥ १० ॥

॥ रक्तपित्त-रोगराट्-शोष ॥

निदानं रक्तपित्तस्य रोगराड्शोषयोस्तथा ।
ज्यामृगांकमिते चास्मिन् तरंगे लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– रक्तपित्त, रोगराट् (राजरोग) और शोष इन रोगोंका निदान इस ११ वे तरंगमें लिखते हैं.

रक्तपित्तरोगोत्पत्ति– घाममें भ्रमण, श्रम, मार्गगमन, मैथुन, शोक और उष्ण तीक्ष्ण, कटु, नमक तथा खटाईके भक्षण, इन कार्योंकी अति बहुतायत होनेसे पित्त दग्ध होके शरीरस्थ रुधिरको दग्धकर देता है तब वह रुधिर ऊर्द्धमार्ग (नाक, नेत्र, कान, मुख) तथा अधोमार्ग (लिंग, योनि, गुदा)से निकलता है, अथवा जो रुधिर अत्यन्तही कुपित होजावे तो सर्व देहके रोमद्वारसे भी निकलने लगता है, इसे रक्तपित्त कहते हैं.

रक्तपित्तका पूर्वरूप– अंगमें पीडा, शैथिल्यता, शीतलताकी अभिला-

---

१ हलीमक भी पांडुका भेदही है जो वातपित्तकोपसे उत्पन्न होता है

षा, कंठ तथा मुखसे धुआं निकलता हुआ जान पडे, बमन, रुधिर मुखमें आवे और जमुहाई तथा स्वासमें तप्त लोहेके सदृश गंध आवे तो विचार लोकी इसे रक्तपित्त होगा.

रक्तपित्त भेद— यह रोग १ कफ २ वात ३ पित्त और ४ सन्निपातसे उत्पन्न होनेके कारणसे चार भागोमें विभागित किया गया है.

कफजरक्तपित्त लक्षण— जो रक्त गाढा, कुछ कफयुक्त, पांडुवर्ण, चिकना तथा मयूरके चन्देवेके समान वर्णवाला होतो कफज रक्तपित्त जानो.

बातजरक्तपित्त लक्षण— जो रक्त श्यामता लिये फेनयुक्त, पतला और रूखा हो तो वातज रक्तपित्त जानो.

पित्तजरक्तपित्त लक्षण— जो रक्त लाल, पीला, खैर आदिके क्राथसमान या काला, गोमूत्रसमान बमनीसमान चिकना, अंगारसमान, धूसर और सुरमेके रंगसमान हो तो पित्तज रक्तपित्त जानो.

सन्निपातज रक्तपित्त लक्षण— जिसमें तीनों दोषोंके लक्षण युक्त मिलते हों उसे सन्निपातजरक्तपित्त जानो.

रक्तपित्तके साध्यासाध्य लक्षण— जो रुधिर नाक, नेत्र, कान, और मुख इन उर्द्धद्वारोंसे गिरे तो साध्य. लिंग, योनि गुदादि अधोद्वारसे गिरे तो जाप्य और दोनों मार्गोंसे प्रचलित होजावे तो असाध्य जानो.

रक्तपित्तके उपद्रव— दुर्बलता, श्वास, खास, ज्वर, बमन, मादकता, पांडुता, दाह, मूर्छा, भोजनपर अति दाह, सर्वदा अधीर्य, हृदयमें अति पीडा, तृषा, मल द्रवदशामे हो, मस्तकमें ताप, थूकमें दुर्गंधि, अन्नपर अरुचि और अन्नका अनपचन ये रक्तपित्तके उपद्रव हैं इनसे युक्त रोगीको ईश्वरही बचावे.

रक्तपित्तके दुर्लक्षण— यह रोग वृद्ध तथा रोगक्षीण पुरुषको प्राणहारक ही है. जो इस रोगमें रोगीको आकाशभी लाल रुधिरसमान दीखने लगे अथवा नेत्र रुधिरवत् लाल होजावे और सर्वत्र रुधिर सदृश दीख पडे तो वह अवश्य निधन (मृत्यु प्राप्त) होवेगा.

राजरोगोत्पत्ति— मल, मूत्र, अधोवायुका अवरोध, वीर्यकी क्षीणता,

साहस[1], अधिक, गरिष्ट तथा विषमाशनसे[2] राजरोग होता है. यह त्रिदोष-रूपही है. परन्तु कफ प्रधान माना है सो कफ, बात और पित्त ये कुपित होके रस संचारके मार्गको रोक लेते हैं तब रक्तादिका बढाव बंद होनेसे मनुष्य सूखता (कृश) जाता है. अथवा विशेष मैथुनसेभी वीर्य क्षीण होनेसे वायु कुपित होके मज्जाको सुखाय अस्थ्यादि (हाड) रसपर्यंतको क्षय करता है तब वह मनुष्य दिन प्रति क्षीण शरीर होकर सूखने लगता है ऐसे कारणसे राजरोग उत्पन्न होता है.

राजरोग भेद– यह रोग ५ प्रकारका होता है अर्थात् १वातज २ पित्तज ३ कफज ४ सन्निपातज और ५ प्रहारज. इसके रोगराज, क्षय, शोष और राजक्ष्मा ये नाम भी हैं. शोष ६ प्रकारका है.

राजरोग पूर्वरूप– खास, श्वास, अंगपीडा, खासीद्वारा कफ पतन, तालु सुखाव, वमन, अग्नि मंद, मादकता, पीनस, नाकका वहाव, निद्राकी आधिक्यता, श्वेतनेत्र, मांसभक्षणेच्छा और मैथुनेच्छा इनकी विशेषता हो तो राजरोग होगा जानो.

राजरोगलक्षण– १ कांधे तथा पार्श्व भागमें पीडा हो, हाथपांवमें दाह हो, और सर्वांगमें ज्वर रहे तो राजरोग जानो.

तथा २ भोजनमें अरुचि, ज्वर, खास, श्वास, थूकके संग रुधिरका संसर्ग, और शब्दमें घरघराटा हो तो राजरोग जानो.

बातज राजरोगलक्षण– स्वरभंग (बोलनेमें घर्राटा) शूल और कंधों तथा पार्श्वभागमें संकोच (खिचाव) होतो वातजराजरोग जानो.

पित्तजराजरोगलक्षण– ज्वर, दाह, अतिसार और मुखसे रुधिर पतन होतो पित्तजराजरोग जानो.

कफज राजरोगलक्षण– मस्तकमें भारीपन, भोजनमें अरुचि, खांसी और गला (गलापडना) लगजावे तो कफजराजरोग जानो.

---

१ अपनी शक्तिसे अधिक परिश्रम करना इसे साहस कहते हैं.

२ भोजनपर पुनः भोजन, कभी अधिक कभी थोडा, कभी अवेरा कभी सवेरा, इस प्रकार जो भोजन किया जावे सो विषमासन कहाता है.

सन्निपातज राजरोगलक्षण– जिसमें उक्त वात, पित्त और कफ इन तीनोंके लक्षण हों उसे सन्निपातराजरोग जानो.

हृदयप्रहारज राजरोगलक्षण– सीसमें पीडा हो, मुखसे वमनमे रुधिर गिरे, और शरीर रूखा पडजावे तो हृदयकी चोटसे यह राजरोग उत्पन्न हुआ जानो.

असाध्यराजरोगलक्षण– जिस रोगीके नेत्र श्वेत पडजावें, अन्नपर अरुचि होवे, और श्वास, प्रमेह तथा मूत्रकी अतिवृद्धि होतो वह रोगी अवश्य मरजावे. यदि असाध्य राजरोगपर सद्वैद्य उत्तम प्रकारसे चिकित्सा करे तथा रोगी तरुण, द्रव्यवान और पथ्यधारी होतो १००० दिन पर्यन्त जीवित रहकर पश्चात मरजावेगा.

साध्यराजरोगलक्षण– रोगी ज्वर रहित हो, बलयुक्त हो, वैद्यकी दीहुई औषध कटु होवे तोभी उसे अमृतसदृश स्वीकार करले, अति तीव्र क्षुधा लगे, और पुष्ट हो तो उसे साध्य जानो.

शोषरोगोत्पत्ति– यह राजरोगकाही एक भेद है. छः प्रकारसे उत्पन्न होता है अर्थात्–१ अधिक स्त्री प्रसंग, २ अधिक शोक, ३ जरा[2], ४ अधिक मार्गगमन, ५ व्यायामादि अति श्रम, और ६ हृदयमें चोट लगनेसे यह शोषरोग होता है.

१ अधिक स्त्रीप्रसंगसे उत्पन्न हुए शोषरोगके लक्षण– लिंगेन्द्रिय और पोथोंमें पीडा हो, मैथुनशक्ति न रहे, शरीर पीला पडजावे, चिंताग्रस्त रहे, शरीर शिथिलसा बना रहे, सब धातुएं क्षीण होते होते केवल अस्थिमात्र रह जावें. तथा राजरोगके लक्षण भी युक्त हों तो स्त्रीप्रसंगकी आधिक्यतासे उत्पन्न हुआ शोषरोग जानो.

२ शोकजशोषरोगलक्षण– इसके लक्षण उक्त लक्षणोंसेही मिलते हैं, विशेषता यही है कि इसमें वीर्य क्षय नहीं होता.

३ जराशोषलक्षण– शरीर कृष होजावे, वीर्य बल बुद्धिका क्षय होवे, शरीर कम्पायमान हो, भोजनमें अरुचि हो, शब्दमें घरांटा हो, कफ बढजावे, देह भारी पडजावे, पीनस होजावे, अंग रूखासा होजावे तो जराशोषरोग जानो.

---

१ ये दोनों महा असाध्य हैं. २ जरा=वृद्धावस्था=बुढापा=तृतीयावस्था.

४ अधिक मार्गगमनशोषरोगलक्षण– अंग शिथिल होकर भुंजासा हो जावे, रूखापन आजावे, सर्वांग स्पर्श ज्ञान रहित होजावे, तृषास्थान (कंठ मुखादि ) सूखता रहे तो मार्गगमनशोष जानो.

५ श्रमजशोषरोगलक्षण– उक्त लक्षण होकर हृदयमें चोट लगनेके लक्षणभी हो तो श्रमजशोषरोग जानो.

६ हृदयप्रहारज शोषरोगलक्षण– अधिक भार आदि उठानेसे हृदयमें धक्का (भार-चोट) बैठकर तथा अति मैथुन करके रूखे पदार्थ भक्षणसे यह रोग उत्पन्न होता है तब उस मनुष्यके ये लक्षण होते हैं अर्थात् हृदय, पार्श्व, तथा कटिमें पीडा, अंग सूखना, कम्प, बल, वीर्य, रुचि, और अग्निकी न्यूनता, पीले कफयुक्त खांसी, कभी कभी खांसीमें रक्तभी आना, रुधिरयुक्त बमन, व मूत्र, ज्वर, अतिसार, और सबको अति कृपण अनाथ सदृश दृष्टि पडे तो हृदयमें चोट लगकर अति गम्भीर व्रणद्वारा शोषरोग जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे रक्तपित्तराजरोगादिलक्षणनिरूपणं नामैकादशस्तरंगः ॥ ११ ॥

॥ कास-हिक्का-श्वास ॥

अथ कासस्य हिक्काया श्वासस्य हि यथाक्रमात् ।
तरंगे द्वादशे चास्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–इस बारहवें तरंगमें अब हम कास, हिक्का, और श्वासका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

कासरोगोत्पत्ति–मुखमें धुवां तथा धूलिका प्रवेश, रूखे अन्नका भक्षण, भोजनमें कुपथ्य, मल, मूत्र, तथा छींकका प्रतिरोध और चिकनाई या मूली आदि वस्तुओंके भक्षणपर जलपानके करनेसे खांसीका रोग उत्पन्न होता है. सो यह रोग हृदयकी प्राणवायुसे युक्त होके कंठस्थ उदानवायुको लेता हुआ दोनोंको युक्तकर बिगाड देता है. तब कंठका बिगडा हुआ उदानवायु मनुष्यके कंठसे कांसे (फूल)के फूटे पात्रके समान शब्द मुखद्वारा बडे वेगसे बाहर निकलता है यही कास रोग है यह पांच प्रकारसे होता है अर्थात्– १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ प्रहार, और ५ क्षयीसे उत्पन्न होता

है. इन पाचों प्रकारोंमे एकसे दूसरे उत्तरोत्तर बलाढ्य हैं जैसे वातसे पित्त, पित्तसे कफ, कफसे प्रहार और प्रहारसे क्षयीका कास बलाढ्य होता है.

कासरोगका पूर्वरूप—गलेमें कांटे पडजावें, कंठके भीतर खुजाल चले और भोजन न किया जावे तो जानो कि इसे कासरोग होगा.

वायु कासरोग लक्षण—हृदय, कनपटी, मस्तक, उदर, और पार्श्वमें शूल चले, मुख निस्तेज हो जावे, पराक्रम, बल तथा श्वर नष्ट हो जावे, भोजन करते समय कंठमें व्यथा हो, सूखी खांसी चले और बोलनेमें टूटा हुआ शब्द निकले तो वातकास जानो.

पित्त कासरोग लक्षण—हृदयमें दाह, ज्वर, मुखमें फीकापन, मुख सूखना, प्यास लगना, कटु बमन होना, और शरीर पीला पडजाना ये लक्षण हों तो पित्तकी खांसी जानो.

कफ कासरोग लक्षण—मुख कफसे लिपटा रहे मस्तकमें पीडा हो, भोजनमें अरुचि रहे, शरीर भारी हो, कंठमें खुजाल चले, और मुखसे थूकमें कफके डलेके डले आवें तो कफ कास जानो.

प्रहारज कासोत्पत्ति—अति मैथुन, बोझ उठाना, मार्गगमन, मल्लयुद्धादि करना, घोडे, हाथी आदिपर चढके दौडाना, और रूखे पदार्थोंके भक्षणसे वायुकुपित होकर हृदयमें चोट लगतीहुई खांसी उत्पन्न करती है.

प्रहारज कास लक्षण—प्रथम सूखी खांसी चले नंतर खखारके साथ रुधिर गिरने लगे, कंठ, अस्थि, संधियोंमें पीडा, ज्वर, शूल, श्वास, प्यास, और कबूतरके सदृश घरघर शब्द हो तो प्रहारज कासरोग जानो.

क्षयीकासरोगोत्पत्ति—कुपथ्य, विषमासन, अति मैथुन, मल, मूत्रावरोध और अति शोकसे मनुष्योंकी अग्नि मंद होकर बातपित्त और कफ कुपित होते हैं तब उस मनुष्यको क्षयी होकर कासको उत्पन्न करती है.

क्षयीकासरोगलक्षण—शरीर क्षीण हो जावे, दाह, ज्वर, मोह हो, सूखी खांसी चले=देह दिनोंदिन दुर्बल होती जावे, रक्तमांसकी हीनता हो जावे और खखारमें राध (पीव) गीरे तो असाध्य क्षयीकास जानो.

कासमात्रके असाध्य लक्षण—वात-पित्त तथा कफकी खांसी साध्य, और

प्रहारज तथा क्षयीकी खांसी असाध्य जानो. जो यह रोग वृद्धावस्थामें उत्पन्न हो तो असाध्यही है.

हिक्कारोगोत्पत्ति– उष्ण, वातल, भारी, रूखी, तथा बासी वस्तु भक्षण, मुखमें रज (धूलि-बारीक मृत्तिका) प्रवेश, श्रम, मार्गगमन और मलमूत्रका बेग रोकनेसे हिक्का (हिचकी) रोग उत्पन्न होता है.

हिक्काकी परिभाषा– वायु दोनों औरके पार्श्व (पँसली) तथा अंतडियोंको क्लेश देती हुई, बडे शब्दयुक्त होकर ऊपरको चढती है. और प्राणोंको त्रास देती हुई मुखसे भयंकर शब्द निकालती है उसे हिक्का कहते हैं. वायु और कफके संयोगसे ५ प्रकारकी हिक्का उत्पन्न होती है. अर्थात्– १ अन्नजा, २ यमला, ३ क्षुद्रा, ४ गम्भीरा, और ५ महती.

हिक्काका पूर्वरूप– कंठ, हृदय भारी हो, मुख कसायला हो, और कुक्षि (कूंख)में अफरा हो तो अनुमान कर लो कि इसे हिक्का उत्पन्न होगी.

१ अन्नजा हिक्कालक्षण–अयुक्ति पूर्वक अधिक अन्न भक्षण तथा अधिक जलपानसे वायु कुपित होके ऊर्ध्वगामी होती है इसे अन्नजा कहते हैं.

२ यमलाहुचकी लक्षण–कुछ समयके अंतरसे दोदो हुचकी रोग आकर सीस और ग्रीवाको कम्पित करें उसे यमला जानो.

३ क्षुद्राहिक्का लक्षण– जो कंठ तथा हृदयकी संधिसे उत्पन्न होके बेर बेर (समयका अंतर देकर) मंद २ चले उसे क्षुद्राहिचकी जानो.

४ गम्भीरा हिचकी लक्षण– जो हिचकी नाभिस्थानसे भयंकरता पूर्वक उठके विशेष पीडा तथा उपद्रवोंके साथ उत्पन्न होती है.

५ महती हिक्कालक्षण– जो सर्व मर्मस्थानोंको पीडित और शरीरको कम्पित करती हुई उठे सो महती हिचकी जानो.

हिक्का असाध्य लक्षण– रोगीको हिचकी चलते समय शरीरमें कम्प आवे ऊर्ध्व दृष्टि हो, अंधियारी आजावे, शरीर क्षीण हो, छींके अधिक आवें और भोजनमें अरुचि हो जावे तो असाध्य[1] हिक्का जानो.

श्वासरोगोत्पत्ति– जिन वस्तुओंके भक्षणसे हिक्का रोग उत्पन्न होता है

१ बहुधा इन लक्षणोंयुक्त गम्भीरा और महती हिक्काही हुआ करती हैं.

बहुधा उन्हींसे श्वासरोगभी होता है. यहभी पांच प्रकारका है अर्थात्- १ महाश्वास, २ ऊर्ध्वश्वास, ३ छिन्नश्वास, ४ तमकश्वास, और ५ क्षुद्रश्वास.

श्वासरोग पूर्वरूप- हृदयमें पीडा, शूल, अफरा, मलमूत्रावरोध, मुख बे-रस (निरस) और कनपटीमें पीडा हो तो जानो कि अब श्वास उत्पन्न होगा.

श्वासरोगस्वरूप- सर्व शरीरमें भ्रमणकारी कफसे मिलके समस्त नसोंको रोक देवे और वायुका वहाव बंद होकर श्वास (दम) चल उठे इसे श्वास-रोग कहते हैं.

१ महाश्वासलक्षण- मनुष्य श्वाससे दुःखित हो, मतवाले वृषभके समान निरंतर ऊंचे स्वरसे श्वास खीचे, श्वासका शब्द दूर पर्यन्त सुनाई देवे, ने-त्र कायरता युक्त होवे, संज्ञाहीन हो जावे, मुख फट जावे, नेत्र फट जावे, बोलनेमें असमर्थ हो, अति दीन जैसा दृष्टि पडे तो महाश्वास जानो.

२ ऊर्ध्वश्वासलक्षण- श्वास ऊपरको लेवे और वह श्वास नीचे नहीं आवे, मुख कफयुक्त हो जावे, नेत्र ऊपरको चढकर चकित विचकित (घवरा हट-युक्त) हो जावें, मोह और ग्लानि हो तो ऊर्ध्वश्वास[1] जानो.

३ छिन्नश्वासलक्षण- सर्व शरीरके पांचों वायु (प्राण, अपान, समान, उदान, और ब्यान,)से पीडित टूटती हुई श्वास लेवे, क्लेशित हुआ श्वास न ले, मर्मस्थान टूटे, अफरा हो आवे, पसीना निकले, नेत्र फट जावें, श्वास लेते समय नेत्र रक्तवर्ण हो जावें, संज्ञा न रहे और शरीरका वर्ण विपर्यय हो जावे तो छिन्नश्वास जानो.

४ तमकश्वासलक्षण- शरीरका पवन उलटा घूमके नसोंको रोक देवे, तब ग्रीवा सिरको पकडके कफ उपजाती है वह कफ कंठमें जाके घुरघुर शब्द करताहुआ प्राणान्तक श्वासको उपजाता है जिसके बेगसे रोगीको ग्लानि प्राप्त होती है. रोगीकी अग्नि रुक जाती है, श्वास लेनेके समय मोह होता है, कफसे अति दुःख पाता है, गलेका कफ मुखद्वारा बाहर निकलनेपर एक या दो घडी सुखसे बीतते है और भाषणभी कर सक्ता है, सोता है तभी श्वास आ-जाती है, निद्रा नहीं आती, बैठनेमेंभी चैन नहीं पडता है, उष्णता प्रिय होती

१ ये तीनो महा असाध्य हैं, इनसे रक्षा दैववशही हैं.

है, नेत्रोंपर शोथ आजाता है, ललाटपर पसीना हो आता है मुख सूखता है, लुहारकी भाथी (धोंकनी) सदृश श्वास आती है, वर्षाकी पवन, मधुर और शीतल वस्तुओंसे श्वासवृद्धि पाती है, ये लक्षण जिस रोगीको हों उसे तमकश्वास जानो.

क्षुद्रश्वासलक्षण– रूखी वस्तुके भक्षण और परिश्रमसे क्षुद्रश्वास उत्पन्न होती है, यह श्वास मनुष्यके खानपानकी गतिको नहीं रोकती, इन्द्रियोंको विशेष पीडाभी नहीं देती, किन्तु श्वासमात्र चलती है.

श्वासका साध्यासाध्य निर्णय–क्षुद्रश्वासभी प्रथम अवस्थामें साध्य परन्तु विशेषकरके तरुणावस्थामें बलाढ्य पुरुषको साध्यही है, तमकश्वास कष्टसाध्य परंतु महा-ऊर्ध्व और छिन्नश्वास ये तीनों तो महा असाध्य और प्राणहारकही जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे कास, हिक्का, श्वासरोगलक्षण निरूपणं नाम द्वादशस्तरंगः ॥ १२ ॥

॥ स्वरभङ्ग-अरोचक-छर्दि ॥

स्वरभेदारोचकयोश्छर्देश्चात्र यथाक्रमात् ।
तरंगे रामचन्द्रे हि निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस तेरहवें स्तरंगमें स्वरभंग, अरोचक और छर्दि इन रोगोंका निदान यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

स्वरभंगरोगोत्पत्ति–दीर्घ स्वरसे भाषण, पठन, विष भक्षण और कंठमें किसी प्रकारकी चोट लगजानेसे वातादि दोष कुपित होनेके कारणसे कंठसे शब्दप्रकाश करनेवाली नाडियोंमें स्थिर होके स्वरको भंग कर देते हैं. सो यह स्वरभंगरोग छः प्रकारका होता है अर्थात् १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ शरीरकी स्थूलता, और ६ क्षयीरोगसे स्वरभंग होता है.

वातस्वरभंगलक्षण– जिसको नेत्र, मुख, मल, और मूत्र श्याम हों, गर्धभ सदृश टूटा हुआ शब्द निकले तो वातस्वरभंग जानो.

पित्तस्वरभंगलक्षण– नेत्र मुख मलमूत्र पीले हों और बोलनेके समय कंठमें दाह हो तो पित्तको स्वरभंग जानो.

कफस्वरभंग– सदा कंठ कफसे रुका रहे, क्लेशके साथ मंद बोलना बने और रात्रीके समय कफ अधिक बढ जावे तो कफस्वरभंग जानो.

सन्निपातस्वरभंग– जिसमें वात, पित्त, कफ तीनोंके लक्षण युक्त हों उसे सन्निपातस्वरभंग जानो.

स्थूलतास्वरभंग– गलेके भीतर ही भीतर बोले, शब्द स्पष्ट न जान पडे, विलंबसे शब्द निकले, और प्यास अधिक लगे तो स्थूलताका स्वरभंग जानो.

क्षयीस्वरभंग– जिसके बोलते समय मुखसे बाफ (बाष्प) निकले उसे क्षयी स्वरभंग जानो.

अरोचकरोगोत्पत्ति– शोक, क्रोध, मोह, लोभ, भय, दुर्गंध, ग्लानिकारक भोजन और ग्लानिकारक रूप देखनसे त्रिदोष कुपित होके अरोचक (अरुचि करनेवाला) रोग उत्पन्न करते हैं.

अरोचक रोग ५ प्रकारका है अर्थात्– १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ शोकादिसे उत्पन्न होनेवाला.

वातारोचकलक्षण– मुख कसैला रहे, हृदयमें शूल रहे, और अन्नपर रुचि न रहे तो वातारोचक जानो.

पित्तारोचकलक्षण– मुख कडुवा, खट्टा, उष्ण, निरस या सलोना रहे, शरीरमें दाह और मुखशोष हो तो पित्तारोचक जानो.

कफारोचकलक्षण– मुख मीठा तथा चिकना रहे, शरीर भरमें बंधकुष्ट हो, मुखसे लार गिरे, शरीरके प्रत्यवयवमें पीडा हो और भोजनकी ओर जीव नहि चलै तो कफारोचक जानो.

सन्निपातारोचकलक्षण– जिसमें त्रिदोषके युक्त लक्षण मिले हों उसे सन्निपातारोचक जानो,

शोकारोचकलक्षण– क्षुधा न लगे, मुखसे खाया न जावे, अर्थात् मुखमें ग्रास इधर उधर घूमने लगे तो शोकारोचक जानो.

अरोचक रोगका पूर्वरूप– मुखमें अन्नादि पदार्थका लिया हुआ ग्रास कुछभी स्वाद न दर्शावे तो जानोकी अरोचक होगा.

---

१ यह अच्छा नहीं हानिकारक है.

भुक्तद्वेषलक्षण– जिस पुरुषको भोजनके देखतेही तथा भोजनका नाम लेतेही अतिशय ग्लानि प्राप्त होकर चित्त खिन्न होजावे और भोजनकी रुचि किंचितमात्र भी न रहे उसे भुक्तद्वेष रोग जानो. यहभी अरोचकका एक विशेष भेदही है.

अथ छर्दिरोगोत्पत्ति– अधिक पतली, चिकनि, ग्लानिकारक वस्तु अति शीघ्रतापूर्वक भोजन, दुर्गंधी. दुर्गंधित स्थानावलोकन, उदरमें कृमि (और स्त्रियोकों गर्भधारण )से वात, पित्त, कफ, कुपित होके अंगोको पीडित करते हुए मुखकी ओर दौडते हैं तब भक्षित पदार्थ मुखद्वारा निकल जाता है इसे छर्दि (बमन, वांति, उलटी, छांटनी, तथा उखाल) रोग कहते हैं.

छर्दिरोगके ५ भेद हैं अर्थात्– १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, और ५ ग्लानिकारक पदार्थ सेवनसे उत्पन्न होता है.

छर्दिरोगका पूर्वरूप– प्रथमही खट्टा, कडुवा रस हृदयमें आवे, डकार न आवें, मुखसे लार गिरे, मुखसे वार वार खट्टा पानी झिर आवें, मुख कडुवा रहे, अन्न जलपर रुचि न चाहे तो जानो कि इसे कुछ कालमें अवश्य बमन होगा.

वातछर्दिलक्षण– हृदय, पार्श्वभाग, मस्तक नाभिमें पीडा हो, मुखशोष हो, स्वरभेद हो, डकारमें उच्च स्वर निकले, फेन काले रंगयुक्त कसैला बडे वेगसे अति क्लेशपूर्वक वमन हो तो बातछर्दि जानो.

पित्तछर्दिलक्षण– मुखशोष, मूर्छा, तृष्णा, अन्धेरी और चक्कर आवें, तालु नेत्र उष्ण हों और हरे तथा लाल रंगकी उष्ण उलटी हो तो पित्तछर्दि जानो.

कफछर्दिलक्षण– तंद्रा, भोजनमें अरुचि, शरीरमें भारीपन होवे, मुख मीठा हो, नींद न आवे, और चिकना, मीठा, गाढा, कफयुक्त वमन हो तथा वमन होते समय सर्व रोम रोम खडे होजावें तो कफछर्दि जानो.

सन्निपातछर्दिलक्षण–शूल, अपच (पचे नहि), अरुचि, दाह, श्वास, प्रमेह इत्यादि समस्त रोग निरंतर रहैं, और सलोना, खट्टा, नीला तथा लाल, गाढा उष्ण वमन होय तो सन्निपातछर्दि जानो.

ग्लानिछर्दिलक्षण– जिस ग्लानिकारक पदार्थके संसर्गसें उल्टी हुई हो उसीका बारबार स्मरण बना रहे, तो ग्लानिछर्दि जानो.

विशेषता– ग्लानि छर्दिमेंभी त्रिदोषका निर्णय पूर्वोक्त रीत्यानुसारही करना चाहिये. छर्दिमात्रके साध्यासाध्य लक्षण तथा उपद्रवोंसे विशेष ज्ञाता होना चाहो तो चरक, सुश्रुतादिक ग्रंथ देखो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे स्वरभेदारोचकछर्दिरोगाणांलक्षणनिरूपणं नाम त्रयोदशस्तरंगः ॥ १३ ॥

॥ तृषा-मूर्छा-मदात्यय ॥

आर्याछंदः– अब्ध्यङ्केऽत्र तरङ्गे च तृषा-मूर्छा-मदात्ययादीनाम् ॥
रोगाणां हि निदानं विचार्य लिख्यते मया यथासंख्यम् ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस चौदहवें तरंगमें यथाक्रमसे तृषा, मूर्छा, और मदात्यादि रोगोंका निदान लिखते हैं.

तृषारोगोत्पत्ति– भय, श्रम, बलनाशसे बढा हुआ पित्त वायुसे मिलके तालुमें प्राप्त होता है इसलिये जलप्रसारणी नसें रुककर तृषा उत्पन्न होती है. तृषारोग सात प्रकारका है अर्थात्– १वायु, २ पित्त, ३ कफ, ४ शस्त्रप्रहार, ५ बलनाश, ६ आम, ( आंव ) और ७ भोजन करनेसें उत्पन्न होता है.

तृषारोगका स्वरूप– निरंतर जल पीनेपरभी तृप्ति न होवे, जल पीनेमें ही चित्त लगा रहे, तो तृषारोग उत्पन्न हुआ जानो.

१ वायुतृषालक्षण– मुख उतर ( क्रांति रहीत हो ) जावे कनपटी और मस्तकमें पीडा होती रहे, नसें रुक जावें, मुखमें रसका स्वाद नाश होजावे, और शीतल जलपानसे तृषा बढे तो बाततृषा जानो.

२ पित्ततृषालक्षण– मूर्छा, भोजनपर अरुचि, दाह, नेत्र रक्त, मुखशोष होजावे, ठंडी वस्तु प्रिय लगे, मुख कटु होजावे, शरीरमें ज्वर रहे, और मल, मूत्र, नेत्र, पीतवर्ण होजावे तो पित्ततृषा जानो.

३ कफतृषोत्पत्ति– कफद्वारा जठराग्निका रुकाव होकर जलप्रसारणी न-

सोंका शोषण होता है तब कफतृषा उत्पन्न होकर ये लक्षण हो जाते हैं.

कफतृषालक्षण– रोगी तृषासे पीडित होता है, अधिक निद्रा आने लगती है, शरीर बोझल हो जाता है, मुख मीठा रहकर दिनप्रति सूखता जाता है ये लक्षण कफतृषाके हैं.

४ शस्त्रप्रहारतृषा– शस्त्रादिकी चोट लगनेसे शरीरावयवोंमें रुधिर प्रवाह होनेके कारण अधिक पीडा होनेसे बारंबार तृषा लगे उसे शस्त्रप्रहारतृषा जानो.

५ बलनाशतृषालक्षण– क्षीणता होकर हृदयमें पीडा होवे, कफ बढ जावे, मुख शोष हो, और अधिक जलपान करनेपरभी तृषा न मिटे तो क्षीणताकी तृषा जानो.

६ आमतृषालक्षण– क्षीणताकी तृषाके लक्षणही इसके लक्षण हैं.

७ भोजनतृषालक्षण– चिकना, खट्टा, खारा, भारी अन्न अधिक खानेसें जो तत्काल तृषा लगे उसे भोजनतृषा जानो.

तृषारोगोपद्रव–मुखका स्वर मंद पडजावे, कण्ठ तालु सूख जावें, ज्वर मोह, कास, श्वास ये सब हों तो इन उपद्रवोंसे बचना कठिनही है.

मूर्छारोगोत्पत्ति–क्षीणता, अति कुपथ्य, मलमूत्रावरोध, प्रहारसे बाहिरी इन्द्रियों (नेत्र, कर्ण आदि) तथा मनोस्थानमें त्रिदोश प्रवेश होनेसे संज्ञा प्रवाहणी नसोंको रोक देते हैं. तब अन्धेरी प्राप्त होकर वह मनुष्य काष्ठ सदृश पृथ्वीपर गिर पडता है उसे सुख दुःखादिका बोध नहीं रहता इसे वैद्य मूर्छा तथा मोहभी कहते हैं. मूर्छारोग छः प्रकारका है अर्थात्– १ बात, २ पित्त, ३ कफ, ४ रुधिर, ५ मद्यपान, और ६ विष भक्षणसे होता है. परन्तु उक्त छः हो प्रकारमें पित्तप्रधान रहता है.

मूर्छासामान्यरूप– कुपथ्थी, पराक्रमहीन, क्षीणतायुक्त, और मद्यप पुरुषके अज्ञानका मुख्य हेतु पित्तरूप तमोगुण बढके ज्ञानरूप सतोगुण और रजोगुणको आच्छादित कर देता है तब दशों इन्द्रियोंमें त्रिदोषका प्रवेश होके ज्ञानवाही नसेभी आच्छादित हो जाती हैं. अतएव ज्ञाननाशक बढे हुए तमोगुणके वेगसे मनुष्य असुधित होकर पृथ्वीपर गिर पडता है इस

प्राप्त होके वह

मूर्छाका पूर्वरूप— हृदयमें पीडा होवें, विशेष जह्माई आवें, मनमें ग्लानि हो, और संज्ञा नष्ट होकर चित्तभ्रान्तिसी जान पडे तो अनुमान करो कि किंचित कालमें इस पुरुषको मूर्छा आवेगी.

बातमूर्छा लक्षण—प्रथम आकाशका वर्ण काला, नीला, या लालसा दिखे नंतर अन्धकारमें प्रवेश हुआसा जान पडे. अल्पकालमें पुनः ज्ञान-युक्त हो जावे, शरीरमें कम्प, हडफूटन, हृदयमें पीडा, शरीर कृषतायुक्त, और शरीरकी त्वचा लाल तथा धूसर (धूमके रङ्ग सदृश) दृष्टि पडे तो बातमूर्छा जानो.

पित्तमूर्छा लक्षण—प्रथम आकाशका वर्ण लाल, हरा तथा पीला दृष्ट पडकर मूर्छा आजावे, नंतर पसीना आनेपर संज्ञायुक्त होवे, तृषा लगे, शरीर स-न्तप्त हो जावे, नेत्रोंका रंग लाल तथा पीला पड जावे, मुखसे टूटते हुए (अस्पष्ट) अक्षर निकलें और शरीर पीला पड जावे तो पित्तमूर्छा जानो.

कफमूर्छा लक्षण—प्रथम आकाश मेघाच्छादितसा दीख पडे, पश्चात् मूर्छा आवे, फिर कुछकाल पश्चात् संज्ञा प्राप्त होवे, शरीरपर जान पडे कि मैंने कुछ चर्म या गीला वस्त्र बोझलसा ओढा है, मुखसे लार गिरने लगे, बार बार थूके तो कफमूर्छा जानो.

सन्निपातमूर्छा लक्षण— उक्त तीनों दोषोंके लक्षणयुक्त हों तो सन्निपात-मूर्छा जानो. सो सन्निपातकी मूर्छा मनुष्यको अपस्मार (मिरगी) के समान गिरा देती है परन्तु अपस्मारमें रोगीकी बीभत्स (भयानक) चेष्टा हो जाती है और सन्निपातमूर्छामें यह दशा नहीं होती. यह मूर्छा ६ प्रकारकी मूर्छासे भिन्न होनेसें मूर्छामें नहीं गिनी जाती.

रक्तजामूर्छा लक्षण— जिसको रक्त देखतेही अथवा दुर्गन्धमात्रसे पृथ्वी आकाशभरमें अन्धकाररूप दृष्टि पडे, फिर घबराकर मूर्छा हो आवे, नेत्र तन जावें और भली भांति श्वास न आवे तो रक्तमूर्छा जानो.

मद्यमूर्छा लक्षण— अधिक मद्यपानसे मनुष्य कुछका कुछ बकता हुआ धरणीपर गिर पडे, संज्ञाहीन होके (जब तक मद न उतर जावे) हाथ पैर पीटता हुआ भूमिपर पडा रहता है और तृषा अधिक लगे तो मद्यमूर्छा जानो.

विषमूर्छा लक्षण–शरीर कम्पित हो, निद्रा अधिक आवे, प्यास विशेष लगे, संज्ञाहीन हो जावे, मुख काला पड जावे और अतिसार होकर भोजनसे अरुचि होजावे तो विषमूर्छा जानो.

विशेषतः– मनुष्य जिस प्रकार मूर्छामें अचेत हो जाता है तैसेही भ्रम, तंद्रा, निद्रा और सन्यासमेंभी संज्ञाहीन हो जाता है परन्तु इन चारोंके लक्षण मूर्छासे भिन्न रहते है अतएव जुदे दर्शावेंगे तथापि ये मूर्छाके भेदही है.

भ्रमलक्षण– रजोगुण और वात पित्तके संयोगसे भ्रम होता है.

तन्द्रालक्षण–तमोगुण और बातकफके संयोगसे तंद्रा होती है.

निद्रालक्षण–तमोगुण और कफके मिलापसे प्राणियोंका मन और १० सों इन्द्रियां खेदित होकर अपने अपने विषयोंको त्याग कर देती हैं तब निद्रा आती है.

संन्यास लक्षण– त्रिदोषके बेगसे मनुष्यकी नाडी, देह और मनकी क्रिया नष्ट होकर निर्बल पुरुषको संन्यासरोग उत्पन्न करता हैं, तब वह पुरुष पीडित होकर, काष्ट तथा मृतक सदृश पडा रहता है. इस रोगपर वेगही चिकित्सा करना चाहीये नहीं तो प्राण नाशमें कुछ विलंब नहीं है.

मदात्यय रोगोत्पत्ति– अति विरुद्ध नियमसे मदिरा ( मद्य, दारू, ब्रांडी, शराव ) पानकरो तो मदात्ययरोग उत्पन्न होता है. क्योंकि जो गुणागुण विषमें हैं वही मद्यमें होते हैं, मद्य जो युक्तिसे सेवन किया जावे तो अमृतके समान लाभदायक होता तथा अयुक्तीसे पीवे तो विषसदृश प्राणनाशक होता है जैसे नियतसमय पर परिमित आहार करना अत्योपयोगी होकर रोगरहित बल वीर्ययुक्त रखता परंतु कुसमयपर अप्रमाणसे भक्षितान्न रोगकारक तथा शरीरनाशक होजाता है. यथावत् विष और मद्यभी युक्तिसे रक्षक तथा अयुक्तीसे भक्षक ही होता है. अतएव जिन लोगोंकी जातिमें ममद्यपानसे कुछ दोष न होवै तो वे निम्न लिखित शास्त्रोक्त नियमोंसे पानकरें तो मदात्ययरोग न होके शरीर आरोग्य रहेगा. परंतु जिन वर्णोंके लिये मद्यपान शास्त्रादिसे वर्जित है वे उसके गुणोंकी और ध्यानदेके कदापि इच्छा न करें न तो स्वधर्मसे च्युत होकर अन्तमे नर्कवासी होंगे अतएव

मनुजी आदि ऋषिमुनियोंकी आज्ञा है कि जो मद्यपान करनेवालेभी मद्यका त्याग करतें तो महापुन्यफलके विभागी होकर स्वर्ग गामी होवेंगे.

मद्यपानविधि— प्रातःकाल स्नानादिक करके प्रसन्न चित्तसे २ टकेभर उत्तम मद्यपान करो, नंतर मध्यानकालमें घृत शर्करादि उत्तम व्यंजनके संसर्गसे ४ चार टकेभर मद्य पिओ, तदनंतर सायंकालकोभी प्रथम प्रहरमें भोजनके साथ ८ आठ टकेभर पिओ और उत्तमोत्तम फल, दुग्ध, मलाई आदि पदार्थ भक्षण करो तो सदा तरुण रहकर काम, तेज, बल, बुद्धि, स्मृति, और हर्षादिक नित्यप्रति वृद्धिंगत होंगे और जो अन्यथा पिओगे तो बल, बुद्धि, तेज, स्मृति, हर्ष, लज्जा और संज्ञाहीन तथा मदात्यय रोग, आलस्य, प्रलापादिसे पूरित होकर शरीरका नाश हो जावेगा.

मदात्ययरोगोत्पत्ति—क्षुधित, सर्वदा अनियमित काल, प्रमाणहीन, आधिक्यता, क्रोध, भय, तृषा, श्रम, निर्बलता, मलमूत्रका वेग, खट्टे पदार्थ, और उष्णतासे पीडित दशा इन बातोंके मिलापसे जो मदिरा सेवन करोगे तो मदात्यय, परमद, पानाजीर्ण तथा पानविभ्रमरोग होंगे. मदात्ययरोगके चार भेद है १ वात, २ पित्त, ३ कफ, और ४ सन्निपात मदात्यय.

वातमदात्यय लक्षण— हिचकी, श्वास, शिरोकम्प, पार्श्वशूल, निद्राभाव और अति प्रलाप (अनर्थ वाक्य कथन) करे तो वातमदात्यय जानो.

पित्तमदात्यय लक्षण— अति तृषा, दाह, ज्वर, पसीना, मोह, अतिसार होवे, चक्कर आवें और शरीर हरा पडजावे तो पित्तमदात्यय जानो.

कफमदात्यय लक्षण— अरुचि, खट्टा तथा सलोने भक्षित पदार्थ युक्त वमन हो, तन्द्रा, शरीरमें भारीपन हो तो कफमदात्यय जानो.

सन्निपातमदात्यय लक्षण— जिसमें वात, पित्त, कफ तीनोंके लक्षणमिश्रित हों उसे सन्निपातमदात्यय जानो.

परमदरोग लक्षण—पीनस, सीस, अंगमें पीडा, शरीरमें भारीपन मुखस्वादका नाश, मलमूत्रकी रुकावट, तंद्रा, अरुचि, प्यास हों तो परमदरोग जानो.

पानाजीर्ण लक्षण— पेट अधिक फूले, वमन हो, दाह उठे, और अजीर्ण हो तो पानाजीर्ण जानो.

पानविभ्रमरोग लक्षण– शीस, हृदय, अंगमें पीडा हो, कफ थूके, मुखसे धूंआं निकले, मूर्छा हो, वमन आवे, ज्वर चढे और मद्य तथा मिठाई पर अरुचि हो तो पानविभ्रमरोग जानो.

मदात्ययके असाध्य लक्षण– रोगीका नीचेका ओष्ट लटक जावे, शरीर उपर ठंडा होजावे, हृदयमें अति दाह हो, मुखमें तेलकी गंध आवे, जीभ, दांत काले पडजावें. नेत्र काले, लाल, या पीले पडजावें, हिचकी आवे, ज्वर चढे, वमन होवे, पार्श्वशूल उठे, खांसी चले और चकर आवे तो असाध्य मदात्यय रोग जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे तृषा-मदात्ययादिरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥ १४ ॥

॥ दाह-उन्माद ॥

शरौषधीधवे चास्मिन् तरंगे हि यथाक्रमात् ।
दाहोन्मादरुजोर्नूनं निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–अब हम इस १५ वें तरंगमें दाह और उन्मादरोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं ॥ १ ॥

दाहरोगोत्पत्तिकारण– १ पित्त, २ दुष्ट (विकारी) रुधिरवृद्धि, ३ कोठेमें शस्त्रादिकी चोट, ४ मद्यादिपान, ५ तृषावरोध, ६ धातुक्षय, ७ और मर्मस्थानमें प्रहार लगनेसे दाहरोग उत्पन्न होता है. यह रोग उक्त सात कारणोंसे उत्पन्न होकर उक्त सातही विभागोंमें विभागित किया गया है.

१ पित्तदाह लक्षण– सर्व लक्षण रोगीके शरीरमें पित्तज्वरकी नाईं उपस्थित हों तो पित्तदाह जानो.

२ रुधिरवृद्धिदाह लक्षण–सर्व शरीरमें दाह लग जावे, शरीरसे धुवां निकले, शरीर और नेत्रोंका वर्ण ताम्र सदृश (ताम्बेके समान) लाल हो जावे, मुखसे रक्तकी गंध आवे, और सब अंग अग्निसमान जलने लगे तो दुष्ट रुधिरवृद्धिदाह जानो.

३ कोठेमें शस्त्रकी चोटसे उत्पन्न दाह लक्षण–कोठा रुधिरसे भरा रहे, शरीरमें अति दुःसह दाह उठे तो उक्तदाह जानो, यह असाध्य प्राणान्तक है.

४ मद्यपानदाह लक्षण– मद्यपानकी उष्णता पित्त और रक्तसे बढाई हुई त्वचामें प्राप्त होके भयंकर दाह उत्पन्न करती है, जिससे सर्व शरीर अत्युष्ण हो जाता है इसे मद्यकी दाह जानना चाहिये.

५ तृषावरोधदाह लक्षण– प्यास रोकनेसे शरीरकी जलसम्बन्धी द्रव (रस-रक्त आदि) धातुऐं क्षीण होकर पित्तकी उष्णता बढ जाती है इस लिये शरीर भीतर बाहरसें दग्ध होकर मनुष्य अचेत हो जाता है तब उसका कंठ, तालुआदि सूखकर जीभ बाहर निकलके तडफडाने लगता हैं. इन लक्षणोंसे युक्त हो तो तृषावरोधदाह जानो.

६ धातुक्षयदाह लक्षण–रोगी मूर्छा, तृषायुक्त होकर सूक्ष्म स्वर हो जावे और उठने बैठने तथा कार्यशक्ति न रहे तो धातुक्षयदाह जानो. इस दाहसे बचनाभी दुर्लभही है.

७ प्रहारजदाह–शिर, हृदय, मूत्राशय आदि मर्मस्थानमें चोट लगकर दाह उत्पन्न हो तो प्रहारजदाह जानो.

दाहके असाध्य लक्षण–उपरसे शरीर शीतल और रोगीको हृदयान्तरमें अत्यंत दाह हो तो असाध्य जानो.

उन्मादरोगोत्पत्तिकारण–प्रकृति विरुद्ध पदार्थ, अपवित्र भोजन, और धतूरा, भांग विषादि भक्षण, देवता, गुरु, ब्राह्मण, तपस्वी, राजा आदिका अपमान, भय तथा हर्षकी आधिक्यतासें मनुष्यका मन बिगडकर वातादि दोषयुक्त हो जाता है. तब मनुष्यकी स्मरणशक्ति नाश होकर वह उन्मत्त (मदयुक्त, दिवाना, गहला, पागल, खपती) हो जाता है.

उन्मादरोगभेद–यह रोग ६ प्रकारका होता है. अर्थात, १ बात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ शोक, ६ विषोन्माद.

उन्मादस्वरूप–क्षीण पुरुषके विरुद्ध आहारसें त्रिदोष दूषित होकर बुद्धिके स्थान (हृदय)को बिगाड देते हैं. और मन प्रवाहणी नाडियोंमें प्राप्त होकर मनुष्यके मनको मोहित (कार्याकार्यके विचार रहित=अस्थिर)कर देते हैं वह पुरुष (पागल) उन्मत्त कहाता हैं.

उन्मादरोगका पूर्वरूप–बुद्धि ठिकाने न रहे, शरीरका पराक्रम नाश

जावे, धैर्यता जाती रहे, दृष्टि स्थिर न रहे, भली भांति वार्तालापन कर सके, हृदय सूना पड जावे तो अनुमान करो कि इसे उन्मादरोग होगा.

१ वातोन्माद लक्षण—रूखी या शीतल वस्तु भक्षण और विरेचनकी विशेषतासें धातु क्षीण होकर बादी बढ जाती है तब उस मनुष्यका हृदय बिगडकर स्मरण तत्काल नाश हो जाता है. जो वह मनुष्य निष्कारणही हंसे, नाचे, गावे, रोवे, हाथ और मुखसे बानरकी नाई चेष्टा दिखावे, शरीर कठोर, काला, या लाल हो जावे और भोजन करके पाचन हुएपर यह रोगभी बढे तो वातोन्माद जानो.

२ पित्तोन्माद लक्षण— अजीर्णपर भोजन करने तथा कडवा खट्टा या उष्णपदार्थ खानेसे बढा हुआ पित्त हृदयको बिगाडकर उन्मादरोग उत्पन्न करता है. तब वह मनुष्य किसीकी बात नहीं मानता, नग्न हो जाता, मारने लगता, इधर उधर भागता, शरीर पीला पडजाता, उष्ण वस्तुकी इच्छा करता और मुख पीला पडजाता है. जिस रोगीके ये लक्षण हो उसे पित्तोन्माद जानो.

३ कफोन्माद लक्षण— जो मनुष्य अधिक खाकर श्रम नहीं करते उनके पित्तसहित कफ बढकर हृदयमें प्रवेश होजाते हैं. और चित्तके बिगाडसे बुद्धि, स्मृति नष्ट करके मनुष्यको उन्मत्त कर देते हैं. जो रोगी अल्प भाषण करे, क्षुधारहित होजावे, निद्रा, स्त्री और एकान्त स्थान अति प्रिय लगे, वमन हो, बलहीन होजावे और मुखादिक श्वेत होजावे तो कफोन्माद जानो.

४ सन्निपातोन्माद लक्षण— उक्त तीनों (वात, पित्त, कफ) दोषोंके लक्षण होंतो सन्निपात (त्रिदोष) उन्माद जानो.

५ शोकोन्माद लक्षण— राजा, प्रबल शत्रु, चोर अथवा सिंहादिक भयंकर जीवोंका भय— धन, बन्धु (पुत्र कलत्र भ्रातादि)का विछोह, मैथुनके लिये इच्छित स्त्रीकी अप्राप्ति और काम शान्तिमें बाधा पडनेके कारणसे शोक और दुःख होकर उन्मादरोग होता है. जो रोगी विचित्र वार्ते करने लगे, मनका अभिप्राय यथार्थरूपसें प्रदर्शित करनेकी संज्ञा न रहे. कभी गावे कभी हंसे और कभी रोवे तो शोकोन्माद जानो.

६ विषोन्माद लक्षण– नेत्र लाल हों. दीन होजावे, शरीरका बल तथा इन्द्रियोंकी क्रांति नाश होजावे और मुख श्याम पडजावे जो ये लक्षण हों तो विषभक्षणका उन्माद जानो. इससें बचना दुर्लभ है.

उन्मादरोगके असाध्यलक्षण– जो रोगी नीचा मस्तक या ऊंचा मुख रखे, शरीरका बल और मांस नाश होजावे, निद्रा न आवे वरन जागताही रहे तो वह उन्मादरोगी मर जावेगा.

इति षड्विधि उन्मादरोगनिदानम् समाप्तम् ।

अब हम इसके अनंतर भूतोन्मादादि ब्रह्मराक्षसोन्मादपर्यंत १६ विशेष उन्मादोंका निदान लिखते हैं.

१ भूतोन्माद लक्षण– भूत लगेहुए रोगीकी वाणी, चेष्टा, पराक्रम और ज्ञानाज्ञान यथास्थित न रहकर विचित्र ढंगकाही रहता है परंतु मनुष्यत्वसे कुछ विरुद्धही नहीं होजाता है.

२ देवोन्माद लक्षण– जो रोगी सब बातोंसे संतुष्ट, पवित्र और ब्रह्मण्य (शीलस्वभावादि ब्राह्मणके नवगुण युक्त) रहे, सुन्दर पुष्पोंकी माला और सुगंधित (गंध-चंदनादि) पदार्थ धारण करता रहे, नेत्र नमींचे, विनपढे भी संस्कृत गद्य पद्य भाषण श्लोक और वार्ता करने लगे, शरीरका तेज बढता जावे और अन्य लोगोंको इच्छित वरदान देने लगे तो शरीरमें देवता प्रवेश होनेका उन्माद जानो.

३ आसुरोन्माद लक्षण–रोगीके शरीरमें पसीना न निकले, ब्राह्मण, गुरु, देवतामें दोष बतावे, दृष्टि कुटिल हो जावे, किसी प्रकारके कहनेका भय न लगे, कुमार्गमें प्रीति बढे, किसी वस्तुसे तृप्ति न हो, भोजनादिमें दुष्टात्मा हो तो असुर प्रवेशका उन्माद जानो.

४ गंधर्वोन्माद लक्षण–दुष्टात्मा हो पुष्प बाटिकामें निवास स्वीकार करे गाना, बजाना, नृत्यमें प्रीति हो, अल्प भाषी हो और आचार[१]में मन लगा रहे तो गन्धर्वोन्माद जानो.

---

१ शिष्टजन महात्माओंने जो रीतिस्वीकार करा सो आचार कहाता है.

५ यक्षोन्माद लक्षण[१]– नेत्र लाल हों, मलीन तथा रक्तवस्त्र धारण करे, अपना अभिप्राय दर्शित न करे, तेजयुक्त हो, शीघ्रतासे चले, सहनशील हो, और "किसको क्या दूं" ऐसा कहता रहे तो यक्षोन्माद जानो.

६ पितृजोन्माद लक्षण– जो मनुष्य दर्भ (डाभ=एक प्रकारका घास) पर अपने पित्रोंको सर्वदा पिंड देता रहे, शांत स्वाभाव हो, दाहिने कांधेपर अंगोछा धरके पित्रोंके अर्थ तर्पण करता रहे, सदा पितृ भक्तिमें लगा रहे और मांस, तिल, गुड, क्षीर आदिके भक्षणकी इच्छा रखे तो पितृजोन्माद जानो.

७ सर्पोन्माद लक्षण[२]–सर्पग्रह ग्रहीत मनुष्य कभी सर्पके सदृश लोट जावे कभी सर्पके सदृश जीभसे गलफरा चाटे, क्रोध करे, गुड, दूध, मधु, क्षीर, इनके भक्षणकी इच्छा करे तो सर्पोन्माद जानो.

८ राक्षसोन्माद लक्षण– जो मांस, रक्त, तथा मद्यकी इच्छा करे, निर्लज्जता, निष्ठुरता, शूरता, क्रोध, अपवित्रता, बलकी विशेषता हो और रात्रिमें विचरता रहे तो राक्षसोन्माद जानो.

९ पिशाचोन्माद लक्षण–ऊपरको हाथ किये रहै, मन मानी बकवाद करे, शरीरमें दुर्गंधि, अपवित्रता, लालच, चंचलता रहे, बहुत खावे, उद्यान (निर्जन वन)में निवासकी इच्छा करे, रोता हुआ नाना प्रकारकी चेष्टा करे तो पिशाचोन्माद जानो.

सूचना–ये नवों उन्माद निदान गंथोंसें लिखे हैं अब इसके आगे पूर्वामृतसागरसें लिखते हैं.

१ सतीदोषोन्मादलक्षण– निश्चल मन न रहे, निस्सन्तान हो जावे, सतीका इतिहास (प्राचीन कथा) सुननेकी रुचि करे, मौन हो जावे, यदि बोले तो वरदान देवे, पवित्रतापूर्वक उत्तम वस्तुओंमें मन लगावे तो सतीदोषोन्मादलक्षण जानो.

---

१ यक्षोन्माद और गन्धर्वोन्मादके लक्षण पूर्वामृतसागरमें समानही लिखे थे परन्तु वे परस्पर जुदे हैं अत एव वह हमने यक्षोन्मादलक्षण माधवनिदानसे लिखे हैं.

२ सर्पोन्मादभी पूर्वामृतसागरमें नहीं था इसलिये माधवनिदानसे लिखे है.

२ क्षेत्रपालदोषोन्मादलक्षण– मुख और नाकसे रुधिर गिरे, मस्तकमें स्मशानकी भस्म डाले, खोटे स्वप्न देखे, पेट और सन्धियोंमें पीडा हो, चित्त स्थिर न रहे तो क्षेत्रपालदोषोन्माद जानो.

३ देव्युन्मादलक्षण– पक्षाघात हो शरीर और रुधिर सूख जावे, मुख और हाथपाव टेढे हो जावे, क्षीण देहि हो जावे, और स्मरणका अभाव हो जावे तो देव्युन्माद जानो.

४ कामनउन्माद लक्षण– कांधे और मस्तक भारी रहें, मन स्थिर न रहे, क्षीणाङ्ग हो जावे, नाक, आंख, हाथ और पांवमें दाह हो, वीर्य न्यून पड जावे, शरीर सूखकर सुई चुभानेके समान पीडा हो तो कामन (जादू) का उन्माद जानो.

५ शंकिनी डंकिनी दोषोन्माद लक्षण– सर्वांगमें पीडा हो, नेत्र बहुत दूखे, मूर्छा हो, शरीर कंपे, रोवे, हंसे, प्रलाप करे, भोजनमें अरुचि, स्वरभंग हो, शरीरका बल और क्षुधा नाश होजावे, ज्वर चढे, चक्कर आवे तो शंकिनी डंकिनी (डाकन) दोषोन्माद जानो.

६ प्रेतोन्माद लक्षण– जो मनुष्य प्रातःकालही घरसें उठउठ कर भागे, कुवाच्य भाषण करे, बहुत चिल्लावे, शरीर कंपे, रोने, खाने पीनेसे अभाव हो और लम्बी श्वासे छोडे तो प्रेतोन्माद जानो.

७ ब्रह्मराक्षसोन्माद लक्षण– देव, ब्राह्मण, गुरुसें द्वेष रखे, आपस्वयं वेदवेदान्तादिसें ज्ञाता हो, स्वयं अपने शरीरको पीडितकरै, पर नाश न करे तो ब्रह्मराक्षसोन्माद जानो.

सूचना– ये सातों उन्माद पूर्वामृतसागरसे लिखे हैं परंतु माधवनिदानमें नहीं लिखे गये हैं.

उन्मादरोगके असाध्य लक्षण– नेत्र फटेसे होजावें, सदा इधर उधर घूमता रहे, मुखसे फेन गिरे, निद्रा अधिक आवे, खडे खडेही कम्प आकर गिर पडे, तो असाध्योन्मादरोग जानो.

---

१ देव्युन्माद– देवीका उन्माद जिसे मारवाडमें बिजासनी देवी अथवा मावल्यां भी कहते हैं.

उन्माद प्रवेशकाल– १ उक्त लक्षणयुक्त उन्माद पूर्णमासीको होतो देवोन्माद, संध्यासमय होतो भूतोन्माद तथा असुरोन्माद, अष्ठमीको होतो गन्धर्वोन्माद, प्रतिपदाको होतो यक्षोन्माद, अमावस्याको होतो पित्रोन्माद, पंचमीको होतो सर्पोन्माद, चतुर्दशीकी रात्रिको होतो राक्षसोन्माद तथा पिशाचोन्माद जानो.

उन्मादनिवृतिकाल– जो जो तिथी और समय जिस जिस उन्मादके प्रवेशका कहा गया है वही वही काल उनके बलिप्रदान तथा शमनकाभी जानना चाहिये.

शंका– आपने देवोन्मादादिमें यह दर्शित किया कि मनुष्यके शरीरमें उनका प्रवेश होता है तो शरीरमें समाते हुए वे हमको दिखते क्यों नहीं हैं, प्रवेश होतो दिखना चाहिये.

समाधान– सुनियेगा! जिस प्रकार दर्पण या जलमें तुम्हारे शरीरका प्रतिबिम्ब, शरीरमें शीतोष्णता और कान्तिमणि तथा सूर्यमुखी काचमें सूर्यकिरणें प्रवेश होते दृष्टि नहीं पडती है परंतु यथार्थमें प्रवेशित होकर अग्निको उत्पन्न करती हैं और तुम्हारे शरीरका बिम्बभी तुम ज्योंका त्यों देखते हो. तिसीप्रकार देवग्रहादिभी मनुष्यके शरीरमें प्रवेश होते हुए नहीं दिखते, परंतु प्रवेश होके उन्मादको उत्पन्न कर नाना प्रकारकी चेष्टा दिखाते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे दाह-उन्मादरोगलक्षणनिरूपणं नाम पंचदशस्तरंगः ॥ १५ ॥

## ॥ अपस्मार-वातरोगाः ॥

अपस्मारस्य रोगस्य वातजानां यथाक्रमात् ।
रसौषधीशे भङ्गेस्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस १६ सोलहवें तरंगमें मृगी और वादीसे उत्पन्न होनेवाले रोगोंका निदान यथाक्रमसें लिखते हैं.

अपस्मार ( मृगी ) रोगोत्पत्ति कारण– चिन्ता शोक आदिसे कुपित हुए वात पित्त कफ हृदयकी नसोंमें प्राप्त होके स्मरणमात्रको नाश कर देते हैं इस दशाको लोकमें मृगीरोग कहते हैं.

अपस्मार भेद—यह रोग चार प्रकारका है. अर्थात्—१ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, और ४ सन्निपातज.

अपस्मार पूर्वरूप— हृदय कम्पे, शून्य होजावे, पसिना निकले, एक ध्यान लगजावे, मूर्छा आजावे, निद्रा न आवे और ज्ञान नाश हो जावे तो अनुमान करो कि इस मनुष्यको अपस्माररोग उत्पन्न होगा.

अपस्मार सामान्यरूप— अन्धकारमें प्रवेश हुआ सा जान पडे, नेत्र घूम जावे, शरीर झटके (हिले), हाथ पैर और अंग फेकता हुआ मूर्छित होकर धरणीपर गिर पडे तो अपस्मार प्राप्त हुआ जानो.

१ वातापस्माररोगलक्षण— कम्प आवे, दांत किरकिरावे, मुखसें फेन गिरे, श्वास वेगसें चले, काले पीलेसे कुछ आकारसे रोगीकी दृष्टिमें आवे तो बादीकी मृगी जानो.

२ पित्तापस्मारलक्षण—मुखसें पीला फेन गिरे, त्वचा, मुख, नेत्र पीले पड जावे, तृषा अधिक लगे, सर्वांग उष्ण हो जावे, पीला पीला सा दीखे और समस्त जगत मात्रमें अग्नि व्याप्त देखे तो पित्तकी मृगी जानो.

३ कफापस्मारकलक्षण— मुखसे श्वेत फेन गिरे, शरीरकी त्वचा नेत्र, मुख श्वेत हो जावें, जाडा लगे, रोमांच हो आवे और सर्व जगत मात्रमें श्वेतही श्वेतसें पदार्थ दृष्टि पडे तो श्लेस्मिकापस्मार जानो.

४ सन्निपातापस्मारलक्षण—पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपात (त्रिदोषज) मृगी जानो.

असाध्यापस्मारलक्षण— भौंहें चढ जावें, और नेत्र फिर जावें तो असाध्यापस्मार जानो, यह रोगी मर जावेगा.

अपस्मार प्राप्तकाल निर्णय—बारहवें दिन वातापस्मार, १५ वें दिन पित्तापस्मार और ३० वें दिन कफापस्मार प्राप्त होता है. परन्तु उक्त नियमसें कुछ न्यूनाधिक कालमेंभी प्राप्त हो सक्ती हैं. जिस प्रकार नियत कालमें उत्पन्न होनहार वनस्पति अन्नादिभी आगे पीछे उत्पन्न हुआ करते है उसी प्रकार मृगीभी कभी कभी अपने सूचित कालसें आगे पीछे होती है परञ्च उसका समय पूर्ण विपर्यय नहीं होता है.

वातव्याधि रोगोत्पत्ति कारण— कसैले, कडुवे, तीक्ष्ण, रूखे पदार्थ खानेसें, स्वल्प, शीतल (ठंडा वासा) भोजन करनेसें, परिश्रम, मैथुन, धातु क्षीणता, शोक, भय, मांस क्षीणता, वमन, विरेचन, आमदोष, मलमूत्रवेगावरोध, वृद्धपन, लंघन, जलक्रीडा और प्रहार इनकी विशेष प्रबलतासें, तथा वर्षाऋतु व तीसरे प्रहर व १ प्रहर रात्रि शेष रहनेके समय बलवान वायु कुपित होनेसें शरीरकी खाली नसोंमें प्रवेश हो होकर (एक तथा सर्वांगमें रहनेवाले) रोगोंको उत्पन्न करती है. जिनके निम्न लिखित ८४ चौरासी भेद हैं.

| शुद्धनाम. | व्यवहारीनाम. |
|---|---|
| १ शिरोग्रहरोग | मस्तकका दुखना. |
| २ अल्पकेशरोग | छोटे बाल रहना. |
| ३ जृंभादिकरोग | अधिक जमुहाई आना. |
| ४ हनुग्रहरोग | ठुड्डी न हिलना. |
| ५ जिव्हास्तंभरोग | जीभ न हिलना. |
| ६ गद्गदरोग | अटककर बोलना. |
| ७ अल्पभाषणरोग | धीरेधीरे बोलना. |
| ८ मूकरोग | गूंगापन. |
| ९ प्रलापरोग | कुछका कुछ बोलना. |
| १० वाचालरोग | अधिक बोलना. |
| ११ निरसरोग | जिव्हाका स्वाद नाश हुआ. |
| १२ बधिररोग | बहिरापन. |
| १३ कर्णनाद | कानोंमें घरघर शब्द होना. |
| १४ त्वक्शून्यरोग | शरीरको स्पर्शज्ञान न रहना. |
| १५ अर्दितरोग | मुख एक ओर टेढा होना. |
| १६ मान्यास्तंभरोग | ग्रीवा न मुडना. |
| १७ बाहुशोषरोग | भुजा सूख जाना. |
| १८ अपबाहुकरोग | भुजा न मुडना. |
| १९ चर्चितरोग | * |
| २० विश्वाचीरोग | उंगलियोंके नीचे खुजाल. |
| २१ ऊर्ध्ववातरोग | अधिक डकार आना. |
| २२ आध्मानरोग | अफरा (पेट फूलना) |
| २३ प्रत्यध्मानरोग | नाभिसे पेटतक फूलना |
| २४ वाताष्ठीलारोग | नाभिके नीचे गुठली होना. |
| २५ प्रत्यष्ठीलारोग | नाभिके नीचे पीडायुक्त गुठली. |
| २६ तूनीरोग | गुदा और लिंगकी पीडा. |
| २७ प्रतितूनीरोग | मूत्राशयकी पीडा. |
| २८ विषमाग्निरोग | अनियमित पाचनशक्ति. |
| २९ आट्टोपरोग | पेटकी नसोंका तनाव. |
| ३० पार्श्वशूलरोग | पसली दुखना. |
| ३१ पृष्ठशूलरोग | पीठकी पीडा. |
| ३२ बहुमूत्ररोग | अधिक मूत्र होना. |
| ३३ बस्तिवातरोग | मूत्र रुक जाना. |
| ३४ मलदृढता | कठिन मल होजाना. |
| ३५ मलावरोध | मल न उतरना. |
| ३६ गृध्रसीरोग | |

| शुद्धनाम. | व्यवहारीनाम. |
|---|---|
| ३७ कालायखंजरोग | कंपितगति होना. |
| ३८ खंजरोग | लंगडापन. |
| ३९ पंगुरोग | पांगलापन. |
| ४० क्रोष्टशीर्षकरोग | घुटनेकी पीडा. |
| ४१ खल्लीरोग | पांव हाथ मुडजाना. |
| ४२ वातकंठकरोग | मुसओंकी पीडा. |
| ४३ पादहर्षरोग | झिनझिनी. |
| ४४ पाददाहरोग | पावोंमें जलन पडना. |
| ४५ आक्षेपरोग | शरीर डुगना(डुलना) |
| ४६ दंडकरोग | काष्टसदृश. |
| ४७ बातक्षेपरोग | बातसे शरीर डुगना. |
| ४८ पित्ताक्षेपरोग | पित्तसे शरीर डुगना. |
| ४९ दंडापतानकरोग | काष्टसमान पड रहना. |
| ५० अभिघाताक्षेपक-रोग | शरीर डुगते चोटसी लगना. |
| ५१ अंतरायामरोग | नेत्रोंका खिचाव. |
| ५२ बाह्यायामरोग | पीठकी नेसोंका खिचाव. |
| ५३ धनुर्वात | शरीर कमानके समान हो जाना. |
| ५४ कुब्जकरोग | कुवडापन. |
| ५५ अपतन्त्ररोग | शरीरके झुकावसहित नेत्र फटना. |
| ५६ अपतानरोग | केवल नेत्र फटना. |
| ५७ पक्षाघातरोग | लकुवा मार जाना. |
| ५८ अभिलाषिकरोग | * |
| ५९ कम्परोग | शरीर कंपना. |
| ६० स्तम्भरोग | शरीर जकडना. |
| ६१ व्यथारोग | शरीर चटकना. |
| ६२ लोदरोग | * |
| ६३ मेदरोग | मेदका वढाव. |
| ६४ स्फुरणरोग | अंग फरकना. |
| ६५ रुक्षता | रूखापन. |
| ६६ श्यामतारोग | कालापन. |
| ६७ क्षीणतारोग | दुबलापना. |
| ६८ शीतलतारोग | शरीर ठंडा रहना. |
| ६९ रोमाञ्चरोग | पुलकित शरीर होना |
| ७० अङ्गमर्दरोग | हड फूटन होना. |
| ७१ अंगबिभ्रमरोग | अंगभ्रांति. |
| ७२ स्नायुसंकोच | नसोंका सिमिट जाना |
| ७३ अंगशोषरोग | शरीरसूख जाना. |
| ७४ भयरोग | डरना. |
| ७५ उन्मादरोग | पागलपन. |
| ७६ मोहरोग | असावधानी. |
| ७७ निद्रानाश | नींद न आना. |
| ७८ स्वेदभाव | पसीना न निकलना. |
| ७९ बलक्षीणरोग | निर्बलता-नाताकती. |
| ८० वीर्यनाशरोग | धातु क्षीण होना. |
| ८१ रजोधर्मरोग | स्त्रीको मासिकरज-प्राप्ति. |
| ८२ गर्भनाशरोग | गर्भगिर जानो. |
| ८३ अश्रमश्रम | बिनाश्रम थकजाना |
| ८४ श्रमनाश | थकावट दूर होना. |

**ये चौरासी प्रकारके वातरोग जिनमेंसे मुख्य मुख्यके निदानलक्षण आगे लिखते हैं.**

**शिरोग्रहरोग लक्षण**– कुपित हुई वात, रक्तमें प्रवेश होके मस्तकको

* चर्चित, अभिलाषिक और लोद इन तीनों रोगोंके व्यवहारी नाम नहीं पाये जाते हैं.

धारण करनेवाली नसोंको रूखी, पीडायुक्त और काली करके मस्तकको जकड देती हैं इसे शिरोग्रहरोग कहते हैं. यह असाध्य है.

अल्पकेशरोग लक्षण– रोमकूपस्थ वायु कुपित होके उस स्थान (बालों के रंध्र=छिद्र)की नसोंको निर्बल कर देती है इसलिये वहां थोडे बाल निकलते हैं इसे अल्पकेशरोग कहते हैं. इस रोगमें मुख्य कारण निर्बलताही है.

जृम्भाधिकरोगलक्षण– प्रथम मुखकी एक श्वासको मुखहीमें पीकर नंतर उसी श्वासको मुखद्वारा बाहर निकालनेको जमुहाई कहते है और जमुहाईकी बहुतायतको जृम्भाधिक रोग कहते हैं.

हनुग्रहरोग लक्षण– दतौनकी चीरसे जिव्हाको अधिक घिसनेसें अधिक चवैना खाने और किसी प्रकार चोट लगनेसें डाढीकी जडमें रहनेवाला वायु कुपित होके मुखको खुला या मुंदाही रख देती तब उस मनुष्यके खाने बोलनेमें अति कष्ट पडता है इसे हनुग्रहरोग कहते हैं.

जिव्हास्तंभरोग लक्षण– शब्दको प्रवृत करनेवाली नसोंमें रहनेवाली वायु कुपित होनेसे जीभको खीचके स्थिर (जैसीकीतैसी) रख देती है तब मनुष्य खाने, पीने बोलनेसें असमर्थ होजाता है इसे जिव्हास्तंभरोग कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे अपस्मारवातव्याधिरोगलक्षणनिरूपणं नाम षोडशस्तरंगः ॥ १६ ॥

॥ वातोद्भवरोगाः ॥

**भंगे चास्मिँलिख्यते सप्तचन्द्रे रोगाणां वै कारणं वातजानाम् ।**
**मान्यान् ग्रंथान्सुश्रुतादीन् विचार्य ज्ञाने येषां सन्ति वैद्यास्सुवैद्याः १**

सुपूज्यापाठोवा ॥ शालिनीवृत्तमिदम् ॥

भाषार्थ– अब हम इस सत्रहवें तरंगमें वातरोग (बादीसे उत्पन्न होनेवाले रोगों)का निदान माननीय सुश्रुतादि ग्रंथोंको विचारके लिखते हैं जिन वातरोगोंका पूर्ण ज्ञान होनेसे वैद्य सुवैद्य (सुन्दर वैद्य, सब वैद्योंमें

---

१ इस रोगका निदान पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखा है, परन्तु हमने "स्थाननामानुरूपैश्च लिंगैः शेषान् विनिर्दिशेत्" इस श्लोकके आशयसे लिख दिया है.

पूज्य, सत्कारपात्र) होजाता है. किम्वा जिन सुश्रुतादि प्राचीन ग्रंथोंके बोधसे वैद्य सुवैद्य होजाता है.

त्वचा शून्यरोग लक्षण– जिस पुरुषको शीत, उष्ण, कोमल, कठोर आदिका स्पर्श ज्ञान नष्ट होजावे उसे त्वचा शून्यरोग जानो.

आर्दितरोग लक्षण– अत्यन्त दीर्घशब्दसे बोलने, कठिन पदार्थ खाने, जमुहाई लेते समय हंस देने, उंचीनीची गर्दन करके सोने, मस्तकपर अधिक बोझा उठाने इत्यादि कारणोंसे मस्तक, नाक, ओंठ, ठुड्डी, ललाट, और नेत्रकी संधियोंमें रहनेवाली वायु कुपित होनेसें मुखको किसीएक ओर टेढा करके अर्दितरोग उत्पन्न करती है जिससें ग्रीवासहित मुख टेढा होकर मस्तक हिलता रहता है, बोलते नहीं बनता, नेत्रादिक विकृत होजाते और मुख जिस ओर ठेढा होता उसी ओरको गर्दन, ठुड्डी, दांत और पार्श्वशूलमेंभी पीडा होती है जिस रोगीको ये लक्षण हों उसे अर्दितरोग जानो. सो यह रोग तीन प्रकारका हैं अर्थात् १ वातज, २ पित्तज, और ३ कफज.

१ वातार्दितरोग लक्षण– लार अधिक गिरे, शरीरमें अधिक पीडा हो, शरीर कम्पित हो, शरीर फर्के, ठुड्डी न मुडे, और ओंठ सूज जावे तो वातार्दितरोग जानना चाहिये.

२ पित्तार्दितलक्षण– मुख पीला पडजावे, ज्वर चढे, और तृषा अधिक लगे तो पित्तार्दितरोग जानो.

३ कफार्दितरोग लक्षण– अधिक मोह हो, कंठ, शीस, गर्दन इन तीनों स्थानोंमें शोथ हो और ये तीनों अंग स्तब्ध होजावें तो कफार्दित रोग जानो.

असाध्यार्दितरोगलक्षण– क्षीण पुरुष जिसकी पलक न लगें, बोली स्पष्ट बूझ न पडे, जीभ, नाक, नेत्रसें जल बहता रहे, कंपता रहे, और जो ३ वर्षसें अधिक अवधि होगई हो तो यह नहि सुधरेगा.

मान्यास्तम्भरोग लक्षण– दिनमें अधिक सोनें और अधिक बैठे रहनेसें विकारको प्राप्त हुवा कफ वायूसे मिलके ग्रीवाको नहीं मुडने देता इसे मान्यास्तंभरोग कहते हैं.

वाहुशोषरोगलक्षण– कांधेमें रहनेवाली वायु कुपित होनेसें भुजा स्तब्ध होकर सूख जाती है इसे वाहुशोषरोग कहते हैं.

अपवाहुकरोग लक्षण– भुजाकी नसोंमें रहनेवाली वायु कुपित होनेसें नसोंको संकुचित (इकठी) करके भुजाको स्तम्भितकर देती हैं इसे अप वाहुक या भुजास्तंभरोग कहते हैं.

विश्वाचीरोगलक्षण–हाथकी अंगुलियोंके नीचे खुजाल चले, तथा भुजा- के पीछे खुजली होकर भुजाको निरुपयोगी कर देवे तो विश्वाचीरोग जानो.

ऊर्ध्ववातरोगलक्षण–कुपथ्य सेवनसें अधोवायु कुपित होके कफयुक्त होकर वारंवार डकार उत्पन्न करती है इसें ऊर्ध्ववातरोग कहते हैं.

आध्मानरोगलक्षण–पेटमें अफरा चढ जावे, पीडा हो मूलद्वारकी पवन (वायुसरण) बंद हो जावे तो अध्मानरोग जानो.

प्रत्याध्मानरोगलक्षण– पार्श्वभाग तथा हृदयपर तो अफरा न हो केवल नाभिस्थानसें पेटमात्रपरही अफरा हो तो प्रत्याध्मानरोग जानो.

वातष्ठीलारोगलक्षण– नाभीके नीचे अचल (या सचल) गुलीके सदृश गोल ऊपरको ऊंची, इधर उधर नीची और दृढ एक गठान (गांठ) उत्पन्न होती है जिससे मलमूत्र रुक जाता है इसे वातष्ठीलारोग कहते हैं.

प्रत्यष्ठीलारोगलक्षण– वही वातष्ठीला पीडायुक्त, मलमूत्र तथा अधोवायु प्रतिबंधक और पेटमें तिर्छीदरोग हो तो प्रत्यष्ठीलारोग जानो.

तूनीरोगलक्षण– मलमूत्राशयमें रहनेवाली वायु कुपित होकर गुदा और लिङ्गेन्द्रियमें पीडा उत्पन्न करे उसे तूनीरोग कहते हैं.

प्रतितूनीरोगलक्षण–गुदा और लिंगमें रहनेवाली वायु गुदा और लिं- गको पीडा करती हुई पेडू (नाभिके तलेका स्थान )में पीडा उत्पन्न करे उसे प्रतितूनीरोग कहते हैं.

त्रिकशूलरोगलक्षण– कटि (कमर)की तीनों हड्डी, पीठकी तीनों हड्डी और बांसमें[1] पीडा उत्पन्न हो उसे त्रिकशूल जानो.

---

[1] पीठकी समस्त सूक्ष्म अस्थियोंको धारणकारणी दीर्घास्थि (बडी हड्डी ) जिसे पी- ठकी "नागन"भी कहते हैं.

बस्तिवातरोगलक्षण–मूत्राशयमें रहनेवाला वायु कुपित होनेसे मूत्रको नाना प्रकारके रोग उत्पन्न करे उसे वस्तिवात कहते हैं.[1]

गृध्रसीरोगलक्षण–यह रोग पहिले कूले फिर क्रमशः कमर, पीठ, जांघें, घुटने, पिडरी और पांवमें प्राप्त होकर पैरोंकों जकड देवे, सुई चुंभानेके सदृश वेदना करे तथा कम्प उपजाता, और पांवकी गति मंदकर देता है ये लक्षण हों तो गृध्रसीरोग जानो. यह दो प्रकारका होता है. अर्थात् १ वात और २ वातकफसें उत्पन्न हुआ.

१ वातगृध्रसीरोगलक्षण–अधिक पीडा हो, शरीर टेढा हो जावे, जांघें घुटनें और संधियोंमें स्तम्भ तथा फूटन हो तो वातगृध्रसीरोग जानो.

२ वातकफगृध्रसीरोगलक्षण–शरीर भारी हो जावे, अग्नि मंद पडजावे और मुखसें लार अधिक गिरे तो वातकफगृध्रसीरोग जानना चाहिये.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे वातरोगलक्षणनिरूपणं नाम सप्तदशस्तरंगः ॥ १७ ॥

॥ वातोद्भवरोगाः ॥

हेतुं गदानां हि समीरजानां पियूषसिन्धौ लिखितम्पुराणे ॥
भंगेलिसाम्यत्रयथाष्टचन्द्रे लोकोपकाराय सुभाषयाहम् ॥ १ ॥

इन्द्रवज्रामिदम्.

भाषार्थ–अब हम इस अठारहवें तरंगमें वातोद्भवरोगोंका निदान प्राचीनामृतसागरकी पद्धतिसे मनुष्योंके लाभके लिये सुन्दर नागरी भाषामें लिखते हैं ॥ १ ॥

खंजरोग लक्षण– कमरमें रहनेवाली वायु जांघोंकी नसोंको पकडके १ पांवको स्तम्भित कर देती हैं उसे लंगडापन कहते हैं.

पंगुरोग लक्षण– कमरमें रहनेवाला वायु जांघोंकी नसोंको ग्रहण करके दोनों जांघोंकी नसोंका नाश कर देती हैं तब मनुष्य चलनेसे असमर्थ हो जाता है उसे पंगुरोग कहते हैं.

---

[1] बस्तिवातमें याती मूत्र बूंद २ करके उतरता हैं. या पूर्णरूपसे बंदही हो जाता है इसी लिये चिकित्साखंडमें दोनों प्रकारकी चिकित्साभी जुदी वर्णन किई गई है.

कलायखंजरोग लक्षण– संधियोंके बंधनरूपी नसें ढीली पड जानेसें मनुष्य कम्पित होकर लंगडाते हुए चलता है उसे कलायखंज रोग कहते हैं.

क्रोष्टुशीर्षकरोग लक्षण– घुटनोंमें वादी और रक्तविकारसें शोथ होवे, विशेष पीडा होवे और घुटने शृगाल ( स्यार )के मस्तक सदृश कठोर होजावें तो क्रोष्टुशीर्षकरोग जानो.

खल्लरोग लक्षण– पैर, पिडरी, जांघें और पहुंचे मरोडे, खाजावें तो खल्लीरोग जानो.

वातकंटकरोग लक्षण– उंचे नीचे स्थानमें पांव रखनेसें श्रम जान पडे और पांवकी गट्टियोंमें पीडा होतो वातकंटकरोग जानो.

पाददाहरोग लक्षण– वात, पित्त, और रक्त तीनों युक्त होकर पादतल (पगतली, तलुवों )में दाह ( जलन ) उत्पन्न करते हैं उसे पाददाह कहते हैं.

पादहर्षरोग लक्षण– दोनो या एक पांव झनझन करके सो जावें और दाबने या झटक देनेसें पुनः पूर्ववत् जग उठें ( झनझना हट मिटकर अच्छे होजावें ) उसे पादहर्ष ( या झिनझिनी चढना ) रोग जानो.

आक्षेपकरोग लक्षण– वायु कुपित होके रक्तप्रसारणी सर्व नाडियोंमें प्राप्त होता है तब बारम्बार चलित होके शरीरको हिलाता है उसे आक्षेपरोग कहते हैं.

विशेषतः– चोट लगनेसें वायु कुपित होकर आक्षेप उत्पन्न हुआ हो तो साध्य और अन्यथा कारणसें होतो असाध्य जानो.

अंतरायामरोग लक्षण– पैरकी अंगुली, एडी, पेट, हृदय, छाती और गलेमें रहनेवाली वायु वेगयुक्त होकर नसोंके समूहको खीच लेती है तब मनुष्यके नेत्र, ठुड्डी और पसुली स्तब्ध होकर मुखसें आपही आप कफ गिरता और दृष्टिभ्रमसें आगेको धनुषाकार बनाहुआ दीखता है जो ये लक्षण होंतो अन्तरायामरोग जानो.

बाह्यायामरोग लक्षण– जिसप्रकार अन्तरायाममें वायु आगेकी नसोंमें प्राप्त होकर आगेको झुका देती, उसीप्रकार बाह्यायाममें वायु पीछेकी सर्व नसोंमें निवास करता हुआ कुपित होकर पीछेको नवा ( झुका ) देता है.

जिसमें कमर, पसुरी और जांघोंकी नसें टूट जावें उसे असाध्य बाह्याया-म जानना चाहिये.

धनुस्तम्भरोग लक्षण– जिसका शरीर धनुष (कमान)के सदृश हो-जावे, शरीरका वर्ण पलट जावे, मुख मुद (बंध) जावे, देह शिथिल हो-जावे, चैतन्यता न रहे और पसीनाभी निकले तो धनुर्वात जानो. इस रोगमें रोगीको जीनेकी १० दिनकी अवधि होती है.

कुब्जकरोग लक्षण– वायु कुपित होके हृदय या पीठको उंची करके अधिक पीडा करती है उसे कुब्जकरोग कहते हैं.

अपतंत्ररोग लक्षण– वातल वस्तुके सेवनसें वायु कुपित होके अपने स्थानको छोड देती और हृदयमें प्राप्त होके शिर और कनपटीमें पीडा उ-त्पन्न करती है जो रोगीका शरीर कमानकासा नव (झुक) जावे, रोगी मोहको प्राप्त हो, अत्यंत कष्टपूर्वक ऊपरको स्वास लेवे, नेत्र फटे रहजावें या मिच जावें, कंठमें घरघर शब्द होने लगे और संज्ञा नाश होती जावे तो अपतंत्ररोग जानो.

अपतानकरोग लक्षण– नेत्र फट जावें, संज्ञा हीन होजावे, कंठमें कफ-का घरांटा चले, संज्ञा आनेसे चैतन्य होकर असंज्ञा होनेपर पुनः मोहित होकर चैतन्यताका अभाव होजावे. ये लक्षण हों तो अपतानकरोग जानो. यह असाध्य रोग स्त्रीको गर्भपात और पुरुषको अधिक रुधिर निकलनेसें तथा अत्यंत चोट लगनेसें होता है.

पक्षाघातरोग लक्षण– किसी कारणसे वायु कुपित होके मनुष्यके अर्ध शरीरको ग्रहण कर लेती और शरीरकी मोटी तथा मध्यम नसोंको सुखा-कर संधियोंके बंधन ढीले कर देती है तब मनुष्यका अर्धांग (एक ओर-का पक्ष अर्थात् नाक, कान, आंख, हाथ, पांव) शिथिल होकर वेकाम तथा अचेत हो जाता है इसे पक्षाघातरोग कहते हैं. जिसप्रकार यह अर्धांग शिथिल होता है उसीप्रकार सर्वांगभी शिथिल हो जाता है, इस रोगके १ पित्तवात पक्षाघात और २ कफवात पक्षाघात ये दो भेद हैं. कोई

कोई आचार्योंने इसे एकाङ्ग रोग, कोई पक्षवधरोग और लोकमें बहुधा लकुवा रोग कहते हैं.

पित्तवातपक्षाघात लक्षण— शरीरके भीतर, बाहार दोनोंओर दाह हो और मूर्छा आवे तो पित्तवातपक्षाघातरोग जानो.

कफवातपक्षाघात लक्षण— शरीर भीतर तथा बाहरसें शीतलसा जान पडे, अंगपर सूज न हो और देह भारी होतो कफवातपक्षाघात जानो.

पक्षाघात असाध्य लक्षण— यदि केवल वायुसे पक्षाघात हो तो कष्टसाध्य और गर्भणी स्त्री, प्रसूता स्त्री, बालक, वृद्ध, क्षीण पुरुष, घायल मनुष्य और (जिसके शरीरसें रुधिर निकल गया हो) शून्य शरीरवालेको पक्षाघात होतो असाध्य जानो.

निद्रानाशरोग लक्षण— कटु तीक्ष्ण आदि पदार्थ भक्षण, चिंता और कामादिका वेग रोकनेसें वायु कुपित होकर निद्राको नाश कर देती है तब मनुष्यको लेटे रहनेपर भी निद्रा नहीं आती. ये लक्षण होंतो निद्रानाशरोग जानो.

सर्वांगकुपित वातलक्षण— समस्त अंगभरका वायु कुपित होकर देह भरमें पीडा उपजावे तो सर्वाङ्गकुपितवात जानो.

त्वग्गत कुपितवायु लक्षण—त्वचामें रहनेवाली वायु कुपित होनेसें त्वचा रूखी, फटीहुई, शून्य, पतली, काली, पीडायुक्त, लाल होकर खिचतीहुई जान पडे और त्वचाका रस शोषण होजावे तो त्वग्गत वायु कुपित हुई जानो.

रक्तगत कुपितवायु लक्षण— रक्तस्थ वायु कुपित होनेसें अंगमें संतापसहित तीव्र पीडा उत्पन्न होवे, शरीरका वर्ण कुरूप होजावे, अरुचि होवे, शरीरमें फोडे फुनसी होकर देह काली पडजावे और भोजन करनेपर शरीर जकड जावे तो रक्तगत वायु कुपित हुआ जानो.

मांसमेदोगत कुपितवायु लक्षण— शरीर जकडकर भारी होजावे और दंडा तथा मुक्कीके प्रहारसमान पीडा होतो मांसमेदोगत वायु कुपित जानो.

अस्थिमज्जागत कुपितवात लक्षण— हड्डी और पांवोंमें पीडा हो, संधियोंमें शूल चले, मांस, बल, और निद्राका अभाव होकर समस्त शरीरमा-

त्रमें निरंतर पीडा होती रहे तो हड्डी तथा मज्जा ( चिकना फेन, शरीरस्थ सप्तधातुओंमें चतुर्थधातु )की वायु कुपित जानो.

शुक्रगत कुपितवायु लक्षण– पुरुषका वीर्य स्त्री प्रसंगके समय शीघ्रपात होजावे या बिलम्बतक पात न हो और स्त्रीका गर्भ नियतकालसें पूर्व गिर जावे या विलम्बतक प्रसवोत्पत्ति न हो तथा वीर्य और गर्भमें कुछ दुष्ट विकार उत्पन्न होतो वीर्यस्थवायु कुपित जानो.

कोष्टगत कुपितवायु लक्षण– मलमूत्र रुक जावे, उदरपीडा, हृदयशूल, अर्श, गुल्म और पार्श्वशूल उत्पन्न होतो कोष्टगत वायु कुपित हुआ जानो.

आमाशयगत कुपितवायु लक्षण– हृदय, पार्श्व, नाभीमें पीडा हो, तृषा लगे, मुख, कंठ सूख जावे, डकारें अधिक आवें और विसूचिका उत्पन्न होतो आमाशयकी वायु कुपित हुई जानो.

पक्वाशयगत कुपितवायु लक्षण–आंतोंमें शब्द हो, पेटमें शूल हो, पीठमें पीडा हो,मलमूत्र कष्टसें उतरे और अफरा होतो पक्वाशयस्थवायुका कोप जानो.

गुदास्थकुपितवायु लक्षण– मलमूत्र रुक जावे, उदरशूल और अध्मान (अफरा) हो जांघ, पीठ, और पार्श्वभागमें पीडा हो, और पथरीका रोग हो तो मूलद्वार (गुदा)की वायु कुपित जानो.

हृदयगत कुपितवायु लक्षण– हृदयमें पीडा हो तो हृदयकी वायुका कोप जानो.

कर्णादि इन्द्रियस्थ वायुकुपित लक्षण– कर्णादिक इन्द्रियकी शक्ति नाशको प्राप्त हो तो इन्द्रियस्थवायुका कोप जानो.

शिरागत कुपितवातलक्षण–शरीरकी नसोंमें तडक उठकर नसोंका गोला बंध जावे (इकट्ठी हो जावें) तो शिरास्थवायुका कोप जानो.

संधिस्थवातकुपितलक्षण–शरीरकी संधियोंमें ( जोडोंमें ) शूल चले और तडक उठे तो संधिस्थवातका कोप जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे वातरोगलक्षण निरूपणं नामाष्टादशस्तरंगः ॥ १८ ॥

॥ वातोद्भवरोगाः ॥

नोक्तं येषां वातजानां पुराणेऽमृतसागरे ।
नन्दसोमे तरङ्गेतन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ—अब हम इस १८वें तरंगमें उन रोगोंका निदान वर्णन करते हैं. जिनका निदान पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखागया है.

स्नायुगतकुपितवातलक्षण— शीरा नामिक रक्तप्रसारणी नसोंसें अन्य नसोंमें प्राप्त हुआ कुपित वायु सर्वांग रोगको और किसी एकही विशेष अंगकी नसोंमें प्राप्त होनेसें एकांग रोगको उत्पन्न करता है इसे स्नायुगतकुपितवात जानो.

दंडापतानकरोगलक्षण—शरीरकी नसोंमें कफयुक्त कुपितवायु प्राप्त होनेसें मनुष्य दंडेके समान (जडरूप) होकर पडा रहता है उसे दंडापतानक रोग कहते हैं.

व्रणयामरोगलक्षण—मर्मस्थानके कोंडेमें कुपित हुआ वायु प्रवेश होनेसें सब देहमें फैलके शरीरको नवा (झुका) देती है उसें व्रणायाम कहते हैं.

जिव्हास्थितमूकादिरोगलक्षण— कफयुक्त वायु कुपित होके जिव्हाकी शब्दप्रसारणी नसोंको घेर लेती है तब दोषोंकी न्यूनाधिकतासें जिव्हामें मूक, मिन्मिन और गद्गद रोग उत्पन्न हो जाते हैं सो जिसमें सर्वतोभाव भाषा बंद हो जावे सो मूकरोग, नाशिकास्वरसे बोले सो मिन्मिनरोग और हकलाके बोले सो गद्गदरोग[१] जानो.

कम्पवातरोगलक्षण—जिसमें सर्व अंग और शिर कपता रहे उसे वेपथु (और कम्पवात) रोग कहते हैं.

अनुक्तवातरोगसंग्रहार्थमाहः—

स्थाननामानुरूपैश्च लिंगैश्शेषान्विनिर्दिशेत् ।
सर्वेष्वेतेषु संसर्गं पित्ताद्यैरुपलक्षयेत् ॥ १ ॥

---

१ अटकते अटकते बोलना, एक अक्षरको अनेकवार उच्चारना. जैसे "पानी" कहनेके लिये "प-प-प-प-पा! पानी" कहकर कठिनाई पूर्वक पानी शब्दका उच्चारण करना.

भाषार्थ—अवशिष्ट वातरोगोंका निदान तथा उनके स्थानके नामानुरूप चिन्ह और उक्त समस्त वातरोगोंमें पित्तादिकके संसर्ग ये सब अपनी बुद्धिसें जानो.

पित्त कफयुक्त पंचवायुके कार्य—(१) पित्तयुक्त प्राणवायु हो तो वांति और दाह होय, कफयुक्त हो तो दुर्बलता, शैथिल्यता झपकी और मुखस्वाद रहित होगा. (२) उदानवायु पित्तयुक्त होनेसें दाह, मूर्छा, भ्रम और घबराट होय, कफयुक्त हो तो पसीनाका अभाव, रोमांच, मंदाग्नि, और शीतलता होगी. (३) सामान्यवायु पित्तयुक्त हो तो शरीरमें दाह, उष्णता मूर्छा और पसीना आवेगा, कफयुक्त हो तो रोमाञ्च होकर मलमूत्रकी रुकावट हो जावेगी. (४) अपानवायु पित्तयुक्त होवे तो दाह, उष्णता, और मूत्र लाल होगा, कफयुक्त हो तो शरीरके तल भागमें भारीपन और जाडा लगेगा. (५) व्यानवायु कफयुक्त होनेसें शोथ, शूल, और शरीर जकडकर दंडेके समान रहजावेगा. पित्तयुक्त होनेसें दाह और घबराहट होकर हाथपांव पटकेगा.

**पंचविधस्य प्रकृतस्य वायोः कार्यलिङ्गं चाह—**

**अव्याहतगतिर्यस्य स्थानस्थः प्रकृतो स्थितः ।**
**वायुस्स्यात् सोऽधिकं जीवेद्वीतरागः समाशतम् ॥ १ ॥**

(इति माधवः)

भाषार्थ—अब पांचों प्रकारकी वायुके कार्य और चिन्ह लिखते हैं.

जिस मनुष्यकी पंचवायु शरीरमें अपने स्वभाव व स्थानानुकूल स्थित रहकर किसी प्रकारसें अवरोधित न होवे वह मनुष्य १०० सौ वर्ष पर्यन्त रोगरहित जीवेगा क्योंकि शरीरस्थ वायुके विकारसेंही प्राणी रोगयुक्त होके पूर्ण आयु नहीं भोगने पाते हैं इस वातपर प्रत्येक वैद्य और मनुष्योंको पूर्ण ध्यान देना चाहिये. उक्त १०० वर्षका आयुप्रमाण कलियुगके मनुष्योंका है इस लियेभी मनु महाराजने अपनी मनस्मृतिमें लिखा है.

**अरोगाः सर्वसिद्धार्थाश्चतुर्वर्षशतायुषः ।**

कृतत्रेतादिषु ह्येषामायुर्ह्रसति पादशः ॥ म०१अ८३श्लोक ॥

अन्यच्च–शतायुर्वैपुरुषः ॥ इतिश्रुतेः ॥

शतशब्दोत्र बहुत्वपरः कलिपरो वा ॥

भाषार्थ–मनुष्योंकी आयु सतयुगमें ४०० वर्ष, त्रेतायुगमें ३०० वर्ष, द्वापरयुगमें २०० वर्षथी और अब कलियुगमें १०० वर्षकी है. आयुके उक्त निश्चित वर्षोंसे अधिक आयु भोगनेके लिये मुख्य कारण स्वधर्म तत्पर रहना, और अल्पायु होनेका मुख्य कारण स्वधर्मसे च्युत होकर अधर्म सेवन करनाही है क्योंकि अधर्म सम्बन्धी कार्य करनेसें रोगोत्पत्ति और रोगोत्पत्ति होनेसें आयु नष्ट हो जाती है.

सूचना–इस तरंगमें जो रोग निदान लिखे हैं वे पूर्वामृतसागरमें नहीं थे परन्तु हमने माधवनिदानादि ग्रंथोंसे लेके लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे अनुक्तवातरोगलक्षण निरूपणं नामैकोनविंशतिस्तरंगः ॥ १९ ॥

॥ ऊरुस्तम्भादि पित्त-कफरोगाः ॥

भङ्गेऽभ्रनेत्रे रोगाणामूरुस्तंभामवातयोः ।

पित्तजानां श्लेष्मजानां निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ–इस वीसवें तरंगमें उरुस्तम्भ, आमवात, पित्तरोग और कफरोगोंका निदान लिखते हैं.

उरुस्तम्भरोगोत्पत्ति–शीतल, उष्ण, भारी, या चिकनी वस्तु अधिक क्षुधा या अल्पाजीर्णमें खाने, दिनको शयन और रात्रिके जागरणसें वायु कुपित होके पित्तको बिगाड देती है तब दोनों जांघें स्तंभित होकर सूनी हो जाती और मनुष्य हलने चलनेसें असमर्थ हो जाता है.

उरुस्तम्भपूर्वरूप–निद्रा, अरुचि, छर्दि, रोमांच अधिक हो, ध्यान लग जावे, कुछ ज्वरांश हो और दोनों जांघोंमें पीडा हो तो उरुस्तम्भ होगा.

उरुस्तम्भरोगलक्षण[१]–दोनों पांव सो जावें, पीडा होवे, पाव कठिनाईसें

---

१ धन्वंतरिजीने सुश्रुतमें इसी उरुस्तम्भको महावातव्याधिरोग नामभी दिया है इसलिये हमने उपरोक्तलक्षण सुश्रुतोक्तही लिखे हैं.

उठे, दोनों जांघोंमें पीडा हो, दाह हो. पृथ्वीपर पाव रखते समय विशेष पीडा हो, शीतोष्ण तथा स्पर्शज्ञान न हो, गति नाश हो जावे, जांघें काष्ठ सदृश टूटीसी जानपडे तो महावातव्याधि तथा उरुस्तम्भरोग जानो.

असाध्य उरुस्तम्भलक्षण— शरीरमें दाह, पीडा और कम्प प्राप्त हो तो वह रोगी अवश्य नाशको प्राप्त होगा.

आमवातरोगोत्पत्ति— मन्दाग्निवाला मनुष्य कुपथ्य पूर्वक चिकना अन्न खानेपर परिश्रम न करे तो वायुकी प्रेरणासें भक्षितान्नका कच्चारस कफाशय (हृदय)में प्राप्त होके नसोंमें प्रवेश होता है. और वही रस त्रिदोषसें अति दूषित होनेसें शरीरकी नसोंकों पूरित करके अग्निमांद्यको प्रकट करता है तब शरीर भारी होकर आम तथा सर्व रोग उत्पन्न होते हैं.

आमवातलक्षण—मंदाग्निवाला मनुष्य अजीर्णमें भोजन करता है इस लिये उसके उदरमें आम उत्पन्न होकर अनेक रोगोंको उत्पन्न करती है तब मस्तक, अंग, स्कंध, पृष्ठ, कटि, घुटनमें पीडा होती, नसोंको संकोच होता और शरीर स्तंभित होजाता है ये लक्षण हों तो आमवात जानो.

ग्रन्थांतरोक्त आमवात रोग विशेषण लक्षण— अंगमें पीडा, भोजनमें अरुचि, शरीरमें भारीपन, तृषा, और आलस्यकी आधिक्यता, पाचनशक्तीका अभाव, अंगमें सूनापन और ज्वरका वेग होतो आमवात जानो.

पित्तरोगोत्पत्ति कारण— कडवी, खट्टी, उष्ण, दाहकारक, तीक्ष्ण, रूखी वस्तु भक्षणसें, भूख, मैथुन, क्रोध, परिश्रम, मद्यपानकी विशेषतासें, तृषा, क्षुधाका वेग रोकनेसें, घाममें फिरनेसें, और अधिक नोंन खानेसें पित्त कुपित हो जाता है. तथा अपच होनेसें शरदऋतु, ग्रीष्मऋतु, मध्यान काल और अर्ध रात्रिके समयमेंभी पित्त कोपको प्राप्त होता है तब कुपित पित्तसें निम्न लिखित ४० प्रकारके रोग उत्पन्न

| रागनाम. | रोगनाम. |
|---|---|
| १ तरुणावस्थामें श्वेत बाल होना. | ४ पीतनेत्र (पीले नेत्र होजाना). |
| २ रक्तनेत्र (आंखें लाल होजाना) | ५ पीतमूत्र (पीली पेशाब उतरना). |
| ३ रक्तमूत्र (लाल पेशाब उतरना). | ६ पीतमल (पीला दस्त होना). |

रोगनाम.

७ पीतनख (नख पीले पडजाना).
८ पीतदंत (दांत पीले पडजाना).
९ पीतशरीर (देह पीली पडजाना)
१० अंधयारी आना.
११ सर्वत्र पीतही पीत दृष्टि पडना.
१२ अल्पनिद्रा (थोडी नींद आना).
१३ मुखशोष (मुंह सूखना).
१४ मुखदुर्गन्धि (मुंहकी बुरी वास).
१५ मुखतीक्ष्ण (मुंह तीखा रहना).
१६ उष्णश्वास (श्वास गर्म चलना).
१७ मुखमें खट्टापन.
१८ डकारके साथ बाफ निकलना.
१९ चक्र आना.
२० इन्द्रियोंकी शैथिल्यता.
२१ क्रोधाधिक्यता (गुस्सा चढीरहे).
२२ दाह (शरीर जलना).
२३ अतिसार (दस्त लगना).
२४ उष्णतापर अरुचि.

रोगनाम.

२५ शीतलतापर
२६ सर्वग्राह (किसीवस्तुसें पूर्णता न होना).
२७ सर्व वस्तुओंसे विशेष स्नेह.
२८ भोजनानंतर दाह प्राप्त.
२९ क्षुधावृद्धि (भूख बहुत लगना).
३० नकसीर (नाकसें रक्त गिरना).
३१ मलद्राव (पतला दस्त).
३२ मलौष्णता (गर्म दस्त होना).
३३ मूत्रौष्णता (गर्म पेशाब उतरना).
३४ मूत्रकृच्छ्र.
३५ वीर्य क्षीणता.
३६ शरीरौष्णता (अंग तप्त रहना).
३७ पसीनाकी विशेषता.
३८ पसीनामें दुर्गन्धि आना.
३९ हाथपांवका चर्म फटना (व्याऊ).
४० शरीर फूटन या फोडे आदिकी अधिकता.

ये चालीस रोग पित्तप्रकोपकी उष्णताद्वारा उत्पन्न होते हैं.

कफरोगोत्पत्ति कारण— भारी, मीठी, चिकनी, शीतल वस्तु तथा दधि भक्षणसें, मन्दाग्निसें, दिनमें सोनेसें और अधिक बैठे रहनेसें कफ कुपित होता है. तथा प्रभातसमय भोजन किये पश्चात, और वसंतऋतुमेंभी कफ कोपको प्राप्त होता है तब इसके प्रकोपसें आगे लिखित २० प्रकारके रोग उत्पन्न होते हैं.

| रोगनाम. | रागनाम. |
|---|---|
| १ मुख मीठा (रहना). | ११ क्षुधाका अभाव(भूख न लगना). |
| २ मुख कफसें लिपित रहना. | १२ मन्दाग्नि. |
| ३ मुखसें लार गिरना. | १३ रेचनाधिक्यता(बहुत दस्तहोना) |
| ४ अधिक निद्रा आना. | १४ श्वेत मल (उतरना). |
| ५ कंठमें घर्राटा (चलना). | १५ मूत्राधिक्यता(बहुत पेशाब हो०) |
| ६ कटु रसकी इच्छा. | १६ श्वेतमूत्र (सफेद पेशाव उतरना). |
| ७ उष्णताकी इच्छा. | १७ वीर्याधिक्यता. |
| ८ बुद्धिजडता(अकलकुंद होजाना) | १८ निश्चलता (जडत्व). |
| ९ स्मरणशक्तिकी अल्पता. | १९ शरीरमें भारीपन. |
| १० आलस्याधिक्यता (सुस्ती). | २० शरीरमें शीतलता. |

कफके प्रकोपसें ये २० प्रकारके रोग उत्पन्न होते है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे उरुस्तम्भ-आमवात-पित्तरोग-कफरोगाणां लक्षणनिरूपणं नाम विंशतितमस्तरंगः ॥ २० ॥

॥ वातरक्त-शूलादिरोगाः ॥

**निदानं वातरक्तस्य शूलादीनां यथाक्रमात् ।**
**एकविंशतिमे भंगे रोगाणां लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थ—अब हम इस २१ वें तरंगमें वातरक्त और शूल आदि रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

वातरक्तरोगोत्पत्ति—नोंन, उष्ण वस्तु, सडाहुआ मांस, मूंगके वडे, कुलथी, उर्द, शाक, मांस, मछली, दही और अन्य विरुद्ध वस्तु खाने, मद्य और कांजी पीने, अजीर्ण दशामें भोजन करने, हाथी घोडा, ऊंठपर आरूढ होने, दिनको निद्रा लेने और क्रोध करनेकी विशेष आधिक्यतासे सुकुमार और सुखग्राही पुरुषोंको वातरक्तरोग उत्पन्न होता है.

वातरक्तपूर्वरूप—पसीना किंचित न निकले या बहुतही निकले, शरीर काला पडजावे, शरीरका स्पर्शज्ञान नष्ट हो जावे, अल्प प्रहारपर विशेष

पीडा हो, समस्त संधियां ढीली पडजावें, अधिक आलस्य आवे, शरीरमें फुनसी बहुत हों, घुटने, जांघें, कमर, हाथ, पैरमें पीडा विशेषही हो, शरीर भारी पडजावे, देह शून्य हो जावे, देहमें दाह हो, वर्ण विपर्यय (रंग बदलजाना) हो जावे, और शरीरपर लाल चट्ठे पडजावें तो जानो कि वातरक्त उत्पन्न होगा.

वातरक्तस्वरूप– सर्व शरीरका रक्त दग्ध होकर दोनों पांवोंमेंसे चूने (टपकने) लगता है इसे वातरक्त कहते हैं. इसके ५ भेद हैं अर्थात् १ वाताधिक, २ पित्ताधिक, ३ कफाधिक, ४ रक्ताधिक, और ५ सन्निपातकी आधिक्यतासें उत्पन्न हुआ वातरक्त जानो.

१ वाताधिक वातरक्तलक्षण– पांवोंमें अधिक शूल हो, पांवपर कुछ शोथभी हो, पांवके तलुवे, चर्म या कोर रूखी और काली पडजावे, चौवीसों नाडी और अंगुलियोंकी संधियोंमें संकोच हो, शरीर जकडकर कंपे और सूना पडजावे तो वाताधिक्य वातरक्त जानो.

२ पित्ताधिक्य वातरक्तलक्षण– शरीरमें दाह, मोह, मूर्छा, मद, तृषा, पसीनाका बहाव, स्पर्शासहन, पीडा, शोथ, पकाव, और उष्णताकी विशेषता हो तो पित्ताधिक्य वातरक्त जानो.

३ कफाधिक्य वातरक्तलक्षण– शरीरमें शल (कुकरी), भारीपन, शून्यता, चिकनाहट, शीतलता, और कंडुत्वकी आधिक्यता होतो कफाधिक वातरक्तरोग जानो.

४ रक्ताधिक वातरक्तलक्षण– शरीरपर शोथ, पीडा, ललाई, चमक, और कंडुत्व (खुजलाहट) हो तो रक्ताधिक वातरक्त लक्षण जानो.

५ सन्निपात वातरक्तलक्षण– जिसमें पूर्वोक्त त्रिदोषोंके लक्षण एकत्र दृष्टि पडे उसे सन्निपातवातरक्त जानो.

हस्तवातरक्तलक्षण– जैसे पांवकी पगथली तैसेही हाथकी हथेलीमेंभी फुनसी होकर अंतमें सर्व शरीरभरमें हो जाती हैं उसे हस्तवातरक्त कहते हैं.

वातरक्त असाध्यलक्षण– पांवके तलुवोंसे घुटनोंतक सर्वत्र फुनसियां हो जावे, शरीर फटने और चूने लगे, बल, मांस, और जठराग्निकी हीनता हो

जावे तो असाध्य वातरक्त जानो. यह रोग १ वर्षकी अवधितक याप्य रहता है.

वातरक्तोपद्रव– निद्राका अभाव, अन्नपर अरुचि, श्वास, शिरपीडा, शिरमें वेदना, मांसका गलना, फुनसियोंका पकना, अंगुलियोंमें टेढापन या गलाव, तृषा, ज्वर, मोह, कम्प, हिचकी और व्योंची ये वातरक्तके उपद्रव है.

शूलरोगभेद– यह रोग आठ प्रकारका हैं अर्थात् १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ आमरस (कचारस), ६ वातकफ, ७ कफपित्त, और ८ वातपित्तका शूल.

वातशूलरोगोत्पत्तिकारण– घोडे आदि पशुओंपर आरूढ होकर दौडाने, मैथुन, जागरण, जलपान, भीगा हुआ अन्न, सूखा मांस, विरुद्ध पदार्थ भक्षण करने, मल, मूत्र, और वायु रोकने, और शोक, लंघन, हास्यकी आधिक्यतासें वायु कुपित होकर हृदय, दोनों पार्श्वभाग और रोमकूपमें शूलरोगको उत्पन्न करती है.

वातशूललक्षण– संध्या समय बदली (बद्दल) होनेपर या शीतकालमें उक्त हृदयादि स्थानमें शूल चलने लगे, चलते चलते वारम्वार रुकजावे, मलमूत्र रुकजावे, और अति पीडा हो तो वातशूल जानो.

२ पित्तशूलोत्पत्तिकारण– खारी, तीखी, उष्ण, खट्टी वस्तु, काली मिर्च, तिल, खली, कुल्थीके विशेष भक्षण, कांजी, मदिरा, आसवके विशेष पान, श्रम, मैथुन, क्रोध और धूपमें घूमनेकी आधिक्यतासें पित्त कुपित होकर शूल उत्पन्न करता है.

पित्तशूललक्षण– तृषा, दाह, मूर्च्छा, भ्रम, क्रोध, विशेष हो, मध्यान्ह, अर्द्धरात्रि, ग्रीष्मऋतु और शरदऋतुमें शूल अधिक चले और नाभिपर अधिक पसीना आवे तो पित्तशूल जानो.

३ कफशूलोत्पत्तिकारण–अनूपदेशज पशुका मांस, मछली, खोवा (मावा), पैठा मैंदाके पक्वान्न, विशेष खाने और दूध, गन्नाका (ईख) रस, मधुर रसके विशेष पानसें कफ कुपित होकर शूल उत्पन्न करता है.

कफशूललक्षण–हृदयमें पीडा, वमन होनेकी इच्छा, खांसी, भोजनमें

अरुचि, उदर और मस्तकमें भारीपन, मलमूत्रका रुकाव होवे, भोजन करने-पर अधिक पीडा और प्रातःकाल या वसंतऋतुमें शूल चले तो कफशूल जानो.

४ सन्निपात शूलरोगोत्पत्तिकारण लक्षण— पूर्वोक्त तीनों दोषोंके कारण और लक्षण हों तो सन्निपातशूल जानो.

५ आमशूलरोग लक्षण— अफरा, बमन, शरीरमें भारीपन, मूत्राशयमें गुड गुडाहट, हृदयमें जकडपन होवे, लार गिरे और कफशूलके सर्व लक्षण मिलें तो आमशूल जानो.

६ वातकफशूल लक्षण— पेडू, हृदय, कंठ और दोनों पार्श्वभागमें शूल चले तो वातकफशूल जानो.

७ कफपित्तशूल लक्षण— कुक्षि, हृदय और नाभिस्थानमें शूल चले तो कफपित्तशूल जानो.

८ पित्तवातशूल लक्षण— दाह और ज्वरयुक्त शूल चले तो पित्तवात-शूल जानो.

द्रष्टव्य—शूलरोगके औरभी विशेष भेद हैं परंतु हमने प्राचीनामृतसागरमें लिखित भेदोंके ही लक्षण लिखे हैं जिन्हें विशेष भेद देखना हों वे चरक, सुश्रुतादि ग्रंथ देखें. इसी शूलके तीन उपभेद और सुनो.

परिणामशूलरोगोत्पत्ति कारण— उपरोक्त लेखानुसार केवल इसमें कुपित वायु कफपित्तसें मिलकर शूलको उत्पन्न करती है.

परिणामशूललक्षण—भोजन करनेके पश्चात शूल उठे तो परिणाम०जानो.

अन्नद्रवशूल लक्षण— भक्षित भोजन पचे या न पचे पर शूल सदैव रहे, पथ्य करनेपरभी शांति न हो तो अन्नद्रवशूल जानो.

जरत्पित्तशूल लक्षण— भोजन पाचन होतेही शूल उठे उसे जरत्पित्त-शूल जानो.

शूलरोगोपद्रव— तृषा, मूर्छा, अफरा, अरुचि, शरीरमें भारीपन, श्वास, कास, हिक्का, और उदरमें विशेष पीडा होना ये शूलके नवोपद्रव हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे वातरक्त, शूलरोगलक्षण निरूपणं नामैकविंशतितमस्तरंगः ॥ २१ ॥

॥ उदावर्त-अनाह ॥

उदावर्तस्य रोगस्य चानाहस्य यथाक्रमात् ।
द्वाविंशेस्मिन्तरङ्गे हि निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस २२ वे तरंगमें उदावर्त और अनाह रोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

उदावर्तरोगोत्पत्ति कारण– १ अधोवायु वेग, २ मलवेग, ३ मूत्रवेग, ४ जमुहाईवेग, ५ अश्रुवेग, ६ छींकवेग, ७ डकारवेग, ८ वमनवेग, ९ कामवेग, १० क्षुधावेग, ११ तृषावेग, १२ श्वासवेग और १३ निद्रावेग. इन तेरह वेगोंके प्रतिरोधसे १३ प्रकारका उदावर्त रोग उत्पन्न होता है.

१ अधोवायुवातरोधोदावर्त लक्षण– मल मूत्र रुक जावे, अफरा चढे, गुदा मूत्राशय लिंगेन्द्रियमें पीडा हो, तथा अन्य वादीके अनेक उदररोग हों तो अधोवायु (सरण) रोकनेका उदावर्त जानो.

२ मलवेगावरोधोदावर्त लक्षण– पेटमें गुडगुड शब्द हो, शूल उठे, पेडूमें पीडा हो, मल न उतरे, डकारें अधिक आवें और मुखसे मल निकल आवे तो मल रोकनेका उदावर्त जानो.

३ मूत्रावरोधोदावर्त लक्षण– मूत्राशय लिँगेन्द्रियमें शूल हो, मूत्र कष्टसे उतरे, मस्तकमें पीडा हो, आमांशके अभावपर भी पेडूमें अफरा होतो मूत्र रोकनेका उदावर्त जानो.

४ जृम्भावरोधोदावर्त लक्षण– गर्दन और कंठ रुक जावे, शिरोग्रह हो, जमुहाई अधिक आवें, नाक, कान, आंखोंमें अधिक पीडा हो और वादीके अनेकानेक रोग होतो जमुहाई रोकनेका उदावर्त जानो.

५ अश्रुअवरोधोदावर्त लक्षण– आनंद और शोक दो दशामें अश्रुपात होते हैं जो किसीभी दशामें आंसू रोके तो सिर भारी और नेत्ररोग होंगे ये लक्षण हों तो आंसू रोकनेका उदावर्त जानो.

६ छींकावरोधोदावर्त लक्षण–ग्रीवा नमुरके, मस्तकमें शूल चले, आधाशीशी हो, और सर्व इंद्रियां दुर्बल हो जावें तो छींक रोकनेका उदावर्त जानो.

७ उद्गारावरोधोदावर्त लक्षण–कंठ और मुख भोजन करनेपरभी भारी

रहें, मोह और व्यथा हो, अधोवायु सरण न हो, और वायुके अनेक विकार हों तो डकारका वेग रोकनेका उदावर्त जानो.

८ वमनावरोधोदावर्त लक्षण— मच्छरादि जीवोंके काटने सदृश, ददोरा (दाफड) हो जावें, शरीरमें खुजाल चले, अन्नपर अरुचि, मुखपर छाया, शोथ, पांडुरोग, ज्वर, कुष्ठ, हृदयपीडा, और विसर्प हो तो वमन रोकनेका उदावर्त जानो.

९ कामावरोधोदावर्त लक्षण— पेडू, गुदा, पोथे, और लिंगेन्द्रियमें पीडा हो, मूत्र रुक जावे, उपस्थेन्द्रियसे वीर्य आपही गिरने लगे, शर्करा (पथरी) नेत्रविकार और शोथरोग हो तो वीर्य रोकनेका उदावर्त जानो.

१० क्षुधावरोधोदावर्त लक्षण— हाथपांवमें फूटन, तंद्रा, क्षीणता, दृष्टिमंदता, अरुचि, और विनश्रम कियेही थकवाहट हो तो भूखका वेग रोकनेका उदावर्त जानो.

११ तृषावरोधोदावर्त लक्षण— कंठ और मुख सूख जावे, श्रवणेन्द्रिय मंद पडजावे और हृदयमें पीडा हो तो प्यास रोकनेका उदावर्त जानो.

१२ श्वासावरोधोदावर्त लक्षण— परिश्रमसे उत्पन्न हुई श्वास रोकनेसें हृदयमें पीडा, मोह और पेटमें गोला उठता है ये लक्षण हो तो श्वास रोकनेका उदावर्त जानो.

१३ निद्रावरोधोदावर्त लक्षण—अधिक जमुहाई आवें, हड फूटन होवे, नेत्र भारी हो जावें, शिर भारी होकर तन्द्रा हो तो नींद रोकनेका उदावर्त जानो.

उदावर्त सम्प्राप्ति— रूखे, कसेले, कडवे, भोजनसे कोठेकी वायु कुपित होकर उदावर्तरोग उत्पन्न करती है.

उदावर्त सामान्य या विशेष लक्षण— उक्त कारणसे वायु कुपित होके मल, मूत्र, वायुसरण, आंसू, कफ, और मेदप्रसारणी नाडी तथा मलमूत्रकोभी ऊर्ध्वगामी कर देती है तब हृदय तथा पेडूके शूल और उबकाई (वमनेच्छा) से मनुष्य विकल होकर बडे कष्टपूर्वक मल, मूत्र और अधोवायुका त्याग करता है. और उसे उक्त रोगके लक्षण पूरक श्वास, कास, दाह, मोह, तृषा, ज्वर, वमन, हिचकी, मस्तकरोग, मनोभ्रम, श्रवणोभ्रम (कानोंमें भन भ-

नाहट सुनाई पडना) और प्रतिष्याय (नाक बहना, जुकाम) तथा अन्य बहुतेरे वातविकारभी उत्पन्न होते हैं.

उदावर्तासाध्यलक्षण—जो उदावर्तवाला रोगी तृषा, क्षीणता, शूल और क्लेशसे विकल हो तथा मुखसे मल गिरने लगे तो वह पूर्ण रोग ग्रसित हो गया उसका बचना दैववशातही जानो.

अनाहरोगोत्पत्तिकारण—आंव किम्वा मल उदरमें क्रमसे संचित होनेपर कुपित वायुसे बंध जाते हैं (सूखके दृढ हो जाते हैं) तब मूलद्वारसे वह दृढ मल यथार्थ सुगमतापूर्वक न निकलनेके कारण पेट फूलकर तन जाता है इसे अनाह (अफरा)का रोग कहते हैं.

आमानाहरोगलक्षण— तृषा, शिरोग्रह, आमाशयमें शूल, शरीरमें भारीपन, हृदयमें पीडा, उवकाई, प्रतिष्याय और डकारोंका अभाव हो तो आंवका अफरा जानो.

मलानाहलक्षण—शरीर और कनपटी जकड जावें, मलमूत्र रुक जावे, मूर्छा और श्वास आवे, पक्काशयमें शूल चले, मलयुक्त उल्टी हो, और अलस रोगोक्त लक्षण हो तो पक्काशयमें मलके संग्रहका अनाह जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे उदावर्त-अनाहरोगलक्षण निरूपणं नाम द्वाविंशतिस्तरंगः ॥ २२ ॥

## ॥ गुल्मरोग ॥

**अथ पञ्चविधस्यात्र गुल्मरोगस्य हि क्रमात् ।**
**त्रयोविंशे तरंगेस्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थ—अब हम इस २३ वें तरंगमें ५ प्रकारके गुल्मरोगका निदान क्रमसे लिखते हैं.

गुल्मरोगोत्पत्तिकारण—आहारविहारकी विरुद्धतासे वातपित्त और कफ कुपित होकर पुरुष तथा स्त्रियोंके मूत्राशयसे हृदयपर्यन्त गोलेके आकारकी एक गांठ (नससमूल) उत्पन्नकर देते हैं इसीको गुल्मरोग कहते हैं. यह गुल्मरोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, और ५ रुधिरसे उत्पन्न होता है.

गुल्मरोगस्थान– दोनों पार्श्वशूल, हृदय, नाभि और पेडू मूत्राशय इन-मेंसे किसी एक स्थानमें गुल्मरोग उत्पन्न होता है.

गुल्मरोगसंप्राप्ति– हृदय और मूत्राशयके मध्य एक गोल गांठ होकर फिरने लगे या स्थिर रह जावे. दिनप्रति उसका आकार बढता जावे, अन्नपर अरुचि हो, मलमूत्र कष्टसे उतरे, वायु बढजावे, अंतोंमें शब्द होवे, अफरा चढे और पवन ऊर्ध्व गतिको प्राप्त हो जावे तो गुल्मरोग उत्पन्न हुआ जानो.

१ वातगुल्मोत्पत्तिकारण– रूखा अन्न भक्षण, विषमासन, बैठक, मलमूत्रावरोध, सोच, प्रहार, मल क्षीणता, लंघन, विरुद्ध चेष्टा, और अपनी अपेक्षा विशेष बलवान पुरुषसे मल्लक्रीडादि युद्ध करनेसे वातका गुल्म होता है.

वातगुल्मलक्षण–गोला कभी न्यून और कभी अधिक पीडा देवे, अधोवायु निकले नहीं, मल न उतरे, मुख और कंठ सूखे, शरीरकी कांति (वर्ण) काली पडजावे, शीतज्वर चढे, हृदय, कूख और पार्श्व भागमें पीडा हो, भोजन पचनेके पश्चात् पीडा अधिक और भोजन करनेपर घटजावे, रूखे, कसायले, और कडवे पदार्थ भक्षणसे पीडाकी अधिकाई हो तो बादीसे उत्पन्न हुआ गुल्मरोग जानो.

२ पित्तगुल्मोत्पत्तिकारण– कडवा, खट्टा, तीक्ष्ण, और उष्ण रस सेवन, मद्यपान करने, क्रोध करने, धूपमें बैठने, अग्नि तापने, चोट लगने, रुधिर बिगडने और आंवके बढावसे पित्तगुल्म होता है.

पित्तगुल्मलक्षण– शरीरमें ज्वर, तृषा, पीडा, दाह, व्रण होवें, पसीना अधिक निकले, भोजन करते समय और गोलेकें हाथ लगनेसे अत्यंत पीडा हो तो पित्तगुल्म जानो.

३ कफगुल्मोत्पत्तिकारण–शीतल, भारी, चिकनी वस्तु खाने, दिनको सोने और बैठे रहनेसे कफगुल्म उत्पन्न होता है.

कफगुल्मलक्षण–शीतज्वर चढे, शरीरमें पीडा, भोजनपर अरुचि, अंगमें भारीपन, खांसी और मुखसे कडुवे, खट्टे रसयुक्त वमन हो तो कफका गुल्म (गोला) जानो.

४ सन्निपातगुल्मोत्पत्तिकारण—पूर्वोक्त तीनों दोषोंके कोपसे सन्निपातगुल्म होता है.

सन्निपातगुल्मलक्षण— पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण हों तो सन्निपातगुल्म जानो.

रुधिरगुल्मोत्पत्तिकारण— यह रुधिर गुल्म पुरुषको नहीं वरन स्त्रीकेंही होता है. नव मासके पूर्व कच्चा गर्भ गिरने, कुपथ्य भक्षण और मिथ्या हारविहार करनेसे गर्भके ऋतुसमय अथवा विनऋतुही वायु कुपित होकर रक्तका संग्रह करके गुल्मको उत्पन्न करती है.

रुधिरगुल्मलक्षण—स्त्रीके उदरमें पीडा उठे, दाह चले, शूल होवे, वह अवयव रहित गोला पेटमें चारोंओर घूमे, पित्तगुल्मके सर्व चिन्ह हों, और गर्भ धारणके सदृश सर्व लक्षण दृष्टि पडे तो रुधिरगुल्म जानो.

विशेष द्रष्टव्य—वैद्यको चाहिये कि इस (रुधिरगुल्म)का निश्चय१०दश मास पूर्ण होनेपर करे क्योंकि रुधिरगुल्म और गर्भ धारणके समानही लक्षण होते हैं ईश्वरकी विचित्र गति है न जाने गुल्मका विश्वास करके यत्न किया जावे और गर्भ हो तो पूर्ण अनर्थ हो जावेगा. इसलिये १० मास गर्भसे बालोत्पत्तिकी अवधितक ठहरे जो गर्भ हो तो बालक उत्पन्न होगाही और न तो फिर गुल्मरोगकी चिकित्सा आयुर्वेदोक्त रीतिसे करे.

गुल्मरोगके असाध्यलक्षण—जो गुल्म क्रमशः बढता हुआ समस्त उदरमें व्याप्त होकर धात्वन्तरमें प्राप्त हो जावे, नसोंसे लिपटा हुआ कछुएके आकार होजावे, दुर्बलता, अरुचि, उबकाई, खांसी, उलटी, विकलता, तृषा, ज्वर, तन्द्रा, और प्रतिष्याय ये उपद्रव उत्पन्न करे तो असाध्य गुल्मरोग जानो.

तथा २— रोगीके हृदय, नाभि, हाथ, पांवपर सूजन चढे, ज्वर, श्वास, वमन, और अतिसारकी वृद्धि हो तो वह रोगी निश्चय कालवश प्राप्त होगा.

तथा ३— रोगीकें शूल, तृषा अन्नपर द्वेष होजावे और गुल्मकी गांठ अकस्मात गुप्त प्रकट होती जावे तो इस रोगीका कुशल रहना असंभवही जानो.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे गुल्मरोगलक्षण निरूपणं नाम त्रयोविंशतिस्तरंगः ॥ २३ ॥

॥ यकृत-प्लीहा-हृद्रोग ॥

यकृत्प्लीहा हृद्गदानां तरंगेस्मिन् यथाक्रमात् ।
समुद्रलोचनमिते निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– इस २४ चोवीसवें तरंगमें यकृत, प्लीहा, और हृदरोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

यकृत-प्लीहान्तर– यकृत और प्लीहा शरीरके अंग हैं, हृदयके नीचे दक्षिण पार्श्व भागमें यकृत और वामपार्श्वमें प्लीहा रहता है. प्लीहा रोग नसोंके वहावका मुख्य स्थान है इसका रोगी अति क्लेशपात्र होता है. यकृत और प्लीहामें केवल दाहिने वायेंकाही अंतर है इसलिये उन दोनोंकी लक्षणोत्पत्ति तथा चिकित्साभी समतुल्यही है. हम प्रथम प्लीहाकों दर्शाते हैं.

प्लीहारोगोत्पत्तिकारण– मनुष्यके उष्ण वस्तु तथा दहीं आदि कफकारी पदार्थ भक्षण करनेसे रुधिर या कफ बढकर प्लीहाको बढा देते हैं.

प्लीहारोगकी सम्प्राप्ति– मंद ज्वर मंदाग्नि होकर बलनाश हो जावे, शरीरमें कुपित कफ पित्तके लक्षण हो जावें, और शरीर पीतवर्णका हो जावे तो प्लीहारोग (पिलही) उत्पन्न हुआ जानो. यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, और ४ रुधिरसें उत्पन्न होता है.

१ वातप्लीहालक्षण– पेटमें नित्य अफरा रहा करे, उदावर्त रोग हो, और पेटमें शूल चले तो बादीका प्लीहा जानो.

२ पित्तप्लीहालक्षण–ज्वर, तृषा, दाह, मोह हो, और शरीरका वर्ण पीला पडजावे तो पित्तका प्लीहा जानो.

३ कफप्लीहालक्षण– पेटमें मंद मंद पीडा हो, प्लीहा दृष्टि पडे, भारी हो, शरीरमें बोझ जानपडे और भोजनमें अरुचि होतो कफ प्लीहा जानो.

४ रुधिरप्लीहालक्षण–सर्व इंद्रियां शिथिल होजावें, शरीरका वर्ण विपरीत हो जावे, अंग भारी हो, पेट लाल हो और भ्रम, दाह, मोह होतो रुधिरप्लीहा जानो.

असाध्यप्लीहालक्षण–जिसमें पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण हो वह असाध्यहै.

---

१ प्लीहा वही रोग है जिसे मारवाडी भाषामें फिया, बुन्देलखण्डी भाषामें खपरा और भाषामें इसीको तापतिल्लीभी कहते हैं.

यकृतरोग– इसकी उत्पत्ति लक्षणादि सब प्लीहाके समानही हैं इसीलिये प्रथम यकृतरोगके विषयमें कुछ न लिखा.

हृद्रोगोत्पत्तिकारण– उष्ण, भारी, कसैली, खट्टी, तीक्ष्णके अधिक भक्षण, अधिक श्रम, हृदयमें चोट, अति चिंता और मलमूत्रावरोधके कारणसे हृदरोग उत्पन्न होता है. यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात और ५ कृमी इन पांच कारणोंसे उत्पन्न होता है.

हृद्रोग सामान्यस्वरूप–भोजनका रस प्रथम हृदयमें प्राप्त होकर त्रिदोषकी प्रेरणासे बिगड जाता है तब छाती (हृदय)में अत्यंत पीडा उत्पन्न होती है इसे वैद्यलोग हृद्रोग कहते हैं.

वातहृद्रोग लक्षण– हृदयमें पीडा फैल जावे, सुई चुभाने, दही मथने, आरीसे चीरने, कुल्हाडीसे फाडने, या हाथसे चीर डालनेके सदृश पीडा होवे तो बादीका हृद्रोग जानो.

पित्तहृद्रोग लक्षण– तृषा, दाह, घबराहट, मूर्च्छा, मुखसे कुछ दुर्गंध हो, मुख सूखे, हृदयमें चूसनेके समान पीडा हो और मुखसे धुवां निकले तो पित्तका हृद्रोग जानो.

कफजहृद्रोग लक्षण– हृदय भारी हो, मुखसे कफ गिरे, भोजनमें अरुचि हो, शरीर जकडबंद होजावे, हृदयमें कफ जम जावे, मुख मीठा रहे और अग्नि मन्द होजावे तो कफका हृद्रोग जानो.

सन्निपातज हृद्रोगलक्षण–जिसमें उक्त कहेहुए तीनों दोषोंके लक्षण दृष्टि पडें और तीव्र सुई छेदनेके सदृश पीडा हो सो सन्निपातका हृद्रोग जानो.

कृमिज हृद्रोगलक्षण– रोगीको खाज, उबकाई थुकी (थूकनेकी इच्छा) शूल, हृदयमें पीडा, नेत्रोंके साम्हने अंधियारी, भोजनपर अरुचि, नेत्रोंमें धूसर या काला रंग होजावे, मुख सूखे और अंगमें सुई छेदनेके समान पीडा होतो कृमिका हृद्रोग जानो.

हृद्रोगके उपद्रव– क्लोम (तृषास्थानकी ग्लानि) और भ्रम हो, मुख सूखे, और कफकृमिके सर्व उपद्रव हों तो हृदरोगके उपद्रव जानो.

इति नूत० नि० यकृत्-प्लीहा-हृद्रोगलक्षणनिरूपणं नाम चतुर्विंशस्त० २४

## ॥ मूत्रकृच्छ्र-मूत्राघात ॥

मूत्रकृच्छ्रस्य रोगस्य मूत्राघातस्य वै क्रमात् ।
तरङ्गे बाणनेत्रेऽस्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– इस पच्चीसवें तरंगमें मूत्रकृच्छ और मूत्राघात रोगोंका निदान यथाक्रमसे

मूत्रकृच्छ्र रोगोत्पत्ति– तीक्ष्ण, रूखा, कच्चा अन्न खाने, जलचर जीवोंका मांस भक्षण करने, भोजनपर पुनः भोजन करने, अजीर्ण होने, परिश्रम होने, मद्य पीने, नृत्य करने घोडे आदिकी आरूढि (सवारी) करनेसे मनुष्यकैं मूत्राघातरोग उत्पन्न होता है.

यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ प्रहार, ६ मलावरोध, ७ शुक्रावरोध, और ८ पथरीसे उत्पन्न होनेके कारण आठ प्रकारका है.

मूत्रकृच्छ्ररोगके सामान्यलक्षण–वात, पित्त, कफ अपने अपने कारणोंसे कुपित हो मूत्राशयमें प्राप्त होकर मूत्र मार्गमें पीडा करते हैं तब मूत्र अति कष्टपूर्वक चिनक चिनककर उतरता है. मूत्रका रुकावतो थोडा परन्तु पीडा अधिक होती है जो ये लक्षण होने लगें तो मूत्रकृच्छ्र हुआ जानो.

१ वातमूत्रकृच्छ्रलक्षण–जांघ, लिंगेन्द्रिय, मूत्राशय और मूत्राशयकी सन्धियोंमें पीडा होवे, थोडा थोडा मूत्र वारम्वार उतरे तो वातमूत्रकृच्छ्र जानो.

२ पित्तमूत्रकृच्छ्रलक्षण–पीला या लाल तथा अत्यंत उष्ण मूत्र लिंगेन्द्रियसे वडी तडक पूर्वक उतरे तो पित्तमूत्रकृच्छ्र जानो.

३ कफमूत्रकृच्छ्रलक्षण–मूत्राशय और लिंगेन्द्रिय दोनों भारी हों, दोनोंमें शोथ हो, मूत्रमें फेन आजावे, और मूत्र कष्टसे उतरे तो कफमूत्रकृच्छ्र जानो.

४ सन्निपातमूत्रकृच्छ्रलक्षण– तीनों दोषोंके समस्तलक्षण दृष्टि पडे तो सन्निपातमूत्रकृच्छ्र जानो.

५ प्रहारजमूत्रकृच्छ्रलक्षण– मूत्र रुकजावे, और वातमूत्रकृच्छ्रके समस्तलक्षण हो तो चोट लगनेका मूत्रकृच्छ्र जानो. इससे बचना दैववशात् है.

६ मलावरोधमूत्रकृच्छ्रलक्षण– मलके वेग रोकनेसे वायु कुपित होकर

मूत्राशय और पेटमें अफरा करती है. जो जाघोंमें पीडा हो, और मूत्र कष्टसे उतरे तो मलावरोध मूत्रकृच्छ्र जानो.

७ शुक्रावरोध मूत्रकृच्छ्रलक्षण– मूत्राशय और लिंगेन्द्रियमें शूल चले, वीर्यमिश्रित मूत्र अति कष्टपूर्वक उतरे तो वीर्य रोकनेका मूत्रकृच्छ्ररोग जानो.

८ पथरीमूत्रकृच्छ्रलक्षण– पथरी और शर्करा (रेती) ये दोनों अंत्रस्थान पोतो )में रहती हैं. पथरी पित्तसे पकती, वादीसे सूखती और कफसे घिसाती हुई रेतीरूप होकर मूत्र मार्गसे निकलनेके समय मूत्रको रोकती है तब रोगीके हृदयमें पीडा, शरीरमें कम्प, कुक्षिमें शूल, मन्दाग्नि और मूर्छा होती है ये लक्षण हों तो पथरीका मूत्रकृच्छ्र जानो. यह अति दारुण हैं.

मूत्राघातरोगोत्पत्तिकारण– कुपथ्य करनेसे वातपित्त, कफका प्रकोप होकर मूत्राघात[1]रोग उत्पन्न होता है. यह रोग १ वातकुण्डलिका, २ अष्टीला, ३ वातवस्ति, ४ मूत्रातीत, ५ मूत्रजठर, ६ मूत्रोत्संग, ७ मूत्रक्षय, ८ मूत्रग्रंथि, ९ मूत्रशुक्र, १० उष्णवात, ११ मूत्रसाद, १२ विडविघात, और १३ बस्तिकुण्डली, १३ प्रकारका है.

वातकुण्डलिकालक्षण– रूखी वस्तु खाने और मूत्रकृच्छ्रके धारणसे वायु मूत्राशयमें प्राप्त होकर पीडा करता, मूत्रकी नसोंमें विचरता हुआ कुपित होता है. तब कफ मूत्रके छिद्रको रोक देता है और वायु कुंडलाकार होकर लिंगेन्द्रियके मुखमें रहता है इसलिये मनुष्य थोडा थोडा अत्यन्त पीडापूर्वक मूतता है जो ये लक्षण हो तो वातकुण्डलिका जानो. यह असाध्य है रोगीका बचना दुर्लभही जानो.

२ अष्टिलारोगलक्षण– मूत्राशयमें अफरा हो, गुदासे वायु सरण न हो, गुदामें वायुकी दृढ पत्थर सदृश गांठ पडजावे, मल न उतरे, और अति पीडा हो तो अष्टिलारोग जानो.

३ वातबस्तिलक्षण– मूत्रका वेग रोकनेसें मूत्राशयमें वायु प्राप्त होकर

---

१ मूत्राघात और मूत्रकृच्छ्रमें विशेषान्तर नहीं. मूत्रकृच्छ्रमें मूत्र थोडा रुकतापर पीडा अधिक होती है. और मूत्राघातमें मूत्र अधिक रुकतापर पीडा थोडी होती है. अर्थात् एक दूसरेसे विपरीत हैं.

मूत्रप्रसारणी नसोंका मुख रोक देती है. जो मूत्र न उतरे, कूंख तथा मूत्राशयमें पीडा हो तो बस्तिवात जानो यह अति कष्टकारी रोग होता है.

४ मूत्रातीतलक्षण— जो मनुष्य मूत्रको विलम्बतक रोके रहे पश्चात् मूत्र बेगसे न उतरे मंद धारासे प्रवाह होतो मूत्रातीत जानो.

५ मूत्रजठररोग लक्षण— मूत्रका बेग रोकनेसे गुदाकी अपानवायु उदरको पवनसे भरके नाभिके नीचे अफरा और अत्यंत पीडा उत्पन्न करे तो मूत्रजठररोग जानो.

६ मूत्रोत्संग लक्षण— पेडू या लिंगेन्द्रियकी नसोंमें प्राप्त हुए मूत्रको रोक रखनेसे मूत्रके संग थोडा थोडा रुधिर पीडायुक्त या निष्पीडाही गिरने लगे तो मूत्रोत्संगरोग जानो.

७ मूत्रक्षयरोग लक्षण— अति श्रमसे शरीर रूखा होकर मूत्राशयमें रहनेवाले वात, पित्त, कफ मूत्रको नष्ट कर देते हैं. तब अति दाह और पीडा पूर्व किंचित् किंचित् मूत्र उतरता है इसे मूत्रक्षयरोग कहते हैं.

८ मूत्रग्रंथि लक्षण— मूत्राशयमें अकस्मात् छोटीसी स्थिर अतिदृढ आंवलेके समान गोल वातकी गांठ उत्पन्न होजावे सो मूत्रग्रंथि जानो.

९ मूत्रशुक्ररोग लक्षण— मूत्रके वेगसमय स्त्रीसे मैथून करनेको प्रवृत होतो पुरुषकी वायु शुक्रस्थानको भ्रष्टकर मूत्रश्राव (पेशाब कर चुकने)के पूर्व या पश्चात् भस्मके पानीके सदृश वीर्यको गिराती है इसे मूत्रशुक्र कहते है.

१० उष्णवातरोग लक्षण— स्त्रीप्रसंग, श्रम और धूपकी आधिक्यतासे पेडूमें रहनेवाले वात, पित्त, पेडू, लिंगेन्द्रिय और गुदाको दग्धकरते हुए अति कष्टपूर्वक हल्दीके समान पीतवर्ण या रुधिर संयुक्त रक्तवर्ण मूत्र उतरने देवे तो उष्णवातरोग जानो.

११ मूत्रसादरोग लक्षण— कुपथ्यके कारण मूत्राशयकी वात पित्त और कफ बिगडकर मूत्रको अत्यन्त कष्टपूर्वक उतरने देते हैं तब रोगीका शरीर सूख जावे, पीला लाल श्वेत गोरोचन समान, रक्तसमान, या चूनासदृश और गाढा तथा थोडा थोडा मूत्र उतरे तो मूत्रसादरोग जानो.

१२ विड्घातरोग लक्षण— अति रूखा अन्न खानेसे मनुष्य दुर्बल होकर

अति कष्टपूर्वक मलयुक्त मूत्र छोडे, और मूत्रकी दुर्गंधि मलसदृश आवे तो बिडघातरोग जानो.

१३ बस्तिकुण्डलीरोग लक्षण– विशेष वेगपूर्वक दौडने, लंघन और श्रमकी दीर्घता तथा किसीप्रकारके प्रहारसे मूत्राशयमें गांठ पडके गर्भके समान निश्चल होजावे, शूल और दाह हो, गांठ दबानेसे बूंद बूंद और विशेष दबानेसे मूत्रकी धारा गिरने लगे तथा शस्त्रकी चोट लगनेके सदृश दीर्घ पीडा हो तो बस्तिकुंडलिकारोग जानो. यह असाध्य है इससे बचना दैववशात् है.

विशेषतः– वातकुण्डलिकासे बस्तिकुण्डलिका पर्यन्त जो ऊपर १३ विकार लिख आये हैं ये तेरहों मूत्राघातकेही विशेष भेद हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे मूत्रकृच्छ्र-मूत्राघातरोगोत्पत्तिलक्षण निरूपणं नाम पञ्चविंशतिमस्तरंगः ॥ २५ ॥

॥ अश्मरी-प्रमेह-पीडिका ॥

**अश्मरीमेहपिडिकागदानां च यथाक्रमात् ।**
**रसपक्षमिते भङ्गे निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थ– अब हम इस छब्बीसवें तरंगमें अश्मरी, प्रमेह और पिडिकारोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

अश्मरी (पथरी) रोगोत्पत्तिकारण– मूत्राशयमें रहता हुआ वायु मूत्राशयके वीर्य, मूत्र, पित्त और कफको सुखाकर क्रम क्रमसे पथरीको उत्पन्न करता है, जैसे गौके हृदय (पित्ते) अन्तस्थानमें गोरोचन बढ जाता है तैसेही मनुष्यकें पथरी बढ जाती है यह तीनों दोषोंके कोपसे होती है. कुछ एकसेही नहीं.

अश्मरीपूर्वरूप– पेट फूले, लिंगेन्द्रिय, मूत्राशय और अंत्रस्थान (अंडकोश) आदिमें अत्यंत पीडा हो, हृष्टपुष्ट बकरेके सदृश गंध मूत्रकी आवे, मूत्रकृच्छ्र, ज्वर और अरुचि प्राप्त हो तो पथरी होनेवाली जानो.

अश्मरीसामान्यरूप– नाभि, मूत्रनस (सीवन), मूत्राशय, मस्तकमें अत्यंत पीडा हो, मूत्रकी धारा एकसी बंधी हुई नहीं किन्तु टूटती टूटती हुई

गिरे, मूत्रमार्ग रुकजावे, पथरीसे मूत्रमार्ग खुल जानेपर सुखपूर्वक पीला और उसी पथरीसे मूत्रमार्ग बंद हो जानेपर दीर्घ वेदना पूर्वक लाल मूत्र उतरे तो पथरीका प्रवेश हो चुका जानो.

अश्मरीभेद–यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, और ४ वीर्यावरोधसे उत्पन्न होकर चार प्रकारका है परन्तु चारोंके साथ कफका संसर्ग सदैव बनाही रहता है.

१ वाताश्मरीलक्षण– लघुशंका (मूत्र) करतेसमय इन्द्री और नाभिमें पीडाके मोरे चिल्ला उठे, रेचन हो जावे, कम्पित होवे, मूत्र बूंद बूंद उतरे, दांत चावने लगे और कांटेयुक्त श्याम रंगकी पथरी हो तो बादीकी पथरी जानो.

२ पित्ताश्मरीलक्षण– पेडूमें पकेहुए फोडेके समान वेदना और उष्णता हो, भिलावेंके वीज सदृश आकार हो, और पथरीका रंग पीला, लाल या काला हो तो पित्तकी पथरी जानो.

३ कफाश्मरीलक्षण– पेडू शीतल या भारी रहनेपर पीडा अधिक हो, पथरी चिकनी, गिलगिली, श्वेत और मुरगीके अंडेके वरावर हो तो कफकी पथरी जानो.

शुक्रावरोधाश्मरीलक्षण– मैथुन करनेकी योग्यावस्थामें (वीर्य पूर्वरूपसे भर चुकनेपर) प्राप्त होनेपरभी किसी प्रकारसे वीर्यको रोककर पात न होने देवे तो वह (वीर्य) वायुकी प्रेरणासे मूत्राशय और अंडकोशके बीचमेंही सूखकर पथरी उत्पन्न कर देता है. जो पेडूमें शूल चले, अंडकोशपर शोथ, मूत्रमें पीडा, और वीर्यका अभाव हो जावे तो वीर्यकी पथरी जानो.

उपभेद– यही शुक्राश्मरी लिंग और अंडकोशका मध्यभाग दवानेसे वायुकी प्रेरणाद्वारा रेतीके सदृश बारीकरूप होकर मूत्रके साथ गिरती है तब शर्करा, और परमाणुरूप होकर गिरती है तब सिकता कहलाती है. जब वायु अनुलोम गतिमें होती है तब तो यह पथरी मूत्र मार्गसे एक साथही

१ पथरी कुछ ऊपर दिखती नहीं परंतु सद्वैद्य शस्त्रक्रियासे इसे निकाल सक्ते हैं. उक्त विधिसे निकाली हुई पथरियोंकी परिक्षा तथा निरीक्षण करनेसे उपरोक्त वर्णित लक्षण, तथा आकार प्रत्यक्ष देखे गये हैं. निस्संदेह !

निकल जाती परन्तु वायु प्रतिलोम होनेसे पुनः एकत्र होकर वंद रहती है तब यह (पथरी) मूत्र प्रवाहणी नाडियोंमें जमकर उपद्रवोंको उत्पन्न करती है.

अश्मरीउपद्रव– निर्बलता, अंगशैथिल्यता, कृशता, कुक्षिशूल, अरुचि, पाण्डुवर्ण, उष्णवात, तृषा, उलटी और हृदयमें दवानेके सदृश पीडा ये पथरीके उपद्रव हैं. इन्हें प्रथम दवाओ तव पश्चात् मूलरोगको दवाना चाहिये.

असाध्याश्मरीलक्षण– नाभि, और अंडकोशमें शोथ हो, मलमूत्र रुककर विशेष पीडा हो तो पथरी, शर्करा या सिकता इस रोगीको नष्टकर देवेंगी, इनसे बचना दुर्लभही जानो.

प्रमेहरोगोत्पत्ति– बैठे रहना, सोते रहना, श्रम न करना, मैथुन करना, धूपमें फिरना, नवीन जल या मद्यपान करना, दही, भेडियेका मांस, गुड आदि मिष्टपदार्थ, कफकारी पदार्थ, विरुद्ध भोजन, उष्ण भोजन, और खट्टा या कडुवा रस खाना, इन क्रियाओंकी विशेषाधिक्यता होनेसे मनुष्यको प्रमेह (परमां) रोग उत्पन्न होता है. सो यह रोग वात, पित्त और कफके प्रभेदके कारण २० प्रकारका है इनके प्रभेदका स्पष्टीकरण दर्शाते हैं.

१ वातप्रमेह सम्प्राप्ति– अपनी अपेक्षा क्षीण कफ, पित्तकी क्षीणताके कारण मूत्राशयके शुद्ध मांसस्नेह (वसा) मज्जा, और शरीरके रसको वायु (मूत्राशयकी) नसोंके मुखमें स्थित करके ४ प्रकारका प्रमेह उत्पन्न करती है.

२ पित्तप्रमेह सम्प्राप्ति– उष्ण पदार्थोंसे कुपित हुआ पित्त मूत्राशयके मेदमांस और शरीर रसको दूषित करके ६ प्रकारका प्रमेह उत्पन्न करता है.

३ कफप्रमेह सम्प्राप्ति– स्वकारणीय कुपित हुआ कफ मूत्राशयके मेदमांस और शरीर रसको दूषित करके १० प्रकारका प्रमेह उत्पन्न करता है.

१ वातप्रमेहान्तर्गत भेद– १ वसाप्रमेह, २ मज्जाप्रमेह, ३ मधुप्रमेह, ४ और हस्तिप्रमेह ये वातसे होते हैं.

२ पित्तप्रमेहान्तर्गत भेद– १ क्षारप्रमेह, २ नीलप्रमेह, ३ कालप्रमेह,

---

१ वात, पित्त, और कफकी पथरी तो बाल, वृद्ध, युवा सभीको होती है. परन्तु शुक्राश्मरी केवल तरुण पुरुषोंकोही (जो पूर्ण वीर्य पूरित होगये हों) होती है. शर्करा और सिकता ये दोनों शुक्राश्मरीके भेद हैं.

४ हारिद्रप्रमेह, ५ मांजिष्टप्रमेह, और ६ रक्तप्रमेह ये पित्तसे होते हैं.

३ कफप्रमेहान्तर्गत भेद– १ उदकप्रमेह, २ इक्षुप्रमेह, ३ सांद्रप्रमेह, ४ सुराप्रमेह, ५ पिष्टप्रमेह, ६ शुक्रप्रमेह, ७ सिकताप्रमेह, ८ सीतप्रमेह, ९ शनैप्रमेह, और १० लाला प्रमेह ये दश कफसे होते हैं.

विशेष भेद– १ पूयप्रमेह, २ तक्रप्रमेह, ३ पिडिकाप्रमेह, ४ शर्कराप्रमेह, ५ घृतप्रमेह, और ६ अति मूत्रप्रमेह, ये ६ प्रकारके प्रमेह उक्त २० प्रमेहोंसे व्यतिरिक्त हैं. क्यों कि पूर्वोक्त २० प्रमेह चरक, सुश्रुत, वाग्भट्ट और भावप्रकाशके मतसे तथा उपरोक्त ६ प्रमेह आत्रेय मतसे निश्चित किये गये हैं अतएव २६ प्रकारभी हो सक्ते हैं.

साध्यासाध्यप्रमेहनिर्णय– १ वायुसे दूषित मज्जादि सर्व शरीर व्यापी गंभीर धातुओंके नाश होनेसे वातप्रमेह असाध्य. २ दोष और दूष्योंके[1] विषमपनेसे पित्तप्रमेह याप्य. ३ और दोष और दूष्योंके समान यत्न होनेसे कफप्रमेह साध्य होता है.

प्रमेहपूर्वरूप– जीभ, तालु और दांतोंमें अधिक मैल जमे, हाथपांवमें दाह हो, तृषा अधिक लगे, मुख मीठा बना रहे और देह चिकनी होजावे तो अनुमान करलो कि प्रमेह उत्पन्न होगा.

प्रमेहसामान्यलक्षण– अत्यंत गाढा या अत्यंत पतला मूत्र उतरे तो जानो कि इसे प्रमेह उत्पन्न हो चुका है.

१ ॥ वातप्रमेहान्तर्गतभेदलक्षण ॥

१ वसाप्रमेहलक्षण– मूत्रके साथ वसा[2]भी गिरे, मूत्रका रंग कुछकुछ नीलवर्ण हो तो वसाप्रमेह जानो.

२ मज्जाप्रमेहलक्षण– मज्जा (हाडकी गूदे)के सदृश अथवा मज्जायुक्त मूत्र उतरे तो मज्जाप्रमेह जानो.

---

१ वात, पित्त, और कफ ये दोष. तथा रस, मांसादि दोषोंसे नष्ट होनेवाले पदार्थ दूष्य कहाते हैं.

२ शुद्ध मांसका मिश्रण, चिकना, घृतसदृश पदार्थ, जिसे उर्दू भाषामें चर्बी कहते हैं.

३ मधुप्रमेह[1]लक्षण– कसैला या मधुके समान मीठा और रूखा मूत्र उतरे तो मधु (क्षौद्र) प्रमेह जानो.

४ हस्तिप्रमेहलक्षण– वेगरहित और स्निग्ध (चिकना हट) सहित तथा अवरोधयुक्त मतवाले हाथीके समान मूत्र उतरे तो हस्तिप्रमेह जानो.

२ ॥ पित्तप्रमेहान्तर्गतलक्षण ॥

१ क्षारप्रमेहलक्षण–खारके पानीसदृश मूत्रका वर्ण होजावे और इन्द्रीमें खारसदृश जल न होवे तो क्षारप्रमेह जानो.

२ नीलप्रमेहलक्षण–जिसके मूत्रका रंग नीलके समान होजावे उसे नीलप्रमेह जानो.

३ कालप्रमे[2]हलक्षण–जिसके मूत्रका रंग काला (श्याहीसदृश) होजावे उसे कालप्रमेह जानो.

४ हरिद्राप्रमेहलक्षण–जिसके मूत्रका रंग हल्दीके समान पीला होजावे और अति कटु तथा दाहयुक्त मूत्र उतरे तो हरिद्राप्रमेह जानो.

५ मांजिष्टप्रमेहलक्षण– मजीठके रंगसदृश मूत्रका रंग होजावे, और मूत्रकी दुर्गंधि आवे तो मांजिष्टप्रमेह जानो.

६ रक्तप्रमेहलक्षण– मूत्रका रंग रक्तसदृश, अत्यंत दुर्गन्धियुक्त उष्ण और नमकयुक्त हो तो रक्तप्रमेह जानो.

३ ॥ कफप्रमेहान्तर्गतभेदलक्षण ॥

१ उदकप्रमेहलक्षण–निर्मल, शीतल, श्वेतवर्ण, चिकना, गाढा, और गंधरहित जलसदृश तथा बहुत मूत्र उतरे तो उदकप्रमेह जानो.

२ इक्षुप्रमेहलक्षण– ईखके रससमान अत्यंत मीठा, मूत्र उतरे जिसपर चैंटी या मक्खी आ बैठे उसे इक्षुप्रमेह जानो.

३ सांद्रप्रमेहलक्षण–वासे पानीकेसदृश गाढा मूत्र उतरे तो सांद्रप्रमेह जानो.

---

[1] प्रमेहका कोईभी भेद बहुत दिनोंतक निरौषध रहने और कुपथ्यपूर्वक व्यवहारसे मधुप्रमेह हो जाता है. यह महाअसाध्य है.

[2] इसके लक्षणानुसार तो कालप्रमेहकी अपेक्षा "श्यामप्रमेह" नामही कहा होता क्यों कि कालशब्द मृत्युबोधक होनेसे उसका अर्थ मृत्युप्रमेह हो जावेगा.

४ सुराप्रमेहलक्षण– मदिराके समान गंधित, निर्मल, गाढा, और बहुत मूत्र उतरे तो सुराप्रमेह जानो.

५ पिष्टप्रमेहलक्षण– चांवलके आटे मिले जलके समान, गदला, गाढा और श्वेत मूत्र उतरे लघुशंकाके समय पीडा होकर रोमाञ्चित होजावे तो पिष्टप्रमेह जानो.

६ शुक्रप्रमेहलक्षण–वीर्यकेसदृश या वीर्ययुक्त मूत्र उतरे तो शुक्रप्र०जानो.

७ सिकताप्रमेहलक्षण– वीर्यके कणको लियेहुए मूत्र उतरे उसे सिकता-प्रमेह जानो. सिकता=रेती या वालु.

८ शीतलप्रमेहलक्षण– वारम्वार शीतल (ठंडा) और बहुत मूत्र उतरे उसे शीतलप्रमेह जानो.

९ शनैःप्रमेहलक्षण– जो शनैः शनैः (धीरेधीरे रहरहकर) मंद धारासे और थोडा थोडा मूत्र उतरे तो शनैःप्रमेह जानो.

१० लालाप्रमेहलक्षण– लार (मुंहका थूक, चिकना जल)के सदृश तार चलताहुआ मूत्र उतरे तो लालाप्रमेह जानो.

१ वातप्रमेहोपद्रव– उदावर्त रोग होजावे, शरीरमें पीडा होवे, हृदय कंपे, सर्व रस भक्षणेच्छा रहे, पेटमें शूल हो, निन्द्रा न आवे, शरीर सूख जावे, और श्वास खांसी होतो वातप्रमेहके उपद्रव हैं.

२ पित्तप्रमेहोपद्रव– पेडू और इन्द्रीमें शूल हो, पोते फटने लगे, ज्वर मोह-तृषा-मूर्छा-अतिसार हो और खट्टी डकारें आवें ये पित्तके प्रमेहके उपद्रव हैं.

३ कफप्रमेहोपद्रव– अन्न पाचन न हो, भोजनमें अरुचि हो, वमन हो, निद्रा अधिक आवे, खांसी चले और पीनसका रोग हो ये कफके प्रमेहके उपद्रव हैं. इन्हें प्रथम दबाओ पश्चात् चिकित्सा करो.

आत्रेयमत निर्मित षड्विध प्रमेहलक्षण.

१ पूयप्रमेह लक्षण– राध (पीव)के सदृश मूत्र उतरे या पीपके समान गंध उडे तो पूयप्रमेह जानो.

२ तक्रप्रमेहलक्षण– छाछ (मठा)के सदृश मूत्र उतरे या मूत्रमें मठा-कीसी गंध आवे उसे तक्रप्रमेह जानो.

३ पिडिकाप्रमेह लक्षण— जिसके मूत्रमें वीर्यकी डली (डेला) गिरे उसे पिडिकाप्रमेह जानो.

४ शर्कराप्रमेह लक्षण— मूत्र शक्कर तथा मिश्रीके समान मीठा और मिश्रीके सदृश वर्णधारी हो तो शर्कराप्रमेह जानो.

५ घृतप्रमेहलक्षण— मूत्रका वर्ण और स्वाद घृतके समान होजावे तो घृतप्रमेह जानो.

६ अतिमूत्रप्रमेह लक्षण— रात्रिदिन क्रमशः अधिक मूत्र उतरे और रोगीभी क्रमशः निर्बल होता जावे तो अतिमूत्रप्रमेह जानो.

प्रमेह असाध्य लक्षण— वात पित्त और कफके प्रमेह अपने अपने उपद्रव युक्त होजावे तथा प्रमेहपर पिडिका प्राप्त होजावे तो महा असाध्य हो गया उस रोगीका बचना असम्भव जानो.

प्रमेहमुक्त लक्षण— जिस रोगीका मूत्र निर्मल, पानी सदृश पतला, कडुआ और तीक्ष्ण होजावे उसका प्रमेह नाश हुआ जानो.

विशेषदृष्टि—जिस रोगीका शरीर हल्दीकेसदृश पीला और मूत्र रुधिरके समान लाल हो जाता है उसे बहुतसे वैद्य भ्रमसे रक्तप्रमेह जानते हैं सो रक्तप्रमेह नहीं वह रक्तपित्तका कोप जानो. यहभी रक्तप्रमेहका एक विभेदही है.

अनेक आचार्योंका ऐसा मत है कि रजोधर्मसे स्त्रियोंके अनेक रोग दूर हो जाते हैं इसीलिये उन्हें प्रमेह नहीं किन्तु प्रदर होता है.

पिडिकारोगोत्पत्तिकारण— प्रमेहरोगपर विशेष कालतक औषधादि उपचार न होनेसे संधि, मर्मस्थान और मांसल (शरीरमें चूतड, जांघ आदि मांस भरे) अवयवोंमें पिडिका उत्पन्न होती है. यह रोग (१ शराविका, २ कच्छपिका, ३ जालिनी, ४ विनिता, ५ अलजी, ६ मसूरिका, ७ सर्षपिका, ८ पुत्रिणी, ९ विदारिका, और १० विदध्रि) १० प्रकारका है.

१ शराबिकापिडिका लक्षण— फुनसी ऊपरसे उंची और बीचमें गड्ढा हो तो शराबिका जानो.

२ कच्छपिकालक्षण— शरीरके पुष्ट स्थानोंमें सरसोंके समान, दाहयुक्त और कछवेके आकारकी फुनसी हों तो कच्छपिका जानो.

३ जालिनीलक्षण– मांसके समूहमें दाहयुक्त फुनसी हों तो जालिनी पिडिका जानो.

४ विनतालक्षण– पीठपर या पेटपर दाहयुक्त बडी बडी फुनसी हो तो विनतापिडिका जानो.

अलजीलक्षण– पीडायुक्त लाल या काली फुनसी हो और बहुत फटें तो अलजीपिडिका जानो.

६ मसूरिका लक्षण– मसूरके बराबर और मसूरके रंगसमान लाल रंगकी फुनसी होंतो मसूरिका जानो.

७ सर्षपिका लक्षण– सरसोंके प्रमाण और सरसोंके रंगसदृश फुनसी हों तो सर्षपिका जानो.

८ पुत्रिणी लक्षण– बडी फुनसियोंके चहुंओर बारीक बारीक बहुतसी फुनसी हों तो पुत्रिणी जानो.

९ विदारिका लक्षण– विदारी कंदके समान गोल और उसीके रंगके समान रंगवाली फुनसी हों तो विदारिका जानो.

१० विद्रधिपिडिका लक्षण– ये फुनसी ६ छः प्रकारकी होती हैं जिनका निदान आगे लिखेंगे.

आत्रेय मतनिर्मित पिडिका लक्षण.

१ वातपिडिका लक्षण– काली फुनसी हों, शरीर कंपने लगे, लघुशंका करनेमें शूल हो, और रोगी विकल हो जावे तो वातपिडिका जानो.

२ पित्तपिडिका लक्षण– लाल या काली फुनसी दाहयुक्त हो तो पित्तपिडिका जानो.

३ कफपिडिका लक्षण– फुनसी श्वेत, मोटी, और शीतल हों, शोथयुक्त हों तो कफपिडिका जानो.

४ सन्निपातपिडिका लक्षण– उक्त तीनों दोषोंके लक्षण हो तो सन्निपातपिडिका जानो.

पिडिकाके उपद्रव– तृषा, खांसी, मोह, हिचकी, मंदज्वर, विसर्प और मर्मरोग होवें, तथा मांसका संकोच ( खिचाव ) हो ये पिडिकाके उपद्रव जानो.

असाध्यपिडिका लक्षण– गुदा, हृदय, मस्तक, कंधे और मर्मस्थानोंमें फुनसियां होजावे तथा मंदाग्निवालेको पिडिकारोग होजावे तो असाध्य जानो.

विशेषता– यह रोग विशेषकर प्रमेहवाले रोगीकेही होता है परन्तु मेद बिगडनेसे बिना प्रमेहभी उत्पन्न हो जाता है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे अश्मरी-प्रमेह-पिडिकालक्षण निरूपणं नाम षड्विंशतिमस्तरंगः ॥ २६ ॥

॥ मेदो-अतिस्थूल-कार्श्य-उदररोग ॥

**मेदोरोगस्य स्थूलस्य कार्श्यस्य चोदरस्य वै ।**
**मुनिपक्षमिते भङ्गे निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थ– अब हम इस २७ वें तरङ्गमें मेद, अति स्थूल, कार्श्य, और उदररोगका निदान यथाक्रमसें लिखते हैं.

मेदरोगोत्पत्तिकारण– अत्यंत परिश्रम करने, बैठे रहने, दिनको सोने, कफकारक पदार्थ भक्षण करने, और घृत तथा मधुरान्नका भोजन करनेसें मेद (चर्बी) बढकर समस्त धातुओंका मार्ग रोक देती है तब अन्य धातुएं पुष्ट नहीं होने पाती अतएव मेदवृद्धिवाला पुरुष सर्व कार्योंके करनेमें अशक्त हो जाता हैं.

मेदवृद्धिसम्प्राप्तिलक्षण– क्षुद्रश्वास, तृषा, मोह, निद्राधिक्यता, अकस्मात श्वासावरोध, शरीरमें पीडा तथा शैथिल्यता, छींकें आना, पसीना न निकलना, शरीर दुर्गन्धि, निर्बलता, और मैथुनाशक्तता होजावे तो मेदवृद्धि हुई जानो. सर्व प्राणीमात्रको मेद रहतीही है परन्तु विशेष वृद्धि होनेपर उक्त लक्षण होकर बहुधा पेट बढजाया करता हैं.

मेदवृद्धिद्वारा जठराग्निवृद्धिकारण– मेदसें वायु संचारमार्ग रुकनेसे वायु कोठेमें विशेष विचरता हुआ जठराग्निको दीप्त और आहारको शोषण करता है इसलिये भोजन कराहुआ आहार शीघ्र पचकर पुनः क्षुधा प्राप्त होती है. यही व्यतिक्रम कुछकाल पर्यंत चलनेसें उस मनुष्यको अनेक भयंकर विकार उत्पन्न होते हैं जैसे अग्नि-पवनकी सहायतासे प्रज्वलित होकर वनको

भस्म कर देती है तिसी प्रकार उदरस्थ अग्नि और वायु मिलकर उस मेदरोगीको दग्धकर देती हैं.

विशेषता—मेद अत्यंत बढ जानेपर वातादि दोष अकस्मात् घोरोपद्रव उत्पन्न करके रोगीका प्राण नष्टकर देते हैं.

अतिस्थूललक्षण—मनुष्यके शरीरमें मेद और मांस विशेष बढजानेसे उसके कूले, पेट, और स्तन (छाती) बहुत भारी होजाते है. बलवृद्धि, उत्साह जाते रहे यह मोटा तो मर्यादासे बाहर होजाता परन्तु अशक्त रहता है उसे स्थूल (मोटा) कहते है. यह मेदरोगकाही भेद हैं.

कार्श्यरोगोत्पत्तिकारण—वातकारक और रूखे पदार्थोंके भक्षण, लंघन, मैथुन, श्रम, भय, धन-पुत्रादि नाश, और चिंता इनकी आधिक्यतासे मनुष्यको कार्श्य (कृशता, दुबलापन, क्षीणता) रोग होता हैं.

कार्श्यरोगसम्प्राप्तिलक्षण—कूले, पेटकी पसुली, गर्दन, सूखती जावें, नशें दिखने लगें, शरीरमें हड्डियां और चर्म मात्र शेष रहजावे और दुबला होजावे तो कार्श्यरोग प्रगट हुआ जानो. इसी क्षीणतासें प्लीहा, खासी, क्षयीरोग, गुल्म, अर्श, उदररोग, संग्रहणी, और आध्मान इत्यादि रोगभी उत्पन्न होते हैं.

विशेषतः—अनेक मनुष्य दीखनेमें तो अत्यन्त कृश हैं परन्तु उनके शरीरमें मेदका भाग अति न्यून और वीर्यका भाग विशेष होनेके कारण वे मैथुनादि कृत्य तथा स्त्रीको गर्भ धारण करानेमें अपनी प्रबलतासे समर्थ रहते हैं उन्हें क्षीणरोगयुक्त न जानो. और अनेक मनुष्योंके शरीरमें मेदभाग विशेष रहनेसे वे देखनेमें तो पुष्ट जान पडते हैं परन्तु वीर्यांश न्यून रहनेसे मैथुन तथा अन्य कृत्योंमेंभी बलहीन और असमर्थ रहते हैं उन्हें क्षीणरोगयुक्त जानो.

कार्श्यरोग असाध्यलक्षण—जो मनुष्य स्वतः स्वभावसेही क्षीणहो, मंदाग्नि होजावे और शरीर बलहीन होता जावे तो असाध्य जानो.

उदररोगोत्पत्तिकारण—मन्दाग्नि, अजीर्ण, मलिनान्न, क्षीरमत्स्यादि भोजन, मलसंचय और कुपथ्यादि कारणोंसे वात, पित्त, कफ संचित हो-

कर पसीना तथा जलको वहानेवाली नसोंको रोक देते हैं तब प्राणवायु जठराग्नि और अपानवायु दूषित होकर उदररोग उत्पन्न होता है. यद्यपि समस्तरोग जठराग्निकी मंदतासे होते हैं तथापि उदररोग तो प्रायः मन्दाग्निसेही उत्पन्न होता है.

उदरोगसामान्यलक्षण– अफरा, गमन शक्तिका अभाव, शरीरमें दुर्बलता, अग्निमांद्य, शोथ, अंग शैथिल्यता, हड फूटन, तन्द्रा, अधोवायु और मलावरोध हो तो उदररोग जानो. यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ प्लीहा, ६ बद्धगुदा, ७ क्षति और ८ नलकि भिन्नताके कारण ८ आठ प्रकारका हैं.

१ वातोदरलक्षण–हाथ, पांव, नाभि और कुक्षिमें सूजन हो, कुक्षि, पार्श्व (पसली) पेट, कटि और पीठमें पीडा हो, सन्धियोंमें फूटने कीसी वेदना हो, सूखी खांसी, शरीर मर्दन, नाभिके नीचे भारीपन, मलावरोध, और पेटमें "गुड गुड" शब्द हो, शरीरकी त्वचा, नख और नेत्र काले या लाल या धूसरवर्ण हो जावें तो बादीका उदररोग जानो.

२ पित्तोदरलक्षण– ज्वर, मूर्छा, दाह, तृषा, मुखमें कटुपन, भ्रम, अतिसार हो, त्वचा पीली, पेटपर हरापन, पेटकी नशें पीली या ताम्रवर्ण दृष्टि पडें, पसीना तथा उष्णतासें पेटमें जलन पडे, धूमयुक्त डकारें आवें और त्वचाको मल तथा पकीसी जानपडे तो पित्तका उदररोग जानो.

३ कफोदररोगलक्षण– शरीरमें शिथिलता, भारीपन, और शोथ होजावे, निद्राधिक्यता, अन्नपर अरुचि, श्वास, कास, और पेट भारी, वमन होने कीसी इच्छा हो, अन्नपर अरुचि हो, पेटमें गुडगुडाटा हो, शरीर तथा पेट ठंडा, चिकना और श्वेत नसोंसे पूरित होजावे तो कफसे उदररोग हुआ जानो.

४ सन्निपातोदरलक्षण– उक्त तीनों दोषोंके लक्षण संयुक्त हो तो सन्निपातोदर जानो. माधवनिदानमें इसी सन्निपातोदरकोही "दुष्योदर" करके माना है जिसका कारण और लक्षण आगे देखो.

दुष्योदरकारण– जिस मनुष्यको दुष्ट स्त्रिया वशीकरणके लिये अपने या किसी सिंहादि पशुके नख, रोम, मूत्र, विष्टा या आर्तव (रजोधर्म होनेके समय योनि प्रवाही रुधिर)को अन्नमें मिश्रित करके खिला देवें तथा कोई शत्रु विषयुक्त अन्नपानादि भक्षण करा देवे, या संयोगज विष (जैसे समभाग घृत और मधुयुक्त होनेसे विषरूप होजाता है इसे संयोगज विष कहते हैं) किम्वा मलीन जल आदि पीनेमें आजावे तो उक्त कारणोंसे वात, पित्त, कफ तथा रुधिर समस्त शरीरमें कुपित होके उदररोगको उत्पन्न करते हैं. जब वह उदररोग शीत, वायु तथा दुर्दिन (जिस दिन सूर्य मेघोंसे आच्छादित हो) में विशेष प्रकोपको प्राप्त होता है.

दुष्योदरलक्षण– रोगीके शरीरमें जलन हो, मूर्छा आवे, दुबला होजावे, प्यास अधिक लगे, और अंगका रंग पीला पडजावे तो दुष्योदर जानो.

५ प्लीहोदरलक्षण– दाहकारक तथा कफकारक पदार्थोंकी विशेष सेवनसे रुधिर कुपित होकर कफसे प्लीहाको बढाता है तब वायें पार्श्व भागमें पीडा, मंदाग्नि, जीर्णज्वर, और कफ पित्तके अन्य रोग उत्पन्न होकर वह मनुष्य बलहीन होता जाता है ये लक्षण हो तो प्लीहोदर जानो.

विशेषतः– जो दाहनें पार्श्वभागमें पीडा होके उक्त समस्त लक्षण हों तो यकृतोदर जानो. यह प्लीहोदरकाही विशेष भेद हैं.

६ बद्धगुदोदरलक्षण– विनापके अन्न भक्षणसे पेटकी महीन आंतें रुककर वातादि दोष सहित मलका संग्रह हो जाता है, वह मल थोडा थोडा अत्यंत कष्टपूर्वक गुदाद्वारसे बाहर निकलता तथा हृदय और नाभिके वीचमें पेट बढजाता है ये लक्षण हों तो बद्धगुदोदर जानो.

७ क्षतोदरलक्षण– काँटा, कंकर रेती आदि छेदक वस्तु अन्नके साथ भक्षण करनेसे पक्वाशयमें प्राप्त होकर आंतको छेदनकर देती है तब उस

१ जो कुभार्या तथा अन्य दुष्ट स्त्री अपने पति या अन्य जनको किसीकी कुशिक्षा किम्वा स्वेच्छासेही वशी करणार्थ उक्त कार्य करती हैं सो इससे कुछ वह वशीभूत नहीं होता वरन केवल धर्म और आरोग्यता भ्रष्ट होकर शरीर नाश होता है. और वह कार्य साधक (स्त्री) ऐसा महान दुष्ट कर्म करके इस लोक तथा परलोकमें अपराध पात्र होकर नर्कभोक्ता होती है.

घायल आतसे गुदाद्वारा वहुतसा द्रवभाग स्राव होकर पेडू बढजाता है और शूल उठकर चीरनेके समान पीडा होती हैं. ये लक्षण हों तो क्षतोदर जानो. इसीको "परिस्रावी" भी कहते हैं.

८ जलोदरलक्षण– घृतादि स्नेहवस्तु पान करने, वस्तिकर्म करने, रेचन (जुलाब) लेने, और वमन करनेके पश्चात् शीघ्रही शीतल जल पीनेमें आजावे तो जलके वहनेवाली नसें दूषित होकर चिकनाईसे लिपटीहुई क्रम क्रमसे बढके जलोदरको उत्पन्न करती हैं. जिस रोगीके पेटपर नाभिके आस-पास चिकनाहट और गुलाई होजावे, शरीर कम्पित हो, रोगीके पेटमें शब्द[1] और क्लेश हो तो जलोदर जानो. इसे दकोदरभी कहते हैं.

उदररोग साध्यासाध्यनिर्णय– ये समस्त आठों प्रकारके उदररोग उत्पन्न होतेही कष्टसाध्य हैं. बलवान पुरुषको जलोदर न होनेतक ७ उदररोग कुछ कालके हों तो याप्य या ईश्वरेच्छासे साध्यभी होजा सके हैं और बद्ध-गुदोदर उत्पन्न होनेसे १५ दिनतक साध्य तथा १५ दिन पश्चात् असाध्य होजाता है. परंतु क्षतोदर और जलोदर तो उत्पन्न होतेही असाध्यही होते हैं.

उदररोग असाध्यलक्षण– रोगीके नेत्रोंपर सूजन होवे, उपस्थेंद्रिय टेढी होजावे, शरीरकी त्वचा गल जावे, रक्त मांस और जठराग्नि क्षीण होजावे, पार्श्वास्थि (पसिलियोंकी हड्डी) टूटीसी टेढी होजावें, अन्नपर अरुचि, शरी-रपर शोथ और अतिसार होजावे तथा रेचन (दस्त) होनेके पश्चात् पुनः पेट पूर्ववत् फूलकर भर जावे तो असाध्योदर रोग जानो इससे बचना दै-ववशात् ही है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे मेदोरोग-कार्श्यरोग-उदररोगलक्षणनि-रूपणं नाम सप्तविंशतितमस्तरंगः ॥ २७ ॥

॥ शोथ-अण्डवृद्धि-वर्ध्म ॥

**शोथवृद्धिवर्ध्मरुजानां तरङ्गेऽत्र यथाक्रमात् ।**
**वसुनेत्र मितेभङ्गे कारणं वर्ण्यते मया ॥ १ ॥**

---

१ जिस प्रकार पखाल (मशक)में भराहुआ इधर उधर हिलनेसे शब्द होता है तिसी प्रकार जलोदरवाले रोगीका पेटभी मशककी नाईं तनाहुआ, चिकना, हिलताहुआ और शब्दमय होजाता हैं.

भाषार्थ– अब हम इस २८ अठाइसवें तरंगमें शोथ, अंडवृद्धि और चर्म-रोगोंका निदान यथाक्रमानुसार वर्णन करते हैं.

शोथरोगोत्पत्तिकारण– वमन, विरेचन, ज्वर, पांडुरोग, लंघनसे दुर्बल होकर मनुष्य खारी, खट्टी, तीखी, उष्ण, भारी पदार्थ, दही आदि कच्चे पदार्थ, मृत्तिका, शाकपत्र तथा मैदा आदि विरुद्ध, दूषित, और विषयुक्त अन्न खालेवे, अर्शरोग बहुत दिनोंका होजावे, पेटमें आमांश बढजावे, गर्भ स्थानमें चोट लगजावे, अनियमित कालमें गर्भ गिरजावे, तथा विरेचनादि पंच कर्म मिथ्योपचार पूर्वक किये जावें तो शोथरोग उत्पन्न होता है. सो यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ वातपित्त, ५ वातकफ, ६ कफ पित्त, ७ सन्निपात, ८ प्रहार और विषके अंतरके कारणसे ९ प्रकारका होता है. यह रोग "सूजन" के नामसे बहुधा कहा जाता है.

शोथरोग पूर्वरूप– नेत्रादिकसे तीव्र उष्णता होवे, नसें तनके पीडित [illegible]ं, शरीर भारी पडजावे और जिस अंगमें सूजन आनेवाली हो उस अंगमेंभी कुछ बोझसा जानपडे तो शोथ उपजनेवाला जानो.

शोथरोगोत्पत्ति– स्वकारणीय दूषितवायु दूषित रक्त, पित्त और कफको बाहरकी नसोंमें प्राप्त करके अपना (वायु) संचार बंद कर लेती है तब चर्मके नीचे मांस ऊंचा हो जाता है इसे शोथ कहते हैं.

शोथ सामान्यलक्षण– शरीर भारी, चित्त विकल, ऊंचा, संतप्त, और रोमांचित होजावे, वर्णविपर्ययता (शरीरका रंग विचित्र)सा होजावे और नसें महीन पडजावें तो शोथरोग उत्पन्न हुआ जानो.

१ वातशोथरोग लक्षण– जो शोथ चर (एक अंगसे दूसरे अंगपर होजानेवाला) होवे, शरीरकी त्वचा कठोर, लाल, या काली शून्य (सूनी, स्पर्शबोधहीन), रोमहर्ष और पीडायुक्त होवे, निष्कारणही न्यूनाधिक्य होजावे, दबानेसे दबकर पुनः ऊंचा होजावे, रात्रिको न्यून और दिनको अधिक बलिष्ट रहे तो वातशोथ जानो.

२ पित्तशोथ लक्षण– जो शोथ स्पर्शमें कोमल, गंधयुक्त हो, त्वचाका वर्ण लाल या पीला होजावे. भ्रम, ज्वर, स्वेद (पसीना) तृषा, मद और रक्त-

नेत्र हों, शोथमें दाह और छूनेसे पीडा तथा पाकयुक्त हो तो पित्तशोथ जानो.

३ कफशोथलक्षण– जो श्वेत, भारी, स्थिर हो, अन्नपर अरुचि, निद्रा, उलटी और अग्निमांद्य हो, लार गिरे, शोथ दवानेसे दबजावे, रात्रिको विशेष वेग तथा दिनको न्यून होजावे तो कफशोथ जानो.

४ वातपित्तशोथलक्षण– जिसमें वात और पित्त दोनोंके लक्षण दृष्टि पडें उसे वातपित्तशोथ जानो.

५ वातकफशोथलक्षण– जिसमें वात और कफ दोनोंके लक्षण दृष्टि पडें उसे वातकफशोथ जानो.

६ कफपित्तशोथलक्षण– जिसमें कफ और पित्त दोनोंके लक्षण दृष्टि पडें उसे कफपित्तशोथ जानो.

७ सन्निपातशोथलक्षण– जिसमें वात, पित्त और कफ तीनोंके लक्षण दृष्टि पडें उसे सन्निपातशोथ जानो.

८ क्षतजशोथलक्षण– चोट लगने, शस्त्रप्रहार होने, शीत पवन लगने, दधि भक्षण करने, भिलावा, कौंचकी फलीके रुआं, या (जमीकंद) आदि पदार्थ लगनेसे जो शोथ होता है वह शरीरमें चहुंओर फैल जाता है, लाल रंग और दाहयुक्त होता है और बहुधा पित्तशोथके लक्षणोंसे मिला हुआ होता है. ये लक्षण हों तो चोटका शोथ जानो.

९ विषजशोथलक्षण– विषवाले जीवोंके मल, मूत्र, वीर्यादि स्पर्श, या उनकी डाढ, दंतादि लगने, तथा विषैल वृक्षकी पवन लगने, किम्वा मनुष्यादिके दांत, डाढ, नखादि लगनेसे जो शोथ होता है वह शरीरमें अधिक फैलता और दाहयुक्त होता है ये लक्षण हों तो विषका शोथ जानो.

शोथोपद्रव– कास, तृषा, छर्दि (वमन), भोजनमें अरुचि, शरीरमें दुर्बलता और ज्वर हो तो रोगीका बचना दुर्लभ है अतएव ऐसे रोगीका यत्न करनाही निष्फल है.

साध्यासाध्यनिर्णय– जो शोथ पेडू (मूत्राशय) स्तन पर्यन्त हो वह कष्टसाध्य, और शरीरमात्रपर शोथ हो तो असाध्य है, पुरुषको जो शोथ पावसे चढकर मुख पर्यन्त आवे, तथा स्त्रियोंको मुखसे चढकर पश्चात्

पांवतक आवे सोभी असाध्य है. परन्तु गुह्यस्थान (योनि, लिंग, गुदा) पर उत्पन्न हुआ शोथ तो पुरुष स्त्री दोनोंके लिये असाध्यही जानो.

अंडवृद्धिरोगोत्पत्ति–यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ रुधिर, ५ मेद, ६ मूत्र, ७ अंत्र इन सात कारणोंसे उत्पन्न होकर सातही विभागोंमें विभाजित किया गया है, इनमेंसे मूत्र और अंत्रज ये दोनों वातसेही उत्पन्न होते हैं परन्तु इनमें केवल हेतु भेदमात्र है. यह वही रोग है जिसे वृद्धि, अंत्रवृद्धि और लोकमें बहुधा "गोई बढना"भी कहते हैं.

अंडवृद्धिसामान्यलक्षण– स्वकारणीय कुपित अधोगामी वायु स्वस्थानसे चल जांघोंके ऊपर और पेडूके नीचे (जांघ और पेडूके मध्य) एक ओरकी संधियोंमेंसे अंडकोशमें प्राप्त होके अंडकोशकी आधारभूत नसोंको पीडित करतीहुई अंडकोश (गोई)का आकार बढा देती है इसे अंडवृद्धि कहते हैं.

१ वातअंडवृद्धिलक्षण– अंडकोश पवनसे भराहुआ लुहारके धोकनी या पखाल (मशक)के समान जानपडे, रूखा हो और निष्कारणही पीडा हो तो वातांडवृद्धि जानो.

२ पित्तांडवृद्धिलक्षण– अंडकोश, पके गूलरफल समान, दाहयुक्त, पाकयुक्त और शोथयुक्त हों तो पित्तसे अंडवृद्धि जानो.

३ कफांडवृद्धिलक्षण–अंडकोश ठंडा, भारी, चिकना, कठोर, पीडा और खुजालयुक्त हो तो कफसे अंडवृद्धि जानो.

४ रक्तांडवृद्धिलक्षण– अंडकोश काले फोडेसे व्याप्त और पित्तांडवृद्धिके लक्षणयुक्त हो तो रुधिरकी अंडवृद्धि जानो.

५ मेदांडवृद्धिलक्षण– अंडकोश कोमल तथा तालफल सदृश हों और कफज अंडवृद्धिके लक्षण जान पडें तो मेदसे उत्पन्न हुई अंडवृद्धि जानो.

६ मूत्रांडवृद्धिलक्षण– चलनेके समय अंडकोश जलभरी पखाल (मशक) सदृश तनाहुआ शब्दमय नीचे लटकाहुआ पीडायुक्त और कोमल हो तथा मूत्र कष्टसे उतरे तो मूत्रसे अंडवृद्धि जानो. जो मनुष्य मूत्र वेगको बहुत दिनतक रोका करे उसे यह अंडवृद्धि होती है.

अंत्रांडवृद्धिलक्षण– वायुप्रकोपकारी आहार, मलमूत्रावरोध, शीतलमें

तैरना, युद्धमें पदसंचाल, बोझ उठाना, मार्गगमन, अंगको एढा टेढा करना, भयोत्पादक कार्य करना, तथा अन्य वायुकोपकारी कार्योंके करनेसे वायु शरीरकी छोटी आंतोंको द्विगुण करके उनके स्थानसे नीचेके भागमें प्राप्त होती है और पेडू, जांघ और कमरकी संधिरूप वंक्षण स्थानमें प्राप्त होकर गांठ सदृश शोथको उत्पन्न करती है. जब इस शोथका उपाय बहुत कालतक नहीं होता तब अंडकोशमें प्राप्त होकर अफरा, शूल और मलमूत्रावरोधके साथ अंडवृद्धि उत्पन्न होजाती है. इस अंत्रजअंडवृद्धिको युक्तिसें दबाओ तो "घुण घुण" शब्द होता हुआ पेटमें जाता और छोडनेसे पुनः अंडकोश फूल जाता है इन लक्षणोंसे युक्त हो तो अंत्रजअंडवृद्धि जानो.

अंडवृद्धि असाध्य लक्षण— वायुका संचय अधिक होनेसे आंतें और अवयव मिलके अंत्रजअंडवृद्धि होती है सो जो यह वातांडवृद्धिके लक्षण सदृश हो तो असाध्य जानो.

वर्ध्मरोगोत्पत्ति— कफकारक, दाहि पदार्थ, या भारी अन्न, या सूखा, दुर्गंधित मांसभक्षण तथा पित्तकारी मिथ्या विहार (स्त्रीसंगादिकी विपुलता)से सपित्त या केवल वायुकुपित होकर वंक्षण (मूत्राशय और जंघस्थलका संधिस्थान)में गठानके समान शोथ उत्पन्न करता है उसे वर्ध्मरोग कहते हैं.

वर्ध्मरोग सम्प्राप्ति लक्षण— उपरोक्त गठान होकर शरीरमें ज्वर, शूल और शिथिलता हो तो वर्ध्मरोग जानो.

विशेषतः— इसी वर्ध्मको लोकमें "बद"भी कहते हैं अनुमान करते हैं कि या तो "वर्ध्म"का अपभ्रंश होकरही "बद" शब्द बनगया है. या यावनी भाषाके "बद" शब्दसे (जिसका अर्थ "बुरा" है) बना है क्यों कि इस रोगसे वह मनुष्य "बद या बदी या अपयश"को प्राप्त होता है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे शोथ-अंडवृद्धि-वर्ध्मरोगलक्षणनिरूपणं नामाष्टविंशतिस्तरङ्गः ॥ २८ ॥

॥ गलगंड-गंडमाला-अपची-ग्रंथि-अर्बुदरोग ॥

गलगंडादिरोगाणामर्बुदस्य यथाक्रमात् ।
अंकनेत्रे तरंगेऽस्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ- अब हम इस २९ उन्तीसवें तरंगमें गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रंथि और अर्बुद रोगोंका निदान यथाक्रमसें वर्णन करते हैं.

गलगंडरोगोत्पत्ति- वात, कफ और मेद गलेके स्थानमें दूषित होकर गलेकी दोनों और स्थित होके अपने अपने चिन्होंयुक्त गलगंडरोग करते हैं.

गलगंडरोगसामान्यलक्षण- जिस मनुष्यके गलेमें अंडकोशके समान दृढ शोथ होकर लटके वह शोथ बडा हो या छोटा उसे गलगंडरोग जानो. यह रोग १ वात, २ कफ, और ३ मेदकी भिन्नताके कारण तीन प्रकारका है.

१ वातगलगंडरोगलक्षण- जिसमें पीडा अधिक हो, गलेकी नसें काली या लाल हों, कठोर हो, विलम्बसे बढे, शोथ नहीं पके, मुख निस्स्वाद रहे, और कंठ तालु सूखते रहै उसे वातगलगंड जानो.

२ कफगलगंडरोगलक्षण- गलेमें अंडकोशके समान लटकताहुआ, स्थिर, भारी, शीतल, खुजालयुक्त, और अल्प पीडादायक शोथ हो, जो विलम्बसे-ही बढे और विलम्बसेही पके, रोगीका मुख मीठा और कंठ तालु कफसे लिपटे रहैं तो कफका गलगंडरोग जानो.

मेदगलगंडरोगलक्षण- जो शोथ चिकना, पीला, कोमल, स्वल्प पीडा-युक्त, अति कटु होकर गलेकी संधिमें तुम्बडीके समान लटका रहै, जडमें पतला और रोगीकी देहानुसार न्यूनाधिक हो, रोगीका मुख चिकना और गलेमेंही बोले तो मेदगलगंड जानो.

गलगंडरोग असाध्य लक्षण- रोगीको श्वास बडे कष्टसे आवे, सर्वांग कोमल हो, रोग उत्पन्न होनेसे १ वर्ष वीत जावे, भोजनमें अरुचि हो, शरीर क्षीण होजावे, शब्द (स्वर) स्पष्ट न निकले तो असाध्य गलगंड जानो. ऐसे रोगीकी चिकित्सा करनाही व्यर्थ है.

गंडमालारोगोत्पत्तिलक्षण- मेद और कफके कारण मनुष्यके गले, या कांख, या ग्रीवा, या पेडू, या जांघकी संधियों (वंक्षणस्थानों)में जो बेर या आंवलेके समान दृढ गठानें हो जाती सो गंडमाला कहाती हैं.

अपचीरोगोत्पत्तिलक्षण- उपरोक्त (गंडमाला) रोगकी गठांनेंही बहुत पुरानी होनेपर पककर पीव बहने लगती, एक अच्छी होती दुसरी होजाती

उसमें बिलम्ब अधिक होती ये लक्षण हों तो अपचीरोग जानो. यह गंडमालाकाही एक अवस्था भेद है.

अपची असाध्य लक्षण–पार्श्वशूल, कास, ज्वर, और वमनयुक्त अपची हो तो उसे असाध्यरोग जानो.

ग्रंथिरोगोत्पत्ति– वात, पित्त और कफके कोपसे मांस, रक्त, मेद और नसें दूषित होकर गोल, ऊंची और शोथयुक्त गठान उत्पन्न होती है इसे ग्रंथिरोग कहते हैं. यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ मेद, और ५ नसोंकी कारण भिन्नतासे ५ प्रकारका है.

१ वातजग्रंथिलक्षण–जो गठान प्रथम त्वचा (चर्म)को खीचकर बडी होवे पश्चात् उसमें काटने, छेदने, उठाकर फेकने, मथन करने और फोडनेके समान पीडा हो, गांठ काली, कोमल और पखाल (मशक)के समान तनी रहे, तथा फूटनेपर उसमेंसें केवल निर्मल रक्त निकले ये लक्षण हों तो वातजग्रंथि जानो.

२ पित्तजग्रंथिलक्षण– गठानेमें अत्यंत दाह, धुंवां निकलता सा और सिंगी लगानेके समान पीडा जानपडे, पककर फूटनेपर पीली या लाल या लाल पीली पीव अथवा अत्यंत दुष्ट रुधिरप्रवाह हो तो पित्तजग्रंथि जानो.

३ कफजग्रंथिलक्षण– जो गठान ठंडी, रोगीके रंगसे मिलतीहुई, अल्प पीडाकारक, विशेष कंडु (खुजाल)युक्त, पत्थरसी दृढ (कडी), बहुत कालसे पकने या बढनेवाली और फूटनेपर सफेद और गाढी पीव वहे तो कफकी गठान जानो.

४ मेदोजग्रंथिलक्षण– जो गठान रोगीका शरीर मोटा होनेसे बडी, और दुर्बल होनेसे छोटी, चिकनी, अधिक कंडुयुक्त, अल्प पीडायुक्त हो और फूटनेपर खली (ढेप) या घीके समान मेद (चर्बी) निकले तो मेदकी गठान जानो.

५ शिराजन्यग्रंथिलक्षण– जो निर्बल पुरुष सबलोंके सदृश व्यायामादि करे तो ऐसे अशक्तिज कार्योंसे वायु संकोपित होकर नशोंके समूहको संकोचित, पीडित और सूखा करके गोल ग्रंथि उत्पन्न करती है उक्त लक्षण हों तो नशोंकी ग्रंथि जानो.

साध्यासाध्यग्रंथिलक्षण– शिराजन्यग्रंथि पीडा सहित, चंचल हो तो कष्टसाध्य, और पीडारहित, अचल, उंची हो तो असाध्य, अथवा मर्मस्थान[1]में हो तो असाध्यही जानो.

अर्बुदरोगोत्पत्तिकारण– जो मनुष्य थोडा अन्न और अधिक मांस भक्षण करे उसके वात, पित्त, और कफ दूषित होकर रुधिर मांसको बिगाड देते हैं तब सर्व शरीर या किसीएक विशेष भागमें एक बडी, गोल, स्थिर, अल्प पीडायुक्त, दृढ बलवाली, विलम्बसे बढनेवाली, और पकनेवाली एक गठान उंचीसी उत्पन्न होती है जिसे वैद्यकशास्त्रज्ञ लोग अर्बुदरोग कहते हैं. यह रोग "१ रक्तार्बुद, और २ मांसार्बुद" दो प्रकारका होता है.

१ रक्तार्बुदलक्षण– स्वकारणीय कुपित पित्त, रक्त और नसोंको संकुचित तथा पीडित करके मांसपिंडको उंचा करता है तब वह व्रण कुछ पककर श्रवित होता तदनंतर मांसके अंकुरोंसे आच्छादित और वृद्धिंगत होके उसमेंसे निरंतर रुधिर बहता रहता है उसे रक्तार्बुद कहते हैं. यह रक्तार्बुद असाध्य होता है क्योंकि इससे रक्तका क्षय और उपद्रवोंसे पीडित होनेके कारण रोगीका शरीर पांडुवर्णयुक्त हो जाता है.

२ मांसार्बुदलक्षण– मनुष्यके शरीरमें मुष्टिप्रहार आदिसे प्रहारित स्थानका मांस दूषित होकर शोथ उत्पन्न करता है वह शोथ पीडा रहित, चिकना, पाकरहित, पत्थर सदृश कठोर, अचल और देहके वर्ण सदृश हो तो मांसार्बुद जानो. यहभी असाध्यही है.

अध्यर्बुद तथा द्वि अर्बुदअन्तर–एकवार अर्बुदरोग होकर पुनः उसी स्थानपर हो उसे अध्यर्बुद और जो एक साथ या दो दोषोंकी प्रकोप सहचर्यतासे हो उसे द्वि अर्बुदरोग जानो यहभी असाध्य तथा अर्बुदका भेदही है.

अर्बुदनिष्पाककारण– अर्बुदरोगमें कफ और मेदकी अधिक्यता होनेसें तथा दोषोंकी स्थिरतावग्रंथि रहनेसे और स्वभावसेभी अर्बुद रोगका वृण नहीं पकता. जो अर्बुद रक्त तथा पित्तसम्बन्धी होता है वहभी नहीं पकता है.

---

१ स्थूल रीतिसे गाल, गला, कंधा, हृदय, शरीरकी संधियां, पीठ और गुदाके निकटवर्ती स्थानकों मर्मस्थान मान सक्ते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे गलगंड-गंडमालापची-ग्रंथिअर्बुदरोगाणांलक्षण निरूपणं नामैकोनत्रिंशस्तरङ्गः ॥ २९ ॥

॥ श्लीपद-विद्रधि ॥

**रोगस्य श्लीपदस्यात्र विद्रधेश्च यथाक्रमात् ।**
**तरङ्गेऽत्रबृहद्भानौ निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थ– अब हम इस ३० वें तरंगमें श्लीपद और विद्रधि रोगोंका निदान वर्णन करते हैं.

श्लीपद[1] रोगोत्पत्तिकारण– छः हों ऋतुओंमें तलावादिकका पुराना जल पीनेसें या विशेष शीत देशोंमें विशेष निवास करनेसें या जिन देशोंमें सदा पुराना पानी बना रहता है वहां निवास करनेसे श्लीपदरोग उत्पन्न होता है.

श्लीपद सामान्यलक्षण– स्व लक्षण प्रकटकारक वातादि दोषोंसे पांवमें मेद और मांसका आश्रयभूत जो शोथ हो उसे श्लीपदरोग कहते हैं, इस रोगमें कफ प्रधान हैं.

तथा पेडू और जंघस्थलकी संधियोंमें पीडायुक्त और ज्वरसहित शोथ उत्पन्न होके पश्चात् क्रमशः पांवोंपर उतर आवे उसे शोथ कहते हैं.

विशेषतः– अनेक आचार्योंका यह मतभी है कि यह रोग हाथ, पांव, नाक, कान, आंख, लिंग और ओष्टमें भी होता है. यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, और ४ सन्निपातकी जुदाईसे चार प्रकारका है.

१ वातश्लीपद लक्षण– काला, रूखा, फटाहुआ, अत्यंत पीडायुक्त और विशेष ज्वरसहित हो तो वायुका श्लीपद जानो.

२ पित्तश्लीपद लक्षण– जो श्लीपद पीला, दाहयुक्त, ज्वरसहित और कोमल हो तो पित्तश्लीपद जानो.

३ कफश्लीपदलक्षण– जो चिकना, श्वेत या पांडुवर्ण, भारी और स्थिर हो उसे कफका श्लीपद जानो. इसके लक्षण पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखे हैं.

४ सन्निपातश्लीपद लक्षण– जो अनेक छिद्रयुक्त, बांवी (सर्पछिद्र)के

१ श्लीपद यह वही रोग है जिसे लोकमें "हाथीपांव" कहते हैं यह रोग कलकत्तेकी ओर बंगाल प्रदेशमें बहुधा पाया जाता है.

समान हो और चूने (वहने) लगे उसे सन्निपातश्लीपद जानो. यह असाध्य है.

श्लीपद असाध्यलक्षण– जो श्लीपद मधुरादि कफकारक आहार और दिवस शयनादि मिथ्या विहारोंसे उत्पन्न हुआ हो, रोगीकी प्रकृति कफ सम्बन्धी हो, श्लीपदसे पानी झिरने लगे, जो उंचा या खाज (खुजाल) युक्त हो और त्रिदोषज चिन्ह दृष्टि पडें तो असाध्य जानो.

विद्रधिरोग–यह रोग दो प्रकारका है अर्थात् १बाह्यविद्रधि, २ अंतरविद्रधि.

बाह्यविद्रधिरोगोत्पत्तिकारण– अस्थि निवासी वात, पित्त, कफ स्वकारणोंसे कुपित होके त्वचा, मांस और मेदको दूषित करते हैं तब धीरेधीरे गहन (गहरे) मूलवाला, पीडायुक्त, गोल या लम्बा शोथ चर्मपर उत्पन्न होता है उसे विद्रधिरोग कहते हैं. यह रोग "१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ क्षतज और ६ रक्तज" छः प्रकारका है.

१ वातजविद्रधिलक्षण– जो शोथ लाल या काला, कभी छोटा, कभी बडा, अति पीडायुक्त और जिसका बढना तथा पकनाही विचित्र ढंगसे हो उसे बादीकी विद्रधि जानो.

२ पित्तजविद्रधिलक्षण– गुलरके पके फलसदृश, कुछ कालापन लिये पीला रंग हो, ज्वर दाहयुक्त हो शीघ्रही पके और बढे तो पित्तजविद्रधि जानो.

३ कफजविद्रधिलक्षण– जो सराव (सराई, दिया, चिराग)के आकारका हो, पांडुवर्ण, ठंडा, खुजालयुक्त, चिकना, अल्प पीडायुक्त हो, बढने और पकनेमें शीघ्रता करे तो कफकी विद्रधि जानो.

विशेष लक्षण– बातजसे पतली, पित्तजसे पीली और कफज विद्रधिसे श्वेत पीव निकलती है.

४ सन्निपातविद्रधिलक्षण– नानाप्रकारकी पीडा हो, अनेक भांतिसे पीव वहे, घडेसदृश उंचा शोथ हो जिसका कभी घटाव और कभी बढाव होता रहे और इसीप्रकार पकनाभी हो तो सन्निपात विद्रधि जानो.

५ क्षतजविद्रधिलक्षण– पत्थर या लाटीकी चोट लगे या किसी शस्त्रादिकी मारसे घाव पडजावे उसपर कुपथ्य करनेसें घावकी गरमी वायुसें बढकर रक्तसहित पित्तको कुपित कर देती है तब तृषा, दाह और ज्वरयुक्त

विद्रधि उत्पन्न होकर पित्त विद्रधिके लक्षण धारण कर लेती है ये लक्षण हों तो क्षतज (चोट लगनेकी) विद्रधि जानो.

६ रक्तजविद्रधि लक्षण— फोडे श्याम हो, पर स्थानका धूसर वर्ण हो, तीव्र दाह, ज्वर, पीडा और पित्तज विद्रधिके लक्षण हो तो रक्तजविद्रधि जानो.

बाह्यविद्रधि साध्यासाध्यनिर्णय— जो विद्रधि नाभिस्थानके ऊपर होती है, पककर फूटनेके समय उसका मुंह भीतरकी ओर होके फूटे तो उसमेंसे पीव ऊपर मुखद्वारसे बाहर निकलता है. जो विद्रधि नाभिस्थानके नीचे होती है पककर फूटनेके समय उसका मुंह भीतरकी ओर होके फूटे तो उसमेंसें पीव नीचे गुदाद्वारसे बाहर निकलती है. जो विद्रधि नाभिमेंही होती है उसकी पीव मुख या गुदा दोनों मार्गसे बाहर निकल सक्ती है. इसलिये नीचेकी ओर गुदामार्गसे पीव निकले तो वह रोगी न मरे, और मुखद्वारा पीव निकले तो वह रोगी बचना असम्भव है किंतु मर जावेगा. यहां यही सिद्धांत ठहरा कि नाभिस्थानके तलेकी विद्रधि साध्य, और ऊपरके स्थानोंमें हो तो असाध्य है. नाभिमेंही विद्रधि होकर उसका वहाव ऊपरको हो असाध्य और नीचेको हो तो साध्य जानो.

विशेषतः— जो विद्रधि हृदय, नाभि और पेडूमें हो सो असाध्य, तथा इनसे व्यतिरिक्त स्थानोंमें होकर मुख बाहरकी ओरको होके फूटे तो साध्य जानो. इसके कच्चेपन, पक्केपन और विदग्धत्वको शोथकी नाईं विचारलो.

अंतरविद्रधिरोगोत्पत्तिकारण— कुपथ्यके कारण वात, पित्त और कफ (मिलेहुए या न्यारेन्यारे) कुपित होकर शरीरके भीतर कोठेमें एक गोलाकार, बांवी (सर्पगृह)के समान ऊंची गांठ उत्पन्न करते हैं इसे वैद्य अंतरविद्रधि (भीतर रहीनेवाली) विद्रधि कहते हैं.

अंतरविद्रधि स्थान— यह रोग १ गुदा, २ पेडूके मुख, ३ नाभि, ४ कुक्षि (कूंख), ५ वंक्षण (पेडू और जंघाका संधिस्थान), ६ हृदय और तृषास्थानके बीच, ७ प्लीहा (या यकृत), ८ हृदय, ९ नाभिके दक्षिणविभाग, और १० तृषाके स्थानमें उत्पन्न होता है. इनके लक्षण पूर्वोक्त बाह्य-

विद्रधिके सदृश वातादि दोषोंपरही अवलम्बित नहीं बरन स्थानविशेषसे लक्षण भी विशेष होगये हैं.

१ गुदाविद्रधिलक्षण– भलीभांति पवनका शरण न होकर अधोवायुका अवरोध होजावे तो गुदाकी विद्रधि जानो.

२ पेडूविद्रधिलक्षण– मूत्रकृच्छ्र हो तो पेडूकी विद्रधि उत्पन्न हुई जानो.

३ नाभिविद्रधिलक्षण– हिचकी अधिक आवे और अफरा रहे तो नाभिमें विद्रधि उत्पन्न हुई जानो.

४ कुक्षिविद्रधिलक्षण– कुक्षिमें वायुका कोप हो तो कूंखकी विद्रधि जानो.

५ वंक्षणविद्रधिलक्षण–कटि (कमर)में पीडा हो तो वंक्षणकी विद्रधि जानो.

६ हृदयतृषास्थानमध्यवर्तीविद्रधिलक्षण– पार्श्व संकोचन और पार्श्वशूल हो तो उक्त विद्रधि जानो.

७ प्लीहाविद्रधि लक्षण– श्वास रुककर निकले तो प्लीहाविद्रधि जानो.

८ हृदयविद्रधि लक्षण– सर्वांगमें पीडा होकर अंग जकड जावे और खांसी चले तो हृदयकी विद्रधि जानो.

९ नाभिके दक्षिणभागजविद्रधि लक्षण–श्वासका रोग हो तो नाभिकी दहिनी ओर विद्रधि जानो.

१० तृषास्थानजविद्रधि लक्षण– तृषा अधिक लगे और जल पीनेपरभी तृप्ति न हो तो तृषास्थानमें विद्रधि हुई जानो.

अंतरविद्रधि साध्यासाध्य निर्णय– विद्रधि रोगमें अफरा, वमन, तृषा, हिचकी, और पीडा अधिक हो तो असाध्य जानो यह रोगी मर जावेगा. जो विद्रधि कच्ची, वायुजन्य, बडी या छोटी, और मर्मस्थानमें हो तो कष्टसाध्य और सन्निपातकी विद्रधि असाध्य होती है. जो सन्निपातज विद्रधि हृदय, नाभि, और पेडूमें होकर रुक जावे और मुहके समान हो तो असाध्य जानो.

विशेषतः– जिसप्रकार अंतरविद्रधि होती है तिसी प्रकार शरीरके भीतर मांस और रुधिरका एक गोलाभी होता है. इनमें परस्पर यही भेद है कि विद्रधि पकतीपर यह गोला पकता नहीं है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे श्लीपद-विद्रधिरोगलक्षण निरूपणं नाम त्रिंशस्तरङ्गः ॥ ३० ॥

॥ व्रणशोथ-व्रणरोग ॥

व्रणशोथस्य व्रणस्य ह्यग्निदग्धस्य च क्रमात् ।
चन्द्ररामतरङ्गेऽस्मिन् निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ— अब हम इस ३१ वें तरंगमें व्रणशोथ, व्रण और अग्निदग्ध रोगका निदान क्रमानुसार वर्णन करते हैं.

व्रणशोथरोगोत्पत्तिकारण— शरीरके किसीएक देश (स्थान)में शोथ आवे उसे व्रणका पूर्वरूप जानो. यह शोथ छः कारणों "१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ रक्त, और ६ आगन्तुक (चोट)"से होता है जिनके लक्षण शोथ निदानमें कह आये हैं.

विशेषलक्षण— वातज व्रणशोथ विषम (कही कच्चा कहीं पक्का) पकता, पित्तज व्रणशोथ शीघ्र पकता, कफज व्रणशोथ विलम्बसे पकता, तथा रक्तज और आगंतुक व्रणशोथ शीघ्रही पकता हैं.

अपक्क व्रणशोथलक्षण— जिस व्रणशोथमें पीडा उष्णता और सूजन थोडी हो रंग त्वचाके रंगसे मिलता हो और छूनेमें कठोरता हो तो कच्चा व्रणशोथ जानो.

पकतेहुए व्रणशोथके लक्षण— व्रणशोथमें अग्नि सदृश जलन पडे, क्षारके पकने समान पके चीटी काटने, या छेदने, या शस्त्र मारने, या हाथसे भीतर दबाने, या दंडा मारने, या सुई चुभाने, या मुखसे चूसने, या अंगुलीसे फाडने, या विच्छू काटनेके सदृश वेदना हो, किसीएक भागमें दाह हो, वर्णविपर्यय (रंग तब्दील) होजावे और सोते बैठते किसीभी प्रकारसे शांति न हो, व्रणशोथ फूलकर पखालके समान होजावे और ज्वर, तृषा, अरुचि ये उपद्रव होजावे तो निश्चय करो कि व्रणशोथ पक रहा हैं.

पक्क व्रणशोथ लक्षण— व्रणशोथकी पीडा, ललाई, उंचाई, न्यून पडजावे, उसपर सल (झिल्ली कुकरी) पडजावें, वारंवार पीडा और खुजाल उठे,

उपद्रवोंकी शांति हो, त्वचा फटीसी जानपडे और अंगुली दबानेसे पीव इधर उधर घूमने लगे तो व्रणशोथ पका जानो.

विशेषतः– चाहे एक दोषजन्य व्रणभी हो परन्तु उसके पकनेके समय तीनों दोष मिलकर उसे पकाते हैं अर्थात वातसे पीडा, पित्तसे पकाव और कफसे पीव बनती हैं. तथा अनेक विद्वानोंका यह मतभी है कि कालान्तरसे बढा हुआ पित्त अपनी प्रबलतासें वात और कफको वश करके रक्तको पचाता है तब व्रणशोथ पकता है.

पीव भरेहुए व्रणशोथमें दोष– जिस प्रकार घासकी गंजी (ढेर, पुंज, समूह)में लागीहुई अग्नि वायुकी प्रेरणासें प्रज्वलित होकर बलात्कारसें घासको जला देती हैं तिसी प्रकार पके व्रणशोथमें रहीहुई पीवभी उस स्थानके मांस और नसोंको नाशकर देती है. इसलिये सद्वैद्यको चाहिये कि पकेहुए व्रणशोथमेंसें पीव अवश्य निकाल देवे.

विशेषतः– जो वैद्य कच्चे, पकतेहुए और पके व्रणका पक्वापक्व निश्चय न करसके और वैद्यक जीविका करने लगे उसे चोर सदृश और जो कच्चे व्रणको फोडडाले तथा पक्केको न फोडे उस अविचारी वैद्यको चांडालके समान जानना चाहिये.

व्रणरोगोत्पत्तिकारण– शारीरके और आगन्तुक दो कारणोंसे उत्पन्न होकर यह रोग उक्त दोही प्रकारका है. वातादि दोषोंसे उत्पन्न हो सो शारीरक और शस्त्रादिके प्रहारसे उत्पन्न हो सो आगंतुक व्रण कहता है.

शारीरिकव्रणोत्पत्ति– शारीरिक व्रण मुख्य चार कारणों "१ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ रक्त"से उत्पन्न होता है परन्तु रक्तके सम्बन्धसे द्विदोषज और त्रिदोषज होनेके कारण गौणरीतिसे ८ प्रकारका होजाता है अर्थात् ५ वातपित्त, ६ वातकफ, ७ कफपित्त और सन्निपात (त्रिदोषज).

१ वातव्रणलक्षण– जो व्रण स्थिर, कठोर, अल्पश्रवित, दीर्घ पीडित,

---

१ आमं विदह्यमानं च सम्यक्पक्वं च लक्षणैः। जानीयात्स भवेद्वैद्यः शेषास्तस्करवृत्तयः ॥ १ ॥ यच्छिनत्त्या मम ज्ञानाद्यश्च पक्वमुपेक्षते। श्वपचाविव मंतव्यौ तावनिश्चितकारिणौ ॥ २ ॥ इत्युक्तं माधवाचार्येण ॥

फूटनयुक्त, धूसर या श्यामवर्ण और सुई चुभानेकीसी पीडा करे उसे वादीका व्रण (खता-फोडा) जानो.

२ पित्तव्रणलक्षण— जो व्रण तृषा, मोह, ज्वर, दाह, आर्द्रत्व (गीलापन) पीवमें दुर्गंधियुक्त हो और चर्म फटे तो पित्तका व्रण जानो.

३ कफव्रणलक्षण— जो व्रण विशेष गिलविला (कोमल) भारी, चिकना, अचल, श्वेतवर्ण, अल्प आर्द्र और अल्प पीडायुक्त हो उसे कफसें उत्पन्न हुआ जानो.

४ रक्तव्रणलक्षण— जिस व्रणका रंग लाल और रक्तही रक्त बहा करे उसे रुधिरसें उत्पन्न हुआ जानो.

५ वातपित्तज व्रणलक्षण— जिसमें वात और पित्त दोनोंके लक्षण दृष्टि पडें उसे उक्त व्रण जानो.

६ वातकफज व्रणलक्षण— जिस व्रणमें वात और कफ दोनोंके लक्षण हों उसे वातकफव्रण जानो.

७ कफपित्तज व्रणलक्षण— जो कफ और पित्त दोनोंके लक्षणोंसे युक्त हो उसे कफपित्तका व्रण जानो.

८ सन्निपाज व्रणलक्षण— जिसमें वात, पित्त, कफ तीनों दोषोंके उक्त वर्णित लक्षण हों उसे सन्निपातका व्रण जानो.

विशेषतः— उक्त समस्त व्रणोंके २ दो भेद "१ दुष्ट व्रण, और २ शुद्ध व्रण" किये गये उनके लक्षण ये हैं.

१ दुष्टव्रणलक्षण— जिससें निकलती हुई पीव या रक्तमें सडनेकी दुर्गंधि आवे, बहुत उंचा हो, बहुत पुराना होगया हो और शुद्धव्रणके लक्षणोंसें सर्व विरुद्ध लक्षण हों उसें दुष्ट व्रण जानो.

२ शुद्धव्रणलक्षण— जो जिव्हाके तलभागसमान कोमल और उसीके सदृश (तथा अरुण) वर्णयुक्त हो, पीडा और पीवका वहाव न हो, और सर्वप्रकारसें सुन्दर व्यवस्था हो तो शुद्धव्रण जानो.

भरतेहुए व्रणके लक्षण— किनारे (कोरें) कपोतवर्ण (धूसर और पांडु वर्णका संयोग कबूतरकासा रंग) होजावें, पीव आदिके वहावयुक्त, स्थिर

और मासके अंकूर (रवे रवे) निकल आवें तो जानों कि यह ब्रण भरने लगा है.

भरितब्रणलक्षण— पीवका वहाव बंद होगया हो, गांठ सूजन या पीडा कुछ न हो तो जानलो कि यह ब्रण भलीभांति भर गया है.

सुखसाध्यब्रणलक्षण—जो ब्रण त्वचा और मांससे उत्पन्न हुआ हो, मर्मस्थानमें न हो, तरुण पुरुषको उपद्रवरहित तथा हेमन्त, शिशिर, और वसंत ऋतुमें उत्पन्न हुआ हो उसे सुखसाध्य (सुखपूर्वक अच्छा होजानेवाला) जानो.

कष्टसाध्यब्रणलक्षण— जिसमें सुखसाध्य ब्रणके उक्त लक्षण कुछभी न हों तथा कुष्टी, विषभक्षक, शोषरोगी, मधुप्रमेह, युक्त पुरुषको और ब्रणमें ब्रण उत्पन्न हो तो उसे कष्टसाध्य ब्रण जानो.

असाध्यब्रणलक्षण— सुखसाध्य ब्रणोक्त समस्त लक्षणरहित हो उसे असाध्य जानो. बातादि दोषज ब्रणमेंसें वसा (मांसगत स्नेह, घृत, चर्वी), मेद (केवल चर्बी), मज्जा (हड्डियोंके भीतरका गूदा), और मस्तुलिंग (मस्तकके भीतरका कपास) ये शरीरान्तरर्गत पदार्थ बहते रहें तो असाध्य जानो. ये लक्षण आगंतुक ब्रणमें हो तो असाध्य नहीं पर साध्य है. जिन ब्रणोंमेंसें मदिरा, या अगर, या जाईपुष्प, या कमलपुष्प, या चन्दन, या चम्पाके पुष्पसदृश दिव्य सुगंध आवे, मर्मस्थानमें न होनेपर भी मर्मस्थानकीसी पीडा हो, भीतरसें जले और बाहरसें ठंडा हो, या बाहरसें जले तो भीतरसे ठंडा हो, रोगीका मांस बलक्षीण होजावे, और श्वास, कास, क्षय, अरुचिकारक पीडा हो तो असाध्य जानो. जिन ब्रणोंसें पीव या रक्त बहता रहे, मर्मस्थानमें हो और शास्त्रोक्त विधिसें उपचार करनेपर भी कुशल न हो तो असाध्य जानो. उपरोक्त लक्षण धारणीय असाध्य ब्रण हैं सद्वैद्यको उचित है कि जो यशकी इच्छा हो तो ऐसे असाध्य रोगोंपर चिकित्सा करनेको कदापि हाथ न उठावे.

आगंतुक ब्रणोत्पत्तिकारण— असि (तलवार), बाण (तीर), तोमर (भाला), छुरिका (छुरी-चाकू) आदि नानाप्रकारके तीक्ष्ण धारा मुखवाले शस्त्र, अस्त्रोंके प्रहारसे शरीरके नानाभागोंमें अनेकाकृतिके ब्रण (घावरूपक) उत्पन्न होते हैं जिन्हें आगन्तुक ब्रण कहते हैं. ये ब्रण पृथक् पृथक्

[illegible] ण, २ भिन्नव्रण, ३ विद्धव्रण, ४ क्षतव्रण, ५ पिच्चितव्रण, और ६ घृष्टव्रण"

१ छिन्नव्रणलक्षण— शस्त्रके लगनेसें सीधा या तिर्छाकटे घाव लम्बा हो, एक भाग कटकर समस्त गिर पडे या न भी गिरे उसे छिन्नव्रण जानो.

२ भिन्नव्रणलक्षण— शक्ति (बर्छी), कुंत (भाला), इषु (बाण), खड्ग (तलवार) या सींगके अग्रभाग (नोंक)के लगनेसे कोष्ट विदीर्ण होके कुछ थोडासाही रक्त वहनेपर वह कोष्ट (कोठेका) स्थान भर जावे और रोगीको ज्वर, दाह, तृषा, मूर्छा, श्वास, आध्मान, अरुचि, रक्तनेत्र, मलमूत्र और अधोवायुका अवरोध, मुख, मूलद्वार और मूत्रमार्गसें रुधिर प्रवाह, मुखमें तप्त लोहसदृश गंधि, शरीरमें दुर्गंधि, हृदय और पार्श्वमें शूल हो तो भिन्नव्रण जानो.

विशेषतः— यदि कोष्ट स्थानसें बहाहुआ रुधिर आमाशयमें एकत्रित हुआ हो तो मुखसे वमनद्वारा रुधिर गिरे पेट अधिक फूले और शूल चलेगा. और जो वही रुधिर पक्काशयमें इकट्ठा हुआ हो तो पेट भारी हो और शरीरका तलभाग विशेष ठंडा रहेगा. ये बातें पूर्वामृतसागरमें नहीं थी इसलिये हमने माधवनिदानसें लेकर लिखी है.

३ विद्धव्रणलक्षण— जो बारीक नोंकवाले कांटे आदिसे आशयबिना जो अंगछिद्कर वह काटेकी अनी उसीमें रहे या निकल जावे उसे विद्धव्रण कहते हैं.

४ क्षतव्रणलक्षण— जो बहुत कटा भी न हो और छिदाभी न हो परछि- [illegible] मध्यवर्ती [illegible] पन) लिये हो उसे क्षतव्रण जानो. पूर्वामृतसागरमें इसके लक्षण नहीं लिखे हैं.

५ पिच्चितव्रणलक्षण— जो अंग गिर पडने या दब जानेकी चोटसे हड्डीसहित चिपटकर फैल जावे (चपटा होजावे) और उसमेंसे मज्जा और रक्त बहने लगे उसे पिच्चितव्रण जानो.

---

१ स्थानान्यामाग्निपक्वान्नमूत्रस्य रुधिरस्य च । हृदुंडुकः फुप्फुसश्च कोष्ठ इत्यभिधीयते ॥ १ ॥ इत्युक्तं कोष्ठस्थानं माधवाचार्येण ॥

६ घृष्टव्रणलक्षण– जो अंगके घर्षण (रगड या घिसाव) या किसीप्रकारके प्रहारसे ऊपरका चर्म छिल जावे उसमें दाह उठे, लासेके समान कुछ रक्तमिश्रित रस जल बहने लगे उसे घृष्टव्रण जानो.

सशल्यव्रणपरिक्षा– जो व्रण काला, या धूसर, शोथित और छोटीछोटी फुनसियों युक्त हो बारम्बार ठहर ठहरके रक्त निकले, व्रणका मांस कोमल और पानीके बुलबुलेके समान ऊंचा तथा पीडायुक्त हो उसे सशल्यव्रण जानो अर्थात् उसके भीतर कांटा या किसी तीर आदिकी अनी रहगई है.

कोष्टभेद लक्षण– जो बाणादि शस्त्र त्वचाको भेदनकर नशोंकोभी भेद न करें (या नभीकरें) और कोष्टस्थानमें रह जानेसें पूर्वोक्त भिन्नव्रण दर्शित उपद्रवोंको उत्पन्न करे तो जानो कि कोठेमें कोई अनी रहगई है.

असाध्यकोष्टभेदलक्षण– पांडुवर्ण हो, हाथ, पांव, मुख और श्वास शीतल पडजावे, नेत्र लाल हो आवें और पेट फूलजावें तो असाध्य कोष्टभेद जानो. सद्वैद्यको यशकी इच्छा हो तो इसपर चिकित्सा न करे.

मर्मप्रहारलक्षण– भ्रम, प्रलाप, (अनर्थक वाक्य कथन), पतन (गिर पडना), विचेष्टन (इधर उधर लोट पोट होना), ग्लानि (विकलता, घबराहट) ऊष्णता, शैथिल्यता, मूर्छा, डकार और वातज आक्षेप आदि तीव्र रोग होवे, व्रणसे मांस धोवनसदृश रक्त वहे, और सर्वेन्द्रियां अपना अपना कार्य परित्याग कर देवें तो विचार करो कि "१ मांस, २ संधि, ३ शिरा, ४ स्नायु, और ५ अस्थि इन पांचोंमेंसें किसीके" मर्मस्थानमें व्रण (घाव) होगया है.

१ मर्मरहित शिरादिविद्धलक्षण– जो शिरा बाण आदिसें कट गई या छिद गई हो तो बीरवहूटी (वर्षाजन्यजीव)के वर्णसदृश बहुतसा रक्त बहे और रक्तके वहावसें वायु कुपित होकर आक्षेपादि अनेक रोग हों तो जानो कि शिरामें मर्मस्थान छोडकर अन्तघाव लगा है.

---

१ एक प्रकारका कीडा जो बहुधा वर्षाऋतुमें निकलता है. इसकी त्वचा लाल मखमलके समान होती है. साधारण भाषामें "गोकुलगाय" और मारवाड प्रांतमें "सावनकी डोकरी"के नामसें विख्यात है.

२ स्नायुविद्धलक्षण— घावजन्य पीडासें रोगीकी कूवड निकल आवे, सर्वाङ्ग उपाङ्ग सहित शरीर शिथिल होजावे, सर्व कार्य करनेसें असमर्थ्य हो जावे, अति पीडायुक्त घाव बहुत दिनोंमें भरे तो स्नायुछिदी या कटीहुई जानो.

३ संधिविद्ध लक्षण— शोथका बढाव, घोर पीडा, बलक्षय, गांठोंमें फूटन या सूजन और संधियेके कार्योंका उपराम (बंद होजाना) होजावें तो जानो कि शरीरकी कोई चल या अचल सांध छिद गई हैं.

४ अस्थिविद्धलक्षण— सर्वकाल वेदना होनेसे कभी और कहींभी सुख न मिले उसकी अस्थि (हड्डी) छिद गई जानो.

शिरादि मर्मस्थानविद्धलक्षण— जिस जिस ठिकानोंमें घाव लगा हो उसीके अनुसार तथा पूर्वोक्त भ्रम प्रलाप आदि समान्यलक्षणही जानो.

मांसमर्मविद्धलक्षण— मर्म ताडित मांसका पांडुवर्ण, वर्णविपर्यय, उस स्थानपर स्पर्श ज्ञानरहित हो जावे तो मांसके मर्मस्थानमें चोट लगी जानो.

व्रणोपद्रव— १ विसर्प, २ पक्षाघात, ३ शिरास्तंभ, ४ अपतानक, ५ मोह, ६ उन्माद, ७ व्रणपीडा, ८ ज्वर, ९ तृषा, १० हनुग्रह, ११ कास, १२ वमन, १३ अतिसार, १४ हिचकी, १५ श्वास, और १६ कम्प. ये व्रणके सोलह उपद्रव हैं.

अग्निदग्धउत्पत्तिकारण— अग्नि दग्ध दो प्रकारसें होता है, अर्थात् १ अग्निसेही जलकर, २ अग्नितप्त तेल घृतादि स्निग्धपदार्थ और लोहादि धातु पदार्थसें जलकर. सो यह चार प्रकारका है अर्थात् १ प्लुष्ट, २ दुर्दग्ध, ३ सम्यकदग्ध, और ४ अतिदग्ध.

१ प्लुष्टलक्षण—जो अंग अग्निसें जलकर कुछ औरही प्रकारका होजावे उसे प्लुष्टदग्ध जानो.

२ दुर्दग्धलक्षण—जले हुए अंगमें अति दाह, अति पीडा, फोडे होजावें और विलम्बसें विश्राम हो तो दुर्दग्ध जानो.

३ सम्यकदग्धलक्षण— जलाहुआ अंग ताम्रवर्ण अतिदाह और पीडायुक्त तथा स्थिर होजावे तो सम्यकदग्ध जानो.

---

१ यथास्वमेतानि विभावयेच्च । लिंगानि मर्मस्वभिताडितेषु ॥ इति माधवः ॥

४ अतिदग्धलक्षण– त्वचा और मांस सर्व दग्ध होकर शरीरसें प्रथक् होजावे. शिरा, स्नायु, संधि स्थानादि सर्व दग्ध होकर शरीरमात्रमें पीडा, दाह, ज्वर तृषा और मूर्छा होजावे, वर्ण विपर्यय होकर अंकुर (भराव) विलम्बसें आवे तो अतिदग्ध जानो.

विशेषतः–शरीर अग्निसें जलनेंसे जहां तहां फूलकर पानीसा भर आता है जिसे "फफोला" कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे व्रणशोथ-व्रण-अग्निदग्धरोगाणांलक्षण निरूपणं नामैकत्रिंशस्तरंगः ॥ ३१ ॥

॥ भग्नरोग-नाडीव्रणरोग ॥

निदानं भग्नरोगस्य तथा नाडीव्रणस्य च ।
नेत्ररामतरंगेस्मिन् लिख्यते हि यथाक्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थ–अब हम इस ३२ वें तरंगमें भग्नरोग और नाडीव्रणका निदान यथाक्रमसें लिखते हैं.

भग्नरोगोत्पत्तिकारण–यह रोग सामान्य रीतिसें दो प्रकारका है अर्थात् १ संधिभग्न जिसमें हड्डी जोडपरसे उखड जाती है, और दूसरा कांडभग्न जिसमें हड्डी बीचमेंसें टूट जाती है. इनमेंसे प्रथम संधिभग्नके छः भेद "अर्थात् १ उत्पिष्ट, २ विश्लिष्ट, ३ विवर्तित, ४ तिर्यग्गत, ५ क्षिप्त, और ६ अधः" हैं.

संधिभग्न सामान्यलक्षण– अंग फैलाने, समेटने, इधर उधर फिरने, उठने बैठनेमें अत्यंत पीडा हो, किसीके समीप बैठना या अंगस्पर्श करना न सुहावे तो जानलो कि इसकी किसी हड्डीका जोड उखड गया है.

१ उत्पिष्ट संधिभग्नल०– दो हड्डियोंके जोड उखड जानेसें उस स्थानके चहुंओर शोथ होकर रात्रिको अधिक पीडा हो तो उत्पिष्ट संधिभग्न जानो.

२ विश्लिष्ट संधिभग्नलक्षण– दो हडियोंका जोड उखड जानेसें उस स्थानके आसपास शोथ होकर निरंतर (रात्रिदिन अत्यंत पीडा हो तो विश्लिष्ट संधिभग्न जानो.

३ विवर्तित संधिभग्नलक्षण– जोड उखडे हुए स्थानमें सर्वदा शोथयुक्त पीडा और पार्श्वभाग (पसुली )में तीव्र वेदना हो तो विवर्तितसंधिभग्न जानो.

४ तिर्यग्गतसंधिभग्नलक्षण— तिर्यग्गत संधिके टूट जाने या उखड जानेसें उस स्थानमें अत्यंत तीव्र पीडा होती है.

५ क्षिप्तसंधिभग्नलक्षण— जंघ स्थलमें कभी अधिक और कभी न्यून पीडा होती है उसे क्षिप्तसंधिभग्न कहते हैं.

६ अधस्सन्धिभग्नलक्षण— संधिकी हड्डियोंमें परस्पर घर्षण और नीचेकी ओर पीडा हो उसे अधःसंधिभग्न जानो.

कांडभग्न भेद— कांडभग्नके १२ भेद हैं. अर्थात् १ कर्कट, २ अश्वकर्ण, ३ विचूर्णित, ४ अस्थिछिल्लिका, ५ पिच्चित, ६ कांडभग्न, ७ अतिपतित, ८ मज्जागत, ९ स्फुटित, १० वक्र, ११ छिन्न, और १२ द्विधाकर. ये टूटी हुई हड्डीके १२ भेद हैं.

१ कर्कट कांडभग्नलक्षण— दोनों ओरसे हड्डी दबकर बीचमें ऊंची होजावे उसे कर्कट कांडभग्न जानो.

२ अश्वकर्ण कांडभग्नलक्षण— जो हड्डी चिपट या टूटकर घोडेके समान होजावे उसे अश्वकर्ण कांडभग्न जानो.

३ विचूर्णित कांडभग्नलक्षण—जो हाड भीतरका भीतरही चूर चूर होकर हाथसे देखनेसें चूराचूरा जानपडे उसे विचूर्णित कांडभग्न जानो.

४ अस्थिछिल्लिका कांडभग्नलक्षण—हड्डीके कोई भागका छिलका निकल जावे उसे अस्थिछिल्लिका कांडभग्न जानो.

५ पिच्चित कांडभग्नलक्षण— जो हड्डी दबकर किसी प्रकारसें पिचक जावे उसे पिच्चित कांडभग्न जानो.

६ कांडभग्नलक्षण— जिस हाडकी नली टूट जावे उसे कांडभग्न जानो.

७ अतिपतित कांडभग्नलक्षण— सब हाडमात्र टूटकर जुदा होजावे उसे अतिपतित कांडभग्न जानो.

८ मज्जागत कांडभग्नलक्षण— हाड टूट जानेसें मज्जा बाहरको निकल आवे उसे मज्जागत कांडभग्न जानो.

९ स्फुटित कांडभग्नलक्षण— जिस हाडके टुकडे होजावें उसे स्फुटित कांडभग्न कहते हैं.

१० वक्र कांडभग्नलक्षण– जो हाड किसी चोटसें टेढा होजावे उसे वक्र कांडभग्न कहते हैं.

११ छिन्नकांडभग्नलक्षण– जिस हाडके छोटे छोटे टुकडे होजावे उसे छिन्नकांडभग्न जानो.

१२ द्विधाकर कांडभग्नलक्षण– १ भागका हाड अच्छा बचकर उसीके दूसरे भागका हाड चूरा चूरा होजावे उसे द्विधाकर कांडभग्न जानो. ये कांडभग्नके १२ भेद पूर्वामृतसागरमें नहीं लिखे हैं. अतएव हमने माधवनिदानसे लेकर लिखे हैं.

कांडभग्नसामान्यलक्षण– अंगशैथिल्यता, शोथ, ठनका, छिन्नस्थानमें दबानेसें शब्द, स्पर्श असह्यता, सुई छेदन सदृश पीडा, अंग फडकना, और सर्वत्र सर्वदा सुखकी अप्राप्ति हो तो हड्डी टूटी जानो.

भग्नरोग कष्टसाध्यलक्षण– रोगी स्वल्प अहारी हो, कुपथ्य करे, वातल प्रकृतिवाला हो, और ज्वर अतिसारादि उपद्रव होजावें तो रोगीका बचना कष्टके साथ होगा.

भग्नरोग असाध्यलक्षण– रोगीका कपाल फूट जावे, कमरकी हड्डी टूट जावे, किसी स्थानकी संधि खुल जावे, हड्डी नीचेको उतर आवे, जांघें पिचक जावें. ललाट, स्तन, गुदा, कनपटी, पीट और मस्तक इनमेंसे कोई भाग फूट टूट जावे तो असाध्य भग्नरोग जानो.

दूषितभग्नरोग असाध्यलक्षण– हाड जोडनेके समय ठीक ठीक न जुडे, यदि ठीक ठीक जुडा हो तो यथार्थ गठनसें न बांधाजावे, या भलीभांति बंधनेपरभी किसी प्रकारका धक्का लग जावे तथा ऐसी क्लिष्ट दशामें मैथुन किया जावे तो ऐसे कारणोंके प्रसंगसें भग्नरोग दूषित होकर असाध्य होजाता है. वैद्यको उचित है कि ऐसे रोगीको असाध्य जान छोड देवे.

भग्नरोगदशा– नाक, कान, नेत्रकी हड्डियां कोमल होनेसें नब जाती हैं इनका नब जानाही भग्न है. नलीकी हड्डी फूट जाती है. कपाल, जांघ और कूलेकी हड्डियां तुकडे तुकडे होजाती है. दांत टूट जाते हैं. हाथके

पहुंचे, दोनों पसुली, पीठ, छाती, पेट, गुदा और पाव इन स्थानोंमें जो गोल गोल चक्रवत् कंकणाकृति चक्र हैं वेभी टूट जाते हैं.

नाडीव्रणरोगोत्पत्तिकारण— जो वैद्यकी अज्ञानतासें व्रणके पक जाने परभी फोडकर उसकी पीव न निकाली जावे तो वह पीव व्रणकी आभ्यंतर नसोंमें प्राप्त होके त्वचा, मांस, शिरा, स्नायु, संधि, अस्थि, कोष्ट और मर्मस्थानको विदीर्ण करती हुई नाडियोंद्वारा अतिवेगसें बाहरको वहने लगती है. जिस प्रकार नलमें पानी ऊपरको वेग देता है उसी प्रकार नाडीमेंसे पीवभी बाहरको बढता हुआ निकलता है इसीसें इसे नाडीव्रण[1] संज्ञा दीगई है सो यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, और ५ प्रहारज नाडीव्रण पांच प्रकारका है.

१ वातजनाडीव्रणलक्षण— जो रात्रिके समय दृढ, रूखा, सूक्ष्म, छिद्रयुक्त, शूलयुक्त और फेनसहित पीवका विशेष वहाव हो तो वातजनाडीव्रण जानो.

२ पित्तजनाडीव्रणलक्षण— प्यास लगे, ज्वर चढे, सूक्ष्म दाह हो, और पीला पीव वहे तो पित्तका नाडीव्रण जानो.

३ कफजनाडीव्रणलक्षण— व्रणके मुखपर रुधिर युक्त श्वेत, गाढी पीव वहे और रात्रिको व्रणपर पीडा तथा खुजाल चले तो कफका नासूर जानो.

४ सन्निपातजनाडीव्रणलक्षण— जिसमें दाह, ज्वर, श्वास, मूर्छा, मुखशोष और पीवकी अतिगम्भीर गति (अथाह) हो तो सन्निपातका नासूर जानो. इस व्रणके रोगीका रक्षण ईश्वराधीनही है.

५ शस्त्रप्रहारजनाडीव्रणलक्षण— शरीरमें बाण या गोळी आदि भीतर पैठ जानेसें सद्वैद्य युक्तिसें निकालते हैं परन्तु यदि उसके निकालनेपरभी वहां किसी प्रकारसें व्रण पडजावे और उसमेंसे फेन सहित रुधिर मिश्रित पीव वहती रहे, किसी प्रकारसे शरीर हिलतेही पीडा होने लगे तो उसे क्षतजनाडीव्रण जानो.

---

१ यह नाडीव्रण लोकमें बहुधा "नासूर" इस नामसें प्रसिद्ध हैं.

नाडीव्रण साध्यासाध्यलक्षण– सन्निपातका नाडी असाध्य और शेष चारों प्रकारके नाडीव्रण सुथान होनेसें साध्यही होते हैं.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे भग्नरोग-नाडीव्रणरोगलक्षण निरूपण नाम द्वात्रिंशस्तरंगः ॥ ३२ ॥

॥ भगन्दर-उपदंश ॥

भगन्दरस्यामयस्य चोपदंशस्य वै क्रमात् ।
रामराममितेभङ्गे निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस ३३ तेतीसवें तरंगमें भगंदर और उपदंश रोगका निदान यथाक्रमसें वर्णन करते हैं.

भगंदररोगोत्पत्ति– गुदाके आसपास २ अंगुलके घेरेमें १ फुनसी होकर पकती, फूटती और उसमेंसें सदा पीव बहती रहती है उसे भगंदररोग कहते हैं. यह रोग भग (योनि)के चहुंओर तथा गुदा और बस्तिके बीचमें भी होता और भगके आकारका होनेके कारण भगंदर कहाता है. यह रोग १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, और ५ शस्त्राभिघातजन्य होनेसें ५ प्रकारका होता है.

१ वातजशतपोतक भगंदरलक्षण– कसैला, रूखा पदार्थ अधिक खानेसें वात कुपित होकर गुदाके समीप फुनसी उत्पन्न करती है. यदि आलस्यवश इसका यत्न न किया जावे तो वही फुनसी पककर विशेष पीडा करती और फूटनेपर उसमेंसें पीव, मल, मूत्र, वीर्यभी निकला करते हैं. और उसके चलनीसदृश छिद्र होजाते हैं ये लक्षण होंतो शतपोतक भगंदर जानो.

२ पित्तजउष्ट्रग्रीव भगंदरलक्षण– ऊष्ण वस्तु विशेष खानेसें पित्त कुपित होकर गुदाके चहुंओर २ अंगुलके घेरेमें लाल फुनसी उत्पन्न करता है जो वह फुनसी तत्काल पककर उसमेंसें उष्ण उष्ण पीव वहे और फुनसीकी आकृति ऊंटकी गरदनके समान हो तो पित्तजउष्ट्रग्रीव भगंदर जानो.

३ कफजपरिश्रावी भगंदरलक्षण– फुनसीके स्थानमें अधिक खुजाल चले, पीडा थोडी हो, फुनसीका रंग श्वेत हो, और उसमें सदा पीव वहाकरे तो कफजपरिश्रावी भगंदर जानो.

४ सन्निपातज शम्बुकावर्तभगंदरलक्षण– फुनसीमें अनेक प्रकारकी पीडा हो, नानाप्रकारका वर्ण हो, सदैव पीव वहा करे, फुनसी गौके थनके आकारकी हो और उसका छिद्र घोंघेके घेरेके समान घूमता हुआ हो तो सन्निपातजन्य शंबुकावर्त भगंदर जानो.

५ क्षतजउन्मार्गि भगंदरलक्षण– गुदाके समीप किसी प्रकारकी चोट लगकर विशेष कालपर्यंत कुछ उपाय न किया जावे तो वह घाव वढता हुआ गुदातक पहुंच जाता है यदि फिरभी कुछ उपाय न करो तो उसमें कृमि पडकर नानाप्रकारके छिद्रकर देते हैं. ये लक्षण हों तो उन्मार्गिभगंदर जानो.

असाध्यभगंदरलक्षण– यह सर्वथा अति कष्टसाध्यही है. तथापि त्रिदोषज और क्षतज तो महाअसाध्यही है तथा भगंदरसेंही अधोवायु, मल, वीर्य, मूत्र और कीडे निकलने लगे तो वह रोगी इस रोगसें नष्ट होजावेगा.

उपदंशरोगोत्पत्तिकारण– किसीप्रकार हाथकी चोट लगना, नख या दांत लगना, लिंगको स्वच्छतापूर्वक न धोना, हस्तमैथुन करना, मिथ्या आहार विहार करना, अति मैथुन करना, और रोगयुक्त योनिके दोष इन कारणोंसें लिंगमें १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ रक्त, और ५ सन्निपात ये पांचप्रकारके उपदंश होते हैं.

१ वातोपदंशलक्षण– लिंगेन्द्रियमें सुई टोंचनें या चीरनेके समान पीडा हो, लिंग फरके और श्यामवर्णके छाले हों तो वातोपदंश जानो.

२ पित्तोपदंशलक्षण– लिंगमें दाह हो और पीले रंगके वहुत वहनेवाले छाले हों तो पित्तका उपदंश जानो.

३ कफोपदंशलक्षण– लिंगमें खुजाल चले, शोथ हो, श्वेत रंगके बडे बडे छाले हों और उनमेंसे सर्वदा गाढी पीव वहती रहे तो कफोपदंश जानो.

४ रक्तोपदंशलक्षण– जिसके छाले मांसके सदृश हों उसे रक्तका उपदंश जानो. यह एक पित्तोपदंशकाही भेद है.

५ सन्निपातोपदंशलक्षण– नानाप्रकारकी पीडा नानाप्रकारकी पीवका वहाव और पूर्वोक्त दोषोंके समस्त लक्षण हों तो सन्निपातोपदंश जानो.

उपदंशके असाध्यलक्षण– लिंगका मांस विखर जावे, कीडे पडजावें,

सर्व लिंग गलजावे, केवल अंडकोश मात्र रहजावे तो असाध्य उपदंश जानो. तथा यह रोग होनेपर असावधानीसें यत्न न करके विषयासक्तही बना रहे तो कुछ दिनोंमें लिंग सूजकर कीडे पडजावेंगे और पककर दाह होगी तब लिंग गलकर गिर जानेसें वह रोगी मृत्युप्राप्त हो जावेगा.

लिंगवर्तिरोगलक्षण– लिंगके अग्रभागपर चमडेके नीचेकी संधिमें धान्यके अंकूर या मुर्गेकी चोटी या कुल्थी या कमलपत्रके सदृश मांसके अंकुर निकलकर दाह और सुई चुभानेके समान पीडा करते प्यास लगती और इन्द्री चूने लगती है इसे लिंगवर्ति तथा लिंगार्शभी कहते हैं.

विशेषतः– सुश्रुतमें लिखा है कि उपदंशरोग[1] स्त्रियोंकोभी होता है परन्तु उन्हें मासिक रजोधर्म होनेसें मनुष्योंके समान प्रत्यक्ष प्रकट होता नहीं दिखाई देता है.

सूकरोगोत्पत्तिकारण– जो मूर्ख मनुष्य अविचारसे लिंगवृद्धिके औषधियोंकी पट्टी तथा लेपादि करते हैं, उन्हें लिंगमें १८ प्रकारका सूकरोग होता है. अर्थात् १ सर्षपिका, २ अष्टीलिका, ३ ग्रंथित, ४ कुंभिका, ५ अलजी, ६ मृदित, ७ सम्मूढपीडिका, ८ अवमंथ, ९ पुष्करिका, १० स्पर्शहानि, ११ उत्तमा, १२ शतयोनक, १३ त्वकपाक, १४ शोणितार्बुद, १५ मांसार्बुद, १६ मांसपाक, १७ विद्रधी, और १८ तिलकालक.

१ सर्षपिकालक्षण– लिंगपर किसीप्रकारकी सर्षोंके समान श्वेत फुनसियां हों उसे सर्षपिका जानो.

२ अष्टीलिकालक्षण– लिंगपर किसीप्रकारसें कडी और पीडायुक्त फुनसियां हों उसे अष्टीलिका जानो.

३ ग्रंथितलक्षण– लिंगपर गठानसी हो जाती हैं उसे ग्रंथित जानो.

४ कुम्भिकालक्षण– लिंगपर जामुनकी गुठली सदृश फुनसी होजावें उसे कुम्भिका जानो.

५ अलजील०– लिंगपर प्रमेहकी फुनसी हो जाती हैं उन्हें अलजी जानो.

---

१ यह वही रोग है जो लोकमें गर्मी और उर्दूभाषामें आतिशिकके नामसें प्रख्यात है.

६ मृदितलक्षण– लिंगको शूकरोगकी दशामें दबानेमें जो सूजन हो आती है उसे मृदित जानो.

७ सम्मूढपिडिकालक्षण– लिंग दोनों हाथसें दबाया जावे तो उससें जो फुनसियां हो जाती हैं उन्हें सम्मूढपिडिका जानो.

८ अवमंथलक्षण– लिंगमें किसी कारणसें बडी बडी सघन फुनसियां होकर कफ रक्त विकारसें पीडा और रोमांच होता है उसे अवमंथ कहते हैं.

९ पुष्करिकालक्षण– लिंगकी सुपारीपर रक्तपित्तके प्रकोपसें बहुत मिली हुई फुनसियां हो जाती हैं उन्हें पुष्करिका कहते हैं.

१० स्पर्शहानिलक्षण– जो इन्द्री पीडाके मारे हाथ आदिका स्पर्श (छूना) न सह सके उसे स्पर्शहानि कहते हैं.

११ उत्तमालक्षण– अजीर्ण तथा रक्त पित्तके प्रकोपसें इन्द्रीपर मूंग या उर्दके समान लाल फुनसियां हो आती है उन्हें उत्तमा कहते हैं.

१२ शतयोनकलक्षण– रक्तवातके कोपसें लिंगपर अनेक छिद्र पड जाते हैं उन्हें शतयोनक कहते हैं.

१३ त्वकपाकलक्षण– तीनों दोषोंके प्रकोपसें इन्द्री पककर दाह होती और उसकी पीडासें शरीरमें ज्वर होता है उसे त्वकपाक कहते हैं.

१४ शोणितार्बुदलक्षण– इन्द्रीपर काली या लाल फुनसी होकर पीडा होती है उसे शोणितार्बुद कहते हैं.

१५ मांसार्बुदल०–इन्द्रीपर कठोर फुनसी होती है सो मांसार्बुद कहाती हैं.

१६ मांसपाकलक्षण– त्रिदोषके प्रकोपसें इन्द्रीका मांस विखरके पीडायुक्त हो जाता है उसे मांसपाक जानो.

१७ विद्रधीलक्षण– सन्निपातके प्रकोपसें लिंगपर जो फुनसियां उठती हैं उन्हें विद्रधी कहते हैं.

१८ तिलकालकलक्षण– त्रिदोषके प्रकोपसें इन्द्रीपर काली या लाल तथा अन्य रंगोंकी विषहरी फुनसी होकर पकती और उनमेंसें पीव वहकर इन्द्री गल जाती है उसे तिलकालक कहते हैं.

सूकरोग असाध्यलक्षण– १ मांसार्बुद, २ मांसपाक, ३ विद्रधी और

४ तिलकालक ये चारों पिछले सूकरोग तो उत्पन्न हुए तो फिर शरीरके साथही नष्टभी होते हैं असाध्य है परन्तु पहिले १४ सूकरोग कष्टसाध्य होते है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे भगंदरोपदंशलिंगवर्तीसूकरोगाणांलक्षणनिरूपणं नाम त्रियस्त्रिंशस्तरङ्गः ॥ ३३ ॥

॥ कुष्टरोग ॥

निदानं कुष्ठरोगस्य विवर्णो येन जायते ।
नराणां वेदरामेस्मिन् तरङ्गे वर्ण्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस ३४ वें तरंगमें मनुष्यके वर्ण विदूषक कुष्ट रोगका निदान यथाक्रमसें वर्णन करते हैं.

कुष्टरोगोत्पत्तिकारण– विरुद्ध आहार विहार, पतली चिकनी वस्तु भक्षण, मल-मूत्रावरोध, अग्नि तापन, विशेष भोजन, शीतोष्णका विचार न रखना, श्रम, घाममें फिरना, भय, धूप, श्रमकी विकलतापर तत्काल जलपान, अजीर्णपर भोजन, वमन, विरेचनपर कुपथ्य नवीन जलपान, दही मछली, खटाई, नमक, उर्द-मूली, तिल, गुड और पिसा हुआ अन्नभक्षण, दिनको निद्रा, स्त्रीसंग, ब्राह्मणादिका श्राप तथा नाप्रकारके पापोंसें मनुष्यके तीनों दोष कुपित होकर सप्त धातुओंको बिगाडके अठारह प्रकारके कुष्ट उत्पन्न करते हैं.

अष्टादश कुष्टभेद– १ कापालिक, २ औदुम्बर, ३ मंडल, ४ ऋक्षजिन्ह, ५ पुंडरीक, ६ सिध्म (विभूति तथा सेहुआ), ७ काकण, ८ एककुष्ट, ९ गजचर्म, १० चर्मदल, ११ किटिभ, १२ वैपादिक, १३ अळस, १४ दद्रु (दाद), १५ पामा (खुजली), १६ विस्फोटक, १७ सतारु, और १८ विचर्चिका (ब्योंची). इनमेंसे पहिले ७ महाकुष्ट और पिछले ११ साधारण कुष्ट जानो.

कुष्टरोग पूर्वरूप–जिस स्थानका चर्म अति चिकना या खरधरा हो, विशेष पसीना निकले या निकलेही नहीं, रंग बदल जावे, दाद, खाज, शून्यता, सुई टोचने सदृश पीडा, ददोरा, विन परिश्रम थकावट और व्रण होजावें, व्रणमें शूल उठे, व्रण शीघ्र उत्पन्न होकर बहुत कालतक रहे, व्रण

भर आवे और उनके मिट जानेपर भी वह स्थान खरधरा बना रहे, उसी पूर्वस्थानपर किंचित् सूक्ष्म कारणसेही पुनः व्रण हो आवे, रोमांच होवे और रक्त काला पडजावे तो जानो कि इस स्थानपर कुष्टरोग उत्पन्न होगा.

कुष्टसामान्यलक्षण— पूर्व जन्मके पापोंसे मनुष्यकी बुद्धि भ्रंश होकर कुपथ्य कराती है इस कुपथ्यसें त्रिदोष कुपित होकर शरीरकी नसोंमें प्राप्त होते हुए शरीरकी त्वचा, रक्त, और मांसको दूषित करके त्वचाका रंग बदल देते हैं सो कुष्ट कहाता हैं.

विशेषतः— वातप्रकोपसें कापालिक एक कुष्ट, पित्तप्रकोपसें औदुम्बर, कफप्रकोपसें मंडल, वात-पित्त प्रकोपसे विचर्चिका ऋक्षजिव्ह, वात-कफ प्रकोपसे गजचर्म, कीटिभ, सिध्म, अलस, वैपादिक. पित्त-कफ प्रकोपसे दद्रु, सतारु, पुंडरीक, विस्फोटक, पामा, चर्मदल और तीनों दोषोंके प्रकोपसें काकण कुष्टकी उत्पत्ति होती है.

१ कापालिकलक्षण— शरीरकी त्वचा काली, लाल, फटीहुई, रूखी, कठोर, सूक्ष्म होकर अधिक पीडा हो उसे कापालिक कुष्ट जानो. यह कुष्ट विषम है इसलिये कठिनाईसे दूर होवेगा.

२ औदुम्बरलक्षण— त्वचामें दाह, ललाई और खुजाल विशेष हो, रोम पीले पडजावें और त्वचा गूलरके पके फलसदृश होजावे उसें औदुम्बरकुष्ट कहते हैं.

३ मंडललक्षण— त्वचा श्वेत या लाल, या चिकनी होजावे, गीली, ऊंची और स्थिर रहे उसे मंडल कहते हैं.

४ ऋक्षजिव्हलक्षण— जो कुष्ट किनारोंपर लाल और बीचमें पीलापनलिये काला हो, कर्कश और पीडायुक्त हो तथा रीछकी जिव्हाके आकारका हो सो ऋक्षजिव्ह कुष्ट कहाता है.

५ पुंडरीकलक्षण— त्वचा कमलकी पखुरीसदृश ललाई लिये हुए श्वेतवर्णकी हो उसे पुंडरीक कहते हैं.

६ सिध्मलक्षण— त्वचा श्वेत या ताम्रवर्ण और सूक्ष्म होजावे, खुजाल चले और कुष्ट क्रमशः फैलता जावे उसे सिध्मकुष्ट जानो.

७ काकणलक्षण— त्वचा गुंजाके समान बीचमें काली और आस-

पास लाल हो, पके नहींपर पीडा अधिक हो सो काकणकुष्ट जानो.

८ एककुष्टलक्षण– त्वचामें पसीना न आवे और मछलीके टुकडेके समान बडी होजावे सो एककुष्ट कहाता है.

९ गजचर्मकुष्टलक्षण– त्वचा हाथीके चमडेके सदृश मोटी होजावे उसे गजचर्म कहते हैं.

१० चर्मदलकुष्टलक्षण– त्वचाका वर्ण लाल हो, शूल, खाज और फोडोंसे पूरित हो, फटजावे और वस्त्रका स्पर्शभी सहन न करसके उसे चर्मदलकुष्ट कहते हैं.

११ किटिभलक्षण– त्वचा सूखेहुए व्रणके समान काळी और कठोर हो उसे किटिभकुष्ट जानो.

१२ वैपादिकलक्षण– हाथ पांवका चर्म फटकर दरारें तिड जावें और पीडा देवें उसे वैपादिक (विवांई) कहते हैं.

१३ अलसलक्षण– त्वचामें खुजालयुक्त बडी बडी फुनसी हो जाती है. उन्हें अलसकुष्ट कहते हैं.

१४ दद्रुकुष्टलक्षण– त्वचापर ऊंची लाल खुजालयुक्त फुनसियां होजाती हैं उन्हें दद्रु (दाद) कहते हैं. इसीका एक भेद कछदाद है जो हाथ, पाव, कूले और कांछोंमें होती है.

१५ पामालक्षण– त्वचापर छोटी छोटी खुजालयुक्त चेंप और दाहसहित लाल और अनेक फुनसियां होती हैं उसे पामा (खुजली) कुष्ट जानो.

१६ विस्फोटकलक्षण– त्वचामें काली, लाल, तथा छोटी छोटी फुनसियां हो जाती है उन्हें विस्फोटक कुष्ट कहते हैं.

१७ सतारुकुष्टलक्षण– त्वचामें लाल, काळी और दाहयुक्त फुनसियां होवें उसे सतारुकुष्ट जानो.

१८ विचर्चिका लक्षण– हाथ पांवकी त्वचापर खुजालयुक्त, काळी तथा चेपयुक्त फुनसियां हों उन्हें विचर्चिका (ब्योंची) कहते हैं.

सप्तधातुगत कुष्टनिर्णय– रसधातुगत कुष्टसें कुरूप, शरीर रूखा, चर्मशून्य, रोमांच और पसीनेकी विशेषता होती है. रक्तगत कुष्टसें शरीरमें

खाज और पीवकी विपुलता होती है. मांसगत कुष्टसें व्रणकी बृहत्ता, मुख सूखना, कठोर फुनसियां होना, सुई चुभाने सदृश पीडा होना, चर्म फटना, और घावकी अचलता होती है. मेदोगत कुष्टसें हाथोंका टेढापन, चलनेमें अशक्ति, अंगोंका फूटना, घावोंका फैलाव, तथा रस, रक्त, मांसगत कुष्टके लक्षणभी होते हैं. अस्थि और मज्जागत कुष्टसें नाक बैठजाना नेत्रोंमें ललाई, स्वरभंग और व्रणोंमें कीडे पड जाते हैं, और वीर्यगत कुष्टसें पूर्वोक्त ६ हों धातुगत कुष्टके लक्षण होते हैं. जो पुरुषके वीर्य और स्त्रीके रज दोनोंमें कुष्टकी पृविष्टि हो तो उनके संतानभी कुष्टयुक्तही होवेंगे.

कुष्टसाध्यासाध्यलक्षण— जो कुष्ट वात कफसें होकर त्वचा रक्त, और मांसमेंही रहे, तो साध्य. द्वन्द्वजन्य होकर मेदतक प्राप्त होजावे तो याप्य और त्रिदोषजन्य होकर मज्जातक जा पहुंचे, कृमि पडजावें, मंदाग्नि और दाह होजावे, तो असाध्य जानो. तथा जो कुष्ट वीर्यतक जा पहुंचे, विखर जावे, चूनेलगे, स्वरभंग होजावे और वमन, विरेचनादिक पंच कर्मभी अपना प्रभावनादि खासकें उसे महाअसाध्य जानो. यह गलित कुष्ट प्राणनाशकही होता है.

कुष्टभेदश्वित्रि तथा किलासलक्षण— श्वित्रि श्वेत और किलास कुछ कुछ लाल होता है ये पकतेपर बहते नहीं, रक्त, मांस और मेदमें रहते हैं पर विशेष पीडा नहीं देते, ये दोनो त्रिदोषसेही होते हैं, इनकी सम्प्राप्ति कारण कुष्टके समानही जानो.

श्वित्र किलासके साध्यासाध्यलक्षण— श्वित्रमें रोम श्वेत होजावें. उनकी श्वेतताभी महीनही हो, चिन्ह एक दूसरेसें न मिले.हों नवीन (अल्पकालिक) हो, अग्निदग्धसें उत्पन्न न हुआ हो तो यह श्वित्र साध्य. तथा जो गुदा, योनी, लिंग, हथेली, तलुवे, ओष्टमें हुआ हो, प्राचीन (बहुकालिक) हो तो असाध्य श्वित्र जानो. और किलास कुष्ट तो सर्वथा असाध्यही होता है.

स्पर्शजन्यरोग— इस प्रसंगपर स्पर्शसें उत्पन्न होनेवाले रोग (जैसे १ कुष्ट, २ शोष, ३ ज्वर, ४ राजरोग, ५ नेत्रपीडा (आंखें आना) ६ शीतला

भी लिखते हैं. ये छःहों रोगवाले रोगीके शरीरसें शरीर मिलाने, एक ठाव भोजन करने, एक ठांव सोने एक दूसरेके वस्त्र बदलकर पहिनने, एक दूसरेका लगाया हुआ अवशिष्ट चंदनादि लेप लगाने और मैथुनसे निरोगीकोभी उत्पन्न होजाते हैं इसलिये सबको इनका बचाव रखनाही योग्य हैं.

इति नूत० निदानखंडे कुष्टरोगलक्षणनिरूपणं नाम चतुस्त्रिंशस्तरंगः॥३४॥

॥ शीतपित्त-उदर्द-कोढ-उत्कोढ-अम्लपित्त-विसर्परोग ॥

शीतपित्तादिरोगाणामम्लपित्तविसर्पयोः ।
पञ्चराममिते भङ्गे निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– इस ३५ पेंतीसवें तरंगमें शीत, पित्त, उदर्द, कोढ, उत्कोढ, अम्लपित्त और विसर्प रोगोंका निदान क्रमानुसार लिखते हैं.

शीत-पित्त-उदर्द-कोढ-उत्कोढ-रोगोत्पत्तिकारण– शीतल पवनके स्पर्शसें कफ और वात कुपित होके पित्तसे मिलती हुई भीतर रक्त और बाहर चर्ममें फैलकर शीत पित्त, उदर्द, कोढ, और उत्कोढको उत्पन्न करते हैं.

तथा पूर्वरूप– तृषा, अरुचि, उबकाई, मोह, (घवराहट) अंगमें शैथिल्यता, भारीपन और नेत्रोंमें ललाई ये लक्षण दृष्टि पडे तो बिचारलो कि अब उक्तरोग उत्पन्न होनेवाले हैं.

शीतपित्तलक्षण– चर्मपर बरैयोंके काटनेके समान ददोरे होकर उनमें खुजाल, सुई चुभानेकीसी वेदना, वमन, ज्वर, और दाह हो तो उसे शीतांग जानो इसमें बादी प्रधान है.

उदर्दलक्षण– जो ददोरे बीचमें गहरे, किरारोंपर ऊंचे ललाईयुक्त और खुजालसहित हों उन्हें उदर्दरोग जानो यह रोग शिशिर ऋतुमें कफकी विशेषतासें होता है.

कोढलक्षण– आते हुए वमनको रोकनेसें पित्त कफ कुपित होकर त्वचापर खुजालयुक्त लाल लाल ददोरे उत्पन्न करते हैं उन्हें कोढ कहते हैं.

उत्कोढलक्षण– जो यही कोढ विशेष कालपर्यंत रहे तो उसीको उत्को-

अम्लपित्तरोगोत्पत्तिकारण– रूखी, खट्टी, कटु, उष्ण वस्तुओंके भक्षणसें पित्त कुपित होकर अम्लपित्तरोगको उत्पन्न करता है.

अम्लपित्तसामान्यलक्षण– अन्न न पचे, विना श्रम थकावट हो, वमन हो, खट्टी डकारें आवें, शरीर भारी हो, हृदय तथा कंठमें दाह हो और भोजनपर अरुचि हो तो अम्लपित्त प्राप्त हुआ जानो. यह रोग १ उर्द्धगामी, २ अधोगामी दो प्रकारका है.

ऊर्द्धगामी अम्लपित्तलक्षण– जो हरा, पीला, नीला, काला, अति निर्मल, तथा मांस जलसदृश, चिकना, दृढ, कडवा, खारा, तीखा, कफयुक्त, और बहुतसा वमन करे तो मुखद्वारसे निकलनेवाला अम्लपित्त जानो.

अधोगामी अम्लपित्तलक्षण– नानाप्रकारके वर्णयुक्त मल उतरे, दाह, मूर्छा, वमन और मोह होवे हृदयमें पीडा, शरीरमें ददोरे, शरीरमें ज्वर, भोजनमें अरुचि, कंठ कुक्षि हृदय हाथ और पांवमें दाह होकर बहुत डकारें आवें तो उसे मूलद्वारसे निकलनेवाला अम्लपित्त जानो.

वातयुक्त अम्लपित्तलक्षण– शरीरमें कंप, मूर्छा, प्रलाप, चिमचिमाहट, पीडा, शूल, मोह और रोमहर्ष होकर अंधेरी तथा चक्र आवें तो अम्लपित्तमें वातका संसर्ग जानो.

कफयुक्त अम्लपित्तलक्षण– थूकमें कफ, शरीरमें भारीपन, अरुचि, ठंड, वमन, निस्तेज (कांतिरहित), निर्बलता, खुजाल होकर निद्राकी बहुतायत हो तो अम्लपित्तमें कफका संसर्ग जानो.

अम्लपित्तसाध्यासाध्यलक्षण– यह रोग नवीन दशामें साध्य, मध्यम दशामें याप्य और प्राचीन दशामें कुपथ्य होनेसें असाध्य हो जाता है.

विसर्परोगोत्पत्तिकारण– नोंन, खटाई और उष्ण वस्तुके विशेष भक्षणसें १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज, ५ वातपित्तज, ६ वातकफज, और ७ कफपित्तज एवं सात प्रकारके विसर्परोग उत्पन्न होते हैं.

विसर्परोग सामान्यलक्षण– उपरोक्त कारणोंसें त्रिदोष कुपित होकर शरीरके रक्तादि सप्त धातुओंको दूषित करके त्वचापर छोटी छोटी फुनसियोंके मण्डलको फैला देते हैं इसलिये इस रोगको विसर्परोग कहते हैं.

१ वातजविसर्पलक्षण— अपने कारणोंसें वात कुपित होकर शरीरमें कहीं-भी छोटी छोटी फुनसियां उत्पन्न करता है तब शरीरमें वातज्वरके समस्त लक्षण, शोथ, पीडा और खुजाल होकर वे फुनसियां फटने लगती हैं ये लक्षण हों तो वातका विसर्प जानो.

२ पित्तजविसर्पलक्षण— स्वकारणोंसें पित्त कुपित होकर शरीरमें छोटी, बडी, लाल फुनसियां करके फैला देता है तब शरीरमें पित्तज्वरके समस्त लक्षण होते हैं उसे पित्तविसर्प कहते हैं.

३ कफजविसर्पलक्षण— स्वकारणीय कुपित कफ शरीरमें छोटी मोटी खुजालयुक्त, तथा चिकनी फुनसियोंको फैलाकर कफज्वरके सर्व लक्षण दर्शाता है उसे कफविसर्प कहते हैं.

४ सन्निपातजविसर्पलक्षण— स्वकारणी कुपित सन्निपात शरीरमें छोटी बडी पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षणयुक्त फुनसियां उत्पन्न करके फैलाता और सन्निपात ज्वरके लक्षण करता है उसे सन्निपातजविसर्प जानो.

५ वातपित्तज अग्निविसर्पलक्षण— स्वकारणोंसें वात, पित्त कुपित हो-कर शरीरमें छोटी बडी अग्निके वर्णसदृश लाल फुनसियां उत्पन्न करके फै-ला देते हैं तब शरीरमें वात, पित्तज्वर लक्षण, वमन, मूर्छा, अतिसार, तृषा, भ्रम, अंगपीडा, हडफूटन, अंधेरी, अरुचि, दाह, श्वास, हिचकी, विकलता होती और विसर्प स्थानका चर्म काला, नीला, अथवा लाल होजाता, संज्ञा और निद्राका अभाव रहता और मन देहादि बिगड जाते हैं ये ल-क्षण हों तो पित्त-वातज अग्निविसर्प जानो. यह महा असाध्य है.

६ वात-कफजग्रंथि विसर्पलक्षण— विशेष रक्तवाले मनुष्यका कफसे सू-का हुआ वायु कुपित होकर कफ और त्वचा, शिरा, स्नायु मांसगत रक्त-को दूषित करके शरीरपर लम्बी, छोटी, गोल, मोटी, खरखरी और लाल आदि गठानोंकी मालासी उत्पन्न करता है तब रोगीको ज्वर, श्वास, कास, अतिसार, मुखशोष, हुचकी, मोह, वांती, मूर्छा, विवर्णता, अंग फूटन और मंदाग्नि ये विकार होते हैं ये लक्षण हो तो वात-कफज ग्रंथिविसर्प जानो.

७ कफ-पित्तजकर्दमविसर्पलक्षण— स्वकारणीय कुपित कफ पित्तसें क-

र्दम विसर्प उत्पन्न होकर शरीरमें जकडाव, निद्रा, तंद्रा, शिरोरुक्, शैथिल्यता, बिकलता, प्रलाप, अरुचि, भ्रम, मन्दाग्नि, मूर्छा, हड फूटन, तृषा, भारीपन, आममिश्रित मल, नाशिकादि छिद्रोंका पकाव, सर्व शरीरमें काली, लाल, मैली, चिकनी, भारी, शोथयुक्त, विशेष पीवयुक्त फुनसियां होकर फैलना, कम्प आना, शरीरकी नसोंका निकलना, और मृतकके समान दुर्गंधिका आना ये लक्षण होजाते हैं उसे कर्दम विसर्प कहते हैं.

क्षतजविसर्पलक्षण– शस्त्रादिकी चोट लगनेसें वात कुपित होकर रक्त और पित्तको बिगाड देता है इसलिये शरीरमें कुल्थीके समान फुनसियां उत्पन्न होकर पश्चात् वेही फुनसियां फोडेकी आकृतिमें होजाती है तब फुनसियोंमें शोथ, शरीरमें ज्वर और काला रक्त पड जाता है. ये लक्षण हों तो क्षतज (चोट लगनेका) विसर्प जानो.

विसर्पोपद्रव– रोगीके शरीरमें ज्वर, अतिसार, वमन, तृषा, अरुचि, अन्नका निष्पचन, बुद्धिकी स्थिरता न रहकर मांस विखर जाता है.

विसर्परोग साध्यासाध्यलक्षण– वातज, पित्तज और कफज विसर्प साध्य. सन्निपातज और क्षतज तथा काले रंगका पित्तज विसर्प असाध्य. और मर्मस्थानमें उत्पन्न हुआ विसर्प अति कष्टसाध्य होता है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे शीतपित्त-उदर्द-कोढ-उत्कोढ-अम्लपित्त-रोगाणांलक्षणनिरूपणं नाम पंचत्रिंशस्तरंग ॥ ३५ ॥

॥ स्नायुक्-विस्फोटक-मसूरिका-फिरङ्गवात ॥

निदानं लिख्यते स्नायुविस्फोटकमसूरिका ।
फिरङ्गवातरोगाणां भङ्गेरसधनंजये ॥ १ ॥

भाषार्थ– अब हम इस ३६ छत्तीसवें तरंगमें स्नायुक्, विस्फोट, मसूरिका और फिरंगवात रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

स्नायुरोगोत्पत्तिकारण– मलीन जलपान और दुष्टान्न भक्षणसें वायु कुपित होकर हाथ या पांवके किसी भागमें फफोला या शोथ उत्पन्न करके उसे फोड डालता है तब उस स्थानकी नसोंको कुपित पित्त सुखाकर तां-

तके समान तारको उत्पन्न करता और कुपित वायुको बढाता है तिससे इस स्नायुरोगवाला रोगी अत्यंत क्लेशग्रस्त रहता है. जबतक वह धागा (तार) उस स्थानसें समस्त बाहर न निकले तबतक वैद्य उसे स्नायु तथा लोकमें नहरुआ और मारवाड देशमें बालारोग कहते हैं.

विस्फोटकरोगोत्पत्तिकारण— कडवी, खट्टी, तीखी, उष्ण, दाहकारक, रूखी, खारी वस्तुके विशेष सेवन, अजीर्ण, भोजनपर भोजन करने, धूपमें फिरने और ऋतुके विपर्ययसे तीनों दोष कुपित होकर शरीरकी त्वचामें प्राप्त होते हैं तब रक्त, मांस और अस्थिको दूषित करके प्रथम ज्वर और फिर उसी ज्वरके साथ ही शरीरपर भयंकर विस्फोटक रोगके फोडोंको उत्पन्न करते हैं.

विस्फोटकसामान्यरूप— शरीरमें कहीं कहीं अथवा सर्वत्र रक्त पित्तसे तथा अग्निसे जलनेके समान फफोले आ जाते है उन्हें विस्फोटक जानो.

१ वातज विस्फोटक लक्षण— फोडोंमें पीडा, शरीरमें ज्वर, तृषा, हडफूटन, शिरोग्रह और फफोलोंका रंग कालासा हो तो वातज विस्फोटक रोग जानो.

२ पित्तजविस्फोटक लक्षण— शरीरमें दाह, ज्वर, पीडा, तृषा, फफोलोंका पकाव तथा वहाव और वर्ण नारंगी (संतरा)के समान हो तो पित्तका विस्फोटक जानो.

३ कफजविस्फोटकलक्षण— शरीरमें वांति, अन्नपर अरुचि, भारीपन, खुजाल, व्रणोंकी कठोरता, पांडुवर्ण, निर्वेदना, और विलम्बसे पकाव हो तो कफज विस्फोटक जानो.

द्वन्द्वजविस्फोटकलक्षण— ४ वात, पित्तज विस्फोटकमें तीव्र वेदना होती. ५ कफपित्तज विस्फोटकमें खाज, दाह, ज्वर और वांति होती. और ६ वातकफज विस्फोटकमें खाज, आलस्य, और भारीपन होता हैं.

७ सन्निपातज विस्फोटकलक्षण— फफोले बीचमें गहरे, किनारोंपर ऊंचे, कठोर, और अल्पपाकी हों, शरीरमें दाह, तृषा, मोह, वांति, मूर्छा, वेदना, ज्वर, प्रलाप, कम्प और तंद्रा ये लक्षण हों तो त्रिदोषका विस्फोटक जानो.

८ रक्तजविस्फोटक लक्षण— जो फफोले घुंघची (गुंजा)के समान हों

उसे रक्तज विस्फोटक जानो. इसके कारणभी पित्तजविस्फोटकके समान ही होते हैं. यह अनेक यत्नोंसेभी नहीं मिटता.

विस्फोटक उपद्रव–इस रोगमें हिचकी, श्वास, अरुचि, तृषा, आलस्य, शरीरमें वेदना, विसर्प, ज्वर और उवकाई आना ये उपद्रव हैं.

विस्फोटक साध्यासाध्यलक्षण– एक दोषज विस्फोटक साध्य, द्वंद्वज कष्टसाध्य और त्रिदोषज तथा उपद्रवयुक्त हो उसे घोर असाध्य जानो.

मसूरिकारोगोत्पत्तिकारण– कटु, खट्टा, नोंन, खारा, विरुद्ध भोजन, दुष्टान्न, और मटरका साग खाने, भोजनपर भोजन करने, जल पवनके विकार, तथा सूर्यादि ग्रहोंके प्रकोपसें तीनों दोष कुपित होकर रक्तके संयोगसें मसूराकृति फुनसियां उत्पन्न करते हैं इसे मसूरिका रोग कहते हैं.

मसूरिका पूर्वरूप– ज्वर, कंडु, अंगमर्दन, अरुचि, चित्तभ्रम, त्वचापर शोथ, नेत्रोंमें ललाई होकर शरीरका वर्ण बिगड जावे तो जानो कि इसे मसूरिका निकलेंगी.

१ वातजामसूरिकालक्षण–मसूरिकाकी फुनसियां कालापनलिये लाल, रूखी, कठोर, तीव्र पीडायुक्त और विलम्बसें पकनेवाली हों, संधि, हाड और अंगुलियोंके पोरोंमें फूटन हो, शरीरमें कास, कम्प, विकलता, तृषा और अरुचि हो, तथा जीभ, तालु और ओष्ट सूख जावे तो बादीकी मसूरिका जानो.

२ पित्तजामसूरिकालक्षण– जो लाल, पीली, श्वेत, कोमल, शीघ्र पकनेवाली पीडायुक्त फुनसियां हों तो पित्तसें उत्पन्न हुई मसूरिका जानो. इसके रोगीको प्यास, दाह, अरुचि, मुखनेत्रोंका पकना, तीव्र ज्वर, अन्न न पचना और फूटाहुआ मल होना ये लक्षण होते हैं.

३ रक्तजामसूरिकालक्षण– इसके लक्षणभी पित्तजाके समानही होते हैं केवल इसमें अंगफूटन विशेष होती है.

४ कफजामसूरिकालक्षण– रोगीके मुखसे कफ गिरे, अंग गीलासा रहे,

---

१ इसमें विस्फोटकरोग लोकमें शीतला, माता, देवी आदि नामसें प्रख्यात और मसूरिका बोदरी माता या छोटी माताके नामसें प्रख्यात हैं.

शिरमें पीडा हो, शरीर भारी हो, अरुचि हो, उबकाई आवें, तंद्रा आलस्य हो, श्वेत, चिकनी, अति मोटी, खाज मंद वेदनायुक्त और चिरपाकी फुनसियां हों तो कफकी मसूरिका जानो.

५ त्रिदोषजालक्षण– जो नीले रंगकी, चिपटीहुई फैली, बीचमें गहरी, अति पीडायुक्त, बहुत दिनोंमें पकनेवाली, फुनसियां हों जिनमेंसें दुर्गंधित पीव सदैव वहता रहे उसे त्रिदोषकी मसूरिका जानो.

चर्ममसूरिकालक्षण– कंठ रुक जावे, अरुचि, तंद्रा, प्रलाप और विकलता हो तो चर्ममसूरिका जानो.

७ रोमांतिकमसूरिकालक्षण– जो रोम कूपके समान ऊंची, लाल, कास और अरुचियुक्त फुनसियां हो तो रोमांतिक मसूरिका जानो. इनके प्रथम ज्वर आता और ये कफपित्तके विकारसें होती हैं.

सप्तधातुगत मसूरिकालक्षण– पानीके बब्लोंके आकारकी फुनसियां अल्प दोषसें उत्पन्न होकर फूटनेपर पानी निकले तो रसगत. लाल, शीघ्रपाकी, पतली त्वचावाली अति दोषयुक्त फुनसियां होकर उनके फूटनेपर रक्त वहे तो रक्तगत. जो कठोर, चिकनी, मोटी त्वचावाली, चिरपाकी फुनसियां हो जिनसे शरीरमें शूल, विकलता, खाज, मूर्छा, दाह और तृषा हो तो मांसगत. जो गोल, कोमल, कुछ ऊंची, घोर, ज्वरयुक्त, चिकनी, और बडी बडी फुनसियां जिनसें शरीरमें पीडा, मोह, विकलता और संताप हो तो मेदोगत. जो छोटी छोटी शरीरके वर्ण समान, रूखी, चिपटी, कुछ ऊंची फुनसियां होकर भ्रम, मोह, पीडा, विकलता, मर्मस्थानपर छेदनेकीसी पीडा और हाडोंमें भौंरा काटनेसदृश वेदना हो तो अस्थि तथा मज्जागत. और जो पकनेके समान चिकनी, बुलबुलित फुनसियां होकर पीडा, आलस्य, विकलता, मोह, दाह और उन्माद हो तो शुक्रगत मसूरिका जानना चाहिये.

मसूरिका साध्यासाध्यलक्षण– रक्त, पित्त, कफ और कफपित्तजा तथा रक्तगत मसूरिका साध्य. वातजा वातपित्तजा और वात-कफजाको कष्टसाध्य. तथा त्रिदोषजा मेद अस्थि, मज्जा और शुक्रगता मसूरिकाको अ-

साध्य जानो. जो मसूरिकावाले रोगीको कास, हिचकी, मोह, तीव्रज्वर, प्रलाप, विकलता, मूर्छा, तृषा, दाह और चक्र आके मुखसे रक्त गिरे, कंठमें घुर घुर शब्द हो, और श्वास वहुत चले तो असाध्य मसूरिका जानो.

मसूरिकाउपद्रव– मसूरिका निकलनेपर रोगीके पांव, जांघ, पुहुंचा और कांधोंपर शोथ आजावे तो यह उपद्रव दुश्चिकित्स्य दारुण है.

फिरंगवातरोगोत्पत्तिकारण– उपदंश रोगयुक्ता स्त्रीसे मैथुन करनेसे, उपदंशरोगीके मूत्रपर लघुशंका करनेसे, उपदंशरोगीके साथ भोजनादि संसर्गसे वात कुपित होकर फिरंगवातको उत्पन्न करता है. अथवा क्षीण पुरुष अत्यंत मैथुन करे तो त्रिदोष कुपित होकर आगन्तुकसंज्ञक फिरंगवातको उत्पन्न करते हैं.

फिरंगवातसामान्यलक्षण– १ जो शरीरमें चीटी काटनेके सदृश ददोरे आकर पीठ और जांघमें पीडा तथा शोथ हो तो जानो कि अभी फिरंगवात शरीरकी संधि और नशोंमें प्रवेश हुआ है. २ जो लिंगेन्द्रियपर थोडी फुनसियां और फटनेकेसे चिन्ह हों तो जानो कि फिरंगवात त्वचापरही है. ३ और जो ये सब लक्षण होकर बहुत कालतक रहे तो जानो कि अब फिरंगवात त्वचाके बाहर और भीतर दोनों ओर प्राप्त हो गई है.

फिरंगवात उपद्रव– शरीर क्षीणता, बलनाश, अग्निमाद्य, और मांस रुधिर नष्ट होकर हड्डीमात्र रह जावे तथा नाक गल जावे तो इन उपद्रवोंसे युक्त रोगीका बचना हरीहरही है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे स्नायुक-विस्फोटक-मसूरिका-फिरंगवातरोगाणांलक्षण निरूपणं नाम षट्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३६ ॥

॥ क्षुद्ररोगाः ॥

**अजगलिकादि क्षुद्राणां रोगाणां च यथाक्रमात् ।**
**तरङ्गे मुनिरामेऽस्मिन् निदानं लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थ– अब हम इस ३७ सेंतीसवें तरंगमें अजगलिका आदि रोगोंका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

१ अजगलिकालक्षण—कफ वात प्रकोपसे शरीरपर चिकनी, शरीरके वर्ण-सदृश, पीडा रहित, मूंग प्रमाणकी जो फुनसियां हों उन्हें अजगलिका जानो.

२ यवप्रक्षालक्षण— कफ-वात प्रकोपसे यवके समान, बडी, गठीली, फुनसियां मांसमें हो जाती हैं उन्हें यवप्रक्षा कहते हैं.

३ अंत्रालजीलक्षण— कफवात प्रकोपसे भारी, सीधी, ऊंची, मंडलाकार और पीवयुक्त फुनसियां हों सो अंत्रालजी कहाती है.

४ विवृतालक्षण— फटे हुए सिरवाली, विशेष दाहयुक्त, गूलरके पके फलसदृश, मंडलाकार फुनसि हों उन्हें विवृता जानो.

५ कच्छपिका लक्षण— कफ-वातके प्रकोपसें कछवेके समान ऊंची, पांच छः भयंकर गांठें होती हैं उन्हें कच्छपिका कहते हैं.

६ वल्मीकलक्षण— कुपथ्य करनेसे कंधे, बगल, हाथ, पांव और गलेमें बांवीके समान, ऊंची, पीडायुक्त, विसर्पकीसी गांठे उत्पन्न होकर बढें, नंतर उनमेंसें अनेक मुखद्वारा पीव वहे तो उसे वल्मीक जानो.

७ इंद्रवृद्धल०—कमलगटेके आकारकी फुनसी होती है उसे इंद्रवृद्ध कहते हैं.

८ गर्दभिकालक्षण— वात-पित्तके प्रकोपसे मंडलाकार, गोल, ऊंची, लाल और पीडायुक्त जो फुनसियां होतीं उन्हें गर्दभिका कहते हैं.

९ पाषाणगर्दभिकालक्षण— दाढीकी संधिमें शोथयुक्त, स्थिर, मंदपीडित और चिकनी फुनसियां हों उन्हें पाषाणगर्दभिका जानो.

१० पनसिकालक्षण— कानके बीचमें विशेष पीडायुक्त और स्थिर फुनसी वातकफसे होती हैं उन्हें पनसिका कहते हैं.

११ जालगर्दभलक्षण— पित्तप्रकोपसे जो शोथ प्रथम थोडा, पश्चात् फैलता हुआ, निष्पाक और दाह ज्वरकारक हो उसे जालगर्दभ जानो.

१२ इरवेल्लिकालक्षण— सन्निपात प्रकोपसे सिरमें गोल, विशेष पीडा, और ज्वरयुक्त फुनसी होती है उन्हें इरवेल्लिका जानो.

१३ कक्षालक्षण—पित्त प्रकोपसे बांह, कांख, कांधे और पसलियोंमें पीडा और फफोलेयुक्त, काला फोडा हो सो कक्षा (कांखबिलाई) कहता है.

१४ अग्निरोहणीलक्षण— त्रिदोषके कोपसे मांसको विदीर्ण करनेवाले

अन्तर्दाह, ज्वरकारक, प्रज्वलित अग्निके समान फफोले होते हैं उन्हें अ-ग्निरोहणी जानो. इसका रोगी ७ या १२ या १५ दिनमें मर जावेगा.

१५ चिप्पलक्षण—वात पित्त नखके समीपी मांसमें रहकर अपनी दाहसें नखको पका देते हैं उसे चिप्प कहते हैं.

१६ कुनखलक्षण— जो तीनों दोषोंकी अल्पतासें चिप्परोग होवे उसे कुनखरोग कहते हैं. इसमें नख नहीं रहने पाता.

१७ अनुशयीलक्षण— पांवके ऊपर या भीतर, पकनेवाला, अल्प शोथ-युक्त, रंगमें देहके समान जो फुनसी हो तो अनुशयी कहाती है.

१८ विदारिकालक्षण— त्रिदोषसे विदारी कंदके समान गोल, और लाल फुनसी कांख या कमरकी संधिमें होती सो विदारि कहाती हैं.

१९ शर्करालक्षण— कफ मेद, मांस और वात नशोंमें प्राप्त होकर १ गां-ठ उत्पन्न करते हैं जिसमेंसें फूटनेपर मधु, या घृत या वसा (चर्बी)के स-मान पीव वहता रहता है तब श्राव होनेसे पुनः वात कुपित होकर श-रीरके मांसको सुखाके छोटी छोटी रेतके कण सदृश फुनसियां उत्पन्न करता है उसे शर्करा कहते हैं.

२० शर्करार्बुदलक्षण— यदि शर्करासेही अनेक रंगोंका दुर्गंधित रक्त वहने लगे तो उसीको शर्करार्बुद कहते हैं.

२१ पाददारिकालक्षण— अधिक चलनेसे वायु कुपित होकर पांव रू-खेकर देती है तब पांवकी एडीमें पीडायुक्त दरारें पड जाती हैं उन्हें पाद-दारिका (ब्यबांई) कहते हैं.

२२ कदरलक्षण— पांव हाथमें कांटा या कंकरी चुभनेसें बेरके समान गांठ पड जाती है उसे कदर (चाई या टांकी) कहते हैं.

२३ अलसलक्षण— पांव भींगे रहनेसे या दुष्ट कीचड लगनेसे अंगु-लियोंकी संधिमें चर्म सडकर दाह और खुजाल आती है उसे अलस (ख-खात) कहते हैं.

२४ इन्द्रलुप्तलक्षण— रोमकूपमें रहनेवाला पित्त, वातके संयोगसें बढकर

बालोंको झडा देता है नंतर कफ, रक्तके संयोगसे रोमकूपोंको रोककर दूसरे रोम उत्पन्न नहीं होने देता इसे इन्द्रलुप्त (चांद) कहते हैं.

२५ अरुंषिकालक्षण— कफ, रक्त, और कृमिके कोपसे मस्तकपर अनेक मुखवाले व्रण होते हैं उन्हें अरुंषिका कहते हैं.

२६ पलितरोगलक्षण— शोक, क्रोध, और परिश्रमकी विशेषतासे शरीरमें उष्णता और पित्त बढकर तरुणावस्थामें केशोंको पका देते हैं उसे पलित कहते हैं.

२७ न्यच्छलक्षण— जो बडा या छोटा, काला, या धूसर पीडारहित मंडळ शरीरके किसीभी स्थानमें हो उसे न्यच्छ कहते हैं.

२८ माषलक्षण— वात प्रकोपसे शरीरपर बेदना रहित, उर्दके समान काला ऊंचा मासका अंकुर हो उसे माष (मसा) कहते हैं.

२९ तिलकालकलक्षण— जो पीडारहित, काले तिलके समान, चर्मके समान मंडल हो उसे तिलकालक (तिल) कहते हैं.

३० उग्रगंधालक्षण— जो कफरक्तके प्रकोपसे त्वचापर काला, चिकना, पीडारहित मंडल शरीरके साथही उत्पन्न हो उसे उग्रगंधा (लहसन) कहते हैं.

३१ लिंगवर्तीलक्षण— इन्द्रीके मर्दन तथा चोट लगनेसे विचरता हुआ वायु लिंगेन्द्रियके चर्मको उलटके सुपारीके नीचे एक लम्बी गड्डेसहित गांठको उत्पन्न करता है उसे लिंगवर्ती कहते हैं.

३२ अवपाटिकालक्षण—लघुछिद्र योनिवाली, रजस्वला धर्मरहित स्त्रीसे मैथुन करनेसे, हस्त मैथुनसे, लिंगेन्द्रियके बंद मुखको बलात्कारसे खोलनेसे, लिंगको दबाने या मसलनेसे और निकलते हुए वीर्यको रोकनेसे लिंगको मूचनेवाला चर्म बहुधा फट जाता है उसे अवपाटिका कहते हैं.

३३ निरुद्धप्रकाशलक्षण— वातप्रकोपसे लिंगका चर्म लिंगके माथे (अग्रभाग, सुपारी)पर चिपट जाता है तब वह मस्तक और मूत्रमार्ग दोनों बंद होकर मूत्रकी धारा धीरे धीरे पीडारहित गिरती है और लिंगका मस्तक खुलता नहीं उसे निरुद्धप्रकाश कहते हैं.

३४ मणिरोगलक्षण— निरुद्धप्रकाश होनेके पश्चात् पीडारहित महीन मूत्र-

धारा गिरे और मूत्र निकलनेका छिद्र चौडा हो जावे तो मणिरोग जानो.

३५ वृषणकच्छुलक्षण– जो पुरुष लिंग और अंडकोषको धोकर स्वच्छ नहीं रखता उसके कफ रक्तकोपसे अंडकोशका मैल पसीनेके योगसे फूलकर खाज होती और यही खाज कुछ कालमें फोडे होकर उनमेंसें पीव और पानी वहने लगता है उसे वृषणकच्छुरोग कहते हैं.

३६ निरुद्धगुदलक्षण– मलका वेग रोकनेसे गुदामें रहनेवाली वायु मल निकलनेका छिद्रको रोककर छोटा कर देती है तब मल बडी कठिनाईसे उतरता है उसे निरुद्धगुद कहते हैं.

३७ गुदभ्रंशलक्षण– रूखे तथा दुर्बल पुरुषके कांखने (खांसने, कूलने) और अतिसारसे गुदा बाहरको निकल जाती है उसे गुदभ्रंश (रेचन कालमें कांछ निकलना) कहते हैं.

३८ शूकरदंष्ट्रलक्षण– जो लाल किनारेवाला, त्वचाको पकानेवाला, दाह, कण्डु, तीव्र पीडा और काली शोथ हो उसे शूकरदंष्ट्ररोग कहते हैं.

इति नूत० निदानखंडे क्षुद्ररोगलक्षणनिरूपणं नाम सप्तत्रिंशस्तरंगः॥३७॥

## ॥ शिरोरोग-नेत्ररोग ॥

वसुवैश्वानरे भंगे कारणं च शिरोरुजां ।
तथा हि नेत्ररोगाणां कथ्यतेत्र यथाक्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थ– अबहम इस ३८ वें तरंगमें शिरोरोग और नेत्ररोगोंका निदान यथाक्रमसें लिखते हैं.

शिरोरोगोत्पतिकारण– १ वात, २ पित्त, ३ कफ, ४ सन्निपात, ५ रक्त, ६ क्षीणता, ७ कृमि, ८ सूर्यावर्त, ९ अनंतवात, १० शंखक, और ११ अर्द्धावभेद इन ग्यारह कारणोंसे ११ प्रकारका शिरोरोग होता है.

१ वातज शिरोरोगलक्षण–मनुष्यके मस्तकमें निष्कारणही अत्यंत पीडा होकर दिनको न्यून और रात्रिको अधिक होने लगे और शिरको बांधने या तपानेसे पीडा शांत होजाया करे तो वादीका शिरोरोग जानो.

२ पित्तज शिरोगलक्षण– मस्तक फूट जावे, अग्नि सदृश जलन पडे,

नेत्रोंमेंभी पीडा और नाकमें जलन पडकर रात्रिको शीत कारणसे पीडा कुछ शांत होजावे तो पित्तका शिरोरोग जानो.

३ कफज शिरोरोगलक्षण– मस्तक भीतर कफसे भरा हुआ, जड (भारी) ठंडा हो, नेत्र, नाशिका और मुखपर शोथ हो तो कफका शिरोरोग जानो.

४ सन्निपातजशिरोरोगलक्षण–जिसमें पूर्वोक्त तीनों दोषोंके लक्षण पाये जावें उसे त्रिदोषसे उत्पन्न हुई मस्तककी पीडा जानो.

५ रक्तजशिरोरोगलक्षण– पित्तज शिरोरोगके समस्त लक्षण होकर मस्तक हस्तस्पर्श मात्रभी सहन न करसके तो रक्तका शिरोरोग जानो.

६ क्षयजशिरोगलक्षण– मस्तकमें रक्त, वसा, कफ और वायुकी न्यूनता होनेसे छीकें आती और शिर तपकर अति वेदना होती है उसे क्षयजशिरोरोग जानो.

७ कृमिजशिरोरोगलक्षण– मस्तकमें सुई चुभानेके समान, या कीडे काटनेके समान पीडा और जलन होकर शिर फडके और नाशिका मार्गसे रक्तयुक्त पीवका विशेष वहाव हो तो कृमिका शिरोरोग जानो.

८ सूर्यावर्तशिरोरोगलक्षण– सूर्योदय होतेही मस्तकमें मंद मंद पीडा उत्पन्न होकर सूर्यके तेजोवृद्धिके साथ साथ नेत्र, भौंह और शिरकी पीडाभी मध्यान्ह कालतक बढती जावे और मध्यान्ह पश्चात् सूर्यके तेज सदृश क्रमशः न्यून होते होते सूर्यास्तको समस्त पीडा शांत होजावे तो सूर्यावर्त शिरोरोग जानो.

९ अनंतवातशिरोरोगलक्षण–वात, पित्त, कफ दूषित होकरके ग्रीवा, नेत्र भौंह और कनपट्टीमें अत्यंत पीडा करते, डाढका स्तम्भन कपोल (गाल) का फडकन संचाल, और नेत्ररोग उत्पन्न करके शिरमें अत्यंत वेदना उत्पन्न करते हैं उसे अनंतवातशिरोरोग कहते हैं.

१० शंखकशिरोरोग लक्षण– वात, पित्त, कफ दूषित होकर कनपट्टीमें तीव्र वेदना, दाह और लाल वर्ण युक्त शोथ उत्पन्न करके मस्तक और गलेको रोक देते हैं उसे शंखकशिरोरोग कहते हैं. इसका यत्न ३ भीतर करलो नतो हरीहरही है.

११ अर्द्धावभेदशिरोरोगलक्षण– रूखी वस्तुका विशेष सेवन, भोजन-पर भोजन, अतिमैथुन, मलमूत्रावरोध, श्रम, व्यायामकी विशेषता और पूर्वकी वायु सेवनसें केवल वायु या कफसहित वायु कुपित होकर बलिष्ट हो जाती और ललाटके आधे भागको ग्रहण करके उस भागकी ग्रीवा, भौंह, कनपटी, कान, नाक, और उस आधे ललाटमें शस्त्रसे काटने या चीरनेके समान तीव्र वेदना उत्पन्न करता है उसे अर्द्धावभेद (आधाशीशी, अधकपाली) शिरोरोग कहते हैं. यह रोग विशेष वृद्धिंगत होनेसे कान या नेत्रको नष्टकर डालता है.

१ नेत्ररोगोत्पत्तिकारण– धूपसे तपा हुआ पानीमें प्रवेश करे, दूरकी वस्तु अधिक देखा करे दिनको शयन करे, रात्रिको जगे, नेत्रमें पसीना, धूरि, या धूंआं प्रवेश होने वमन अधिक होने तथा वमन, आंसुं मलमूत्र अधोवायुके, वेग रोकने पतले अन्नके सेवन करने शोक तथा क्रोध करने मस्तकके कूटने, अति मद्यपान करने, ऋतु विरुद्ध आहार विहारके करने, क्लेशप्रद कार्योंके करने, अति मैथुन तथा अति रुदन करने और अत्यन्त महीन वस्तुओंको देखने इन कारणोंसे वातादि दोष कुपित होके नेत्रोंमे अनेक प्रकारके रोगोंको उत्पन्न करते हैं.

२ नेत्रमण्डलमान– नेत्र मंडल २॥ अढाइ अंगुल या अपने अंगुष्टके उदर प्रमाण होता है इसमें सारंगधरके मतसे ९४ में सुश्रुतके मतसे ७६ और अनेक आचार्य तथा चरकके मतसे ७८ अठहतर रोग होते हैं जिनकी संख्या निम्नलिखित क्रमानुसार जानो.

३ नेत्ररोग संख्या– १४ दृष्टिमें ४ नेत्रके काले भागमें ११ श्वेत भागमें २१ नेत्रमार्गमें २ नेत्र पक्ष्मोंमें ९ नेत्र संधिमें १७ समस्त नेत्रमात्रमें इस प्रकार ७८ नेत्ररोग हैं.

४ दृष्टिवर्णन– नेत्रमंडलकी काली पुतलीमें मसूरकी दाल सदृश एक प्रकाशित तारा है वह तारा पंचमहाभूतोंसे उत्पन्न तेजरूप है यह तारा नेत्रगोलकमें पलांडु (कांदा, प्याज)के छिलकेके तुल्य ४ पटल (झिली) उत्पन्न कर देता है जिससे सब नेत्र आच्छादित होते रहता है इस पटलके अंतर्गत

जल और रुधिरके आधारभूत जो देखनेकी शीतल शक्ती है उसे दृष्टि कहते है.

५ पटलवर्णन– दृष्टिका प्रथम पटल तेज और जलके आधार, दूसरा मांसके आधार, तीसरा तेज, जल, मांस, मेद और अग्निके आधार और चवथा केवल तेजाधार है.

६ प्रथमपटलादि गतदोष वर्णन– प्रथम पटलमें दोष प्राप्त होनेसे वस्तुका यथार्थ रूप नहीं दिखता, दूसरे पटलमें दोष प्राप्त होनेसे मक्खी मच्छरके समूह उडतेसे दिखाई देते, दूरकी वस्तु समीप और समीपकी दूर दिखाई पडती है दृष्टिभ्रमसे विव्हलित रहती यहांतककी सूईका छिद्रभी कठिनाईसे दिखता है. तीसरे पटलमें दोष प्राप्त होनेसे ऊपरकी वस्तु दिखती पर नीचेकी नहीं दिखती वस्तु समूहभी नहीं दिखता किन्तु सन्मुख वस्त्रकी औटसी हो आती है कान, नाक, नेत्र यथार्थ नहीं पर विचित्र डौलकेही दिखते हैं यदि इसी पटल ( ३ परदे )में विशेष दोष होजावे तो नीचेकी ऊपर और ऊपरकी वस्तु नीचे दृष्टि पडती है यदि नेत्र पार्श्व (वगल)मे दोष प्राप्त होजावे तो दाहनी और बांई ओरकी वस्तु नहीं दिखती यदि नेत्रोंके चहुं ओर दोष प्राप्त होजावे तो व्याकुलतासे नेत्रोंमें चकचोंधि आजाती है यदि दृष्टि मध्यगत दोष होतो बडी वस्तु छोटी दिखती है यदि समस्त दृष्टिगत दोष होतो दांहनी बांई ओरकी वस्तुएं एकको दो, दो-की तीन और अधिक हो तो असंख्यात दृष्ट पडती है, चतुर्थ पटलमें दोष प्राप्त होनेसे आंखकी पुतली नीले कांचके सदृश होकर विशेष दोषसे सूर्य, चंद्र, नक्षत्र, आकाश विजुली आदि निर्मल तेजोमय वस्तुओंकोभी भलीभांति नहीं देख सक्ति किन्तु यह सब भ्रमतेसेही दिखते हैं.

७ दृष्टिरोग– दृष्टिमें १ वातज लिंगनाश २ पित्तज लिंगनाश ३ कफज लिंगनाश ४ संनिपातज लिंगनाश ५ रक्तज लिंगनाश ६ परिम्लायि लिंगनाश ७ पित्तविदग्ध दृष्टि ८ कफविदग्ध दृष्टि ९ धूमदर्शी १० ह्रस्वजात्य ११ नकुलांध्य और १२ गंभीर दृष्टि ये बारा तथा दो आगन्तुक लिंगनाश जो कि एक निमित्तसे और दूसरा अनिमित्तसे होता है इसप्रकार चौदह रोग

८ षड्विधलिंगनाशलक्षण– सर्व वस्तु भ्रमित, मलीन टेढी और लाल दृष्ट पडे तो १ वातज लिंगनाश, सूर्य चंद्र नक्षत्र अग्नि इन्द्रधनुष विजली ये सब भ्रमतेहुए नीले दृष्टपडे तो २ पित्तज लिंगनाश, नेत्रोंमें जल भरारहकर सर्व वस्तुऐं श्वेत तथा चिकनीसी दृष्ट पडे तो ३ कफज लिंगनाश, जिसमें पूर्वोक्त तीनो दोषोंके लक्षण मिले तथा वस्तु आकार नानाप्रकारके छोटे बडे और तेजरूप दृष्ट पडे तो ४ सन्निपातज लिंगनाश, जिसे प्रत्येक पदार्थ लाल या श्वेत, या काले या हरे, या पीले दृष्ट पडे तो ५ रक्तज लिंगनाश और जिसे दशोंदिशा पीली, अनेक सूर्योंका उदय, जुगनुवोंसे तथा अग्निसे व्याप्त वृक्ष दृष्ट पडे तो ६ परिम्लायि[1] लिंगनाश जानो.

विशेषतः– वातसे गुलाबी, पित्तसे पीततायुक्त नील या शुद्ध नीलवर्ण, कफसे श्वेत रक्तसे लाल सन्निपातसे अद्भुत रंग और परिम्लायि सो लाल तथा धूसर वर्ण लिंगनाशरोग होनेसे दृष्ट पडता है ॥ इति षड्विध लिंगनाश (तिमिर) लक्षण.

९ लिंगनाशे नेत्रमंडललक्षणम्– १ वातज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर लाल, कठिन और चंचल, २ पित्तज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर, नीला या कांसेके समान तथा पीला, ३ कफज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर बडा, चिकना, शंख या कुंदपुष्प अथवा चंद्रसदृश श्वेत वर्णका, चंचल और श्वेत बिन्दुयुक्त, ४ सन्निपातज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर तीनों दोषोंके उपरोक्त लक्षणयुक्त तथा चित्रविचित्र रंगका, ५ रक्तज लिंगनाशमें नेत्रके भीतर लाल और ६ परिम्लायि लिंगनाशमें नेत्रके भीतर मोटे कांचके समान अरुण या नीला मंडल होता है. इति लिंगनाशे नेत्रमंडललक्षणम्.

१० पित्तविदग्धदृष्टिलक्षण– मिथ्या आहार विहारादिसे पित्त दूषित होकर नेत्रोंको पीतकर देता है जिससे सर्व वस्तु पीलीही पीली दृष्ट पडती है इसे पित्त विदग्ध दृष्टिरोग जानो. इस रोगमें प्रथम तथा दूसरे परदेमें पित्त रहता है और इस पित्तके तृतीय पटलमें प्राप्त होनेसे दिनको नहीं दिखता और रात्रिको चन्द्रमाकी शीतलतासे पित्तकी अल्पता होनेके का-

---

१ परिम्लायि–रक्त मूर्छित पित्तसे जो लिंगनाश होता है वह परिम्लायि कहाते हैं.

रण दिखने लगता है इसे दिवांध (दिनौंधी) रोग कहते हैं यहभी पित्त-विदग्ध दृष्टिरोगकाही एक विभेद है.

११ कफविदग्धदृष्टिलक्षण ८– दृष्टि कफदूषित होनेसे, मनुष्यको सब रूप श्वेतही श्वेत दिखते हैं इसे कफविदग्ध दृष्टिरोग जानो. और जब वही कफ तीसरे पटलमें प्राप्त होजाता है तब रात्रिको नहीं दिखता और दिनको सूर्य तेजसे कफ न्यून होनेके कारण दिखता है, इसे नक्तान्ध (रतौंधी) कहते है यह भी कफविदग्ध दृष्टिका एक विभेद है.

धूमदर्शीरोगलक्षण ९– शोकज्वर श्रम और शिरोरोगके कारण दृष्टि पीडित होकर सब पदार्थ धूमरूप दिखते हैं, इसे धूमदर्शीरोग कहते हैं.

ऱ्हस्वजात्यरोगलक्षण १०– दिनको बडा रूपभी अत्यन्त क्लेशसे छोटासा दिखे और रात्रिको यथार्थ दिखे तो, ऱ्हस्वजात्यरोग जानो.

नकुलान्ध्यरोगलक्षण ११– दोषोंसे दूषित दृष्टि होके नकुल (मुंगस) की दृष्टिसमान चमके तो और उस मनुष्यको दिनको चित्रविचित्र दिखे तो नकुलांध्यरोग जानो.

गंभीरदृष्टिलक्षण १२– वायु दूषित दृष्टि विरूप होकर अति पीडापूर्वक भीतरसे सिकुडती जावे उसे गंभीरदृष्टिरोग जानो.

आगन्तुकनिमित्तजलिंगनाशलक्षण– १३ जो मस्तकपीडासे तथा अभिष्पंदके लक्षणों करके निश्चय किया जावे उसे आगंतुकनिमित्तज० जानो.

आगंतुकअनिमित्तजलिंगनाशल०– १४ जिस मनुष्यकी देव, ऋषि, गंधर्व, बडे सर्प और सूर्य इनके देखनेसे दृष्टि दूषित होकर प्रत्यक्षतामें सुंदर तथा निर्मलभी रहे और उसे कुछ न दीखपडे तो आगंतुक अनिमित्त-जलिंगनाश जानो, यह १४ चौदह दृष्टिमें रोग होते हैं.

वाग्भट्टके मतसे लिंगनाशकालक्षण– लिंगनाशरोगको लोकमें, निजला तथा मोतियाविंदभी कहते है, यह मोतियाविंद कच्चा और पक्का ऐसे दो प्रकारका होता है.

कच्चामोतियाविंद १– कुछ कुछ धूंधरसा दिखे, नेत्रोंमें पीडा हो और सर्व लक्षण पक्के मोतियाविंदसे विरुद्ध दृष्ट पडे तो कच्चा मोतियाविंद जानो.

पक्कामोतियाबिंद २— पुतलीपे दही तथा मट्ठेसमान बूंद होकर उसे कुछभी न दिख पडे और नेत्रोंमें किसीप्रकारकी पीडा न हो तो पक्का मोतियाबिंद जानो. इतिदृष्टिरोगाः ॥

॥ अथश्यामभागरोगः ॥

नेत्रके श्याम भागमें १ सव्रणशुक्र २ अव्रणशुक्र ३ अक्षिपाकात्यय और ४ अजकाजात ये चार रोग होते हैं.

१ सव्रणशुक्रलक्षण— नेत्रके काले भागपें सुईसे किये हुए छिद्रसमान गहरी फूली पडकर जिससे उष्ण अश्रुपात होते रहें उसे सव्रणशुक्र कहते हैं.

यदि वह फूली नेत्रकी पुतलीसे दूर गांठ, तथा पीडा और बहुश्रावरहित हो तो साध्य इससे व्यतिरिक्त हो तो असाध्य जानना चाहिये.

२ अव्रणशुक्रलक्षण— नेत्र दुखनेसे काले भागमें फूली उत्पन्न होके चूंसनेके समान पीडायुक्त तथा शंख, चंद्र, कुन्दपुष्प अथवा मेघके समान हो तो उसे अव्रणशुक्र जानो, यद्यपि अव्रणशुक्र साध्य है परन्तु जो फूली दूसरे पटलादिमें प्राप्त होकर मोटी, बडी और बहुतकालिक हो तो कष्टसाध्य जानो.

और जो फूलीके बीचमें छिद्रसा होकर चहुंओरसे मांस घिर आवे तथा संचारी महीन नसगत, दृष्टिनाशक, द्वितीय पटलके किनारेपर लाल और बहुत दिनोंकी हो तथा नेत्रसे उष्ण अश्रुपात हो नेत्रमें मूंगकेसमान फुनसी हो और तीतरके पंखके समान वर्ण और मूंगके आकारवाली फूली हो तो अव्रणशुक्र असाध्य जानो.

३ अक्षिपाकात्ययरोगलक्षण— नेत्रके काले भागपर चहुंओरसे श्वेतवर्ण होजावे उसे अक्षिपाकात्ययरोग कहते हैं, यह त्रिदोषज हो तो असाध्य अन्यथा कष्टसाध्य जानो.

४ अजकाजातलक्षण— बकरीकी मेंगनीके समान, पीडायुक्त, लाल, फूली होकर काले भागको ढाककर बढे और उसमेंसें लाल तथा चिकने आंसु वहते रहे तो अजकाजातरोग जानो. इति श्यामभागरोग ४

अथ श्वेतभागरोगाः— नेत्रके श्वेत भागमें १ प्रस्तार्यर्म २ शुक्लार्म ३ रक्तार्म ४ अधिमांसार्म ५ स्नाय्वर्म ६ शुक्तिका ७ अर्जुन ८ पिष्टक ९ शि-

शजाल १० शिरापिडिका और ११ बलासग्रथित ये ग्यारहरोग होते हैं.

१ प्रस्तार्यर्मलक्षण– नेत्रके श्वेतभागमें, पतला, विस्तृत, काला, या लाल मंडल हो उसे प्रस्तार्यर्मरोग जानो.

२ शुक्लार्मल०– नेत्रके श्वेतभागमें श्वेत और कोमल मण्डल होकर बहुत दिनोंमें बढे उसे शुक्लार्मरोग जानो.

३ रक्तार्मलक्षण– नेत्रके श्वेतभागमें मांस संचयसें लाल कमल सदृश तथा कोमल मंडल हो उसे रक्तार्म कहते हैं.

४ अधिमांसार्मलक्षण– नेत्रके श्वेतभागमें विस्तृत, कोमल, मोटा, लालतामिश्रित श्याम (लाखी) मण्डल हो तो अधिमांसार्मरोग जानो.

५ स्नाय्वर्मलक्षण– नेत्रके श्वेतभागमें स्थिर, विस्तृत, मांसयुक्त और सूका मंडल हो उसे स्नाय्वर्मरोग जानो.

६ शुक्तिकालक्षण– नेत्रके श्वेतभागमें काले और सीपके आकारमांस समान बिन्दु हो तो शुक्तिकारोग जानो.

७ अर्ज्जुनरोगलक्षण– नेत्रके श्वेतभागमें शशेके रक्तसदृश एक बिंदु हो उसे अर्ज्जुनरोग जानो.

८ पिष्टकल०– वातकफके कोपसें, नेत्रके श्वेतभागमें आटेके समान मांस ऊंचा होकर मैले दर्पणसदृश दृष्ट पडे उसे पिष्टकरोग जानो.

९ शिराजाललक्षण– नेत्रके श्वेतभागमें कठोर नसोंसें बना हुआ विस्तृल लाल जाला (फन्दा)सा हो उसे शिराजालरोग जानो.

१० शिरापिडिकारोगल०– नेत्रके श्वेतभागमें श्याम मंडलके समीप श्वेत नसोंसें आछादित जो फुनसियां हो उसे शिरापिडिकारोग जानो.

११ बलासग्रथितरोगल०– नेत्रके श्वेतभागमें कांसेके पात्र वर्ण सदृश, पानीके बूंदकी आकार और कठोर चिन्ह हो उसे बलासग्रथितरोग जानो.

इति श्वेतभागरोगाः ११

अथवर्त्मस्थानरोग– नेत्रमार्गमें १ उत्संगिनी पिडिका २ कुंभिका ३ पोथकी ४ वर्त्मशर्करा ५ अर्शोवर्त्म ६ शुष्कार्श ७ अंजना ८ बहुलवर्त्म ९ वर्त्मबंधक १० क्लीष्टवर्त्म ११ वर्त्मकर्दम १२ श्यामवर्त्म १३

१४ अक्लिन्नवर्त्म १५ वातहर्षवर्त्म १६ वर्त्मार्बुद १७ निमेष १८ शोणितार्श १९ लगण्य २० विसवर्त्म और २१ कुंचन ये इक्कीस रोग होते हैं.

१ उत्संगिनीपिडिकालक्षण– पलकके भीतर मुखवाली, लाल, छोटी छोटी फुनसियोंके मध्य जो खाजयुक्त एक बडी फुनसी बाहरको ऊंचीसी दृष्टपडे उसे उत्संगिनीपिडिका जानो.

२ कुंभिकाल०– पलकके किनारेपर कुम्हडेके बीजेके समान श्वेत और प्रवाहिनी फुनसी हो उसे कुंभिका जानो. ये दोनो त्रिदोषसे होती हैं.

३ पोथिकील०–पलकमें लाल शरसोंके बीजसमान, भारी, वहनेवाली खाजयुक्त और पीडाकारिणी फुनसियां हों उन्हे पोथिकी जानो.

४ वर्त्मशर्कराल०– पलमें कठिन तथा दूसरी छोटी फुनसियांयुक्त जो बडी फुनसी हो उसे वर्त्मशर्करा जानो.

५ अर्शवर्त्मलक्षण– ककडीके बीजसमान, नुकीली, चिकनी, किंचित् पीडायुक्त फुनसियां हों उन्हें अर्शवर्त्म जानो.

६ शुष्कार्शलक्षण– पलकके भीतर, लंबी, अंकूरवाली, कर्कश, कठीन, दारुण दुःखदायिनी फुनसी हो उसे शुष्कार्शरोग जानो.

७ अंजनालक्षण– पलकमें, सूई चुभानेके समान अल्प पीडायुक्त, लाल, कोमल और दाहदात्री जो फुनसी हो उसे अंजना जानो.

८ बहुलवर्त्मलक्षण– पलकमें चहुं ओरसे चर्मके रंगकी स्थिर फुनसियोंसे व्याप्त होजावे उसे बहुवर्त्मरोग जानो.

९ वर्त्मबंधरोगलक्षण– पलकमें खाज तथा अल्प वेदनायुक्त शोथ होनेसे नेत्रोंको पूर्ण रूपसे न ढकसके उसे वर्त्मबंधरोग जानो.

१० क्लिष्टवर्त्मलक्षण– पलकमें अकस्मात्, किंचित् वेदना ललाई और कोमलता होजावे तो उसे क्लिष्टवर्त्मरोग जानो.

११ वर्त्मकर्दमलक्षण– क्लिष्टवर्त्मरोगकोही, पित्तयुक्त रक्त दूषित करके नेत्रों कीचड (गीड) युक्तही किये रहे उसे वर्त्मकर्दम जानो.

१२ श्यामवर्त्मलक्षण– पलक, बाहर भीतरसे काले और वेदनायुक्त सूजे रहे उसे श्यामवर्त्मरोग कहते हैं.

१३ ....न्नवर्त्मलक्षण– पलक, बाहर पीडारहीत और शोथयुक्त होकर भीतर अधिक कीचडयुक्त रहे उसे प्रक्लीन्नवर्त्मरोग जानो.

१४ अक्लिन्नवर्त्मलक्षण– जिसकी पलक निष्पाक, निष्पीडित दशामें भी धोनेसे या धोनेपरभी वारवार चिपक जावे उसे अक्लीन्नवर्त्मरोग जानो.

१५ वातहतवर्त्मलक्षण– जिसकी पलककी संधि ढीली होनेसे पलक भलीभांति नेत्रको खोलने और मूंदनेमें असमर्थ होकर ज्योंकि त्यों रह जावे उसे वातहतवर्त्म जानो.

१६ वर्त्मार्बुदलक्षण– पलकके भीतर, पीडारहित, टेढी, मोटी, लाल एक गठान होती है उसे वर्त्मार्बुदरोग कहते हैं.

१७ निमेषरोगलक्षण– पलकको खोलने तथा मूंचनेवाली नशनिवासी वायु पलकमें प्राप्त होकर उनको वारंवार चलाते रहता है, इसे निमेषरोग जानो.

१८ शोणितार्शलक्षण– पलकके अंतमें मांसका कोमल, लाल अंकूर बढकर, काटनेपरभी बढ जाता है उसे शोणितार्श जानो.

१९ लगणलक्षण– पलकमें छोटे बेरके समान पाकरहित, कठोर, निष्पीडित, कंडूयुक्त जो चिकनी गठान हो उसे लगणरोग जानो.

२० विसवर्त्मलक्षण– त्रिदोषकोपसे पलकके ऊपर शोथ उत्पन्न होकर उस पलकके कमलनाल सदृश अनेक छिद्र होजाते हैं जिनसे सदैव पानी वहा करता है उसे विसवर्त्म जानो.

२१ कुंचनल०– त्रिदोष पलकको संकोचित करके, मनुष्यको देखनेसे असमर्थ कर देते हैं उसे कुंचनरोग जानो. इति वर्त्मरोगः २१

पक्ष्मरोग– नेत्रके पक्ष्म (पांखों )में १ पक्ष्मकोप और २ पक्ष्मशात ये दो रोग होते हैं.

१ पक्ष्मकोपलक्षण– वात कोपसे, पलकके रोम नेत्रोंमें घुसकर वारंवार घिसनेसे श्वेत या काले भागमें शोथ होकर प्रायः रोम झट जाया करते हैं. इसे पक्ष्मकोप कहते हैं.

२ पक्ष्मशातल०– पित्तकोपसे पलकके रोम झडकर, खुजाल और दाह उत्पन्न हो उसे पक्ष्मशातरोग कहते हैं. इति पक्ष्मरोगः २

सन्धिरोग– नेत्रकी संधिमें १ पूयालसक २ उपनाह ३ पैत्तिकश्राव ४ कफश्राव ५ सन्निपातश्राव ६ रक्तश्राव ७ पर्वणी ८ अलजी और ९ जन्तुग्रंथी ये नव रोग होते हैं.

१ पूयालसकलक्षण– नेत्रकी पुतलीकी संधिमें, शोथ होकर पके, और टोंचने सदृश पीडा होकर दुर्गंधित पीव निकले उसे पूयालसकरोग जानो.

२ उपनाहलक्षण– नेत्रकी संधिमें क्वचित् पकनेवाली, खाजयुक्त, पीडारहित और बडी गांठ हो उसे उपनाहरोग जानो.

३ पित्तश्रावलक्षण– आंसु मार्गोंसे नेत्रोंकी संधिमें वातादि दोष प्राप्त होनेसे अपने लक्षणोंयुक्त नेत्रश्राव उत्पन्न करते हैं इसके १ पित्तश्राव, कफश्राव, रक्तश्राव, और सन्निपातश्राव ये चार भेद हैं जिसमें नेत्रकी संधिसे, हलदीसमान पीला, उष्ण या केवल जलसदृश झिरता है उसे पित्तश्राव जानो.

४ कफश्रावल०– जो श्वेत, गाढा, चिकना वहता रहे सो कफश्राव जानो.

५ रक्तश्रावल०– जो बहुतसा उष्ण रक्त वहता रहे सो रक्तश्राव जानो.

६ सन्निपातश्रावलक्षण– संधि पककर अति दुर्गंधित पीव वहे उसे सन्निपातश्राव जानो.

७ पर्वणीलक्षण– जो नेत्रसंधिमें लाल, दाह और पाकयुक्त पतली तथा गोल सूजन हो उसे पर्वणीरोग जानो.

८ अलजीलक्षण– यदि पर्वणी सपेद और काले भागके मध्य (सन्धि) में हो तो अलजीरोग जानो.

९ जन्तुग्रंथीलक्षण– पलक तथा पक्ष्मके मध्य (संधि)में कीडे उत्पन्न होकर खुजाल चलाते हैं तथा वे फिरते हुए नेत्रोंको बिगाड देते हैं इसे जंतुग्रंथीरोग जानो. इति संधिरोगाः ९

समस्तनेत्ररोग– सब नेत्रमें १ वाताभिष्पंद, २ पित्ताभिष्पंद, ३ कफाभिष्पंद, ४ रक्ताभिष्पंद, ५ वाताधिमन्थ, ६ पित्ताधिमन्थ, ७ कफाधिमन्थ, ८ रक्ताधिमन्थ, ९ सशोथपाक, १० अशोथपाक, ११ हताधिमन्थ, १२ वातपर्याय, १३ शुष्काक्षिपाक, १४ अन्यतोवात, १५ अम्लाध्युषित, १६ शिरोत्पात और १७ शिरोहर्ष ये सतरह रोग होते हैं.

१ वाताभि¹ष्पंदल०— नेत्रोंमें सूई टोंचनेसमान पीडा, जडता, कर्कराहट, रूखापन, कीचड और ठंडे आंसुओंका वहाव होकर रोमांच हो और शिर तप्त हो तो वाताभिष्पन्द (वादीसे नेत्र दुखने आये) जानो.

२ पित्ताभिष्पंदल०— नेत्रोंमें पककर दाह, ठंढे पदार्थोंकी इच्छा, धूंवे निकलने समान पीडा और उष्ण आंसुओंका विशेष वहाव होकर नेत्र पीले हों तो पित्ताभिष्पंद (पित्तसे नेत्रोंका दुखना) जानो.

३ कफाभिष्पंदल०— उष्ण पदार्थोंपर प्रीति, नेत्रोंमें भारीपन, शोथ, कंडू चिपकना ठंढा होकर चिकना कीचड आवे तो कफाभिष्पंद जानो.

४ रक्ताभिष्पंदल०— लाल नेत्र होकर लाल आंसु वहे और नेत्रमंडल (गार) पर अति लाल रेखा होके पित्ताभिष्पंदके समस्त लक्षण हों तो रक्ताभिष्पंद जानो.

५-६-७-८ वाताद्यधिमन्थ— अभिष्पंदरोग होनेपर उसका यथार्थ यत्न न होकर कुपथ्य हो तो वाताधिमन्थ, पित्ताधिमंथ, कफाधिमंथ और रक्ताधिमंथ होते हैं इन चारोंके लक्षण उक्त चारों अभिष्पंदोंके समानही जानो. ५-६-७-८.

विशेषतः— इस रोगपे पूर्ण यत्न न हो तो ५ वाताधिमन्थ ६ दिनमें, ६ पित्ताधिमन्थ तत्काल ७ कफाधिमन्थ ७ दिनमें और ८ रक्ताधिमन्थ ५ दिनमें दृष्टिको नाश कर देते हैं.

९ सशोथपाकलक्षण— नेत्रमें आंसु, खाज, शोथ, ललाई होकर नेत्र १ लरके पक्कफल सदृश होजावे तो सशोथपाक जानो.

१० अशोथपाकलक्षण— नेत्रोपर शोथ नहो, खुजाल आवे, गुलरके पके फलसमान होकर लाल होजावे उसे अशोथपाक जानो.

११ हताधिमन्थलक्षण— जिसके नेत्रोंसे कुछ दिखाई नदे तीव्र वेदना हो और कमल सूक जावे तो हताधिमंथरोग जानो.

१२ वातपर्यायलक्षण— किसी समयमें भौंमें किसी समय नेत्रोंमें वायु प्राप्त होकर तीव्र वेदना करे तो वातपर्यायरोग जानो.

१३ शुष्काक्षिपाकलक्षण— नेत्र मिचे रहे, पलककठिन, रूखी, और ज-

---

१ अभिष्पंदको लोकमें आंखे दुखनी आई कहते हैं.

लती रहे स्वच्छ न दिखाई देवे और निद्रा खुलनेपर तत्क्षण नेत्र न खोले जावे उसे शुष्काक्षिपाक जानो.

१४ अन्यतोपाकलक्षण– दाढी, कान, भौं और आंखोंमें वातकारणसे विशेष पीडा हो उसे अन्यतोपाक जानो.

१५ अम्लाध्युषितल०– खटाईके विशेष सेवनसे नेत्रोंका मध्यभाग और आसपास लाल होकर नेत्र पक जाते हैं, उनमें दाह, शोथ और आंसुओं-का वहाव हो तो अम्लाध्युषित जानो. इसे लोकमें सबलवातभी कहते हैं.

१६ शिरोत्पातलक्षण– पीडारहित या पीडासहित नेत्रोंकी नसे लाल होकर वारंवार रंग बदलती रहे उसे शिरोत्पातरोग जानो.

१७ शिरोहर्षलक्षण– शिरोत्पातका उपाय न होनेसे नेत्रोंमेंसे ताम्रवर्ण आंसु वहते नेत्र रूप देखनेको असमर्थ होजाते हैं उसे शिरोहर्ष कहते हैं.

नेत्ररोगमुक्तलक्षण– जबतक नेत्रोंमें पीडा, ललाई, शोथ, खुजाल और वेदना बने रहे तबतक नेत्र, रोगयुक्तही जानो, परंतु पीडा, ललाई, शोथ, खुजाल वेदना रहित होकर नेत्र सुंदर होजावे और संपूर्ण सूक्ष्म वस्तुओंका स्वरूपभी यथार्थ देख सके तो जानो कि नेत्र रोगरहित होगये.

इति नेत्ररोगनिदानम्.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे शिरोरोग-नेत्ररोगलक्षणनिरूपणं नामाष्टत्रिंशस्तरंगः ॥ ३८ ॥

## ॥ कर्णरोग-नासारोग ॥

**निदानं कर्णरोगस्य तथा नासामयस्य च ।**
**नन्दरामे तरंगेऽस्मिन् कथ्यते हि यथाक्रमात् ॥ १ ॥**

भाषार्थः– कर्णरोग तथा नासारोगका इस ३९ उनचालीसवें तरंगमें यथाक्रमसें निदान कहते हैं.

कर्णरोगनिदानं– सुश्रुतमें १ कर्णशूल, २ कर्णनाद, ३ वाधिर्य, ४ कर्णक्ष्वेड, ५ कर्णश्राव, ६ कर्णकण्डू, ७ कर्णगूथ, ८ कर्णप्रतिनाह, ९ कृमिकर्ण, १० आगन्तुक कर्णव्रण, ११ दोषज कर्णव्रण, १२ कर्णपाक, १३ पूतिकर्ण,

१४ वातकर्णशोथ, १५ पित्तकर्णशोथ, १६ कफकर्णशोथ, १७ रक्तकर्णशोथ, १८ वातकर्णार्श, १९ पित्तकर्णार्श, २० कफकर्णार्श, २१ रक्तकर्णार्श, २२ वातकर्णार्बुद, २३ पित्तकर्णार्बुद, २४ कफकर्णार्बुद, २५ रक्तकर्णार्बुद, २६ मांसकर्णार्बुद, २७ मेदकर्णार्बुद और २८ शिराकर्णार्बुद ये अठावीस २८ कर्णरोग कहे हैं; परन्तु कर्णपालीमें १ परिपोटक, २ उत्पात, ३ उन्मंथ, ४ दुःखवर्द्धन और ५ परलेहिन ये पांच रोग विशेष होते हैं.

१ कर्णशूललक्षण– कानमें कुपित वायु प्रविष्ट होकर शूल उत्पन्न करती है इसे कर्णशूल जानो.

२ कर्णनादल०– कानमें वात प्राप्त होनेसे उस मनुष्यको भेरी, मृदंग और शंख आदि अनेक शब्द सुनाई पडते हैं इसे कर्णनादरोग जानो.

३ वाधिर्यल०– शब्द ज्ञाता छिद्रमें कफयुक्त या केवल वायुप्रवेश होनेसे उस मनुष्यको शब्द सुनाई नहीं पडता इसे वाधिर्यरोग कहते हैं, यह बहरेपनका रोग बाल या वृद्धावस्थामें होकर बहुत कालतक रहनेसे महा असाध्य हो जाता है यत्नसेभी अछा नहीं होता.

४ कर्णक्ष्वेडलक्षण– कानमें पित्त-कफयुक्त वायु प्राप्त होके बांसुरीकासा शब्द करता है उसे कर्णक्ष्वेडरोग कहते हैं.

कर्णश्रावलक्षण– मस्तकमें चोट लगने या कानोंमें जल भर जानेसे तथा कर्णविद्रधि पकनेसे कानमेंसे पीव वहा करती है इसे कर्णश्राव कहते हैं.

६ कर्णकण्डूलक्षण– कफयुक्त वायु कानमें प्राप्त होकर खाज उत्पन्न करती है उसे कर्णकण्डू कहते हैं.

७ कर्णगूथलक्षण– पित्तकी उष्णतासें कानमें कफ सूकनेसे मैल अधिक निकले उसे कर्णगूथ जानो.

८ कर्णप्रतिनाहलक्षण– जब वही कर्णगूथ तैलादिकके योगसे पतला होकर नाक मुखमें प्राप्त होजाता है उसे कर्णप्रतिनाह कहते हैं इसीसे अर्द्धावभेद (आधासीसीभी) उत्पन्न हो जाती है.

९ कृमिकर्णलक्षण– कानमें कीडे पडके या बुग, पतंग, कनखजूरा आदि प्रवेश होके जब फडफडाते हैं तब अत्यंत वेदना व्याकुलता और कुर-

कुराहट होती है और उनका फडफडाना या चलना बंद होनेपर पीडा न्यून हो जाती है उसे कृमिकर्णरोग जानो.

१० आगंतुककर्णव्रणलक्षण— कानमें किसी प्रकारकी चोट आदि लगनेसे व्रण होकर रक्त पीव आदि वहे उसे आगंतुककर्णव्रण जानो.

११ दोषजकर्णव्रणलक्षण— कानमें वातादि दोषोंसे व्रण उत्पन्न होकर उससे रक्त, पीव आदि वहे तो दोषजकर्णव्रण जानो.

१२ कर्णपाकलक्षण— पित्तकोपसे कान पककर उससे गाढी पीव वहे तो कर्णपाक जानो.

१३ पूतिकर्णलक्षण—कान पककर गंधावे या उससे दुर्गंधित पीव वहे तो पूतिकर्णरोग कहते है.

१४ वातकर्णशोथ, १५ पितकर्णशोथ, १६ कफकर्णशोथ और १७ रक्तकर्णशोथ इन चारोंके लक्षण सूजेहुए कानको देखकर पूर्वोक्त शोथरोगके समान जानो.

१८ वातकर्णार्श, १९ पित्तकर्णार्श, २० कफकर्णार्श और २१ रक्तकर्णार्श इन चारोंके लक्षण कानमें अर्श (मसा) देखकर पूर्वोक्त अर्शरोगके समान जानो.

२२ वातकर्णार्बुद, २३ पित्तकर्णार्बुद, २४ कफकर्णार्बुद, २५ रक्तकर्णार्बुद, २६ मांसकर्णार्बुद, २७ मेदकर्णार्बुद और २८ शिराकर्णार्बुद इन सातोंके लक्षण कानमें गठान देखके पूर्वोक्त अर्बुदरोग समान जानलो ये समस्त २८ रोग कानके भीतर होते हैं.

कर्णपाली (कानकी लोलकके) रोगोंको लिखते है.

१ परिपोटकरोगलक्षण— कानकी कोमल लोलकके छिद्रको शीघ्र बढानेसे वहां शोथ होकर चर्म छिल जाता है तब वहां पीडा और वहां कुछ श्यामतायुक्त लाल रंग होता है उसे परिपोटक जानो.

२ उत्पातकलक्षण—लोलकके छिद्रमें भारी आभूषणके पहनाने या किसी प्रकारके खिचावसे लोलकमें शोथ, दाह, पाक और पीडा उत्पन्न होती है उसे उत्पातक कहते हैं.

३ उन्मंथलक्षण— बलात्कार (जबरी)से कान बढानेसे कफयुक्त कुपित

वात वहां प्राप्त होकर शोथ और खाज उत्पन्न करती है उसे उन्मंथ कहते हैं.

४ दुःखवर्द्धनलक्षण– कानकी लोलक कर्णवेधके समय अनुचित छिदनेसे पककर पीडित हो उसे दुःखवर्द्धनरोग कहते हैं

५ परिलेहिनलक्षण– कफ रक्तके कोपसे लोलकपर सरसों समान फुनसियां होकर खाज, दाह और पाक उत्पन्न कर देती हैं, उसे परिलेहिन कहते हैं. इति कर्णरोगनिदानम्.

नासारोग– नाकमें १ पीनश, २ पूतिनश्य, ३ नासापाक, ४ पूयरक्त, ५ क्षवथु, ६ क्षवथुभ्रंश, ७ दीप्त, ८ प्रतिनाह, ९ प्रतिश्राव, १० नासाशोष, १५ पांच प्रतिश्याय २२ सप्त नासार्बुद २६ चार नासार्श ३० चार नासाशोथ और ३४ चार नासारक्तपित्त ये चौतिस रोग होते हैं.

१ पीनसरोगलक्षण– कफकोपसे नाकमें श्वास न आकर नाक रुक जावे और सूककर धूंवा निकलते रहे और जिसे सुगन्ध दुर्गंधका ज्ञान न हो उसे पीनसरोग कहते हैं.

२ पूतिनश्यलक्षण– कफ पित्त और रक्तके दग्ध होनेसे गले और तालूमें वायु बढकर मुख और नासिकासे दुर्गंध निकलने लगती है उसे पूतिनश्य कहते हैं.

३ नासापाकलक्षण– नासास्थित पित्त दूषित होकर नाकमें फुनसियां उत्पन्न करता है इसे नासापाकरोग कहते हैं.

४ पूयरक्तलक्षण– वातादि दोषके प्रकोप या ललाटके चोटसे नासिकाद्वारा रक्त मिश्रित पीव वहा करती है उसे पूयरक्त कहते हैं.

५ क्षवथुल०– कुपित पवन नाकके मर्मस्थानको दूषितकर कफयुक्त होकर विशेष छींके उत्पन्न करता है इसे क्षवथु (छींक) रोग कहते हैं.

और मिरची, राई, नास आदि तीक्ष्ण वस्तुओंके सूंघनेसे या सूर्यकी और देखनेसे या बत्ति, तृण आदि नाकमें चलानेसे जो छींकें आवें उसे आगंतुक क्षवथुरोग जानो यहभी क्षवथुकाही एक विभेद है.

६ क्षवथुभ्रंशलक्षण– पित्तसे नाकका कफ दग्ध होकर छींकें नहीं आवे तो क्षवथुभ्रंश जानो.

७ दीप्तरोगलक्षण– पित्तकोपसे नाकमें दाह होकर धूंवा निकला करे उसे दिप्तरोग कहते हैं.

८ प्रतिनाहलक्षण– वातयुक्त कफ नाकका छिद्र रोककर श्वास नहीं आने देता उसे प्रतिनाह जानो.

९ प्रतिश्रावल०–नाकसे गाढा, पीला, या श्वेत कफ गिरे उसे प्र० कहते हैं.

१० नासाशोषलक्षण– वात, पित्त-कफके कोपसे नाक सूककर श्वास न आवे तो नासाशोषरोग जानो.

अथ प्रतिश्यायरोगोत्पत्तिः– पीनसरोग होनेपर यत्न न किया जावे तो उसके बढावसे प्रतिश्यायरोग उत्पन्न होता है. यह १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज और ५ रक्तज होनेसे पांच प्रकारका होता है.

प्रतिश्यायपूर्वरूप– छींकें आवें, मस्तक भारी होजावे, रोमांच हो अंग जकड जावे इत्यादि उपद्रव हो तो जानो कि प्रतिश्याय उत्पन्न होगा.

१ वातजप्रतिश्यायलक्षण– नाक भारी रहकर थोडी थोडी वहे कंठ तालु और ओष्ट सूककर कनपट्टीमें सूई टोचने समान पीडा और स्वरभंग हो जावे तो वातजप्रतिश्याय जानो.

२ पित्तजप्रतिश्यायलक्षण– नाकसे तप्त और पीली कफ गिरकर स्वरभंग हो जावे वह रोगी कृश, पांडुवर्ण, संतापयुक्त और उष्णतासें पीडीत होकर उसके नाकसे धूंवासा निकले तो पित्तजप्रतिश्याय जानो.

३ कफजप्रतिश्यायलक्षण– नाकसे श्वेत, ठंढा और वहुतसा कफ गिरकर नेत्रोंपर सूजन आ जावे मस्तक भारी, कंठ तालु ओष्टोंमें खुजाल होकर मनुष्य श्वेतसा दृष्ट पडे तो कफजप्रतिश्याय जानो.

४ सन्निपातजप्रतिश्यायल०– प्रतिश्याय होहोकर पक्का या कच्चाही मिट मिट जावे तथा तीनों दोषोंके पूर्वोक्त लक्षण हों तो सन्निपातजप्रति० जानो.

५ रक्तजप्रतिश्यायलक्षण– नासिकासे रक्त गिरे नेत्र लाल होजावे श्वास और मुखसे दुर्गंधि आवे सुगंधि दुर्गंधि ज्ञानहीन होजावे छातीमें प्रहार करनेके सदृश पीडा हो तो रक्तजप्रश्यिायरोग जानो.

दुष्टप्रतिश्यायलक्षण– वारंवार नासिका वहे तथा सूक जावे और बंद

होजावे पुनः खुल जावे, श्वासमें दुर्गंध आवे गन्धज्ञान न हो तो दुष्ट प्रतिश्याय जानो यह कष्टसाध्य है.

असाध्यप्रतिश्यायलक्षण– आलस्यवस होकर प्रतिश्यायका यत्न न करे तो प्रतिश्याय मात्र असाध्य हो जाते हैं. विशेषतः– यदि प्रतिश्यायसे नाकमें श्वेत, चिकनी और छोटी कृमि उत्पन्न होजावे तो शिरोरोग, बाधिर्य, नेत्ररोग, शोथ, अग्निमांद्य और कास, ये रोगभी उत्पन्न होजाते हैं.

२२ सात नासार्बुद २६ चार नासार्श ३० चार नासाशोथ और ३४ चार नासारक्तपित्त इन उनैसोंके लक्षण इन इनके निदानोक्त जानो. इति नासारोग ३४ निदानम्.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे कर्णरोग-नासारोगलक्षणनिरूपणं नामैकोनचत्वारिंशस्तरङ्गः ॥ ३९ ॥

॥ मुखरोगोत्पत्ति ॥

क्रमान्मुखामयानां हि दृष्ट्वा ग्रंथाननेकशः ।
वियद्वेदे तरंगेऽत्र निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थ– वैद्यकके अनेक ग्रंथोंको देखके मुखरोगोंका निदान इस ४० चालीसवें तरंगमें यथाक्रमसें कहते हैं. १

अनूपदेशज जीवोंके मांस भक्षणसे दूध, दही, उडद आदिके अधिक सेवनसे त्रिदोष कुपित होकर मुखरोगको उत्पन्न करते हैं.

मुखके १ ओष्ठ २ मसूडे ३ दांत ४ जिव्हा ५ तालु ६ कंठ और कंठस्थानसे लेके समस्त मुख ये ७ सात अंग हैं इन सातों अंगोमें ८ ओष्टके १६ मसूडोंके ८ दन्तोंके ५ जिव्हाके ९ तालूके १८ कंठके ३ सर्व मुखमें ऐसे ६७ सडसट रोग होते हैं, ओष्टरोग १ वातज २ पित्तज ३ कफज ४ सन्निपातज ५ रक्तज ६ मांसज ७ मेदोज और क्षतज ऐसे ८ प्रकारके ओष्टरोग हैं.

१ वातजओष्टरोगलक्षण– ओष्ट कठिन, खरधरे, गाढे, काले चिरे हुए और तीव्र वेदनायुक्त हो तो वातसे हुआ ओष्टरोग जानो.

२ पित्तजओष्टरोगलक्षण– ओष्टोंमें फुनसियां होकर टपकने लगे और

उनमें चहुं ओरसे पीडा, दाह, पाक होकर पीली होजावे तो पित्तसे ओष्ठरोग हुआ जानो.

३ कफज ओष्ठरोगलक्षण– ओष्ठ देहके वर्ण सदृश होकर चूने लगे और उनमें पीडारहित फुनसियां होकर खुजाल आवे और उनमेंसे ठंढा तथा गाढा पीव निकले तो कफजन्य ओष्ठरोग जानो.

४ सन्निपातज ओष्ठरोगलक्षण– ओष्ठ कभी काले, कभी पीले और कभी श्वेत तथा फुनसियोंसे पूरित रहे तो सन्निपातज ओष्ठरोग जानो.

५ रक्तज ओष्ठरोगलक्षण– खजूरके फलसमान फुनसियां होकर लाल वर्ण और पीडायुक्त होजावे तो रक्तसे हुआ ओष्ठरोग जानो.

६ मांसज ओष्ठरोगल०–जो ओष्ठ भारी मांसके पिंडसमान ऊंचे होजावे और दोनो गलफरोमें कीडे उत्पन्न होकर निकले तो मांससे हुआ ओ० जानो.

७ मेदोज ओष्ठरोगलक्षण– ओष्ठ घी या मांड (चावलोंका उबला हुआ पानी)के समान दिखें खाजयुक्त भारी रहें स्वच्छ फटिक मणिसदृश जल भरे, और ओष्ठव्रण कठोर होकर अच्छे न हो, ये लक्षण हो तो मेदसे ओष्ठरोग हुआ जानो.

८ क्षतज ओष्ठरोगलक्षण– चोट आदिके लगनेसें ओष्ठ चिरने या फटनेसे उनमें गठान होकर खुजाल और आर्द्र (गीले) रहें तो चोट लगनेसे हुआ ओष्ठरोग जानो. इति ओष्ठरोगः ॥

॥ दन्तमूल (मसूडोंके) रोग ॥

मसूडोंमें १ शीतोद, २ दन्तपुप्पट, ३ दंतवेष्ट, ४ सौषिर, ५ महासौषिर, ६ परिदर, ७ उपकुश, ८ वैदर्भ, ९ खलिवर्द्धन, १० अधिमांस, ११ वातनाडीराह, १२ पित्तनाडीराह, १३ कफनाडीराह, १४ सन्निपातनाडीराह, १५ क्षतजनाडीराह और १६ दंतविद्रधि ये सोला रोग दांतोंके मसूडोंमें होते हैं.

१ शीतोदलक्षण– मसूडोंमें निष्कारणही दुर्गंधित काला रक्त निकलने लगे मसूडेको मल होकर सडने लगे और एकके लगनेसे दूसरा सडने लगे तो शीतोदरोग जानो.

२ दंतपुप्पटलक्षण– कफ-रक्तसे दो या तीन दांतोंमें बहुत सूजन हो· जावे उसे दंतपुप्पट जानो.

३ दंतवेष्टलक्षण– मसूडोंमेंसे रक्तयुक्त पीव निकलकर दांत हिलने लगे उसे दंतवेष्ट जानो.

४ सौषिरलक्षण– कफ रक्त विकारसे दांतोंकी जडोंमें वेदना सह शोथ होकर लारे गिरे तो सौषिररोग जानो.

५ महासौषिरलक्षण– त्रिदोषसे दांत मसूडोंको छोड देवे तालुमें छिद्र पड जावे उसे महासौषिर जानो.

६ परिदरलक्षण– पित्त रक्त या कफके कारणसे मसूडे विखर जावे पर रक्त न निकले उसे परिदर जानो.

७ उपकुशलक्षण– पित्त-रक्तसे मसूडोंमें दाह, पाक होकर दांत हलने लगे परस्पर दबानेसे रक्त गिरकर मसूडे पुनः फूल जावे, वेदना अल्प प· रंतु मुखसे दुर्गंध आने लगे तो उपकुश जानो.

८ वैदर्भलक्षण– मसूडोंमें किसी प्रकारकी चोट लगनेसे या दतून आ· दिकी रगडसे सूजकर दांत हलने लगे उसे वैदर्भरोग कहते हैं.

९ खलिवर्द्धनलक्षण– वात-कोपसे मसूडेमें दांत बढकर विशेष पीडा क· रता है उसे खलिवर्द्धन जानो.

१० अधिमांसलक्षण– कफसे नीचेकी दाढके अंतमें विशेष सूजन और पीडा होकर मुखसे लार गिरे तो अधिमांसरोग जानो.

११ वातनाडीराह १२ पित्तनाडीराह १३ कफनाडीराह १४ सन्निपात· नाडीराह और १५ क्षतजनाडीराह इन रोगोंमें मसूडोंमें नासूर पड जाते हैं इसलिये इनके लक्षण पूर्वोक्त नाडीव्रणके सदृश जानो.

१६ दंतविद्रधिलक्षण– मसूडोंसे पीवयुक्त रक्त वहकर कुछ सूजन, दाह और पीडा होवे उसे दन्तविद्रधि जानो. इति दंतमूलरोग.

दंतरोग– दांतोंमें १ दालन, २ कृमिदंत, ३ भंजन, ४ दंतहर्ष, ५ दंतश· र्करा, ६ कपालि, ७ श्यावदंत और ८ कराल ये आठ रोग होते हैं.

१ दालनल०–वादीसे दंतोंमें टूटनेके सदृश पीडा हो तो दालनरोग जानो.

२ कृमिदंतलक्षण– वातकोपसे दांतोंमें काले छिद्र पडकर हलने लगे शोथ होकर उनमेंसे रुधिर वहे और बिनकारणही पीडा हो तो कृमिदंतरोग जानो.

३ भंजनलक्षण– वातकफसे मुख टेढा होकर दांत टूट जावें उसे दंत-भंजनरोग जानो.

४ दंतहर्षलक्षण– वातकोपसे दांत, शीतल जल, खारी वस्तु, शीतल पवन, खटाई आदिका स्पर्श न सहसके उसे दंतहर्ष कहते हैं.

५ दंतशर्करालक्षण– वातपित्तके कारणसे दांतोंका मैल सूककर वालुके समान खरखराने लगे तो दंतशर्करारोग जानो.

६ कपालिकालक्षण–शर्करारोगमें मैलयुक्त दांत ठिकरे समान फूटने लगे तो कपालिका जानो.

७ श्यावदंतलक्षण– रक्तमिश्रित पित्तसे दांत जलकर पीले काले या नीले होजावे तो उसे श्यावदंतरोग कहते हैं.

८ करालक्षण– वातसे दांतोंमें धीरे धीरे भयंकर कुडोल ऊंचे नीचे कर दे तो करालरोग जानो यह असाध्य होता है विशेषतः ग्रंथांतरसे हनुमो-क्षरोगको लिखते हैं.

कुपितवात– दाढमें या दांतमें प्रवेश होकर पीडा करे और अर्दितरो-गकेभी लक्षण मिलें तो हनुमोक्षरोग जानो. इति दन्तरोग.

जिव्हारोग– जिव्हामें १ वातज जिव्हारोग, २ पित्तज जिव्हारोग, ३ कफज जिव्हारोग, ४ अलास और ५ उपजिव्हा ये पांच रोग होते हैं.

१ वातज जिव्हारोगलक्षण–जिव्हा फटकर सूज जावे हरी होकर कांटे पड जावे और स्वादका ज्ञान न रहे तो वातज जिव्हारोग जानो.

२ पित्तज जिव्हारोगलक्षण– जीभमें, दाह, कांटे होकर लाल वर्ण हो-जावे तो पित्तज जिव्हारोग जानो.

३ कफज जिव्हारोगलक्षण– जीभ भारी और मोटी होकर श्वेत कांटे पड जावे तो कफज जिव्हारोग जानो.

४ अलासलक्षण– जिव्हाके नीचे, विशेष शोथ और पाक होकर जीभ और दाढी अकड जावे इसे अलास जानो.

५ उपजिव्हालक्षण— जीभके अग्रभागपर शोथ होकर दूसरी जीभके-समान जान पडे और लार खाज, दाहयुक्त हो तो उपजिव्हारोग जानो.

इति जिव्हारोग.

तालुरोग— तालुमें १ गलसुंडी, २ तुंडकेशरी, ३ ध्रुव, ४ कच्छप, ५ ताल्वर्बुद, ६ मांससंघात, ७ तालुपुप्पुट, ८ तालुशोष और ९ तालुपाक ये नो रोग होते हैं.

१ गलसुंडील०— कफ रक्तके कोपसे तालुकीजडसे शोथ बढकर फूली हुई भातीकेसमान होजावे और तृषा, कास, श्वास उत्पन्न करे तो गलसुंडी जानो.

२ तुंडकेशरीलक्षण— कफ लोहिसे तालुकी जडसे उत्पन्न हुआ शोथ दाह, पीडा और पाकको उत्पन्न करता है उसे तुंडकेशरीरोग जानो.

३ ध्रुवल०— तालुमें लाल शोथ होकर ज्वर उत्पन्न करे उसे ध्रुवरोग जानो.

४ कच्छपरोगलक्षण— कफके कारणसे तालुमें कछुएके आकारका वे-नारहित शोथ हो उसे कच्छपरोग जानो.

५ ताल्वर्बुदल०— तालुमें कमलाकार बडा अंकूर होजावे उसे ता० जानो.

६ मांससंघातलक्षण— तालुमें पीडा रहित विकारी मांस बढे उसे मांस-संघातरोग जानो.

७ तालुपुप्पुटलक्षण— तालुमें पीडारहित बेरके समान शोथ हो आवे उसे तालुपुप्पुटरोग जानो.

८ तालुशोषल०— तालु सूककर फट जावे और श्वास चढे तो तालु० जानो.

९ तालुपाकलक्षण— गर्मीसे तालु विशेष पक जाता है उसे तालुपाक-रोग जानो. इति तालुरोग ९

कंठरोग— कंठमें १ वातजारोहिणी २ पित्तजारोहिणी ३ कफजारोहि-णी ४ सन्निपातजारोहिणी ५ रक्तजारोहिणी ६ कंठशाल्डक ७ अधिजिव्हा ८ वलय ९ बलास १० एकवृंद ११ वृंद १२ शतघ्नी १३ गिलायु १४ गल-विद्रधि १५ गलौघ १६ स्वरघ्न १७ मांसतान और विदारी ये अठारह रोग होते हैं.

१ वातजारोहिणीलक्षण— सर्व जिव्हामें विशेष पीडा होकर मांसांकुर निकल आवे इस कारणसे कंठ रुककर वातके समस्त उपद्रव हो तो वात-जारोहिणी जानो.

२ पित्तजारोहिणीलक्षण— जिसका गला पककर दाह और ज्वरयुक्त हो तो पित्तजारोहिणी जानो.

३ कफजारोहिणीलक्षण— जो कंठको रोककर गलेमें अचलांकुरयुक्त धीरे धीरे पकनेवाली फुंसी हो उसे कफजारोहिणी जानो.

४ सन्निपातजारोहिणीलक्षण— गलेके भीतरही भीतर पकनेवाली और उक्त तीनों दोषोंके लक्षणयुक्त ग्रंथी हो तो सन्निपातजारोहिणी जानो यह असाध्य होती है.

५ रक्तजारोहिणीलक्षण— जो गलेमें शीघ्रपाकी छोटे छोटे फोडे हों और पित्तजारोहिणीकेभी लक्षण दृष्ट पडे तो रक्तजारोहिणी जानो.

६ कण्ठशालूकल०— कफसे गलेमें जंगली बेरकी गुठली समान, खरखरी, अचल कांटेसी गडनेवाली गठान हो उसे कंठशालूकरोग जानो.

७ अधिजिव्हालक्षण— रक्तमिश्रित कफसे जिव्हापर जिव्हाकी अनीसमान सूजन उत्पन्न हो उसे अधिजिव्हा कहते हैं, यदि यह सूजन पक जावे तो अच्छा होना ईश्वराधीन है.

८ वलयल०—कंठमें रहनेवाला कफ गलेमें लंबी, चौडी, ऊंची, अन्न, जल जानेके मार्गको रोकनेवाली गठान उत्पन्न करता है उसे वलयरोग कहते हैं.

९ वलासरोगलक्षण— वर्द्धित कफ और वायु गलेमें श्वास तथा पीडायुक्त सूजन उत्पन्न करते हैं उसे वलास कहते हैं, यह मर्मस्थानको छेदन करनेवाला अति कठिन रोग होता है.

१० एकवृन्दलक्षण— कफ और रक्तके कोपसे गलेमें गोल ऊंचे किनारोंकी, दाह तथा खुजालयुक्त पकनेपरभी कठिन ऐसी एक सूजन उत्पन्न होती है इसे एकवृन्दरोग कहते हैं.

११ वृन्दरोगलक्षण— पित्त रक्त कोपसे गलेमें ऊंचा अति दाह तथा ज्वरयुक्त पीडारहित सूजन उत्पन्न हो उसे वृन्दरोग कहते हैं, यदि इसमें सूई चुभनेके समान पीडा हो तो वातज जानो.

१२ शतघ्नीरोगलक्षण— त्रिदोषसे गलेमें बत्तीके समान कंठ रोकनेवाली

मांसके अंकूरोंसे घिरी हुई कठिन, अनेक प्रकारकी पीडा देनेवाली जो सूजन हो उसे शतघ्नी कहते हैं. यह प्राण हारिणी होती है.

१३ गिलायुरोगलक्षण— कफ और रुधिरसे गलेमें आंवलेकी गुठली समान, अचल, अल्प पीडायुक्त एक गठान होती है जिससे गलेमें कुछ अटकासा जान पडता है ये लक्षण हो तो गिलायुरोग कहते हैं.

१४ गलविद्रधिल०— गलेमें त्रिदोषसे सब प्रकारकी पीडा करनेवाला शोथ हो उसे गलविद्रधि कहते हैं इसके सब लक्षण त्रिदोषविद्रधिके समान होते हैं.

१५ गलौघल०— कफ-रक्तसे गलेमें अन्न जल और श्वासकोभी रोकनेवाला तीव्र ज्वरयुक्त बडा शोथ (सूजन) हो उसे गलौघरोग कहते हैं.

१६ स्वरघ्नरोगलक्षण— गलेमें वायु (हवा)के निकलनेका मार्ग कफसे रुककर गला घरघराने लगे और श्वास लेनेमेंभी क्लेश हो उसे स्वरघ्नरोग जानो.

१७ मांसतानरोगल०— त्रिदोषसे सब गलेमें फैलनेवाला, अति कष्टकारक, लटकता हुआ शोथ होकर गलेको रोक लेता है उसे मांसतान कहते हैं.

१८ विदारीलक्षण— पित्तसे गलेके भीतर दाह, तीव्र वेदनायुक्त शोथ (सूजन) होकर दुर्गंधियुक्त मांसको गला गलाकर गिराता है जिससे रोगी किसी करवटपरही सोते रहता है उसे विदारी रोग कहते हैं. इति कण्ठरोग.

सर्वमुखरोग— सब मुखके भीतर १ वातजसर्वसर, २ पित्तजसर्वसर और ३ कफजसर्वसर ये तीन रोग होते हैं.

१ वातज सर्वसरलक्षण— मुखमें सूई टोंचनेकीसी पीडायुक्त छाले होजावे उसे वातज सर्वसर जानो.

२ पित्तज सर्वसरलक्षण— पीले, तथा लाल वर्णवाले दाहयुक्त छाले सब मुख भरमें होजावे तो पित्तज सर्वसररोग जानो.

३ कफज सर्वसरलक्षण— पीडारहित, खुजाल सहित चर्मके वर्णसमान वर्णवाले छालोंसे मुख भर जावे तो कफज सर्वसररोग जानो. इस प्रकार सब ६७ मुखरोग हैं.

मुखरोग असाध्यलक्षण— ओष्ठरोगोंमें १ मांसज, २ रक्तज और ३ त्रिदोषज, दन्तमूल रोगोंमें १ सन्निपात २ नाडीव्रण और ३ सौषिर, दन्त-

रोगोंमें १ श्यावदन्त २ दालन और ३ भंजन, जिव्हारोगोंमें १ अलास, तालुरोगोंमें १ अर्बुद, गलरोगोंमें १ स्वरघ्न २ बलय ३ वृन्द ४ वलास ५ विदारी ६ गलौघ ७ मांसतान ८ शतघ्नी और ९ रोहिणी ये रोग असाध्य हैं इनपे चिकित्सा करो तोभी प्रथम कहदो कि ये रोग अच्छे न होंगें. इति मुखरोगनिदानम्.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे मुखरोगलक्षणनिरूपणं नाम चत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४० ॥

॥ स्त्रीरोगनिदानम् ॥

अथात्र प्रदरादीनां स्त्रीरोगाणां यथाक्रमात् ।
विधुवेदे तरंगे वै निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस ४१ इकतालीसवें तरंगमें स्त्रियोंको प्रदर आदि रोगोंका निदान यथाक्रमसे कहते हैं.

प्रदररोगोत्पत्ति– भोजनपर भोजन, अति मैथुन, अति शोक, अति सवारी ( वाहनारोहण ) लंघन, उपवास, भार उठाना, दिनको सोना, इन कार्योंके विशेष करनेसे और गर्भपात तथा चोट लगनेसे स्त्रियोंके १ वातज २ पित्तज ३ कफज और ४ सन्निपातज ऐसे चार प्रकारका प्रदररोग होता है.

प्रदरसामान्यलक्षण– योनिसे बिनमासिक धर्महो नानाप्रकारका रुधिर (लोही) निकले और उसके निकलनेसे हडफूटन पीडा हो तो प्रदररोग जानो.

१ वातजप्रदरलक्षण– योनिसे रूखा, फेनयुक्त, मांसके धोवन सदृश, रक्त वहे तो उसे वातज प्रदररोग जानो.

२ पित्तजप्रदरलक्षण– योनिसे उष्ण, लाल, पीला, या नीला तथा काले वर्णका, शरीरमें दाह तथा पित्तजन्य व्याधिकारक अधिक लोहू वहे तो पित्तज प्रदर जानो.

३ कफजप्रदरलक्षण– योनिसे, आंवके, या चांवलोंके मांडके तथा कुदई तथा साटी चावलोंके धोवन सदृश, पांडु वर्णवाला, रुधिर वहे तो कफज प्रदर जानो.

४ सन्निपातप्रदरलक्षण– योनिसे, मधु, या घी, या मज्जा ( चर्बी )के स-

मान, दुर्गंधित, हरताल सदृश वर्णवाला, लोहू वहे तो सन्निपात प्रदर जानो यह असाध्य है. प्रदरके उपद्रव, प्रदररोग युक्ता स्त्रीको, दुर्बलता, थकवाय, मूर्छा, तृषा, दाह, प्रलाप, देहका वर्ण पीला, तंद्रा और वातरोग हों तो निश्चय करो कि अब प्रदरका अति वेग है.

प्रदर असाध्यलक्षण– योनिसे निरंतर रुधिर वहताही रहे और उक्त उपद्रव सहित हो तो असाध्य जानो. इसका अच्छा होना ईश्वराधीन है.

शुद्धार्तवलक्षण– योनिसे यथार्थ मासानुमास, चिकनाई, जलन और पीडा रहित न थोडा न बहुत, किंतु यथायोग्य लोहू वहता हुआ पांच दिनतक दृष्टि पडे तो शुद्धार्त (रोग रहित शुद्ध रज) जानो. तथा योनिसे शशा (खरगोस)के रक्त समान या लाखके रसके समान वर्णवाला, जो कि पानीसे धोयेपर कपडेसे निकल जावे, जिसका चिन्ह (दाग) कुछभी न रहे ऐसा, दाहरहित लोहू, प्रथम कथित नियत दिनोंतक वहे तो अति शुद्ध रज, विकाररहित जानो. इति प्रदररोग.

॥ सोमरोग ॥

सोमरोगोत्पत्तिकारण– अति मैथुन, अति शोक अति श्रम, अति रेचक सेवनसे गर (कृत्रिम विष)के संयोगसे सर्व शरीरका जल क्षुभित होकर योनिद्वारसे वहने लगता है जिससे स्त्री वारंवार अत्यंत मूतने लगती है इसे सोमरोग[1] कहते है.

सोमरोगलक्षण– योनिसे स्वच्छ, निर्मल, ठंढा, निर्गंध, पीडारहित और श्वेत मूत्र, वारंवार उतरे, जिससे वह स्त्री सर्वदा सुखहीन, दुर्बल, मस्तक शिथिल, मुख, तालुका सूकना, मूर्छा, जमुहाई, प्रलाप (बडबडाना) त्वचा रूखी तथा भक्ष, भोज्य और जलपानसे अतृप्ति, इन लक्षणोंयुक्त हो जाती है ये लक्षण दृष्ट पडे तो सोमरोग जानो. शरीरस्थ जलने शरीरको धारणकर रक्खा है, इसलिये उस जलकी सोम संज्ञा है, उसके क्षीण होनेसे स्त्रियोंके सोमरोग होता है.

---

१ सोमरोग मनुष्योंकेभी होजाता है जिसे रत्नावली ग्रंथमें बहु मूत्र तथा मूत्रातिसारभी माना है.

## ॥ स्त्रीयोनिरोग ॥

मिथ्या आहार विहार करनेसे वात, पित्त, कफ कुपित होकर स्त्रियोंकी योनिमें २० प्रकारके रोग उत्पन्न करते हैं उन रोगोंयुक्त होनेसे वह योनि १ उदावृत्ता, २ वंध्या, ३ विप्लुता, ४ परिप्लुता, ५ वातला, ६ लोहितक्षरा, ७ दुःप्रजावनी, ८ वामिनी, ९ पुत्रघ्नी, १० पित्तला, ११ अत्यानंदा, १२ कर्णिनी, १३ चरणा, १४ अतिचरणा, १५ श्लेष्मला, १६ अस्तनी, १७ षंडी, १८ अंडिनी, १९ विवृत्ता और २० शूचीवक्त्रा कहाती है.

१ उदावृत्तायोनिलक्षण— जिस योनिसे रजोधर्मके समय अति कष्टसे झाग (फेन) युक्त रुधिर निकले उसे उदावृत्तायोनि जानो.

२ वंध्यायोनिलक्षण— जिस योनिसे महिनेके महिने रुधिर, न वहे (रजोधर्म न हो) तो उसे वंध्यायोनि जानो. वंध्यायोनिवाली स्त्रीके बालक न होनेसे वह स्त्रीभी वंध्या (वांझ) कहाती है.

३ विप्लुतायोनिलक्षण— जिस योनिमें नित्यही पीडा होती रहे उसे विप्लुतायोनि जानो.

४ परिप्लुतायोनिलक्षण— जिस योनिमें मासिक रज (लोहू) वहते समय अत्यंत पीडा हो उसे परिप्लुतायोनि जानो.

५ वातलायोनिलक्षण— जो योनि कठोर हो और उसमें शूल चले तो वातलायोनि जानो. ये पाचों योनिरोग, दूषित वादिसे होते हैं.

६ लोहितक्षरायोनिलक्षण— जिस योनिसे दाहयुक्त रुधिर निकलते रहे उसे लोहितक्षरायोनि जानो.

७ दुःप्रजाविनीयोनिलक्षण— जो योनि झरती रहे और मैथुन समय अति घर्षण होनेसे बाहरको निकल आवे सो दुःप्रजाविनीयोनि कहाती है. इस योनिवाली स्त्रीको संतान होनेमें बडा कष्ट होता है इसे प्रस्रंसिनीयोनिभी कहते हैं.

८ वामिनीयोनिलक्षण— जिस योनिसे पवन और रुधिरयुक्त वीर्य निकले उसे वामिनीयोनि जानो.

९ पुत्रघ्नीयोनिलक्षण— जो योनि रक्तक्षयसे रहे रहे गर्भको गिरा देती है सो पुत्रघ्नीयोनी कहाती है.

१० पित्तलायोनिलक्षण– जो योनि दाहयुक्त होकर पक जावे और शरीरमें ज्वर उत्पन्न कर दे उसे पित्तलायोनि कहते हैं. ये पांचों योनिरोग दूषित पित्तसे होते हैं.

११ अत्यानंदायोनिलक्षण– जो योनि अत्यंत मैथुनसेभी संतुष्ट न हो उसे अत्यानंदा जानो.

१२ कर्णिनीयोनिलक्षण– जिस योनिमें कमल (योनिफूल)के चहुं-और कर्णफूलके समान मांसकी ककनी (किनारी)सी बन जावे उसे क-र्णिनीयोनि जानो.

१३ चरणायोनिलक्षण– जो योनि मैथुन करनेमें मनुष्यसे पहिलेही स्खलित हो जाती है सो चरणायोनि कहाती है.

१४ अतिचरणायोनिलक्षण– जो योनि अत्यंत मैथुन करनेपरभी म-नुष्यसे पीछे खलास (स्खलित) हो सो अतिचरणायोनि कहाती है.

१५ श्लेष्मलायोनिलक्षण– जो योनि अति चिकनी, खुजालयुक्त, और ठंढी रहे उसे श्लेष्मलायोनि जानो. ये पांचों योनिरोग दूषित कफसे होते हैं.

१६ अस्तनीयोनिलक्षण– जो स्त्री रजस्वला न हो और स्तन छोटे छोटे होवे उसे अस्तनीयोनि जानो. बहुतसी स्त्रियोंको मासिक धर्म होकरभी अस्तनीयोनि रोगसे छोटे ही स्तन रह जाते हैं.

१७ षंडीयोनिलक्षण– जो योनि मैथुन करनेमें खरखरी मालुम हो उसे षंडीयोनि जानो.

१८ अंडिनीयोनिलक्षण– छोटी अवस्थावाली स्त्रीकी योनिमें बडे लिं-गवाले पुरुषके संग होनेसे जो योनि अंडके समान लटक आवे उसे अं-डनीयोनि जानो.

१९ विवृत्तायोनिलक्षण– जो योनि बडी हो और फैली रहे उसे विवृ-त्ता या महतीयोनि जानो.

२० शूचीवक्त्रायोनिलक्षण– जिस योनिका बारीक छेद हो उसे शू-चीवक्त्रायोनि जानो. इति स्त्रीयोनिरोग.

योनिकन्दरोगोत्पत्तिः– दिनको अति शयन, अति क्रोध, अति श्रम,

अति मैथुन इनके करनेसे तथा योनिमें नख दंत आदिके लगनेसे वातादिदोष कुपित होकर योनिकंदरोगको उत्पन्न करते हैं.

योनिकंदरोगस्वरूप– योनिमें रुधिरयुक्त पीववाली गुल्हरके फलसमान एक गठान उत्पन्न होती है उसे योनिकंद कहते हैं. यह रोग १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज और सन्निपातज ऐसे ४ प्रकारका होता है.

१ वातजयोनिकन्दलक्षण– योनिमें रूखी, विवर्ण (फूटी फटीसी) जो गठान हो तो उसे वातजयोनिकन्दरोग जानो.

२ पित्तजयोनिकंदरोगलक्षण– योनिमें दाह, ललाई और ज्वरयुक्त जो गठान हो उसे पित्तजयोनिकन्दरोग जानो.

३ कफजयोनिकंदलक्षण– योनिमें अलसीके नीले पुष्पसमान खुजालयुक्त जो गठान हो तो उसे कफजयोनिकंदरोग जानो.

४ सन्निपातजयोनिकंदलक्षण– योनिमें उक्त तीनो दोषोंके लक्षणयुक्त गठान हो तो सन्निपातजयोनिकन्द जानो. इस रोगवाली स्त्रीकाभी रजोधर्म बंद हो जानेसे वह वंध्या (वांझ) हो जाती है. इति योनिकंदरोगनिदानम्.

॥ अथ गर्भस्राव तथा गर्भपातरोगोत्पत्तिः ॥

अति मैथुन, मार्गगमन, सवारीपर चढना, दौडना, उपवास, अजीर्णपर भोजन करनेसे, वमन या विरेचनके लेनेसे, ज्वरके आने तथा उदर पीडासे तथा तीक्ष्ण कटु, उष्ण, रूखी वस्तुओंके भक्षण, विषमासन और भय इन कारणोंसे पेटमें शूल चलकर स्त्रीका गर्भस्राव तथा गर्भपात होता है.

गर्भस्राव तथा गर्भपातलक्षण– गर्भ रहनेके दिनसे चार मासपर्यंतका गर्भ गिरनेको गर्भस्राव कहते हैं १ और चार मास उपरांत पांचवे तथा छठे महीनेमें गर्भ गिरे तो गर्भपात कहाता है. जैसे वृक्षके लगे हुए कच्चे या पक्के फल हवाके वेगसे या वृक्षके हिलानेसे अपने गिरनेके समयसे पूर्वही तत्क्षण गिर पडते हैं इसीप्रकार उक्त कारणोंसे गर्भभी उत्पन्न होनेके समयसे पूर्वही गिर पडता है इसलिये स्त्रियोंको चाहिये कि उक्त मिथ्या आहार विहार न करे. इति गर्भस्राव-गर्भपातनिदानम्.

शुष्कगर्भलक्षण— जिस स्त्रीका उदर पूर्ण न दृष्टपडे तो जानो कि इसका गर्भ वायुसे सूख गया.

मूढगर्भरोगोत्पत्तिः— अपने कारणोंसे कुपित वायु गर्भाशयमें रुककर गर्भकी गतिको रोकती है उसे मूढगर्भ कहते हैं. इससे योनि, पेट, कमर आदिमें शूल और मूत्रभी रुक जाता है तब वह गर्भ दूषित वायुसे टेढा होकर योनिसे निकलनेके समय योनि द्वारको १ मस्तकसे, २ या पांवसे ३ या शरीरके कुबडेपनसे ४ तथा एक हाथसे ५ या दोनों हाथोंसे ६ तथा टेढे होनेसे ७ नीचेको मुख होनेसे और ८ पसुरियोंके टेढे होनेसे एसी अपनी आठ प्रकारकी गतिसे रोकता है. इस मूढगर्भकी इन उक्त गतिसे व्यतिरिक्त १ कीलक, २ प्रतिखुर, ३ परिघ और ४ बीजक. ये चार गति और होनेसे इस नामोंयुक्त मूढगर्भ कहाता है.

१ कीलकमूढगर्भलक्षण— जो हाथ पांव ऊंचे करके मस्तकसे योनि मुखको कीलसदृश रोक लेता है सो कीलक मूढगर्भ कहाता है.

२ प्रतिखुरमूढगर्भलक्षण— जो दोनों हात पांव बाहर निकालकर मध्य शिरसे योनि मुखपर रुक जाता है सो प्रतिखुरमूढगर्भ कहाता है.

३ बीजकमूढगर्भलक्षण— जो दोनों भुजाके मध्यमें मस्तक रखके योनि मुखपर अड जाता है सो बीजकमूढगर्भ कहाता है.

४ परिघमूढगर्भलक्षण— जो द्वार ( दरवाजे )की आगलके समान आडा होकर योनि द्वारपर अड जाता है सो परिघमूढगर्भ कहाता है.

मूढगर्भअसाध्यलक्षण— जिस गर्भिणीका मस्तक झुका, शरीर ठंढा, लज्जाका अभाव और कुक्षि ( कूख )की नशें नीली होगई हो तो जानलो कि इसके गर्भका बालक और ये दोनों नाश हो जावेंगे.

गर्भमें बालकके मर जानेके लक्षण— पेटमें बालक, हलना चलना, प्रसूति कालके चिन्ह जैसे वारंवार योनिसें मूत्रादिका श्राव तथा पीडोंका चलना ये न हो गर्भिणीके शरीरका वर्ण काला पीला या पांडु होजावे और उसके मुखकी श्वासमें मुर्देकीसी दुर्गंध आवे तथा पेटमें शूल चले तो जानलो कि इसके गर्भमें बालक मरगया.

गर्भमें बालक मरनेके कारण– माताको बंधु धनादिके नाश तथा वियोगजन्य मानसी दुःख होनेसे या चोट लगनेसंबंधी आगंतुक दुःख होनेसे या रोगोंसे गर्भ पीडित होकर वह बालक कूखमें मर जाता है

गर्भिणीके असाध्यलक्षण– कूखमें गर्भका चिपटना, योनिसंवरणरोग, मक्कलरोग, और श्वासकासादि उपद्रवयुक्त मूढगर्भ ये सब स्त्रियोंको नाश करनेवालेही जानो.

१ योनिसंवरणरोगलक्षण– वातल अन्नपान, मैथुन, रात्रि जागरणादिके करनेसे गर्भिणी स्त्रीके योनिनिवासी वायु कुपित होके योनिमार्गको संकुचित कर देता है और ऊर्ध्वगतिसे कोठेमें जाके गर्भको पीडित करता हुआ गर्भाशयका द्वार रोक लेता है तब गर्भका मुख बंद होनेसे श्वास रुकके वह बालक मर जाता है. पेटमें उस मृत बालकके फूलनेसे गर्भिणीके सब मार्ग रुकनेसे उसका हृदय रुककर वह मर जाती है. इसे योनिसंवरणरोग जानो. किसी ग्रंथमें लिखा है कि यह मृत्युरूप रोग है.

२ मक्कलरोगलक्षण– प्रसूता स्त्रीके मिथ्या आहार विहारसे वायु कुपित होकर गर्भाशयसे निकले हुए रुधिरको रोकके उसके हृदय मस्तक और पेडूमें शूल उत्पन्न करता है इसे मक्कलरोग कहते है. इति मूढगर्भनिदानम्.

॥ अथ सूतिकारोगोत्पत्तिः ॥

मिथ्या आहार विहारसे, क्लेशसे, विषमासनसे और अजीर्णमे भोजन करनेसे प्रसूता स्त्री ( जिसके बालक उत्पन्न होगया हो उस स्त्री )को प्रसूतिरोग उत्पन्न होता है जिसे लोकमें जापेका, तथा प्रसूतका रोगभी कहते हैं.

सूतिकारोगलक्षण– प्रसूता स्त्रीके अंगका टूटना, ज्वर, शरीरका कांपना, तृषा, जडता, सूजन, पेटमें शूल, कासी और अतिसार ये लक्षण हों तो जानलो कि इसके सूतिकारोग होगया.

विशेषतः– पेटका अफरना, तंद्रा, बलनाश, अन्नपर अरुचि, पसीनेका छूटना ये तथा सूतिकारोगोक्त ज्वरादि और कफ-वात-संबंधी रोग, मांस जठराग्नि और बलके नाश होनेसे कष्टसाध्यही होजाते हैं इसीलिये इनको सूतिकाके उपद्रवभी कहते हैं. इति सूतिकारोगनिदानम्.

स्तनरोगोत्पत्तिः— दुग्धयुक्त, या दुग्धरहित स्त्रीके स्तनोंमें स्वकारणोंसे कुपित वायु, पित्त और कफ प्राप्तहों मांसको दूषित करके १ वातज, २ पित्तज, ३ कफज, ४ सन्निपातज और ५ आगंतुक ऐसे पांच ग्रंथीरूप स्तनरोग उत्पन्न करते हैं. इन पांचोंके लक्षण रक्तविद्रधिके विना बाह्यविद्रधिनके समान जानो. इति स्तनरोग.

इति नूतना० निदानखंडे स्त्रीरोगलक्षणनिरूपणं नामैकचत्वारिंश० ॥४१॥

॥ अथ बालरोग-मंथज्वर ॥

हेतुं कुमाररोगाणां तथा मंथज्वरस्य च ।
नेत्रवेदे तरंगेऽस्मिन् कथ्यते हि मया क्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब इस ४२ ब्यालीसवें तरंगमें बालरोग और मंथज्वर (मोतीझरे-पानीझरे)का निदान क्रमसे कहते हैं.

बालरोगोत्पतिः— धाट (धाय, दूध पीलानेवाली माता या कोई अन्य स्त्री)के गरिष्ठादि मिथ्या आहार विहारसे वातादि दोष कुपित होके दूधको बिगाड देते हैं तब उस दूधसे बालकको अनेक रोग उत्पन्न होते हैं जिनमें वात दूषित दुग्धपानसे वातरोग, पित्त दूषित दुग्धपानसे पित्तरोग, और कफ दूषित दुग्धपानसे कफरोग होते हैं.

॥ अथ दुग्धपरीक्षा ॥

१ वातदूषित दुग्धलक्षण— जो दूध श्वादमें कसैला, और पानीपर, तिर जावे उसे वातदूषित दुग्ध जानो.

२ पित्तदूषित दुग्धलक्षण— जो दुग्ध, कडवा, खट्टा, सलौना और पीली रेखाओंसे युक्त हो उसे पित्तदूषित दुग्ध जानो.

३ कफदूषित दुग्धलक्षण— जो दुग्ध, चिकना और भारी (पानीमें डूबनेवाला) हो उसे कफदूषित दुग्ध जानो, इसीप्रकार दो दोषोंके लक्षणयुक्त होनेसे द्विदोष दूषित और तीनों दोषोंके लक्षण युक्तको त्रिदोष दूषित जानो.

४ शुद्धदुग्धलक्षण— जो दुग्ध मीठा, श्वेत पानीमें मिलानेसेभी अपने रंगको न छोडके एकसा हो जानेवाला, देखनेमेंभी निर्मल वर्णका हो उसे दोषरहित शुद्ध दुग्ध जानो शुद्ध दुग्धपानसे बालक बलयुक्त और रोगरहित

तथा दूषित दुग्धसे बलहिन रोगयुक्त हो जाता है, यह दुग्धकी परीक्षा पुराने अमृतसागरमें कुछभी नहीं थी परन्तु हमनें अन्य अन्य वैद्यक ग्रंथोंसे लिखी है इसीप्रकार अनेक वातें जो कि पुराने अमृतसागरमें नहीं थी और हमने इस नूतन अमृतसागरमें ग्रंथांतरसे लिखी हैं जिनकी सूचना कहीं दी और कहीं नहीं भी दीहै परन्तु विद्वान् पुरुष स्वयं जान लेवेंगे अब वातादि दोष दूषित दुग्ध पीनेसे जो जो रोगयुक्त बालक हो जाता है सो दर्शाते हैं जिसे निम्नलिखित प्रकारसे जानो.

१ वातदूषित दुग्धपानलक्षण— क्षीण, श्वेत मुख, कृश शरीर, मलमूत्रका रुकना, आदि औरभी वादीके रोगोंयुक्त लक्षण दृष्ट पडे तो जानलो कि इसे वातदूषित दुग्धपानसे ये रोग हुए हैं.

२ पित्तदूषित दुग्धपानलक्षण— पसीना, मल पतला, शरीर पीला, अति तृषा और अंग उष्ण आदि पित्तरोगयुक्त लक्षण दृष्टि पडे तो जानो कि पित्तदूषित दुग्धपानसे ये ऐसा है.

३ कफदूषित दुग्धपानलक्षण— लार अधिक गिरे, नींद अधिक आवे, शरीर सूना, भारी, श्वेत नेत्र, वमन, कास श्वास आदि कफरोगयुक्त लक्षण दृष्टि पडे तो जानलो कि कफदूषित दुग्धपानसे ये बालक ऐसा रोगी हुआ है.

इसीप्रकार दो दोष दूषित दुग्धपानसे दो दोषोंके लक्षण और तीन दोष दूषित दुग्धपानसे तीनों दोषोंके लक्षणको विचारलो. विशेषतः— ज्वरादि समस्त रोग बालकोंकोभी बडे मनुष्योंके समानही होते हैं परन्तु उनसे व्यतिरिक्त जो जो रोग बालकोंको होते हैं उनको दर्शाते हैं.

बालकोंको १ कृमिजन्य ज्वर, २ कुकूण, ३ पारिगर्भिक, ४ तालुकंटक, ५ महापद्म, ६ तुंडिगुदपाक, ७ अहिपूतना, ८ अजगल्ली, ९ दंतरोग, १० बालग्रह और ११ मातृकादोष ये ग्यारह रोग प्रायः होते हैं.

१ कृमिजन्यज्वरलक्षण— बालकोंके सामान्य ज्वरादि रोग उसके रुदनादिसेही ज्ञात होते हैं परन्तु शरीर विवर्ण, पेटमें शूल, हृदयपीडा, वमन, भ्रम, भोजनमें अरुचि और अतिसार इनसहित ज्वर हो तो कृमिसे उत्पन्न हुआ ज्वर जानो.

२ कुकूणरोगलक्षण– दुग्धदोषसे बालकोंके नेत्रोंकी पलकोंमें कुकूणरोग होता है इसके होनेसें नेत्रोंमें खुजाल और उनसे पानीका वहाव होकर बालक, ललाट, नेत्र, पीठ और नासिकाको घिसता तथा सूर्यादिके तेजको देखने और नेत्रोंको खोलने मूंचनेमें वह असमर्थ होता है.

३ पारिगर्भिकरोगलक्षण– गर्भवती माताके दुग्ध पीनेसे बालकको कास, मंदाग्नि, उलटी, तंद्रा, कृशता, अरुचि और भारीपन हो जाता है ये लक्षण हों तो पारिगर्भरोग जानो.

४ तालुकंटकलक्षण– कुपित कफसे तालुके मांसमें तालुकंटकरोग होता है जिससे तालुके ऊपर कांटे होके तालु बैट जानेसे वह बालक माताके स्तनोंको नहीं पीता यदि पियेभी तो बडे कष्टसे पीता उसका मल पतला, तृषा, वांति, नेत्र कंठ और मुख रोगयुक्त होकर अपनी गरदनभी नहीं संभाल सक्ता ये लक्षण हों तो तालुकंटकरोग जानो.

५ महापद्मविसर्पलक्षण– त्रिदोषसे बालकके पेडू या मस्तकमें कमलके आकार कनपट्टीसे हृदयपर्यंत जानेवाला, या हृदयसे गुदापर्यन्त जानेवाली ऐसा महापद्मविसर्परोग होता है इस रोगसे बालक नहीं बचता.

६ तुंडीगुदापाकरोगलक्षण– बालककी गुदा पककर नाभीमें पीडा अधिक हो तो तुंडीगुदापाक जानो.

७ अहिपूतनारोगलक्षण– जिस बालककी गुदा सर्वदा मलमूत्रयुक्त तथा लालही रहे जिसके धोनें या पोंछने तथा तपानेसे उसमें खुजाल उठकर फोडे होजावें और गुदासे पानी झरता रहे तो अहिपूतनारोग जानो.

८ अजगल्लीरोगलक्षण– जिसके शरीरमें चिकनी, लाल, मूंगेप्रमाण पीडारहित बहुतसी फुनसियां होजावें उसे अजगल्लीरोग कहते हैं. अहिपूतना और अजगल्लीके विशेष लक्षण देखना चाहो तो क्षुद्र रोगके निदानमें देखो.

९ दन्तरोगलक्षण– बालकके दांत निकलते समय ज्वर, अनेक वर्णका विरेचन, वमन, क्षीणता, मस्तक पीडा, नेत्रपीडा और चक्र आना, इत्यादि लक्षण दृष्टि पडे तो जानो कि दंतरोग है. ये सब लक्षण प्रत्येक बालकको दंत निकलनेके समय होते और प्रत्येकके दंत निकल जानेपर शांतभी होजाते हैं.

बालकरोगनिश्चय— बालक बोलनेको असमर्थ होता है इसलिये उनके रोगोंको जाननेका उपाय कहते हैं. १ बालक पीडाकी, न्यूनाधिक्यताको बालकके थोडे बहुत रोनेसे जानो. थोडा रोवे तो थोडी पीडा और बहुत रोवे तो अधिक पीडा जानो. २ बालकके जिस अंगमें हाथ लगानेसे वह रोवे या चमके उसके उसी अंगमें पीडा जानो. ३ बालक नेत्र न खोले तो उसके मस्तकमें पीडा जानो.

४ जीभ और होठोंको दबावे, दांत पीसे, श्वास ले और मूठी बांधे तो बालकके हृदयमें पीडा जानो.

५ मलमूत्रका रुकना, उलटी, आंतोंका बोलना, पीठका फूलना या नवना पेटका फूलना या नवना ओर माताके स्तनोंको काटना ये लक्षण हों तो बालकके कोठेमें पीडा जानो.

६ मलमूत्रका अवरोध होकर बालक घबराके चहुंओर देखे तो उसके पेडू (मूत्राशय) अथवा, इन्द्री तथा गुदादि गुह्य स्थानमें पीडा जानो.

विशेषतः— इन्द्रियोंको तथा हाथ पांय आदि अंगोको और समस्त संधियोंका बडे यत्नसे वारंवार देखके रोगोंका निश्चय करो. यदि बालरोगोंसे तथा उनकी चिकित्सासे अधिक ज्ञात होना होतो सुश्रुतमें देखो ये बालरोग जाननेके उपाय माधवनिदानादि ग्रंथोसे हमने लिखे हैं.

॥ बालग्रहरोग ११ ॥

बालकोंको १ स्कंदग्रह, २ स्कंदापस्मार, ३ शकुनी, ४ रेवती, ५ पूतना, ६ अंधपूतना, ७ शीतपूतना, ८ मुखमंडिका और ९ नैगमेय ये नव बालग्रह ग्रहण करके पीडित करते हैं.

ग्रहग्रहीत बालकके सामान्यलक्षण— बालक चमके, डरे, रोवे, नख तथा दंतोंसे अपने तथा माताके शरीरको विदीर्ण करे ऊपरको देखे दांत चावे कूल्हे (कांखे) जंभुवाई ले, भौहें तथा ओठ चलावे, मुखसे वारंवार फेन गिरावे, शरीर कृश, रात्रि निद्रानाश, शोथ, मलका फूटना, स्वरका बैठना, अल्प आहार और शरीरमें मांस तथा रक्तके तुल्य दुर्गंध ये लक्षण हों तो जानो कि इस बालकको उक्त नव बालग्रहोंमेंसे किसीभी बालग्रहका कोप है.

१ स्कंदग्रहगृहीतलक्षण— जिस बालकका एक नेत्र वहे एक ओरका अंग फरके कंपता रहै ऊपरको टेढा मुख करके देखे, शरीरसे रक्तकीसी वास आवे, दांत किरकिरावे, शिथिलता और दूधपे अरुचि हो तो उसे स्कंदग्रहगृहीत जानो.

२ स्कंदापस्मारगृहीतलक्षण— अचेत पडा हुआ मुखसे फेन उगले, सचेत होनेपर अत्यंत रुदन करे और शरीरसे रक्त पीव कीसी दुर्गंध आवे तो उस बालकको स्कंदापस्मारगृहीत जानो.

३ शकुनीग्रहगृहीतलक्षण— जो बालक, अंगशिथिल, भयसे चकित सर्व शरीर, व्याधि दाह, पाक और श्रावयुक्त फोंडोंसे क्लेशित हो तो शकुनीग्रहगृहीत जानो.

४ रेवतीग्रहगृहीतलक्षण— जिसका शरीर फूटे हुए प्राचीन या नवीन फोंडोंसे पूरित हो जिनसे कर्दमकीसी दुर्गंधयुक्त रक्त वहे, मल फूटा हो, दाह, और ज्वरभी हो तो उस बालकको रेवतीग्रहगृहीत जानो.

५ पूतनाग्रहगृहीतलक्षण— जो बालक अतिसार, तृषा, ज्वर, तिरछा देखना और निद्रा नाश इन लक्षणोंयुक्त हो तो उसे पूतनाग्रहगृहीत जानो.

६ अंधपूतनाग्रहगृहीतलक्षण— जो बालक, वमन, ज्वर, कास, तृषा, शरीरमें मज्जा (चरबी) कीसी वास और अत्यंत रुदनयुक्त हो उसे अंधपूतनाग्रहगृहीत जानो.

७ शीतपूतनाग्रहगृहीतल०— जो बालक कम्प, कास, क्षीणता, नेत्ररोग, दुर्गंध वमन और अतिसारयुक्त हो उसे शीतपूतनाग्रहगृहीत जानो.

८ मुखमंडिकाग्रहगृहीतलक्षण— जो बालक प्रसन्न मुख, सुंदर वर्ण, उघडी हुई नषोंसे व्याप्त, बव्हाशी (बहुत खानेवाला हो) और जिसके शरीरसे मूत्रकी दुर्गंध आवे तो उसे मुखमंडिकाग्रहगृहीत जानो.

९ नैगमेयग्रहगृहीतलक्षण— जो बालक, वमन, पसीना कंठ और मुखशोष, मूर्छा दुर्गंधयुक्त होकर ऊपरको देखता रहे उसे नैगमेयग्रहगृहीत जानो. और इन्ही लक्षणोंयुक्त डाकिनी दोषवाला बालकभी होता है.

इति बालग्रहनिदानम्.

॥ अथ द्वादशमातृकादोषनिदानम् ॥

१ नंदामातृकादोषलक्षण– बालकके जन्म होने पश्चात् १ दिन, १ मास, १ वर्षमें ज्वर होकर वह बालक अधिक रोवे या अचेत हो जावे तो नंदामातृकादोष जानो.

२ शुभदामातृकादोषलक्षण– जन्मसे दुसरे दिन, दुसरे मास, दुसरे वर्ष बालकको ज्वर हो नेत्र नहीं मूंचे, शरीर कंपे, निद्राका नाश हो अत्यंत चिल्लावे, और निश्चेष्ट ये लक्षण हों तो शुभदामातृकादोष जानो.

३ पूतनामातृकादोषलक्षण– ३ रे दिन, ३ रे मास, ३ रे वर्ष, बालक ज्वरकंपा, भाषणरहित, मुष्टिका बांधना, चिल्लाना और आकाशकी ओर देखना इन लक्षणोंयुक्त हों तो पूतनामातृकादोष जानो.

४ मुखमंडिकादोषलक्षण– ४ थे दिन, ४ थे मास, ४ थे वर्ष, बालकको ज्वर हो, ग्रीवा न झुके नेत्र फटे रहें मुखसे नहीं बोले रोता रहे या अत्यंत सोवे, हाथकी मुठी बंधी रक्खे ये लक्षण हों तो मुखमंडिकामातृकादोष जानो.

५ पूतना[1]मातृकादोषलक्षण– ५ वे दिन, ५ वे मास, ५ वें वर्ष बालकके ज्वर, कंपा, भाषणाभाव, मुष्टिबंधन ये लक्षण हों तो पूतनामातृकादोष जानो.

६ शकुनीमातृकादोषल०– ६ वें दिन, ६ वें मास, ६ वें वर्ष, बालकको ज्वर, कंपा, रात्रिदिन क्लेश और ऊर्ध्वदृष्टि ये लक्षण होंतो शकुनीमा० जानो.

७ शुष्करेवतीमातृकादोषलक्षण– ७ वें दिन, ७ वें मास, ७ वें वर्ष बालकको ज्वर, गात्रकंप, मुष्टिबंधन, अधिक रुदन, ये लक्षण हों तो शुष्करेवतीमातृकादोष जानो.

८ नानामातृकादोषल०– ८ वें दिन, ८ वें मास, ८ वें वर्ष, बालकको ज्वर शरीरमें दुर्गंध आहार नाश और गात्रकंप ये लक्षण हों तो नानामा० जानो.

९ सूतिकामातृकादोषलक्षण– ९ वें दिन, ९ वें मास, ९ वें वर्ष, बालकको ज्वर, शरीर पीडा और वमन होतो सूतिकामातृकादोष जानो.

१० क्रियामातृकादोषलक्षण– १० वें दिन, १० वें मास, १० वें वर्ष, बा-

---

१ ये पूतना मातृका पंचम दिनादिमें दोषकारिणी और पूर्वोक्त पूतना ३ रे दिन आदिमें दोषकारिणी होनेसे इन दोनोंको पृथक् पृथक् जानो.

लकको ज्वर, कंप, रुदन और मलमूत्र त्याग होतो क्रियामातृकादोष जानो.

११ पिपीलिकामातृकादोषल०– ११ वें दिन, ११ वें मास, ११ वें वर्ष, बालक ज्वरयुक्त और आहार हीन होतो पिपीलिकामातृकादोष जानो.

१२ कामुकामातृकादोषलक्षण– १२ वें दिन, १२ वें मास, १२ वें वर्ष, बालक ज्वरयुक्त हो हंसे वस्त्र आदिको हातसे फेकने लगे पुकारे और अधिक श्वास ले तो कामुकामातृकादोष जानो. यह रावणकृत कुमारतंत्र चक्रदत्तमें लिखा है. इति मातृकदोष–इति बालरोगनिदानम्.

॥ अथ मंथज्वरलक्षणम् ॥

श्लोकाः–ज्वरो दाहो भ्रमो मोहो ह्यतिसारो वमिस्तृषा ।
अनिद्रा च मुखं रक्तं तालुजिव्हा च शुष्यति ॥ १ ॥
ग्रीवादिषु च दृश्यन्ते स्फोटकाः सर्षपोपमाः ।
घृताशनात्स्वेदरोधान्मंथरो जायते नृणाम् ॥ २ ॥

इत्याह क्षीरपाणिः.

हारीतोप्याह–ज्वरस्तन्द्रा च तुर्यस्य दन्तोष्ठेषु च श्यामता ।
घ्राणजिव्हाऽस्यकण्ठेषु रक्तताक्षि च कर्बुरम् ॥ १ ॥
मुक्ताहारो गले यस्य सप्ताहाद्धार्यते नचेत् ।
तत्रिसप्तदिनादर्वाक् स्फोटाः स्युस्सर्षपोपमाः ॥ २ ॥

भाषार्थः– अब मंथज्वरके लक्षण लिखते हैं. जिसे लोकमें मोती झिरा, मधूरा, मोतीमाता, या मोतीज्वरभी कहते हैं यद्यपि यह रोग ज्वरप्रकरणमेंही लिखने योग्य था परंतु यह बालकोंकोही विशेष करके निकला करता है इसलिये बालरोगके अंतमें लिखते हैं. तरुण ज्वरमें, घी खाने और पसीनेके रोकनेसे, ज्वर, दाह, भ्रम, मोह, अतिसार, वांति, तृषा, निद्रा नाश, मुखरक्तता, तालु, जिव्हाशोष, इन सहित गलेसे नीचे नीचे उतरते हुए सरसोंसमान मोतीसे दाने दृष्टि पडते हैं उन्हे मंथज्वर कहते हैं, ऐसा क्षीरपाणीने कहा है.

और हारीत ऋषि भी कहते हैं कि ज्वर, तंद्रा, दंतओष्ठोंमें श्यामता, नासिका, जिव्हा, मुख और कंठमें रक्तता और नेत्र कर्बूर इन लक्षणोंयुक्त गलेमें मोतियोंके हार सदृश दानोंकी पंक्ति निकलती है उस समय उस रोगीको ७ दिन पर्यन्त मोतियोंका हार[१] पहनाना चाहिये यदि न पहनावे और स्वच्छतादि ठीक ठीक प्रयत्न न रक्खे तो उसके २१ दिनके भीतर २ अंग भरमें सरसोंके समान मोतीसे दाने हो जाते हैं. ये लक्षण हों तो मंथज्वर (बडा मोतीझिरा) जानो इसे लोकमें पानीझिरा भी कहते हैं. ये तीनों दोषोंके कोपसे होनेके कारण कठिन रोग होता है. विशेष उपद्रव न उठें तो कष्टसाध्य और उपद्रवयुक्त होनेसे असाध्य जानो. इससे आरोग्य होना परमेश्वरके स्वाधीन है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे बालरोग-मंथज्वरलक्षण निरूपणं नाम द्विचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४२ ॥

॥ क्लीबरोग ॥

कारणं क्लीबरोगस्य नृणां लज्जाप्रदस्य वै ।
रामवेदे तरङ्गेऽस्मिन् कथ्यते च मया क्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थः— मनुष्योंको लज्जा प्राप्त करनेवाले क्लीब (नपुंसक, षंड) रोगका इस ४३ वें तरंगमें क्रमसे निदान कहते हैं.

॥ अथ नपुंसकानाह ॥

श्लोकः—आसेक्यश्च सुगन्धी च कुंभीकश्चेर्ष्यकस्तथा ।
अमी सशुक्रा बोद्धव्या अशुक्र षण्डसंज्ञकः ॥ १ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशे.

भाषार्थः— अब जन्मसेही जो नपुंसक होते हैं उनको दर्शाते हैं. गर्भाधानके समय स्त्रीका रज (रक्त) और पुरुषका वीर्य ये दोनों समान (बराबर) होनेसे गर्भ नहीं रहता है. यदि दैववशात् रहभी जावे तो वह बालक नपुंसक (स्त्री और पुरुषसे भिन्न) होता है. जो जन्मसे नपुंसक

[१] यह रोगोंमे राजाके समान है इसलिये मोतियोंका हार पहिनाना लिखा है

वे १ आसेक्य, २ सुगंधी, ३ कुंभीक, ४ ईर्ष्यक, ५ षंड. ऐसे पांच प्रकारके होते हैं इनोंमें पहिले चार वीर्यसहित और पिछला (षंड) निर्वीर्यही होता है. और जो वातादि दोषोंसे तथा मनके विकारसे नपुंसक हो जाते हैं वे ७ प्रकारके होते हैं.

१ आसेक्यनपुंसकलक्षण– मातापिताके अत्यल्प (अति न्यून) रज वीर्यके कारण आसेक्यनपुंसक होता है. जो कि अपने मुखमें दूसरेसे मैथुन कराके आप उसके वीर्यको पीजाता है तब उसका लिंग चैतन्य होता है इसका दुसरा नाम मुखयोनिभी है.

२ सौगंधिकनपुंसकलक्षण– जो दुर्गंधयुक्त योनिसे उत्पन्न होता है वह सौगंधिकनपुंसक कहाता है. वह जब योनि और लिंगको सूंघता है तब मैथुन करनेको समर्थ होता है. इसका दुसरा नाम नासायोनिभी है.

३ कुंभिकनपुंसकलक्षण– जो अपने गुदामें दूसरेसे मैथुन करवानेपर स्त्रीसे मैथुन करनेको समर्थ होता है उसे कुंभिकनपुंसक तथा गुदायोनिभी कहते हैं.

४ ईर्ष्यकनपुंसकलक्षण– जो दूसरेको मैथुन करता देखे तब आपभी मैथुन करनेको समर्थ हो सो ईर्ष्यक या दृष्टियोनिनपुंसक कहाता है.

५ षंडनपुंसकलक्षण– जो पुरुष अज्ञानसे ऋतुदान (गर्भाधान)के समय आप नीचे और स्त्रीको ऊपर करके मैथुन कराता है उसके सकाशसे उत्पन्न हुआ बालक षंडनपुंसक कहाता है. जिसका स्त्रीके समान (दाडी, मूछरहित) आकार और स्त्रीसे चेष्टा (चटकमटक) तथा दूसरेसे अपनी गुदामें मैथुनभी कराता है. इसके वीर्यका लेशमात्रभी न होनेके कारण आप किसी प्रकार मैथुन नहीं कर सक्ता, ये पांचप्रकारके नपुंसक जन्म-

[illegible]

षंडास्त्रीलक्षण– ऋतुसमयमें जो स्त्री पुरुषको नीचे सुलाके आप ऊपर होके मनुष्यके समान मैथुन करे उसके गर्भसे यदि कन्या उत्पन्न हो तो वह पुरुषके सदृश बोल चाल करनेवाली और दूसरी स्त्रीको नीचे सुलाके उसकी योनिसे योनि घसनेवाली होती है. ऐसे लक्षणोंवाली स्त्रीको षंडा कहते हैं.

॥ अथ दोषमानुसान्नपुंसकानाह ॥

श्लोकः—क्लीबः स्यात् सुरताशक्तस्तद्भावः क्लैब्यमुच्यते ।
तच्च सप्तविधं प्रोक्तं निदानं तस्य कथ्यते ॥ १ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशस्योत्तरखण्डे ॥

भाषार्थः— जन्मसे जो ५ प्रकारके नपुंसक होते हैं उनको पहले कह चुके अब वातादि दोषोंसे तथा मनके बिगाडसे जो नपुंसक होते हैं उनको दर्शाते हैं.

जो पुरुष मैथुन (स्त्रीसङ्ग) करनेमें समर्थ न हो उसे क्लीब और उस क्लीबपनके भावको क्लैब्य कहते हैं अर्थात् जन्मसे नपुंसक न होके और पश्चात् नपुंसकताको प्राप्त होजावे सो क्लैब्य ७ प्रकारका होता है तिसका निदान कहते हैं.

१ मानसक्लैब्यलक्षण— मैथुनके समय भय, शोक, क्रोध, लज्जा और शंका इन कारणोंसे अथवा मनको ग्लानि उत्पन्न करनेवाली स्त्रीसे मनका उत्साह (हर्ष) नष्ट होकर लिंग शिथिल पड जाता है इसे मानसक्लैब्य कहते हैं.

२ पित्तजक्लैब्यलक्षण— पित्त बढकर वीर्यको नष्ट कर देता है जिससे मनुष्यका लिंग शिथिल पड जाता है इसे पित्तजक्लैब्य कहते हैं.

३ शुक्रक्षयहेतुक क्लैब्यलक्षण— जो पुरुष अत्यंत मैथुन करे और वाजीकरण औषधियोंका सेवन न करे सो वीर्यकी क्षीणतासे नपुंसक हो जाता है इसे शुक्रक्षयहेतुकक्लैब्य जानो.

४ लिंगरोगजक्लैब्यलक्षण— लिंगमें उपदंशादि रोग होनेसे जो नपुंसकताको प्राप्त होजाता है सो लिंगरोगजक्लैब्य कहाता है.

५ वीर्यवाहीशिराछेदजक्लैब्यलक्षण— वीर्यको वहानेवाली नसके छिद जानेसे जो नपुंसक हो जाता है सो वीर्यवाहीशिराछेदजक्लैब्य कहाता है.

६ शुक्रस्तंभजक्लैब्यलक्षण— जो बलवान पुरुष मैथुनकी इच्छासे मन चंचल होनेपरभी वीर्यको रोकके ब्रह्मचर्यमें रहता वह वीर्य निरोध निमित्तसे नपुंसकताको प्राप्त होता है इसे शुक्रस्तंभजक्लैब्य कहते हैं.

७ सहजक्लैब्यलक्षण— जो जन्मसेही नपुंसक होता है सो सहजक्लैब्य कहाता है इस सहजक्लैब्यके ५ भेद प्रथम कह चुके हैं.

असाध्यक्लैब्यलक्षण— वीर्यवाही शिरा छेदजक्लैब्य, और सहजक्लैब्य ये

दोनों असाध्य और शेषक्लैब्य कष्टसाध्य जानो. यह नपुंसकरोगका निदान हमने भावप्रकाशसे लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे नपुंसकरोगलक्षणनिरूपणं नाम त्रिचत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४३ ॥

॥ अथ स्थावर-जंगमबिषनिदानम् ॥

द्विविधस्य विषस्यात्र स्थावरस्य चरस्य च ।
तरंगे सिंधुवेदे हि निदानं कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः— स्थावर और जंगम विषका इस ४४ चंवालीसवें अंतिम तरंगमें निदान कहते हैं. १

श्लोकः—स्थावरं जङ्गमं चैव द्विविधं विषमुच्यते ।
मूलात्मकं तदाद्यं स्यात्परं सर्पादिसंभवम् ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब विषका निदान लिखते हैं, स्थावर और जंगम भेदसे विष दो प्रकारका होता है जिसमें वृक्षादिसे उत्पन्न हो सो स्थावर विष और सर्पादि जनित जंगम विष कहाता है.१

१ स्थावरविषस्थितिः— स्थावर विष १ वृक्षकी जड २ पत्र ३ पुष्प ४ फल ५ छाल ६ दुग्ध ७ सार ८ रस (गोंद) ९ धातुमात्र (हरितालादि) और कन्द (सिंगी मोहरा आदि)में रहता है.

२ जंगमविषस्थितिः— जंगमविष १ मनुष्योंकी दृष्टि २ सर्पादिकी श्वास तथा हाड ३ श्वान, सृगाल आदिकी दाढ ४ सिंह व्याघ्रादिके नख तथा रोम ५ विषहरा (छिपकली) आदिके मलमूत्र ६ वंदर आदिके वीर्य ७ बावरे (पागल) श्वान तथा सृगालादिके लार ८ उष्ण वस्तु खानेवाली स्त्रीके योनि ९ उष्ण वस्तु खानेवाले मनुष्यकी गुदा १० नकुल (मुंगसे) तथा मछलीके पित्ते ११ भंवरे आदिके डंक, और १२ मूषक (चूहा) के दांतमें रहता है.

स्थावरविषसामान्यलक्षण— हुचकी, दन्त खट्टे होना, गला घुटना, वमन फेनोंका गिरना, अरुचि, श्वास, और मूर्छा ये उपद्रव हों तो स्थावरविष संसर्ग जानो.

स्थावरविषभक्षणविशेषलक्षण—

१ मूलविषलक्षण— विषहरे मूल (कण्हेर आदिकी जड) भक्षणसे देहमें ऐठन, प्रलाप और मोह होता है.

२ पत्रविषल०—विषहरे पत्र भक्षणसे, जंभुहाई, कंपा, श्वास और मोह होता है.

३ पुष्पविषल०—विषहरे पुष्प भक्षणसे वमन, आध्मान और श्वास होता है.

४ फलविषलक्षण— विषहरे फल भक्षणसे मुखपर शोथ, दाह और अ- होता है.

५ त्वचा ६ सार ७ रसविषलक्षण— विषहरे त्वचा, सार और रस भक्षणसे, मुखदुर्गंध, शरीरमें खरखराहट, शिरमें पीडा और कफ गिरता है.

८ दूधविषलक्षण— विषहरे वृक्षके दूध भक्षणसे, मुखसे फेनोंका गिरना, मल फूटना और जिव्हाका ऐठना ये उपद्रव होते हैं.

९ धातुविषलक्षण— अशुद्ध हरितालादि धातु भक्षणसे हृदयमें पीडा, मूर्च्छा और तालुमें दाह ये उपद्रव होते हैं. ये पूर्वोक्त सब विष कुछ कालपर्यंत क्लेश देके नष्ट करते हैं.

१० कन्दविषलक्षण— कन्दविष (अशुद्ध बछनाग, सिंगी मोहरा आदि) के भक्षणसे हरितालादि धातु विषभक्षण समान उपद्रव होकर वह पुरुष तत्कालही मर जाता है.

विशेषतः— उक्त स्थावर विषको वैद्यक शास्त्रोक्त रीतिसे शुद्ध करके खिलाया जावे तो अमृतसमान गुण करता है.

१ विषबल— विषमें रूखापन होनेसे यह बुद्धिको बिगाडता और सर्व शरीरके बंधनोंको ढीले कर देता है.

२ विषमें सूक्ष्मता होनेसे शरीरके अंग अंगपर बढ जाता है.

३ विषमें प्रबलता होनेसे यह स्त्रीसंग अधिक करता है.

४ विषमें नाशक शक्ति होनेसे यह शरीरके वातादि दोषोंको सप्त धातु और मलको बिगाड देता है.

५ विषमें शीघ्रता शक्ति होनेसे यह शरीरको क्लेश देता है.

१ विषयुक्त शस्त्रप्रहारलक्षण— जिस मनुष्यका घाव शस्त्रप्रहार होतेही

पक जावे और उसमेंसे काला रक्त वारंवार निकले वह घाव सर्वदा भीगा हुआ रहै तथा उस घावसे मांस गल गलकर गिरने लगे और उस प्रहार-युक्त मनुष्यको तृषा, मूर्छा, ज्वर तथा दाह होवे तो जान लो कि विषमें बुझाया हुआ शस्त्र लगा है.

विशेषतः– यदि कोई शत्रु साधारण घावपरभी विष किसीप्रकारसे डालदे तोभी यह लक्षण हो जाते हैं इसलिये घावका यत्न अपने विश्वासी पुरुषसेही कराओ.

॥ अथ जंगमविषविशेषलक्षण ॥

प्रथम सर्पके काटनेके विषका लक्षण लिखते हैं. सर्पभी कई प्रकारके होते हैं जिनको अग्रलिखित लक्षणोंसे जानो.

श्लोकः–वातपित्तकफात्मानो भोगिमंडिलराजिलाः ।
यथाक्रमं समाख्याता द्व्यन्तराद्वंद्वरूपिणः ॥ १ ॥

भाषार्थः– १ फणवाले सर्पोंको भोगी जानो. ये वातप्रकृतिवाले होते हैं.

२ जिन सर्पोंके अंगपर मंडल होते हैं उनको मंडली जानो. ये पित्त-प्रकृतिवाले होते हैं.

३ जिन सर्पोंके शरीरपर रेखा होती है उनको राजिल सर्प जानो. ये कफप्रकृतिवाले होते हैं.

इसिप्रकार मातापिताके जातिविपर्ययसे जो संकर (दो गले) जातके सर्प होते हैं वे द्वंद्वज कहाते हैं.

१ भोगीसर्पके काटनेका लक्षण– भोगी सर्प जहां काटता है वहां काला चिन्ह होकर उसको सर्व वातरोग उत्पन्न होते हैं.

२ मंडलीसर्प काटनेका लक्षण– डंश, सूजाहुआ, पीला, कोमल और पित्तविकार कारक हो तो जानो कि इसे मण्डलीसर्प काटा है.

३ राजीलसर्प काटनेका ल०–स्थिर शोथयुक्त, चिकना, फेनाके सदृश, श्वेत, आर्द्र, रक्तयुक्त डंश हो और कफके विकार दृष्टि पडे तो राजिलसर्प काटा जानो.

सर्प काटेके असाध्यलक्षण– पींपलके नीचे, देवमंदिर, मसान, चौमार्ग, बांबीपर तथा संध्यासमयमें. भरणी, मघा, आर्द्रा, अश्लेषा, मूल, कृत्तिका,

इन नक्षत्रोंमें; पंचमी आदि तिथिमें और शरीरके मर्मस्थानोंमें सर्प काटे तो असाध्य होनेसे वह मनुष्य बचना हरिहर है.

यदि अजीर्ण, उष्णता, घाव, प्रमेह, क्षीणता और क्षुधायुक्त मनुष्योंको बालक, वृद्ध, गर्भवती स्त्रीको तथा जिनके मुख, इंद्री और गुदामें रुधिर गिरताहो ऐसेंको सर्प काटे तो असाध्य जानकर यत्न मत करो ये नहीं बचते.

दूषीविषभक्षणल०– दूषीविष भक्षणसे मनुष्य मूर्छा, भ्रम और वमनादिद्वारा क्लेशित होकर बच जाता है किंतु मरता नहीं.

दूषीविषलक्षण– श्लोकः–

जीर्णं विषघ्नौषधिभिर्हतं वा दावाग्निवातातपशोषितं वा ।
स्वभावतो वा गुणविप्रहीनं विषं हि दूषीविषतामुपैति ॥ १ ॥

भाषार्थः– पुराना अथवा विषनाशक औषधियोंसे तेजहीन या दावाग्नि धूप, पवनसे सूका हुआ अथवा स्वभावसेही अपने गुणहीन हो जावे सो दूषीविष कहाता है. इसमें अल्प पराक्रम होनेसे यह मनुष्य मार नहीं सक्ता.

१ दूषीविष मूषकदंष्ट्रलक्षण–मुषक काटनेसे तत्क्षणही उस स्थानसे रक्तका वहाव, शरीरमें पांडुवर्णके मंडल, ज्वर, अरुचि, रोमांच और दाह ये लक्षण हों तो दूषीविष मूषक काटा जानो. इसके काटनेसे प्राणहानि नहीं होती.

२ प्राणहर मूषकदंष्ट्रलक्षण– मूर्छा, शरीरमें शोथ, कुरूपता, उवकाई, बधिरता, ज्वर, शिरमें भारीपन, लारका वहाव और रक्तकी वांति (वमन) होतो प्राणहर मूषकके काटनेका विष जानो. इन लक्षणयुक्त रोगी असाध्य होता है.

३ कृकलासदंष्ट्रलक्षण– जहां काटे वहां काला, धूसर, या अनेक रंगका डंश, मोह और मलका फूटना होतो कृकलास ( किरकांट, गिरगुट )के काटनेका विष जानो.

४ वृश्चिकदंष्ट्रलक्षण– जिसके डंक मारतेही अंगारसी जलने लगे नंतर उपरको विदीर्ण करता हुआ चढके बहुतकाल पश्चात् डंकहीपर आके ठहर जावे तो वृश्चिक ( बिछू )के काटनेका विष जानो.

असाध्यलक्षण– जिसके हृदय, नाक और जीभमें बिछू काटे और वहांसे मांस गिरने लगे तथा अत्यंत पीडा हो तो असाध्य जानो.

५ मेंडकदंष्ट्रलक्षण– जहां काटे वहां पीडायुक्त शोथ, तृषा, निद्राधिकता और वमन हो तो विषहरे मेंडकने काटा जानो.

६ नक्रदंष्ट्रलक्षण– शरीरमें दाह और दंशस्थानपर पीडायुक्त शोथ हो तो विषहरे मकर काटा हुआ जानो.

७ जलौकादंष्ट्रलक्षण– दंशस्थानपर कंडूयुक्त शोथ, ज्वर और मूर्छा हो तो जलौका (जोंक)के काटनेका विष जानो.

८ पल्लीदंष्ट्रलक्षण– दंशस्थानपर दाह तथा पीडायुक्त शोथ होकर शरीरसे पसीना निकले तो पल्ली (छिपकली, विषमरा)के काटनेका विष जानो.

९ शतपददंष्ट्रलक्षण– कनखजूरेके काटनेसे दंशमें पसीना, पीडा और दाह होती है.

१० मशकदंष्ट्रलक्षण– दंशस्थानपर खाज, शोथ और मंद मंद पीडा हो तो मच्छरने काटा जानो.

११ वनमशकदंष्ट्रलक्षण– विषहरे वनमच्छरके काटनेसे दंशस्थानपर पित्तिके समान लाल, घावसदृश, गहरी पीडायुक्त मंडल होता है.

१२ सविषमक्षिकादंष्ट्रलक्षण– विषहरी मक्खी या भौंरा मक्खीके काटनेसे दंशस्थानपर दाहयुक्त काला व्रण, ज्वर, मूर्छा होती है. इसका काटाहुआ मनुष्य मरणप्राय अरिष्ट पाता है या मर जाता है.

१३ सिंहव्याघ्रादिदंष्ट्रलक्षण– सिंहव्याघ्रादिके काटनेसे दंशस्थानमें घाव पककर उसमेंसे पीवका वहाव और ज्वर होते हैं.

१४ उन्मत्त श्वानादिदंष्ट्रलक्षण– पागल कुत्ते तथा श्यालके काटनेसे उस दंशस्थानसे श्याम रक्तका वहाव, हृदय तथा शिरमें पीडा, ज्वर, अंग जकडाव, तृषा वर्णविपर्यय, चक्र, दाह, दंशस्थानपर खाज, शोथ, पीडा और पाकयुक्त गांठ तथा फोडे होजाते हैं.

उन्मत्त श्वानादि परीक्षा– जिस श्वान या शृगालके मुखसे लार गिरे अंध तथा बधिर होकर चहुंओर भगता फिरे पोंछ सीधी होजावे जिसकी ठुड्डी गरदन शिर अधिक पीडित होनेसे मुख नीचेकोही रहे तो उसे उन्मत्त (पगला, बावरा, दिवाना) जानो.

श्वानदंष्ट्रअसाध्यलक्षण– जिसको पागल कुत्ता काटे उस पुरुषको जल,

काच तैलादिमें कुत्ता दीखपडे उसके देखतेही पुकारने लगे, श्वानकीसी चेष्टा करने लगे और पानीसे डरे तो जानो कि यह रोगी असाध्य है नहीं बचेगा.

विषभक्षण करानेवालेकी परीक्षा— मुखकी चेष्टा तथा वाणी बदल जावे, प्रश्नका उत्तर न देसके, जिसके मुखसे ठीक ठीक वाक्य न निकले, इधर उधर देखने लगे, पृथ्वीको अपनी अंगुलीसे खोदने लगे, घरके बाहर निकलना चाहे, हसने लगे और चित्त घबराय जावे इत्यादि लक्षण जिसमें दृष्टि पडे उसे जानलो कि इस मनुष्यने अवश्य विष (जहर) खिलाया है.

इति नूतनामृतसागरे निदानखंडे स्थावरजंगमविषलक्षणनिरूपणं नाम चतुश्चत्वारिंशस्तरंगः ॥ ४४ ॥

सकलरोगनिर्णययुतोऽयं निदानखण्डः समाप्तः ३

## सूचना— बाचक महात्मागण !

विदित होकि नूतनामृतसागरके इस चतुर्थ खंडमें निदानखण्डोक्त समस्त रोगोंकी चिकित्सा (रोगको नाशकारिणी क्रिया) भली भांति विस्तारपूर्वक वर्णन किई गई हैं इसीलिये इसे "चिकित्साखंड" संज्ञा दी गई है.

इस खण्डमें ४४ तरंग हैं जिनमेंसे जिन जिन तरंगोंमें जिन जिन रोगोंकी चिकित्सा उल्लेखित किई है तिनका व्योरा तो आप तरंगके शीर्ष श्लोकसे ज्ञात करही लेवेंगे परन्तु विशेषतः यह कि जहां कहीं श्लोकमें आदि तथा प्रभृति शब्दभी योजित दृष्टिगोचर हो तहां स्वयं विचार लीजियेगा कि इस तरंगमें श्लोककथित रोगोंसेभी कुछ अधिक रोगोंकी चिकित्सा दी गई है. किंबहुनोल्लेखेन.

श्लोकः ॥

शंखं चक्रं जलौकां दधदमृतघटं चापि दोर्भिश्चतुर्भिः
सूक्ष्मस्वच्छातिहृद्यां सुकपरविलसन्माल्यमम्भोजनेत्रम् ।
कालांभोदोज्ज्वलाङ्गं कटितटविलसच्चारुपीताम्बराढ्यं
वन्दे धन्वन्तरिं तं निखिलगदवनप्रौढदावाग्निनीलम् ॥ १ ॥

धन्वन्तरिजीका चित्र ३. औषधालय चित्र ४.

## ॥ अथ चिकित्साखण्डः ॥

तत्रादौ चिकित्सालक्षणम्—

या क्रिया व्याधिहारिणी सा चिकित्सा निगद्यते ।
दोषधातुमलानां या साम्यकृत् सैव रोगहृत् ॥ १ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशे.

भाषार्थः—जो क्रिया व्याधिको हरण करनेवाली हो सो चिकित्सा कहाती है. क्योंकि जो चिकित्सा वात, पित्त, कफ तथा सप्तधातु और मलको यथायोग्य करनेवाली होगी वही रोगको दूर करेगी (ऐसा भावप्रकाशमें) लिखा है.

पृथग्दोषैः प्रभूतानां ज्वराणां हि यथाक्रमात् ।
तरंगे प्रथमे चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः— वातादि पृथक् पृथक् दोषोंसे उत्पन्न भये जो वात, पित्त, कफ, ज्वर, तिनकी चिकित्सा इस पहिले तरंगमें यथाक्रमसे लिखते हैं.

### ॥ ज्वरयत्न ॥

अब प्रथम ज्वरादि रोगोंके यत्न अमृतसागर मूलग्रंथमें लिखे अनुसार दर्शाते हैं.

सामान्यज्वरयत्न १— ऊष्ण जल पिलाना, हलके लंघन कराना, मलके बलानुसार हलका पथ्य कराना, वायुविबंधक स्थानमें रखना, उत्तम महिन वस्त्रपर सुलाना, ज्वर आनेसे तीन दिनतक कडवी, कसैली औषध तथा विरेचन (जुलाव) न देना पश्चात् “२ मासे सोंठ और १ मासे धनियांका” क्काथ बनाकर पिलावे तो सामान्यज्वर दूर होकर भूक लगेगी.

वातज्वरयत्न १— वातज्वरवालेको लंघन मत कराओ पर हलकी वस्तु खानेको दो और चिरायता, नागरमोथा, नेत्रवाला (कमलतंतु) दोनों कटाई, गिलोय (गुर्वेल) और सोंठ ये सब औषध छदाम छदामभर लेकर क्काथ बनाओ और ५ दिनतक पिलाओ तो वातज्वर दूर होगा.

---

१ वात, पित्त, कफसे जो पीडा उत्पन्न हो सो व्याधि और मानसी चिंताको आधि कहते हैं. २ जिस घरमें वायुका समावेश अधिक न हो.

अथवा २– सोंठ, नीमकी छाल, धमासा, पाठा, कचूर, अडूसा, अरंडी-की जड और पोहकरमूल छदाम छदामभर लेके क्वाथ बनाकर दो.

तथा ३– छोटी पीपल औ शुद्ध किया हुआ सिंगीमुहरा पानीमें खरल करके आधीरती प्रमाणकी गोलियाँ बनाके नित्य १ गोली ५ दिनतक खिलाओ यह हिंगलेश्वर रस है.

तथा ४– १ छदामभर शतावरी और १ छदामभर गुर्वेलका क्वाथ बनाके उसीमें छदामभर जूनागुड मिलाओ और पांच दिनतक पिलाओ.

तथा ५– बडादाख, पीपल, पितपापडा, और सोंफ ये सब छदाम छ-दामभर लो और क्वाथ बनाकर पिलाओ.

उक्त पांच उपायोंमेंसे एक एक यत्नही वातज्वरको नष्ट कर सक्ता है.

२ पित्तज्वरयत्न– निम्नलिखीत २१ यत्नसे पित्तज्वर नष्ट होगा.

यत्न १– नागरमोथा, धमासा, पित्तपापडा, कमलतंतु, चिरायता, और नीमकी छाल छदाम छदामभरका क्वाथ बनाकर पिओ.

तथा २– छदामभर खैरसारका चूर्ण, २ मासे कुटकी, और २ टंक मि-श्रीका चूर्ण बनाके सेवन करो.

तथा ३– १ टंक चंदन, १ टंक खश, और दो पैसेभर मिश्रीका चूर्ण बनाके ४ पैसेभर फालसेके रसमें डालके पियो यह त्रिंशतग्रंथमें लिखा है.

तथा ४– चांवलकी खीलोंके पानीमें मिश्री डालकर पिओ.

तथा ५– कुटकी, किरवारेकी गिरी, नागरमोथा, हर्रेकी छाल, और पि-त्तपापडा छदाम छदामभरका क्वाथ बनाकर पिओ तो उक्त ज्वर, प्यास, दाह, प्रलाप, (बकबाद) मूर्छा सर्व नाश होवें. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

तथा ६– गेंहूका आटा और मिश्री पानीमें डालकर पकाओ. पूर्ण परि-पक्व होनेपर उतारके ठंडा होनेके पश्चात् पीजाओ. यह हरीरा कहाता है.

तथा ७– मीठे अनारका शर्वत् (रस) पिओ तो दाहभी शांत होगी.

तथा ८– यदि केवल दाहरूपी ज्वर हो तो अति सुन्दर, चतुर, स्वरूपवती, पुष्पहार तथा महीन वस्त्र धारणी श्यामा (१६ वर्षकी अवस्थावाली) स्त्रीसे मैथुन करो. योंही तोता, मैना, किम्बा बालककी मधुर वाणी सुनना, पु-

ष्पवाटिकाकी वायु सेवन करना, पुष्पहार तथा कमलपुष्पादि धारण करना, कपूरादि सुगंधित पदार्थ सूंघना, मनोहर शृंगाररस युक्त कथा सुनना, सुन्दर स्त्रियोंके समीप वार्तालाप करना, और जलके फुहारोंके समीप बैठना इत्यादि उपायोंसेभी दाहज्वर नाश होकर शीतलता प्राप्त होती है.

तथा ९– फालसेके रसमें सेंधानमक डालकर पिओ.

तथा १०– मूंगकी दालके पानीमें मिश्री मिलाकर पिओ.

तथा ११– दाखके रसमें मिश्री डालकर पिओ.

तथा १२– पित्तपापडा, नागरमोथा और चिरायता ये तीनों ५ टंक लेके क्वाथ वनाकर ३ दिन पिओ. ये सब यत्न ज्वरतिमिरभास्करमें लिखे हैं.

तथा १३– रक्तचंदन, पद्मकाष्ठ, धनियां, गिलोय और नीमकी छाल छदाम छदामभर लेकर क्वाथ बनाकर ५ दिन पिओ तो पित्तज्वरके व्यतिरिक्त दाह, प्यास और वमनभी नष्ट होवें. यह यत्न लोलिम्बराजमें लिखा है.

तथा १४– यदि पित्तज्वर अति दाहयुक्त हो तो रोगीको कमलपुष्पसैयापर सुलाओ.

तथा १५– अथवा केलेके कोमल पत्रोंपर सुलाओ.

तथा १६– अथवा उत्तम पुष्पवाटिकामें रक्खो.

तथा १७– अथवा खशकी टट्टियोंकी शीतलतामें रक्खो.

तथा १८– अथवा गुलाबका तेल मर्दन करो.

तथा १९– अथवा १०० या १००० वारके धोये हुए घृतका मर्दन करो.

तथा २०– नीमके कोमल पत्तोंको पीसके पानी डालो, इस जलको मठाकी रीतीसे मंथन करो तब इसमें जो फेन निकलेगा उस फेनको रोगीके शरीरमें मर्दन करो.

तथा २१– किम्वा उक्त फेनमेंही बेहडेकी विजीको पीसके शरीरपर लेप करो, ये यत्न वैद्यजीवनमें लिखे हैं.

उपरोक्त २१ इक्कीसों उपायमेंसे एक एकभी पित्तज्वरकी शान्तिके लिये विशेष उपकारी हो सक्ता है. इति पित्तज्वरयत्न.

३ कफज्वरयत्न– निम्न लिखीत ९ उपायोंसे कफज्वर नाश होगा.

कफज्वरयत्न १– नीमकी छाल, सोंठ, गिलोय, पसरकटाली, पोहकरमूल, कुटकी, कचूर, अडूसा, कायफल, छोटी पीपल, और सतावरी छदाम छदामभर लेके क्काथ बनाकर ७ सात दिन पिओ.

तथा २– कायफल, पीपल, काकडासिंगी और पोहकरमूलका चूर्ण छदाम छदामभर मधुमें मिलाके चाटो. वैद्यविनोदमें लिखा है कि उक्तौषधसे स्वास और खांसीके विकारभी नष्ट होंगे.

तथा ३– सेरभर पानी औटते हुए तीन पाव रखकर पीनेको दो. बल देखकर लंघन कराओ. लंघनके पश्चात् जब लंघन तोडो तब मूंग, मोट या कुलथीकी दालका पानी पिलाओ. दिनको मत सोने दो. पथ्यके साथही बिजौरेकी केशर (खट्टीकली)में सेंधानमक मिलाकर खिलाओ.

तथा ४– सोंठ, काली मिरच, छोटी पीपल, चित्रक, पीपलामूल, श्वेत जीरा, श्याम जीरा, लोंग, इलायची, सेकी हुई हिंग, अजवान और अजमोद बराबर बराबर लेके चूर्ण बनाओ इस चूर्णकी छदाम छदामभरकी मात्रा उष्ण जलके साथ खिलाओ तो कफज्वर नाश होकर इसके व्यतिरिक्त अन्न पाचन होकर भूख बढेगी.

तथा ५– कटियाली, गिलोय, सोंठ, पोहकरमूल और अडूसा धेले धेलेभर लेके क्काथ बनाकर सातदिन पिओ.

तथा ६– कटियाली, पीपल, कांकडासिंगी, गिलोय और अडूसा दो दो टंक लेके क्काथ बनाओ और इसे १० दिन पर्यन्त पिओ.

तथा ७– केवल अडूसेका क्काथ छदामभरकी मात्रासे १० दिन पर्यंत पिओ.

तथा ८– शीतभंजीररस २ रतीको अडूसा और सोंठके काढेके अनुपानसे ७ दिन पियो.

शीतभंजीररसविधान– सोधाहुआ पारा ५ टंक, सोधा हुआ गंधक ५ टंक, तांबेश्वर ५ टंक, शुद्ध किया हुआ सिंगीमुहरा २ टंक, सोंठ २ टंक, मिर्च ५ टंक, पीपल ५ टंक और शुद्ध सुहागा ५ टंक इन सबको बारीक पीसके चित्रकके रसकी ३ पुट दो फिर अद्रकके रसकी ७ पुट नंतर पानके रसकी ३ पुट देके १ रतीप्रमाणकी गोलियां बनावे इसेही शीतभंजीर-

रस कहते हैं. उक्त विकारके व्यतिरिक्त वादी और शीतांगके रोगोंकोभी नाशकारी है.

उक्त उपायोंसे कफज्वर नष्ट हो जावेगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे वातादिज्वरत्रययत्ननिरूपणं नाम प्रथमस्तरंगः ॥ १ ॥

## ॥ द्वन्द्वजज्वर ॥

द्वन्द्वदोषैः प्रभूतानां ज्वराणां हि यथाक्रमात् ।
तरंगे द्वितीये चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भापार्थः– वातादि दो दो दोषोंसे उत्पन्न भये जो द्वन्द्वज (वातपित्त वातकफ, और पित्तकफ) ज्वर तिनका इस दूसरे तरंगमें यथाक्रमसे यत्न लिखते हैं.

१ वातपित्तज्वरयत्न– निम्नोपाय उक्त रोगकी निवृत्ति हेतु करो.

तथा १– खरेटी (बलाबल) गिलोय, एरंडकी जड, नागरमोथा, पद्म काष्ठ, भारंगी, छोटी पीपल, खश और रक्तचंदन पांच पांच मासे लेके क्वाथ बनाओ छदाम छदामभर १२ दिवसतक पियो.

तथा २– गिलोय, पितपापडा, चिरायता, नागरमोथा और सोंठको पीसकर चूर्ण बनावे इस चूर्णमें प्रतिदिन छदामभरका क्वाथ बनाके १२ वारह दिन पर्यंत पिओ. यह पंचभद्र क्वाथ कहाता है.

तथा ३– गिलोय, पितपापडा, सोंठ, नागरमोथा, अडूसा इनके समान भाग लेके चूर्ण बनालो. इस चूर्णमेंसे छदामभरका क्वाथ बनाकर पियो.

तथा ४– पटोल, नीमकी छाल, गिलोय और कुटकी समान भाग ले चूर्ण बनाओ और छदामभर चूर्णका क्वाथ बनाकर १२ दिन पिलाओ.

तथा ४– महुआ, मुलेठी, लोद, गोरीसर (हंसराज) नागरमोथा और किरवारेकी गिरी (गूदा) समान भाग लेके छदामभरका क्वाथ बनाकर १२ दिनपर्यन्त पियो.

तथा ५– चांवलोंकी खीलोंमें मिश्री और मधु मिलाकर १२ दिन पिलाओ.

तथा ६– सोंठ, मिर्च, पीपल परस्पर तुल्य, और इन्हीं तीनोंके तुल्य मिश्रीका चूर्ण बनाकर प्रतिदिन अधेलेभर चूर्ण मधुके साथ मिलाकर १० दिनपर्यंत सेवन करे.

उक्त ६ उपायोंसे वातपित्तज्वर शांत हो जावेगा.

५ वातकफज्वरयत्न १– इस रोगवालेको १० लंघन कराओ. औटाया हुआ जल (जोकि सेरभरका आधसेर रहा हो) पीनेको दो १० दिनके पश्चात् चिरायता, नागरमोथा, गिलोय, और सोंठ बराबरका चूर्ण बनाके इसमेंसे छदामभरका क्वाथ बनाकर पिलाओ. फिर पथ्य दो और जो इस ज्वरवालेको कुछ उपद्रव उत्पन्न न हो तो ३ दिन पश्चात् फिरसे यह क्वाथ दो.

तथा २– कायफल, देवदारु, भारंगी, नागरमोथा, धनियां, पित्तपापडा, हर्हेकी छाल, सुंठि और कणाचकी जंड समान भागके चूर्णमेंसे २ टंक भरका क्वाथ पिलाओ तो वातकफज्वर खांसी, श्वास और सूजनभी नाश होगी.

तथा ३– नागरमोथा, पित्तपापडा, गिलोय, सोंठ और धमासा तुल्य लेकर चूर्ण करो इसमेंसे छदाम छदामभरका क्वाथ १० दिनतक पियो तो वातकफज्वर, उलटी, दाह, मुखशोथभी दूर होंगे.

तथा ४– कटियाली, सुंठी, गिलोय और पीपल, समान लेके चूर्ण करो इसमेंसे छदामभरका क्वाथ बनाकर पियो.

तथा ५– शालपर्णी (बूटी विशेष) पृष्टपर्णी (बूटी विशेष) दोनों कटोई[२], गोखरू वेलकी गिरी, अरणी[३], अरॡ[४], कुम्भेर और पाठा इनका क्वाथ पीपलयुक्त करके १० दिवसपर्यन्त प्रतिदिन पिलाओ.

तथा ६– यदि उक्त रोगीका मुख और तालू सूखकरके जिव्हा कठोर पडजावे तो बिजौरेकी कलीमें सोंधानमक और काली मिर्च मिलाकर जिव्हाको लेप करो तो उक्त विकारको नष्ट करेगी.

---

१ कैंवच या बहुकंटकीभी कहते हैं.

२ ऊठकटाई और पसरकटाई. ३ इसे संस्कृतमें "अग्निमन्थ और श्रीपर्णीभी कहते हैं. ४ इसे "अलाम्बु तथा आलक"भी कहते हैं. ५ इन दशों औषधिके समूहको "दशमूल" संज्ञा दी है.

तथा ७– चिरायता, गिलोय, देवदारु, कायफल और बचको समान लेके चूर करो और इसमेंसे छदामभर चूरेका क्वाथ बनाकर पिलाओ. ये सब यत्न ज्वरतिमिरभास्करमें लिखे हैं.

६ कफपित्तज्वरयत्न– इस रोगवालेको १४ लंघन कराके उष्ण जल (जोकि सेरभरका औटातेहुए आधपाव रह जावे) पिलाओ और यह क्वाथ दो.

तथा १– गिलोय, रक्तचंदन, सोंठ, कमलतंतु, कायफल और दारुहलदी, समान भागके छदामभर चूरेका क्वाथ १० दिनतक पिलाओ.

तथा २– नीमकी छाल, रक्तचंदन, पद्मकाष्ठ, गिलोय और धनियांका क्वाथ १० दिवस पर्यन्त दो तो कफ-पित्तज्वर, दाह, प्यास, उल्टीभी नाश होगी. यह लोलिम्बराजमें लिखा है.

तथा ३– गिलोय, इन्द्रयव, नीमकी छाल, पटोल[1], कुटकी, सोंठ, अगरचंदन, नागरमोथा, और पीपलको तुल्योतुल्य लेके चूर्ण बनाओ उसमेंसे ४ मासे प्रतिदिवस अष्टावशेष[2] जलके संयोगसे पिलाओ तो कफ, पित्तज्वर, खांसी, दाह, अरुचि, और हृदयपीडाभी दूर होंगी.

तथा ४– गिलोय, दोनों कटियाली, दारुहल्दी, पीपल, अडूसा, पटोल, नीमकी छाल और चिरायतेके चूर्णमेंसे प्रतिदिन छदामभरका क्वाथ प्रातःकाल तथा सायंकाल १० दिवस पिलाओ.

तथा ५– दाख, किरवारेकी गिरी, धनियां, कुटकी, नागरमोथा, पीपलामूल, सोंठ, और पीपलके चूर्णमेंसे छदामभरका क्वाथ दोनों समय दश दिनतक पिलाओ कफ, पित्तज्वर, शूल, भ्रम, मूर्छा, अरुचि और उल्टी ये सब दूर हो.

तथा ६– अथवा यह रस दो. ५ टंक हिंगुलसे निकला हुआ शुद्ध पारा, ५ टंक शोधा हुआ गंधक, ५ टंक काली मिर्च और ५ टंक शुद्ध सुहागा, इन सबोंको महीन पीसकर अद्रकके रसकी ७ पुट और पानके रस-

---

१ कडवी तुराई जिसे जंगली तुराईभी कहते हैं. स्वाद महा कटु है.

२ जो जल अपने शीतल रूपकी अपेक्षा औटानेपर १ अष्टमांश रह जावे (जैसे १ सेरका आधपाव) सो अष्टावशेष कहाता है.

की ७ पुट देकर १ रत्तीप्रमाणकी गोली बनालो, इनमें १ गोली प्रातःकाल और १ संध्याकालके समय ७ दिवसपर्यंत दो उक्त प्रत्येक यत्न कफ, पित्तज्वर नाशक होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे वातादिद्वन्द्वजज्वरयत्ननिरूपणं नाम द्वितीयस्तरंगः ॥ २ ॥

॥ सन्निपातज्वर ॥

गुणदोषैः प्रभूतस्य सन्निपातज्वरस्य हि ॥
तरंगे तृतीये चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः— त्रिदोषोंसे उत्पन्न हुआ जो सन्निपातज्वर तिसकी चिकित्सा इस तीसरे तरंगमें लिखते हैं.

स्थितिवर्णन— उक्त रोगसे दुःखित पुरुषको उत्तम स्वच्छ कूपके जलमें १ टंक सोंठ डालके औंटाओ. जब वह जल औंटकर आधा रह जावे तब छानकर रखलो, जब वह रोगी जल चाहे तब यही दो. परन्तु दिनका औंटाया हुआ जल रातको और रातका औंटाया हुआ दिनको मत पिलाओ अर्थात् रातका रातको और दिनका दिनहीको पिलाना चाहीये, वायु विबंधक स्थानमें रखो. उसकेपास १ दो चतुर मनुष्योंको सदैव रखो. इस रोगीको शीतल यत्न कदापि न करो और मणिधारण, दान, हवन, शिवाभिषेक तथा मंत्रजपादि सदैवावश्य कराओ, फिर निम्नलिखित यत्न करो.

सन्निपातयत्न १— कायफल, पीपलामूल. इन्द्रयव, भारंगी, सोंठ, चिरायता, कालीमिर्च, पीपल, कांकडासिंगी, पोहकरमूल, रासना, दोनों कटाई, अजमोदा, छठीली, बच, पाठ और चव्य समान समानका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो सन्निपातके व्यतिरिक्त वस्तु अज्ञान (किसी वस्तुका ज्ञान न रहना) पसीनाकी अधिकाई, शीत, उदरशूल, अफरा वात और कफके सर्व रोग इस क्वाथसे नष्ट होंगे.

तथा २— अर्कमूल, जवासा (यवासा किम्बा दुरालमाभी कहाता है) चिरायता, देवदारु, रास्ना, (राठ तथा एलापर्णिभी कहाता है,) निर्गुणी,

वच, अर्णी, सहजणा (शोभांजना और मुंगना) पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, अतीस और जलभंगराके २ टंक चूरका क्वाथ दोनों समय दो तो सन्निपातके व्यतिरिक्त धनुर्वात, दंतस्तम्भन[1], शीताङ्ग, प्रसूतरोग, स्वास, खास और वायु व्याध्यादि सब इससे नष्ट होवेंगे. यह लोलिम्बराजमें लिखा है.

तथा ३– जो सन्निपातमें जिव्हास्तम्भन[2] हुआ हो तो बिजौरेकी केशरमें सोंधानोंन और काली मिर्च बारीक पीसकरके रोगीकी जिव्हापर लेपन करो तो जडता निकलकर कोमलता प्राप्त होगी.

तथा ४– जो स्मृतिभ्रंश[3] हुई हो तो बच, महुआ, सेंधानोंन, मिर्च और पीपल समान समान पिसे हुए कपड छानकरके उष्ण जलके साथ नास[4] दो तो ज्ञान प्राप्त होकर सर्व भ्रान्ति दूर होगी.

तथा ५– ५ टंक पारा और ५ टंक गंधक-की कजली[5]के समान प्रमाण सोंठ, मिर्च, पीपलका चूर ये दोनों पदार्थ (कजली और चूरण) धतूरेके फलके रसकी ३ पुट देके एक दिनभर खरल करो और इस रसकी नास दो तो सन्निपात दूर हो. इसे उन्मत्तरस संज्ञा दी गई है.

तथा ६– भैरवांजनसेभी सन्निपात दूर होगा. पारा, गंधक, कालीमिर्च और पीपली तुल्योतुल्यका चूर बनाओ और इसका चतुर्थांश जमालगोटा लेके पारे और गंधककी कजली मिलाओ नंतर जंभीरीके रसमें ८ दिन खल करके नेत्रोंमें लगाओ. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ७– जमालगोटेकी १० टंक बिजी, १ टंक काली मिर्च और १ टंक पीपलामूल, इन तीनोंको जम्भीरीके रसमें सात ७ दिवस पर्यंत खरल करके इस अंजनको नेत्रोंमें लगाओ.

---

१ दांत जकडना, दतकडी बंध जाना. २ जीभ कडी पड जाना, जीभ नलौटना.

३ किसी बातका ध्यान, ज्ञान न रहना, बेसुध हो जाना, पागलसा होजाना.

४ सूंघनी, नासिकासे ऊपर खींचना.

५ पारा और गंधक दोनों साथ घर्षण करनेसे एक काला पदार्थ उत्पन्न होजाता है इसे कजली कहते हैं.

तथा ८– सरसके बीज, पीपल, काली मिर्च, सेंधानोंन, लहसन, मैनसिल और बच, ये सब बराबर लेके बारीक चूर्ण करलो नंतर २१ दिवस गोमूत्रके साथ खरल करके इस अंजनको नेत्रोंमें लगाओ.

तथा ९– ५ टंक हिंगुलसे निकाला हुआ पारा, ५ टंक पीपली, ५ टंक कालीमिर्च और ५ टंक कजली (पारे-गंधकके योगसे बनाहुआ पदार्थ) इन सबको धतूरेके बीजके तेलमें ४ घडी खरल करके १ रतीप्रमाणकी गोली बांधलो, इस गोलीको अद्रकके रसके साथ दो परन्तु इस रसपर दही और चांवलके व्यतिरिक्त अन्यान्न मत खिलाओ, यह वैद्य रहस्यमें लिखा है और पंचवक्ररस कहाता है.

तथा १०– ५ टंक हिंगूलसे निकला हुआ पारा, ५ टंक शुद्ध किया हुआ गंधक, ५ टंक सिंगीमुहरा, २ टंक जायफल और १० टंक पीपल, जिनमेंसे प्रथम पारे और गंधककी कजली करके शेष औषधि उसमें डाल दो और अद्रकके रसमें एक दिनपर्यन्त खल करके १ रतीप्रमाणकी गोली बनाकर रोगीको दो तो सन्निपातके व्यतिरिक्त शीतज्वर, विषमज्वर, विशूचिका, विषमज्वर, जीर्णज्वर, मंदाग्नि और मस्तकरोग सर्व नष्ट हो जावेंगे. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है. इसका नाम आनंदभैरवरस है.

तथा ११– यदि सन्निपातमें शीतोत्पन्न होवे तो काली मिर्च, पीपल, सोंठ हर्डेकी छाल, लोद, पोहकरमूल, चिरायता, कुटकी, कूट, कचूर और इन्द्रयव तुल्योतुल्यका कपडछान चूर्ण करके शरीरको मर्दन करो तो पसीना और शीताङ्ग दूर होंगे.

तथा १२– ५ टंक पारा, ५ टंक सिंगीमुहरा, २० टंक काली मिर्च, ४० टंक धतूरेके फलकी भस्म-को बारीक पीसके शरीरमें मर्दन करो तो अत्यंत पसीना, शीताङ्ग और सन्निपात दूर होगा.

तथा १३– पारा, सिंगीमोहरा, काली मिर्च नीला थोथा और नौसादरका बारीक चूर्ण, धतूरे और लहसनके रसमें मसके टिकिया बनाओ नंतर रोगीके मस्तकपर क्षौर बनवाके वह रोटी १ प्रहरपर्यन्त रखो तो म-

१ साल्मलिकाष्ठ अर्थात् सेमर वृक्षकी लकडी.

हासन्निपात दूर हो. इस प्रयत्नमें ध्यान रक्खो कि जो रोगीके शरीरमें ताप प्राप्त होके चैतन्य हो जावे तो वह अवश्य बच जावेगा और जो ताप न हो तो अवश्यही मृत्युको प्राप्त हो जावेगा.

तथा १४– लहसन, राई और मुंगनेकी जडको पीसके गोमूत्रमें रोटी बनाओ और १३ वें नियमानुसार उपचार करो तो उपरोक्त फल होगा.

तथा १५– सन्निपातके रोगीको बिच्छू कटावे तो महाभयंकर सन्निपात दूर हो जावेगा.

तथा १६– एवं उक्त रोगीको सर्प कटानाभी वैद्यक शास्त्रमें लिखा है परन्तु लोकविरुद्ध है अतएव विचारके करना चाहिये.

तथा १७– लोहेकी तप्त शलाका रोगीकी पगथली (पैरोंके तलुए) या भौंके बीचमें अथवा ललाटके मध्यमें चेक (लगा) देओ और यंत्र मंत्रादिकसेभी सन्निपात नष्ट होता है.

वैद्यको चाहिये कि इन सर्व बातोंपर पूर्ण ध्यान देके अपनी बुद्धिबलके विचारसे जो प्रयत्न योग्य समझे सो करे परन्तु सन्निपातके रोगीको दिनके समय कदापि निद्रा न लेने देवे और आम तथा कफनाशक प्रयत्नोंको अवश्य करे तथा दोषानुसार लंघन करावे.

सुश्रुतादि ग्रंथोंमें सन्निपातको एकही माना है परन्तु अन्यान्य ऋषियोंके मतानुसार संधिगादि १३ प्रकारका सन्निपात लिखा है सो अब हम उन तेरहोंके जुदे जुदे प्रयत्न लिखते हैं.

१ संधिगसन्निपातके यत्न– हरडेकी छाल, गिलोय, मुंगना, चित्रक, लज्जालु[1], सोंठ, देवदारु, कुटकी, कचूर, अडूसा, वायविडंग, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, दोनों कटाई, बीलकी गिरी, अरणी, अरलु, कुम्भेर, पाठा और पीपल. तुल्योतुल्यका चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके दोनों समय पिलावे तो सर्व लक्षणयुक्तभी संधिगसन्निपात दूर होगा.

---

१ जो बहुधा लोकमें "लजनी" के नामसे प्रसिद्ध है. इस बूटीमें यह गुण है कि जो इसके एक पत्रकोभी छूदो तो सर्व लताभर कुम्हलासी जावेगी, मानो वह तुम्हारे स्पर्शसे लज्जित होकर सकुच गई हो, इसीलिये इसे लजनी ऐसा नाम दिया गया है.

२ अंतकसन्निपात– वाला रोगी मर जाता है उसकेलिये कोई यत्न नहीं तथापि किसी वैद्यकी बुद्धिमें आवे तो अवश्य करे.

३ रुग्दाह– हरडेकी छाल, पित्तपापडा, नीमकी छाल, कुटकी, देवदारु, गिरवारेका गुदा, द्राक्ष और नागरमोथा तुल्योतुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके दोनों समय पिलाओ.

४ चित्तभ्रम– ब्राम्ही, बच, लजवंती (लजनी) त्रिफला, कुटकी, खरेटी, अमलतासकी गिरी, नीमकी छाल, नागरमोथा, कडुबीतुराईकी जड, द्राक्ष, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, दोनों कटाई, गोखरू, बीलकी गिरी, अरणी, अरलु, कुम्हेर और पाठा समानके चूरेमेंसे २ टंकका क्वाथ दोनोंसमय ११ दिवस पर्यंत सेवन कराओ.

५ शीतांगसन्निपात– यहभी महाअसाध्य है इसका रोगी बचना दैवाधारही है तथापि कुछेक यत्न लिखते हैं.

यत्न १– उक्त रोगीको बिच्छू कटाओ और बारीक पिसा हुआ सिंगीमुहरा तेलमें मिलाके शरीरमें मर्दन करो तथा यह यत्न करो.

तथा २– सिंगीमुहरा, लहसन और राईको गोमूत्रमें पीसकर रोटीसी बनाके रोगीके क्षौर किये मस्तकपर धर दो, जब रोगीका शरीर उष्ण होजावे तब उसे निकाल लो, और शरीर उष्ण न हो तो वह रोगी निश्चय मर जावेगा.

तथा ३– अथवा ५ टंक पारा, ५ टंक सिंगीमुहरा, २० टंक काली मिर्चीं, और ४० टंक धत्तूरेके फलोंकी भस्म इन सबोंको बारीक पीसके शरीरमें मर्दन करो तो शीतांगसन्निपात दूर हो.

६ तन्द्रिक– भारंगी, गिलोय, नागरमोथा, कटियाली, हर्डेकी छाल, और पोहकरमूल समानके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाकर पिलाओ.

७ कण्ठकुब्ज– काकडासिंगी, चित्रक, हरडेकी छाल, अडूसा, कचूर, चिरायता, भारंगी, दारुहलदी, कटियाली पोहकरमूल, नागरमोथा, कूडा (इन्द्रवृक्षकी छाल) इन्द्रयव, कुटकी, और काली मिर्चे, तुल्योतुल्यके चूर्णमेसे २ टंकका क्वाथ बनाके दोनों समय ८ दिनपर्यंत पिलाओ.

८ कर्णिकसन्निपात– रास्ना (राठ, रालापर्णी और सुगंधाभी कहते हैं)

असगंध, नागरमोथा, दोनों कटाई, भारंगी, कांकडसिंगी, हर्डेकी छाल, बच, पोहकरमूल, और कुटकी, बराबरके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके दोनों समय ३० दिनतक दो. इसी कर्णिक तथा अन्य सन्निपातमेंभी कानके तले सूजन आ जाती है इसे वैद्यकशास्त्रमें कर्णमूल कहते हैं, आगे इसका उपाय देखो.

कर्णमूलयत्न– हलदी, हिंगनबेटके वृक्षकी जड, कूट, मुंगनेकी जड, सेंधानमक, दारुहलदी, देवदारु, और इन्द्रायनकी जडको समान लेके आंकडेकेदूधमें खरल करे और कर्णमूलपर ठंडाही लेप करो तो कर्णमूल नाश होगा.

अथवा– कर्णमूलके उत्पन्न होतेही जोंक लगाके उसका रुधिर निकलवा डालो तोभी कर्णमूल नष्ट हो जावेगा.

९ भग्ननेत्रसन्निपात– दारुहल्दी, जंगली या कडवी तुराई किम्वा तूमडी, पत्रज, नागरमोथा, कटियाली, कुटकी, हलदी, नीमकी छाल और त्रिफला तुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ दोनों समय १५ दिवसपर्यंत पिओ.

१० रक्तष्ठीवी– नागरमोथा, पद्मकाष्ठ, पित्तपापडा, रक्तचन्दन, महुआ, कमलतंतु, शताबरी, मलयागिरी चंदन, और बकायनकी छाल तुल्यके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके १५ दिवसपर्यंत पिलाओ,

अथवा– दूबके रस या अनारके रसका नास दो.

११ प्रलाप– नागरमोथा, कमलतंतु, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, दोनों कटियाली, वेलकी गिरी, अरलु, कुम्भेर, पाठा, सोंठ, पित्तपापडा, चंदन, और अडूसा, तुल्यमेंसे प्रतिदिन १ टंकका क्वाथ बनाकर १० दिनपर्यंत पिलाओ.

१२ जिव्हक– बच, कटियाली, जवासा, रास्ना, गिलोय, नागरमोथा, सोंठ, कुटकी, काकडासिंगी, पोहकरमूल, ब्राह्मी, भारंगी, नीमकी छाल, अडूसा, और कचूरके चूर्णमेंसे दो टंकका क्वाथ प्रतिदिन १० दिवसपर्यंत सेवन करो.

१३ अभिन्याससन्निपात– भारंगी, रास्ना, जंगलीतुराई, देवदारु, हल्दी, सोंठ, पीपल, अडूसा, इन्द्रायणकी जड, ब्राह्मी, चिरायता, निमकी छाल, कमलतंतु, कुटकी, बच, पाठा, आल, दारुहलदी, कटियाली, गिलोय, नि-

सोत, झाँउवृक्षकी जड, पोहकरमूल, नागरमोथा, जवासा, इन्द्रयव, त्रिफला और कचूर तुल्योतुल्यके चूर्णमेंसे २ टंक (प्रतिदिन १२ दिनतक दोनों समय )का क्वाथ बनाकर पिलाओ. अथवा यह नास दो.

अभिन्यासनाशक नास— काली मिर्च, महुआ सेंधानोंन, चित्रक, जायफल और पीपल, इन सबोंको बारीक पीसके उष्ण जलमें नास दो.

अष्टज्वरनाशक चिन्तामणिरस— हिंगुलसे निकालाहुआ शुद्ध पारा, सोधाहुआ गंधक, अभ्रक, ताम्बेश्वर, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, हर्डाकी छाल, आंवला और शुद्ध जमालगोटा तुल्यभागको दडघलके[2] पत्तोंके रसमें २ प्रहरतक खरल करके धूपमें सुखाकर १ रतीप्रमाणकी गोली बनालो. यह एक गोली देनेसे आठोंप्रकारके ज्वर, उदर शूल, अजीर्ण और आमवात आदि सर्व रोग नष्ट होंगे ऐसा वैद्यरहस्य तथा वैद्यविनोदमें लिखा है.

अमृतसंजीवनीगुटिका— २ टंक हिंगुलसे निकलाहुआ शुद्ध पारा, २ टंक शुद्ध गंधक, २ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १ टंक काली मिर्च और चार टंक कालीमिर्च लेके प्रथम पारे और गंधककी कजली बनाओ और उसमें उपयुक्तौषध मिलाके इन सबोंको ब्राह्मीके रसमें १ पुट और १ पुट चित्रककी देके १ रती प्रमाणकी गोली बनाओ. नंतर इस गोलीको अद्रकके रसके संयोगसे दो तो सन्निपात, मूर्छा, आमवात, वायशूल, शीतज्वर, विषमज्वर, और मंदाग्नि ये सब रोग दूर होवेंगे. रसमंजरीमें लिखा है कि इस अमृतसंजीवनीसे मृतभी जीवीत हो सक्ता है.

कालारीरस— १२ मासे शुद्ध पारा, २० मासे शुद्ध गंधक, १२ मासे शुद्ध सिंगीमुहरा, २० मासे काली मिर्च, ४० मासे पीपल, १६ मासे लौंग, १३ मासे धतूरेके बीज, २० मासे शुद्ध सुहागा, २० मासे जायफल, और १२ मासे अकलकरा लेके प्रथम पारे और गंधककी कजली बनाओ और उसीमें उपरोक्त औषध पीसकर अद्रकके रसमें ३ दिन, नीबूके रसमें तीन

---

१ यह एक वृक्ष है जो बहुधा नदियोंके तीरके समीप होता है.

२ गोमां कहते हैं यह लंबा हात १॥ आसरे ऊंचा होता है. बिचबिचमें इस्की दंडीपें फूल होते हैं ओर दो दो पत्ते होते हैं. यह एकप्रकारका जंगली साग हैं जो मारवाड देशमें "दडघल" नामसे प्रसिद्ध है.

दिन और केलीके रसमें तीन दिन खल करो, नंतर १ तथा दो रतीप्रमाणकी गोली बनाके १ गोली रोगीको खिलाओ तो बादी और सन्निपातके रोग दूर हों. यह योगचिंतामणिमें लिखा है.

त्रिपुरभैरवरस— ४ पैसेभर काली मिर्च, ४ पैसेभर सोंठ, ३ पैसेभर शुद्ध तेलिया सुहागा, और १ पैसेभर शुद्ध सिंगीमुहराको महीन पीसकर नीबूके रसमें ३ दिन अदरकके रसमें ५ दिन और पानके रसमें ३ दिन खल करो और १ रती प्रमाणकी गोली बनाकर १ गोली अद्रकके रसमें दो तो सन्निपात दूर हो.

संज्ञाकरणरस—शुद्ध सिंगीमुहरा, सेंधानमक, कालीमिर्च, रुद्राक्ष, कटाली, कायफल, महुआ, और समुद्रफल समान महीन पीस छानके आकके खारकी तीन पुट दो नंतर १-२ तथा तीन रत्ती (आवश्यकतानुसार) कान तथा नाकके छिद्रमेंसे फूंकद्वारा अंतर प्रविष्ट करो तो संज्ञा[1] होकर सन्निपात दूर होगा.

ब्रह्मास्त्ररस— ३ टंक पारेकी भस्म, ३ टंक शुद्ध गंधक, ६ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा और १२ टंक काली मिर्च इन सबोंको बारीक पीसके कलहारी[2], बंदाल[3], और ज्वालामुखी[4] इन तीनोंके रसमें खल करो तदनंतर अद्रकके रसकी २१ पुट देके १ रतीप्रमाणकी गोलियां बांधलो इसकी गोली देनेसे सन्निपात दूर होगी.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे सन्निपातज्वरयत्ननिरूपणं नाम तृतीयस्तरंगः ॥ ३ ॥

॥ आगन्तुकज्वर ॥

आगन्तुकप्रभृतीनां ज्वराणां हि यथाक्रमात् ।
तुर्ये तरंगे वै चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब शस्त्रादि चोटसे उत्पन्न हुए जो आगन्तुक ज्वर तिनका यत्न लिखते हैं.

---

१ मनुष्य तथा वस्तुओंके नाम पहिचानना. बोधमय होना.

२ कलाली तथा लांगली नामसे प्रख्यात है. ३ कंटकफल या बनालका फल करके प्रसिद्धि है. ४ एक बूटी है जो बहुधा तलाइयोंमें ऊगती है.

चोटपर यत्नानुपान– इस ज्वरसे पीडित रोगीको लंघन मत कराओ, कसैली और ऊष्णौषध न दो. मधुर चिकनी वस्तु (हरीरा, ओंटा, हलुआ) खानेको दो चोटपर सेको, लेप करो अथवा पट्टी बांधो, ओर सीवन लगाओ.

भूतादिबाधाजन्यज्वरानुपान– इस ज्वर वालेको बांधके ताडनादि करो, नास दो, अंजन लगाओ, तथा यंत्र मंत्रादिक उपयोग करो तो भूतबाधा दूर हो.

भूतबाधानाशकमंत्र– "ओं ह्रां ह्रीं ह्रूं नमो भूतनायक समस्तभुवन-भूतारिसाधय २ हुं ३" इस मंत्रको पढके मयूरपक्षका झाडा दो तो भूत खडा न रहेगा.

नृसिंहरक्षामंत्र– "ओं नमो नारसिंहाय हिरण्यकशिपुवक्षस्थलविदारणाय त्रिभुवनव्यापकाय भूतप्रेतपिशाचशाकिनीकोलोन्मूलनास्तम्भोद्भवसमस्त-दोषान् हन हन सरसर चलचल कम्पकम्प मंथमंथ हुं फट्फट्फट् ठः ठः म-हारुद्रो जापयति स्वाहा" इस मंत्रको पढकर मयूरपक्षका झाडा दो तो भूत निकल जावे.

भूतको बुलवाने (भाषण कराने)का मंत्र– "ओं नमो भगवते भूते-श्वराय कलिकलिताक्ष्याय रौद्रदंष्ट्रकरालवक्त्राय त्रिनयनभूषिताय धगधगित पिशंगललाटनेत्राय तीव्रकोपानलायामिततेजसे पाश शूल खट्वांग डमरुक धनुर्बाण मुद्गर भयदंड त्रासमुद्राव्यग्रदशदोर्दंड मंडिताय कपिलजटाजूट कूटार्ध चन्द्रधारिणे भस्मरागरंजितविग्रहाय उग्रफणिपतिघटाघोषमंडितकंठदेशाय जयजय भूतडामरेश आत्मरूपं दर्शयदर्शय नृत्ययनृत्यय सरसर बलबल पा-शेन बंधबंध हुंकारेण त्रासयत्रासय वज्रदंडेन हनहन निशितखड्गेन छिंधिछिं-धि शूलाग्रेण भिद्यभिद्यमुद्गरेण चूर्णयचूर्णय सर्वग्रहाणां आवेशय आवेशय" इस मंत्रसे गऊके घृतमें गूगल[१] मिलाके (जिसे भूत लगा हो उसके पास) धूप दो और इसी मंत्रसे उर्द मंत्रित कर करके उसपर फेकते जाओ तो वह बोलने लगेगा तब उससे जो कुछ वृत्तान्त पूछना हो सो पूछलो. और फिर पूर्वोक्त मंत्रसे उसे निकाल दो.

भूतबाधानाशक अंजन तथा नास– लहसनके रसमें हींग पीसके

---

१ इस धूनीमें होसके तो नीमके सूखे पत्र और सांपकी कांचलीभी डालदो.

नाकसे सुंघाओ अथवा नेत्रोंमें अंजन लगा दो तो भूत भाग जावेगा.

भूतबाधानाशकतंत्र ८ तुलसीके पत्र, ८ कालीमिर्च और सहदेईकीजड (रविवारके दिन पवित्र होकर लो) इन तीनोंको एकत्र करके कंठमें बांध दो तो भूत दूर हो. यह तंत्रोपचार ग्रंथोंमें लिखा है.

विषज्वरयत्न– इस ज्वरवालेको लघु वमन तथा विरेचन दो. विषानुसार उसका उतार दो उतार इस ग्रंथके अंतमें लिखेंगे.

कामज्वरयत्न– कामज्वरित पुरुषको अत्यंत सुन्दर, रूपवती, तरुणी स्त्रीसे सम्भोग कराओ और कामज्वरित स्त्रीको पतिसे सम्भोग कराओ.

क्रोधज्वरयत्न– उक्त रोगीको प्रिय मधुर मनोहर वचनोंसे समझाओ अथवा उसके अपराधीसे प्रार्थना अराओ.

शोकज्वरयत्न– उक्त रोगीको धैर्य दिलाकर ज्ञानोत्पादनी कथा नीत्यादि सुनाओ अनेक मिष्टान्न रुचिवर्धक पदार्थ खिलाकर पुष्प वाटिकादिमें भ्रमण कराओ तो शोक निवारण होकर ज्वर जाता रहे.

भयज्वरयत्न– उक्त रोगीको बीररस संमिलित, हर्षोत्पादनी कथा वार्ता श्रवण कराके पक्ष (हिम्मत) दो तो भयजन्य ज्वर दूर हो.

शापजज्वरयत्न– जिस योग्य पुरुषके तिरस्कार करनेसे शाप हुआ है उसे मृदु भाषण, द्रव्य, प्रार्थना, शान्ति, क्षमादि यत्नोंसे प्रसन्न करनेसे शापजज्वर नष्ट होगा.

विषमज्वरयत्न– उक्त रोगीको मूंग या मोठकी दालका हलका जल पिलाओ, ठंडा पानी पीनेको न दो, और निम्नौषध दो.

तथा १– पटोल, हर्डेकी छाल, इन्द्रयव, गुरच और जवासा तुल्योतुल्यको कूटकर चूर्ण करो इस चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाकर दोनों समय ७ दिवसपर्यन्त पिलाओ तो संततज्वर दूर हो.

तथा २– कटियाली, धनियां, सुंठि, गिलोय, नागरमोथा, पद्मकाष्ठ, रक्तचंदन, चिरायता, पटोलपत्र, अडूसा, पुहकरमूल, कुटकी, इन्द्रयव, नीमकी छाल, भारंगी और पित्तपापडा समानके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ दोनों समय १० दिन पिलाओ तो संततादि शीतज्वर नष्ट हो. यह क्षुद्रादि क्वाथ है.

तथा ३– चिरायता, नीमकी छाल, कुटकी, गिलोय, हरेंकी छाल, नागरमोथा, धनियां, अडूसा, त्रायमाण, कटियाली, कांकडासिंगी, सोंठ, पित्तपापडा, प्रियंगु पुष्प, पटोल, पीपली और कचूरको तुल्य तुल्य महीन पीस छानके इसमेंसे १¼ सवा टंक प्रतिदिन शीतल जलके संयोगसे ८ दिवस तक पिओ तो विषमज्वर नष्ट होगा. इसे षोडशांग चूर्ण कहते हैं.

तथा ४– चिरायता, कुटकी, निसोत, नागरमोथा, पीपली, वायविडंग, सोंठ और नीमकी छाल, तुल्यको महीन पीस छानकर चूर्ण बनाओ और इसमेंसे १ टंक प्रतिदिन उष्ण जलके साथ ७ दिनतक लेवे तो विषमज्वर नष्ट होकर भूख बढेगी.

तथा ५– शंखियाको पीले पकेहुए भटेमें रखके बंद करदो फिर उसे अग्निमें दाबकर भरता करलो इसीप्रकार १४ भेटोंके साथ बदल बदलकर १४ बार भरता करलो नंतर उसे निकालकर उसीके समान प्रमाणकी पीपल और समानही हिंगुल ये तीनों पदार्थ (पकाहुआ शंखिया १ पीपल और २ हिंगुल) बारीक पीसकर पानके रसके साथ राईप्रमाणकी गोली बनालो, रोगीको ज्वरका जाडा लगनेके पूर्व एक गोली बतासेमें रखकर खिलादो तो अन्येद्यु, तृतीयक, और चतुर्थक, इत्यादि समस्त ज्वर ३ तथा ५ गोलीके देतेही नष्ट होजावेगा. इसीको ज्वरांकुशरस कहते हैं.

जीर्णज्वरयत्न– १ भाग सोनेके पत्र, २ भाग मोतीका चूर्ण, ३ भाग हिंगुल, ४ भाग कालीमिर्च और ८ भाग शुद्ध खपरिया इन सबौषधोंको पीसकरके गौके मक्खनमें (जहांतक मक्खनकी चिकनाहट न मिटे) खल करो, उक्त पदार्थ प्रस्तुत होनेपर बट्टी बनालो यह रस जो पीपल और मधुके संयोगसे १ या दो रत्तीप्रमाणकी मात्रासे दियाजावे तो जीर्णज्वर, धातुजन्य (उपदंश, प्रमेहादि)रोग, संग्रहणी, मूत्रकृच्छ, खास, स्वास, और प्रदरादि सर्व रोगोंको नष्ट कर देगा. इसीको वसंतमालनीरस कहते हैं.

तथा २– कटियाली, गिलोय और सोंठ इन तीनोंका क्वाथ १० दिनपर्यंत पिलाओ. तो जीर्णज्वर दूर हो.

तथा ३– कचूर, पित्तपापडा, सोंठ, नागरमोथा, कुटकी, कटियाली, और

चिरायता समानके चूर्णमेंसे २ टंक प्रतिदिनका क्काथ ११ दिनतक पिलाओ तो जीर्णज्वर और विषमज्वर दोनों दूर होवेंगे.

तथा ४– १ सेरभर पीपलकी लाख, ६ सेर मीठा जल, और १० टंक लोद उन सबोंको मृत्तिकाके घटमें रखकर मंद मंद आंचसे औटाओ जब चतुर्थांश रह जावे तब उतारकर छानलो नंतर इसी रसमें सेरभर गऊका दही, सेरभर मीठा तेल, २ टंक सोंफ, २ टंक असगंध, २ टंक हल्दी, २ टंक देवदारु, २ टंक सम्भालु, २ टंक पित्तपापडा, २ टंक कुटकी, २ टंक मूर्वा[1], २ टंक मुलहटी, २ टंक नागरमोथा, २ टंक रक्तचंदन, और दो टंक रासना ये सर्व पदार्थ बारीक पीसकर डाल दो फिर (लाखका रस, घी, तेल, दही, और ये सब औषधोंका चूर्ण) उक्त सर्व पदार्थोंको हाथसे भलीभांति एकत्र मिलाकर मिट्टीके चिकने घडेमें भर दो इस घटको अग्निपर चढाके मंदमंद आंच दो और जब लाखका रसादि सर्व पदार्थ जलकर केवल तेलही तेल रह जावे तब उतारके छानकर शुद्ध तेल बनालो इसे लाक्षादि तेल कहते हैं. इस तेलके मर्दनसे जीर्णज्वर दूर होता और शरीरमें बल बढता है.

तथा ५– रोगीको प्रथमदिन ३, दूसरे दिन ४, तीसरे दिन ५ इसीप्रकारसे २१ पिम्पलीतक बढाते जाओ और इसीप्रकार एक एक प्रतिदिन कमती करते हुए ३ तीनहीतक ले आओ तो जीर्णज्वर नाश हो जावेगा. इसे वर्द्धमानपिम्पली कहते हैं. कोई कोई वैद्य इनीको ५ पिम्पलीसे बढाकर ५ हीतक लाते हैं.

तथा ६– बकरीके दूधके फेनको प्रतिदिन पिलाओ.

तथा ७– नीमके पत्र, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिम्पली, अजमोदा, सोंधानोंन, सोंचरनोंन, बिडनोंन, जवाखारनोंन, चित्रक, चिरायता और पित्तपापडा तुल्योतुल्यके महीन चूर्णमेंसे १ टंक प्रातःकाल जलके साथ दो तो जीर्णज्वर तथा विषमज्वरभी नष्ट हो. इसे निम्बादिचूर्ण कहते हैं.

तथा ८– त्रिफला, दारुहल्दी, दोनों कटियाली, कपूर, सोंठ, कालीमिर्चे, पिम्पली, पीपलामूल, मूर्वा, गुरच, धनियां, अडूसा, कुटकी, त्राय-

---

१ इसीको मधूलिका, गोकर्णी, और पीलुपर्णीभी कहते हैं.

माण, पित्तपापडा, नागरमोथा, कमलतंतु, नीमकी छाल, पोहकरमूल, मुलहटी, अजवान, इन्द्रयव, भारंगी, मुंगनेके बीज, फिटकरी, वच, तज, कमलगट्टा, पद्मकाष्ट, चन्दन, अतीस, खरेंटी, (बलाबल) वायविडंग, चित्रक, देवदारु, पटोल, चव्य, लवंग, वंशलोचन, और पत्रज ये सब औषध बराबर लेके इन सबके बोझसे अर्धभाग चिरायता लो इन सबके बारीक चूर्णमेंसे १ टंक शीतल जलके साथ प्रतिदिन लो तो समस्त ज्वरमात्र तथा विषमज्वरभी नष्ट होजावें. इसे सुदर्शनचूर्ण कहते हैं.

तथा ९– यदि उक्त यत्नोसेभी जीर्णज्वर न मिटे तो रोगीकी शक्तिके विचारानुसार वमन अथवा विरेचन कराओ तो विषम और अजीर्णज्वर नाश होवेंगे.

अजीर्णज्वरप्रयत्न– अजमोद, हरेंकी छाल, सोंचरनोंन और कचूर, बराबरका चूर्ण बनाकर इसमेंसे १ टंक उष्ण जलके साथ दो तो अजीर्णज्वर दूर हो.

दृष्टिज्वरयत्न १– सेकी हुई हिंग, काली मिर्च, पिम्पली और सोंठके बारीक चूर्णमेंसे २ टंक उष्ण जलके संयोगसे दो तो दृष्टिज्वर दूर हो.

तथा २– मोहरा[1] आदिको धोके उसका जल पिलाओ तो दृष्टिज्वर दूर हो.

रुधिरप्रकोपज्वरयत्न १– द्राक्ष, अडूसा, कटियाली, हल्दी, गिलोय, हर्डेकी छाल समानके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके अधेलेभर मधुके साथ सात दिनतक दो तो रक्तज्वर नष्ट हो.

मलज्वरयत्न १– कुटकी, पीपलामूल, नागरमोथा, हर्डेकी छाल और किरमालेका गूदा, समानके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाके पिलाओ तो मलज्वर दूर हो.

कालज्वरयत्न– गऊ, पृथ्वी, स्वर्ण, अन्न और वस्त्रादि निज श्रद्धानुसार दान करो, परमात्माका ध्यान करो, तथा सन्निपातोक्त यत्न करो. जो परमेश्वरकी कृपा हो तो आरोग्यता प्राप्त हो जावेगी नहीं तो कालज्वरसे बचना तो दुर्लभही है. इत्यागंतुकयत्न.

---

१ एक प्रकारका पत्थर (प्रसिद्ध है) जिसमें बांधकर धागा अग्निमें डालनेसे नहीं जलता है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे आगंतुकादि ज्वरयत्ननिरूपणं नाम चतुर्थस्तरंगः ॥ ४ ॥

॥ ज्वरोपद्रव ॥

**ज्वरस्योपद्रवाणां च श्वासादीनां यथाक्रमात् ।**
**तरङ्गे पञ्चमे चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थः— ज्वरके तृट् (प्यास) आदि १० उपद्रवोंकी चिकित्सा इस पांचवें तरंगमें यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

तृषोपद्रवयत्न १— धनियां, नागरमोथा और पित्तपापडाके बारीक चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाकर ३ दिन पिलाओ तो प्यास, दाह और अतिसार ये तीनों उपद्रव नाश हो जावेंगे.

तथा २— बडके अंकूर, चांवलोकी लाही और कमलगटाको बारीक पीसके मधुके साथ गोली बनाओ ओर इसमेंसे एक गोली मुंहमें रक्खो तो प्यास न लगे.

ज्वरमें उत्पन्न हुई खांसीका यत्न १— पीपल, पीपलामूल, सोंठ, भारंगी, खैरसार, कटियाली, अडूसा, कलंजी और बहेडा तुल्यके चूर्णमेंसे १ टंकका क्वाथ बनाके प्रतिदिन ७ दिनतक पिलाओ तो खांसी दूर होगी.

ज्वरमें श्वासका उपाय १— सोंठ, मिर्च, पीपल, नागरमोथा, कांकडासिंगी, भारंगी और पोहकरमूलके १ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन सात दिवसपर्यंत पिलाओ तो ज्वरकी स्वास दूर हो.

ज्वरकी हिचकीका यत्न— १ जलमें सेंधानोंन पीसके नास दो तो हिचकी बंद हो जावेंगी.

तथा २— मोरके चन्देवेकी राख और पीपल दोनों मधुके साथ चटाओ तो हिचकी और वमन दोनों दूर हों.

ज्वरमें वमनका यत्न १— १ टंकभर गुर्चका क्वाथ मधुके संग दो तो ज्वर और वमन दोनों नष्ट होवेंगे.

तथा २— चांवलोकी लाही और पीपल मधुके संग चटाओ तो ज्वर और वमन दोनों नाश होवेंगे.

ज्वरमें अतिसारका यत्न– सोंठ, अतीस, नागरमोथा, चिरायता, गिलोय और कूडेकी छालके २ टंक चूरेका क्वाथ प्रतिदिन ७ दिवसपर्यंत पिलाओ तो ज्वर और अतिसार दोनों बंद हो जावेंगे.

तथा २– पीपली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, बीलकी गिरी, नागरमोथा, चिरायता, कूडेकी छाल और इन्द्रयवके २ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो ज्वरातिसार, हुचकी, मुखशोष, वमन और श्वास खास ये सर्व दूर होवेंगे.

ज्वरमें अरुचिका यत्न– सेंधानोंन, सेकीहुई भांग, आलूबुखारा, सोंठ, पीपली और द्राक्ष, इन सबकी गोली बनाके मुखमें रखो तो अरुचि नाश हो.

ज्वरमें बंधकुष्ट और अफराका यत्न– साबुनकी बत्ती बनाके मूलद्वार (गुदा) पर रक्खो तो बंधकुष्ट और अफरा दोनों नाश होवेंगे.

ज्वरमें मूर्छाका यत्न– किरवारेकी गिरी, द्राक्ष, पित्तपापडा, हडेंकी छालके २ टंक चूर्णका क्वाथ बनाके पिलाओ तो मूर्छा जागेगी.

ज्वरमें मुखशोष और जिव्हाकी निरसताका यत्न– द्राक्ष, मिश्री तथा अनारदानेसे कुरले कराओ तो मुखशोष और निरसता दोनों मिट जावें.

ज्वरमें निद्राके अभावका यत्न– एक रत्ती आलूबुखारा और एक रत्ती भंगके चूर्णको मधुके संयोगसे चटाओ तो भूख और निद्राकी वृद्धि होकर अतिसार और संग्रहणी नष्ट हो जावेगी.

तथा २– अलसी और अंडी दोनोंके तेलको कांसे (फूल)की थालीमें घिसकर नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो निद्रा अवश्य आवेगी.

ज्वर नाश होनेके पश्चात् बल पूर्ण होनेतक रोगीको किस नियमसे रखना चाहिये–

नियम– १ पथ्य रखो, २ मैथुन न करने दो, ३ व्यायाम तथा किसीभी प्रकारका परिश्रम न करने दो, ४ बोझा न उठाने दो, ५ और अधिक भोजन न करने दो इत्यादि, विपरीत आहार विहारादिपर पूर्ण ध्यान

---

१ जहां किसीप्रकारका प्रमाण न दिया हों तहां उन सर्वौषधोंको तुल्यहीतुल्य समझो. प्रतिवारके लिखनेकी कोई आवश्यकता नहीं.

रखो नहीं तो नियमभंग होकर ज्वरकी पुनरावृत्ति हुई तो फिर आरोग्य होना कठिनही है.

इति नूत० चिकित्साखंडे ज्वरोपद्रवयत्ननिरूपणं नाम पंचमस्तरंगः॥ ५॥

॥ अतिसार ॥

षड्विधस्यातिसारस्य वातादेर्हि यथाक्रमात्।
षष्ठे तरङ्गे वै चात्र चिकित्सा लिख्यते मया॥ १॥

भाषार्थः– अब हम इस छटवें तरंगमें वातादि ६ प्रकारके अतिसारकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

वातातिसारयत्न १– अतीस, नागरमोथा, इन्द्रयव और सोंठके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ प्रतिदिन ७ दिनतक पिलाओ तो वातातिसार दूर हो.

तथा २– इन्द्रयव, नागरमोथा, देवदालीकी गिरी, आमकी गुठली और धावडेके पुष्पके दो २ टंक चूर्णको भैंसके मठाके साथ ७ दिनतक पिलाओ तो वातातिसार दूर हो.

पित्तातिसारयत्न १– बीलकी गिरी, इन्द्रयव, नागरमोथा, कमलतंतु और अतीसके दो २ टंक चूर्णका क्वाथ आठ दिनपर्यंत पिलाओ, पित्तातिसार जावे.

तथा २– रसोत, अतीस, इन्द्रयव, सोंठ, धावडेके फूलका २ टंक चूर्ण चावलोंके पानीके साथ सहता सहता ७ दिनतक पिलाओ तो अति भयंकर पित्तातिसारभी दूर होगा.

तथा ३– बीलकी गिरी, कमलतंतु, नागरमोथा, इन्द्रयव और अतीसके २ टंक चूर्णका क्वाथ ७ दिनतक दो तो पित्तातिसार नाश हो.

रक्तातिसारयत्न १– इन्द्रवृक्षकी छाल और अनारके छिलके २ दो टंकेभरके क्वाथमें ५ टंक मधु मिलाके ७ दिनपर्यन्त पिलाओ तो रक्तातिसार जावे.

तथा २– इन्द्रवृक्षकी छाल, अतीस, नागरमोथा, नेत्रवाला, लोद, रक्तचंदन, धावडेके फूल और अनारके छिलकेमेंसे दो टंकके क्वाथमें २ टंक मधु मिलाके ७ दिनपर्यन्त[1] पिलाओ तो दाह, मल और रक्तातिसार नाश हो.

१. बहुधा उसी औषधको ७ दिन (आदि) पिलाओ तो वही समझी जावेगी परन्तु ऐसे (उक्त सदृश) प्रसंगपर उतनी उतनी औषध एक एक दिनके लिये हैं.

तथा ३– १ टंक श्वेत चन्दन (पीस डालो या घिस लो) २ टंक मधु और २ टंक मिश्री एकत्र कर ८ दिवसपर्यंत चटाओ तो रक्तातिसार दूर हो.

तथा ४– मीठे अनारका पुटपाक बनाके चटाओ तो रक्तातिसार दूर हो.

तथा ५– बकरीका दुध, माखन, मधु, और मिश्री मिलाकर खिलाओ तो रक्तातिसार दूर हो.

तथा ६– २ टंक बीलकी गिरी बकरीके दूधके साथ ७ दिनतक पिलाओ तो रक्तातिसार दूर हो.

गुदा पकजानेपर यत्न १– पटोल, मुलहटी, और महुआ इन तीनोंको पानीमें औटाके शीतल होनेपर छान लो. और इस जलसे गुदा धोओ तो गुदापक्क नष्ट हो.

तथा २– गेहूंके आटेमें घी मिलाके पानीसे उसन डालो नंतर उसे रोटीके समान सेकके सहता सहता सेको तो गुदापाक नष्ट होगा.

कफातिसारयत्न १– उक्त रोगीको २ या चार लंघन कराके नंतर थोडा थोडा मूंगका पथ्य दो, और निम्न क्वाथ पिलाओ तो कफातिसार दूर हो.

तथा २– चव्य, अतीस, कूट, बीलकी गिरी, सोंठ, कूडेकी छाल, और तजके २ टंक चूरेका क्वाथ बनाकर ७ दिन पिलाओ तो कफातिसार दूर हो.

तथा ३– सेकीहुई हिंग, सोंचरनोंन, सोंठ, काली मिर्च, पीपली और अतीसके १ टंक चूर्ण, प्रतिदिन ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो कफातिसार दूर हो.

सन्निपातातिसारयत्न १– पीपली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, खरेंटी, बीलकी गिरी, गिलोय, मोथा, पाठा, चिरायता, कुडेकी छाल और इन्द्रयवके २ टंक चूर्णका क्वाथ प्रतिदिन १० दिवसपर्यंत पिलाओ तो सन्निपातातिसार दूर हो.

तथा २– बडी हर्र, सोंठ और नागरमोथाका २ टंक चूर्ण प्रतिदिन ७ दिनतक खिलाओ तो त्रिदोषज (सन्निपात) अतिसार दूर हो.

तथा ३– कुडेकी छालके (पुटपाक रीतीसे निकाले हुए) रसमें ५ टंक मधु मिलाकर प्रतिदिन १० दिनतक पिलाओ तो सन्निपातातिसार दूर हो.

शोक तथा भयातिसार– इस तरंगके आदिमें वातातिसारके जो यत्न लिख आये हैं वेही जानो.

आमातिसारयत्न– हर्रेकी छालका २ टंक चूर्ण मधुके संयोगसे ५ दिन-पर्यंत चटाओ तो आमातिसार दूर हो.

तथा २– धनियां, सोंठ, बीलकी गिरी, नागरमोथा और त्रायमाणके २ टंक चूर्णका क्वाथ ७ या १० तथा १५ दिवस (रोगानुसार) पिलाओ तो आमातिसार और उदरशूलभी बंद हो जावेगा, इसे धान्य (धना) पंचक कहते हैं.

तथा ३– बडी हर्र, मोथा, सोंठ, अतीस, और दारुहल्दीके दो टंक चूर्णका क्वाथ बनाके सात दिनपर्यंत पिलाओ तो आमातिसार दूर हो.

तथा ४– बडी हर्र, अतीस, सेकीहुई हिंग, सोंचरनोंन और सेंधानोंनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ दो तो आमातिसार दूर हो.

तथा ५– सोंठको जलमें पीसके गोला बनाओ. इस गोलेपर अरंडीके पत्ते लपेटकर धागेसे दृढ बांध दो, और उपरसे मिट्टी लपेटकर मंद मंद आंचसे पकाओ. पकनेपर उसे स्वच्छ (निर्मल) कर प्रतिदिन २ टंकके प्रमाणसे मधुयुक्त कर ७ सात दिनतक खिलाओ तो आमातिसार दूर हो.

पक्कातिसारयत्न– लोद, धावडेके फूल, बीलकी गिरी, मोथा, आमकी गुठली, और इन्द्रयवके २ टंक चूर्णको भैंसकी छाछके साथ पिलाओ तो पक्कातिसार जाय.

तथा २– अजमोद, मोचरस, सोंठ, धावडेके फूल, जामुनकी गुठली और आमकी गुठलीका २ टंक चूर्ण गऊके मठाके साथ पिलाओ तो पक्कातिसार नाश हो. यह लघुगंगाधर चूर्ण है.

तथा ३– सोंठ, जायफल, अहिफेन (आफू, अफीम) और कच्चे अनारके बीज इन सबोंको कच्चे अनारमें भरके अनारको पुटपाक कर डालो. नंतर उन चारोंको पीसके गुंजा (चिरमी) प्रमाणकी गोलीयां बना डालो. जो इनमेंसे प्रतिदिन एक एक गोली गौकी छाछके संग ७ दिनतक खिलाओ तो पक्कातिसार नष्ट हो जावेगा.

शोथयुक्त अतिसारका यत्न– सांटी, (विषखपरेकी जड) इन्द्रयव, पाठा,

वायविडंग, अतिस, नागरमोथा, और काली मिर्चके २ टंक चूर्णका क्वाथ ७ दिवसपर्यंत पिलाओ तो शोथयुक्त अतिसार दूर हो.

अतिसारमें वमनका उपाय १– आमकी गुठली, बीलकी गिरी २ टंकका क्वाथ २ टंक मधु और २ टंक मिश्रि मिलाकर प्रतिदिन ७ दिनतक पिलाओ तो वमन और अतिसार दोनों बंद होजावें.

तथा २– भूंजे हुए मूंग और चांवलोंकी लाही दोनोंको पानीमें औंटाके उसे मधुके साथ ५ दिनतक पिओ तो वमन, अतिसार, दाह और ज्वर ये सब दूर होवेंगे.

छहों प्रकारका अतिसारमात्र नष्ट करनेका उपाय– पांच टंक भ्रंगराजका रस दहीके संयोगसे सात ७ दिनतक पिलाओ तो छहों प्रकारका अतिसार नाश हो.

तथा २– २ टंक राल, १० टंक मिश्रि (इसी प्रमाणानुसार) दोनोंका चूर्ण रोगानुसार मात्रासे १० दिनपर्यंत दो तो छहों प्रकारका अतिसार नाश हो.

तथा ३– धनियां, सोंठ, पीपली, सेंधानोंन, अजमोदा, भुंजीहुई हिंग और जीरेका २ टंक चूर्ण मठेके साथ पिलाओ तो सर्व प्रकारका अतिसार, शूल, और आम दूर होकर क्षुधा लगे, और रुची बढेगी. ऐसा वृंदमें लिखा है.

तथा ४– नागरमोथा, मोचरस, लोद, धावडेके फूल, बीलकी गिरी, इन्द्रयव, आफू, और (शुद्ध पारे+गंधककी) कजलीमें इन सबका चूर्ण मिलाके ३ रती छाछके साथ १० दिनतक पिलाओ तो अतिसार, पेटका मुर्रा और संग्रहणीभी इससे नाश होगी इसे गंगाधररस कहते हैं.

तथा ५– अफीमको मृतिकाके पात्रमें सेकके खिलाओ.

तथा ६– जायफल, लवंग, धावडेके फूल, बीलकी गिरी, नागरमोथा, सोंठ, मोचरस, हिंगुल, और अफीम इन सबको पोस्तेके रसके संग खरल करके १ या २ रत्ती प्रमाणकी गोली बनालो. इनमेंसे १ एक गोली प्रतिदिन चावलके पानी अथवा छाछके साथ ७ सात दिनतक खिलाओ तो निश्चय है कि सर्व प्रकारके अतिसार दूर होवेंगे.

---

१ शाल्मलि (अर्थात् सेमर) वृक्षकी गोंदको मोचरस कहते हैं.

तथा ७– १ भाग आफू, २ भाग हिंगुल, ३ भाग लवंग, ४ भाग मोचरस, और ३ भाग मिश्रीका १ या २ रत्ती चूर्ण षष्टिक तंडुल जल अथवा छाछके साथ पिलाओ तो भयंकर अतिसारभी नष्ट होगा.

तथा ८– जायफल, खारक, और अफीम (तीनों समान भाग)के नागर बेलके पानके रसमें खल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोली बनाओ. रोगीको उक्त १ गोली प्रतिदिन छाछके साथ सात दिनतक खिलाओ तो अति भयंकर अतिसारभी नाश होगा.

मुर्रा अतिसारका यत्न– बीलकी गिरी, लोद और काली मिर्च ये तीनों १ एक पैसेभर लेकर महीन पीसकर चूर्ण बनाओ इसमेंसे १ टंक मधुके साथ चटाओ तो मुर्रातिसार दूर हो.

तथा २– २ टंक धावडेके फूलका चूर्ण दहीके संसर्गसे ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो मुर्रातिसार दूर हो.

तथा ३– ५ टंक कवीट (कैथा)का रस मधुके साथ ७ खिलाओ तोभी मुर्रा नष्ट होगा.

तथा ४– २ टंक लोद ७ दिनतक दधिके साथ खिलाओ. ये यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

अतिसाररोगमें वर्जितवस्तु– जिस पुरुषको अतिसाररोग हुआ हो वह उष्ण, भारी, चिकना पदार्थ, नवीनान्न भक्षण, घाममें घूमना, परिश्रम, स्नान, मैथुन और चिन्ता इतनी बातोंसे कदापि सम्पर्क न करे. ऐसा वैद्यविनोदमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे अतिसारचिकित्सानिरूपणं नाम षष्ठस्तरंगः ॥ ६ ॥

॥ संग्रहणी ॥

पृथक्‌दोषैः समस्तैश्च चतुर्धा ग्रहणीगदः ।
तरङ्गे सप्तमे तस्य चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

---

१ यह अतिसारका एक भेदही है जिससे पेटमें मरोडा उठता है. यह चार प्रकारका होता है जिसमें हम ऊपर चारोंकी चिकित्सा लिख चुके हैं.

भाषार्थः– वात, पित्त, कफ तथा सन्निपातसे जो चार प्रकारका संग्रहणी रोग उत्पन्न होता है उसकी चिकित्सा हम इस सातवें तरंगमें लिखते हैं.

वातसंग्रहणीयत्न १– सोंठ, गुर्च, नागरमोथा, और अतीसके २ टंक चूर्णका क्वाथ १५ दिवसपर्यंत पिलाओ तो उक्त रोग दूर होकर भूख बढेगी.

तथा २– सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रकका २ टंक चूर्ण नित्य गऊकी छाछके संयोगसे पिलाओ और उपरसे २ चारबार औरभी छाछही पिलाओ तो वातसंग्रहणी दूर हो.

तथा ३– (२ टंक शुद्ध गंधक, १ टंक शुद्ध पारदकी) कजली १० मासे सोंठ, २ टंक काली मिर्च, १० मासे पीपल, १० मासे पांचोनोंन, ५ टंक सेकाहुआ अजमोद, ५ टंक सिकी हिंग, ५ टंक सिका सुहागा और पैसेभर सिकी भंग इन सबको पीस छानके कजली मिला दो नंतर इसे २ दिनपर्यंत औरभी खल करो तो चूर्ण बन गया. इसमेंसे २ तथा चार मासे चूर्ण गउकी छाछके संयोगसे पिलाओ तो वातसंग्रहणी, मंदाग्नि, अतिसार, बवासीर, पेटकी कृमि, और क्षयी ये सब रोग दूर होजावेंगे, इसीको लाई चूर्ण कहते है.

पित्तसंग्रहणीयत्न १– रसोत, अतीस, इन्द्रयव, तज, धावडेके फूलका २ टंक चूर्ण, गउकी छाछ या मधु या चावलोंके जलके साथ १५ दिनतक पिलाओ, तो पित्तसंग्रहणी दूर हो.

तथा २– जायफल, चित्रक, श्वेत चंदन, वायविडंग, इलायची, भीमसेनी कपूर, वंशलोचन, जीरा, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, तगर, पत्रज, और लवंग तुल्यका चूर्ण बनाकर इस सब चूर्णसे दूनी मिश्री और थोडी बिनसेकी भंग ये सर्व एकत्र कर लो, इसमेंसे ४ या छः मासे चूर्ण गऊकी छाछ संग १५ दिवस पिलाओ तो पित्तसंग्रहणी दूर हो ऐसा वैद्यरहस्यमें लिखा है.

कफसंग्रहणीयत्न १– हरेंकी छाल, पिम्पली, सोंठ, चित्रक, सोंचरनोंन, और काली मिर्चका, २ टंक चूर्ण, नित्य गऊकी छाछके संग १५ दिवसपर्यंत पिलाओ तो कफसंग्रहणी दूर हो.

सन्निपातसंग्रहणीयत्न १– बीलकी गिरी, मोचरस, नेत्रवाला, नागरमोथा,

इन्द्रयव, कूडेकी छालका २ टंक चूर्ण नित्य बकरीके दूधके संग २५ दिवसपर्यंत पिलाओ तो सन्निपातसंग्रहणी दूर हो.

तथा २– १ टंक अनार दाना, १ टंक जीरा, २५ पैसेभर धनियां, १ टंकभर सोंठ, १ टंकभर काली मिर्च, मिश्रिका २ टंक चूर्ण नित्य गो छाछके संगसे १ मासपर्यंत पिलाओ तो सन्निपातसंग्रहणी, आमातिसार, पार्श्वशूल, अरुचि और पेटमेंका गोला ये सब दूर होवें.

तथा ३– गंधक, पारा, सिंगीमुहरा (तीनों सुधे हुए चाहिये) सोंठ, काली मिर्च, पीपली, सिका सुहागा, सार (लोहभस्म अर्थात् कांतिसार) अजमोद और अफीम तुल्य भाग लो और इन समस्तके तुल्य अभ्रककी भस्म लेके इन सबोंको चित्रक क्राथमें १ दिन खरल करो और काली मिर्चके समान गोली बना लो. इसको अभ्रकगुटिका कहते हैं. उक्त रोगीको इसकी १ गोली नित्य प्रति १ मासभर तक खिलाओ तो सन्निपातसंग्रहणी दूर हो.

तथा ४– (शुद्ध गंधक शुद्ध पारेकी) कजली, अभ्रक, हिंगुल, जवाखार (खार) जायफल, बीलकी गिरी, मोचरस, शुद्ध सिंगीमुहरा, अतीस, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, धावडेके फूल, घृतमें सिकी हरेंकी छाल, कवीट, अजमोद, चित्रक, अनारदाना, इन्द्रयव, धतूरेके बीज, कणकच, (करंज, केबंच, अर्थात बहुकंटकी,) और अफीम तुल्य भागका चूर्ण (उसीमें कजलीभी) पोस्तके[1] रसके साथ खल करके काली मिर्चके सदृश गोली बना लो. उक्त रोगीको नित्यप्रति १ गोली १५ दिवसपर्यंत खिलाओ तो सन्निपातसंग्रहणी, शूल, अतिसार और विसूचिका ये सब रोग दूर होंगे. वैद्यविनोदमें इसका नाम संग्रहणी कंटकरस लिखा है.

आमवातसंग्रहणीयत्न[2]– सन्निपातसंग्रहणीके पूर्वीय यत्नही जानो.

संग्रहणीमात्रपर विशेषयत्न– ८ भाग कवीट, ६ भाग मिश्री, ३ भाग अजमोद, ३ भाग पीपली, ३ भाग बीलकी गिरी, ३ भाग धावडेके फूल,

१ अफीमका डोंडा जिसके बीजको खशखश कहते हैं.

२ यह सन्निपातसंग्रहणीकाही एक भेद है.

३ भाग अनारदाने, ३ भाग डांसरेया[1], १ भाग सोंचरनोंन, १ भाग नागकेशर, १ भाग धनियां, १ भाग तज, १ भाग पत्रज, १ भाग काली मिर्च, १ भाग अजवान, १ भाग पीपलामूल, १ भाग नेत्रबाला, १ भाग इलायची, इन सबके महीन छनेहुए चूर्णमेंसे २ टंक चूर्ण नित्य गौकी छाछके साथ पिलाओ तो (सर्व) संग्रहणी, अतिसार, और गोला सर्व दूर होवेंगे. इसे कपित्थाष्टक चूर्ण कहते हैं.

संग्रहणीके रोगीको वर्जित पदार्थ— भारी आमोत्पादक, क्षुधानाशक, तथा अतिसारमें जो वस्तु वर्जित कीगई है, इन वस्तुओंसे विशेष अंतर रखके क्षुधावर्द्धक वस्तुओंका सेवन कराओ.

इति नूतना० चिकित्साखंडे संग्रहणीयत्ननिरूपणं नाम सप्तमस्तरंगः॥७॥

॥ अर्शरोग ॥

निदानखंडे प्रोक्तस्य षड्विधस्यार्शसोऽत्र वै ।
तरंगे चाष्टमे तस्य चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः— निदानखंडमें जो छः प्रकारका अर्शरोग कहा गया है इस खंडके ८ वें तरंगमें हम उसकी चिकित्सा लिखते हैं.

वातार्शयत्न १— जमीकन्दपर मट्टी लपेटकर भुरता बानाओ, उसे घृत या तेलमें लपेटके १ टकेभर नित्य प्रति २१ दिनतक खिलाओ.

तथा २— आकके पत्तोंपर पांचों नोंन लगाके इन्हींपर तेल या खटाई लगा दो और इन्हीं पत्तोंको जलाके भस्म करदो, अब इसीमेंसे १। सवा या २॥ अढाई टंक नित्यप्रति १५ दिन खिलाओ तो वातार्श दूर हो. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

तथा ३— गौकी छाछमें सेंधानोंन डालकर बहुत दिनतक पिलाओ तो वातार्श दूर हो.

तथा ४— ५ टंक हरेंकी छाल, १ टंक काली मिर्च, १ टंक पीपलामूल, १ टकेभर पीपली, १ टकेभर जीरा, १ टकेभर चव्य, १ टकेभर चित्रक, १

---

१ जिसे "डासरफल तथा तंतडीक बीज" भी कहते हैं.

टकेभर सोंठ, १ टकेभर शुद्ध भिलांवां, ऽ। पावभर पकाया हुआ भूकन्द (जमीकन्द) और १ टकेभर जवाखार इन सबोंको महीन पीसके इन सबके प्रमाणसे दूना गुड मिलाकर १ टकेभरकी गोलियां बनालो इनमेंसे १ गोली नित्यप्रति खिलाओ तो वातार्श जावे.

तथा ५– बनालेकी[1] वेलके पत्र पानीमें औटाकर उस जलसे गुदा धोओ तो अर्शके मसे दूर हों.

तथा ६– बनालेके डोडोंकी धूनी दो तो मसे दूर हों.

तथा ७– बनालेके डोडे कांजीमें पीसकर मसोंपर लेप करो तो मसे दूर हों.

तथा ८– नीमके पत्ते, कनेरके पत्ते, गुड, कडवी तुराईकी जड, इन सबको कांजीमें पीसकर मसोंपर लेप करो तो मसे झडकर गिर पडें.

तथा ९– हलदी, कडवी तुराई, अकावके पत्र, मुनगाकी जड, इनको कांजीके पानीमें पीसकर मसोंपर लेप करो तो मसे झडकर गिर पडें.

तथा १०– एरंडकी जड, मुलहटी, रास्ना, अजवान और महुआको कांजीके जलमें पीसकर उष्णकर सहते हुए मसोंपर लेप करो अथवा उन्हें सेको तो मसोंकी तडक (चमकीली पीडा) शीघ्र दूर होकर कालान्तरमें मसे झड जावेंगे. ये यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ११– हीराकसी, सेंधानोंन, पीपल, सोंठ, कूट, कलेहारीकी[2] जड, पाषाणभेद (पथरचटा) कनेरकी जड, वायविडंग, दात्यूणी, चित्रक, हरताल, चोखके चूर्णसे तिगुना तेल और इन तेलसहित औषधोंसें चौगुणा थूहर, आकका दूध और गोमूत्र लेकर सबको एकत्रितकर पकाओ (चुरालो) जब तेलमात्र रह जावे तब उतारकर छानलो. जो यह तेल मसोंपर मर्दन करो तो मसे गल जावें, बबासीर दूर हो और त्रिवलीकी पीडा मिट जावे. यह क्षारतैल वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा १२– १६ भाग पकायाहुआ जमीकंद, ८ भाग चित्रक, ८ भाग सोंठ, ४ भाग त्रिफला, ८ भाग पीपलामूल, ८ भाग शुद्ध भिलांवां, ४ भाग

---

१ बनालेके डोडे जो घोडोके मसालेमें डाले जाते हैं.

२ इसे कलाली और लांगलीभी कहते हैं.

इलायची, ८ भाग वायविडंग, ८ भाग सतावरी, १६ भाग वधायरा[1] और आठ भाग भंग इनके चूर्णमें दूना गुड मिलाकर ५ टंक प्रमाणकी गोली बांधलो, जो यह १ गोली नित्यप्रति १ मासपर्यन्त खिलाओ तो अर्श, हिचकी, श्वास, राजरोग और प्रमेह ये सब रोग दूर होवेंगे. यह बृहतसूरणमोदक वैद्यरहस्यमें लिखा है.

पित्तार्शयत्न १– २ टंक रसोतका चूर ४ घडीपर्यन्त जलमें भिगाकर यही जल नित्य २ मासपर्यंत पिलाओ तो पित्तार्श दूर हो.

तथा २– पीपलकी लाख, मुलहटी, हल्दी, मजीठ और कमलगटेकी विजीका २ टंक चूर्ण नित्य ४९ दिनतक खिलाओ तो पित्तार्श दूर हो.

तथा ३– नागकेशर, मक्खन, मिश्री प्रतिदिन ५ टंकभर ४९ दिनतक खिलाओ तो पित्तार्श दूर हो.

तथा ४– १०० टकेभर कुडेकी छालको पीसके १६ सेर पानीमें औंटाओ, अष्टमांश रहनेपर छानलो. नंतर १ टकेभर नागरमोथा, १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर काली मिर्च, १ टकेभर पीपली, ३ टकेभर त्रिफला, २ टके भर रसोत, २ टकेभर चित्रक, १ टकेभर इन्द्रयव और १ टकेभर बच इन सबको कूट छानके बारीक चूर्ण करलो. तदनंतर कूडेकी छालके जलमें गुडकी चासनी बनाकर उसमें उक्त चूर्ण, १ सेरभर मधु और १ सेरभर गऊका घी डालकर इन सब (चासनी, चूर्ण, मधु, घृत)को एकत्रित करलो. अब यह कूडेकी छालका अवलेह बन गया. यदि रोगीको इसमेंसे नित्यप्रति १ टकेभर खिलाओ तो पित्तार्श सर्वतोभाव नष्ट होगा. यही जुदे जुदे अनुपान (जैसे ऊपरसे छाछ सेवन आदि)से पांडु, संग्रहणी, क्षीणता और शोथ ये रोगभी नाशकर सक्ता है.

तथा ५– (पारे और गंधककी) कजली, बीजाबोल और मोचरस इन तीनोंका महीन चूर्ण बनाके ३ मासे नित्य मधुके संग २१ दिनतक सेवन कराओ तो पित्तार्श, अतिसार, प्रमेह, स्त्रीका प्रदर और भगंदर ये सब नाश होवेंगे.

---

१ यह एकप्रकारका काष्ट है जिसे वृद्ध दारु और गर्भवृद्धिभी कहते हैं.

तथा ६– २ रत्ती बसंतमालतीरस २ तथा ४ पिम्पलीके साथ मधु और मिश्रीके संयोगसे नित्य २५ दिवस चटाओ तो पित्तार्श और संग्रहणीभी दूर हो यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ७– जो बवासीरमें बंधकुष्ट होकर मसे ऊंचे हो जावें, खुजाल चले और रक्तश्राव होने लगे तो उन मसोंपर जोंक (जलजंतु बिशेष) लगाकर रुधिर निंकाल दो तो बवासीर दूर हो.

कफार्शयत्न १– १ टकेभर अद्रकका क्वाथ प्रतिदिन २१ दिवसपर्यंत पिलाओ तो कफार्श दूर हो.

तथा २– हलदीको थूहरके दूधके ७ पुट देके वह हल्दी मसोंपर लेप करो तो कफार्श दूर हो.

तथा ३– त्रिफला, दशमूल, चित्रक, निसोत, दात्यूणी, (जमालगोटेकी जड) ये पांचों औषध सेरभर लेके कूट छान २० वीस सेर जल और ७ सेर गुडके साथ मृत्तिकाके पात्रमें डालदो इस पात्रका मुंह बांधकर २१ दिन धरतीमें गडा रखो नंतर डमरु यंत्रद्वारा (मधसदृश) रस उतारलो. जो रोगीको नित्य १ टंक प्रमाणसे पिलाओ तो कफार्श सर्वथा नष्ट होवेगा वृन्दमें इसे दात्यूणीरस नाम दिया है.

सन्निपातार्शयत्न १– ३ टकेभर अद्रक, १ टकेभर काली मिर्च, पावभर ऽ। पीपली, १ टकेभर चव्य, ५ टकेभर नागकेशर, १ टकेभर पीपलामूल, १ टकेभर चित्रक, ५ टकेभर इलायची, १ टकेभर अजमोद और १ टकेभर जीरेके चूर्णमें ३० टकेभर गुड मिलाकर ५ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो. रोगीको प्रातःकाल १ गोली खिलाकर ऊपरसे पथ्यपूर्वक भोजन कराओ तो सन्निपातार्श, मूत्रकृच्छ्र, बादीके रोग, विषमज्वर, पांडु, गोला, प्लीहा (फिया तथा तापतिल्ली) खास, श्वास, वमन, अतिसार और हिचकी ये सर्व रोग जुदे जुदे अनुपानसे नष्ट हो जावेंगे. यह प्राणदागुटिका सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा २– त्रिफला, कालीमिर्च, पीपल, तज, पत्रज, इलायची, वच, से-

१ वैद्यरहस्यमें लिखते हैं कि उक्त दशामें इससे उत्तम कोईभी प्रयत्न नहीं है.

की हिंग, पाठा, संजी, जवाखार, दारुहल्दी, चव्य, कुटकी, इन्द्रयव, सोंफ, पांचों नोंन, पीपलामूल, बीलकी गिरी, और अजमोदका २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ पिलाओ तो बवासीर, खास, श्वास, हिचकी, भगंदर, पार्श्वशूल, गोला, उदररोग, प्रमेह, पांडु, अंत्रवृद्धि (पोथे बढना) संग्रहणी, विषमज्वर, जीर्णज्वर और उन्माद ये सर्व रोग जुदे जुदे अनुपानसे दूर होवेंगे. यह विजियाचूर्ण भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ३– १ टकेभर शुद्ध पारा, २ टकेभर शुद्ध गंधक, ३ टकेभर ताम्बेश्वर, ३ टकेभर लोहसार, ३ टकेभर सोंठ, २ टकेभर काली मिर्च, २ टकेभर पिम्पली, १ टकेभर शुद्ध सिंगीमुहरा, १ टकेभर दात्यूणी, २ टकेभर चित्रक, २ टकेभर बीलकी गिरी, ५ पैसेभर जवाखार, २ पैसेभर सुहागा और ५ टकेभर सोंधानोंन इनके महीन चूर्णको ३२ टकेभर गोमूत्र और ३२ टकेभर थूहरके दूधमें मिलाकर मृत्तिकापात्रमें रख मंद मंद आंचसे पकाओ जब वह द्रवसे दृढ दशामें आजावे तब २ मासे प्रमाणकी गोली बांधलो. १ गोली नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो महाअसाध्य सान्निपातिकार्शभी इससे नाश होगा. यह हररसकुठारयोग तरंगणीमें लिखा है.

तथा ४– शुद्ध पारा और शुद्ध गंधक समान लेकर कजली बनाकर उसे घृतसे चुपडलो और उससे दूना वीजाबोल उसी कजलीके साथ खल करके टिकिया बनाओ यह टिकिया लोहेके पात्रमें धरके आंच दो जब वह पिघलकर द्रव होजावे तब केलेके पत्तेपर ढलका दो और जम जानेपर निकाल लो यह पदार्थ प्रतिदिन ३ रत्तीप्रमाण १५ दिवसतक खिलाओ तो सन्निपातकी बबासीर दूर होगी. यह पर्पटीरस वैद्यविनोदमें लिखा है.

रक्तार्शयत्न– पित्तार्शमें जो यत्न लिख आये हैं वेही इसके यत्नभी जानो.

विशेषतः– यह है कि इसमें रक्त बहुत गिरता है सो हम आगे रक्तावरोधिकयत्न लिखते हैं जिनसे रुधिर गिरना बंद होगा.

रक्तार्शरक्तावरोधक यत्न १– पावभर गोघृत लोहेकी कडाईमें तपाकर उसीमे ४ पैसेभर बडी वेरीके पान और ४ पैसेभर आंवले डालो जबतक कि यह भली भांति ओंटकर एक रस न होजावे. यह घृत ४ मासे प्रति प्रभात

२१ दिनपर्यंत खिलाओ. जलसे केवल कुल्ला करलो पर पीने न दो, उष्ण वस्तु, बाजरा, करेला, मिर्च, अचार, बैंगन (भटा) उर्द और केले आदि न खाने दो पर पथ्यसे रखो तो मसोंसे रुधिरश्राव बंद हो जावेगा.

तथा २– निबोलीकी बीजी और औलीया दोनों समानको पानीके साथ खल करके १ रत्तीप्रमाणकी गोली बांधलो इनमेंसे १ एक गोली नित्य रसोतके रसके साथ ११ दिनपर्यंत खिलाओ तो मसोंसे रक्त गिरना बंद हो.

रक्तार्शके मसोंका यत्न– रसोत, चिणियां कपूर, और निबोलीकी बीजी इन तीनोंको महीन पीसके मसोंपर लेप करो तो मसे छूंछे निर्जीव पड जावेंगे तब उनपर नीले थूथेका लेप करो तो सर्वतः झडकर गिर पडेंगे.

सहजार्शयत्न– मनुष्यके माता पिताके रज वीर्यदोषसे सहजार्श होता है इसपर कोई यत्न नहीं है. रोगीको योग्य है कि पथ्यसे रहे, घृतका विशेष सेवन करे, और दान, पुन्य, ईश्वर भजन करे तो सहजार्शका क्लेश विशेष न होगा.

सर्व अर्शमात्रके यत्न– एक समय श्रीनारदमुनिराजजीने मनुष्योंको अर्श (बबासीर)के असाध्य रोगसे अत्यंत पीडित देखके श्रीमहादेवजीसे प्रश्न किया कि हे महाराज अर्श रोगके निवार्णार्थ वैद्यक ग्रंथोंमें शंखिया (सम्बल) आदि विषक्रिया[1] कईप्रकारसे वर्णन की है परन्तु विषक्रियाके व्यतिरिक्त आप कोई ऐसा सुगम उपाय बताइये कि जिससे उक्त रोगी मनुष्योंको त्रास न देकर समूल नष्ट होजावे तब महादेवजीने उक्त विनयानुसार लोकोपकारार्थ नारदजीको निम्न लिखीत सार बताया कि जिसके सेवनसे अर्शादि अनेक रोगोंसे मनुष्योंका छुटकारा होता है. सो अब हम शिवमतसे कांतिसार बनानेकी विधि लिखते हैं.

कांतिसारविधि– कांति[2] लोहके बारीक २ पत्र बनाके तेल, छाछ, गो-

---

१ सम्बलको अर्श नाशक अनेक पदार्थों (जैसे मक्खनादि)के संयोगसे मसोंपर लगानेसे मसे जडसे कटकर गिर पडते हैं. परन्तु इस प्रयोगसे अनेक मनुष्योंकी प्राणहानि हो गई है; इसलिये ऐसे विषप्रयोगादि उपाय कदापि उचित नहीं है.

२ अर्थात् गजवेलि, बीड या फौलाद. जिसके पात्रमें दूध औटानेसे अधिक आंच देनेपरभी नहीं उफनता है. इसलिये ऐसेही लोहेको सार बनानेके उपयोगमें लाओ और अन्यको कदापि न लो.

मूत्र कांजी और त्रिफलाके रसमें यथाक्रमसे ७ सात बुझाओ फिर रेतीसे रेतके चूर्ण कर डालो. इसी चूरेके तुल्य मैनसिल और तुल्यही सोनामक्खी इन तीनोंको अग्निझालके रसमें खल करके सरावसम्पुटमें बन्द कर दो. अब यह सम्पुट लुहारकी भट्टीमे धरके धोकनीसे तीक्ष्ण आंच दो जल जाने-पर (जब इसकी गंध आना बंद होजावे) निकालकर उसे अष्टमांश पारेके साथ आंवलेके रसमें खल करो और उक्त रीत्यानुसारही उसे चार बार ताव देके खलमें पीसलो अब यह जलपर तैरनेवाला उत्तम सार होगया. तद-नंतर इसपर विषखपरेके रसकी १० पुट, पलासके रसकी १० पुट, थूहरके दूधकी १० पुट, पुनर्नवाके रसकी १० पुट, शतावरीके रसकी १० पुट, गु-रचके रसकी २० पुट, जामुनके बकलके रसकी ७ पुट, गूलरके बकलके र-सकी ७ पुट, गवांरपाठेके रसकी १० पुट, तेंदूके रसकी ७ पुट, आंवला-सार (गंधक) की २० पुट, नीबूके रसकी २० पुट, पलासके बकलकी २० पुट, सारसे बारहवां भाग हिंगुल गवांरपाठे रसके साथ १ पुट, घृतकी १० पुट और मधुकी १० पुट देके लोहसार सिद्ध कर लो.

नित्य प्रति प्रातःकाल पिम्पली और मधुके संयोगसे १ रत्ती खिलाओ और क्रमशः बढाते बढाते ३ रत्ती पर्यंतकी मात्रा कर दो. खानेवालेसे स्वयं शिवजीका पूजन कराओ तथा ब्राह्मणद्वारा वेदमंत्रोंसे कराओ औ-षध देते समय इस मंत्रको पढो या रोगीसे पढाओ "ओं अमृतं भक्षयामि स्वाहा" ऐसा कह मात्रा देदो और उपरसे खरेंटीका क्वाथ सेवन कराओ. इसपर पेठा, तेल, उर्द, राई, मद्य और खटाई आदिक कुपथ्थी वस्तुएं रो-गीको कदापि सेवन न करने दो.

जो उक्तौषध उक्त नियमानुसार दो तो वृद्ध पुरुषभी तारुण्यताको प्राप्त
[illegible], सर्व प्रकारके अर्श, मन्दाग्नि, श्वास, कास, पांडु, वातरक्त, मूत्रकृच्छ्र, अंत्रवृद्धादि अनेक असाध्य रोगभी नाश होंगे.

ये इतनी पुट एकसंगही नहीं बरन एकके पीछे एक क्रमशः देना चाहिये. पुट [illegible]कारसे दी जावे कि जिसका पुट देना हो उसी वस्तुके साथ सारको खल करके टि-किया बनाकर सुखालो और सम्पुटमें रखके फूंक दो या वैसीही लोहेके पात्रमें रखके गोवरी (कंडा, उपली) की आंच देदो.

यह विधि बृहदात्रेय तथा भावप्रकाशमें लिखी है. इति कांतिसार.

तथा २– २ टंक हरेंकी छालमें ५ टंक पुराना गुड मिलाकर नित्यप्रति जलके साथ खिलाओ तो अर्श दूर हो.

तथा ३– अधोपुष्पी, खरेंटी, दारुहल्दी, पृष्टपर्णी, गोखरु, इन्द्रयव, सालइके फूल, बडके अंकुर, गुलर (ऊमर) के अंकूर, और पीपलके कोमल पत्र ये सर्वौषध २ दो टकेभर लेके कूटकर चूरा बनाओ. इस चूरेमेसे नित्य २ टंकका क्वाथ बनाकर पिलाओ (और उसपर यह घृत खानेको दो तो औरभी उत्तम होगा) तो बबासीर मात्र दूर हो.

तथा ४– जीवन्तीकी जड, कुटकी, पीपलामूल, काली मिर्च, सोंठ, देवदारु, सतावरी, चंदन, रसोत, कायफल, चित्रक, मोथा, प्रियंगु, खरेंटी, शालपर्णी, कमलगटा, मजीठ, कटियाली, बीलकी गिरी, मोचरस और पाठा ये सब औषध अधेले अधेले भरका चूरा कर इनके क्वाथका चार सेर रस लो. इन औषधोंका चार सेर क्वाथ १ सेर गोघृतके साथ कडाईमें औंटाओ. क्वाथ जल जानेपर घृतको छानलो. यह शुद्धौषध संयोगित घृत नित्य २ टकेभर खिलाओ तो बबासीरमात्र दूर होगी.

तथा ५– सीसेकी गोली गौके घृतमें घिसकर १० दिनतक मसोंपर लगाओ.

तथा ६– २ टंक विष्णुक्रांता[1] (बूटी विशेष) २ टंक काली मिर्च, और एक मासे भांगको जलमें घोंटके पिलाओ. इस ५ और ६ वें उपायसे बबासीर दबी रहेगी.

अर्शरोगीको वर्जित कार्य– मल-मूत्रावरोध, स्त्रीसंग, घोडा ऊंटादि पशुओंकी आरूढि (सवारी) दोनों पांवके बल अधर बैठक और केले, बाजरा इत्यादि उष्ण वस्तुएं कदापि सेवन न करे.

चर्मकील[2]रोगयत्न १– अग्नि तथा क्षार आदि क्रियासे मसे जलादो.

१ यह नीले फूलकी एक बूटी है जिसे अंधाहोलीभी कहते हैं.

२ मूलद्वारके व्यतिरिक्त किसी अन्यपर मसे होना यह चर्मकीलरोग कहाता इसका स्पष्टीकरण निदानखंडमें देखो.

तथा २– चूना (खानेका), सज्जी, सुहागा और नीला थूथा समानको ३ दिनतक नीबूके रसमें भिगाओ नंतर खरल करके चर्मकीलके मसोंपर लगाओ तो अवश्य नाश हो जावेंगे.

इति नूतनामृ० चिकित्साखंडे अर्शरोगयत्ननिरूपणं नामाष्टमस्तरंगः॥८॥

॥ मन्दाग्नि-भस्मक-अजीर्ण ॥

**मन्दाग्निभस्मकाजीर्णरोगाणां हि यथाक्रमात् ।**
**तरङ्गे नवमे चात्र चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थः– अब हम इस नवेमे तरंगमें मन्दाग्नि-भस्मक और अजीर्ण रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

मन्दाग्नियत्न[१] १– अद्रकके छोटे छोटे टुकडे सेंधेनोंनके साथ नीबूके रसमें डालके मृत्तिकाके पात्रमें रखदो. इस अद्रकको थोडा थोडा नित्य खाया करो तो मंदाग्नि दूर हो. यह वैद्यजीवनमें लिखा है.

तथा २– भोजनके पूर्व सेंधेनोंन और अद्रककी चटनी नित्य खाया करो तो मन्दाग्नि नाश होकर क्षुधा बढे और जिव्हा तथा कंठकी शुद्धि होगी. भावप्रकाशमें लिखा है कि यह प्रयोग सदा पथ्यरूपही है.

भस्मकरोगयत्न[१]– यदि भस्मकरोग साध्य हो तो रोगीको ऐसे पदार्थ भक्षण कराओ जो बढे हुए पित्तको शमन करके कफको विशेष वृद्धिंगत करे तो भस्मकरोग नाश होगा क्योंकि जो चिकित्सा कफकारक वही पित्तनाशक होती है और जो पित्त नाश हुआ तभी भस्मकभी दूर होगा. और जो असाध्य लक्षण हुए तब तो इससे रक्षा पाना दैववशातही जानो. भस्मक भस्म किये बिन क्या छोडेगा.

अजीर्णरोगयत्न १– हर्रेकी छाल और सोंठके २ टंक चूर्णमें १० टंक गुड मिलाकर शीतल जलके साथ नित्य खिलाओ तो अजीर्ण दूर हो और क्षुधा बढे.

तथा २– हर्रेकी छाल और सोंधेनोंनका नित्य सेवन कराओ तो अजीर्ण मात्र नाश होकर क्षुधा बढेगी.

---

१ मन्दाग्नि और भस्मकके यत्न प्राचीन अमृतसागरमें नहीं लिखे हैं इसलिये ये भावप्रकाश और वैद्यजीवनसे लिये हैं.

तथा ३– सैंधानोंन, सोंठ, काली मिर्चका २ टंक चूर्ण नित्य गऊकी छाछके साथ १५ दिवसपर्यन्त सेवन कराओ तो अजीर्ण, मन्दाग्नि, पांडु और अर्शभी नाश होकर भूख लगेगी.

तथा ४– सोंठ, काली मिर्च, पीपली, अजमोदा, सैंधानोंन, श्वेत जीरा, श्याम जीरा और सेकीहुई हींगका १ तथा २ टंक चूर्ण घृतयुक्त खिचडीमें प्रथम ग्रासके साथ नित्य खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढे तथा गोला और प्लीहाभी दूर होंगे. इसे हिंगाष्टकचूर्ण कहते हैं.

तथा ५– जवाखार, सज्जी, चित्रक, पंचनोंन, इलायची, पत्रज, भारंगी, पोहकरमूल, कचूर, निसोत, नागरमोथा, इन्द्रयव, डांसरफल, सेकीहुई हिंग, अमलवेत, जीरा, आंवले, हरेंकी छाल, पीपली, अजवान, तिलीका खार और पलासके खारका चूर्ण बिजौरेके रसमें ८ आठ पुट देके सिद्ध करो. जो इसमेंसे २ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढेगी. इसीका नाम अग्निमुखचूर्ण है. गोला, उदररोग, अंत्र-वृद्धि और वात-रक्तके लिये बडा लाभकारी है.

तथा ६– थूहर, आक, चित्रक, अरंडी, पुनर्नवा, तिल्ली, आधाझाडा, कदली, पलास और डासरा (इन प्रत्येकका खार) अजवान, अजमोद, जीरा, सोंठ, काली मिर्च, पीपल और सिकीहुई हींग इन सबका चूर्ण अद्रकके रसमें ५ पुट देकर खल करो. यह चूर्ण नित्य शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढेगी. अनुपान बदलनेसे और रोगभी नाश कर सक्ता है इसे वैश्वानरचूर्ण कहते हैं.

तथा ७– ४ पैसेभर साम्भरनोंन, ३ पैसेभर सोंचरनोंन, ५ टंक वायविडंग, ५ टंक सैंधानोंन, ५ टंक धनियां, ५ टंक पीपली, ५ टंक पीपलामूल, ५ टंक पत्रज, ५ टंक काला जीरा, ५ टंक काली मिर्च, ५ टंक नागकेशर, ५ टंक चव्य, ५ टंक अमलबेद, ५ टंक जीरा, ५ टंक सोंठ, १० टंक अनारदानें, १ टंक इलायची, १ टंक तज, इनका ४ मासे चूर्ण प्रतिदिन गऊकी छाछ तथा कांजीके साथ नित्य सेवन करो तो अजीर्ण, गोला,

१ डांसरे ततडीके बीज जो खटे होते हैं.

प्लीहा, उदररोग, अर्श, संग्रहणी, बंधकुष्ट, शूल, शोथ, श्वास, कास, आमविकार, पांडु और मन्दाग्नि ये सर्व रोग दूर होंगे, इसे लवणभास्करचूर्ण कहते हैं.

तथा ८– १ टंक सेंधानोंन, २ टंक पीपलामूल, ३ टंक चव्य, ४ टंक चित्रक, ५ टंक सोंठ, ६ टंक हर्रेकी छाल, और इन सर्वौषधोंके तुल्य मिश्री डालकर चूर्ण बना लो, यह वडवानलचूर्ण है. नित्य दो टंक सेवनसे अजीर्ण नाशकर क्षुधा बढाता है.

तथा ९– २ टंक शुद्ध गंधक और १ टंक शुद्ध पारेकी कजलीमें ५ टंक लोहसार और ५ टंक ताम्बेश्वर, मिलाकर लोहेके पात्रमें धरके अग्निपर चढादो, पिघल जानेपर अरंडके पत्रोंपर ढालके १०० टकेभर जंभीरीके रसके साथ खरल करो. फिर छायामें सुखाकर १०० टकेभर बिजौरेके रसके साथ खल करो. फिर छायामें सुखाके पीपली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठके क्वाथकी ५० पुट दो भलीभांति सूख जानेपर इस सर्व पदार्थके तुल्य सेकाहुआ सुहागा, और आधा सोंचरनोंन डालकर इन सबोंको तुल्य काली मिर्च, डालो. नंतर इसे चनेके खारकी ७ पुट देके प्रस्तुतकर काचादिके पात्रमें धर दो, अब यह क्रव्यादरस बन गया, जो २ मासे प्रतिदिन खिलाकर उपरसे सेंधेनोंन युक्त गोछाछ पिलाओ तो अजीर्ण मात्र तत्क्षण दूर हो, अत्यंत गरिष्ट भोजनभी पाचन होजावे, और शूल, गुल्म, वायगोला, अफरा, प्लीहा, उदर येभी सब दूर होवेंगे.

तथा १०– जवाखार, सज्जी, सुहागा, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, इन सर्व पदार्थोंके तुल्य सिकीहुई भांग और आधी मुंगनेकी जड लो. पारे गंधककी कजली करके सर्वौषध डालके महीन पीसलो नंतर १ दिन भांगके रसमें १ दिन मुंगनेकी जडके रसमें और १ दिन चित्रकके रसमें खरल करकरके धूपमें सुखाते जाओ और अंतको सरावसम्पुट करके गजपुटमें फूंक दो तदनंतर सात दिनतक अद्रकके रसमें खल करके निकाल धरो. अब यह ज्वालानलरस प्रस्तुत हो गया जो १ या दो रत्ती गंधक साथ चटाकर ऊपरसे गुडका क्वाथ पिलाओ तो तत्क्षण अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधाकी दीर्घ वृद्धि हो और अतिसार,

संग्रहणी, कफके रोग, उल्टी, अरुचि, आदिभी दूर होवेंगे ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ११– शुद्ध गंधक, काली मिर्च, चूक, और सोंचरनोंनका १ टंक चूर्ण नित्य जलके संग खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर हो, बंधकुष्ट जावे और क्षुधा लगे.

तथा १२– (५ टंक शुद्ध पारा, ५ टंक शुद्ध गंधककी) कजली, ५ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १० टंक काली मिर्च, २ टंक जायफल, इन सबको पीसके ५ दिनतक डांसरेके रसमें खल करो. अब यह रामबाणरस बन गया जो इसको एक रत्ती नित्य प्रति ७ दिनतक खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढेगी.

तथा १३– (शुद्ध पारा, शुद्ध गंधककी) कजली, अजमोद, त्रिफला, सज्जी, जवाखार, चित्रक, सेंधानोंन, सोंचरनोंन, जीरा वायविडंग, साम्भरनोंन, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, ये सर्वौषध तुल्य लेकर इन सबोंके तुल्य बकानके फलोंके छिलके लो, कजली सहित इन सबको जंभीरीके रसमें ७ दिनपर्यंत खल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो. अब ये अग्नितुंडावती नामक गोली बन गई. जो नित्य १ गोली खिलाके ऊपरसे (हर्रेकी छाल, सोंठ, गुडका) क्वाथ पिलाओ तो अजीर्ण मात्र दूर होके क्षुधा बढेगी और २ रोगभी इससे मिटेंगे.

तथा १४– १ भाग सोंठ, २ भाग काली मिर्च, ३ भाग पिम्पली, ४ भाग सेंधानोंन इन सबको नीबूके रसमें १० दिन खल करके १ रत्तीकी गोलियां बनाओ. यह क्षुद्रबोध रस है जो एक गोली नित्य खिलाओ तो अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढेगी.

तथा १५– बिडनोंन, सोंचरनोंन, अजवान, दोनों जीरे, हर्रेकी छाल, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, चित्रक, अमलवेद, अजमोद, धना, और डासरफल तुल्य लेके कपडछान कर चूर्ण बनाओ जो यह चूर्ण नित्य २ टंक खिलाओ तो अजीर्ण मात्र दूर हो क्योंकि इसके बलसे एक बार पाषाणभी पाचन होवे तो फिर अन्न पाचनमें क्या संदेह.

तथा १६– शुद्ध गंधक, काली मिर्च, पीपल, सोंठ, सेंधानोंन, जवाखार,

और लौंगका चूर्ण १० दिनतक नीबूके रसमें खल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाओ जो नित्य १ गोली दो तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा वढेगी.

तथा १७– ६ भाग हर्रकी छाल, ४ भाग पिम्पली, २ भाग चित्रक, २ भाग सेंधानोंनका चूर्ण वनाकर २ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण दूर होकर क्षुधा लगेगी.

तथा १८– २ टंक सिका सुहागा, २ टंक पीपल, २ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, २ टंक हिंगूल, २ टंक काली मिर्चका चूर्ण १० दिनतक नीबूके रसमें खल करके मटरके समान गोलियां बनालो. अब यह अजीर्णकंटकरस बना जो इसकी १ तथा २ गोलियां जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर भूख लगेगी. यह विसूचिका नाश करनेकी शक्तिभी रखता है.

तथा १९– २ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, २ टंक सिका सुहागा, २ टंक काली मिर्च, २ टंक सेंधानोंनके चूर्णमें १ सेरभर अदरकका रस पिलाके (जिरादो, रिंजादो, मिलादो) फिर १ सेरभर नीबूका रस जिरादो नंतर १ सेरभर दहीका पानी[1] भी इसीमें जिराके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बांधलो. यहभी एक प्रकारका क्रव्यादिरस है इसकी १ गोली नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र तत्क्षण दूर होकर क्षुधा वृद्धि होगी, अफरा, उदररोग, गोला, शूलभी इससे नाश होवेंगे.

तथा २०– १० टंक दालचिनी, १० टंक इलायची, १५ टंक लौंग, १० टंक सिका सुहागा, १० टंक चित्रक, ५ टंक काली मिर्च और ३ पैसेभर सेंधानोंनका चूर्ण बनाके नित्य १¼ सवाटंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण तत्क्षण दूर होगा. इसे क्रव्यादिचूर्ण नाम दिया है ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा २१– सोंठ, काली मिर्च, पीपली, त्रिफला, पांचोंनोन[2], सिका सुहागा, जवाखार, सज्जी, (शुद्ध पारे और शुद्ध गंधककी) कजली, शुद्ध

---

१ दहीको कपडेमें बांधकर ऊपर लटकादो और नीचे मृत्तिकाका पात्र रखदो इसमें जो दहीका पानी टपक जावेगा सो उक्तोपयोगमें लाओ.

२–१ सेंधा, २ सांभर, ३ सामुद्रीय, ४ बिडनोंन और ५ सोंचरनोंन.

सिंगीमुहराके चूर्णको ७ पुट अदरकके रसमें देके १ रत्ती प्रमाणकी गोलिया बनालो. अब यह क्षुधासागरचूर्ण प्रस्तुत हुआ जो इसकी १ तथा २ गोली लौंगके क्वाथके संग खिलाओ तो तत्क्षण अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढेगी.

तथा २२– १०० सौ हर्रें गौके छाछमें औंटाकर गुठली निकाल डालो. सोंठ, काली मिर्च, पीपली, चव्य, चित्रक, दालचिनी, पांचोंनोंन, सिकी हींग, जवाखार, सज्जी, दोनों जीरे, अजमोद, और इन सबके समान चूका इनको चूर्णमें नीबूके रसकी दश पुटें देके यह चूर्ण उपरोक्त विधि प्रस्तुत हर्रोंमें भर दो और इन्हें धूपमें सुखाके धरदो. अब ये अमृतहरीतकी बन गई जो १ हर्र प्रतिदिन खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा वृद्धि हो तथा मन्दाग्नि, उदररोग, गोला, शूल, संग्रहणी, बंधकुष्ठ, अफरा, और आमवातभी नाश होंगे.

तथा २३– ७ टंक काली मिर्च, २ टकेभर अजवान, २ टकेभर चित्रक, ७ टंक पीपल, २ टंक सोंचरनोंन, २ टंक साम्भरनोंन, २ टंक सेंधानोंन, (१ टंक शुद्ध पारा और १ टकेभर शुद्ध गंधककी) कजली २ टकेभर पीपलामूल, ५ पैसेभर सोंठ, ५ पैसेभर हर्रेकी छाल, ५ टंक बहेडेकी छाल, १ टकेभर जीरा, ५ टंक चव्य, और इन सबसे आधी लौंगके चूर्णको अदरकके रसमें १० पुट देके इन सबके तुल्य चूका मिलाओ नंतर बारीक पीसके २ मासे प्रमाणकी गोलियां बनालो. वैद्यविनोदमें इसे लवंगामृतगुटिका नाम दिया है जो इसकी १ गोली जलके साथ नित्य खिलाओ तो अजीर्णमात्र दूर होकर क्षुधा बढे. पुष्टता होकर अन्य रोगभी नाश होंगे.

तथा २४– ५ टंक दालचिनी, १० टंक लवंग, १० टंक दोनों जीरें, १० टंक सोंठ, १० टंक काली मिर्च, ५ टंक अजमोद, ५ टंक हर्रेकी छाल, ५ टंक पत्रज, १० टंक डांसरे, २० टंक सेंधानोंन, २० टंक सोंचरनोंन, १५ टंक निसोत, पाव ऽ। भर सोनामुखी, आध ऽ॥ सेर अनारदाने इन सबके चूर्णको नीबूके रसकी १० पुट देकर इस सब पदार्थके तुल्य चूका मिलाओ और पीस सुखाके रख दो. यह राजबल्लभ चूर्ण बन गया, जो इसे २ टंक

नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र, बंधकुष्ठ, मन्दाग्नि, उदररोग, गोला, और प्लीहादि दूर होकर क्षुधा बढेगी.

तथा २५– हर्रकी छाल, पीपल, सोंचरनोंनका चूर्ण नित्य २ टंक उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सर्व प्रकारके अजीर्ण, और आध्मान दूर होकर भूख लगेगी.

तथा २६– दाख, हर्रकी छाल, मिश्रीको पीसके मधुके साथ दो टंक प्रमाणकी गोलियां बांधलो जो जलके संग नित्य १ गोली सेवन कराओ तो अजीर्णमात्र दूर हो. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा २७– जीरा, सोंचरनोंन, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानोंन, अजमोद, सिकी हिंग, हर्रकी छाल, (ये सब अधेले अधेलेभर) और २ टकेभर निसोत इन सबका चूर्ण बनाके २ टंक नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो अजीर्ण मात्र दूर होकर क्षुधा बढेगी इसे जीरकादिचूर्ण कहते हैं. यह योगतरंगणीमें लिखा है.

तथा २८– अजमोदा, हर्रकी छाल, चित्रक, लवंग, दालचीनी, सेंधानोंन, इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ खिलाओ तो अजीर्ण दूर होकर भूख बढेगी. यह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा २९– २ टंक शुद्ध गंधक, २ टकेभर चित्रक, २ टंक काली मिर्च, २ टंक पीपली, ५ टंक सोंठ, २ टंक जवाखार, १ टंक सेंधानोंन, १ टंक सोंचरनोंन, एक टंक सांभरनोंनके चूर्णको ७ दिनतक नींबूके रसमें खल करके १ टंक प्रमाणकी गोलियां बांधलो. इसे सर्वसंग्रहमें गंधकबट्टी नाम दिया है. जो इसकी १ गोली नित्य जलके साथ खिलाओ तो अजीर्णमात्र, शूल, आमदोष, गोला और आध्मानभी दूर होंगे.

ये अजीर्णमात्रके यत्न दर्शित किये विशेषतः यह है कि अमाजीर्ण, पंचलवण, विदग्धाजीर्ण, लंघन, विष्टब्धाजीर्ण सेक, तथा रसशेषाजीर्णभी सेक (ताव)से नाश होता है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे मन्दाग्नि, भस्मक, अजीर्णरोगचिकित्सानिरूपणं नाम नवमस्तरंगः ॥ ९ ॥

॥ विसूचिकादिरोगाः ॥

विसूचिकालसकयोर्विलम्बिकाकृमिपांडुकामलानाम् ।
चिकित्सा हलीमकस्य यथाक्रमेण रोगस्य ।
वियन्निशाधवेऽस्मिन् तरङ्गे लिख्यते च विचार्य त-
न्त्राणि ॥ १ ॥ पदचतुरूर्ध्वाभिधं वृत्तमिदम् ॥

भाषार्थः– अब हम इस १० वे तरंगमें १ विसूचिका, २ अलस, ३ विलम्बिका, ४ कृमि, ५ पांडु, ६ कामला, और ७ हलीमक इन रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे अनेक आयुर्वेदीय ग्रन्थोंको विचारके लिखते हैं.

विसूचिकायत्न १– एक पोत्या लहसनकी विजी, जीरा, शुद्ध गंधक, सेंधानोंन, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, और सिकी हींगके चूर्णको नीबूके रसकी ५० पचास पुट देकर छोटे बेरके समान गोलियां बनालो. जो एक गोली जलके साथ खिलाओ तो विसूचिका तत्क्षण दूर हो. तथा अजीर्णभी नाश होकर भूख लगेगी.

तथा २– वायविडंग, सोंठ, पीपली, हर्रेकी छाल, आंवला, बहेडा, बच, गिलोय, शुद्ध भिलावां, और शुद्ध सिंगीमोहराके चूर्णको १ दिन गोमूत्रमें खल करके १ रती प्रमाणकी गोलियां बनालो. जो अदरकके रसके साथ खिलाओ तो १ गोलीसे अजीर्ण, २ गोलीसे विसूचिका, ३ गोलीसे सर्प विष और ४ गोलीसे सन्निपात दूर होगा. इसे संजीवनी गुटिका कहते हैं.

तथा ३– सिका सुहागा ५ टंक, ५ टंक शुद्ध पारा, ५ टंक शुद्ध गंधक, ५ टंक शुद्ध सिंगीसुहरा, ५ टंक पीली कौडीकी भस्म, २ टंक सज्जी, २ टंक पीपली, २ टंक सोंठ, २ टंक काली मिर्च, प्रथम पारे-गंधककी कजली बनाकर उसमें ये सर्वौषधें डालदो और ८ दिनतक जंभीरीके रसमें खल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो. यह अग्निकुमाररस बन गया जो इसकी १ गोली खिलाओ तो विसूचिका नाश होवेगी.

तथा ४– १ सेर आकके पत्रका रस, १ सेर धतूरेके पानका रस १ सेर थूहरका दूध, १ सेर मुंगनेकी जडका रस, २ टकेभर कूट, २ टकेभर सेंधा-

नोंन, १ सेर बेल, ४ सेर कांजीका जल, इन सबोंको कडाहीमें डालकर मंद मंद आंचसे औंटाओ. पक जानेपर जब रस जलकर तेल मात्र रह-जावे उतारकर छानलो. जो इस तेलका मर्दन करो तो विसूचिका, प-क्षाघातादि सब दूर होवेंगे. वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ५– कणगजके बीज, सागरगोटीकी जड, आधे झाडे (अपामार्ग) की जड, नीमकी छाल, गिलोय, और कूडेकी छालके २ टंक चूरेका क्वाथ नित्य तीन दिनतक पिलाओ तो विसूचिका जावेगी.

तथा ६– हर्रकी छाल, वच, सिकी हींग, इन्द्रयव, भ्रंगराज, सोंचरनों-न, अतीस इनका चूर्ण बनाकर २ टंक पानीके साथ नित्य सेवन कराओ तो विसूचिका तथा बबासीर दोनों नाश होवेंगे.

तथा ७– ४ मासे इलायची, ४ मासे लौंग, १ मासे अफीम, १० मासे जायफल इनका ४ मासे चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो वि-सूचिका तत्क्षण अच्छी होगी.

तथा ८– ४ पैसेभर जौका आटा, ५ टंक जवाखार इनको छाछमें प-काके सहता सहता उष्ण लेप करो तो पेटका शूल और विसूचिका दूर हो.

तथा ९– चूकेको औटाके सेरभर रस निकालो और उसमें ५ टंक सें-धानोंन, १० टंक कूट ऽ। पावभर तेल डालकर मन्दाग्निसे पकाओ जब रस जलकर तेलमात्र रह जावे. उतारकर छानलो यह तेल विसूचिकाके रोगी-को मर्दन करो तो विसूचिका दूर होवेगी.

तथा १०– जो विसूचिकावालेकी कुक्षिमें पीडा हो तो कडुवे तेलको उष्ण करके मर्दन करो पीडा नाश होगी.

तथा ११– विसूचिकावालेको प्यास अधिक लगे तो लवंगका क्वाथ पिलाओ प्यास मिट जावेगी.

तथा १२– जो विसूचिकाका वेग विशेष वृद्धिपर दिखे तो रोगीके दोनों पार्श्वभागमें दाग दो. विसूचिका नाश होगी.

तथा १३– विजौरेकी जड, सोंठ, काली मिर्च, पीपली, हल्दी, कणक-

जके बीजोंको कांजीमें महीन पीसके अंजन लगादो तो विसूचिका दूर हो. ये सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

अलस तथा विलम्बिकारोगयत्न १– ६ टंक साबुन और १ टंक नीला थूथा, दोनोंको पीसके गुदामें लगाओ तो बंध छूटकर उक्त रोग दूर हों.

तथा २– दारुहल्दी, चोब, कूट, सिकी हींग और सेंधानोंन कांजीके जलमें पीसके उष्णकर सहता हुआ उदरपर लेप लगाओ तो अलस और विलम्बिका दोनों दूर होवेंगे.

तथा ३– आधपाव ऽ= जौका आटा और १ टंक सज्जीको जलमें डालके पकाओ और कूंखपर लेप करो तो विसूचिका, अलस, विलम्बिका ये सर्व दूर होंगे.

कृमिरोगयत्न १– २ टंकभर अजवान बासे जलके साथ नित्य सेवन कराओ तो उदरकी कृमि मूलद्वारसे मलके साथ बाहर निकल जावेंगी.

तथा २– १ टंक पलासपापडा पानीमें पीसके २ टंक मधुके साथ नित्य ५ दिनतक पिलाओ तो कृमि दूर हो.

तथा ३– दो टंक वायविडंग महीन पीसकर नित्य मधुके साथ ७ सात दिनतक चटाओ तो कृमि दूर हो.

तथा ४– वायविडंग, सेंधानोंन, हर्रकी छाल, और जवाखारका २ टंक चूर्ण नित्य छाछके साथ ७ सात दिनतक पिलाओ तो कृमि जावे.

तथा ५– उक्त चूर्णमेंही नीमके पत्तोंका १० टंक रस मिलाकर नित्य ७ दिन पिलाओ तो कृमि नाश हो.

तथा ६– (१ टंक शुद्ध पारा और २ टंक शुद्ध गंधककी) कजली, तीव्रा अजवान, ४ टंक बकानके फलोंके छिलके, ५ टंक पलासपापडेका २ टंक चूर्ण ५ टंक मधुके साथ नित्य ७ दिन चटाओ तो कृमि दूर हो. ये सर्व यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

तथा ७– नागरमोथा, त्रिफला, देवदारु, और सुंगनेकी छालके ५ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य ७ दिनतक पिलाओ तो कृमि दूर हो.

तथा ८– वायविडंग, सेंधानोंन, सिकी हींग, पीपली, कपेला, सोंचरनों-

---

१ गेरूके सदृश लाल रंगकी बुकनी प्रसिद्धही है.

नका २ टंक चूर्ण सात दिनतक उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो पेटकी कृमि मात्र नाश होवें. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

सिरमेंकी लीख तथा जूऐंके नाशका उपाय १– धतूरेके पत्रोंके रसमें पारा घोंटकर सिरमें लगाओ तो जुओंका नाश होगा.

तथा २– नागरवेलके पानके रसमें पारा रगडके लगाओ तो लीखें तथा जुऐं निश्चय मरें.

मूलद्वारोद्भव सूक्ष्मकृमिका यत्न १– लहसन, काली मिर्च, सेंधानोंन, हींगको पानीमें पीसके गुदाके भीतर लेप करो तो सूक्ष्म कृमि नाश होवें.

मच्छर, खटमल, चामजुऐं आदिका यत्न १– महुएके फूल, वायविडंग, कलिहारी (लांगली)की जड, मैनफल, चंदन, राल, खश, कूट, भिलावां और लोबानका चूर्ण बनाकर घरमें धूनी दो तो मच्छर, खटमल आदि समस्त दूर होवेंगे. ये सब वैद्यरहस्य तथा वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

पांडु, कामला, और हलीमकके यत्न १– सात दिनतक गोमूत्रमें पकाये हुए कान्तिसारको महीन करके १ टंक नित्य जलके साथ १५ दिनतक सेवन कराओ तो पांडुरोग दूर हो.

तथा २– गोमूत्रमें पकायाहुआ १ टंक मंडूर नित्य गुडके साथ १५ दिनतक खिलाओ तो पांडुरोग दूर हो.

तथा ३– साटीकी जड, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, वायविडंग, दारुहल्दी, चित्रक, कूट, हल्दी, त्रिफला, दात्यूणी (जंगली जमालगोटेकी जड) चव्य, इन्द्रयव, कुटकी, पीपलामूल, नागरमोथा, कांकडासिंगी, करेलेकी वेल, अजवान, और कायफल, ये सब टके टकेभर और इनसे दूना मंडूर लेके सबका चूर्ण कर डालो. इस चूर्णको अष्टगुणें गोमूत्रमें पकाके १ टंक प्रमाणकी गोलियां बांधलो जो गोली नित्य गौकी छाछके साथ १५ दिनतक सेवन कराओ तो असाध्य पांडु, कामला तथा हलीमक तीनों

---

१ मूल द्वारका स्थान बडा कोमल रहता है इसलिये उक्तोपचार करनेके पश्चात् गुदाके भीतर घी लगादो यह लेप घृतके साथही करो अर्थात् पानीमें पीसनेके पल्टे घृतमें पीसो तो उत्तम होगा.

दूर हों. और श्वास, कास, शोथ, शूल, अफरा, प्लीहा, अर्श, संग्रहणी, कृमि, वातरक्त, और कुष्ट ये समस्त रोगभी दूर होंगे इसे पुनर्नवादि मण्डूर कहते हैं.

तथा ४– ५ टंक हरेंकी छाल, ५ टंक आंवले, ५ टंक बहेडेकी छाल, ५ टंक सोंठ, ५ टंक काली मिर्च, ५ टंक पीपली, ५ टंक नागरमोथा, ५ टंक वायविडंग, ५ टंक चित्रकके चूर्णमें ९ पैसेभर लोहसार मिलाओ. अब यह नवापसचूर्ण बन गया. इसमेंसे ९ रत्ती नित्य मधु या गौकी छाछ या गोमूत्र तथा घृतसे १५ दिन खिलाओ तो पांडु, शोष, अग्निमांद्य, और अर्श ये सर्व रोग दूर होवेंगे. कोई कोई वैद्य इसकी मात्रा २ से १८ रत्ती-तकभी बढा देते हैं.

तथा ५– अडूसा, गिलोय, नीमकी छाल, त्रिफला, चिरायता, कुटकी-के २ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ नित्य १० दिनपर्यन्त सेवन कराओ तो पांडु, कामला, हलीमक और रक्तपित्त ये सब दूर होंगे.

तथा ६– त्रिफला, गुरच, दारुहल्दी, या नीम इनमेंसे किसी १ का रस (तथा सर्व सांयोगिक रस) मधुके साथ १० दिनतक पिलाओ तो पांडु, कामला और हलीमक ये सर्व दूर होवेंगे.

तथा ७– दलवडका रस नेत्रोंमें आंजो तो उक्त तीनों रोग दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ८– चिरायता, कुटकी, देवदारु, नागरमोथा, गुरच, पटोल, धमासा, पित्तपापडा, नीमकी छाल, सोंठ, काली मिर्च, पीपली, चित्रक, त्रिफला, वायविडंगका चूर्ण और इन सबोंके तुल्यही कान्तिसार इसमें मिलाकर नित्य १ टंक मधु अथवा छाछके साथ सेवन कराओ तो पांडु, कामला, हलीमक, शोथ, प्रमेह, संग्रहणी, श्वास, खास, रक्तपित्त, अर्श, आमवात, गुल्म और कुष्ट ये सर्व रोग दूर होवेंगे. भावप्रकाशमें यह अष्टादशांगावलेह लिखा है.

तथा ९– कटु तुम्बडीके रसका नास दो तो पांडु, कामला, दूर हों.

वर्जित पदार्थ– पांडुरोगसे पीडित मनुष्यको जौ, गेहूं, चांवल, मूंग, अरहर और मसूरके व्यतिरिक्त अन्यान्न भक्षणार्थ कदापि न दो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे विसूचिकादि-हलीमकपर्यंत रोगाणांयत्ननिरूपणं नाम दशमस्तरंगः ॥ १० ॥

॥ रक्तपित्त-राजरोग-शोष ॥

चिकित्सा रक्तपित्तस्य रोगराड् शोषयोस्तथा ।
विधुभूमिमिते चास्मिन् तरङ्गे लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब हम इस ग्यारहवें तरंगमें यथाक्रमसे रक्तपित्त, राजरोग और शोषकी चिकित्सा लिखते हैं.

रक्तपित्तयत्न १— जिसकी नाशिका, नेत्र, कर्ण या मुखसे रुधिर गिरता हो उसे हर्रे, त्रिफला, निसोत अथवा किरवारेका जुलाब दो तो रक्तपित्त दूर हो.

तथा २— जिसके अधोमार्गसे रक्त गिरता हो उसे वमन करानेसे रक्तपित्त दूर होगा.

तथा ३— खष, कमलगटा, अडूसा, गुरवेल, मुलहटी, महुआ, नागरमोथा, रक्तचन्दन, और धनियांके २ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके संग पिलाओ तो रक्तपित्त दूर हो.

तथा ४— प्रियंगु ( गोंदनी )के फूल, लोद, रसोत, कुह्मारके चाककी मिट्टी और अडूसाके दो टंक चूर्णका क्वाथ मधु और मिश्री मिलाके १० दिन पर्यन्त पिलाओ तो रक्तपित्त दूर हो.

तथा ५— नाकसे रुधिर गिरता हो तो दूबके रस या अनार पुष्परस या अलताईके रस या हर्रेको शीतल जलमें पीसके उस जलका नास दो तो रुधिर प्रवाह बंद होगा.

तथा ६— दूर्वा और आंवलेके शीतल जलमें पीसके मस्तकपर लेप करो तो नाकसे रुधिर गिरना बंद हो.

तथा ७— पका गूलर, या छुहारा ( खारक ) या द्राक्ष ( मुनक्का )को मधुके साथ खिलाओ तो रक्तपित्त दूर हो. ये वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

तथा ८— धनियां, आंवला, अडूसा, द्राक्ष, पित्तपापडेको जलमें भिगोकर ठंडाईके समान उसीमें पीस डालो और चार टंक छानके पिलाओ तो रक्तपित्त, ज्वर, दाह, प्यास ये सर्व दूर होवें.

तथा ९– दाख, चंदन, लोद, गोंदनीके फूलोंको महीन पीसके मधुके साथ १० दिनपर्यन्त सेवन कराओ तो सर्व प्रकारका रक्तपित्त नाश होकर रक्त वहाव बंद हो जावेगा.

तथा १०– वसंतमालनीरस या वीजाबोलबद्ध रस अथवा पर्पटीरस देओ तो रक्तपित्त दूर होकर नासके रक्त गिरना बंद हो.

तथा ११– कांदाके रसका नास दो तो रक्तपित्त बंद हो.

तथा १२– १०० शत बार शीतल जलसे घीको धोकर मस्तकपर लेप करो तो नकसीर (नाकसे रक्त गिरना) बंद हो.

तथा १३– श्वेत कुष्मांड (भूरा कुह्मडा)को छीलके सब वीजे निकाल डालो. मृत्तिकाके पात्रमें डालके जलसे पकाओ, पकनेपर ठंडा करके गाढे वस्त्रसे छानलो जिससें पानी निकलकर शुद्ध पेठा रह जाय, इसे घीके साथ कडाहमें डालकर मंद मंद आंचसे तल डालो. इसके छनेहुए जलमें (जो पहिले छान धराथा) मिश्रीकी चासनी बनाकर उसमें वह पेठा (जो तलके धरा है) डालदो तथा उसीके साथही २ टकेभर पिम्पली, २ टकेभर सोंठ, २ टकेभर जीरा, २ टकेभर धनियां, २ टंक पत्रज, २ टंक इलायची और ५ टंक वंशलोचनका महीन पिसाहुआ चूर्ण और ऽ। पावभर मधु डालकर रखलो अब यह कुष्मांडावलेह प्रस्तुत होगया. जो इसको नित्य १ तथा २ टंक खिलाओ तो रक्तपित्तज्वर, दाह, प्यास, प्रदर, क्षीणता, वमन, स्वरभंग, श्वास, खास और क्षयी ये सर्व रोग दूर होंगे. श्वेतके अभावमें पका हुआ पीत कुष्मांडभी उपयोगमें ला सक्ते हैं.

तथा १४– इलायची, पत्रज, वंशलोचन, तज, दाख, पीपली ये सब एक पैसेभर १ टकाभर मिश्री, १ टकाभर मुलहटी, एक टकेभर खारकके चूर्णमें २ टकेभर मधु मिलाकर गोलियां बनालो जो इसमेंसे एक गोली नित्य खिलाओ तो रक्तपित्त, श्वास, खास, पित्तज्वर, हिचकी, मूर्छा, मद, भ्रम, प्यास, पार्श्वशूल, अरुचि, शोष, स्वरभंग, और क्षयी ये सर्व रोग दूर होवेंगें, इसे एलादि गुटिका कहते हैं ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

राजरोग शोषयत्न १– ८ टंक वंशलोचन, ४ टंक पिम्पली, २ टंक इ-

लायची, १ टंक तज और १६ टंक मिश्रीका चूर्ण मधु और मक्खनके साथ चटाओ तो राजरोग, शोष, ज्वर, श्वास, खास, पार्श्वशूल, मन्दाग्नि, अरुचि, दाह, और रक्तपित्त ये सर्व रोग दूर होवेंगे. इसे शीतोपलादि अवलेह कहते हैं.

तथा २– गिलोयसत, और लोहसारका मिश्रण करके प्रतिदिन १ टंक माखन और मधुके साथ खिलाओ तो राजरोग, शोष जाय.

तथा ३– ३ भाग पारदभस्म (मराहुआ पारा) २ भाग स्वर्णभस्म, १ भाग सिलाजीत और १ भाग गंधक इन सबको इकठे पीसके पीली कौडियोंमें भर दो और बकरीके दूधमें सुहागा पीसके उन कौडियोंके मुखपर लगादो (जिसमें मुंह बंद हो जाय) इन कौडियोंको एक गडगे (मिट्टीका छोटा वर्तन, डुबला)में भरके सराईसे कपड मिट्टी लगाकर उस वर्तनका मुख भलीभांति बंद करके गजपुटमें फूंकदो. स्वांग शीतल हो जानेपर निकालके खल कर डालो यह राजमृगांक बन गया. जो इसकी ४ रत्ती प्रमाणकी मात्रा १ मास पर्यंत वर्द्धमान पिम्पली और मधुके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, अवश्य दूर होवेंगे.

तथा ४– ५ टंक भीमसेनी कपूर, ५ टंक तज, ५ टंक कंकोल, ५ टंक जायफल, ५ टंक लवंग, ७ टंक नागकेशर, ८ टंक पिम्पली, ९ टंक सोंठ और इन सबके बराबर मिश्री इन सबका चूर्ण बनाकर १ टंक नित्य सेवन कराओ तो राजरोग, शोष दूर होवेंगे. यही कर्पूरादि चूर्ण जुदे जुदे अनुपानसे अरुचि, कफ, क्षयी, श्वास, खास, गोला, अर्श, वमन और कंठरोगादिकोभी नाश करता है.

तथा ५– (५ टंक शुद्ध गंधक, ५ टंक शुद्ध पारा)की कजली, ५ टंक हिंगुल, १ टंक मैनसिल, ५ टंक अभ्रक और इन सबसे आधा कांतिसार इन्हें शताबरीके रसमें १४ पुट देके सुखालो यह कुमुदेश्वर रस बन गया. जो इसकी २ तथा ३ रत्तीकी मात्रा प्रतिदिन प्रातःकाल मिश्रीके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, वात, पित्त, कफके रोग और सर्व प्रकारके ज्वर दूर होवेंगे. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ६– चौलाईको पकाके घृतके साथ नित्य खिलाओ तो राजरोग बहुमूत्र दूर होवें.

तथा ७– पकेहुए बडे गीले ५०० आवले मृतिका पात्रमें पकाकर रस निकाल लो इस रसमें ५०० टकेभर मिश्री मृतिकाके पात्रमेंही डालकर चासनी बनाओ (हो सके तो इस चासनीको किसी चांदीके पात्रमें रखो न तो उसी मृतिका पात्रमें रहने दो) नंतर उसमें दाख, अगरचंदन, कमलगटा, इलायची, हर्रेकी छाल, काकोली, क्षीरकाकोली, ऋद्धि, वृद्धि, मेंदा, महामेंदा, जीवक, रिषभ, गुरच, कांकडासिंगी, पोहकरमूल, कचूर, अडूसा, विदारीकंद, खरेंटी, जीवंती, शालपर्णी, पृष्टपर्णी, दोनों कटियाली, बीलकी गिरी, अरलु, कुंभेरपाठा, ये सब औषध १ एक टकेभर तथा ६ टकेभर मधु, १ टकेभर पिम्पली, २ टकेभर तज, २ टंक पत्रज, २ टंक नागकेशर, २ टंक इलायची और २ टंक वंशलोचन इन सर्वौषधोंका चूर्ण डालकर उत्तमप्रकारसे संयुक्त करदो. अब यह चिमनप्रासावलेह बन गया. जो नित्य १ टकेभर खिलाओ तो राजरोग शोष दूर होकर बल और शारीरीक पुष्टी बढे तथा इसके सेवनसे वृद्धभी तारुण्यता धारण कर सक्ता है.

तथा ८– १ टकेभर अडूसा और कटियालीका रस निकाल १ टकेभर मधु और २ टंक पिम्पलीके साथ नित्य सेवन कराओ तो राजरोग दूर हो.

तथा ९– (१ भाग शुद्ध पारा और २ भाग शुद्ध गंधककी) कजलीमें १ भाग मृगांक (स्वर्णभस्म) और १ भाग अनबिंधे मोतियोंका चूर मिलाकर इन सबोंको सराई (दिया, सिकोरा) में रखो. इस दियेपर दूसरा दिया जमाकर कपड मिट्टीसे बंदकर दो, इस सराव सम्पुटको सुखाकर मृतिकाके घडे (आधे घडेमें नोंन, बीचमें सम्पुट और उपरसे फिर मुहतक नोंन भरा हुआ) में धर दो, और इस घडेको चार प्रहर १ दिनभर अच्छा तीक्ष्ण आंच देकर स्वांग शीतल हो जानेपर घडेमेंसे सम्पुट और सम्पुटमेंसे रस बडी युक्तीपूर्वक निकाललो. वैद्यविनोदमें कुमुदेश्वररस नाम दिया है. जो नित्य १ तथा २ रत्तीकी मात्रा मिश्रीके साथ खिलाओ तो राजरोग दूर होवेगा.

तथा १०– पारा और गंधक समान भागकी कजली करके पीली कौडियोंमें भर दो, इन कौडियोंके मुखपर सुहागेका डाट लगाकर अग्निसे तपाओ, नंतर इन कौडियोंको सराव सम्पुट करके गजपुटमें फूंक दो. स्वांग शीतल हो जानेपर सराव सम्पुटमेंसे कौडियोंको निकालकर महीन पीसलो यह पारदेश्वररस रुद्रदत्तमें लिखा है. जो इसकी एक रत्तीप्रमाणकी मात्रा नित्य सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, श्वास, खास, संग्रहणी, और ज्वरातिसार ये सर्व रोग दूर होवेंगे.

तथा ११– चरकमें लिखा है कि शुद्ध शिलाजीतके सेवन करानेसेभी राजरोग नाश हो जावेगा.

तथा १२– १० टंक तालीसपत्र, १० टंक चित्रक, १० टंक हर्रेकी छाल, १० टंक अनारदाना, १० टंक डांसरपा, २ टंक अजमोद, २ टंक गजपीपली, २ टंक अजवान, २ टंक झाऊंवृक्षकी जड, २ टंक जीरा, २ टंक धनियां, २ टंक जायफल, २ टंक लौंग, २ टंक तज, २ टंक पत्रज, २ टंक इलायची और इन सबके समानही मिश्री इन सबका बारीक चूर्ण कर नित्य २ टंककी मात्रा बकरीके दूधके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, क्षयी, पीनस, प्लीहा, अतिसार, मूत्रकृच्छ्र, पांडु, प्रमेह और वात-पित्त-कफके अन्यभी बहुतसे रोग नाश होवेंगे. हारीतमें इसका नाम महातालीसादि चूर्ण लिखा है.

तथा १३– सोंठ, काली मिर्च, पीपली, तज, पत्रज, इलायची, लौंग, जायफल, वंशलोचन, कचूर, बावची, अनारदाना, इन सबका चूर्ण करके चूर्णके तुल्यही कान्तिसार और इन सबोंके तुल्य मिश्री मिलाओ. अब यह गगनायस चूर्ण बन गया जो इसे २ टंक नित्य बकरीके दूधके साथ खिलाओ तो राजरोग, मन्दाग्नि और २० प्रकारके प्रमेह मात्र इससे दूर होवेंगे.

तथा १४– लौंग, कंकोल, काली मिर्च, खश, चंदन, तगर, कमलगटे, काला जीरा, इलायची, अगर, नागकेशर, सोंठ, पीपली, चित्रक, नेत्रवाला, भीमसेनी कपूर, जायफल, वंशलोचन और इन सबसे आधी मिश्री इन सबका महीन चूर्णकर नित्य १ टंक खिलाओ तो राजरोग, मन्दाग्नि,

खास, हिचकी, संग्रहणी, अतिसार, भगंदर, प्रमेह ये सब दूर हों. इसे लवंगादि चूर्ण कहते हैं.

तथा १५– २ टकेभर अभ्रकभस्म, ४ मासे भीमसेनीकपूर, चार मासे जायपत्री, ४ मासे खश, ४ मासे पत्रज, ४ मासे लवंग, ४ मासे तालीसपत्र, ४ मासे दालचिनीका रस, ४ मासे धावडेके फूल, ६ मासे हर्रेकी छाल, ४ मासे आंवला, ६ मासे बहेडेकी छाल, ६ मासे सोंठ, और शुद्ध पारेगंधककी ६ मासे कजलीमें उक्त सर्वौषधका चूर्ण डालकर जलके साथ खलकर चनेके समान गोलियां बनालो. यह श्रृंगार्यभ्रकगुटिका प्रस्तुत हुई. इसकी चार गोलियां नित्य शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, शोष, श्वास, खास, शूल, प्रमेह, वमन, अमलपित्त, अरुचि, संग्रहणी, वातरक्त ये सर्व रोग नाश होकर पुष्टता प्राप्त होगी.

तथा १६– दशमूल, पीपली, चित्रक, कौंचबीज, बहेडेकी छाल, कायफल, काकडासिंगी, देवदारु, पुनर्नवाकी जड, धनियां, लवंग, किरमालेकी गिरी, गोखरू, बधायरा (वृद्धदारु, गर्भवृद्धि) कूट, इन्द्रायण, इन २ दो टकेभरका चूर्ण १६ सेर पानीमें डालकर उसीमें अच्छी बडी बडी चार सेर ८४ हर्रेंभी डालदो. यह सर्व पदार्थ मृतिकाके पात्रमें मंद मंद आंचसे औंटाकर हर्रें निकाल शीतल करलो, दूसरे मृत्तिकाके पात्रमें उत्तम मधुके साथ इन्हें ५ दिनतक रखकर निकालले फिर तीसरे पात्रमें, दूसरे मधु (उपरोक्त छोड दो नया लो) के साथ १५ दिन रखके निकाल लो, तदनंतर चौथे पात्रमेंभी नये मधुके साथ १ मास पर्यंत डुबा रखो तद पश्चात उसी पात्रमें तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, पीपलका चूर्ण डालके इन सबको ऐसे मिलादो कि मधु, हर्रं और चूर्ण एक जीव होजावें, जो प्रतिदिन १ हर्रं खिलाओ तो राजरोग, शोष, खास, श्वास, हिचकी, वमन, ज्वर, मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, वातरक्त, बबासिर, संग्रहणी, रक्तपित्त, दाह, विभूति, ब्योंची, (जो पांवके मुरुओंमें होती है.) कुष्ट, मृगी, और पांडु ये सर्व रोग दूर हों. धवन्तरि संहितामें इन्हें मधुपक्क हरीतकी नाम दिया है.

तथा १७– १ सेर अदकके रसमें १ सेर गुडकी चासनी मंद मंद आं-

चसे बनाओ इस पतली चासनीमें तज, पत्रज, नागकेशर, लौंग, इलायची, सोंठ, काली मिर्च, पीपली (एक टकेभर)का चूर्ण डालकर नित्य टकेभर खिलाओ तो राजरोग, मन्दाग्नि, श्वास, खास, अरुचि ये सब दूर हों. यह अद्रकावलेह है.

तथा १८– बकरीके दूधमें समान जल और उसीमें ३ पीपली डालके मंद मंद आंच दो जब जल औटकर दूध मात्र रह जावे तब वे पिम्पली खाकर उपरसे वही दूध पीजाओ. इसीप्रकार १ मासतक एक १ पीपल बढाकर १ एकही घटाते घटाते पूर्व प्रमाणपर ले आओ तो राजरोग, शोष, खास, श्वास, सब दूर हों. यह काशिनाथ पद्धतिमें लिखा है.

तथा १९– ४ सेर दाख १ मन जलमें डालकर औंटाते औंटाते चौथाई रखलो और उसीमें पुराना गुड, वायविडंग, प्रियंगुपुष्प, तज, पत्रज, इलायची, नागकेशर, (टके टकेभर) डालकर डमरू यंत्रसे मदिराकी रीतिपर रस निकाललो, इसे १ टकेभर नित्य सेवन करो तो राजरोग, श्वास, खास, ये सर्व रोग दूर होवें. योगतरंगणीमें इसे द्राक्षासव संज्ञा दी है.

तथा २०– १ भाग मृगांक, २ भाग रूपरस, ३ भाग तांबेश्वर, ४ भाग पारद्भस्म, ५ भाग अभ्रक इनको एकत्र कर १ वायविडंग, २ भाग नागरमोथा, ३ कायफल, ४ निर्गुंडी, ५ दशमूल, ६ चित्रक, ७ हल्दी, ८ सोंठ, ९ काली मिर्च और १० पिम्पलीकी १ एक पुट पृथक् पृथक् (एकके पश्चात् एक) देकर आधी रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो. इसकी एक गोली नित्य खिलाओ तो राजरोग, खास, प्लीहा, गोला ये सर्व नाश होवें. यह पंचामृतरस सारसंग्रहमें लिखा है.

तथा २१– बडे शंखको गोमूत्रमें जलाकर इस भस्मकी घरिया[1] बनाओ इसमें ५ टंक पारा और ५ टंक गंधककी कजली भरके कपड मिट्टीसे बंदकर गजपुटमें फूंक दो शीतल होनेपर पीसकर रखलो यह भस्म १ रत्ती प्रतिदिन मधुके साथ चटाओ तो राजरोग दूर हो. रसार्णवमें यह विधि लिखी है.

तथा २२– ऽ। पावभर थूहरकी लकडी, १ टकेभर सेंधानोंन, १ टकेभर

१ इसे मूसभी कहते हैं जैसी सुनारलोग चांदी सोना गलानेके लिये बनाते हैं.

सोंचरनोंन, १ टकेभर साम्हरनोंन, ऽ१ सेरभर मठा, २ टकेभर चित्रक इन सबका चूर्ण सरावसम्पुटमें धरके गजपुटमें फूंक दो जो इस भस्ममेंसे १ मासे प्रतिदिन भोजनोपरान्त जलके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, श्वास, बबासीर, शूल ये सब रोग दूर होके भोजन तुरत पचे और आंब तत्काल भस्म हो जावेगी. इसे क्षुद्रादिक्षार कहते हैं. यह "रसराजलक्ष्मी" नाम ग्रंथमें लिखा है.

तथा २३– नीबूके रसमें बुझाईहुई शंखकी १ टकेभर भस्म, १० टंक चव्य, १० जवाखार, १० टंक सिकी हींग, १० टंक पांचों नोंन, १० टंक सोंठ, १० टंक काली मिर्च, १० टंक पीपली, १० टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, (१० टंक शुद्ध पारा और १० टंक शुद्ध गंधककी) कजली, इन सबका चूर्ण नीबूके रसमें खरल करके चनेप्रमाणकी गोलियां बनाओ. जो एक गोली नित्य लौंगके जलके साथ सेवन कराओ तो राजरोग, संग्रहणी, शूल, गोला ये सब रोग दूर होवेंगे. यह शंखबटी योगतरंगणीमें लिखी है.

तथा २४– दशमूल, केवचबीज, शंखाहोली, कचूर, खेरेंटी, गजपीपली, अपामार्ग (ऊंगा, आधाझारा) पीपलामूल, चित्रक, भारंगी, पोकरमूल इन सब २ टकेभर औषधोंका चूर्ण और १०० बडी हरैं सबके सब २० सेर ॥ऽ पानीमें डालके औटाओ. चतुर्थांश रहजानेपर हरोंकी गुठली निकालकर महीन पीस डालो फिर १०० टकेभर पुराने गुडकी चासनी बनाकर उसीमें उपरोक्त चूर्ण और ८ टकेभर गौका घृत डालदो ये अगस्तिहरैं बन गई. जो इन्हें १ टकेभर नित्य खिलाओ तो राजरोग, शोष, खास, श्वास, हिचकी, विषमज्वर, संग्रहणी, पीनस, अर्श और अरुचि ये सर्व रोग दूर हों. यह विधानवृन्दमें लिखा है.

तथा २५– १०० टकेभर अडूसेको जलमें औटाकर चतुर्थांश क्काथ रख लो इसमें १०० टकेभर पुराने गुडकी चासनी बनाकर उसीमें ८ आठ टकेभर तिलीका तेल, ८ टकेभर गौका घृत, १०० हरेंके छिलकोंका चूर, २ टंक पीपली, २ टंक पीपलामूल, २ टंक काली मिर्च, २ टंक पोहकरमूल, २ टंक चव्य, २ टंक चित्रक और २ टंक सोंठका महीन चूर्ण डालकर सिद्ध करलो

जो इसको एक टंकेभर नित्य खिलाओ तो राजरोग, अर्श, खास, श्वास, स्वरभेद, शोथ, अल्मपित्त, पांडुरोग, उदररोग, अग्निमांद्य, और नपुंसकता ये सर्व रोग दूर होवेंगे. ऐसा चरकमें लिखा है.

विशेषतः– वृन्दमें ऐसा लिखा है कि राजरोग, शोषरोगसे रोगित पुरुषको षष्टितण्डुल[1], गेहूं, यव, मूंग, हरिणमांस, कुलथी, बकरीका घृत, बकरीका दुग्ध, मीठा अनार और आंवला ये पदार्थ अति हितकारी हैं इनके सेवनसेही उक्त रोगना शमान हो जावेंगे.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे रक्तपित्त-राजरोग-शोषरोगयत्ननिरूपणं नामैकादशस्तरंगः ॥ ११ ॥

॥ कास-हिक्का-श्वास ॥

**अथ कासस्य हिक्कायाःश्वासस्य हि यथाक्रमात् ।**
**नेत्रचंद्रमिते चोर्मौ चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थः– अब हम इसके आगे १२ वें तरंगमें कास, हिक्का, और श्वासरोगका निदान यथाक्रमसे लिखते हैं.

कासरोगयत्न १– ५ टंक लवंग, ५ टंक काली मिर्च, ५ टंक बहेडेकी छाल और ५ टंक खैरसारके चूर्णको बंबूलकी छालके क्काथमें खल करके २ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ तथा दो या ३ गोलियां नित्य खिलाओ तो खांसी दूर हो. यह लवंगादि गुटिका लोलिम्बराजमें लिखी है.

तथा २– १ टंक शुद्ध पारा, २ टंक शुद्ध गंधक, ३ टंक पिम्पली, ४ टंक हरेंकी छाल, ५ टंक बहेडेकी छाल, ६ टंक काकडासिंगीके चूर्णको बम्बूलके बक्कलके क्काथमें २१ पुट देकर १ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो इनमेंसे १ गोली नित्य सोंठके क्काथके साथ खिलाओ तो खांसी अवश्य दूर होगी. यह रससमूह तथा योगचिंतामणिमें लिखा है.

तथा ३– २ टंक काली मिर्च, २ टंक पिम्पली, १० टंक अनारके छिलके, २ टकेभर गुड और १ टंक जवाखारको महीन पीसकर चनेप्रमाणकी

[1] एक प्रकारकी धानके चांवल जो ६० दिनमें पक जाती है.

गोलियां बनालो जो २ तथा ४ गोली नित्य खिलाओ तो सर्व प्रकारकी खांसी दूर हो.

तथा ४– पिम्पली, हरेंकी छाल, पोकरमूल, सोंठ, कचूर, और नागरमोथाका चूर्ण गुडमें मिलाकर ३ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाओ. जो २ तथा ४ गोली नित्य खिलाओ तो सर्व प्रकारकी खांसी जावे.

तथा ५– सोंठका क्वाथ नित्य सेवन कराओ तो खांसी नाश हो.

तथा ६– अद्रकके रसमें मधु मिलाकर नित्य सेवन कराओ तो खांसी जाय.

तथा ७– कटियाली, गुरच, सोंठ, पोकरमूल, और अडूसाका क्वाथ पिलाओ तो खांसी नाश हो. इसे क्षुद्रादि क्वाथ कहते हैं,

तथा ८– छोटी कटियालीका क्वाथ बनाकर रस निकालो और उसमें पिम्पलीका चूर्ण डालकर नित्य पिलाओ तो खांसी दूर होगी.

तथा ९– २ टंक सोंठ, २ टंक काली मिर्च, २ टंक पिम्पली, २ टंक अमलबेद, २ टंक चव्य, २ टंक चित्रक, २ टंक जीरा, २ टंक डांसरा, २ मासे तज, २ मासे पत्रज, और ४ मासे नागकेशरका चूर ऽ। पावभर गुडके साथ मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियां बांधलो इसकी एक गोली नित्य प्रभात खिलाओ तो खांसी श्वास दूर होगा.

तथा १०– हरेंकी छाल, पिम्पली, सोंठ, काली मिर्चके चूर्णको गुडके साथ गोलियां बनाकर १ या दो तथा तीन गोली नित्यप्रति खिलाओ तो खांसी दूर होगी.

तथा ११– २ टंक लवंग, २ टंक पिम्पली २ टंक जायफल, २ टंक काली मिर्च, ८ पैसेभर सोंठ, और इन सबके तुल्य मिश्री इन सबका चूर्ण कर नित्य २ टंककी मात्रा जलके साथ दो तो खांसी, ज्वर, प्रमेह, अरुचि, श्वास, मन्दाग्नि, संग्रहणी ये सब रोग दूर हों. यह लवंगादि चूर्ण है.

तथा १२– हिंगूल, काली मिर्च, नागरमोथा, सिंगीमुहराका चूर्ण जंभीरी या अदरक रसके साथ खल करके मूंग प्रमाणकी गोलियां बांधलो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो कास, श्वासरोग दूर हो.

तथा १३– काली मिर्च, नागरमोथा, कूट, बच, शुद्ध सिंगीमुहरा इन

सबको अद्रकके रसमें खल करके मूंग प्रमाणकी गोलियां बनालो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो कास, श्वास, कफरोग, सूतिकारोग और संग्रहणी ये सब दूर हों.

तथा १४– २ टंक या १ टंक लौंग, २ टंक पिम्पली, ३ टंक हरेंकी छाल, ४ टंक बहेडेकी छाल, ५ टंक अडूसा, ६ टंक भारंगी और इन सबके तुल्य खैरसार इन सबके चूर्णको बबूलकी छालके क्काथमें २१ पुट देकर मधुके साथ चनेप्रमाणकी गोलियां बनालो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो कास, श्वास, क्षय सब दूर हो इसे कासकर्तरी गुटीका कहते हैं.

तथा १५– १ टंक भीमसेनी कपूर, १ टंक लौंग, २ टंक काली मिर्च, २ टंक पिम्पली, २ टंक बहेडेकी छाल, २ टंक कुलंजन (नागर वेलके पानकी जड) १ टकेभर अनारके छिलका, और इन सबके तुल्य खैरसार, इन सबके चूर्णको जलमें खल करके चनेप्रमाणकी गोलियां बनालो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो खांसी दूर हो. यह कर्पूरादि गुटीका है. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १६– अर्कपुष्पके मध्यकी फुली, और काली मिर्च दोनोंको पीसके काली मिर्चके समान गोलियां बांधलो जो एक गोली नित्य खिलाओ तो खांसी नाशको प्राप्त होगी. १७ और १६ वां दोनों यत्न रुद्रदत्तमें लिखे हैं.

तथा १७– अर्कपुष्पके मध्यकी फुली और लौंगको पीसकर १ रत्तीप्रमाणकी गोलियां बनालो जो १ गोली नित्य खिलाओ तो खांसी दूर होगी.

तथा १८– ४ सेर पसरकटियाली पानीमें औंटाकर क्काथ बनाओ, इस क्काथमें १०० हरें डालकर औंटाओ पक जानेपर शीतल कर गुठली निकाल डालो. १०० टकेभर गुडकी चासनीमें १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर काली मिर्च, १ टकेभर पिम्पली, १ टकेभर पत्रज, १ टकेभर तज, १ टकेभर नागकेशर, १ टकेभर इलायची इन सबका चूर्ण और ऊपर लिखी सो हरोंका चूर्ण दोनों डालकर एकं एक करदो यह भृगुहरीतकी प्रस्तुत होगई. जो नित्य १ टकेभर खिलाओ तो सर्व प्रकारकी खांसी जावेगी.

तथा १९– ४ चार सेर कटियालीके क्काथमें ४ सेर मिश्रीकी चासनी

वनाकर उसमें १ टकेभर गुरच, १ टकेभर कांकडासिंगी, १ टकेभर चव्य, १ टकेभर चित्रक, १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर नागरमोथा, १ टकेभर पिम्पली, १ टकेभर धमासा, १ टकेभर भारंगी, १ टकेभर कचूरका चूरा और एक सेरभर मधु डालो यह कटियालीका अवलेह हुआ जो १ टकेभर नित्य खिलाओ तो सब प्रकारकी खांसी दूर हो. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा २०– अडूसेके क्काथमें मधु डालकर पिलाओ तो खांसी दूर होगी.

तथा २१– अर्कपत्र, मैनसिल, सोंठ, काली मिर्च, और पिम्पली ये सब तमाखू सदृश चिलममें भरके पिलाओ तो खांसी दूर होगी.

तथा २२– (शुद्ध पारे और गंधककी) कजली, शुद्ध सिंगीमुहरा, हिंगूल, सोंठ, काली मिर्च, पीपली, सिका सुहागा, इन सबका चूर्ण भ्रंगराजके रसमें १ दिन खरल करके नंतर ३ दिन विजौरेके रसमें खल करो तदनंतर आधी रत्ती प्रमाणकी गोलियां बांधकर १ गोली नित्य दश दिनपर्यंत खिलाओ तो खांसी, क्षय, संग्रहणी, सन्निपात और मृगी ये सब दूर हों. यह आनंदभैरवरस कहाता है.

हिक्कारोगयत्न १– प्राणायाम करने, किसीप्रकार डरने, भयंकर बात सुनने, तथा वायु कफन्यूनक पदार्थके भक्षणसे हिक्का नाश होगा.

तथा २– बकरीके दूधमें सोंठ डालकर पकाओ जो यह दूध सोंठसहित भक्षण कराओ तो हिचकी दूर हो.

तथा ३– विजौरेके रसमें यवका सत्तू और सैंधानमक मिलाकर खिलाओ तो हिचकी दूर होगी.

तथा ४– सोंठ और पिम्पलीका चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो हिचकी शीघ्र मिट जावेगी.

तथा ५– मक्खीकी विष्ठा दूधमें पीसकर नास दो तो हिचकी जावे.

तथा ६– गुड, सोंठ, पानीमें पीसकर नास दो तो हिचकी दूर हो.

तथा ७– कांसकी जडके रसमें मधु मिलाकर नास दो तो हिचकी दूर हो.

तथा ८– मयूरपक्षकी भस्म मधुके साथ चटाओ तो हिचकी जावे.

तथा ९– विजौरेकी केशरमें सेंधानोन मिलाके खिलाओ तो हिक्का दूर हो.

तथा १०– गवांरपाठेके रसमें सोंठ डालकर खिलाओ तो हिचकी दूर हो.

तथा ११– पोकरमूल, जवाखार, काली मिर्चका चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो हिचकी दूर हो.

तथा १२– हल्दी, उर्दका चूर्ण निर्धूम अग्निसे तमाखू सदृश पिलाओ तो भयंकर हिक्का दूर हो. ये सर्व यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

तथा १३–सनकी छालका चूरा चिलममें भरके पिलाओ तो हिचकी जावे.

तथा १४– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, जवासा, (दुरालभा) कायफल, करेलेकी वेल, पोकरमूल, कांकडासिंगी, इन सबका चूर्ण बनाकर २ टंक नित्य मधुके साथ चटाओ तो हिक्का दूर हो.

तथा १५– १ टंक पित्तपापडा, १ टंक पिम्पली और ५ टंक गुड इनका क्काथ बनाकर पिलाओ तो हिक्का दूर हो.

तथा १६– १० टंक असालु (हालु)का क्काथ बनाकर पिलाओ तो हिक्का तत्काल बंद हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा १७– १ टंक मुलहटीका चूरा मधुके साथ चटाओ, तो हिचकी बंद हो.

तथा १८– १ टंक पिम्पली मिश्रीके साथ सेवन कराओ तो हिक्का जावे.

तथा १९– दुग्धमें घृत डालकर कुनकुनासा पिलाओ. हिक्का बंद हो.

तथा २०– बिजौरेका रस, मधु और सोंचरनोंन मिलाकर पिलाओ तो हिक्का दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा २१– कवीट या आंवलेंका रस मधु मिलाकर पिलाओ तो हिक्का और श्वास दोनों बंद होवें. यह काशिनाथपद्धतिमें लिखा है.

तथा २२– इलायची, दालचिनी, नागकेशर, काली मिर्च, पिम्पली, सोंठ, उत्तरोत्तर वृद्धि क्रमसे (पहिला १ दूसरा २ तीसरा ३ टंकादि) लेकर इन सबोंके तुल्य मिश्री डालो इसे घृतमें सानकर प्रतिदिन २ टंक चूर्ण जलके साथ सेवन करो तो हिक्का, अजीर्ण, उदररोग, अर्श, श्वास, और कास ये सब रोग दूर हों. यह एलादिचूर्ण वृंदमें लिखा है.

श्वासरोगयत्न १– नमक, तेलको उष्ण करके हृदयकों सेको तो श्वास दब जावेगा.

तथा २– अदरकके रसमें मधु मिलायके चटाओ तो श्वास दूर

तथा ३– १ सेर अदरकके रसमें ऽ। पावभर सोंठ, ऽ। पावभर बं: छालका चूर्ण और ऽ२ दो सेर बकरीका मूत्र डालके मृत्तिकाके पात्रमें औटाओ, गाढा हो जानेपर ऽ।। आधसेर मधु मिलाकर नित्य १ टंक सेवन कराओ तो श्वास, और कास, दोनों दूर हों.

तथा ४– दशमूल, कचूर, रास्ना, पिम्पली, सोंठ, पोकरमूल, भारंगी, कांकडासिंगी, गुरच, चित्रक, इनके २ टंक चूरेका क्काथ नित्य सेवन कराओ तो श्वास, कास, पार्श्वशूल, ये सब दूर हों.

तथा ५– पेठेकी जडका १ टंक चूर्ण नित्य सेवन कराके उपरसे उष्ण जल पिलाओ तो श्वास, कास दूर हो.

तथा ६– हल्दी, काली मिर्च, मुनक्का, पिम्पली, रास्ना, कचूर, इन सबका १ टंक चूर्ण गुड और कडवे (तिल्हीके) तेलके साथ सेवन कराओ तो श्वास निश्चय दूर हो.

तथा ७– ऽ१ एक सेर भारंगीको औंटाके रस निकालो, इसमें १०० टकेभर गुडकी चासनी बनाते समयही ऽ१ एक सेर हर्रेकी छालका चूर्ण डालके मिलादो. शीतल हो जानेपर इसीमें ६ टंक मधु और १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर काली मिर्च, १ टकेभर पिम्पली, १ टकेभर तज, १ टकेभर पत्रज, १ टकेभर नागकेशर, २ टकेभर जवखार इनका महीन पिसाहुआ चूर्ण उसी चासनीमें मिलादो. जो एक पैसेभर नित्य खिलाओ तो श्वास, काश, अर्श, गुल्म, क्षय, और उदररोग ये सब दूर होवें, इसे भारंगी अवलेह कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशोक्त हैं.

तथा ८– (२ टंक शुद्ध पारा और २ टंक शुद्ध गंधककी) कजली, २ टंक सिंगीमुहरा, २ टंक सिका सुहागा, २ टंक मैनसिल, २ टंक काली मिर्च, २ टंक सोंठ, २ टंक पिम्पली, इन सबके चूर्णको अद्रकके रसकी १ पुट देकर सिद्ध करलो यह श्वासकुठार रस बन गया जो इसकी एक रत्ती प्रमाणकी मात्रा नित्य दो तो श्वास दूर हो.

तथा ९– १ भाग शुद्ध पारा, २ भाग गंधक और ३ भाग ताम्बेश्वर:

तीनोंको गवांरपाठेके रसमें खल करके तांबेके सम्पुटमें रखो और वालुका-यंत्रसे एक दिनभर आंच देकर सिद्ध करलो यह सूर्यावर्त रस बनालो जो इसे २ रत्ती नित्य सेवन कराओ तो श्वासरोग दूर हो. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

तथा १०– काकडासिंगी, सोंठ, पिम्पली, नागरमोथा, पोकरमूल, कचूर, काली मिर्च, और इन सबके तुल्य मिश्री डालकर चूर्ण बनालो, इसमेंसे २ टंक नित्य गुरच, अडूसा, पिम्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ (इतनेमें किसी एक)के क्काथके साथ सेवन कराओ तो श्वास दूर हो यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ११– पिम्पली, पोकरमूल, हर्रेकी छाल, सोंठ, कचूर, कमलगटे, इन सबके चूर्णमें समान गुड मिलाकर चनेप्रमाणकी गोलियां बनालो जो १ तथा दो गोली नित्य सेवन कराओ तो श्वासरोग दूर हो.

तथा १२– शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, लोहभस्म और इन तीनोंसे दूनी सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, पत्रज, नागकेशर, नागरमोथा, वायविडंग, संभालु, कपेला, पीपलामूल, ये सब लेकर चूर्ण कर डालो और जल पिम्पलीके रसमें ३ पुट देकर चनेप्रमाणकी गोलियां बनालो इसकी १ गोली नित्य सेवनसे श्वास, बबासीर, भगंदर, संग्रहणी, हृदयशूल, पार्श्वशूल, उदररोग, प्रमेह ये सर्व रोग दूर हों. यह महोदधिरस सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा १३– (शुद्ध पारे और गंधककी) कजली, कांतिसार, सुहागा, रास्ना, वायविडंग, त्रिफला, देवदारु, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, गुरच, कमलगटा, शुद्ध सिंगीमुहरा इन सबका महीन चूर्ण मधुमें मिश्रित कर १ तथा २ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो इसकी १ गोली नित्य भक्षण कराओ तो श्वास दूर हो. वैद्यरहस्यमें इसे अमृतार्णवरस संज्ञा दी है.

तथा १४– (पारा और गंधक तुल्यकी) कजलीको चौलाईके रसमें ५ दिनपर्यंत खल करके वज्रमूस (दृढ घरिया)में रख १ दिनपर्यन्त वालुका यंत्रसे आंच दो. इसमेंसे १ रत्तीकी मात्रा नित्य पान अथवा पानके रसके साथ खिलाओ तो श्वास और हिक्का दोनों दूर हों. रुद्रदत्तमें इसका नाम मेघडम्बररस लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे कास-हिक्का-श्वासरोगचिकित्सानिरूपणं नाम द्वादशस्तरंगः ॥ १२ ॥

॥ स्वरभेद-अरोचक-छर्दि ॥

स्वरभेदारोचकयोश्छर्देश्चैव यथाक्रमात् ।
तरङ्गेऽस्यौषधीशेस्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब हम इस तेरहवें तरंगमें यथाक्रमसे स्वरभेद, अरोचक और छर्दि तीनों रोगोंकी चिकित्सा लिखते हैं.

स्वरभेदरोगयत्न १— नोंनयुक्त तेलके पदार्थ भक्षण कराओ तो वातस्वरभंग दूर होगा.

तथा २— उष्ण जल पिलाओ तो वातस्वरभंग दूर हो.

तथा ३— घृत गुडके भक्षणसे वातस्वरभंग दूर हो.

तथा १— घृत-मधुको भक्षण कराओ तो पित्तका स्वरभंग दूर हो.

तथा २— उष्ण दूध पिलाओ तो पित्तस्वरभंग दूर हो.

तथा १— खारे, कडुवे पदार्थ अथवा मधु खिलाओ तो कफस्वरभंग दूर हो.

तथा २— पिम्पली, पीपलामूल और काली मिर्च गोमूत्रमें पीसकर पिलाओ तो कफस्वरभंग दूर हो.

तथा ३— गलेके, तालुके मसूडोंका रुधिर निकाल डालो तो कफस्वरभंग दूर हो.

तथा ९— १०० टकेभर कटियाली, ५० टकेभर पीपलामूल, २५ टकेभर चित्रक, २५ टकेभर दशमूल इन सबका चूर्ण १ मन पानीमें औंटाकर औंटते औंटते चार सेर रह जानेपर उतारलो. ठंडा होनेपर छानकर १०० टकेभर पुराने गुडकी पतली चासनी बनाओ नंतर इसमें ८ पल पिम्पली, २ पल जायफल, १ पल काली मिर्चका चूर्ण और एक सेरभर मधु डालकर सबको एकंएक करदो जो यह नित्य दो या तीन टकेभर खिलाओ तो सर्व प्रकारका स्वरभंग, छरदी, श्वास, कास, मन्दाग्नि, कण्ठरोग, गुल्म, प्रमेह, अनाह (अफरा) और मूत्रकृच्छ्र ये सब रोग दूर होगे. यह निदग्धिकावलेह (कटियालीका अवलेह) भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा १०– अजमोद, हल्दी, चित्रक, जवाखार, आवलेका २ टंक चूर्ण नित्य घृत और मधुके साथ चटाओ तो भयंकर स्वरभंगभी दूर हो.

तथा ११– हर्रेकी छाल, बच, पिम्पलीका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो मेद, क्षयरोगका स्वरभंग दूर हो. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

तथा १२– बहेडेकी छाल, पिम्पली, सेंधानोंन और आंवलेका चूर्ण, गौकी छाछ अथवा गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो स्वरभंग दूर हो. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा १३– जायफल, पिम्पली, नील (वृक्ष विशेष जिससे नील एक प्रकारका रंग निकलता है) और विजौरेकी कली इन सबको महीन पीसके मधुके साथ चटाओ तो सर्व स्वरभंग दूर होकर अति मनोहर स्वर हो जावेगा. यह जायफलका अवलेह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा १४– कुलिंजनको मुखमें रखकर उसका रस चूसते जाओ तो स्वरभंग दूर हो.

तथा १५– चव्य, अमलवेद, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, डांसरे, तज, पत्रज, जीरा, चित्रक, इलायची, इन सबका २ टंक तिगुणे गुडके साथ नित्य सेवन कराओ तो स्वरभंग, पीनस, कफरोग और अरुचि ये सब दूर हों. इसे चव्यादि चूर्ण कहते हैं.

तथा १६– पारदभस्म, ताम्बेश्वर, कांतिसार इन सबको तुल्य लेके कटियालीके रसमें २१ पुट दो और मूंगके समान गोलियां बनाकर एक गोली मुखमें रखो तो स्वरभंग दूर हो. ये गुरु गोरखनाथजीकी गोली है.

तथा १७– ब्राह्मी, बच, हर्रेकी छाल, अडूसा, पिम्पलीका २ टंक चूर्ण नित्य मधुके साथ १४ दिनतक सेवन कराओ तो स्वरभंग दूर होकर अति मनोहर (किन्नर सदृश) स्वर बन जावेगा. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

अरोचकरोगयत्न १– अद्रक और सेंधानोंन भोजनके पूर्व खिलाओ तो अरोचक दूर हो.

तथा २– अद्रकके रसमें मधु डालकर पिलाओ तो अरुचि, कास, श्वास, तीनों दूर हों.

तथा ३– मिश्री डालकर पक्की इमलीका रस बनाओ और उसमें इलायची, लौंग, भीमसेनी (शुद्ध) कपूरकी प्रतिबास (भावना) देकर यह रस पिलाओ तो अरुचि दूर हो.

तथा ४– राई, जीरा, सिकी हींग, सोंठ, सेंधानोंनका चूर्ण गउके दही तथा मठाके साथ पिलाओ तो अरुचि दूर होकर क्षुधा बढे.

तथा ५– वस्त्रसे छनेहुए गौके दहीमें मिश्री डालकर इलायची, लौंग, भीमसेनी कपूरके साथ पिलाओ तो अरुचि तत्काल दूर हो इसे सिखरण कहते हैं.

तथा ६– २ टंकेभर अनारदाने, ८ टंकेभर मिश्री, १ टंकेभर सोंठ, १ टंकेभर काली मिर्च, १ टंकेभर पिम्पली, २ टंकभर तज, २ टंक पत्रज, २ टंक नागकेशर, इनका २ टंक चूर्णनित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अरुचि खासी दूर होगी, इसे दाडिमादि चूर्ण कहते है.

तथा ७– लवंग, कंकोल मिर्च (शीतल मिर्च), खश, चन्दन, अगर, तगर, कमलगटा, कमलतन्तु, काला जीरा, नागकेशर, पिम्पली, सोंठ, चित्रक, इलायची, भीमसेनी कपूर, जायफल, वंशलोचन और इन सबसे आधी मिश्री इन सबका १ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अरुचि, मंदाग्नि, क्षीणता, बंधकुष्ट, खांसी, दाह, हिचकी, राजरोग, संग्रहणी, अतिसार, प्रमेह, ये सर्व रोग दूर होंगे, इसे लवंगादि चूर्ण कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ८– सौंफ, काली मिर्च, डांसरा, अमलबेद, सोंचरनोंन, गुड, मधु, विजौरेकी केशर, तज, पत्रज, वंशलोचन, इलायची, अनारदाना, जीरा, ये सर्वौषध अधेले अधेलेभर लेके चूर्ण बनाओ और नित्य २ दो टंकके लगभग जलके साथ सेवन कराओ तो अरोचक दूर हो.

तथा ९– पिम्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, काली मिर्च, अजमोद, डांसरा, अमलबेद, असगंध, अजवान, कैथा (कवीट) ये सब अधेले अधेलेभर और ४ टंक मिश्री इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो अरुचि, श्वास, कास, वमन, शूल, रक्तपित्त, ये सब दूर हों इसे वृहदेलादि चूर्ण कहते हैं, यह सर्व संग्रहमें लिखा है.

तथा १०– जवाखार, सज्जी, सिका सुहागा, पांचों नोंन, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, त्रिफला, लोहसार, शुद्ध कपूर, चव्य, चित्रक, अनारदाना, डांसरा, अदरक इन सबके चूर्णको अजवानके रसकी ३ पुट नंतर नीबूके रसकी ५ पुट तदनंतर अमलबेदके रसकी ३ पुट देकर चने प्रमाणकी गोलियां बांधलो जो इसकी १ गोली नित्य खिलाओ तो अरुचि, मन्दाग्नि, गुल्म, श्वास, कास, कफ, प्रमेह इत्यादि रोग पृथक् पृथक् अनुपानसे दूर होंगे. यह अग्निकुमाररस सर्वसंग्रहमें लिखा है.

छर्दिरोगयत्न १– धनियां, सोंठ, दशमूल, इनका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो वातछर्दि दूर हो.

तथा २– घृतमें सेंधानोंन डालकर पिलाओ तो वातछर्दि दूर हो.

तथा ३– मूंग और आंवलेको औंटाकर रस निकालो और इस रसमें घृत, सेंधानोंन डालकर पिलाओ तो वातछर्दि दूर हो.

तथा ४– मूंग, मसूर, जौंके आटेकी राब (लपसी)में मधु डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ५– पित्तपापडेके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ६– गुरच, नीमकी छाल, त्रिफला, पटोलके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ७– मक्खीकी विष्टा (तथा पोदीनेका फूल) मिश्री, चंदन, इन तीनोंको घिसकर मधुके साथ चटाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ८– लाहीके सत्तूमें घृत मिश्री और मधु डालकर खिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा ९– मसूरके सत्तूमें मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तछर्दि दूर हो.

तथा १०– चावलोंके पानीमें मधु डालके पिलाओ तो पित्तछर्दि बंद हो.

तथा ११– अनारका रस मधुके साथ पिलाओ तो वात, पित्त, कफ तीनों छर्दि दूर हो.

तथा १२– इलायची, नागरमोथा, नागकेशर, चावलोंकी लाही, गोरीसर, चंदन, बहुफली, बेरकी बिजी, लौंग, पिम्पली, इन सबका

१ या दो टंक चूर्ण मधुके साथ खिलाओ तो त्रिदोषज छर्दि दूर हो.

तथा १३– पीपलके पेडके छिलके जलाकर पानीमें बुझाओ और यह बुझाहुआ जल पिलाओ तो उल्टी बंद होवेगी.

तथा १४– बेरकी विजी, आंवलेकी विजी, छोटी पीपल, मक्खीकी वीठ इनको क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो छर्दि बंद हो. ये यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

तथा १५– जामुनके कोमल पत्र और आमके कोमल पत्रोंको पानीमें औंटाकर इसमें लाहीको महीन पीसो और मधु डालकर पिलाओ तो भयंकर छर्दिभी दूर हो.

तथा १६– यदि ग्लानिकारक वस्तुसे छर्दि हुई हो तो उत्तम मनोहर वस्तु (जिसके देखनेसे चित्तग्लानि दूर होकर उत्साह बढे) दिखाओ तो ग्लानिजन्य छर्दि दूर हो.

तथा १७– आंवसे छर्दि हुई हो तो लंघन कराओ छर्दि दूर होगी.

तथा १८– १ मासे केशर, १ मासे इलायची, २ रत्ती हिंगुल, इन सबको महीन पीसकर मधुके साथ चटाओ तो सर्व प्रकारकी छर्दि दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे स्वरभेद, अरोचक, छर्दिरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम त्रयोदशस्तरंगः ॥ १३ ॥

## ॥ तृषा-मूर्छा-मदात्यय ॥

तृषायाश्चात्र मूर्छाया भङ्गे वेदविधौ क्रमात् ।
मदात्ययादिरोगाणां चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस चौदहवें तरंगमें यथाक्रमसे तृषा, मूर्छा और मदात्यय रोगकी चिकित्सा लिखते हैं.

तृषारोगयत्न १– वायुकी तृषा उष्ण अन्न तथा उष्ण जल सेवन करनेसे दूर होगी.

तथा २– दहीं और गुड खिलाओ तो वाततृषा दूर हो.

तथा ३– स्वर्ण तथा चांदीको अत्यूष्ण (तपाके लाल) कर जलमें बुझावे दो और यह जल पिलाओ तो पित्ततृषा दूर हो.

तथा ४– मिश्रीका ठंडा रस (शर्वत) पिलाओ तो पित्ततृषा दूर हो.

तथा ५– रात्रिभर धनियांको भिंगाके ठंडाईके समान पीस डालो और मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्ततृषा दूर हो.

तथा ६– अनारके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्ततृषा दूर हो.

तथा ७– शीतल जलमें रहना, जलक्रीडा करना अथवा शीतल (गीले) वस्त्र पहिननेसे पित्ततृषा दूर हो.

तथा ८– कपूर, चंदन तथा अगरको सिर, ललाट अथवा शरीरपर लपेटनेसे पित्ततृषा दूर होगी.

तथा ९– तीक्ष्ण, कटु वस्तुको खिलानेसे कफतृषा दूर होगी.

तथा १०– लौंगका क्वाथ पिलाओ तो कफतृषा दूर हो.

तथा ११– जीरा, सोंठ, सोंचरनोंनका चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो कफतृषा दूर हो.

तथा १२– बकरेका रक्त पिलाओ तो शस्त्रप्रहारजन्य तृषा दूर हो.

तथा १३– बकरेके सोरवे (मांस रस)में मधु डालकर पिलाओ तो प्रहारजतृषा जावे.

तथा १४– क्षीर (खीर=दूधमें पकाये हुए चांवल)में मिश्री डालकर खिलाओ तो प्रहारजतृषा दूर हो.

तथा १५– गन्ना (सांटा=ईष)का रस पिलाओ तो क्षीणताकी तृषा दूर हो.

तथा १६– बडके अंकूर, मुलहटी, लाही, कमलगटे, इनको महीन पीसकर गोली बनाओ और इसमेंसे १ गोली मुंहमें रखो तो क्षीणतृषा दूर हो.

तथा १७– महुआको मुखमें रखो तो तृषा दूर हो.

तथा १८– विजौरेकी जड, अनार, कवीटकी जड, चंदन, लोद, बेरीजड इन सबको महीन पीसकर सिरपर लेप करो तो तृषा, दाह, शोष तीनों दूर हो.

तथा १९– बच और बीलका क्वाथ पिलाओ तो आंवतृषा दूर हो.

तथा २०– अति दुर्बल मनुष्यको तृषा हो तो दूध पिलानेसे दूर होगी.

विशेषतः— तृषासे मनुष्य मोहको प्राप्त होकर प्राण छोड देता है इस लिये किसीभी दशामें पानी पिलाना बंद न करो. बरन रोगानुसार थोडा बहुत जल सदा देतेही रहो. ये यत्न वैद्यविनोद तथा भावप्रकाशमें लिखे हैं.

मूर्छारोगयत्न १— तिल्ली तथा इंडोली आदिसे सेको तो वातमूर्छा दूर हो.

तथा २— शीतल रस (शर्बत) पिलाओ तो पित्तमूर्छा दूर हो.

तथा ३— चमत्कारी मणि धारणसे पित्तमूर्छा जावेगी.

तथा ४— कपूर, चंदनादि शीतल पदार्थोंके लेपसे मूर्छा दूर होगी.

तथा ५— बेरकी विजी, शीतल मिर्च, खश, नागकेशर ये चारों पदार्थ ५ टंक लेके शीतल जलमें भिंगादो गल जानेपर मसलकर छानलो यह छनाहुआ जल मिश्री और मधु डालकर पिलाओ तो मूर्छा दूर हो.

तथा ६— मीठे अनारके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूर्छा जावे.

तथा ७— दाखके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूर्छा दूर हो.

तथा ८— साबुन (मार्जन)को घिसके (नेत्रोंमें) अंजन लगाओ तो कफकी मूर्छा दूर हो.

तथा ९— सरस (वृक्षविशेष)के बीज, पिम्पली, काली मिर्च, सेंधानोंन इनको गोमूत्रमें पीसकर नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो कफकी मूर्छा दूर हो.

तथा १०— मैनसिल, बच, लहसन, इनको गोमूत्रमें पीसके आखोंमें अंजन लगाओ तो कफ तथा सन्निपातकी मूर्छा दूर हो.

तथा ११— मैनसिल, महुआ, सेंधानोंन, बच, काली मिर्च इनको महीन पीसकर जलके साथ नास दो तो सर्व मूर्छा दूर हो.

तथा १२— शीतल जल सिरपर डालो अथवा अन्य शीतल यत्न करो तो रुधिरमूर्छा दूर हो.

तथा १३—जिसे मद्यकी मूर्छा हो उसे थोडा मद्य और पिलाओ तो मू०दूर हो.

तथा १४— निद्रासेभी मद्यमूर्छा दूर होगी.

तथा १५— मैंनफल, या नीलाथूथा या फिटकरी या पिम्पलीको जलमें औंटाकर वह जल पिलाओ जिससे वमन होजावे तो विषमूर्छा दूर हो.

तथा १६— पिम्पली, पारदभस्म, ताम्बेश्वर, नागकेशर, इनकी १ रत्तीकी

मात्रा शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो सर्व मूर्छा जाग्रत हों.

तथा १७– धमासेके काथमें घृत डालकर पिलाओ तो चक्कर आना (जी घूमना, भौंल आना) बंद हो.

तथा १८– हर्रे और आंवलेके काथमें घृत डालकर पिलाओ तो चक्कर बंद हों.

तथा १९– सोंठ, पिम्पली, सोंफ, हर्रकी छाल, ५ पांच टंकका चूर्णकर ६ टंकेभर गुडमें मिलादो और ५ टंकभरकी गोलियां बनाकर १ गोली नित्य खिलाओ तो चक्कर आना बंद हो.

तथा २०– सेंधानोंन, कपूर, मैंनसिल, सरसों, पिम्पली, महुएके पुष्प इन सबको घोडेकी लार (थूक)में महीन पीसकर नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो तन्द्रा तथा बहुनिद्रा दोनों दूर हों.

तथा २१– सहजनेके बीज, सेंधानोंन, सरसों, कूट, इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नास दो तो तंद्रा और अति निद्रा दूर हो.

तथा २२– काली मिर्च, मुंगनेके बीज, सोंठ, पिम्पली, इनको अगस्त्यपुष्प (फूल विशेष)के रसमें पीसकर नास दो तो तंद्रा और निद्राभी दूर हो. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा २३– सोंठके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूर्छा मात्र दूर हो.

तथा २४– कैंवचकी फली शरीरमें लगादो तो मूर्छा दूर हो.

मदात्यययत्न १– द्राक्षासब (अंगूरकी शराव) आदि शास्त्रोक्त उत्तम मद्य विधिपूर्वक सेवन कराओ तो वातमदात्यय दूर हो. जैसे अग्निसे जलनेपर पुनः अग्निसे तपादो तो पीडा न्यून होकर फेफ फोला नहीं आता इसी प्रकारसे वातमदात्ययभी मद्यपानसे दूर होगा.

तथा २– बिजौरेकी केशर, अमलबेद, मीठे बेर, मीठी अनारकी भावना, (पुट) अजवान, जीरे, सोंठके महीन चूर्णमें देकर यह चूर्ण पुराने उत्तम मद्यके साथ पिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो.

तथा ३– सोंचरनोंन, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पलीका चूर्ण वैद्य शास्त्रोक्त विधिसे पिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो.

तथा ४– चव्य, सोंचरनोंन, सिकी हींग, सोंठ, अजवानका चूर्ण मधके साथ खिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो.

तथा ५– लवा (चंडूल) तीतर अथवा मुरगाका मांस खिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो.

तथा ६– अति स्वरूपवती चतुर १६ वर्षकी युवा स्त्रीसे मैथुन कराओ तो वातमदात्यय दूर हो. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ७– दाख, अनार, खारक, तथा महुआकी मदिरा मिश्रीके संयोगसे पिलाओ तो वातमदात्यय दूर होगा.

तथा ८– गौके मठेमें मिश्री डालकर पिलाओ तो वातमदात्यय दूर हो. यह सारसंग्रहमें लिखा है.

तथा ९– समस्त शीतल यत्नोंसे पित्तमदात्यय दूर होगा.

तथा १०– शीतल जलमें मिश्री और मधु डालकर पिलाओ तो पित्तमदात्यय दूर हो.

तथा ११– मीठेअनारका रस मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तमदा० दूर हो.

तथा १२– मृग, लवाका मांस खिलाओ तो पित्तमदात्यय दूर हो.

तथा १३– बकरेका सोरवा तथा षष्टीतण्डूल भक्षण कराओ तो पित्तमदात्यय नाश हो.

तथा १४– चंदन तथा खशका लेप करो तो कफमदात्यय नाश हो.

तथा १५– यव, गेहूं तथा कुलथीका भोजन कराओ तो कफमदात्यय जावे.

तथा १६– कटु, खट्टी, खारी वस्तु खिलाओ तो कफमदात्यय दूर हो.

तथा १७– वमन या लंघन कराओ तो कफमदात्यय दूर हो.

तथा १८– सोंचरनोंन, अमलवेद, जीरा, तज, इलायची, काली मिर्च, मिश्री इन सबका चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो कफमदात्यय दूर हो.

तथा १९– पारे गंधककी १ टंक कजली, आंवलेके रसके साथ खिलाओ तो सन्निपातमदात्यय दूर हो.

तथा २०– दाखके रस तथा अनारके रसमें मधु और मिश्री मिलाकर पिलाओ तो पानविभ्रम दूर हो. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा २१– पेठेके रसमें गुड डालके पिलाओ तो धतूरेके फल आदि भक्षणसे उत्पन्न हुआ मदात्यय नाश हो.

तथा २२– दूधमें मिश्री डालकर पिलाओ तो धतूरे और भंगका मदात्यय दूर हो.

तथा २३– कपासकी जडका रस, या भटेकी जडका रस, या पतली छाछ, या घृत, या मिश्रीके जलमें नीबूका रस, पिलाओ तो भंग तथा धतूरेका मदात्यय दूर हो.

विषमदात्ययमत्न २४– १ मासे निबोलीकी विजी और १ मासे नीलाथोथेको कांजीके साथ पीसकर पिलाओ तो विषमदात्यय मात्र दूर होगा. ये यत्न वैद्योपचारग्रन्थमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे तृषा-मूर्छा-मदात्ययादिरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥ १४ ॥

॥ दाह-उन्माद ॥

दाहोन्मादरुजोर्वै बाणकलानिधिमिते तरङ्गेऽस्य ।
लोकहिताय लिखामि नवीनामृतसागरस्य सुचिकित्साम् ॥ १ ॥

आर्याछंदः ॥

भाषार्थः– अब हम इस नूतनामृतसागरके पन्द्रहवें तरंगमें लोकहितार्थ दाह और उन्मादरोगकी उत्तम चिकित्सा लिखते हैं.

दाहयत्न १– घृतको १०० तथा १००० बार शीतल जलसे धोकर शरीरमें मर्दन कराओ तो शरीरकी दाह दूर हो.

तथा २– जौके सत्तूमें मिश्री डालकर खिलाओ तो दाह दूर होगा.

तथा ३– आंवलोंके जलमें महीन वस्त्र भिंगाकर उढाओ तो दाह शीतल हो जावेगी.

तथा ४– खश और चंदनको घिसकर शरीरमें लेप करो तो दाह जावे.

तथा ५– केलेके कोमल पत्र या कमल पुष्पकी शैयापर सुलाओ तो दाह शीतल हो.

तथा ६– जलके फुहारे तथा जलक्रीडा सेवन कराओ तो दाह नाश हो.

तथा ७– खशकी टट्टीयोंके मध्य विठाओ तो दाह शीतल हो.

तथा ८– उत्तम शीतल जल पिलाओ तो दाह नाश हो.

तथा ९– उपवनादि शीतल स्थानमें भ्रमण कराओ तो दाह ठंडी पडे.

तथा १०– चंदन, पित्तपापडा, खश, कमलगटे, धनियां, सोंफ और आंवलेके चूर्णमेंसे २ टंकका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो दाह जावे.

तथा ११– धनियांको रात्रिभर शीतल जलमें भिंगोकर प्रातःकाल भंगके समान घोट (पीस) डालो, जलमें वस्त्रसे छानकर मिश्रीके साथ पिलाओ तो दाह दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १२– यदि रक्त विगाडसे दाह हुई हो तो उस मनुष्यके शीर (फस्त) खुलवा दो तो दाह दूर होगी.

तथा १३– शुद्ध पारा, शुद्ध गंधककी कजली, भीमसेनी कपूर, चंदन, खश, और नागरमोथा. इन सबके चूरको जलके साथ खल करके चनेके लगभग गोलियां बनालो. और एक गोली मुंहमें रखके चूंसो (रसपान) तो शरीरकी दाह दूर हो यह दाहनाशकरस है.

तथा १४– १ तोला शुद्ध पारा, १ तोला शुद्ध गंधक (की कजली) १ तोला ताम्बेश्वर, १ तोला अभ्रक इन सबको खरल करके नागरमोथाके रसकी १ पुट, मीठे अनारके रसकी १ पुट, केवडेके रसकी एक पुट, सहदेवी (महाबला)के रसकी १ पुट, पिम्पलीके रसकी १ पुट, चंदनके रसकी १ पुट और दाखके रसकी ७ पुट दो नंतर छायामें सुखाके चनेप्रमाणकी गोलियां बनालो जो इसकी १ गोली नित्य खिलाओ तो दाह, अमलपित्त, मूत्रकृच्छ्र, प्रदर, और प्रमेह ये सर्व रोग दूर हों. इसे चन्द्रकलारस कहते हैं. (चन्द्रकला=शीतल, ठंडा, शीतलतामें चन्द्रकी कला सदृश).

उन्मादरोगयत्न १– घृतादि पिलाओ तो वातोन्माद दूर हो.

तथा २– अच्छे विरेचन (जुलाब) दो तो पित्तका उन्माद दूर हो.

तथा ३– वमन कराओ तो कफका उन्माद नाश हो.

तथा ४– बस्तिक्रिया (लिंगेद्रि तथा गुदामें पिचकारी लगाना) करनेसेभी उन्मादरोग दूर होगा.

तथा ५– म्हूण्या (एक सागका नाम. जिसे कुल्फाभी कहते हैं)का रस निकालकर उसके समान गुड मिलाओ यह गुड गौकी छाछमें मिलाकर पिलाओ तो उन्मादरोग दूर होगा.

तथा ६– खरवटे (वृक्षविशेष)की डालियोंका रस निकालकर पिलाओ तो उन्मादरोग दूर होगा.

तथा ७– रोगीके शरीरमें कडुए तेलका मर्दन करके घाममें खडा रखो तो उन्मादरोग दूर होगा.

तथा ८– कोई अद्भुत वस्तु दिखाओ अथवा इष्टका नाम लो तो उन्मादरोग दूर हो.

तथा ९– उष्ण घृत या तेल या पानीका स्पर्श कराओ तो उन्मादरोग दूर हो.

तथा १०– केंवचकी फली लगाओ तो उन्माद दूर हो.

तथा ११– कोडे (चाबुक)की मार लगाओ तो त्रासके मारे उन्माद दूर हो.

तथा १२– शस्त्र सर्प या हस्ती तथा सिंहादिसे रोककर भय बताओ तो उन्मादरोग दूर हो.

तथा १३– कूट, असंगध, सेंधानोंन, अजमोद, दोनो जीरे, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, पाठा, शंखाहोली, और इन सबके बराबर बच इनका चूर्ण ब्राम्हीके रसमें १० पुट देकर छायामें सुखाओ जो इसमेंसे २ टंक चूर्ण नित्य घृत और मधुके साथ १५ दिनपर्यंत खिलाओ तो सर्व उन्माद, वायुजन्य विकार, तथा प्रमेहभी दूर हो. बुद्धि बढकर कविता शक्ति प्राप्त होगी. यह सारस्वतचूर्ण ब्रह्माजीकृत है.

तथा १४– त्रिफला, पित्तपापडा, देवदारु, शालपर्णी, जवासा, तगर, हल्दी, दारुहल्दी, इन्द्रायणकी जड, गोरीसर, चंदन, पद्मकाष्ट, कचूर, कमलगटे, इलायची, कटियाली, मजीठ, पत्रज, निसोत, वायविडंग, रुद्रवंती, नागकेशर, मुलहटी, पृष्टपर्णी, चमेलीके पुष्प ये सब औषधि अधेले अधेलेभर लेकर चूर्ण बनाओ इसे १ सेरभर गोघृतके साथ ४ चार सेर जलमें डालकर मंद मंद आँचसे औंटाओ पानी जल चुकने और घृतमात्र रह जानेपर उतारकर छानलो इसमेंसे ५ टंक घृत नित्य भोजनके

साथ खिलाओ तो उन्माद, अपस्मार (मृगी) और पांडुरोग ये सब दूर होंगे इसे कल्याणघृत कहते हैं.

तथा १५– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, हींग, बच, सिरसके बीज, सेंधानोंन, सरसों, इन सबको गोमूत्रमें पीसके रोगीके नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो उन्मादरोग दूर हो. ये यत्न वैद्यविनोदमें लिखे हैं.

तथा १६– अजमोद, हल्दी, दारुहल्दी, सेंधानोंन, मुलहटी, बच, कूट पिम्पली, जीरा, इन सबको गोमूत्रमें पीसकर छायामें सुखाओ. इसमेंसे २॥ ढाई टंक चूर्ण नित्य घृतके साथ खिलाओ तो उन्मादरोग दूर होकरके जिह्वापर सरस्वती वास करे. यह विश्वाद्य चूर्ण भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा १७– ब्राह्मीका रस या पेठेका रस या पीपलामूलका रस अथवा शंखाहोलीका रस १ टंक नित्य पिलाओ तो उन्माद दूर होगा.

तथा १८– बच, कूट, शंखाहोली, धतूरेकीजड इनका चूर्ण कर ब्राह्मीके रसकी ७ पुट और काले धतूरेके बीजोंके तेलकी ५ पुट देकर नास बनालो जो यह नास सुंघाओ तो उन्माद दूर हो. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १९– सिरसके फूल, मजीठ, पिम्पली, सरसों, बच, हल्दी, और सोंठको बकरीके दूधमें पीसकर गोलियां बनाओ सूखनेपर गोलीको घिसकर नेत्रोंमें अंजन लगाओ तो उन्माद दूर हो. यह योगरत्नावलीमें लिखा है.

तथा २०– सिकी हींग, सोंचरनोंन, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, ये सब २ दो टकेभर लेके चूरा बनाओ और इसे १ सेर गोघृतके साथ ४ चार सेर गोमूत्रमें डालकर मंद मंद आँचसे औंटाओ. गोमूत्र जल चुकनेपर गोघृत मात्र रह जावे तब उतारकर छानलो जो यह घृत ५ टंकभर नित्य भोजनके साथ खिलाओ तो उन्मादरोग दूर होगा.

भूतोन्मादियत्न– भूतोन्मादिके यत्नकरनेवालेको चाहिये कि प्रथम आप पवित्र होकर अपने शरीरकी रक्षा नारायण कवचादिसे कर लेवे पश्चात् निम्नलिखित क्रमानुसार यत्न करे.

भूतबाधायत्न १– काली मिर्च, पिम्पली, सेंधानोंन, और गोरोचनको महीन पीसकर मधुके सम्पर्कसे अंजन लगादो तो भूतबाधा दूर हो.

तथा २– ज्वरके प्रकारमें भूतज्वरपर जो नृसिंहजीका दिव्य मंत्र लिखा है उसका उपयोग करो तो भूतोन्माद दूर होगा.

तथा ३– अब भूतादिके उन्माद दूर करनेके लिये (श्रीमहादेवजीने उड्डीस तंत्रमें जो साबरी मंत्र यंत्र लिखे हैं सो) मंत्र यंत्र लिखते हैं.

“ओं नमो भगवते नारसिंहाय घोररौद्रमहिषासुररूपाय त्रैलोक्यडंबराय रौद्रक्षेत्रपालाय ऱ्हौंऱ्हौं क्रींक्रीं क्रिमिति ताडय ताडय मोहय मोहय द्रंभिद्रंभि क्षोभय क्षोभय आभि आभि साधय साधय ऱ्हीं हृदये आंशक्तये प्रीतींललाटे बंधय बंधय ऱ्हीं हृदये स्तम्भय स्तम्भय किलि किलि ईं ऱ्हीं डाकिनीं प्रच्छादय प्रच्छादय शाकिनीं प्रच्छादय प्रच्छादय भूतं प्रच्छादय प्रच्छादय अप्रभूति अदूरिस्वाहा राक्षसं प्रच्छादय प्रच्छादय ब्रह्मराक्षसं प्रच्छादय प्रच्छादय आकाशं प्रच्छादय प्रच्छादय सिंहिनीपुत्रं प्रच्छादय प्रच्छादय एते डाकिनीग्रहं साधय साधय शाकिनीग्रहं साधय साधय अनेन मंत्रेण डाकिनी शाकिनी भूत प्रेत पिशाचादि एकाहिक द्व्याहिक त्र्याहिक चातुर्थिक पंचक वातिक पैत्तिक श्लेष्मिक सन्निपात केशरी डाकिनीग्रहादि मुंच मुंच स्वाहा गुरुकी शक्ति मेरी भक्ती फुरो मंत्र ईश्वरोवाच” इति मंत्र.

इस मंत्रको मुखसें उच्चारण करते हुए मयूरपक्ष या लोहेकी कोई वस्तु तथा छप्परमेंकी घाससे २१ इकीस बार झाडा दो तो भूतादिके समस्त उन्माद दूर होवेंगे.

डाकिनी शाकिनीको भाषण करानेका मंत्र ४–

“ओं नमो आदेस गुरुकूं ओं नमो जयजय नृसिंह तीन लोक चौदह भुवनमें हाथ चावि और ओठचावि नयन लाल लाल सर्व वैरी पछाड मार भक्तनका प्राणराख आदेश आदेश पुरुषको” इति मंत्र.

रोगीके सन्मुख बैठकर इस मंत्रको पढो और इसीसे जल मंत्रित कर उसे पिलाओ तो डाकिनी शाकिनी आदि तत्क्षण मुखसे बोलने लगेंगी.

डाकिनी आदिको शरीरमें बुलानेका मंत्र ५–

“ओं नमो चढो चढो शूरवीर धरतीचढ पातालचढ पगपातालीचढ कौनकौन बीर चढे हनुमान बीर चढे धरतीचढ पगपानीचढ एडी चढचढ मु-

रचे चढचढ पींडी चढचढ गोडे चढचढ जांघें चढचढ कटी चढचढ पेटचढ पेटसे धरनचढ धरनसे पसलियोंचढ पसलियोंसे हियेचढ हियेसे छातीचढ छातीसे कांधेचढ कांधेसे कण्ठचढ कंठसे मुखचढ मुखसे जिव्हाचढ जिव्हासे कर्णचढ कर्णसे आंखेंचढ आंखेंसे ललाटचढ ललाटसे सीसचढ सीससे कपालचढ कपालसे चोटीचढ हनुमान नारसिंह करवा रक्त्याचलाबीर समदबीर दीठबीर अगियाबीर संताबीर ये बीर चढे." इति मंत्र.

इस मंत्रसे डाकिनी आदिको बुलवाओ (बकराबे) तो उस रोगीके शरीरमें आकर भाषण करने लगे तब उससे इच्छित वार्ता पूछलो.

डाकिनीको चोट लगनेका मंत्र ६–

"ओं नमो महाकाय योगिनी योगिनी पारशाकिनी कल्पवृक्षाय दृष्टि योगिनी सिद्धिरुद्राय कालदम्भेन साधय साधय मारय मारय चूरय चूरय अपहर शाकिनी सपरिवारं नमः ओं ठं ६ ओं ऱ्हीं ६ ऱ्हौं ऱ्हौं फट्स्वाहा" इति मंत्र.

इस मंत्रसे ७ बार गूगल मंत्रित करके उखलीमें डाल मूसलसे कूटो तो वह चोट डाकिनीको लगे, इसी मंत्रसे उस्तरा (छुरा) लेके अपना घुटना मूंडो तो डाकिनीका सिर मूंडा जावे, इसी मंत्रसे उर्द मंत्रित करके फेंको तो डाकिनी आनकर नाचने कूदने लगे, और इसी मंत्रसे जल मंत्रितकर नेत्रोंमें लगाओ तो डाकिनी बोलने लगेगी.

डाकिनीका दोष दूर होनेका मंत्र ७–

"ओं नमो आदेशगुरुको डाकिनीसिहारी किन्ने मारी यती हनुमानने मारी कहां जाय दबकी किनोंने देखी यती हनुमानने देखी सातवें पाताल गई सातवे पातालसे कौन पकड लाया, यति हनुमंत पकड लाया, यती हनुमंतबीर पकड लायके एक तालदे एक कोठा तोडा, दो तालदे दो कोठे तोडे तीन तालदे तीन कोठे तोडे, चार तालदे चार कोठे तोडे, पांच तालदे पांच कोठे तोडे, छः तालदे छः कोठे तोडे, सातवां कोठा खोल देखे तो कौनकौन खडे हैं डाकिनी सिहारी, भूत, प्रेतचले यतीहनुमंत तेरे झाडेसे चले ओंनमो आदेश गुरुको गुरुकी शक्ति मेरी भक्ति फुरोमंत्र ईश्वरोवाचा" इति मंत्र.

इस मंत्रको मुखसे उच्चारणकर मयूरपक्ष तथा लोहेके चाकू आदिसे झाडादो तो डाकिनी आदिका दोष (बाधा) दूर हो.

डाकिनीशाकिनी आदि दूर करनेके यंत्र ८—

| ११९ | ६६ | १ | ५ |
|---|---|---|---|
| ७ | ६ | ७ | ६ |
| ९ | = | ·।· | ·।· |
| ८ | १ | ऽ | ४० |

| ७ | ७ | ९ | ८ |
|---|---|---|---|
| ऽ | ६ | ६ | ५ |
| ४ | ।।। | ऽ | ११ |
| ७। | ६ | १।। | ·।।।· |

प्रथम यंत्रको भोजपत्रादिपर लिखके बालकके गलेमें बांधो और द्वितीय यंत्रकोभी लिखकर शुद्ध जलमें घोलकर पिलाओ तो डाकिनी शाकिनी दूर होकर बालक दोषसे निवृत्त हो जावेगा.

प्रत्यक्ष दर्शकविधि (जिसे हाजरायतभी कहते हैं) ९—

मंत्र "ओं नमः कामाख्यायै सर्वसिद्धिदायै (अमुककर्म) कुरु कुरु स्वाहा" अस्य मंत्रस्य बाह्लीकऋषिः जगतीछंदः कामाख्यादेवता— करन्यास १ ओं नमः अंगुष्ठाभ्यां नमः, २ कामाख्यायै तर्जनीभ्यां नमः स्वाहा, ३ सर्वसिद्धिदायै मध्यमाभ्यांवौषट्, ४ (अमुककर्म) अनामिकाभ्यांहूं, ५ कुरुकुरु कनिष्ठिकाभ्यांवौषट्, स्वाहा करतलकरपृष्ठाभ्यां अस्त्रायफट्.

हृदयादिन्यास— १ ओं नमो हृदयाय, २ कामाख्यायै शिरसेस्वाहा, ३ सर्वसिद्धिदायैशिखायैवौषट्, ४ (अमुककर्म) कवचायहं, ५ कुरुकुरु नेत्रत्रयाय वौषट्, ५ स्वाहाअस्त्रायफट्.

ध्यानम्— "योनिमात्रशरीराया कुंजवासिनीकामदा॥ रजस्वला महातेजा कामक्षीध्येययासदा".

उक्त मंत्रको १००० सहस्र जाप करके गूगल और (गुलतुरे)के फूलकी १०० शत आहुती दो और मैनफलकी राख (भस्म)को रुईमें मिलाकर बत्ती बनाओ यह बत्ती तेलभरे दीपकमें जलाकर उस दीपककी पूजा करो नंतर आठ दश वर्षकी अवस्था, उत्तम वर्ण, देवगणवाले पवित्र बालक (लडका तथा लडकी)को दीपकके सन्मुख बिठालकर आपभी पवित्रतासे

मंत्रके जपके संकल्पका जल मैनफलपर डालदो और दीपकके सन्मुख इस मंत्रको लिखके निम्नलिखित यंत्रकी पूजा करो, तथा बालककी हथेलीमें वह दिखाकर मैनफलकी राख तेलमें मिलाके बालककी हथेलीपर लगादो और पूजित यंत्र उसके गले या दक्षिणहस्तमें बांधकर उससे कहो कि तू अपनी हथेलीमें देखता जा फिर उससे जो कुछ पूछनाहो सो पूछो वह अपनी हथेलीमें देखकर जो कुछ कहे सो सत्य जानो. वह बालक सब बतलावेगा. तदनंतर उक्त मंत्रके जापका दशांश तर्पण, दशांश मार्जन और दशांश ब्राह्मणभोजन कराओ. यह विधि उड्डीशमें लिखी है.

| | | | |
|---|---|---|---|
| १ | ८ | ३ | ८ |
| ५ | ६ | ३ | ६ |
| ७ | २ | ९ | २ |
| ७ | ४ | ५ | ४ |

भूतोन्मादकायत्न १०– नीमके पत्ते, बच, हींग, सर्पकी कांचली और सरसों इनकी धूनी दो तो भूत डाकिनी आदि दूर हों.

तथा ११– कपासके कांकडे (बिनौला) मयूरपक्षका चन्देवा, कटियाली, मरुआदोना, तज, छड, शिवनिर्माल्य (शिवजीपर चढे हुए पुष्प बीलपत्री आदि) बैलका दांत, बिल्लीकी विष्ठा, बच, तूसा (चलनौसन जो आटा छाननेपर चलनीमें बच रहता है) बाल, सांपकी कांचली, गौका सींग, हाथीदांत, हींग, काली मिर्च, इन सबके कूटेहुए चूरकी धूनी दो तो सर्व प्रकारकी भूतादि बाधा दूर हो यह महामहेश्वरधूप चक्रदत्तमें लिखी है.

तथा १२– पिम्पली, काली मिर्च, सेंधानोन, गोरोचन इनको मधुमें पीसकर अंजन लगाओ तो भूतबाधा दूर हो.

तथा १३– करंजकी जड, दारुहल्दी, सरसोंकूट, हींग, बच, मजीठ, त्रिफला, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली और प्रियंगुपुष्प, इनको बकरेके मूत्रमें पीसकर नास सुंघाओ तथा अंजन लगाओ तो भूतादि बाधा दूर हो.

तथा १४– गोरखककडी (गोरषी)को गोमूत्रमें पीसकर नास दो तो ब्रह्मराक्षसभी दूर भागेगा.

तथा १५- शंखाहोलीकी जडको चांवलोंके पानीमें पीसकर तथा घृतके साथ रगडके नास सुंघाओ तो भूतादि बाधा दूर हो.

विशेषतः- भूतादि बाधा दूर करनेके लिये जो हमने ऊपर मंत्र लिख चुके हैं उन्हें पहिलेहीसे ग्रहणमें (ग्राससे मोक्षपर्यंत) जापकर करलो तब वे मंत्र उपरोक्त दर्शित यथार्थ सिद्धिदाता होकर तत्तत्कार्यपर उपयोगी होवेंगे अन्यथा नहीं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे दाह-उन्माद-भूतादिबाधायत्ननिरूपणं नाम पंचदशस्तरंगः ॥ १५ ॥

॥ अपस्मार-वातव्याधि ॥

अपस्मारस्यामयस्य वायुजानां यथाक्रमात् ।
तरङ्गे रसचन्द्रेस्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः- अब हम इस १६ सोलहवें तरंगमें अपस्मार (मृगी) और वातजन्य रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

अपस्माररोगयत्न १- तिली और लहसन मिलाकर खिलाओ तो वातापस्मार दूर होगी.

तथा २- दूधमें शतावरी डालकर पिलाओ तो पित्तापस्मार दूर हो.

तथा ३- ब्राह्मीका रस मधुके साथ पिलाओ तो कफापस्मार नाश हो.

तथा ४- राई या सरसोंको खिलाओ तथा गोमूत्रमें पीसकर सिरपर लेप करो तो मृगी दूर हो.

तथा ५- ऽ१ सेरभर तेल, ऽ४ चार सेर भुंगनेका रस, ऽ४ चार सेर गवांरपाठेका रस, ऽ४ चार सेर चिरचिरेका रस, ऽ१ सेरभर नीबूकी छालका रस, ऽ४ चार सेर गोमूत्र इनको एकत्र कर मंद मंद आंचसे औटाओ जब सब रस जलकर तेलमात्र रह जावे तब छानकर रोगीको मर्दन करो तो अपस्मार दूर हो.

तथा ६- मैंनसिल, नीलकंठ (अथवा न हो तो कबूतर)की विष्ठा दोनोंको पीसकर अंजन लगाओ तो मृगी दूर हो.

तथा ७- पारदभस्म, अभ्रक, कांतिसार, शुद्ध गंधक, मराहुआ मैंन-

सिल, हरतालभस्म, और रसोत इन सबको गोमूत्रमें १ दिनपर्यंत खरल करके इन सबसे दूने गंधकके बीचमें इन्हें धरदो अब ये सब लोहेके पात्रमें रखकर १ प्रहरभर आँच दो शीतल होनेपर निकालकर १ रती नित्य ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो मृगी दूर हों.

तथा ८– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, सोंचरनोंन और सिकीहुई हींग इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य घृतके साथ १५ दिनतक खिलाओ तो मृगी दूर हो.

तथा ९– २ टंक मुलहटीका चूर्ण पेठेके रसके साथ ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो मृगी दूर हो.

तथा १०– बच और कूट दोनोंका २ टंक चूर्ण ब्राह्मी या शंखाहोलीके रस अथवा पुराने गुडके साथ १५ दिनतक सेवन कराओ तो मृगी दूर हो.

तथा ११– सेरभर गोघृत, आठ सेर पेठेका रस, दो सेर मुलहटीका क्वाथ इनको मिलाकर आँच दो जब घृतमात्र रह जावे तब छानकर रोगीको भोजनके साथ खिलाओ तो मृगी दूर हो.

तथा १२– मुंगनेकी छाल, कूट, नेत्रवाला, जीरा, लहसन, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, हींग ये सब पैसेपैसेभर लेकर पीसलो और आधसेर तेलके साथ २ दो सेर बकरेके मूत्रमें डालकर आंच दो औटते औटते तेलमात्र रह जानेपर कपडेसे छानकर नाकमें डालो तो मृगी दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १३– पिम्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, त्रिफला, वायविडंग, सेंधानोंन, अजवान, धनिया, और जीरेका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो मृगी, संग्रहणी, उन्माद, अर्श आदि दूर हों.

तथा १४– पुष्यनक्षत्रके दिन कुत्तेका पित्ता (कलेजा) निकालकर उसका अंजन लगाओ या घीके साथ धूप दो मृगी दूर हो.

तथा १५– बचका २ टंक चूर्ण दूध या मधुके साथ खिलाओ तो मृगी दूर हो ये दोनों यत्न योगतरंगणीमें लिखे हैं.

तथा १६– नकुल (नवला)की विष्टा, बिल्लीकी विष्टा, और कौवेकी विष्टाको एकत्र कर धूनी दो तो मृगी दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

वातव्याधियत्न १- मिष्ट, सलोनी चिकनी, उष्ण वस्तु और आंवले खाने, निद्रा लेने, घाम (धूप)में फिरने, पसीना निकलने, तृप्तिपूर्वक भोजन करने, उष्ण उवटन लगाने, तेल मर्दन करने और वातहारक वस्तु भक्षणसे सामान्य वातजरोग दूर होंगे.

शिरोग्रहरोगयत्न २- दशमूलका क्वाथ, बिजौरेका रस, और तेलको एकत्र कर आंच दो औंटकर तेल मात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो शिरोग्रह दूर होगा.

तथा ३- कूट, अरंडकी जड, धतूरेकी जड, सहजनेकी जड, सोंठ, पिम्पली, काली मिर्च, सिंगीमुहरा इन सबको महीन पीस जलमें औंटाओ और उष्ण उष्णका लेप करो तो शिरोग्रह दूर हो.

अल्पकेशरोगयत्न ४- देशी गोखरू, और तिल्लीके पुष्पका चूर और इन दोनोंके समान मधु इन सबको घृतके साथ बालोंमें लगाओ तो बाल अधिक निकलकर बढेंगे.

तथा ५- मुलहटी, नील कमलकी नाल (जड) और दाख इन सबको घी या तेल या दूधमें भलीभांति पीसकर बालोंमें लगाओ तो बाल बढकर अल्पकेशरोग दूर हो.

अधिक जमुहाईके शमनका यत्न ६- सोंठ, पिम्पली, सेंधानोंन, काली मिर्च, अजमोद, इनका चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो जमुहाई बंद हो जावेगी.

तथा ७- कडुआ तेल मर्दन कराओ या मिष्ट भोजन कराओ या ताम्बूल खिलाओ तो जमुहाई बंद हो.

तथा ८- मुख बंद होगया हो तो चिकनी वस्तुके सेक (ताव)से पसीना उत्पन्न करावो तो मुख खुल जावेगा. जिसका मुख खुला (चौडा=फटाहुआ) रह गया हो उसे शीतल वस्तुके उपचार करो तो मुख बंद होके चलने (घूमने) लगे. और जिसकी हनु (ठुड्डी= डाढी) मुरकने (घूमने लौटने)से बंद होजावे उसे पिम्पली और अदरक चवा चवाकर थुकवाओ तो डाढी घूमने लगे और हनुग्रहरोग दूर होगा.

तथा ९– तेलमें लहसनको तलके सेंधानोंनके साथ खिलाओ तो हनुग्रहरोग दूर हो.

तथा १०– उर्दकी पिठी (दाल भींगी पिसी) में सेंधानोंन, हींग, और अदरक मिलाकर वडे बनाओ और तेलमें सेक (तल) के खिलाओ तो हनुग्रहरोग दूर होगा.

तथा ११– तेलको उष्ण करके सिरमें मर्दन करो तो हनुग्रह दूर हो.

तथा १२– १०० टकेभर पीपलके पञ्चांग[1]का चूर कर १६ सेर पानी डालके औंटाओ चतुर्थांश (ऽ४ चार सेर) रहनेपर छानके इसीमें १०० टकेभर तिलीका तेल, १०० टकेभर दहीका मठा, १०० टकेभर कांजीका पानी, ४०० टकेभर दूध और १ सेरभर खीप (प्रसारणी) का रस डालो. नंतर चित्रक, पीपलामूल, महुआ, सेंधानोंन, बच, सोंफ, देवदारु, रास्ना, गजपिम्पली, छडछडीला, रक्तचंदन, अरंडेकी जड, खेरंटीकी जड, और सोंठ ये सब टके टकेभर लेके चूर्ण कर क्वाथ बनालो. तदनंतर यह क्वाथ उपरोक्त मिश्रित पदार्थोंके साथ युक्त करके मंद मंद आंचसे औंटाओ, सर्व पदार्थ जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानलो. जो इस तेलको मर्दन करो या नास दो या खिलाओ तो वातके सर्व विकार, हनुस्तंभ, पंगुरोग, जिव्हास्तंभ, अर्दितरोग, स्कन्धस्तंभ, पृठिकशूल, गृध्रसी, चांयल, धनुर्वात और कुब्जरोग, ये सर्व विकार दूर होंगे. यह प्रसारणीतैल कहाता है.

जिव्हास्तंभरोगयत्न १३– मीठा रस, नोंन, खटाई, चिकनाई तथा उष्णता (उष्ण पदार्थ) को यथोचित जिव्हापर मर्दन करो तो जिव्हास्तंभ दूर हो.

तथा १४– उष्ण जलके कुल्ले कराओ तो जिव्हास्तम्भरोग दूर होगा.

हिकलाना, गुनगुनाना तथा गूंगेपनका यत्न १५– १ टंक सुंगनेकी जड, १ टकेभर बच, १ टकेभर सेंधानोंन, १ टकेभर धावडेके फूल, १ टकेभर लोद, इन सबका चूर्ण ४ चार सेर बकरीके दूधके साथ १ सेरभर गौके घृतमें डालकर मंद मंद आंचसे औटाओ, दुग्ध जलकर घृतमात्र रह जानेपर छानकर इसे निम्नलिखित सरस्वतीमंत्रसे विधिपूर्वक सेवन कराओ तो

[1] किसी वृक्षका पंचांग कहनेसे उसके मूल, छाल, पर्ण, पुष्प, और फलका बोध होता है.

हिकलाना, गुनगुनाना और मूकापन ये सर्व दूर होकर स्मृति, बुद्धि और कान्ति बढेगी. इसे सारस्वतघृत कहते हैं.

घृतभक्षणविधि– "ओं-ह्रींऐं-ह्रींओंसरस्वत्यैः नमः" यह सरस्वतीजीका सिद्धमंत्र है सो इसके जितने अक्षर हैं उतनेही सहस्र (११००० ग्यारह हजार) जाप करके इस मंत्रको सिद्ध करो नंतर इस मंत्रसे पूर्वोक्त विधि प्रस्तुत घृतको मंत्रित कर करके रोगीको खिलाओ तो उक्त तीनों रोग दूर होकर सरस्वती प्रसन्न होवें.

तथा १६– उक्त मंत्रसेही मालकांगनीके तेलको मंत्रित करके खिलाओ तो उक्त रोग दूर होकर बुद्धि तत्काल चमत्कारी होजावे.

तथा १७– हल्दी, बच, कूट, पिम्पली, सोंठ, जीरा, अजमोद, मुलहटी, महुआ और सेंधानोंन इन सबका २ टंक चूर्ण नवनीतके साथ उक्त मंत्रसे मंत्रितकर विधिपूर्वक २१ दिनतक खिलाओ तो उक्त रोग दूर होकर वह मनुष्य श्रुतिधर (जो सुने वही धारण (याद) कर लेनेवाला) और सहस्रों श्लोक कण्ठ करनेकी शक्ति रखनेवाला हो जावेगा. इसे कल्याणकावलेह कहते हैं.

प्रलाप तथा वाचालरोगयत्न १८– अगर, तगर, पितपापडा, कुटकी, नागरमोथा, असगंध, ब्राह्मी, दाख, दशमूल, शंखाहोली इन सबका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो प्रलाप और बाचालरोग दूर हो.

जिव्हानिरसरोगयत्न १९– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, सेंधानोंन, अमलबेद और चूकको पीसकर जिव्हापर लेप करो तो जिव्हाको सर्व रसोंका बोध प्राप्त होगा.

तथा २०– ब्राह्मी, पलासपापडा, राई, काली जिरी, पिम्पली, पीपलामूल, चित्रक और सोंठ, इन सबका चूर्ण बनाकर जिव्हापर लेप करो या क्वाथ बनाकर कुल्ले कराओ तो रसज्ञान प्राप्त होगा.

तथा २१– रोगीको बारंबार अदरक खिलाओ तो रसज्ञान प्राप्त होवे तथा बधिररोग और कर्णनादभी दूर होगी.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे अपस्मार-वातव्याधिरोगनिरूपणं नाम षोडशस्तरंगः ॥ १६ ॥

॥ त्वक्शून्यादि-वातव्याधि ॥

त्वक्शून्याद्यामयानां हि वातजानां यथाक्रमात् ।
तरङ्गे मुनिसोमेऽस्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब हम इस सत्रहवें तरंगमें वादीसे उत्पन्न होनेवाले जो त्वचा शून्य प्रभृति रोग हैं तिनकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

त्वचाशून्यरोगयत्न १— इस रोगीके शरीरमेंसे रक्त निकलवा दो तो त्वचाशून्यरोग दूर हो.

तथा २— नोंन और धमासा तेलमें डालकर शरीरमें मर्दन कराओ तो त्वचाशून्यरोग दूर हो.

अर्दितरोग १— इस रोगीको चिकने पदार्थ खिलाओ और नारायण तथा विषगर्भ आदि तेलका मर्दन कराओ या उष्ण वस्तु खिलाओ तथा अग्निका दाग दो किम्वा उष्ण औषधोंसें पसीना निकालो अथवा वातहारक तेल मस्तकपर डलवाओ तो अर्दितरोग दूर हो.

वायुअर्दितरोगयत्न १— दशमूलका क्वाथ पिलाओ तो वातार्दित दूर हो.

तथा २— बिजौरेका रस पिलाओ तो वातार्दित दूर होगा.

तथा ३— खरैंटी, पीपली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठका क्वाथ दो तो वातार्दित दूर हो.

तथा ४— हींग और लहसनयुक्त उर्दके बडे खिलाकर ऊपरसे मांसका सोरवा पिलाओ तो वातार्दित दूर हो.

पित्तार्दितरोगयत्न १— घृतके बस्तिकर्म (मूलद्वारपर घीकी पिचकारी लगाना) या दूध पिलानेसे पित्तार्दित दूर होगा.

कफार्दितरोगयत्न १— वमन कराओ तो कफार्दित दूर हो.

तथा २— तिल्लीके तेलमें लहसन मिलाकर खिलाओ तो कफार्दित दूर हो.

मान्यास्तम्भरोगयत्न १— दशमूलका क्वाथ या पंचमूलका क्वाथ तथा औषधों द्वारा पसीना लेने अथवा नास लेनसे मान्यास्तम्भ दूर होगा.

तथा २— तेल मर्दन करके अरंडीके पत्ते बांधो तो मान्यास्तंभ दूर होगा.

तथा ३– मुर्गीके अंडेके रसमें सेंधानोंन और घी मिलाकर गर्दनमें लगाओ तो मान्यास्तंभ दूर हो.

बाहुशोषरोगयत्न १– उन्मादरोग चिकित्सापर जो कल्याणघृत लिख आये हैं उसका सेवन कराओ तो बाहुशोषरोग दूर हो.

तथा २– खरेंटीके क्वाथमें सेंधानोंन मिलाके पिलाओ तो मान्यास्तंभ और बाहुशोष दोनों रोग दूर होंगे.

अवबाहुकरोगयत्न १– शीतल जलका नास दो तो अवबाहुकरोग दूर हो.

तथा २– गूगल, मोईजडी ( मारवाडमें प्रसिद्ध )की जडके क्वाथमें गूगल मिलाकर नास दो तो अवबाहुक (भुजास्तंभ) रोग दूर हो.

तथा ३– उर्दके पानीका नास दो तो अवबाहुकरोग दूर हो.

तथा ४– उर्द, अलसी, जौ (यव), कटसेला, कटियाली, गोखरू, अरलु, कैंवचकी जड, कपासके बिनौला, मुंगनेके बीज, वेरीकी जड, कुल्थी, साटीकी जड, खींप (प्रसारणी)की जड, रास्ना, खरेंटीकी जड, गुरच, कुटकी इन सबको तेलमें डालकर पकाओ, पकनेपर छानकर इसे रोगीको मर्दन करो तो अवबाहुक रोग दूर होगा. यह माषतैल कहाता है.

विश्वाचीरोगयत्न १– दशमूल, खरेंटी, उर्द, इनका क्वाथ बनाकर तेलके साथ पिलाओ तो विश्वाचीरोग दूर हो.

तथा २– उर्द, सेंधानोंन, खरेटी, रास्ना, दशमूल, हींग, बच और सोंठ इनका चूर्ण पानीमें औटाओ नंतर यह पानी तेलमें डालकर आंच दो तेल मात्र रह जानेपर छानकर तेलको रोगीको मर्दन करो तो विश्वाची, बाहुशोष, अवबाहुक और पक्षाघात ये सब रोग दूर होंगे. इसेभी माषादितैल कहते हैं.

ऊर्ध्ववातरोगयत्न १– १० भाग सोंठ, १० भाग वधायरा, ५ भाग हरेंकी छाल, १ भाग असगंध, १ भाग सिकी हींग, १ भाग सेंधानोंन और इन सबके समान चित्रक, ५ भाग निसोत इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो ऊर्ध्ववातरोग दूर होगा.

आध्मानरोगचिकित्सा १– लंघन कराने, पाचक औषध देने, क्षुधावर्धक औषध खिलाने और बस्तिक्रिया करनेसे आध्मानरोग दूर होगा.

तथा २– २ टंक पिम्पली, १० टंक निसोत और १० टंक मिश्रीका चूर्ण करके इस्कों २ टंक नित्य मधुके साथ चटाओ तो आध्मान (अफरा) दूर हो.

तथा ३– बच, कूट, सोंफ, सिकी हींग, सेंधानोंन इन सबका चूर्ण कांजीके साथ महीन पीसकर उष्णकर पेटपर लगाओ तो आध्मान दूर हो.

तथा ४– १ टकेभर हर्रेकी छाल, १ टकेभर किरवारेकी गिरी, १ टकेभर आंवला, १ टकेभर दात्यूणी, १ टकेभर कुटकी, १ टकेभर निसोत, १ टकेभर नागरमोथा, १ टकेभर थूहरका दूध इन सबको पीसकर ४ सेर पानीमें औंटाओ और ऽ॥ आधसेर रह जानेपर उसीमें १ टकेभर जमालगोटा (छिलके निकालकर महीन वस्त्रमें बांधके) डालके मंद मंद आंचसे औंटाओ, जब औंटते औंटते पानी जल जावे तब जमालगोटा निकाललो यह शुद्ध होगया. इसमेंसे अष्टमांश जमालगोटा, जमालगोटेसे त्रिगुणी सोंठ, द्विगुणी काली मिर्च, तुल्य पारा और तुल्य गंधक लेकर पारे, गंधककी कजली करलो और उसमें उक्तौषधें मिलाकर १ प्रहर खल करो नंतर १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ गोली शीतल जलके साथ दो तो आध्मान, शूल, अनाह, उदावर्त, प्रत्याध्मान, गोला, और उदरव्याधि ये सर्व रोग दूर होंगे इसे महानाराच रस कहते हैं. इसके खिलानेसे रेचन होते हैं. सो रेचनानंतर दहीमें मिश्री मिलाकर खिलाओ, और तदनंतर सेंधानमक डालकर दहीं और भात खिलादो तो आध्मान (अफरा) रोग तत्काल दूर होगा.

प्रत्याध्मानरोगयत्न १– यह रोगभी लंघन, पाचन और बस्तिक्रियासे दूर होगा.

वाताष्ठीला तथा प्रत्यष्ठीला रोगका यत्न १– सिकी हींग, पीपलामूल, धनियां, जीरा, बच, चव्य, चित्रक, पाठा, कचूर, अमलबेद, सेंधा, सोंचर और साम्भरनोंन, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, जवाखार, सज्जी, अनारदाना, हर्रेकी छाल, पोकरमूल, डांसरा, और झांउकी जडके महीन चूर्णको अदरकके रसकी ३ पुट देकर छायामें सुखालो इसमेंसे २ टंक नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो वातष्ठीला और प्रत्यष्ठीला दूर होगे.

तूणी तथा प्रतितूणीरोगयत्न १– इस रोगसे पीडित पुरुषकी गुदामें स्नेह[1] पदार्थोंसे बस्तिक्रिया करो तो ये रोग दूर होंगे.

तथा २– सोंठ, पिम्पली, काली मिर्च, सिकी हींग, जवाखार, सज्जी, और सेंधानोंन इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो तूणी तथा प्रतितूणी नाश हों.

त्रिकशूलरोगयत्न– वालू (रेती)से सेको तो त्रिकशूल जावेगा.

तथा २– गुल्ही वोली (बंबूलके वृक्षकी जातमें होती है)की जडकी छाल, असगंध, झाऊकी छाल, गुरच, शतावरी, गोखरू, रास्ना, निसोत, सोंफ, कचूर, अजवान, सुंठी इन सबके समान शुद्ध गूगल, गूगलसे चतुर्थांश घृत इन सबको युक्त कर ५ मांसे नित्य मद्य या मांसरस या उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो त्रिकशूल, जानुग्रह, भुजासांध, संधिगत वात (गठिया वाय) अस्थिभंग, लंगडापन, गृध्रसी, पक्षाघात ये सर्व रोग दूर होंगे. इसे त्रयोदशांग गूगल कहते हैं.

बस्तिवात (मूत्रावरोध) रोगयत्न १– खरेंटीकी जडकी छाल, और मिश्रीका २ टंक चूर्ण गोदुग्धके साथ खिलाओ तो बस्तिवात दूर हो.

तथा २– त्रिफलाके चूर्णमें समान कांतिसार मिलाकर इसमेंसे ४ मासे मधुके साथ चटाओ तो बस्तिवात (जिसमें मूत्रकी २ दो बूंद गिरती हैं) दूर होगी.

तथा ३– ४ चार मासे जवाखार मिश्रीके साथ खिलाओ तो दीर्घ बस्तिवात (जो किंचित मात्रभी मूत्र नहींउतरता हो)काभी बंध खुलकर उत्तम सरलता पूर्वक मूत्र उतरने लगेगा.

तथा ४– पेठेके बीज और तेवरसी (फूटककडी)के बीज दोनोंको पानीमें घोंटकर २ मासे जवाखार डालो और ऊपरसे मिश्री मिलाकर पिलाओ तो रुकाहुआ मूत्र उतरने लगेगा.

तथा ५– चनियेकपूरकी बत्ती बनाकर पुरुषकी लिंगेंद्रिय और स्त्रीकी भगेन्द्रियमें रखो तो अवरोधित मूत्र प्रसरण होने लगेगा.

गृध्रसीरोगयत्न १– वमन कराओ तो गृध्रसीरोग दूर हो.

---

१ घृत, तैल, मज्जा आदि चिकने पदार्थ स्नेह कहाते हैं.

तथा २– गृध्रसीरोग बस्तिक्रियासेभी दूर होगा परन्तु इस रोगमें प्रथम हरेंका जुलाब देकर पश्चात् यह चिकित्सा करना चाहिये.

तथा ३– एरंडीका तेल और गोमूत्र युक्त कर अनुमानमाफक १ मास पर्यंत पिलाओ तो गृध्रसीरोग दूर हो.

तथा ४– तैल, घृत, बिजौरेका रस, अदरक का रस, चूका और गुड इन सबको मिलाकर १ मास पिलाओ तो गृध्रसी, त्रिकशूल, गोला, उदावर्त, कटि और जंघाकी पीडा ये सर्व रोग दूर होंगे.

तथा ५– दूधमें एरंडीके बीजोंकी खीर बनाकर १ एक मासपर्यंत खिलाओ तो गृध्रसी और पोथोंका शूल दूर हो.

तथा ६– एरंडीकी जड, बीलकी गिरी और कटियालीको क्वाथमें तेल मिलाकर पिलाओ तो गृध्रसी और पोथोंका शूल दोनों दूर हों.

तथा ७– बिडनोंन और सोंचरनोंनको पीसकर गोमूत्र और अरंडीके तेलके संयोगसे पिलाओ तो कफ-वातकी गृध्रसी दूर हो.

तथा ८– अडूसा, दात्यूणी, और किरमालेकी गिरीके क्वाथमें एरंडीका तेल मिलाकर पिलाओ तो गृध्रसी दूर हो.

तथा ९– निर्गुणीका रस पिलाओ तो गृध्रसी दूर हो.

तथा १०– ५ टकेभर रास्ना, ५ टकेभर गूगलका चूर्ण घृतके साथ मिलाकर ४ मासे प्रमाणकी गोलियां बनाओ. १ गोली नित्य खिलाओ तो गृध्रसी दूर हो.

तथा ११– गुरच, रास्ना, किरमालेकी गिरी, देवदारु, गोखरू, सोंठ, अरंडकी जडका क्वाथ बनाकर पिलाओ तो गृध्रसी, जंघापीडा, उदरपीडा, पार्श्वशूल, ये सब दूर होंगे इसे रास्नादि क्वाथ कहते हैं.

इति नूतना॰चिकित्साखंडे वातरोगयत्ननिरूपणं नाम सप्तदशस्तरंगः१७

॥ खंजादि-वातव्याधिः ॥

**खंजादीनां वातजानां गदानां वस्वेन्दौ वै लिख्यतेऽस्मिन्तरङ्गे ।**
**पुंसां वातव्याधिना पीडितानामारोग्यार्थं लाभदात्री चिकित्सा ॥१॥**

भाषार्थः— अब हम इस अठारहवें तरंगमें वातव्याधिसे पीडित पुरुषोंकी आरोग्यताके हेतु खंज (लंगडापन) आदि रोगोंकी लाभदायनी चिकित्सा लिखते हैं.

खंज तथा पंगुरोगयत्न १— विरेचन कराओ, औषधियोंसे उष्ण पसीना निकालो, योगराज आदि गूगल दो, वातहारक नारायण आदि तेल मर्दन करो, अथवा बस्तिकर्म करो तो ये प्रत्येक यत्न खंजरोग नाश करेंगे.

कलापखंजरोगयत्न १— विषगर्भादि तैल मर्दन करनेसे यह रोग नाश होगा.

क्रोष्टुशीर्षरोगयत्न १— २ टंक गुरच, १० टंक त्रिफला, दोनोंका क्वाथ बनाकर २ टंक गूगलके साथ १ मासपर्यंत पिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग दूर होगा.

तथा २— १ सेर दूध १० टंक एरंडीका तेल मिलाकर १ मासपर्यंत पिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग नाश हो.

तथा ३— ढाई टंक बधायरेका चूर्ण ऽ॥ आधसेर गोदुग्धके साथ पिलाओ तो उक्तरोग दूर हो.

तथा ४— तीतरके मांसके सोरवेमें दो टंक गूगल मिलाके पिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग दूर हो.

तथा ५— किशोर गूगल खिलाओ तो क्रोष्टुशीर्षरोग दूर हो.

घुटनेकी पीडानाशकयत्न १— प्रथम तेल मर्दन करके ऊपरसे सोंठका महीन चूर्ण मसलो नंतर पुनः ऊपरसे तेल चुपडकर बांध दो तो घुटनेकी पीडा दूर हो.

तथा २— दो टंक केवचके बीज दहीके साथ ७ या चौदह दिनतक खिलाओ तो घुटनोंकी पीडा दूर हो.

खल्वरोगयत्न १— कूट और सेंधेनोंनके क्वाथमें तेल और अमलवेदका रस डालकर आंचसे पकाओ, रस जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो खल्वरोग दूर हो.

वातकंटकरोगयत्न १— पांवके घट्टोंमें रुधिर निकालो तो वातकंटक दूर हो.

तथा २— १ मासपर्यंत ५ टंक अरंडीका तेल नित्य पिलाओ तो वातकंटक दूर हो.

पाददाहरोगयत्न १— मसूरकी दालका आटा पानीमें औंटाकर ठंडा हो-

नेपर कपडेसे छानके ५ सातबार पैरके तलुओंमें बांधो तो पाददाहरोग दूर हो.

तथा २– पैरके तलुओंमें मक्खन लगाकर आंचसे सेको तो पाददाह दूर हो.

तथा ३– अरंडीके बीज गौके दूधमें महीन पीसकर दाहस्थान (पांवके तलुए या हाथकी हथेली)में मर्दन करो तो अत्यंत पाददाहभी दूर हो.

पादहर्षरोगयत्न १– कफ और वातहारक यत्नोंसे यह रोग दूर होगा.

पदफूटन(पगफूटनी)यत्न १– तिल्ली, सांभरनोंन, हल्दी और धतूरेके बीजोंको पानीमें महीन पीसकर इन सबके बराबर गौका मक्खन और इन सबसे चौगुणा गोमूत्र ये सब एकत्र करके आंचसे पकाओ जल और औषधियां जलकर घी मात्र रह जानेपर छानकर पैरके तलुओंमें मर्दन करो तो पैरफूटन बंद हो.

आक्षेपरोगयत्न १– खरेंटीकी जड, दशमूल, जौ, कुलथी, बेरकी जडके अष्टावशेष क्वाथमें तेल डालकर आंच दो पानी जलकर तेल मात्र रह जानेपर उस तेलमें सेंधानोंन, अगर, राल, देवदारु, मजीठ, कूट, पद्माख, इलायची, छड, पत्रज, तगर, गोरीसर, शताबरी, असगंध, सोंफ और साटीकी जड कूटकर डालो और पुनः मंद मंद आंचसे पकाकर छानलो जो इस तेलका मर्दन करो तो सर्व प्रकारके आक्षेप, सर्व वातरोग, हिचकी, खास, श्वास, गोला, अंत्रवृद्धि, क्षीणता, अस्थिभंग और भ्रम ये सब रोग दूर होंगे. इसे महावली तेल कहते हैं.

अन्तरायाम तथा बाह्यायाम रोगयत्न– जो हम उपर अर्दित रोगके यत्न लिख आये है वेही यत्न जानो.

धनुस्तंभ तथा कुब्जकरोगयत्न १– पूर्वोक्त लिखित प्रसारणी तेलसे धनुस्तंभ, कुब्जक, और अंतरायाम, बाह्यायाम किम्वा वातजन्य सकल विकारही दूर होवेंगे.

अपतंत्ररोगयत्न– काली मिर्च, सुंगनेके बीज, अफीम, वायविडंग और महुआके चूर्णका नास दो तो अपतंत्ररोग दूर हो.

तथा २– हरेंकी छाल, बच, रास्ना, सेंधानोंन और अमलवेद इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य घृत या अदरकके रसके साथ सेवन कराओ तो अपतंत्ररोग दूर होगा.

अपतानकरोगयत्न– दशमूलके क्राथमें पिम्पली डालकर पिलाओ तो अपतानकरोग नाश हो.

तथा २– तेल मर्दन कराओ तो अपतानकरोग दूर हो.

तथा ३– तीक्ष्ण वस्तुका नास दो तो अपतानकरोग दूर होगा.

तथा ४– घृत पिलानेसे अपतानकरोग दूर होगा.

तथा ५– स्नेहवस्ति करो तो अपतानकरोग दूर हो.

पक्षाघातरोगयत्न १– उर्द, कैंवचबीज, अरंडीकी जड, और खेरेटीकी जडके क्राथमें सिकी हींग और सैंधानोंन मिलाकर पिलाओ तो पक्षाघातरोग दूर हो.

तथा २– पीपलामूल, चित्रक, सोंठ, पीपली, रास्ना, सैंधानोंन और उर्दके क्राथमें तेल डालके पकाओ पानी जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो पक्षाघातरोग दूर होगा. इसे ग्रंथितैल कहते हैं.

तथा ३– उर्द, कैंवचबीज, अतीस, एरंडकी जड, रास्ना, सैंधानोंन और सोंफके क्राथमें तेल डालकर पकाओ, क्राथ जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो पक्षाघातरोग दूर होगा. इसे माषादितैल कहते हैं ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ४– कैंवचबीज, खेरंटीकी जड, एरंडकी जड, उर्द, सैंधानोंन और सोंठका क्राथ पिलाओ तो पक्षाघात दूर हो. यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

तथा ५– महुआका रस ५ टंक, गूगल ५ टंक, बीजा बोल ५ टंक, बकरीकी लेंडी ५ टंक, कटियालीका रस ५ टंक, पलासपापडा ५ टंक, आंबीहल्दी ५ टंक, सुहागा ५ टंक, विजौरेकी जड ५ टंक, इन सबको महीनकर रोगीके शरीरमें लेप करो और दो हाथ चौडा, दो हाथ लंबा, २ हाथ गहेरा गड्डा खोदके आग जलादो जब वह भलीभांति तप्त हो जावे तब अंगीरे निकालकर गड्डेके पृष्ठभागमें सर्वत्र आक (अकाव=आकडा)के पत्ते बिछा दो नंतर उक्त रोगीको उस गड्डेमें बैठाकर पसीना निकलनेतक उसीमें बैठा रहने दो तो उक्त लेपके गुण तथा आकपत्रके तावसे पक्षाघातरोग अवश्य दूर होगा. रोगीका मुख गड्डेके बाहर रखना चाहिये जिस्सें इजा न हो.

निद्रानाशरोगयत्न १– सिकी भांगको महीन पीस कपडछान करके मधुके साथ रात्रिसमय चटाओ तो निश्चय निद्रा आकर क्षुधा बढेगी. इसी यत्नसे अतिसार और संग्रहणीभी दूर होती है.

तथा २– पिम्पलीका चूर्ण, मधुके साथ खिलाओ तो नष्ट हुई निद्राभी शीघ्र आवे.

तथा ३– कलिहारीकी जड पीसकर मस्तकपर बांधो तो निद्रा आवे.

तथा ४– इच्छानुसार सहते सहते कंघवे (कखवा)से सिरके बाल ऊंछो तो निद्रा आवेगी.

तथा ५– कोमल हाथोंसे पैरके तलुओंको धीरे धीरे मलवाओ तो निद्रा अवश्य आवे.

तथा ६– भटे (बैंगन)का भुरता मधु मिलाकर खिलाओ तो निद्रा आवे.

तथा ७– बैंगनका भुरता तेलकी कांजी या खटाईके साथ रात्रिको खिलाओ तो निद्रा तत्काल आवेगी.

तथा ८– अरंड और अलसीका तेल दोनोंको कांसे (फूल)की थालीमें भलीभांति रगडके रोगीकी आंखोंमें अंजन लगाओ तो बहुत निद्रा आवे.

तथा ९– सौंफ और भांगका महीन चूर्ण बकरीके दूधमें औटाकर रोगीके ललाटपर लेप करो तो निद्रा आवेगी.

तथा १०– बकरीके दूधसे पैरके तलुओंको धोओ तो निद्रा आकर पैरोंकी दाहभी दूर होगी.

तथा ११– मृगमद (कस्तूरी)को स्त्रीके दूधमें पीसकर अंजन लगाओ बहुत दिनोंकी नष्ट हुई निद्राभी पुनः आवेगी. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

सर्वांगकुपितवातयत्न १– विषगर्भादि तैल मर्दन करो तो उक्त रोग दूर हो.

सप्तधातुगत कुपितवातयत्न १– त्वचाके रसमें कुपित हुई वात तेल मर्दन करनेसे नाश होगी.

तथा २– रक्तमें कुपित हुई वात शीतल लेप तथा विरेचन या रुधिर निकलवानेसे अच्छी होगी.

तथा ३– मांसमें कुपित वात विरेचनसे शांत होगी.

तथा ४– मेदामें कुपितवातभी विरेचनसेही शांति पावेगी.

तथा ५– अस्थि (हड्डियों)में कुपितवात चिकने पदार्थोंके खिलानेसे अच्छी होगी.

तथा ६–मज्जागत कुपितवात चिकने पदार्थोंके खाने या मर्दनसे शांत हो.

तथा ७– वीर्यमें बिगडा हुआ वात पौष्टिक औषधि भक्षणसे शांति पावेगी.

कोष्टगतकुपितवातयत्न १– पाचनादि औषध भक्षण तथा दुग्धपान करानेसे अच्छी होगी.

आमाशयगत कुपितवातयत्न १– १ दीपन पाचन औषध दो २ लंघन कराओ ३ वमन कराओ ४ विरेचन दो और ५ पुराने मूंग चांवल खिलाओ. इनमेंसे एक एक उपाय उक्त रोग नाशक है.

तथा २– अथवा रोहिस (रोहितक) हर्रेकी छाल, कचूर, पोकरमूल गुरच, बीलका गूदा, देवदारु, सोंठ, बच, अतीस, पीपल, और वायविडंगका क्वाथ पिलाओ तो आमाशयगत कुपितवात कुशल हो.

पक्वाशय या हृदय तथा मूलद्वारगत कुपितवातयत्न १– गुर्च, काली मिर्चका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो उक्त रोग दूर हो.

तथा २– असगंध और बहेडेकी छालका चूर्ण गुड मिलाकर खिलाओ तो उक्त तीनों स्थानकी कुपितवात दूर हो.

तथा ३– देवदारु और सोंठका चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तो तीनों स्थानोंकी कुपितवात दूर हो.

कर्णादि इन्द्रियगत कुपितवातयत्न १– सेक (ताव) तथा तैलादि मर्दनसे कर्णादि इन्द्रियगत कुपितवात शांत हो.

स्नायुगत कुपितवातयत्न– शीर छुडाने (जिसे यूनानी मालजेमें फस्त खुलवाना कहते हैं) से स्नायु (नस) गत कुपितवात शांत हो.

संधिगत कुपितवातयत्न १– सेक तथा तेल मर्दनसे संधिगत कुपितवात दूर होगी.

तथा २– २ टंक इन्द्राणीकी जड, और २ टंक पिम्पलीका चूर्ण गुड मिलाकर खिलाओ तो संधिगत कुपितवात अवश्य दूर हो.

इति नूतना० चिकित्साखंडे वातरोगयत्ननिरूपणं नामाष्टादशस्तरंगः १८

॥ समस्त-वातव्याधि ॥

सर्वेषां वातरोगाणां नन्दानन्तामिते मया ।
पूर्वोक्तानां तरंगेऽस्मिन् लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस १९ उन्नीसवें तरंगमें निदानखंड लिखित समस्त वातरोगोंकी चिकित्सा लिखते हैं.

वातव्याधिके सामान्ययत्न १– असगंध, खेरेंटीकी जड, बीलका गूदा, दोनों पाटैल, कटियाली, गोखरू, गंगेरनकी छाल, साटी (पुनर्नवाकी जड) अरलु, खींप और अरणी ये सब औषध १० दश टकेभर कूटकर १६ सोलह सेर पानीमें औटाकर चतुर्थांश रह जानेपर छानलो यह ४ सेर क्वाथ, ४ सेर तिलीका तेल, ४ सेर शतावरीका रस और १६ सेर गौका दूध ये सब एकत्रकर मंद मंद आंचसे पकाओ, पकते समय १ टकेभर कूट २ टकेभर इलायची, २ टकेभर रक्तचंदन, २ टकेभर बच, २ टकेभर छड, २ टकेभर शिलाजीत, २ टकेभर सेंधानोंन, २ टकेभर असगंध, २ टकेभर खेरेंटी, २ टकेभर रास्ना, २ टकेभर सोंफ, २ टकेभर इन्द्राणी, २ टकेभर शालपर्णी, २ टकेभर उर्दपर्णी, ये सब औषध डाल दो औंटाते औटाते सर्व पानी जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो या खिलाओ या बस्तिक्रिया करो तो पक्षाघात, हनुस्तंभ, मन्यास्तंभ, गलग्रह, बधिरपन, गतिभंग, कटिग्रह, गात्रशोष, नष्टशुक्र, विषमज्वर, अंत्रवृद्धि, शिरोग्रह, पार्श्वशूल, गृध्रसी और वायुके समस्त रोग दूर होवेंगे. इसे नारायणतैल कहते हैं.

तथा २– सोंठ, पिम्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सिकी हींग, अजमोद, सरसों, दोनों जीरे, सम्भालु, इंद्रयव, पाठा, वायविडंग, गजपीपली, कुटकी, अतीस, भारंगी, बच, और मूर्वा, ये सर्वौषध चार चार मासेभर और इन सबके बोझसे दूना त्रिफला तथा इन सबके प्रमाणसे दूना शुद्ध गूगल लेकर इन सबका चूर्ण करलो नंतर सबको एक जीव करके ४ मासे प्रमाणकी गोलियां बनालो इन गोलियोंको मृत्तिकाके चिकने पात्रमें धरके

१ श्वेत और लाल दोनों गुलाब, पाटल=गुलाब या कुंज सेवती दो रंगकी होती है.

रास्नादि क्वाथके साथ १ गोली नित्य खिलाओ तो समस्त वातव्याधि दूर हों, किरमालेका पंचांग क्वाथके साथ दो तो कफके सर्व रोग दूर हों. दारुहल्दीके क्वाथके साथ प्रमेह दूर हो, गोमूत्रके साथ खिलाओ तो पांडुरोग नाश होगा, मधुके साथ खिलाओ तो वातरक्तरोग दूर होंगे और पुनर्नवादि क्वाथसे खिलाओ तो उदरामय व्याधि दूर होगी, ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं. यह योगराजगूगल है.

विशेषतः– योगराजगूगलको सेवन करने वाले रोगीको मैथुन (स्त्रीसंग) और खट्टे पदार्थ भक्षण करना कदापि योग्य नहीं है.

रास्नादिक्वाथ– रास्ना, साटी, सोंठ, गिलोय, और अरंडकी जडका क्वाथ रास्नादिक्वाथ कहाते हैं, जिसे ऊपर योगराजगूगलके साथ दिया है.

महारास्नादिक्वाथ– रास्ना, धमासा, खरेंटीकी जड, अरंडकी जड, देवदारु, कचूर, बच, अडूसा, हरँकी छाल, किरमालेकी गिरी, चव्य, नागरमोथा, साटीकी जड, गुरच, बधायरा, सोंफ, गोखरू, असगंध, अतीस, शतावरी, अतीस, सहजनेकी बक्कल, धनियां और दोनों कटियालीका क्वाथ महारास्नादिक्वाथ कहाता है. इसके साथ योगराज गूगलको खिलाओ तो वायुके समस्त रोग दूर होवेंगे.

तथा ३– १ टकेभर लहसनका रस और १ टकेभर तेलमें सेंधानोंन डालकर पिलाओ तो वायुके सर्व रोग दूर होंगे.

तथा ४– दूध या घृत या तेल, या मांस रसके साथ १४ दिनपर्यंत लहसन खिलाओ तो सर्व प्रकारकी वात विषमज्वर, शूल, गोला, अग्निमांद्य, प्लीहा, मस्तकरोग, और वीर्यके सर्व रोग दूर होंगे, ये दोनों (तृतीय और चतुर्थ यत्न) लहसनकल्प कहाते हैं.

तथा ५– थूहरपत्र, अरंडपत्र, बकानपत्र, सम्भालुपत्र, शोभाजनापत्र और कनेरपत्र इन सबका रस, इन सब रसोंसे चतुर्थांश तेल और सोंठ इन सबको एकत्रकर पकाओ रस जल चुककर तेल मात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो सर्व वातरोग दूर होंगे. यह अष्टांगतैल कहाता है.

तथा ६– धतूरेकी जड, निर्गुणी, पटोलकी जड, एरंडकी जड, असगं-

ध, पवांर, चित्रक, मुंगनेकी जड, काकलहरी, कलिहारीकी जड, नीमकी छाल, बकानकी छाल, दशमूल, शतावरी, चिरपोटणी (मकोय) गोरीसर, विदारीकंद, थूहरके पत्ते, आकके पत्ते, सनाय, दोनों कन्हेरकी छाल, आंधाझाडा (ओंगा), और खींप ये सब औषध तीन तीन टकेभर और इन सब औषधोंके बराबर तिलीका तेल, इसी तेलके बराबर अंडीका तेल और दोनों तेलोंसें चौगुना जल ये सर्व एकत्र कर मंद मंद आंचसे औटाकर पानी जलके तेलमात्र रह जानेपर उतारकर छानलो. पश्चात् सोंठ, मिर्च, पिम्पली, असगंध, रास्ना, कूट, नागरमोथा, बच, देवदारु, इन्द्रयव, जवाखार, पांचों नोंन, नीलाथूथा, कायफल, पाठा, भारंगी, नौसादर, गंधक, पोकरमूल, शिलाजीत, हरताल ये प्रत्येक औषध धेले धेलेभर और २ टकेभर सिंगीमुहरा, इन सबके चूर्णको उक्त तेलमें डालदो जो यह तेल मर्दन करो तो सर्व वायुरोग, तथा कुक्षि, भौं, जंघा, पृष्ठ, संधि इन स्थानोंमे स्थित कुपितवात पदशोथ, गृध्रसी, मस्तकरोग, अंग फूटना, कर्णशूल, गंडमाला, ये सर्व रोग दूर होवेंगे. इसे विषगर्भतेल कहते हैं.

तथा ७– मजीठ, देवदारु, चीढ (वृक्षविशेष) दोनों कटियाली, बच, तज, पत्रज, शुद्ध गंधक, हर्रकी छाल, बहेडेकी छाल, कचूर, आंवला, नागरमोथा, ये सब २ दो टंक लेके क्वाथ बनालो; यह क्वाथ १ सेरभर तेलके साथ पकाकर तेलमात्र रह जानेपर इस तेलमें छड, मूर्वा, मैंनफल, तज, चम्पाकी जड, कमलतंतु, पीपलामूल, और सोंचरनोंन ये दो दो टकेभर. तथा लोबान (ऊद) गंधाविरोजा, असगंध, नख (जोकि अष्टांगमें सुगंधि विशेष होती है) और छड ये टके टकेभर. और इलायची, लौंग, चंदन, जुहीके फूलोंकी कली, कंकोल, अगर और केशर ये पैसे पैसेभर. और २ टंक कस्तूरी इन सर्वौषधोंका बारीक चूर्ण करके डालदो. इसके मंद मंद आंचसे पकाते पकाते औषधें मिदकर तेलमात्र रह जानेपर २ टंक कपूर डालके छानलो. अब इस तेलका मर्दन करो तो सर्व वातरोग, समस्त प्रमेह, शोथ, गुल्मज्वर, ये सर्व रोग दूर होवेंगे. यह लक्ष्मीविलास महासुगं-

तथा ८– ७ टकेभर सोंठ, ७ टकेभर घीमें पीसकर पकालेओ. इसमें ७ टकेभर इक पोता लहसन और सात टकेभर मधु डालकर एकत्र करदो जो एक टकेभर नित्य खिलाओ तो पक्षाघात, हनुस्तंभ, कटिभंग, भुजाकी पीडा, और वायुके समस्त रोग दूर होवेंगे.

तथा ९– मालकांगनी, असालु, अजवान, काला जीरा, मेंथी और तिल इन सबको समान एकत्र कर तेलीके कोल्हू (घानी)से पिलवाओ जो इस तेलको मर्दन करो तो वायुके समस्त रोग दूर होंगे. यह विजयभैरव तैल है.

तथा १०– पारा, गंधक, हरताल और मैंनसिल इनको ३ दिनतक कांजीके साथ खल करके एक हाथभर महीन कपडेपर लपेट दो. और इस कपडेकी बत्ती बनाकर ऊपरसे लपेट दो नंतर बत्तीको चौगुणे तेलमें भिंगोकर सुलगा (जलाके) दो और किसी लोहेके पात्रके ऊपर उसे पकड रखो बत्ती जलते समय उस पात्रमें जो तेल टपकेगा उसका मर्दन करो तो समस्त वातरोग दूर होवेंगे. यहभी विजयभैरव तैल कहाता है.

तथा ११– ३ टकेभर हर्रेकी छाल, ३ टकेभर चित्रक, १ पैसेभर इलायची, १ पैसेभर तज, १ पैसेभर पत्रज, १ पैसेभर नागरमोथा, २ टंकभर सम्भालु, १० टंक सोंठ, १० टंक काली मिर्च, १० टंक पिम्पली, १० टंक पीपलामूल, १० टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १० टंक लोहसार, १० टंक वंशलोचन, ( १० टंक शुद्ध पारा, १० टंक शुद्ध गंधककी ) कजली, इन सबको महीन पीसकर ३ वर्षके पुराने गुडके साथ बेरकी विजीके समान गोलियां बनाके घृतके चिकने पात्रमें रखदो. ये रोगीके बलानुसार १ या दो तथा तीन गोली २ मास पर्यंत नित्य खिलाओ तो कफ पित्तके सब रोग, ४ मासतक खिलाओ तो वायुके सर्व रोग, १ वर्षतक खिलाओ तो समस्त रोगमात्र, दूर होवे, २ वर्षतक खिलाओ तो वृद्धता दूर होकर तरुणाई प्राप्त हो. और इसी रसको ३ वर्ष पर्यंत युक्ति और प्रणपूर्वक सेवन कराओ तो शरीर सर्व प्रकारसे रोगरहित होकर आयु वृद्धि होगी. यह विजयभैरवरस है.

तथा १२– १ भाग शुद्ध पारा, २ भाग शुद्ध गंधक, ३ भाग त्रिफला, ४ भाग चित्रक, ५ भाग शुद्ध गूगल इन सबको अरंडीके तेलमें दिनभर

खल करके हिंगाष्टक चूर्णके साथ १ दिनभर फिर खल करो और २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ मास पर्यंत प्रतिदिन १ गोली रोगीको ब्रह्मचर्य पूर्वक लौंग, सोंठ, अंडीकी जडके क्वाथके साथ सेवन कराओ तो सर्व प्रकारके वातरोग दूर होंगे और साधारण वात तो ७ दिन मात्रके सेवनसेही दूर हो जाती है. इसको वातारिरस कहते हैं.

तथा १३– शुद्ध गंधक, शुद्ध सिंगीमुहरा, सोंठ, काली मिर्च, पारा, पीपली, ( पारेगंधककी कजलीके साथ )को महीन पीसकर मिला डालो और भंगरेके रसकी सात पुट देके १ रत्तीप्रमाणकी गोलियां बनालो जो नित्य एक गोली अदरकके रसके साथ खिलाओ तो सर्व प्रकारकी वायुपीडा दूर होगी. यह समीरपन्नग रस कहाता है.

तथा १४– उत्तम नवीन अफीम, कुचला, काली मिर्च, इन तीनोंको महीन पीसकर १ रत्ती प्रमाणकी गोलियों बनाओ जो पानके रसके साथ प्रभातकाल १ गोली नित्य खिलाकर ऊपरसे पान खिलाओ तो समस्त वातरोग, शोथ, विशूचिका, अरुचि और अपस्मार ये सब रोग दूर होवेंगे. यह समीरगजकेशरी रस कहाता है. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १५– तीव्रा ( मदकारणी जिसे खुरासानीभी कहते हैं ) अजवान, जीरा, कांकडासिंगी, अजमोद, असगंध, इन सबका १ मासे चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सर्व प्रकारकी वायु, कास, श्वास, प्रलाप, अतिनिद्रा और अरुचि ये सर्व रोग दूर होंगे. इसे वृद्धचिंतामणिरस कहते हैं.

तथा १६– २ टकेभर चित्रक, ३ टकेभर हर्रकी छाल, १ टकेभर पारा, १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर काली मिर्च, १ टकेभर पिम्पली, १ टकेभर पिंपलामूल, १ टकेभर नागरमोथा, १ टकेभर जायफल, १ टकेभर वधायरा, ५ टंक इलायची, ५ टंक कूट, ७ टंक शुद्ध गंधक, ५ टंक हिंगुल, ५ टंक अकलकरा, ५ टंक मालकांगनी, ५ टंक तज, ५ टंक अभ्रक, ५ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, और आठ टकेभर गुड, इन सबको पीस छान एकत्र करके ज-

१ जहां पारे और गंधकका संयोग हो तहां उनकी कजली बना लेना चाहिये.

लभंगराके रसकी १ पुट दो और २ या तीन रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाके १ गोली नित्य खिलाओ तो सर्व वातरोग, कुष्ट, प्रमेह, मृगी, क्षयी, आमवात, श्वास, शोथ, पांडु और अर्श ये सर्व रोग दूर होंगे यह अमृतनाम्नीगुटिका योगतरंगणीमें लिखा है.

तथा १७– शुद्ध पारे और गंधककी कजलीको दूधीके रसकी एक पुट, तुलसीके रसकी १ पुट, बावची (मालवावरी)के रसकी १ पुट, मयूरशिखा (हरे पुष्पवाली बूटी)के रसकी १ पुट, मुलहटीके रसकी १ पुट, वराहीकंदके रसकी एक पुट और वहुफलीके रसकी १ पुट यथाक्रमसे देके प्रत्येक पुटके साथ सुखाते जाओ. सर्व पुट हो चुकनेपर मुर्गीके अंडेका रस निकालकर खोखलाको पानीसे धोके इस खोखलामें पूर्वोक्त कजली भरदो. इस कजली भरेहुए अंडेको ७ कपडमिट्टी (सुखा सुखाके एकान्तर एक) से लपेटकर गजपुटमें पकाओ इसी प्रकार तीन बार गजपुटमें फूंकके निकाललो. जो इसमेंसे १ रत्तीमात्र खिलाओ तो सर्व प्रकारकी वादी दूर होकर क्षुधावृद्धि होगी. यह राक्षसरस रसार्णवमें लिखा है.

तथा १८– शुद्ध पारे और गंधककी कजली बनाके उसमें इन दोनोंसे आधी हरताल डालो, इनमें इन तीनोंके समान रांगा डालकर चारोंको आकके दूधमें सात दिनतक खल करो और सुखाके कांचकी दृढ आतसी शीशीमें भरदो इस शीशीको कपड मिट्टीमें लपेटके १२ प्रहरतक वालुयंत्रसे आंच दो. स्वांग शीतल हो जानेपर निकालकर आधी रत्ती पानमें रखके खिलाओ तो सर्व प्रकारकी वात, उन्माद, क्षीणता, मन्दाग्नि, कुष्ट, व्रण और विषमज्वर ये सब दूर हों. यह वंगेश्वररस योगतरंगणीमें लिखा है.

तथा १९– शुद्ध हरताल, शुद्ध गंधक, शुद्ध पारा, हिंगूल, सुहागा, सोंठ, मिर्च, पीपल इन सबके चूर्णको अदरकके रसकी १ पुट देके मूंग प्रमाणकी गोलियां बना लो जो एक गोली नित्य प्रभात समय खिलाओ तो सब प्रकारकी वातव्याधि, मंदाग्नि, सूतिकारोग, शीतज्वर और संग्रहणी ये सर्व उपद्रव दूर हों. यह हरितालगुटिका रस रत्नप्रदीपमें लिखा है.

तथा २०– ५ पैसेभर लहसनको जीरेके सदृश कतरके १ पैसेभर दूध

और धेलेभर पानीमें पकाओ दूध पानी सूख जानेपर लहसनको खरल करके लुगदी बांधलो, इस लुगदीको अधेलेभर घीके साथ आंच देकर लाल हो जानेपर निकालले नंतर आधी रत्ती कस्तूरी, चार रत्ती लौंग, १ मासे जायफल, १ मासे दालचिनी, २ स्वर्णपत्र (सोनेके बर्क) और उपरोक्त निर्मित लहसनकी लुगदी ये सब पीसके २ पैसेभर मिश्रीकी चासनीमें डालदो तदनंतर इसकी चार गोली बनाकर १ गोली प्रातःकाल, (और अधिक वायुका वेग हो तो १ गोली पुनः सायंकालको) खिलाओ तो वायुजन्य बेदना सर्व शांत होजावे. यद्यपि वातव्याधिकी विशेषही तीव्रता हो तो उक्त क्रमानुसार २१ तथा ३९ दिनपर्यंत इसी गोलीका सेवन कराओ तो समस्त वातरोग दूर होकर शरीरको पुष्टता और क्षुधा प्राप्त होगी. ये गोलियां जितनी चाहो उक्त प्रमाणसेही बनाओ. इसे लहसनपाक कहते हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे समस्तवातरोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकोनविंशतितमस्तरङ्गः ॥ १९ ॥

## ॥ आमवातादिरोगः ॥

ऊरुस्तम्भरोगस्य चामानिलस्याभ्रनेत्रे लिखामीह भङ्गे चिकित्साम्।
तथा पित्तजानां बलासोद्भवानां गदानां नवीनामृताब्धेर्यशोदाम् १

भुजंगप्रयातवृत्तमिदम्.

भाषार्थः— अब हम इस नवीन अमृतसागरके २० वीसवें तरंगमें ऊरुस्तंभ, आमवात, पित्त और कफ रोगोंकी यशदायनी चिकित्सा लिखते हैं.

ऊरुस्तंभरोगचिकित्सा १— त्रिफला, काली मिर्च, सोंठ, पीपल और पीपलामूलका २ टंक चूर्ण नित्य मधुके साथ चटाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो.

तथा २— सोंठ, पीपल, शिलाजीत, और गूगल (ये सब ५ मासेभर) का चूर्ण गोमूत्रके साथ पिलाओ तो उरुस्तंभ दूर हो.

तथा ३— दशमूलके क्वाथके साथ गूगल सेवन कराओ तो उरुस्तंभ दूर हो यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ४— १ टंक भिलांवा, १ टंक गुरच, १ टंक सोंठ, १ टंक देवदारु,

१ टंक हर्रेकी छाल, १ टंक साटीकी जड और १ टंक दशमूलका क्वाथ पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो.

तथा ५– एक टंक गूगल नित्य गोमूत्रके साथ १५ पन्द्रह दिनतक पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो.

तथा ६– सर्पकी बांभी (सर्पके रहनेका भूछिद्र)की मिट्टी मधुमें खरल करके मर्दन करो तो ऊरुस्तंभ दूर हो.

तथा ७– दो टंक बचका चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो ऊरु०दूर हो.

तथा ८– खशका रस या नींबूका रस मधु या गुडके साथ पिलाओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो यह काशिनाथपद्धतिमें लिखा है.

तथा ९– चव्य, हर्रेकी छाल, चित्रक, देवदारु, सागरगोटीके फूल, सरसोंका चूर्ण २ टंक मधुके साथ नित्य सेवन कराओ तो ऊरुस्तंभ दूर हो. यह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

ऊरुस्तंभमें वर्जित कर्म– शीर छुडाकर शरीरका रक्त निकालना, वमन कराना, विरेचन देना, और बस्तिक्रिया करना ये कृत्य ऊरुस्तंभवाले रोगीको सर्वदा वर्जित हैं. वैद्यरहस्यमें लिखा है कि ये कृत्य कदापि न करो.

आमवातरोगयत्न १– आमवातके रोगीको लंघन कराओ, सेको, तीक्ष्ण रस दो, क्षुधा वर्द्धक औषधें खिलाओ, विरेचन दो, बस्तिकर्म करो, वालु या नमकसे ताव (सेको) दो, दाग (दंभ) दो, बेंगन या करेलेका साग खिलाओ, कोदों या यव या साठी चावल या पुराने चांवल या कुल्थी, या मटर या चना खिलाओ इन कार्योंको विचारपूर्वक करो तो आमवात दूर हो.

तथा २– चित्रक, कुटकी, हर्रेकी छाल, बच, देवदारु, अतीस, और गुरचके २ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा ३– कचूर, सोंठ, हर्रेकी छाल, बच, देवदारु, अतीस, और गुरचका २ टंक क्वाथ नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा ४– ५ टंक अरंडीके तेलको नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा ५– हर्रेकी छालका चूर्ण अरंडके तेलके साथ सेवन कराओ तो आमवात और गृध्रसी दोनों दूर हों.

तथा ६– किरमालेके पत्ते तेलमें भूंजके चावलोंके साथ नित्य खिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा ७– अरंडके बीजोंको दूधमें खीर बनाकर पिलाओ तो आमवात और गृध्रसी दोनों दूर होंगे.

तथा ८– खेरेटी, रास्ना, अडूसा, अरंडकी जड, धमासा, कचूर, दारुहल्दी, खेरेंटी, नागरमोथा, सोंठ, अतीस, हरेंकी छाल, गोखरू, चव्य, सहजना और दोनों कटियाली, ये सब बराबर और एकसे तिगुना रास्ना इन सबके ५ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ तो पक्षाघात, कम्प, अर्दित, कुब्जवात, संधिवात, घुटनावात, पिंडलीवात, गृध्रसी, हनुग्रह, ऊरुस्तंभ, वातरक्तार्श, वीर्यदोष, और स्त्रीका वंध्यापन, ये सब रोग दूर हों. इसे महारास्नादि क्वाथ कहते है.

तथा ९– अजमोद, काली मिर्च, पीपली, वायविडंग, देवदारु, चित्रक, सोंफ, सेंधानोंन, पीपलामूल, (ये सब टके टकेभर) १० टकेभर सोंठ, १० टकेभर बधायरा, ५ टकेभर हरेंकी छाल, और इन सबके बराबर गुड लेके प्रथम औषधियोंका चूर्ण कर गुडके साथ खल करके २ दो टंकभरकी गोलियां बनाओ जो १ गोली नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो आमवात, अफरा, शूल, गृध्रसी, गोला, प्रतितूणी, कटिपीडा, पृष्ठपीडा, शोथ, जांघ और हड्डीयोंकी फूटन ये सब दूर हों यह अजमोदादि चूर्ण है.

तथा १०– योगराज गुग्गुलका सेवन कराओ तो आमवात दूर हो.

तथा ११– ८ आठ टकेभर सोंठ, १ सेर गौके घीमें चूर्ण करके मिलादो और यह सोंठ युक्त घी ४ सेर दूधमें डालकर खोवा बनालो नंतर ५० टकेभर मिश्रीकी चासनीमें उक्त निर्मित खोवा डालकर १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर नागकेशरका चूर्णभी उसीमें डालदो और १ टकेभरकी गोलियां बनाकर १ गोली प्रातःकाल और १ सायंकाल नित्य खिलाओ तो आमवात दूर होकर शरीर पराक्रमी तथा बलाढ्य होगा. इसे सुंठीपाक कहते हैं.

तथा १२– ८ टकेभर मेंथी, और ८ टकेभर सोंठका चूर्ण सेरभर घीमे मिलाके ४ सेर गौके दूधमें डालदो इस दूधका खोवा बनाकर चार सेर मि-

श्रीकी चासनीमें डालो और ऊपरसे १ टकेभर काली मिर्च, १ टकेभर चित्रक, १ टकेभर पिम्पली, १ टकेभर धनियां २ टकेभर सोंठ, १ टकेभर पीपलामूल, १ टकेभर अजवान, १ टकेभर जीरा, १ टकेभर सोंफ, १ टकेभर जायफल, १ टकेभर कचूर, १ टकेभर तज, १ टकेभर पत्रज और १ टकेभर नागरमोथाका चूर्ण डालकर १ टकेभरकी गोलियां बनाओ जो एक गोली नित्य खिलाओ तो आमवात, वातव्याधि, विषमज्वर, पांडु, उन्माद, मृगी, प्रमेह, वातरक्त, अम्लपित्त, शिरोग्रह, नेत्ररोग और प्रदर ये सर्व दूर होकर वीर्य बढेगा. इसे मैंथीपाक कहते हैं.

तथा १३– २ टंक लहसनका रस २ टंक गौके घीके संग नित्य पिलाओ तो आमवात दूर हो.

तथा १४– ५ टंक सेंधानोंन, ५ टंक हर्रकी छाल, ५ टंक पोहकरमूल, ५ टंक महुआ, और ५ टंक पीपलीका चूर्ण, १ सेर अरंडीका तेल, १ सेर सोंफका रस, २ सेर कांजी, और चार सेर दहीका मठा इन सबको कडाहीमें डालकर मंद मंद आंचदो, रसादिक जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानकर २ टंक नित्य खिलाओ या मर्दन करो तो आमवात दूर होकर क्षुधा बढेगी. इसे ब्रह्मसिद्धबाध तैल कहते हैं.

तथा १५– शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सोंठ, कुटकी, त्रिफला, किरमालेकी गिरी, समभाग और एकसें तिगुनी हर्रकी छाल, इन सबका चूर्ण और पारे गंधककी कजली दोनोंको मिलाकर भलीभांति खरल करो. जो इसमेंसे १ मासेभर रस नित्य सोंठ और अरंडकी जडके काथके साथ सेवन कराओ तो आमवात दूर हो. इसे आमवातारि रस कहते हैं.

तथा १६– १ सेर गूगल, १ सेर कडुआ तेल, एक सेर हर्रकी छाल, १ सेर बहेडेकी छाल और १ सेर आंवलेका चूर्ण इन सबको २४ चौवीस सेर पानीके साथ चूल्हेपर चढाकर आंच दो, चतुर्थांश रह जानेपर छानके पुनः चूल्हेपर चढाओ और कुछ गाढा हो जानेपर २ टंक पारा, २ टंक गंधक, २ टंक सोंठ, २ टंक मिर्च, २ टंक पीपल, २ टंक त्रिफला, २ टंक नागर-

मोथा, २ टंक देवदारु और १०० शुद्ध जमालगोटे इन सबका चूर्ण उक्त क्राथमें डालके १ मासेभर नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो आमवात, वातरोग, भगंदर, शोथ, शूल, अर्श ये सर्व रोग दूर होकर क्षुधा और वीर्यकी वृद्धि होगी. इसे व्याधिशार्दूलगुगल कहते हैं.

तथा १७– हर्रकी छाल, सेंधानोंन, निसोत, इन्द्रायणके फलकी बिजी, इन्द्रायणकी जड, और सोंठका चूर्ण जलके साथ लोहेके पात्रमें डालकर मंद मंद आंचसे पकाओ. जल औंटकर गाढा होनेपर बेरके समान गोलियां बनाकर १ गोली नित्य उष्ण जलके साथ खिलाके ऊपरसे घृत युक्त चांवल खिलाओ तो आमवात दूर हो. इसे आमादिगुटि कहते हैं. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १८– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, त्रिफला, नागरमोथा, वायविडंग, चव्य, चित्रक, बच, इलायची, झांऊकी जड, पीपलामूल, देवदारु, कूट, तुम्बरु (तस्तूम्बा, इन्द्रायणफल) पोकरमूल, दोनों हल्दी, सोंठ, सोंफ, जीरा, पत्रज, धमासा, सोंचरनोंन, जवाखार, सज्जी, गजपीपल, सेंधानोंन और इन सबके बराबर शुद्ध गूगल, इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य घृत या मधुके साथ सेवन कराओ तो आमवात, उदावर्त, पांडु, कृमिरोग, विषमज्वर, आध्मान, उन्माद, कुष्ट और शोथ ये सर्व रोग दूर होंगे. धन्वन्तरिजीने इसका नाम द्वाविंशद् गुगल रखा है. यह वीरसिंहावलोकनग्रंथमें लिखा है.

तथा १९– १ सेर शुद्ध गूगल, ८ टकेभर कडुआ तेल, १ सेर हर्रकी छाल, १ सेर बहेडेकी छाल, १ सेर आंवला इन सबका चूर्णकर २४ चौवीस सेर जलमें औंटाओ, चतुर्थांश रहनेपर छानकर पुनः अग्निपर चढाओ कुछ गाढा होनेपर २ टंक सोंठ, २ टंक काली मिर्च, २ टंक पीपल, २ टंक त्रिफला, २ टंक नागरमोथा, २ टंक देवदारु, २ टंक गुरच, २ टंक निसोत, २ टंक दात्यूणी, २ टंक बच, २ टंक भूकंद, २ टंक धतूरेके बीज, २ टंक शुद्ध गंधक, २ टंक शुद्ध पारा इन सबका चूर्ण उक्त क्राथमें डालके १ मासे नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो आमवात, मस्तक पीडा, कटिपीडा, भगंदर, घुटनोंकी वायु, जांघकी वायु, पथरी और मूत्रकृच्छ्र ये सर्व

रोग दूर होकर क्षुधा और धातुकी वृद्धि होगी तथा शरीर रोगरहित रहेगा. इसे सिंहनादगूगल कहते हैं. यह योगतरंगणीमें लिखा है.

तथा २०– ५ टंक शुद्ध गंधक, ५ टंक ताम्बेश्वर, २ टंक शुद्ध पारा, २ टंक लोहसार इन सबको इकट्ठे पीसकर लोहेके पात्रमें डाल दो और आंचसे पिघलाकर एरंडीके पत्तोंपर ढाल दो नंतर पत्तोंसहित खरल करके पिम्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठके काथकी १ पुट, बहेडेके काथकी २० पुट और गुरचके रसकी १० पुट दो तदनंतर इस पदार्थके समान सिका सुहागा, सुहागेसे आधा बिडनोंन, बिडनोंनके समान काली मिर्च, मिर्चके समान डांसरे, डांसरेके समान सोंठ, सोंठके समान पिम्पली, पिम्पलीके समान त्रिफला, त्रिफलाके समान लवंग इन सबका महीन चूर्ण करके १ मासेभर नित्य खिलाओ तो आमवात दूर होकर क्षुधावृद्धि हो. यह आमवातेश्वर रस रोगयुक्त स्थूल मनुष्यको कृश और कृशको स्थूल करता, अतिशय भोजनको शीघ्र पचाता और न्यारे न्यारे अनुपानोंसे अनेक अन्य रोगोंकोभी नाश करता है. यह सारसंग्रहमें लिखा है.

आमवातमें वर्जित पदार्थ– दही, दूध, गुड, उर्द, मांस और मछली ये पदार्थ उक्त रोगमें सर्वथा वर्जित हैं. ऐसा भावप्रकाशमें लिखा है.

पित्तरोगयत्न १– निम्बकी छाल आदि तीक्ष्ण वस्तु, मिश्री आदि मिष्ट वस्तुका भक्षण, चंदनादि शीतल पदार्थका लेपन, शीतल छाया, चन्द्रमाकी चांदनी, भूगर्भ गृह (तलघर) या रात्रिको किसी शीतल स्थानमें निवास, उसीर व्यजन (खशको पंखे) द्वारा शीतल पवन सेवन दुग्धपान, विरेचन तथा शीर छुडवानेसे पित्तके ४० चालीसों रोग नाश होंगे.

कफरोगके सामान्ययत्न १– उष्ण, रुखी, कसायली, कटु वस्तु खिलाओ, कुरले, वमन, लंघन, मल्लक्रीडा, जलक्रीडा, मार्गगमन, जागरण, मैथुन, श्रम कराओ पसीना निकालो, प्यास रोको, हुका पिलाओ, नाशदो, या चित्रक खिलाओ इन यत्नोंसे २० प्रकारके कफरोग नाश होवेंगे.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे ऊरुस्तंभ, आमवात, पित्तरोग, कफरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम विंशतिमस्तरंगः ॥ २० ॥

॥ वातरक्तशूलादिरोगाः ॥

गदानां वातरक्तस्य शूलादीनां यथाक्रमात् ।
तरंगे भूनेत्रमिते चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस २१ इक्कीसवें तरंगमें वातरक्त और शूल आदि रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

वातरक्तयत्न १– रोगीके शरीरसे जोंक या सिंगी या शीर (फस्त) या उस्तरेसे ऐसा रक्त निकाल दो जिसमें वायु बढने न पावे तो वातरक्त दूर हो.

तथा २– १ टंक गूगल गुरचके क्वाथके साथ नित्य खिलाओ तो वातरक्त दूर हो.

तथा ३–२ टंक अंडीका तेल गुरचके क्वाथके साथ पिलाओ तो वातरक्त दूर हो.

तथा ४– मजीठ, त्रिफला, कुटकी, बच, दारुहल्दी, गुरच और नीमकी छालके २ टंक चूर्णका क्वाथ १ मंडल (चालीस दिन) पर्यंत पिलाओ तो वातरक्त, कुष्ट, पामा, (खुजली) और फोडे, ये सब दूर होंगे यह लघुमंजिष्ठादि क्वाथ है.

तथा ५– गुरच, बावरची, पवांर, नीमकी छाल, हल्दी, हर्रकी छाल, आवला, अडूसा, शतावरी, कमलतंतु, मुलहटी, खरैंटी, महुआ, गोखरू, पटोल, खश, मजीठ, और रक्तचंदनके चूर्ण इनका २ टंक क्वाथ नित्य पिलाओ तो वातरक्त, कुष्ट, पामा और दद्रु ये सब दूर होंगे. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखा हैं, इसे गुडुच्यादि क्वाथ कहते हैं.

तथा ६– सेरभर शुद्ध भैंसागूगल, सेरभर हर्रकी छाल, सेरभर बहेडेकी छाल, सेरभर आंवला, ३२ टंक गुरच, इन सबका चूर ६४ सेर पानीमें औंटाकर आधा रह जानेंपर छानलो, फिर कडाहीमें डालकर कुछ गाढा हो जानेपर पारा, गंधक, निसोत, गुरच, दात्यूणी दो दो टंक और १ टंक वायविडंगका चूर्ण उक्त क्वाथमें डालदो इन सबको एक जीव करके चार या आठ मासे नित्य मंजिष्ठादि क्वाथके साथ सेवन कराओ तो वातरक्त, श्वास, गोला, कुष्ट, शोथ, व्रण, उदररोग, पांडु, प्रमेह, और मंदाग्नि ये सर्व रोग दूर होंगे यह किशोरगूगल कहाता है. इस गूगलको सेवन करनेवाले

रोगीको अग्नि तापना, घाममें फिरना, श्रम करना, मार्ग चलना, मैथुन करना और खटाई, मांस, दही, नोंन, तेल यह नहीं खाना चाहिये.

तथा ७– २ सेर भिलांवांके मुख रेतीसे घिसकर १६ सेर पानीमें औंटाओ. औंटते समय २ सेर गुरचका महीन चूर्ण डालकर चतुर्थांश रखलो नंतर गुरच, बावची, निम्बकी छाल, हरंकी छाल, हल्दी, नागरमोथा, तज (ये सब दो दो टंक) इलायची, खोखरू, कचूर, रक्तचंदन (ये चारों पांच पांच टंक)का बारीक चूर्ण उक्त ४ सेर क्काथमें डालकर भिलांवां सहित सर्व औषधें और जल आदिको कूट डालो इन सबको एकत्रकर ५ टंक नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो वातरक्त, कुष्ट, अर्श, पामा, विसर्प, सर्व वातविकार, सर्व रक्तविकार दूर होंगे. इसके सेवन करनेमें रोगीको छठवें यत्नोक्त वस्तुएं वर्जना चाहिये. यह अमृतभल्लातक है.

तथा ८– अलसी या अरंडीके बीजोंको दूधमें पीसकर हाथ पैरोंपर लेप करो तो वातरक्त दूर हो.

तथा ९– गोरीसर, राल, मोंम, मजीठको तेलमें पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो वातरक्त दूर हो.

तथा १०– एरंडकी जड गुरच और अडूसाके क्काथमें ४ मासे गूगल और २टंक एरंडीका तेल, डालकर पिलाओ तो वातरक्त, मूर्छा, श्वास, मस्तकपीडा और फोडे ये सब दूर हों. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ११– हरतालको पुनर्नवाके रसमें खरल करके टिकिया बनाओ सूख जानेपर पुनर्नवाकी राखके बीचमें धरके ठीकरे (मट्टीके वर्तनको चूल्हेपर चढादो मृद मंद आंचसे ५ दिन ५ रात्रि तपाकर स्वांग शीतल हो जानेपर टिकिया निकालो जो इसमेंसे १ रत्तीभस्म गुडूच्यादि क्काथके साथ सेवन कराओ तो वातरक्त, अठारह प्रकारके कुष्ट, पामा, फिरंगवात, विसर्प और फोडे ये सर्व रोग दूर हों. सेवन करनेवाले पुरुषको नोंन, खटाई, कटु रस, धूप अग्निका बचाव करना चाहिये और सेंधानोंन तथा मीठी वस्तुएं भक्षण करना चाहिये. टिकिया आंचपरसे निकालनेपर श्वेत रंग, बोझ पूर्ववत्

१ जो पानीमें डालनेसे नहीं डूबे ऐसा पका बोझल भिलांवा इस पाकके लिये लेना चाहिये.

(जो वोझ पहिले था उतनाही रहना चाहिये) और निर्धूम हो जाना चाहिये यह हरतालेश्वर रस भावप्रकाशमें लिखा है.

वातरक्तवालेको वर्जित पदार्थ– दिवस निद्रा, क्रोध, श्रम, मैथुन, और कटु, उष्ण, भारी, खारी, खट्टी वस्तु भक्षण न करना चाहिये.

तथा योग्य कार्य– जौ, गेहुं, लाही (ये पुराने) अरहर, चना, मूंग, कुलथी, मसूर, धनियां, चिरपोटणी, वथुआ, चीलवा, लूण्या, (कुल्फा) बकरीका दूध और बकरीकाही घी तथा मांसाहारीयोंको बटेर और तीतरका मांस ये पदार्थ उक्त रोगीके भक्षण करने योग्य हैं.

वातशूलरोगयत्न १– अजवान, सेंधानोंन, सिकी हींग, जवाखार, सोंचरनोंन, हर्रेकी छालका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ दो तो वातशूल दूर हो.

तथा २– १ टंक सोंचरनोंन, ३ टंक जीरा, चार टंक काली मिर्चके चूर्णको अमलबेतके रसकी ७ पुट और विजौरेके रसकी ७ पुट देकर चार मासेभरकी गोलियां बनाओ जो १ गोली उष्ण जलके साथ दो तो वातशूल दूर होगा.

तथा ३– निसोत, वायविडंग, सहजनाकी फली, हर्रेकी छाल, कपेलाके चूर्णको अश्वके मूत्रमें पकाकर २ टंक मद्यके साथ पिलाओ तो वातशूल दूर हो यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ४– सिकी हींग, अमलबेत, पिम्पली, अजवान, जवाखार, हर्रेकी छाल और सेंधानोंनका २ टंक चूर्ण मद्यके साथ पिलाओ तो वातशूल दूर हो.

तथा ५– २ टंक विजौरेकी जडका चूर्ण घृतके साथ खिलाओ तो वातशूल दूर हो. यह विजयपूरादि योग सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा ६– शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, अभ्रक, अमलबेद, ताम्बेश्वर, और शुद्ध सिंगीमुहराको पीसकर अदरकके रसमें ३ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाओ जो एक गोली नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो वातशूल दूर हो इसे अग्निमुखरस कहते हैं.

पित्तशूलयत्न १– हर्रेकी छालको गुडमें पीसकर घृतके साथ खिलाओ तो पित्तशूल दूर हो. तथा २– विरेचन कराओ तो पित्तशूल दूर हो.

कफशूलयत्न १– आंवलेका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो कफशूल दूर हो.

तथा २– नीमकी छालका क्वाथ मदिराके साथ पिलाओ तो कफशूल दूर हो.

तथा ३– जवाखार, सेंधानोंन, सांभरनोंन, सोंचरनोंन, पिम्पली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, और सिकीहींगका २ टंक चूर्ण, उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो कफशूल दूर हो.

त्रिदोषजशूलयत्न १– त्रिफला, सार, मुलहटी, महुआ इनका १ टंक चूर्ण मधु या घृतके साथ चटाओ तो त्रिदोषज (सन्निपात)शूल दूर हो.

तथा २– शंखभस्म, सोंचरनोंन, सिकीहींग, सोंठ, काली मिर्च, पीपली, इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो त्रिदोषज शूल दूर हो.

आमशूलयत्न १– आंवलेका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो आमशूल दूर होगा. उपरोक्त कफरोगके तीनों यत्नभी आमशूलको नाश कर सकेंगे.

सामान्य शूलमात्रके यत्न १– रोगीको वमन या लंघन कराओ, औषधियोंसे प्रस्वेद निकालो, पाचन सज्जीखारका चूर्ण या क्रव्यादि चूर्ण खिलाओ, बस्तिक्रिया करो, कुलथी या तपी हुई रेतकी पोटलीसे पानी सींचकर सेको तो प्रत्येक उपायोंसे शूलरोग दूर हो.

तथा २– कांकडासिंगी, कुल्थी, तिल, जौ, अलसी, अरंडकी जड, पुनर्नवाकी जड, लहसनकी बिजीको कांजीमें पकाकर शूलके स्थानमें सेक करो तो शूल दूर हो.

तथा ३– तिल्लीको पीसकर कांजीमें पकाओ पकते समय कुछ तेलभी डालके पोटली बनाकर सेको तो शूल तत्क्षण दूर हो.

तथा ४– मैंनफलको कांजीमें पीसकर नाभिपर लेप करो तो शूल दूर हो.

तथा ५– सोंठ और अरंडकी जडका क्वाथ पिलाओ तो शूल दूर हो.

तथा ६– सोंठ और एरंडका क्वाथ हींग या सोंचरनोंनके साथ पिलाओ तो शूल दूर हो.

तथा ७– गुडको पानीमें औंटाकर जवाखार डालके पिलाओ तो शूल दूर हो.

तथा ८ कांसे, या चांदी या ताम्बेका जल भरा पात्र शूलके स्थानपर फिराओ तो शूल दूर हो.

तथा ९– राई और त्रिफलाका चूर्ण मधु या घृतके साथ दो तो शूलमात्र दूर हों.

तथा १०– दारुहल्दी, चोख, कूट, सोंफ, सिकीहींग, और सेंधानोंनका बारीक चूर्ण उष्ण कांजीके साथ लेप करो तो शूल दूर हो.

तथा ११– बीलकी जड, एरंडकी जड, चित्रक, सोंठ, सिकी हींग, सेंधानोंन इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल दूर हो.

तथा १२– पके कुम्हडेके सूखे हुए घूला (तुकडे जैसे शाक बनानेके लिये करते हैं) पीतलके पात्रमें भरकर मुंह बंद करदो इसे चूल्हेपर चढाके इतनी आंच दो कि जिससे जलकर कोयले बन जावें, स्वांग शीतल हो जानेपर २ मासे राख सोंठके चूर्णके साथ खिलाकर ऊपरसे जल पिलाओ तो असाध्य शूलभी दूर हो इसे कुष्मांड क्षार कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १३– सोंठ, हर्रकी छाल, पिम्पली, निसोत, और सोंचरनोंनको १ टकेभर चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल, अफरा, अर्श, और आमवात ये सब दूर हों. इसे पञ्चसम चूर्ण कहते हैं.

तथा १४– सिकी हींग और सोंचरनोंनका चूर्ण सोंठके क्वाथ और अरंडीके तेलके साथ सेवन कराओ तो शूल तत्काल दूर हो.

तथा १५– शंखका चूर्ण सोंचरनोंन, सिकी हींग, काली मिर्च और पिम्पलीका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल तुरंत दूर हो.

तथा १६– शुद्ध सिंगीमुहरा, सोंठ, चित्रक, काली मिर्च, पीपल, जीरा, और सिकी हींगके चूर्णको भंगरेके रसकी ३ पुट देकर चने सदृश गोलियां बनालो और १ गोली उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल दूर होगा.

तथा १७– शंखभस्म, करंजमूल, सिकी हींग, सोंठ, काली मिर्च, पीपल, और सेंधानोंनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो शूल दूर हो. यह शूलनाशन चूर्ण कहाता है.

तथा १८– चित्रक, सोंठ, सिकी हींग, पाठी, पिम्पली, काली मिर्च, जीरा, धनियां पांचोंनोंन, छड, अजवान और पीपलामूलके चूर्णको जमी

रीके रसकी ५ पुट देके ४ मासे प्रमाणकी गोलियां बनाओ जो १ गोली उष्ण जलके साथ खिलाओ तो हृदयशूल, आमशूल, पार्श्वशूल, समस्त शूल, अरुचि, और ८० अस्सीप्रकारकी वात ये सर्व रोग तुरंत दूर होंगे. इसे चित्रकादि गुटिका कहते हैं.

तथा १९– हर्रेकी छाल, सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, कुचला, शुद्ध गंधक, सिकी हींग और सेंधेनोंनको जलसे खरल करके चने प्रमाणकी गोलियां बनालो. १ गोली नित्य प्रातःकाल उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो संग्रहणी, अतिसार, अजीर्ण, मन्दाग्नि, ये सर्व दूर होंगे. इसे शूलनाशनी गुटिका कहते हैं.

तथा २०– २ टंक कूठ (शाल्मलिवृक्ष) २ टंक सोंठ, १ टंक सोंचरनोंन, १ टंक सिकी हींगका चूर्ण सहजने या लहसनके रसमें मिलाकर गोलियां बनालो जो १ गोली उष्ण जलके साथ दो तो शूल तत्काल दूर होगा. इसे कुचिलादि[1] गुटिका कहते हैं.

तथा २१– १० टंक शुद्ध पारा, १० टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, २० टंक काली मिर्च, २० टंक पिप्पली, २० टंक सोंठ, २० टंक सिकी हींग, ५ टंक पांचोंनोन, ८ टंक इमलीका खार, ८ टंक जमीरीका खार, ८ टकेभर शंखकी राख इन सबको नीबूके रसमें ५ दिन खरल करके १ टंक रस उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो शूल तत्काल दूर हो. इसे शूलदावानलरस कहते हैं.

तथा २२– आधसेर हीराकसी, सेरभर लाहौरी फिटकरी, सेरभर सेंधानोंन, सेरभर शोराका चूर्ण करके ढेकली (यंत्रोंमें प्रसिद्ध है) यंत्रसे रस निकाललो जो १ मासेभर खिलाओ तो शूल, गुल्म, अर्श, प्लीहा, उदररोग, अजीर्ण और वातरोग सब दूर होंगे. इसे शंखद्राव[2] कहते हैं.

तथा २३– शुद्ध गंधक, गंधकसे आधा पारा, इन दोनोंके समान कं-

---

१ प्राचीनामृतसागरमें इसे कुचिलादि गुटिका नाम दिया है परंतु इसमें कुचिलेका नाममात्रभी नहीं दृष्टि पडता. हां जो कूठादि गुटिकाभी कहा जावे तोही योग्य है.

२ इस पदार्थको कांच या चीनीकी शीशीको छोड अन्य पात्रमें न धरो क्योंकि यह उसे खा जायगा तो फिर द्रव पदार्थ हाथ न लगेगा. और इसके भक्षण समय रोगीके मुखमें घृत लगादो न तो उसके दांत और जीभको हानि पहुंचनेका भय होगा.

टकवेधी ताम्बेके पत्र तीनोंको १ दिन खरल करके गोला बनालो और हं-
डीमें नमक भरके उसके बीचमें यह गोला धरदो, हंडीको चूल्हेपर तीन
दिन आंच देकर स्वांग शीतल हो जानेपर गोलेको निकालके पीस डालो
जो इस भस्मको २ रत्ती प्रमाणकी मात्रासे नागरवेल पानके साथ खिला-
ओ तो शूल तत्काल दूर हो. इसे शूलकेशरी रस कहते हैं.

तथा २४– जीरा, सोंठ, काली मिर्च, सिकी हींग और बच इस्का २ टंक
चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो शूल दूर हो.

तथा २५– १ टकेभर त्रिफला, ५ टकेभर शुद्ध गंधक, २ टकेभर कांतिसार
इन्होंका चूर्ण, अनुमानसें २ टंक मधु और २ टंक घृतके साथ ३ मासपर्यंत
चटाओ तो सर्व शूल, वायुके विकार और फोडे ये सब दूर हों. इसे गंधक-
रसायन कहते हैं.

तथा २६– १ टकेभर गुड, १ टकेभर आंवला, ३ टकेभर मंडूर इनका २ टंक
चूर्ण मधु और घृतके साथ चटाओ तो शूल, अन्नद्रव, जरत्पित्त, अम्ल-
पित्त, परिणाम शूल, ये सव दूर हों. यह गुडादि मंडूर कहाता है.

तथा २७– वायविडंग, चित्रक, चव्य, त्रिफला, सोंठ, काली मिर्च और
पिम्पली, इन सबके बराबर मंडूर, और तुल्यही गुड तथा इन सबोंसे १०
गुणा गोमूत्र लो नंतर सर्व औषध और गुडादिका चूर्ण गोमूत्रमें पकाकर
दृढ करलो और पिंडा बनाकर घृतके चिकने पात्रमें रखदो जो इसमेंसे २
टंक नित्य भोजनके पूर्व भक्षण कराओ तो शूल, पंक्तिशूल, कामला, पांडु,
शोथ, मंदाग्नि, अर्श, संग्रहणी, कृमि, गुल्म, उदररोग, अम्लपित्त ये सर्व रोग
दूर होंगे. यह तारामंडूर है.

तथा २८– हर्रेकी छाल, सुहागा, सोंठ, सिकी हींग, काली मिर्च, चि-
त्रक, शुद्ध गंधक, सेंधानोंन और इन सबके समान शुद्ध कुचला इन स-
बको पीसकर एक मासे प्रमाणकी गोलियां बनालो. जो एक गोली नित्य
जलके साथ सेवन कराओ तो शूल, अफरा, बंधकुष्ट, कफरोग, अजीर्ण,
मन्दाग्नि, ज्वर ये सब दूर हों. यह स्थूलगजकेशरी गुटिका है.

तथा २९– कणगजकी जड, सिकी हींग, सोंठ, सिका सुहागा, इन स-

बका २ टंक चूर्ण उष्ण जलसे सेवन कराओ तो महाशूलभी दूर हो ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ३०– सोंचरनोंन, अमलवेद, जीरा, और मिरची ये सब एक दुसरेसे क्रमानुसार दूने दूने लेकर चूर्ण करो और विजौरेके रसमें गोलियां बनाकर १ गोली उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो शूल दूर हो. इसे सौवर्चलादि गुटिका कहते हैं.

तथा ३१– सिकी हींग, अमलवेद, काली मिर्च, पिम्पली, अजवान, सोंचरनोंन, सांभरनोंन, सेंधानोंन इन सबको पीसकर विजौरेके रसमें गोलियां बनाओ जो एक गोली उष्ण जलके साथ खिलाओ तो समस्त शूल दूर होगा. इसे हिंग्वादिगुटीका कहते हैं.

तथा ३२– हल्दी, सहजना, (मुंगना)की छाल, सेंधानोंन, एरंडकी जड, सोंफ, भैंसागूगल, सरसों, दानामैंथी, असगंध और महुआके चूर्णको कांजीके पानीमें उसन (सान)के रोटी बनाओ और अग्निपर सेकके रोगीके पेटपर बांधो या ताव दो तो पेटका शूल दूर हो.

तथा ३३– कौडियोंकी राख, शुद्ध सिंगीमुहरा, सेंधानोंन, काली मिर्च, पिम्पली, इन सबका चूर्ण कर पानके रसमें १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाओ जो १ गोली नित्य खिलाओ तो शूलरोग दूर हो. यह शूलकेशरी रस है.

तथा ३४– बडे शंखको तपा तपाकर ११ ग्यारह बार नीबूके रसमें बुझाओ फिर इस बुझेहुए शंखके चूर्ण (राख)में १ टकेभर इमलीका खार, ५ टंक सोचरनोंन, १ टकेभर सेंधानोंन, १ टकेभर साम्हरनोंन, १ टकेभर कचनोंन, १ टकेभर बिडनोंन, ६ मासे सोंठ, ६ मासे काली मिर्च, ६ मासे पिम्पली, १ टकेभर सिकी हींग, १ टकेभर शुद्ध गंधक, १ टकेभर शुद्ध पारा, १ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, ये सब औषधें मिलाकर एक जीवकर दो नंतर जलके साथ घोंटकर छोटे बेर प्रमाणकी गोलियां बनाओ जो एक गोली लवंगके क्वाथके साथ सेवन कराओ तो शूल तत्काल दूर हो. इसका नाम शंखबद्धी रस है.

तथा ३५– जो भोजन कियेपर शूल उत्पन्न हो तो २ टंक शीसे (काच)की भस्म उष्ण जलके साथ पिलाओ शूल दूर होगा.

तथा ३६– एक टंक शुद्ध पारा, १ टंक शुद्ध गंधक, १ टंक शुद्ध सिंगीमुहरा, १ टकेभर काली मिर्च, २ टकेभर काकडासिंगी, २ टकेभर पीपली, २ टकेभर सिकी[1] हींग, ८ आठ टकेभर पाचों नोंन, ८ टकेभर इमलीका खार, ८ टकेभर नीबूके रसमें बुझे हुए शंखकी भस्म, इन सबके चूर्णको नीबूके रसमें खरल करके १ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो जो १ गोली जलके साथ सेवन कराओ तो शूल, अजीर्ण, उदररोग और मंदाग्नि ये दूर होंगे इसे शूलदावानल रस कहते हैं, ये सर्व यत्न सर्वसंग्रह ग्रंथमें लिखे हैं.

पार्श्वशूलयत्न १– सिंगीमुहरा, हरताल, सिकी हींग, राई, नौसादर, मैंनसिल, लहसन, बच, एलिया (एलावा) इस सबको पानीमें पीसकर उष्ण करो और रोगीको पार्श्वभागपर लेप करो तो पार्श्वशूल (पसली दुःखना) दूर होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे वातरक्तशूलादिरोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकविंशतिमस्तरंगः ॥ २१ ॥

## ॥ उदावर्त-अनाह ॥

उदावर्तानाहगदयोस्तरङ्गे हि यथाक्रमात् ।
पक्षनेत्रमिते चास्मिन् चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस २२ वें तरंगमें उदावर्त और अनाह रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

उदावर्तरोगयत्न १– स्नेहपान[2] कराओ तथा अधोवायु आनेवाली औषधि सेवन करावो तो अधोवायुका प्रतिबंधसें उत्पन्न हुवा सो उदावर्त दूर होवे.

तथा २– विरेचनसे मलको दूर करनेवाली औषध या मल शुद्ध करनेवाले अन्न भक्षण कराओ, फलवर्ती[2] या तेल मर्दन करो या बस्तिक्रिया[2] करो तो मल रोकनेका उदावर्तरोग दूर हो.

---

१ जहां हींग सेकनेके लिये कहा हो तहां हींगको गौके घृतमें तल डालो या रुईमें लपेटके अग्निपर तपाके फुला डालो तो हींग सिक जावेगी.

२ स्नेहपान, फलबर्ती और बस्तिक्रिया आगे वर्णन करेंगे.

तथा ३- १ टंक जवाखार, १ टंक बचको पानीमें पीसके पिलाओ तो मूत्र रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा ४- कटियाली और अर्जुन वृक्षकी जडका क्राथ पिलाओ तो मूत्र रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा ५- मिश्री, गन्नाका रस, दूध, दाखका रस पिलाओ तो मूत्र रोकनेका उदावर्त दूर होगा. इससे वायुजन्य रोगभी नाश होते हैं.

तथा ६- स्नेहपान या मर्दन द्वारा पसीना निकालनेसे जमुहाई रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा ७- उच्च स्वरसे रुदन करके आंसू वहाओ या सुखपूर्वक शयन कराओ या मनोहर कथा सुनाओ तो आंसू रोकनेका उदावर्त दूर हो.

तथा ८- काली मिर्च, राईका नास दो या नकछिकनी सुंघाओ या सूर्याभिमुख होकर छिकाओ (छींक लिवाओ) या तेल मर्दन करके पसीना निकालो तो छींक रोकनेसे उत्पन्न हुआ सो उदावर्त दूर होगा.

तथा ९- तेल मर्दन करो या पसीना निकालो तो डकारका वेग रोकनेसे उत्पन्न हुआ उदावर्त दूर हो.

तथा १०- वमन या लंघन या विरेचन या बस्तिकर्म करो, तेल मसलो या नासिकाके सुरोंसे पानी पिलाओ तो वमन रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा ११- १६ वर्षवाली सुन्दर रूपवती स्त्रीसे भोग कराओ या तैलमर्दन करो या मद्यादि मादक पदार्थ पिलाओ या मुर्गेका मांस, सांठी धानके चांवल खिलाओ या बस्तिक्रिया करो तो कामदेव (वीर्य)के रोकनेसे जो उदावर्त उत्पन्न हुआ सो दूर होगा.

तथा १२- चिकना, उष्ण, रुचिकारक, हल्का, हितकारी, भोजन कराओ या सुगंधित पुष्प धारण कराओ तो क्षुधा रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा १३- शीत क्रिया करो, फुहारोंके समीप बिठावो, महीन वस्त्र पहिनाओ, जल क्रीडा कराओ या शीतल जलमें भीमसेनीकपूर घोलकर धीरे धीरे पिलाओ तो तृषाका उदावर्त दूर हो.

तथा १४– श्रम दूर होनेसे, विश्राम देनेसे, या मांसरसके साथ चांवल खिलानेसे श्वास रोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा १५– उष्ण दूधमें मिश्री डालकर सहता सहता पिलाओ, मनोहर कथा सुनाओ या सुखसे सुलाओ तो निद्राका उदावर्त दूर होगा.

सूचना– यहांतक हमने १३ तेरह वेगोंके रोकनेसे जो उदावर्त उत्पन्न होते हैं तिनकी क्रिया चिकित्सा लिख चुके इसके आगे अब सर्व उदावर्त मात्रके दूर होनेके यत्न प्रकाश करते हैं.

उदावर्तयत्न १– हींग, मधु, और सेंधेनोंनको पीसकर बत्ती बनाओ और घीसे चुपडकर सहती सहती गुदामें रखो तो उदावर्तमात्र दूर हो. इसे हिंग्वादिफलवर्ती कहते हैं.

तथा २– मैंनफल, पिम्पली, कूट, बच, सरसों, गुड, इन सबको दूधमें महीन पीसकर बत्ती बनाके मलद्वारपर रखो तो उदावर्त मात्र दूर हो. इसे मदनफलादि फलवर्ती कहते हैं.

तथा ३– १ टकेभर शक्कर, ३ टकेभर निसोत और ५ टकेभर पिम्पली इनका २ टंक चूर्ण मधुके साथ सेवन कराओ तो दृढ मलद्राव होकर उतरे और उदावर्त दूर हो. इसे नाराचचूर्ण कहते हैं.

तथा ४– सोंठ, मिर्च, पिम्पली, पीपलामूल, निसोत, दात्यूणी, चित्रक, इनका १ टंक चूर्ण गुडके साथ नित्य प्रातःकाल खिलाकर ऊपरसे जल पिलाओ तो उदावर्त, पाण्डु, प्लीहा, गुल्म और शोथ ये सब रोग दूर होंगे. इसे गुडाष्टक कहते हैं.

तथा ५– सूखी मूली, साटीकी जड, पिम्पली, पिपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, दशमूल, किरवारेकी गिरी इन सबका घृत बनाकर खिलाओ तो उदावर्त दूर हो इसे शुष्क मूलकादि घृत कहते हैं. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें हैं.

तथा ६– शुद्ध जमालगोटा, शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, सिका सुहागा, सोंठ, मिर्च, पीपल इन सबका १ मासे चूर्ण मिश्रीके साथ सेवन कराओ तो उदावर्त, अफरा, उदररोग और गुल्म ये सब दूर होंगे. इसे अजयपाल रस कहते हैं. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ७– निसोत या थूहरपत्र या तिल्ली आदि उष्ण वस्तु युक्तिपूर्वक सेवन कराओ तो उदावर्त दूर हो.

तथा ८– निसोत, दात्यूणी, तज, थूहर, किरवारा, शंखाहोली, कणगचकी जड, कपीला इन सबके २ टंक चूर्णका क्वाथ २ टंक तेल और २ टंक घीके साथ ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो उदावर्त, उदररोग, अफरा, तृषा और गुल्म ये सब दूर होंगे.

अनाहरोगयत्न १– उदावर्त रोगके जो उपरोक्त यत्न लिखे हैं उन्हीं यत्नोंसे अनाहरोगभी नाश होगा.

तथा २– इसके निम्नलिखित यत्न औरभी जानो. २ भाग निसोत, ४ भाग पिम्पली, ५ भाग बहेडेकी छाल और इन सबके समान गुड इन सबको महीन पीसकर १ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो जो एक गोली नित्य जलके साथ १५ दिनतक खिलाओ तो अनाहरोग दूर हो.

तथा ३– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, सेंधानोंन, सरसों, धमासा और मैंनफलका चूर्ण गुडके साथ मिलाकर अंगूठेसमान मोटी बत्ती बनाओ और घीमें भिंगोकर गुदामें रखो तो अनाह (अफरा) उदावर्त, उदररोग, मूत्राशयके रोग और गुल्मरोग ये सब दूर होंगे. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे उदावर्त, अनाहरोगयत्ननिरूपणं नाम द्वाविंशस्तरंगः ॥ २२ ॥

## ॥ गुल्मरोग ॥

गुल्मामयस्यास्य नूनं चात्र पञ्चविधस्य वै ।
राममनेत्रमितेभङ्गे चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस २३ तेइसवें तरङ्गमें पांच प्रकारके गुल्म रोगकी चिकित्सा लिखते हैं.

वातगुल्मरोगयत्न १– हरेंका चूर्ण और एरंडीका तेल दूधमें डालकर पिलाओ तो वातगुल्मरोग दूर हो.

तथा २– सज्जी, कूट, जवाखार और केवडेके खारका चूर्ण एरंडीके तेलके साथ पिलाओ तो वातगुल्म दूर हो.

पित्तगुल्मरोगयत्न १– निसोतका चूर्ण या त्रिफलाका चूर्ण खिलाओ या कपीलाको मिश्री या मधुके साथ चटाओ तो पित्तगुल्म दूर हो.

कफगुल्मरोगयत्न १– वातगुल्मके यत्नही इसपर चलते हैं.

समस्तगुल्मरोगयत्न १– सिकी हींग, पीपलामूल, धनियां, जीरा, बच, चव्य, चित्रक, पाठ, कचूर, अमलवेद, साम्हरनोंन, सोंचरनोंन, सेंधानोंन, जवाखार, सज्जी, अनारदाना, हर्रेकी छाल, पोकरमूल, डांसरा, झांऊकी जड इन सबके चूरणको अदरकके रसकी ७ पुट, और विजौरेके रसकी ७ पुट देकर २ टंक चूर्ण नित्य खिलाओ तो गुल्म, अनाह, अर्श, संग्रहणी, उदावर्त, उदररोग, उरुस्तंभ, उन्माद, और शूल ये सर्व दूर होंगे. इसे हिंग्वादिचूर्ण कहते हैं.

तथा २– ४ मासे सज्जी और ४ मासे गुड नित्य खिलाओ तो गुल्म दूर हो.

तथा ३– पलासखार, थूहरखार, इमलीखार, अर्कखार, तिलखार, जवाखार, सज्जीखार और आधे झारेके खारका चूर्णकर १ या २ टंक उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म और शूल दोनों दूर होंगे. इसका नाम क्षाराष्टकचूर्ण है.

तथा ४– सांभरनोंन, सेंधानोंन, कचनोंन, जवाखार, सुहागा, सोंचरनोंन और सज्जीका चूर्ण ३ दिनतक थूहरके दूधमें भिंगोकर धूपमें सुखालो. इसे आकके पत्तोंपर लपेटके पत्तोंको घडेमें भरदो और इस घडेको गजपुटमें फूंककर स्वांग शीतल होनेपर घडेमेंसे भस्म निकाललो. नंतर सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, त्रिफला, अजवान, जीरा और चित्रकका चूर्ण उक्त निर्मित भस्मके साथ खरल करके २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जल या गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो गुल्म, शूल, अजीर्ण, शोथ, उदररोग, मंदाग्नि, उदावर्त, प्लीहा, ये सर्व रोग दूर होंगे. इसे वज्रक्षारचूर्ण कहते हैं.

तथा ५– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, सेंधेनोंनका २ टंक चूर्ण गवांरपाठेके गूदेमें लपेटदो और इसे घीके साथ नित्य खिलाओ तो गुल्म और प्लीहा दोनों दूर हों.

तथा ६– १ मनभर गवांरपाठेका गूदा, २०० टकेभर गुड, १०० टकेभर

मधुमें २ सेर धावडेके फूल, २ टकेभर सोंठ, २ टकेभर मिर्ची, २ टकेभर पिम्पली, २ टकेभर तज, २ टकेभर पत्रज, २ टकेभर इलायची, २ टकेभर चव्य, २ टकेभर चित्रक, २ टकेभर कचूर, २ टकेभर नागकेशर, २ टकेभर झांऊकी जड, २ टकेभर अजमोद, २ टकेभर जीरा, २ टकेभर देवदारु, २ टकेभर बबूलकी छाल, २ टकेभर असगंध, २ टकेभर रास्ना, २ टकेभर बधायरा, और २ टकेभर इन्द्रयवका चूर्ण मिलाकर एक जीव करदो, नंतर एक मृत्तिकाके चिकने पात्रमें इस सर्व पदार्थकों धरके पात्रका मुंह बंद करदो इस पात्रको २१ दिनपर्यंत पृथ्वीमें गाडकर पश्चात् बाहर निकालो जो इसमेंसे नित्य २ टकेभर खिलाओ तो गुल्म, उदावर्त, उदररोग, विसूचिका, गृध्रसी, श्वास, कास, पांडु और वातव्याधिके समस्त रोग नाश होवेंगे. इसे गवांरपाठेका आसव कहते हैं. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ७– १ टंक सोरा और १ टंक अद्रक नित्य खिलाओ तो गुल्म दूर होगा.

तथा ८– १ टंक सीपकी भस्म ४ मासे गुडके साथ नित्य खिलाओ तो गुल्मरोग दूर हो. इसे सीपप्रयोग कहते हैं.

तथा ९– २ टंक लहसनकी दूधमें खीर बनाकर खिलाओ तो गुल्म दूर हो.

तथा १०– एरंडकी जड, चित्रक, सोंठ, वायविडंग, पिम्पलामूल, सिकी हींग, सेंधानोंन, इन सबका क्काथ पिलाओ तो गुल्म, अफरा, और शूल ये सर्व रोग दूर होंगे.

तथा ११– १६ मासे अजवान, ५ टंक जीरा, ५ टंक धनियां, ५ टंक काली मिर्च, ५ टंक कूडेकी छाल, ५ टंक अजमोद, ५ टंक काला जीरा, ५ टंक सिकी हींग, ८ टंक जवाखार, ८ टंक सज्जी, ८ टंक पांचोंनोंन, ८ टंक निसोत, १० टंक दात्यूणी, १० टंक कचूर, १० टंक पोकरमूल, १० टंक वायविडंग, १० टंक अनारदाना, १० टंक हरेंकी छाल, १० टंक चित्रक १० ठंक अमलवेद और १० टंक सोंठ; इन सबके चूर्णको विजौरेके रसकी १० पुट देके १ टंक प्रमाणकी गोलियां बनाओ जो नित्य १ गोली घृत या दुग्धके साथ खिलाओ तो पित्तगुल्म, मधके साथ खिलाओ तो वातगुल्म, और दशमूलके क्काथके साथ खिलाओ तो त्रिदोषज गुल्म, हृदय

रोग संग्रहणी, शूल, कृमि और अर्श ये सर्व रोग नाश होंगे. इसे कंकायनी गुटिका कहते हैं.

तथा १२– पूर्वोक्त लवणभास्कर चूर्ण खिलाओ तो गुल्म दूर होगा.

तथा १३– तिल्लीका क्काथ पिलाओ तो गुल्म दूर होगा.

तथा १४– भारंगी, गुड, घृत, पिम्पली, तिल्ली, सोंठ और मिर्चका क्काथ पिलाओ तो गुल्म दूर हो.

तथा १५– भारंगी, पिम्पली, पीपलामूल, देवदारु, कणगचकी जड, और तिल्लीका क्काथ पिलाओ तो गुल्म दूर हो. यह कणादि क्काथ कहता है.

तथा १६– शुद्ध मैंनसिल, शुद्ध हरताल, शुद्ध रूपामक्खी, शुद्ध आंवलासार गंधक, शुद्ध पारा और ताम्बेश्वर इन सबके चूर्णको पिम्पलीके क्काथमें १ दिन खरल करके थूहरके दूधमें खरल करो जो इसमेंसे १ टंक मधु या गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो गुल्म और शूल दोनों दूर हों. इसे विद्याधर रस कहते हैं.

तथा १७– पारा, गंधक, हरताल, जमालगोटा, ताम्बेश्वर, सिंगीमुहरा (छःहों शुद्ध करो), सिका सुहागा, त्रिफला, सोंठ, कालीमिर्च, पिम्पली, इन सबके चूर्णको भंगरेके रसकी पुट ३ दिनतक देकर पुनः ३ दिनपर्यंत खरल करो और १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ गोली अदरकके रसके साथ खिलाओ तो गुल्म रोग दूर होगा. इसे गुल्मकुठार रस कहते हैं. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १८– हाथकी सीर (फस्त) छुडवाओ तो गुल्मरोग दूर होगा.

तथा १९– सिकी हींग, अनारदाने और बिडनोंनका चूर्ण बिजौरेके रसमें खरल करके २ टंक चूर्ण मधके साथ पिलाओ तो गुल्मरोग दूर हो.

तथा २०– ५ टंक अजवान, १ टंक नोंन, और ५ टंक गुडको कूटके छाछके साथ नित्य पिओ तो गुल्मरोग दूर होकर क्षुधा लगे और मलमूत्र भलीभांति सरण होगा. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा २१– सिकी हींग, अजवान, जवाखार, सेंधानोंन, सोंचरनोंन, हरें-

की छाल इन सबका २ टंक चूर्ण मधुके साथ पिलाओ तो गुल्म और शूल दोनों दूर होंगे.

तथा २२– १ भाग सिकी हींग, २ भाग सेंधानोंन, ३ भाग पिम्पली, ४ भाग पिपलामूल, ५ भाग कंकोलमिर्च, ६ भाग अजवान, ७ भाग हर्रे-की छाल, ८ भाग अनारदाना, ९ भाग आमकी जडकी छाल, १० भाग चित्रक, ११ भाग सोंठ, १२ भाग फिटकरी इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म, अरुचि, हृदरोग, अनाह, अर्श और वादीके समस्त विकार दूर होंगे. इसे हिंगुद्वादसक चूर्ण कहते हैं.

तथा २३– बच, हर्रेकी छाल, सिकी हींग, सेंधानोन, अमलवेद, जवा-खार, और अजवान इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म और शूल ये दोनों दूर हों. इसे बचादि चूर्ण कहते हैं.

तथा २४– २५ बडी हर्रे १६ सेर पानीमें डालकर औटाओ. औटते स-मय इसमें १६ टकेभर दात्यूणी और १६ टकेभर चित्रकको कुछ कुछ कूटके डालदो, मंद मंद आंचसे औंटाते हुए चतुर्थांश (४ सेर) जल रह जानेपर छानकर इस ४ सेर जलमें वे २५ हर्रे गुठली निकालके पीस डालो. इसीमें १६ टकेभर गुड डालकर पुनः औटाओ, औंटते औंटते आधा (२ सेर) जल रह जानेपर १ टकेभर पिम्पली, १ टकेभर सोंठ, चार टकेभर घी, ४ टकेभर मधु, १ टकेभर तज, १ टकेभर पत्रज, १ टकेभर नागकेशर, १ ट-केभर इलायची, इन सबका चूर्णभी इसी अर्द्धावशेष जलमें डालकर अव-लेह बनाओ जो इसमेंसे १ टकेभर नित्य खिलाओ तो गुल्म, संग्रहणी, पांडु, शोथ, विषमज्वर, कुष्ट, अर्श, अरुचि, प्लीहा, हृदरोग ये सब दूर हो-कर शुद्ध रेचन (दस्त साफ) होगा. इसे दन्तीहरीतकी कहते हैं.

तथा २५– पूर्वनिर्मित शंखद्राव सेवन कराओ तो गुल्मरोग दूर हो.

तथा २६– २०० बडी पक्की जंभीरीका रस घृतके चिकने पात्रमें भरके इसीमें २ टकेभर सिकी हींग, १ टकेभर सेंधानोंन, १ टकेभर सोंठ, १ टके-भर, काली मिर्च, ४ टकेभर सोंचरनोंन, १ टकेभर अजवान, और ९ टके-भर सरसोंका चूर्ण डालदो, नंतर उस पात्रका मुख बंद कर २१ दिनतक

कचरे (कूडा)में गाड रखो फिर बाईसवें दिन निकालकर १ टकेभर नित्य खिलाओ तो गुल्म, प्लीहा, विद्रधी, अष्ठीला, वायु, कफ, अतिसार, पार्श्वशूल, हृदरोग, नाभिशूल, बंधकुष्ठ, विषोन्माद, उदररोग, वातरोग, कफरोग ये सब दूर होंगे. इसे जंभीरीद्राव कहते हैं ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा २७– नदीका खार, कूडेवृक्षका खार, आकका खार, सहजनेका खार, कटियालीका खार, थूहरका खार, बीलका खार, पलासका खार, बकानका खार, आधेझारे (ओंगा)का खार, कदंबका खार, अडूसेका खार, सांभरनोंन और सिकी हींग इन सबका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो गुल्म, शूल, उदररोग, ये सब दूर हों. इसे नादेय-क्षार कहते हैं. यह योगशतकमें लिखा है.

तथा २८– सोंफ, कणगचकी जड, तज, दारुहल्दी, और पिम्पलीके क्वाथमें तिल, गुड, सोंठ, काली मिर्च, सिकी हींग और भारंगी डालकर पुनः औटाओ नंतर छानकर पिलाओ तो रक्तगुल्म दूर हो. तथा स्त्रीका मासिक रजोधर्म बंद हुआ हो तो पुनः प्राप्त होगा.

तथा २९– जवाखार, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली इनका क्वाथ पिलाओ तो रक्तगुल्म दूर हो.

तथा ३०– १ भाग शुद्ध पारा, १ भाग वंगभस्म, ४ भाग शुद्ध गंधक, ४ भाग ताम्बेश्वर, इन सबको आंकके दूधमें २ दिन खरल करके गोलाबनाओ और सरावसम्पुटमें करके गजपुटमें फूंक दो, स्वांग शीतल हो जानेपर निकालकर २ रत्ती रस घृतके साथ खिलाओ तो गुल्म, प्लीहा, उदररोग ये सब दूर हों. यह वंगेश्वर रस कहाता है.

गुल्मरोगोद्भव योनिशूलयत्न– त्रिफला, निसोत, दात्यूणी और दशमूल १ एक टकेभर कूटकर, चूर्ण बनाओ इसमेंसे ६ टंक चूर्णका क्वाथ, एरंडीका तेल, घी और दूध इन सबको मिलाकर पिलाओ तो योनिका शूल दूर हो.

रोगीको वर्जित पदार्थ– सूखा साग, दाल, मछलीका मांस, और मीठे फल ये चारों पदार्थ गुल्मरोगीको कदापि भक्षण मत कराओ यह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे गुल्मरोग यत्ननिरूपणं नाम त्रयोविंशस्तरंगः ॥ २३ ॥

॥ यकृत्-प्लीहा-हृद्रोग ॥

यकृत्प्लीहाहृद्रुजां च मया ह्यत्र यथाक्रमात् ।
वेदनेत्रमिते भङ्गे लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस २४ वें तरंगमें यकृत, प्लिहा और हृद्रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

यकृत् और प्लिहारोगयत्न १– जवाखारको ऊंटनीके दूधमें मिलाकर पिलाओ तो प्लिहा दूर हो.

तथा २– सीपकी भस्म दहीके साथ खिलाओ तो प्लिहा दूर हो.

तथा ३– १ टंक पिम्पली नित्य दूधमें डालकर पिलाओ तो प्लिहारोग दूर हो.

तथा ४– आकके पत्तोंकी भस्म और नोंन मही (मठा) में डालकर पिलाओ तो प्लिहा दूर हो.

तथा ५– सिकी हींग, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, कूट, जवाखार और सेंधेनोन इनका २ टंक चूर्ण नित्य विजौरेके रसके साथ खिलाओ तो प्लिहा दूर हो.

तथा ६– पलासके खारमें भिगोई हुई २ टंक पिम्पली नित्य खिलाओ तो प्लीहा और गुल्मभी दूर हो.

तथा ७– चार मासे शंखकी भस्म जंभीरीके रसके साथ खिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा ८– बांयें हाथकी शीर छुडवाओ तो प्लीहा और दाहिने हाथकी शीर छुडवाओ तो यकृतरोग नाश होगा.

तथा ९– पके आमके रसमें मधु डालकर पिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा १०– अजवान, चित्रक, जवाखार, पिम्पली, पिपलामूल, दात्यूणी, इनका २ टंक चूर्ण मठा या मदिराके साथ नित्य पिलाओ तो प्लीहा दूर होगा. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ११– ५ टंक सेंधानोंन जलमें औटाकर नित्य पिलाओ तो प्लीहा दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा १२– जवाखार, वायविडंग, पिम्पली, कणगचकी जड, अमलवेद, और इन सबसे दूनी हरेंकी छाल इन सबका चूर्ण गुडमें मिलाकर जलके साथ खिलाओ तो प्लीहारोग दूर हो.

तथा १३– पिम्पली, सोंठ, दात्यूणी और इन सबसे दूनी हरेंकी छाल इन सबका चूर्ण गुडके साथ खिलाओ तो प्लीहारोग दूर हो.

तथा १४– वायविडंग, चित्रक, इन्द्रायनकी जड, इन सबके बराबर साठीकी जड और वायविडंग, इनसें दूनी देवदारु, तिगुनी सोंठ, और चौगुणी दात्यूणी लेकर चूर्ण बनाओ इसमेंसे १ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ खिलाओ तो प्लीहा दूर हो.

तथा १५– शुद्ध भिलावां, हरेंकी छाल, और जीरेका चूर्णकर इन सबके बराबर गुड मिलाओ जो ५ टंक नित्य खिलाओ तो प्लीडा दूर हो.

तथा १६– लहसन, पिपलामूल, हरेंकी छाल इनका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ नित्य खिलाओ तो प्लीहा दूर हो. ये चक्रदत्तमें लिखे हैं.

तथा १७– रोहीस[1]की जड, हरेंकी छाल, और सोंठका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ नित्य खिलाओ तो उदररोग, प्रमेह, कफ, अर्श, कुष्ट और प्लीहा, ये सब दूर होंगे. यह योगतरंगणीमें लिखा है.

तथा १८– साम्हरनोंन, राई, हल्दी, टके टकेभरका चूर्ण १०० टकेभर छाछके साथ चिकने घडेमें भरके १५ दिनतक गलने पश्चात् २ टंक नित्य २१ इक्कीस दिन पिलाओ तो प्लीहारोग दूर हो. इसे तक्रसंधान कहते हैं. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा १९– १०० टकेभर रोहीस, और ४ सेर बेरीकी जडको कूटके १६ सेर पानीमें औंटाओ, चौथाई (४ सेर) रह जानेपर छानकर १ सेर गौको घृत और ४ सेर बकरीके दूधमें मिलादो नंतर सोंठ, साटीकी जड, तुम्बरू, वायविडंग, जवाखार पोकरमूल, झांऊकी जड और बच ये सब २½ ढाई टंक लेकर चूर्ण बनाओ और यह चूरा उपरोक्त द्रव पदार्थ (क्राथ-घी-दूध)में

---

१ रोहीस एक प्रकारका सुगंधित घास जिसका तेल वातरोगपर अत्योपयोगी होता है. इसे रोहितक भी कहते हैं.

डालकर मंद मंद आंचसे औटाओ, दूधादि औषध जलकर घी मात्र रह जानेपर छानकर दो या तीन टंक नित्य खिलाओ तो प्लीहा, प्लीहोदर, पांडु, कुक्षिशूल, पार्श्वशूल, अरुचि, बंधकुष्ट, अतिसार, वमन, और विषमज्वर ये सर्व रोग दूर होंगे. इसे महारोहीतघृत कहते हैं. इसके भक्षक रोगीको पथ्यसे रखना चाहिये. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा २०– १०० टकेभर चित्रकके क्राथमें, २०० टकेभर कांजीका पानी, ४०० टकेभर दहीका मठा और १ सेरभर घी इन सबको एकत्र करके यह औषधि मिलावें पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, जवाखार, तालीसपत्र, सेंधानोंन, दोनों जीरे, दोनों हल्दी ये प्रत्येक टके टकेभर और १ टंक काली मिर्च इन सबका चूर्णभी इसीमें डालदो नंतर इस सर्व पदार्थको मंद मंद आंच देकर घृत मात्र रह जानेपर छानलो जो इस घृतका सेवन कराओ तो गुल्म, प्लीहा, उदररोग, अनाह, पांडु, अरुचि, शोथ, विषमज्वर, मंदाग्नि और मूत्राशयके समस्त रोग दूर होके बल वृद्धि होगी, इसे चित्रकादि घृत कहते हैं. यह वृन्दमें लिखा है.

विशेषतः–यकृत और प्लीहा, दोनों रोगोंपर एक समानही चिकित्सा है इसलिये उपरोक्त २० बीसों नियमं यकृत और प्लीहा दोनों रोगोंपर जानना चाहिये.

हृदरोगयत्न १– बहेडेके बक्कलका २ टंक चूर्ण नित्य दूध, घृत या गुडके पानीके साथ पिलाओ तो हृदरोग, जीर्णज्वर और रक्त पित्त ये तीनों दूर होंगे.

तथा २– हर्रेकी छाल, बच, रास्ना, पिम्पली, सोंठ, कचूर, पोकरमूल इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो हृदरोग दूर होगा.

तथा ३– हरिणके सींगका पुटपाक करके गौके घृतसाथ खिलाओ तो शूल और हृदरोग दोनों दूर होंगे.

तथा ४– खरेंटी, गंगेरणके वृक्षकी छाल, कहूके वृक्षकी छाल, और मुलहटी इन सबके २ टंक चूर्णका क्राथ नित्य पिलाओ हृदरोग, वातरक्त, रक्तपित्त, ये सब दूर होंगे. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ५– कूट और वायविडंगका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ खिलाओ तो हृदयकी कृमि झडके हृदरोग दूर होगा.

तथा ६– गंगेरणकी जड, कहू वृक्षकी छाल और पोकरमूलका २ टंक चूर्ण नित्य दूध या मधुके साथ पिलाओ तो हृद्रोग, श्वास, कास, छर्दि और हिचकी ये सर्व दूर होंगे.

तथा ७– हर्रेकी छाल, बच, रास्ना, पिम्पली, सोंठ, कचूर, पोकरमूल, इन सबका चूर्ण नित्य प्रमाणानुसार विचार पूर्वक सेवन कराओ तो हृद रोग दूर होगा. इसे हरीतक्यादि चूर्ण कहते हैं.

तथा ८– दशमूलके क्राथमें एरंडीका तेल और साम्भरनोंन डालकर पिलाओ तो हृद्रोग दूर होगा.

तथा ९– सिकी हींग, बच, वायविडंग, सोंठ, पिम्पली, हर्रेकी छाल, चित्रक, जवाखार, सोंचरनोंन और पोकरमूलका २ टंक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो हृद्रोग दूर हो. यह योग रत्नावलीमें लिखा है.

तथा १०– २ टंक पोकरमूलका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो हृद्रोग, श्वास, कास, राजरोग और हिक्का ये सब दूर होंगे.

तथा ११– सिकी हींग, सोंठ, चित्रक, कूंट, जवाखार, हर्रेकी छाल, बच, वायविडंग, सोंचरनोंन, शुद्ध पारा, और पोकरमूल इन सबका चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो हृद्रोग, अजीर्ण, और विसूचिका ये सर्व रोग दूर होंगे. यह रसप्रदीपग्रंथमें लिखा है.

तथा १२– पोकरमूल, सोंठ, कचूर, हर्रेकी छाल, जवाखार, इनके क्राथमें घी डालकर पिलाओ तो वात हृद्रोग दूर होगा. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे यकृत, प्लीहा, हृद्रोग यत्न निरूपणं नाम चतुर्विंशतिस्तरंगः ॥ २४ ॥

## ॥ मूत्रकृच्छ्र-मूत्राघात ॥

चिकित्सा मूत्रकृच्छ्रस्य मूत्राघातस्य वै क्रमात् ।
पञ्चविंशतिमे चात्र तरंगे लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इसके आगे मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात रोगोंकी चिकित्सा इस पचीसवें तरंगमें यथाक्रमसे लिखते हैं.

मूत्रकृच्छ्ररोगयत्न १– बडे गोखरू, किरवारेकी गिरी, डाभ (दर्भा)की जड, कासकी[1] जड, जवासा, आंवला, पथरचटा, (पाषाणभेद) और हरेंकी छाल, इन सबके २ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र, और पथरीका असाध्य रोगभी दूर होगा. इसे गोक्षुरादि क्वाथ कहते हैं.

तथा २– इलायची, पाषाणभेद, शिलाजीत, पिम्पली, तेवरसी (क्षीरा, ककडी)के बीज, केशर, सेंधानोंन, इस सबका २ टंक चूर्ण चांवलके जलके साथ सेवन कराओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा ३– आंवलेका रस पुराने गुडके पानीके साथ पिलाओ तो मूत्र० दूर हो.

तथा ४– दूधमें पुराना गुड या मिश्री डालकर पेटभर पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा ५– आंवले या सांटेके रसमें मधु मिलाकर पिलाओ तो प्रहारज मूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा ६– गोखरूके क्वाथमें जवाखार डालकर पिलाओ मलावरोधज मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा ७– ५ टंक त्रिफला और ५ टंक बेरकी जडकी छालको रात्रिभर पानीमें भिंगाकर प्रातःकाल दोनोंको उसी पानीमें ठंडाईके समान पीस छानकर सेंधेनोंनके साथ पिलाओ तो मलरोकनेका मूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा ८– ५ मासे जवाखार और ५ मासे मिश्रीका चूर्ण जलके साथ पिलाओ तो मलरोकनेका उदावर्त दूर होगा.

तथा ९– ५ टंक दाख, १० टंक मिश्री और १० टंक दहीका मठा तीनोंको मिलाकर पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा १०– गोखरूके पञ्चांगका क्वाथ मिश्री और मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ११– गुरच, सोंठ, आंवला, असगंध, और गोखरूके २ टंक चूर्णका क्वाथ नित्य पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा १२– गौके दूधमें पके नीबूका रस डालकर मनमाना पिलाओ

---

१ एक प्रकारका घास होता है ३।४ फूंट तक ऊंचा बढता है.

तो मूत्रकृच्छ्र, प्रमेह, दाह और स्त्रीकी योनिदोषसे उत्पन्न हुए रोग नाश होंगे.

तथा १३– हर्रेकी छाल, किरवारेका गुदा, गोखरू, पाषाणभेद, धमासा और अडूसाके ५ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ नित्य पिलाओ तो दाह संयुक्त मूत्रकृच्छ्र और बंधकुष्ट दूर हो. यह हरीतक्यादि क्वाथ है.

तथा १४– डाभ, कांस, दूब, सरकना (मूंज) और सांठा इन पांचोंकी जडका क्वाथ पिलाओ रक्त मूत्रकृच्छ्रकी वेदना दूर होगी.

तथा १५– पके कुम्हडेके रसमें मिश्री डालकर पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो. इसे कुष्मांडरस कहते हैं.

तथा १६– कटियालीका रस मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा १७– २ टके गोखरूका चूरा अठगुणें (१६ टकेभर) पानीमें औं-टाके आधा रह जानेपर छानलो इसी पानीमें ७ टकेभर गूगल डालकर पुनः औंटाओ, कुछ औंटनेपर इसीमें सोंठ, काली मिर्च, नागरमोथा, हर्रेकी छाल, बहेडेकी छाल और आंवला यह एक एक टकेभरका महीन चूर्णकर डाल दो. ये सब पदार्थ परस्पर मिलाकर दृढ हो जानेपर उतारके घृतके चिकने पात्रमें रखदो जो इसमेंसे नित्य ५ मासे जलके साथ खिलाओ मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, प्रमेह, प्रदर, वातरक्त और शुक्रदोष ये सब रोग दूर होंगे. इसे गोक्षुरादि गुग्गुल कहते हैं.

तथा १८– १ टकेभर जीरा और १ टकेभर गुड नित्य खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा १९– २ टंक जवाखार गौकी छाछके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र और पथरी दोनों दूर हों. इसे जवाखारतक्रयोग कहते हैं.

तथा २०– १ भाग शुद्ध पारा और ४ भाग शुद्ध गंधककी कजली बडी कौडीमें भरके पानीमें पिसे हुए सुहागेसे उसका मुंह बंद करदो और मट्टीकी कुलियामें धरके गजपुटमें फूंकदो, स्वांग शीतल हो जानेपर पीसके इसमेंसे ४ मासे भस्म २१ इकीस काली मिर्चके चूर्णमें मिलाकर घृतके साथ चटाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो. यह लघुलोकेश्वर रस कहाता है. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा २१– निरूहवस्ति या उत्तरवस्तिकी क्रिया करो तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा २२– शतावरी, कांसकी जड, डाभकी जड, गोखरू, विदारीकंद, सालरकी जड, और किसोरिया तलावके कीचडमें गोलर होते हैं हिंदुस्थानमें कसेराभी कहते हैं इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा २३– तेबरसीके बीज, महुआ, दारुहल्दी इनका क्वाथ पिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा २४–केलेके रसमें गोमूत्र मिलाकर पिलाओ तो कफका मूत्र० दूर हो.

तथा २५–इलायचीका महीन चूर्ण जलके साथ पिलाओ तो कफमू० दूर हो.

तथा २६– मूंगका १ टंक चूर्ण तण्डुलके जलके साथ पिलाओ तो कफमूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा २७– गोखरू और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो कफमूत्रकृच्छ्र दूर हो. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा २८– बडी कटियाली, पाठा, मुलहटी, महुआ और इन्द्रयवका क्वाथ पिलाओ तो सन्निपातका मूत्रकृच्छ्र दूर हो.

तथा २९– शिलाजीतको मधुके साथ चटाओ तो शुक्रमूत्रकृच्छ्र दूर हो यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ३०– उत्तम स्त्रीसे मैथुन कराओ तो शुक्रमूत्रकृच्छ्र दूर होगा.

तथा ३१– खरेंटीकी जडका क्वाथ पिलाओ तो सर्व मूत्रकृच्छ्र दूर हों.

तथा ३२– १०० सौ टकेभर गोखरूका पंचांग कूटकर अठगुणे (८०० टकेभर) पानीमें औंटाओ, चतुर्थांश रह जानेपर छानकर इसीमें ५० टकेभर मिश्रीकी (गाढी चाटनेयोग्य) चासनी बनाओ, नंतर सोंठ, पिम्पली, इलायची, जवाखार, केशर, कडुवेवृक्षकी छाल, तेवरसी ये सब २ दो टकेभर और ८ टकेभर वंशलोचन इन सबका महीन चूर्ण उक्त चासनीमें डालकर नित्य १ टकेभर खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र, दाह, पथरी, बंधकुष्ट, रक्तमूत्र और मधुप्रमेह ये सर्व रोग दूर होंगे यह गोक्षुरावलेह कहाता है. ये सर्व यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

मूत्राघातरोगयत्न १– नरसल (देवनल), डाभ, कांस, साठी और खरेंटी इन सबकी जडोंका क्वाथ बनाकर शीतल होनेपर मधुके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा २– जलमें पिसा हुआ कपूर अत्यंत महीन वस्त्रपर लेप करके उस वस्त्रकी बत्ती बनाओ जो यह बत्ती इन्द्रीके छिद्रमें धरो तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ३– धनियां और गोखरूके क्वाथमें घृत पकाके खिलाओ तो मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात और शुक्रदोष तीनों दूर होंगे. यह धान्यगोक्षुरघृत है.

तथा ४– ५ टंक तेवरसीके बीज और ५ टंक धनियांको रात्रिको जलमें भिंगोकर प्रातःकाल ठंडाईके समान उसी जलमें पीस डालो और छानकर १ टंक सेंधानोंन डालके पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ५– २ टंक पाटल (गुलाब) वृक्षका खार और १ टंक सोंचरनोंन मदिराके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ६– खट्टे अनारका रस और इलायची मदिराके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ७– शिलाजीत सेवन कराओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ८– ५ टंक कैंवचके बीज, १ टंक पिम्पली, १ टंक तालमखाना, १० टंक मिश्री, और १० टंक दाख इन सबका चूर्ण मधु और घृतके साथ उष्ण दूधमें डालकर पिलाओ[1] तो शुक्रावरोधज मूत्राघात दूर हो.

तथा ९– आधसेर चित्रक, ५ टंक गोरीसर, १० टंक खरेंटीकी जड, आधपाव दाख, ५ टंक इन्द्रायणकी जड, ५ टंक पिम्पली, १० टंक त्रिफला, १० टंक महुआ, और १०० टंक बडे आंवले इन सबका चूर्ण १६ सेर पानीके साथ औटाकर ४ सेर (चतुर्थांश) रह जानेपर छानलो, इस क्वाथमें ४ सेर घी डालकर पकाओ रस जलकर घृत मात्र रह जानेपर छानकर आधपाव वंशलोचनका चूर्ण डालदो अब यह चित्रकादिघृत बनगया जो नित्य आधपाव सेवन कराओ तो मूत्राघात, सर्व प्रकारके वीर्य-

१ सर्वसंग्रहमें लिखा है कि इसके सेवनसे वांझ स्त्रीकोभी गर्भ प्राप्त होकर प्रसवोत्पत्ति होगी.

दोष, योनिदोष, प्रदर और मूत्रकृच्छ्र इन सबका नाशक और स्त्रीको गर्भोत्पादक होगा. यह चरकमें लिखा है.

तथा १०– त्रिफलाके क्वाथमें दूध और गुड डालकर पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा ११– पाटल, अरलु, नीमकी छाल, हल्दी, गोखरू, पलासके बक्कल इन सबका क्वाथ गुडके साथ पिलाओ तो मूत्राघात दूर हो.

तथा १२– अत्यंत रूपवती स्त्रीसे मैथुन करो तो मूत्राघात दूर हो. ये सब आत्रेयसंहितामें लिखे हैं.

मूत्ररोधयत्न १३– बिनौला (सरकी, कांकडा या कपासका बीज)की विजी, त्रिफला, और सेंधेनोंनका ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो मूत्र स्वच्छ उतरेगा.

तथा १४– तिल्ली और बिनौला इन दोनोंका क्षार मधु और दहीके साथ खिलाओ तो मूत्र रुकना बंद होगा.

तथा १५– कमलकी जड और तिल्लीको गौके मूत्रमें पीसकर पिलाओ तो मूत्रका रुकाव बंद होकर मूत्र उतरे.

अत्यंत उष्णमूत्रयत्न १६– चमेलीकी जडको बकरीके दूधमें पीसकर पिलाओ तो मूत्रकी विशेष उष्णता दूर हो.

सूचना इधर जो यत्न मूत्रकृच्छ्र और पथरीके लिखे हैं वे सर्व मूत्राघातकोभी उपयोगी हो सक्ते हैं. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा २– जो यत्न मूत्रकृच्छ्र और मूत्राघात रोगपर बताये गये हैं. वे सब मूत्रावरोध (पेशाब बंद हो जाने)पर चल सक्ते हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघातरोगयत्न निरूपणं नाम पंचविंशतिमस्तरङ्गः ॥ २५ ॥

॥ अश्मरी-प्रमेह-पिडिका ॥

अश्मरीमेहपिडिकारोगाणां हि यथाक्रमात् ।
रसनेत्रमिते भङ्गे लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस २६ वें तरंगमें अस्मरी अर्थात् पथरी, प्रमेह और पिडिकारोगकी चिकित्सा यथाक्रमसें लिखते हैं.

अश्मरी (पथरी) रोग यत्न १– सोंठ, अरणी, पाषाणभेद, कूट, गोखरू, एरंडीकी छाल और किरमालेका गूदा इनका पांच टंक चूर्णका, क्वाथ सिकी हींग, जवाखार, और सेंधानोंन डालकर पिलाओ तो पथरी, मूत्रकृच्छ्र, अर्श, उपदंश (गर्मी) और कोठेकी वायु ये सब रोग दूर होंगे. यह सुण्ठ्यादि क्वाथ दीपन पाचन है.

तथा २– इलायची, पिम्पली, महुआ, पाषाणभेद, पित्तपापडा, अडूसा, गोखरू, और अरंडकी जडका क्वाथ शिलाजीतके साथ पिलाओ तो पथरी और मूत्रकृच्छ्र दूर हों. यह एलादि क्वाथ है.

तथा ३– पेठेके रसमें हींग और जवाखार डालकर पिलाओ तो पथरी और पेडूकी पीडा दूर हो.

तथा ४– बरण्याकी छाल, पाषाणभेद, सोंठ और गोखरूका क्वाथ जवाखारके साथ पिलाओ तो पथरी नाश होवे.

तथा ५– ५ टंक गोखरूका चूर्ण मधु और भेडीके दूधके साथ पिलाओ तो पथरीरोग नाश हो.

तथा ६– बरण्याकी जडके क्वाथमें गुड डालकर पिलाओ तो पथरी और मूत्राशयकी पीडाभी नाश हो.

तथा ७– अदरकका रस, जवाखार, हरेंकी छाल, और मलयागिर चंदनका क्वाथ पिलाओ तो पथरीरोग दूर हो.

तथा ८– १०० टकेभर बरण्याके बक्कल चौगुणें (चार सेर) पानीमें औटाकर चतुर्थांश (१ सेर) रह जानेपर छानलो, इसमें १०० टकेभर गुडकी चासनी बनाकर सोंठ, पेठेके बीज, बहेडेकी बिजी, वथुएके बीज, सहजनेके बीज, इलायची, हरेंकी छाल, और वायविडंग (ये सब टके टकेभर) का चूर्ण डाल दो नंतर एकजीव करके नित्य २ टकेभर खिलाओ तो पथरी दूर हो. इसे वरुणगुड कहते हैं.

१ बरण्या किम्वा वरुण वृक्ष मारवाड प्रान्तमें बहुत उत्पन्न है. उस देशमें यह प्रसिद्ध है.

तथा ९– मजीठ, तेवरसीके बीज, जीरा, सोंफ, आवला, बेरकी बिजी, शुद्ध आंवलासार गंधक और शुद्ध मैंनसिल इन सबका १ टंक चूर्ण नित्य मधुके साथ खिलाओ तो पथरी निश्चय दूर हो.

तथा १०– २ टकेभर कुलथीके काथमें २ मासे सेंधानोंन और २ मासे शरपंखे (मारवाडमें धोला धमासा कहते हैं)का रस डालकर पिलाओ तो पथरी दूर हो. ये सब भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ११– ५ टंक हल्दीका चूर्ण और १० टकेभर गुड इनमेंसे नित्य १ मासे लेके कांजीके साथ पिलाओ तो पथरी दूर हो.

तथा १२– सोंचरनोंन, मधु, दूध और तिलीका खार मदिरामें मिलाकर ३ दिनपर्यंत पिलाओ तो पथरी दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा १३– २ टंक तिलीका खार और ५ टंक मधु दूधमें मिलाकर १५ दिनपर्यंत पिलाओ तो पथरी झरकर निश्चय गिर जावेगी.

तथा १४– २ टंक गोल ककडीकी जड रात्रिको पानीमें भिंगोकर प्रातःकाल उसी पानीमें (ठंडाई समान) पीसके ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो पथरी इन्द्रीद्वारसे झडकर गिर जावेगी. यह राजमार्तंडमें लिखा है.

तथा १५– कुल्थी, सेंधानोंन, वायविडंग, सार (सार समझके डालना) मिश्री, सांठेका रस, पेठेका रस, जवाखार, तिलीका खार, पेठेके बीज, और गोखरूके काथमें गौका घी पकाकर नित्य १ टकेभर खिलाओ तो पथरी, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, और शुक्रबंध ये सब रोग दूर होंगे. इसे कुल्थ्यादि घृत कहते हैं. यह वृन्दमें लिखा है.

पथरीरोगपर पथ्य– मूंग, जौ, गोहूं, चांवल, दूध, घी, सेंधानोंन और ठंटस (टींडसी, जिस्का साग मारवाडमें बहुत होता है) ये वस्तुऐं पथरीरोगपर पथ्य हैं.

वातजमधु[1]प्रमेहयत्न १– बडकी जड, अरलुकी जड, चिरोंजी (अचार) के वृक्ष, आंवलेकी जड, पीपलवृक्ष जड, किरमालेकी जड, (इन सब जडोंकी

---

१ मधुप्रमेह सबके पीछे हैं परन्तु यह अति क्लिष्ट तथा असाध्य है इसलिये हमने पूर्वहीमें दिया है.

बक्कल) मुलहटी, लोद, नीमकी छाल, पटोल, बरणेंकी छाल, दात्यूणी, मेंढासिंगी, चित्रक, कणगचकी जड, इन्द्रयव, त्रिफला, शुद्ध भिलवां, सोंठ, काली मिर्च, तज, पत्रज, और इलायची इन सबका महीन चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो मधुप्रमेह दूर हो. इसे न्यग्रोधादि चूर्ण कहते हैं.

तथा २– उपरोक्त कथित औषधोंका क्वाथ पिलानेसें तथा इन्हीं औषधोंका तेल बनाकर शरीरमें मर्दन करनेसें किम्वा इन्हींका घृत बनाकर खिलानेसेभी वातज मधुप्रमेह दूर होगा.

तथा ३– शुद्ध सोनामक्खी, पाषाणभेद, शुद्ध शिलाजीत, चंदन, कचूर, पिम्पली और वंशलोचन इनका २ टंक चूर्ण १० टंक मधुके साथ दूधमें मिलाकर नित्य पिलाओ तो वातज मधुप्रमेह और मूत्रावरोध दूर हों. ये यत्न आत्रेयमें लिखे हैं.

तथा ४– शुद्धपारा, शुद्धगंधक, मिश्री और कहुवाकी छालके महीन चूर्णको सालईकी जडके रसकी ३ पुट देके १ मासे प्रमाणकी गोलियां बनाओ जो इसकी १ गोली नित्य खिलाओ तो वातज मधुप्रमेह दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

पित्तज क्षारप्रमेहयत्न १– धव, कहुवा, अरलु, (इनके बक्कल,) किशोरया, केलेके वृक्षके भीतरकी श्वेत छाल, कमलकी जड, और दाख इनका क्वाथ पिलाओ तो पित्तज क्षारप्रमेह दूर हो.

तथा २– सुन्दर स्त्रीसे मैथुन कराओ तो पित्तज क्षारप्रमेह दूर हो.

तथा रक्तप्रमेहयत्न ३– बासे (रात्रीका भराहुवा) पानीमें दाख भिंगोके मसल डालो और मुलहटी और श्वेत चंदन, डालकर पिलाओ तो पित्तज रक्तप्रमेह दूर हो.

तथा ४– खश, लोद, कहुवाकी छाल, और रक्तचंदनके ५ टंक चूर्णका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो पित्तज प्रमेह मात्र दूर हों. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ५– कमलनाल, कन्हेकी जड, इन्द्रयव, धवकी जडकी छाल, इमलीकी छाल, आंवले और निबोलीके क्वाथमें (या हिममें) मिश्री डालकर पिलाओ तो पित्तज प्रमेह मात्र दूर हों.

कफजप्रमेहयत्न—

कफज उदकप्रमेहयत्न १— धवके बक्कल, कहुवेके बक्कल, रक्तचंदन, और सालरके बक्कलका क्काथ पिलाओ तो कफज उदकप्रमेह दूर हो.

तथा इक्षुप्रमेहयत्न २— कूट, पित्तपापडा, कुटकी, मिश्री, इनका क्काथ पिलाओ तो कफज इक्षुप्रमेह दूर हो.

तथा ३— अरण्याकी जड, पाटल, धमासा, अरलू और पलासका क्काथ पिलाओ तो इक्षुप्रमेह दूर हो.

तथा शुक्रप्रमेहयत्न ४— दूब, मूर्वा, भारंगीकी जड, कांसकी जड, दात्यूणी, मजीठ, सालरके बक्कल, इनका क्काथ पिलाओ तो कफज शुक्रप्रमेह तथा पित्तज रुधिरप्रमेह दोनों दूर हों. ये सब आत्रेयमें लिखे हैं.

तथा लालाप्रमेहयत्न ५— कपासकी बिजीको भैंसकी छाछमें ७ दिन खरल करके नित्य २ मासे खिलाओ तो कफज लालाप्रमेह दूर हो. यह रसरत्नाकरमें लिखा है.

तथा प्रमेहमात्रयत्न ६— नागरमोथा, हर्रकी छाल, लोद, कायफल, इनके ५ टंक चूर्णका क्काथ मधुके साथ पिलाओ तो कफज दशों प्रमेह मात्र दूर हों. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ७— वायविडंग, रार, कायफल, लोद, विजयसार (औषधविशेष) कदम्बके बक्कल और कन्हेवृक्षकी छालका क्काथ नित्य पिलाओ तो कफज प्रमेह मात्र दूर हों.

आत्रेयमतनिर्मित प्रमेहयत्न—

तथा तक्रप्रमेहयत्न १— लोद, कहुवेके बक्कल, खैर, नीमके पत्ते, आंवले, रक्तचंदन इनके क्काथमें गुड डालके पिलाओ तो तक्रप्रमेह और पिडिका प्रमेह दोनों दूर हों.

तथा घृतप्रमेहयत्न २— त्रिफला, किरवारेका गूदा, बेरकी जड, मूर्वा, मुंगनेके पत्ते, नीमके पत्ते, दाख और केलेके वृक्षके भीतरकी श्वेत छाल इन सबका क्काथ पिलाओ तो घृतप्रमेह दूर हो.

तथा ३— गुरच, चित्रक, पाठा, कूडे (इन्द्रवृक्ष)की छाल, सिकी हींग,

कुट इनकी और कूट इनका २ टंक चूर्ण जलके साथ सेवन करावो तो घृतप्रमेह दूर हो. यह सर्वसंग्रहमें लिखा है.

तथा अतिमूत्रप्रमेहयत्न ४– मूर्वा, पारा, बंग (या वंगेश्वर) और अभ्रकको १ दिनभर मधुके साथ खरल करके नित्य १ मासे मधुके साथ सेवन कराओ तो अति (बहु) मूत्रप्रमेह दूर हो. इसे तालकेश्वर रस कहते हैं इसके ऊपर गूलरके फलोंका २ टंक चूर्ण अवश्य लेना चाहिये.

तथा ५– २ मासे पंचवक्त्ररस नित्य सेवन कराओ तो बहुमूत्रप्रमेह दूर हो. यह रसरत्नाकरमें लिखा है.

सर्व प्रमेहमात्रयत्न–

तथा १– नागरमोथा, त्रिफला, हल्दी, देवदारु, मूर्वा, इंद्रयव, और लोद इनका क्काथ पिलाओ तो प्रमेह और मूत्रग्रह दूर हो.

तथा २– काकलहरी (बूटी विशेष) हर्रेकी छाल, हल्दी, कहूके बक्कल इन सबके चूर्णमें समान मिश्री मिलाकर ५ नित्य मधुके साथ चटाओ तो समस्त प्रमेह दूर हों यह आत्रेयमें लिखा है.

तथा ३– कचूर, बच, नागरमोथा, चिरायता, देवदारु, हल्दी, अतीस, दारुहहल्दी, पीपलामूल, चित्रक, धनियां, त्रिफला, चव्य, गजपिम्पली, जवाखार, सज्जी, सेंधानोंन, सोंचरनोंन, (ये सब एक एक टंक) ५ टंक सार, २ टंक मिश्री, ४ टंक शुद्ध शिलाजीत और ४ टकेभर शुद्ध गूगल इन सबको न्यारे न्यारे पीस कपडछानकर एकत्र करो, १ टके शुद्ध गंधक, १ टके शुद्ध पारेकी कजली और १ टकेभर अभ्रकमें उपरोक्त चूर्ण मिश्रित करके इसमेंसे ४ मासे नित्य मधुके साथ चटाओ तो सर्व प्रमेह मात्र, अर्श, क्षयी, वीर्यदोष, नेत्ररोग, दंतरोग, पांडुरोग, कण्डुरोग, उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, मूत्राघात, प्लीहा, खांसी और कुष्ट ये सब दूर हों. इसे चन्द्रप्रभागुटिका कहते हैं.

तथा ४– त्रिफला, जीरा, धनियां, कौंचबीज, (ये ४ चार टकेभर) छोटी इलायची, दालचीनी, लौंग, नागकेशर, और बावची (तुकमरिया)के बीज (ये सब दो दो टकेभर) इन सबके चूर्णमें मिश्री और घी डालकर १ टके

प्रमाणकी गोलियां बनालो जो १ गोली नित्य प्रभात खिलाओ तो प्रमेह मात्र दूर हो. इसे प्रमेह हारी चूर्ण कहते हैं.

तथा ५– १ टकेभर लोद मधु या खरेंटीके क्वाथके साथ सेवन कराओ तो प्रमेहमात्र दूर हो.

तथा ६– गुरचसत्व, त्रिफला और लोहसार इन तीनोंको मिलाकर मधु या मिश्रीके साथ १ टंक सेवन कराओ तो प्रमेह मात्र दूर हो.

तथा ७– मिश्री, सिंघाडे और श्वेत चीनीका २ टंक महीन चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो बहुत प्राचीन प्रमेहभी दूर हो.

तथा ८– १ टकेभर गूलरके पक्के फल सेंधेनोंनके साथ सेवन कराओ तो असाध्य प्रमेहभी दूर हो.

तथा ९– १ रत्ती वंगेश्वर रस मधुके साथ खिलाकर ऊपरसे मधुके साथ गूलरके पक्के फलोंका चूर्ण चटाओ तो असाध्य प्रमेह मात्रभी दूर होगा.

वंगेश्वर रस निर्माणविधि– पावभर उत्तम रांगा (कथील)को आधपाव पारेके साथ गलाकर थालीमें डालके (चोडा पतर जैसा करके) छोटे छोटे टुकडे करलो, पांच पांच सेर गोवरकी २ गोवरी (उपली, कंडे, छेना,) बनाकर सुखालो, १ सेर टेसू (पलास)के फूल और १ सेर महदीके पत्तोंको सुखाकर चूर्ण करलो, अब गोवरी नीचे रखकर उसपर फूल, पत्तोंका आधा (सेरभर) चूर्ण बिछादो, उसपर वेरांगेके टुकडे जमाकर ऊपरसे आधा (शेष) चूर्ण डालदो और ऊपरसे दूसरी गोवरी दृढता पूर्वक जमाकर निर्वात (जहां वायु न लगे) स्थानमें आगसे जलादो नंतर स्वांग शीतल हो जानेपर रसको निकालकर उपयोगमें लाओ इसके गुण कहांतक लिखें जुदे जुदे अनुपानसे अनेक रोगोंको नाश करता है.

तथा १०– १ गोली प्रात और १ संध्याको सुपारीपाक दो तो प्रमेहमात्र दूर हो.

सुपारीपाक निर्माणविधि– आठ टकेभर सुपारी (चिकनी)को कपडछान

---

१ वेरांगके टुकडे अग्निके तावसे जलकर भस्म हो जानेपर फूलकर श्वेत हो जाते हैं परन्तु इनका बोझ कुछ न्यूनाधिक्य नहीं होता है. पश्चात् इन्हें किंचित मसलदो तो ये चूर्ण हो जाते हैं इसे वंगेश्वर रस कहते हैं.

कर चूर्णको ८ टकेभर गोघृतके साथ मिलावो फिर ३ सेर गोदुग्धमें डालकर मंद मंद आंचसे खोहा बनालो, और नागकेशर, नागरमोथा, चन्दन, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, आंवला, कोयल, (अपराजिता वेली विशेष)के बीज जायफल, बंग, धनियां, चिरोंजीदाने, तज, पत्रज, इलायची, दोनों जीरे, सिंघाडे, और वंशलोचन (ये सब पांच पांच टंक )का महीन कपडछान चूर्ण और उपरोक्त खोवा दोनों ५० टकेभर मिश्रीकी चासनीमें डालकर १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो जो गोली प्रात और एक संध्याको खिलाओ तो प्रमेह मात्र, जीर्ण ज्वर, अम्लपित्त, अर्श, मन्दाग्नि, शुक्रदोष, और प्रदर ये सर्व रोग दूर होकर शरीर पुष्टताको प्राप्त होगा.

तथा ११– गोखरूपाकविधि– आधसेर गोखरूका चूर्ण सेरभर गोघृतके साथ पांचसेर गोदुग्धमें डालकर मंदाग्निसे खोवा बनाओ, नंतर बीलकी गिरी, काली मिर्च, जायफल, समुद्रशोष, इलायची, भीमसेनी कपूर, दालचिनी, पत्रज, हलदी, कूट, अफीम, तालमखाना, (ये सब दो दो टंक, ५ टंक लोहसार और इन सबके बोझसे आधी भांगका महीन कपडछान चूर्ण और उपरोक्त खोवा ४ सेर मिश्रीकी चासनीमें डालकर ५ पांच टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो जो एक गोली नित्य सेवन कराओ तो प्रमेह मात्र दूर होकर स्तम्भन शक्ति प्राप्त हो, स्त्री मैथुन समय बहुत प्रसन्न हो.

तथा १२– चित्रक, शुद्ध गंधक, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, शुद्ध पारा, शुद्ध सिंगीमुहरा, त्रिफला, और नागरमोथा, (पारे गंधककी कजली करलो) इन सबके महीन चूर्णको भृंगराजके रसकी १ पुट देकर खरल कर डालो और १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाकर एक गोली नित्य प्रातःकाल खिलाओ तो २० वीसों प्रकारके प्रमेह दूर होंगे. इसे पंचाननी गुटिका कहते हैं. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा १३– १ मासे भीमसेनी कपूर, १ मासे कस्तूरी, ४ मासे अफीम और ४ मासे जायपत्री इन सबको नागरवेलके पानके रसमें खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनालो, जो एक गोली दूध मिश्रीके साथ नित्य सेवन कराओ तो प्रमेह मात्र दूर होकर वीर्य स्तम्भित होगा.

तथा १४– आंवले और हल्दीका ५ टंक चूर्ण रात्रिको जलमें भिंगोकर प्रातःकाल उसी पानीमें पीसलो और भंगके समान कपडेसे छानकर मधुके साथ पिलाओ तो प्रमेह मात्र दूर हो.

तथा १५– मेघनादरसविधि– शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक (की कजली) शुद्ध सोनामक्खी, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, त्रिफला, बेरकी बिजी, शिलाजीत, हल्दी, और कवीट (कैथ)के चूर्णका भंगरेके रसकी २१ पुट देकर १ टंक नित्य खिलाओ तो प्रमेह मात्र दूर हो.

तथा १६– हरिशंकररसविधि–शुद्ध पारा और अभ्रक दोनोंको आंवलेके रसमें ७ सात दिनपर्यन्त खरल करके १ रत्तीभर नित्य खिलाओ तो प्रमेहमात्र दूर हो.

तथा १७– प्रमेहकुठाररसविधि–इलायची, भीमसेनी[१] कपूर, भारंगी, जायफल, गोखरु, सालईवृक्षकी छाल, शुद्ध पारा, अभ्रक, मोचरस, और बंगसार इन सबको महीन पीसकर इस रसमेंसे नित्य २ रत्ती खिलाओ तो प्रमेहमात्र दूर हो.

तथा १८– ५ टंक बकायनके बीज चांवलके पानीमें पीसकर गोघृतके साथ नित्य खिलाओ तो विशेष प्राचीन प्रमेहभी दूर हो. ये सब यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

पिडिकारोगयत्न–

तथा१– धव (धावडा) कव्हे, कदम्ब, बेर, सरसों, नीम इन सबके बकलोंका क्वाथ बनाकर उस जलसे नित्य पिडिकाओंको धोओ तो पिडिका दूर हो.

तथा २– कहूके बकल, कदम्बके बकल और तेंदूकी अंतर छालके क्वाथसे पिडिकाओंको नित्य धोओ तो इन्द्रिय ऊपरकी पीवयुक्त पिडिका तथा शरीरमात्रकी पिडिका दूर हों.

वातपिडिकायत्न ४– भंगरेका रस, तुलसीके पत्ते और पटोलके पत्तोंको कांजीमें महीन पीसकर लेप करो तो वातपिडिका नाश हों.

---

१ भीमसेनी कपूरको शास्त्रमें शुद्ध कर्पूर नाम दिया है जो कि यंत्रसे उडाकर शुद्ध किया जाता है. इसका नाम बरासकपूरभी है.

पित्तपिडिकायत्न ५– मुलहटी, कूट, रक्तचन्दन, खश, रोहिस, गेरू, और कमलगटोंको दूधमें पीसकर लेप करो तो पित्तपिडिका और उनकी दाह दूर हो.

पिडिकाकी दाहका यत्न ६– मक्खनको १०० या १००० बार जलसे धोकर पिडिकाओंपर लेप करो तो इन्द्रीकी पिडिकाओंकी दाह तथा उनसे पीवका वहावभी बंद होगा.(मखन कांसीकी थालीमें मथ्मथ्के धोना चाहिये).

पीववहावका यत्न ७– कदम्ब, कहू, अनार और आंवलेके पत्तोंके उष्ण जलमें पीसकर लेप करो तो पिडिकाओंसे पीव वहाव बंद हो.

तथा ८– पिडिकाओंको कांजी या छाछ या शीतल जलसे नित्य धोया करो तो पीव वहाव बंद होकर पिडिका नाश हो जावें. ये सब यत्न आत्रेयमें दर्शाये हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे अश्मरी, प्रमेह, पिडिकायत्ननिरूपणं नाम षड्विंशतिमस्तरंगः ॥ २६ ॥

## ॥ मेदो-स्थूल-कार्श्य-उदररोग ॥

मेदोकार्श्योदररुजां तरङ्गेऽस्मिन् यथाक्रमात् ।
सप्तद्विप्रमिते नूनं चिकित्सा कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस २७ सत्ताइसवें तरंगमें मेद, कार्श्य और उदर रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसें वर्णन करते हैं.

मेदरोगयत्न १– गुरच और त्रिफलाके क्काथमें मधु डालकर पिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा २– बासे ठंडे पानीमें मधु मिलाकर पिलाओ मेदरोग दूर हो.

तथा ३– उष्ण अन्न भक्षण कराओ या चांवलोंका मांड पिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा ४– सोंठ, मिर्च, पीपल, चित्रक, त्रिफला, नागरमोथा और वायविडंगके क्काथमें गूगल डालकर पिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा ५– मधुके साथ पिम्पली चटाओ मेदरोग दूर हो.

तथा ६– धतूरेके पत्तोंका रस शरीरसे मर्दन करो तो मेदरोग दूर हो.

तथा ७– शुद्ध पारा, तांबेश्वर, लोहसार और बीजाबोलके चूर्णको कूकरभंगरेके रसमें ३ दिनतक खरल करके २ रत्ती मधुके साथ नित्य खिलाओ तो मेदरोग दूर हो. इसे वडवानल रस कहते हैं, यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ८– चव्य, जीरा, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, सिकी हींग, और सोंचरनोंनका २ टंक चूर्ण जौके सत्तूके साथ खिलाओ तो मेदरोग दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ९– वायविडंग, सोंठ, जवाखार और लोहसारका १ टंक चूर्ण आंवलेके चूर्ण और मधुके साथ खिलाओ तो मेदरोग दूर हो.

तथा १०– बेरीके बक्कल (वृक्षकी छाल)में कांजीका पानी, अरण्याका रस, और शिलाजीत मिलाकर पिलाओ तो मेद दूर हो.

तथा ११– गुरच, इलायची, कूडेकी छाल और आंवले ये सब एकसे एक बढकर (१-२-३ आदि) और इन सबके प्रमाण गूगल लेकर सबके महीन चूर्णमेंसे १¼ या १½ सवा या देढ टंक मधुके साथ सेवन कराओ तो मेदरोग और भगंदर दोनों दूर हों. इसे अमृतगूगल कहते हैं. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा १२– त्रिफला, अतीस, मूर्वा, निसोत, चित्रक, अडूसा, निम्बछाल किरवारेकी गिरी, पीपलामूल, दोनों हलदी, गुरच, इंद्रायण, पीपली, कूट, सरसों और सोंठ इनके क्राथमें कुछ तुलसीका रस और तेल डालकर आंच दो, रस जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानकर शरीरमें मर्दन या बस्तिक्रिया करो तो मेद और कफके अन्य रोगभी दूर हों. इसे त्रिफलादि तेल कहते हैं. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

मेदरोगीको सेवनीय पदार्थ– पुराने चांवल, मूंग, कुल्थी, कोदों, जौ, कडुवा रस, मधु, एरंडीके पत्तोंका साग, हींग, चांवलोंका मांड, लेपन, बस्तिकर्म, चिंता, परिश्रम, मल्लक्रीडा, मार्गगमन, और जागरण इन विषयोंके सेवन मात्रसे मेदरोग नाश प्राप्त होगा.

शरीरदुर्गंधीयत्न १– शंखका चूर्ण अडूसे पत्तेके रसमें मिलाकर लेप करो तो शरीरमें पसीना आनेसे दुर्गंधि आती है सो दूर हो.

तथा २– बीलपत्रके रसमें शंखका चूर्ण मिलाकर शरीरको लेप करो तो दुर्गंधि दूर हो.

तथा ३– नागकेशर, सिरसके बक्कल, लोद, खश और हर्रेकी छालको जलमें पीसकर उवटन करो तो शरीरकी दुर्गंधि दूर हो.

तथा ४– बबूलके पत्ते जलमें पीसकर स्नानके पूर्व शरीरमें मर्दन करो तो दुर्गंध दूर हो. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ५– ताम्बूलके पत्ते, हर्रेकी छाल, और कूटको जलमें पीसकर शरीरमें मर्दन करो तो दुर्गंध दूर हो.

तथा ६– कुल्थी, कूट, छडछडीला, चंदन, तज, बच, और जौका सिका हुआ आटा इन सबको जलमें महीन पीसकर शरीरमें मर्दन करो तो दुर्गंध दूर हो. यह शारंगधरमें लिखा हैं.

कक्षादुर्गंधनिवृत्तियत्न १– काखों (हाथ और धडके संगमपर नीचेका भाग )में नीबूके पत्तोंका रस लगाओ तो काखोंमें पसीना आनेकी दुर्गंध दूर हो.

तथा २– हल्दीको अध जलीकर पानीमें पीसकर कांखोंमें लगाओ तो कांखोंकी दुर्गंध दूर हो.

तथा ३– कूट और दोनों हल्दीको गोमूत्र या गोवरमें पीसकर लेप करो तो दुर्गंधि और कुष्टभी दूर हो. यह चक्रदत्तमें लिखा है.

स्त्रीका सुवर्णकारक (सुंदर रंग होनेका) लेप १– हर्रेकी छाल, लोद, नीमके पत्ते, अनारके बक्कल, आमके बक्कलको जलमें पीसकर स्त्रीके शरीरपर लेप करो तो देहका कुवर्ण दूर होकर सुन्दर वर्ण (रंग) प्राप्त हो और कांति बढे. यह काशिनाथपद्धतिमें लिखा है.

कार्श्यरोगयत्न १ जितनी बलकारी, वीर्य वर्द्धक, वीर्य विबंधक, और पुष्टकारी औषध यथा घी दूध आदि वस्तु हैं वे सब कार्श्य (क्षीणता, दुबलापन) रोग नाश करनेवाली हैं.

तथा २– जो जो पुष्टकारी प्रयत्न हैं वे सब कार्श्य रोगके यत्नही जानो. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

वातोदररोगयत्न १– दशमूलके क्काथमें अरंडीका तेल डालकरके पिलाओ तो वातोदर दूर हो.

तथा २– त्रिफलाका क्काथ गोमूत्रके साथ पिलाओ तो वातोदर दूर हो.

तथा ३– कूट, दात्यूणी, जवाखार, पाठ, बच, सोंठ, सैंधव, सोंचर और सांभरनोंनका ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ खिलाओ तो वातोदर दूर हो. इसे कुष्टादिचूर्ण कहते हैं.

तथा ४– १०० टकेभर एकपोत्या लहसनको पीसकर १६ सेर जलमें औंटाओ औटाते समय उसीमें सोंठ; काली मिर्च, पिम्पली, साटीकी जड, सोंचरनोंन, दात्यूणी, बिडनोंन, सहजनेकी जड, अजवान, गजपिम्पली (ये सब टके टकेभर) ३ टकेभर त्रिफला, और ६ टकेभर निसोत इन सबका महीन चूर्ण तथा २ सेर तिल्लीका तेलभी डालकर मंद आंचसे औंटाओ, औंटते औंटते सब औषधें जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानके कांचके पात्रमें भरदो, इस तेलमेंसे नित्य प्रातःकाल ५ टंक (तथा रोगीकी शक्त्यनुसार) पिलाओ तो आठों प्रकारके उदररोग, मूत्रकृच्छ्र, उदावर्त, अंत्रवृद्धि, पार्श्वशूल, आमशूल, अरुचि, प्लीहा, अष्टीला, हडफूटन, और वायुके समस्त विकार १ मास सेवनसे दूर होंगे.

तथा ५– उष्ण दुग्धमें अरंडीका तेल और गोमूत्र डालकर पिलाओ तो वातोदर दूर हो.

तथा ६– छाछमें सोंचरनोंन और पिम्पली डालकर पिलाओ तो वातोदर दूर हो.

पित्तोदरयत्न १– विरेचन, (जुलाब) दो तो पित्तोदर दूर हो.

तथा २– मिश्री और काली मिर्च, जलके साथ सेवन कराओ तो पित्तोदर दूर हो.

३ कफोदरयत्न १– पिम्पली, पीपलामूल, चित्रक धेले धेलेभर, २ टंक निसोत और ५ टंक ऐरंडीका तेल ऊंटनीके दूधमें उष्ण करके नित्य १ मास पर्यन्त पिलाओ तो कफोदर दूर हो.

तथा २– अजवान, जीरा, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, और झांऊवृ-

क्षकी जडका ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ पिलाओ तो कफोदर दूर हो.

तथा ३– साटी, दारुहल्दी, कुटकी, पटोल, हर्रेकी छाल, देवदारु, नीमकी छाल, सोंठ और गुर्चके ५ टंक चूर्णका क्काथ पिलाओ तो कफोदर, पार्श्वशूल, श्वास और पांडु ये सर्व रोग दूर हों. इसे पुनर्नवादि क्काथ कहते हैं यह भावप्रकाशमें लिखा है.

४ सन्निपातोदरयत्न १– सोंठ और त्रिफालाके क्काथमें दही घी या तेल डालकर पकाओ पानी जलकर तेल या घी (जो डाला हो) रह जानेपर छानकर खिलाओ तो सन्निपातोदर दूर हो.

तथा २– सोंठ, पिम्पली, काली मिर्च, जवाखार, सेंधानोंन इनका ५ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सन्निपातोदर दूर हो.

समस्तउदररोगमात्रयत्न १– अजवान झाऊंवृक्षकी छाल, धनियां, त्रिफला, पिम्पली, काला जीरा, अजमोद, पीपलामूल, वायविडंग, ये नवों एक एक भाग, तीन भाग दात्यूणी, २ भाग निसोत, २ भाग इन्द्रायण, इनके चूर्णको ३६ भाग थूहरके दूधकी १ पुट देके २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सर्व उदररोग तथा वातरोग दूर हों. यह नारायणादि चूर्ण कहाता है. इसीको बेरीके बक्कलके क्काथके साथ सेवन करानेसे गुल्म, मद्यके साथ देनेसे आध्मान, मठेके साथ देनेसे बंधकुष्ट, अनारके क्काथके साथ देनेसें अर्श और उष्ण जलके साथ दो तो अजीर्ण, भगंदर, पांडु, कास, श्वास, क्षयी, संग्रहणी, कुष्ट, मन्दाग्नि और विषमात्र दूर हों. जैसे विष्णुभगवान दैत्योंका नाश कर देते हैं तैसेही यह नारायण चूर्ण उक्त रोगोंको समूल नष्ट कर देता है.

हमने यह नारायण चूर्ण प्राचीनामृतसागरानुसार लिखा है परन्तु भावप्रकाशमें इसके निर्मितार्थ निम्नश्लोक दिये हैं जिन्हें विद्वान स्वयं जान लेवेंगे.

यवानी हवुषा धान्यं त्रिफला चोपकुञ्चिका । कारवी पिप्पलीमूलमजगन्धा शठी वचा ॥ १ ॥ शताव्हा जीरको व्योषं स्वर्णक्षीरी च चित्रकम् । द्वौ क्षारौ पौष्करं मूलं कुष्टं लवणपञ्चकम् ॥ २ ॥ विडंगं च समांशानि दन्त्या भागत्रयं भवेत् । त्रिवृद्विशाले द्विगुणे शातला स्याच्चतुर्गुणा ॥ ३ ॥ एष ना-

रायणो नाम्ना चूर्णो रोगगणापहः । एनं प्राप्य निवर्तन्ते रोगा विष्णुं यथा सुराः ॥ ४ ॥ तक्रेणोदरिभिः पेयं गुल्मिभिर्बदराम्बुना । आनद्धवाते सुरया वातरोगे प्रसन्नया ॥ ५ ॥ दधिमंडेन विड्बन्धे दाडिमांबुभिरर्शसि । परिकर्तेषु वृक्षाम्लैरुष्णांबुभिरजीर्णके ॥ ६ ॥ भगंदरे पांडुरोगे कासे श्वासे गलग्रहे । हृद्रोगे ग्रहणीरोगे कुष्ठे मन्दानले ज्वरे ॥ ७ ॥ दंष्ट्राविषे मूलविषे सगरे कृत्रिमे विषे । यथार्हस्निग्धकोष्णेन पेयमेतद्विरेचनम् ॥ ८ ॥

इत्युक्तं भावप्रकाशे.

तथा २– थूहरका दूध, दात्यूणी, त्रिफला, वायविडंग, कटियाली, चित्रक, कूकरभंगरा ये सब दो सेर लेकर ८ आठ सेर पानीमें डालकर औंटाओ और औंटते समय १ सेरभर गोघृत डालकर पानी जलके घृतमात्र रह जानेपर छानके २ टंक नित्य खिलाओ तो विरेचन होकर सर्व उदररोग दूर हो. यह नारायणघृत भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ३– १ टकेभर अजवान और २ टके सिके सुहागेका चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो सर्व उदररोग दूर हों.

तथा ४– ५ टकेभर पिम्पली थूहरके दूधमें भिंगाभिंगाकर सात दिन छायामें सुखाओ नंतर महीन पीसकर जलके साथ ४ मासेभर १ दिनके अंतरसे खिलाके ऊपरसे छाछ या चांवल खिलाओ तो उदररोग दूर हो.

तथा ५– १००० सहस्र पिम्पलीका चूर्ण हर्रेका चूर्ण थूहरके दूधमें ७ पुट देकर छायामें सुखाओ और १ टंक गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो समस्त उदररोग दूर हो.

तथा ६– दात्यूणी, पिम्पली, सोंठ, १ एक भाग, ६ भाग चोख और ¾ पौन भाग बिडनोनका १ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो प्लीहा, गुल्म, मंदाग्नि, पांडु और समस्त उदररोग दूर हों.

तथा ७– आंकके पत्ते और सैंधव घडेमें भरकर मुंह बंद करदो और भट्टीमें जलाकर स्वांग शीतल हो जानेपर निकालकर पीस डालो जो इसमेंसे ५ टंक नित्य छाछ या गवांरपाठेके रसके साथ सेवन कराओ तो उदररोग दूर हो.

तथा ८– सोंठ, या हरें या पिम्पलीको गुडके साथ नित्य २ टंक खिलाओ तो उदररोग, शोथ, पीनस, खासी, अरुचि, जीर्णज्वर, अर्श, संग्रहणी, कफरोग, और वातरोग ये सब दूर हों. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ९– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, सुहागा, पाचोंनोंन, सज्जी और इन सबके समान शुद्ध जमालगोटाके चूर्णको दात्यूणीके रसकी ३ पुट और विजौरेके रसकी ३ पुट देके खरल करो और छायामें सुखाकर आधी रत्ती नित्य खिलाओ तो समस्त उदररोग, प्लीहा, गुल्म, अफरा, शूल और अर्श ये सब रोग दूर हों इसीको आंखोंमें आंज दो तो सर्पविष उतर जावेगा. इसे उदयभास्कर रस कहते हैं. यह रस रत्नप्रदीपमें लिखा है.

तथा १०– आंकडेका दूध, कूडेकी (छाल ये दो दो टकेभर) चित्रक, पिम्पली, शंखाहोली, नीमकी जड, निसोत, हरेंकी छाल, कपीला (ये सब एक एक टकेभर) और ६ टकेभर थूहरका दूध इन सबका चूर्ण १ सेरभर घी ५ सेर पानीमें डालकर औटाओ, रसादिक जलकर घृत मात्र रह जानेपर छानकर जितने विरेचन करना हो उतनीही बूंदे खिलाओ तो प्रतिबूंदपर १ विरेचन होकर उदररोग, शोथ, भगंदर, और गुल्म ये सब दूर हो. इसे बिन्दुघृत कहते हैं यह वैद्यविनोदमें लिखा है.

८ जलोदरयत्न १– नीलाथूथा, गंधक, पिम्पली और हरेंकी छालका चूर्ण थूहरके दूधमें ५ दिन और किरमालेके गूदेके रसमें ५ दिन खरल करके उष्ण जलके साथ नित्य १ मासे सेवन कराओ तो जलोदर दूर हो इसके ऊपर चांवल और इमलीके रस (शर्बत)का पथ्य देना चाहिये. इसे उदरारि रस कहते हैं यह योगतरंगणीमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे मेदोरोग, कार्श्यरोग, उदररोग यत्न निरूपणं नाम सप्तविंशतिस्तरंगः ॥ २७ ॥

॥ शोथ-अंडवृद्धि-वध्र्म ॥

**शोथस्य वृद्धिरोगस्य वर्ध्मरोगस्य च क्रमात् ।**
**वसुपक्षे तरङ्गेस्मिन् कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥**

भाषार्थः– अब हम इस २८ अठ्ठाइसवें तरंगमें शोथ, अंडवृद्धि और व-र्ध्मरोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

वातशोथयत्न १– सोंठ, साठीकी जड, अरंडकी छाल, पिम्पली, पिम्प-लामूल, चव्य, चित्रक इनका क्वाथ पिलाओ तो वादीकी सूजन दूर हो.

पित्तशोथयत्न १– पटोल, त्रिफला, नीमकी छाल, और दारुहल्दीके क्वाथमें गुड डालकर पिलाओ तो पित्तशोथ, तृषाज्वर दूर होंगे.

कफशोथयत्न १– काली मकईके रसमें साठीकी जड पीसकर लगाओ तो कफकी सूजन दूर हो.

सन्निपातशोथयत्न १– पिम्पली या हरेंको थूहरके दूधमें ३ दिन भिंगा-कर सुखालो और महीन पीसकर २ टंक नित्य १० दिन पर्यंत सेवन क-राओ तो सन्निपातशोथ दूर हो.

भल्लातकशोथयत्न १– तिल्ली और काली मिट्टीको भैंसके दूध या भैंसके मक्खनमें पीसकर लेप करो तो भिलावेंकी उदली हुई सूजन दूर हो.

तथा २– मुलहटी, काली तिल्ली, भैंसका दूध और भैंसका मक्खन इन सबको पीसकर लेप करो तो भिलावेंकी सूजन दूर हो.

तथा ३– सालईके पत्ते पीसकर लेप करो तो भिलावेंकी सूजन दूर हो.

विषशोथयत्न १– विषशोथके यत्न जिस जिस विषकी निवृत्ति हेतु जो जो उपाय आगे विषप्रकरणमें लिखेंगे वेही जानो.

सामान्यशोथयत्न १– हरेंकी छाल, हल्दी, भारंगी, गुरच, चित्रक, दारुहल्दी, साठीकी जड, और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो पेट, पैर और मुखकी सूजन दूर हो. इसे पथ्यादि क्वाथ कहते हैं.

तथा २– विषखपरेकी जड, देवदारु और सोंठका क्वाथ पिलाओ तो शोथमात्र दूर हो.

तथा ३– दात्यूणी, निसोत, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, और चित्र-कका क्वाथ पिलाओ तो शोथ दूर हो.

तथा ४– सोनामक्खी, विषखपरा, नीमकी छाल, गोमूत्रका क्वाथ पि-लाओ तो शोथ दूर हो.

तथा ५– साठीकी जड, दारुहल्दी, सहजनेकी जड, सोंठ और सरसों-को कांजीके पानीमें पीसके उष्ण करके लेप करो तो शोथ दूर हो.

तथा ६– अदरक या पिम्पली या सोंठ, या हरेंकी छाल इसमेंसें किसी-एकको गुडके साथ पीसकर २ टंकसे बढाते बढाते एक टकेभर तक बढाकर १ मास पर्यंत खिलाओ तो शोथ, पीनस, कंठरोग, श्वास, कास, अरुचि, जीर्णज्वर, संग्रहणी और कफवातके सर्व विकार नाश होंगे.

तथा ७– पिम्पली और सोंठके चूर्णमें समान गुड मिलाकर खिलाओ तो शोथ, अजीर्ण और शूल ये सब दूर हों.

तथा ८– ३ टकेभर गुड, ३ टकेभर सोंठ, ३ टकेभर पिम्पली, १ टकेभर मंडूर, १ टकेभर तिल्ली इन सबका २ टंक चूर्ण नित्य खिलाओ तो शोथ मात्र दूर हो.

तथा ९– सूखी मूली, साठीकी जड, दारुहल्दी, रास्ना और सोंठमें तेल पकाकर यह तेल मर्दन करो तो शूलयुक्त शोथ मात्र नाश होवे ये भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १०– साठीकी जड, दारुहल्दी, गुरच, पाठ, सोंठ, और गोखरू इनका २ टंक चूर्ण गोमूत्रके साथ पिलाओ तो सर्व शरीर विस्तृत शोथ, उदररोग और व्रणमात्र दूर हों. यह पुननर्वादि चूर्ण है.

तथा ११– साठीकी जड, नीमकी छाल, पटोल, सोंठ, कुटकी, गुरच, दारुहल्दी, हरेंकी छाल इनका क्वाथ पिलाओ तो सर्वांग शोथ, कास, उ-दररोग, और पांडुरोग ये सब दूर हों. यह पुनर्नवादि क्वाथ है.

अंडकोशशोथयत्न १– त्रिफलाके क्वाथमें गोमूत्र डालकर पिलाओ तो अंडकोश (पोथों)की सूजन दूर होगी.

शोथदाहयत्न १– बहेडेकी बिजी जलमें पीसकर लेप करो तो सूजन-की जलन दूर हो.

१ वातांडवृद्धियत्न १– दूधमें अंडीका तेल डालकर पिलाओ तो १ मा-समें वायकी अंडवृद्धि दूर हो.

२ पित्तांवृद्धियत्न १– गूगल, एरंडीका तेल और गोमूत्र तीनोंको मि-लाकर पिलाओ तो पित्तकी अंडवृद्धिका नाश हो.

तथा २– रक्तचंदन, महुआ, कमलगटा, कमलनाल और खशको दूधमें खरल करके पोतोंपर लेप करो तो पित्तकी अंडवृद्धि, दाह और पीडा ये सब दूर हो.

३ कफांडवृद्धियत्न १– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली और त्रिफलाके क्वाथमें जवाखार और सेंधानोंन डालकर पिलाओ तो कफकी अंडवृद्धि शांत हो.

४ रक्तांडवृद्धियत्न १– जलौका (जोंक) लगाकर अंडकोशका रुधिर निकलवा दो तो रक्तकी अंडवृद्धि दूर हो.

तथा २– विरेचन कराओ तो रक्तकी अंडवृद्धि दूर हो.

तथा ३– मिश्री और मधु जलके साथ पिलाओ तो रक्तकी अंडवृद्धि दूर हो.

तथा ४– शीतल द्रव्यों (ठंडे पदार्थों) के लेपसे रक्तज तथा पित्तज दोनों अंडवृद्धि दूर हों.

५ मेदांडवृद्धियत्न १– अंडकोशकी मेद (चर्बी) निकलवा डालो तो मेदकी अंडवृद्धि दूर हो.

तथा २– तुलसीके पत्ते पीसके औंटाकर सुहाते सुहाते लेप करो तो मेदकी अंडवृद्धि दूर हो.

६ मूत्रांडवृद्धियत्न १–अंडकोशका जल निकलवा दो तो मूत्रांडवृद्धि दूर हो.

तथा २– मूत्राशय (पोते) की सीवनके पार्श्वोंके नीचे महीन वस्त्रको बांधो तो मूत्रकी अंडवृद्धि दूर हो.

समस्तांडवृद्धियत्न १– कडवी तूम्बडी या रूखी वस्तुका सहता हुआ लेप करो या उन्हींके उष्ण जलसे सेको तो अंडवृद्धि मात्र दूर हो.

तथा २– १५ टंक खैरका गोंद, १० टंक बच, १५ टंक सोंठ, ८ पैसेभर गौका दूध और आठ टकेभर सालममिश्री इन सबको गोदुग्धमें खरल करके ४ टंक नित्य पोतोंपर लेप करो तो २१ दिनके यत्नसे अंडवृद्धि शांत हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ३– रास्ना, मुलहटी, गुरच, अरंडकी जड, खरैंटी, किरमालेकी गिरी, गोखरू, पटोल, और अडूसेके क्वाथमें अरंडीका तेल डालकर पिलाओ तो अंडवृद्धि मात्र दूर हो.

तथा ४– हर्रेकी छाल, चिरायता, धनियां ये सब पैसे पैसेभर, पौन पैसेभर लौंग, १ टकेभर सोनामक्खी इन सबके तुल्य मिश्री और मिश्रीके तुल्य मधु इन सबको ५ दिन खरल करके इसको नित्य २ टंक खिलाओ तो अंडवृद्धि निश्चय दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तलगतअंडकोशयत्न १– भेडीका घी कांसेकी थालीमें मसलो, फिर इसीमें रारका चूर्ण डालकर फिर मथो, फिर शुद्ध सिंगीमुहराका चूर्ण डालकर पुनः मसलो तीनोंको एक जीव हो जानेपर पोतेपर इस स्निग्ध पदार्थका मर्दन करो तो उतराहुआ पोता (गोसा, गोई) यथास्थित होकर अच्छा हो जावेगा यह भावप्रकाशमें लिखा है.

वर्ध्मरोगयत्न १– हर्रेकी छाल, पिम्पली और सेंधेनोंनको महीन पीसकर अरंडीके तेलमें भूंज (पका)के २ टंक नित्य खिलाओ तो वर्ध्म(बद) रोग बैठ जावे.

तथा २– जीरा, झांउवृक्षकी छाल, गेहूं, कूट और बेरके पत्ते ये सब कांजीके पानीमें महीन पीसकर बदपर लेप करो तो बदरोग दूर हो. यह भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा ३– तत्काल (तुरंत) मरेहुए कौवेका अंतरमल उष्ण करके बदपर बांधो या लेप करो तो बद तत्काल दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा ४– कुन्दरूको भेडीके दूधमें पीसकर लेप करो तो बदरोग दूर हो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे शोथ-वृद्धि-वर्ध्मरोगाणां यत्ननिरूपणं नामाष्टविंशतिस्तरङ्गः ॥ २८ ॥

## ॥ गलगंड-गंडमाला-अपची-ग्रन्थि-अर्बुदरोग ॥

गलगंडादिरोगाणामर्बुदस्य यथाक्रमात् ।
नंदनेत्रमिते भङ्गे चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस उन्तीसवें तरंगमें गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रन्थि और अर्बुद रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

गलगंडरोगयत्न १– सरसों, अलसी, यव, सनके बीज, मुंगनेके बीज,

और मूलीके बीज इन सबको छाछमें महीन पीसकर लेप करो तो गलगंड, गंडमाला (कंठमाला) और ग्रन्थि (गांठ) ये तीनों रोग दूर हों.

तथा २– सरसों और जलकुम्भी (बूटी विशेष) दोनोंकी भस्म तेलमें घिसके लेप करो तो गलगंडरोग दूर हो.

तथा ३– शंखाहोलीको जलमें पीस और भंगके समान छानकर १५ दिन पर्यंत प्रभात समय पिलाओ और ऊपरसे गौका घी पिलाओ गलगंड दूर हो.

तथा ४– कुटकीको पीसकर रात्रिभर घिया तुराईमें भर रक्खो नंतर प्रातःकाल उसी घिया तुराईकों पीस छानकर रसकों ७ दिन पर्यंत पिलाओ तो गंडमाला दूर हो.

तथा ५– गुरच, नीमकी छाल, छड, कपास, (रुई) वृक्षकी छाल, दोनों पिम्पली, खरेंटी, देवदारु, इनके क्काथको तेलमें पकाओ और यह तेल १५ दिन पर्यंत नित्य पिलाओ तो गलगंड नाश हो. यह अमृतादि तैल है.

तथा ६– यव, मूंग, पटोल, कटुवस्तु, रूखा अन्न, वमन और रुधिर, निकालना ये सब गलगंडरोगके नाश करनेके उपाय है.

तथा ७– ५ टंक कचनारकी छाल, १ टंकभर सोंठ, १ टंक पिम्पली, १ टंक मिर्च, ५ टंक हर्रकी छाल, ५ टंक बहेडेकी छाल, ५ टंक आंवले, ५ टंक बरण्याकी छाल, १ टंक तज, १ टंक पत्रज, १ टंक इलायची और इन सबके समान शुद्ध गूगल इन सबका चूर्ण ५ मास पर्यंत नित्य प्रभात जलके साथ सेवन कराओ तो गलगंड, अर्बुद, ग्रंथि, व्रण, गुल्म, कुष्ट, भगंदर ये सब रोग जुदे जुदे अनुपानोंसे दूर होंगे. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ८– लाल ऐरंडीकी जड, पलासकी जड, दोनोंको चांवलोंके पानीमें पीसकर लेप करो तो गलगंड दूर हो. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

गंडमाला (कंठमाला) रोगयत्न १– जलकुंभी, सेंधानोंन और पिम्पली तीनोंको ठंडाईके समान पीस छानकर सोंठके चूर्णके साथ पिलाओ तो कंठमालारोग दूर हो.

तथा २– बरण्याकी जडका क्काथ मधुके साथ पिलाओ तो कंठमाला दूर हो.

तथा ३– वायविडंगकी जडके क्वाथमें भंगरेका रस और मीठा तेल डालकर मंद मंद आंचसे पकाओ. रस जलकर तेल मात्र रह जानेपर सिन्दूर डालकर छानलो. अब यह "चक्रमर्दनतैल" बन गया जो इसका लेप करो तो कंठमाला नाश हो.

तथा ४– चिरमी (गुमची) का पंचांग जलमें पीसकर तेलके साथ पकाओ रस जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो कंठमाला दूर हो. इसे गुंजादि तैल कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ५– किरमालेकी जड चांवलोंके जलमें पीसकर लेप करो तो कंठमाला दूर हो.

तथा ६– शंभालूकी जड पानीमें पीसकर लेप करो तो कंठमाला दूर हो.

तथा ७– सरसों और शूकरकी विष्टाको खपरी (ठीकरी) में जलाकर कडवे तेलमें खरल करो और रोगीके रोगस्थानपर लेप करो तो कंठमाला (गंडमाला) दूर हो. ये यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

अपचीरोगयत्न १– सरसों, नीमके पत्ते और भिलावेंको बकरीके मूत्रमें पीसकर लेप करो तो अपचीरोग नाश हो.

तथा २– रक्तचंदन, हरेंकी छाल, लाख, बच और कुटकीको जलमें पीसकर तेलमें पकाओ और इस तेलका मर्दन करो तो अपचीरोग नाश हो. इसे चंदनादि तैल कहते हैं.

तथा ३– सोंठ, काली मिर्च, वायविडंग, महुआ, सेंधानोंन और देवदारुको जलमें पीसकर तेलमें पकाओ पानी जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानकर इस तेलका नास दो (सुंघाओ) तो अपचीरोग दूर हो. इसे व्योषादितैल कहते हैं.

ग्रंथिरोगयत्न १– सज्जी, मूलीका खार और शंखके चूर्णको पानीमें पीसकर लेप करो तो ग्रंथि और अर्बुद दोनों नाश होवेंगे.

तथा २– व्रणरोगकी चिकित्सामें "जात्यादिघृत" वर्णन करेंगे वह घृतभी ग्रंथि और व्रण दोनोंको लाभकारी है.

अर्बुदरोगयत्न १– हल्दी, लोद, पतंग, धमासा और मैनसिलको मधु-में पीसकर लेप करो तो मेदार्बुद रोग नाश हो.

तथा २– मूलीका खार, हल्दी और शंखका चूर्णको महीन पीसकर लेप करो तो अर्बुदरोग दूर हो.

तथा ३– कूट, नोंन और बडका दूध इनको महीन पीसकर लेप करो और ऊपरसे बडका पत्ता बांधो तो ७ दिनमेही अर्बुदरोग दूर हो.

तथा ४– सहजनेकी जड और वीजे, सरसों, तुलसीपत्र, जौ, कण्हेरकी छाल और इन्द्रयवको छाछमें महीन पीसकर लेप करो तो अर्बुदरोग दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे गलगंड, गंडमाला, अपची, ग्रन्थार्बुदरोगाणां यत्ननिरूपणं नामैकोनत्रिंशस्तरंगः ॥ २९ ॥

॥ श्लीपद-विद्रधि ॥

श्लीपदस्य विद्रधेश्च ह्यामयस्य यथाक्रमात् ।
वियद्रामे तरङ्गेऽस्मिन् चिकित्सा कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस तीसवें तरंगमें श्लीपद और विद्रधि रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

श्लीपदरोगयत्न १– लंघन, लेपन, स्वेदन, विरेचन, रुधिर निष्कासन, और उष्ण वस्तु सेवन ये प्रत्येक कर्म श्लीपद रोगपर लाभकारी हैं.

तथा २– सरसों, मुंगनेकी जड, सोंठ, देवदारुको गोमूत्रमें पीसकर लेप करो तो श्लीपदरोग दूर हो.

तथा ३– साटीकी जड, सोंठ, और सरसोंको कांजीमें पीसकर लेप करो तो श्लीपदरोग शांति पावेगा.

तथा ४– धतूरा, एरंड, सम्भालु, मुंगना इनकी जडें और सरसोंको जलमें महीन पीसकर लेप करो तो श्लीपद दूर हो.

तथा ५– सहदेई (महाबला)को ताडफलके रसमें पीसकर लेप करो तो श्लीपद दूर हो.

तथा ६– साखोटक (सहोर) वृक्षके बक्कलका क्वाथ गोमूत्रके साथ पिलाओ तो श्लीपदरोग दूर हो.

तथा ७– हल्दी और गुडको महीन पीसकर गोमूत्रके साथ पिलाओ तो श्लीपद, दाह और कुष्ट तीनों दूर हों.

तथा ८– साटीकी जड, त्रिफला और पिम्पली इनोंका २ टंक महीन चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बहुत दिनोंका श्लीपदभी नाश होवे.

तथा ९– बडे हरेके चूर्णमें अरंडका तेल और गोमूत्र मिलाकर १५ दिन पर्यन्त पिलाओ तो श्लीपदरोग दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १०– बधायरा, सोंठ, पिम्पली, काली मिर्च, वायविडंगको जलमें पीसकर तेलमें मंद आंचसे पकाओ और तेल मात्र रह जानेपर छानकर मर्दन करो तो श्लीपदरोग दूर हो.

तथा ११– धतूरेके बीजे क्रमशः एकसे वीसतक बढाते जाओ इन्हें खाकर ऊपरसे शीतल जल पिलाओ तो श्लीपद दूर हो. ये यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १२– कैसोंधि (एक जातका दरखत है)की २ टंक जड गोघृतके साथ पिलाओ तो श्लीपदरोग नाश हो.

तथा १३– पिम्पली, त्रिफला, और देवदारुका २ टंक चूर्ण नित्य कांजीके जलके साथ सेवन कराओ तो श्लीपद, अजीर्ण. वातरोग और प्लीहा ये सब दूर होकर क्षुधा वृद्धि होगी. इसे पिम्पल्यादि चूर्ण कहते हैं. यह वृंदमें लिखा है.

तथा १४– मजीठ, महुआ, रास्ना, जाल, (पीलू वृक्ष विशेष, मारवाडमें बहुत होता है) और साटीकी जडको कांजीमें महीन लेप करो तो पित्तका श्लीपद दूर हो.

तथा १५– अंगूठोंके ऊपरकी नसोंका रक्त निकालदो तो पित्तका श्लीपद दूर हो.

विद्रधिरोगयत्न १– एरंडकी जडके क्वाथमें तेल या घृत पकाकर उससे सहता सहता सेक करो तो वादीकी विद्रधि दूर हो.

तथा २– विरेचन कराओ तो पित्तकी विद्रधि दूर हो.

तथा ३– असगंध, खश, महुआ, और रक्तचंदनको दूधमें महीन पीसकर घी मिलाओ और उष्ण करके लेप करो तो पित्तकी विद्रधि दूर हो.

तथा ४– ईंट, वालू, लोहेका मैल और गोबरको महीन पीसकर गोमूत्रमें पकाओ और सहता सहता हुआ सेक करो तो कफकी विद्रधि नाश हो.

तथा ५– जोंक लगाकर रुधिर निकलवादो तो सर्व विद्रधि दूर हों.

तथा ६– जबतक विद्रधि पक न जावे तबतक उसका यत्न व्रणशोथ सदृश करो.

तथा ७– यव, गेहूं और मूंग तीनोंके आटेको घृतमें पकाकर लेप करो तो बिनपकी विद्रधिभी कुशल हो जावे.

तथा ८– दशमूलके क्काथमें तेल या घी मिलाकर व्रणको धोओ तो विद्रधिका व्रण और सूजन दोनों दूर हो.

तथा ९– रक्तचंदन, मजीठ, हल्दी, महुआ और गेरूको दूधमें पकाकर लेप करो तो रुधिर और चोट लगनेकी दोनों विद्रधि दूर हों.

तथा १०– काला जीरा, इन्द्रायणकी जड और तुराई इनके २ टंक चूर्णका क्काथ बनाकर पिलाओ तो कोठेकी विद्रधि दूर हो.

तथा ११– सहजनेकी जडके रसमें मधु मिलाकर पिलाओ तो शरीरके भीतरकी (अंतर) विद्रधि दूर हो.

तथा १२– मुंगनेके क्काथमें सेंधानोंन और हींग डालकर प्रातःकालही पिलाओ तो अंतर (शरीरके भीतरकी) विद्रधि दूर हो. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे श्लीपद, विद्रधिरोग यत्ननिरूपणं नाम त्रिंशस्तरंगः ॥ ३० ॥

## ॥ व्रणशोथ-व्रणरोग ॥

**व्रणशोथस्य व्रणस्याग्निदग्धस्य यथाक्रमात् ।**
**ज्याकृशानौ तरंगेऽस्मिन् कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥**

भाषार्थः– अब हम इस इकतीसवें तरंगमें व्रणशोथ, व्रणरोग और अग्निदग्धकी चिकित्सा यथाक्रमसे कहते हैं.

शारीरिकव्रणयत्न १– १ लेप, २ औषधोंके उष्ण जलसे धोना, ३ बासकी लकडीपर अंगूठा मलकर उस अंगूठेसे व्रणपर पसीना निकालना, ४ जलौका आदि कर्मसे रक्त निकालना, ५ औषधोंकी पट्टी बांधकर व्रणपर पसीना निकालना, ६ व्रणको पकाना, ७ शस्त्र क्रियासे चीरना, ८ अंगूठासे दबाकर पीव निकालना, ९ व्रणका शोधन करना, १० व्रणमें अंकूर लाना, ११ और अंतमें त्वचाके वर्ण सदृश वर्ण कर देना. ये ११ उपाव यथाक्रम करनेसे व्रण नाश हो जावेगा. चरक और सुश्रुत ग्रंथमें इसी प्रकारके ६० साठ उपाय व्रणरोगके लिये लिखे हैं.

वातजव्रणशोथलेप १– विजौरेकी जड, छड, देवदारु, सोंठ, रास्ना और अरणीको पानीमें पीसलो और उष्ण करके सहता सहता लेप[1] करो तो वातज व्रणशक्तीसूजन दूर हो. जल अग्निकों बुझाता है जैसे यह लेप इस्कों मिटाता है.

पित्तजव्रणशोथलेप १– महुआ, रक्तचंदन, दूर्वा, आंवले, कमलनाल, खश, नेत्रवाले और पद्माखको ठंडे जलमें पीसकर लेप करो तो पित्तके व्रणकी सूजन उतर जावेगी.

तथा २– बडकी जड, गूगल, वेतके बक्कलको जलमें पीसकर इनसे दशमांश घृत डालकर लेप करो तो पित्तके व्रणकी सूजन दूर हो.

कफजव्रणशोथलेप १– नगद (नागदमनी), बावची, मेंढासिंगी, मजीठ, राल, असगंध और सताबरी सर्वको महीन पीस और उष्ण करके सहता हुआ लेप करो तो कफज व्रणका शोथ दूर हो.

तथा २– पिम्पली, खली (तिली, अलसी आदि तैलिक अन्नोंका निष्तैल भाग) सहजनेके बक्कल, नदीकी रेत (बालू) और हरेंकी छालको गोमूत्रमें पीसकर उष्ण उष्ण लेप करो तो कफके व्रणकी सूजन दूर हो.

सन्निपातज व्रणशोथलेप १– इसपर वैद्य स्वबुद्धिसे विचारपूर्वक लेप करे.

रक्तज व्रणशोथलेप १– इसपर पित्तजव्रणशोथके समान लेप करो.

समस्त व्रणशोथमात्रलेप १– साठीकी जड, देवदारु, हल्दी, सोंठ, मुं-

---

१ लेप मात्र करना रात्रिकालमें वर्जितही हैं.

गनेके बक्कल और सरसोंको खटाईमें पीसकर सहता हुआ उष्ण लेप करो तो सर्व व्रणमात्रकी सूजन उतर जावेगी.

वातज व्रणशोथ मार्जन १– वात नाशक औषधियोंके क्काथसे धोओ तो वातज व्रणशोथकी सूजन दूर हो.

तथा २– दशमूल, खरेंटी, रास्ना, असगंध, सींप, अरंडकी जड या फल, मुंगना, निर्गुंडी, साठी, पिम्पली, सेंधानोंन, सोंठ, मुंगनाके बीज, रुईके बीज (बिनोला), अलसी, कुल्थी, तिल्ली, जौ, सरसों, मूलीके बीज, सोंफ, नीमके पत्ते, नागरवेलके पत्ते, गुलबांस (हबाश)के पत्ते, इनको उष्ण करके बांधो या क्काथ बनाकर शोथको धोओ तो वादीके व्रणकी सूजन उतर जावेगी.

तथा ३ तेल, या मांसरस, या घृत, या कांजीको ऊष्णकर सहते सहते व्रणशोथको धोओ तो वादीके व्रणशोथकी सूजन उतर जावेगी.

पित्तजव्रणशोथमार्जन १– शीतल औषधोंके क्काथ, या दूध, या घृत, या शक्करके पानी, या सांठेके रससे धोओ तो पित्तके व्रणकी सूजन दूर हो.

कफजव्रणशोथमार्जन १– कफनाशक औषधोंके उष्ण क्काथ, या तेल, या गोमूत्र, या खारकके जलसे धोओ तो कफके व्रणकी सूजन दूर हो.

संनिपातजव्रणशोथमार्जन १– सन्निपात नाशक औषधोंके उष्ण सहते हुए क्काथसे धोओ तो सन्निपातके व्रणका शोथ दूर हो.

रक्तजव्रणशोथमार्जन १– इसपर पित्तज व्रणशोथ सदृश यत्न मार्जन करो.

व्रणशोथमात्रमार्जन १– हरेंके बक्कलको पानीमें औंटाकर शोथपर सहती सहती धारा छोडो व्रणकी सूजन मात्र दूर हो.

समस्तव्रणशोथस्वेदन १– कठोर व्रणपर अंगूठासे या वांसकी स्वच्छ चिकनी लकडीसे शनैः शनैः घिसकर (मसलना) पसीना निकालो तो वह ढीला होकर अच्छी हो जावेगा.

व्रणशोथरक्तनिष्कासनविधि १– जिस व्रणका वर्ण विपर्यय हो या काला हो. और पीडा अधिक हो या किसी विषहरे जीवके काटनेसे शोथ होगया हो उसका जलौका (जोंक) या छुरेसे (उस्तरा) रुधिर निकलवा दो तो वह तुरंत अच्छा होगा.

व्रणशोथपाकनविधि १– जो व्रण लेप आदि पूर्वोक्त यत्नोंसे न पके तो सहजनेकी जड और फल, तिल्ली, सरसों, अलसी, यव, गेहूं, नीमके पत्ते या मदिरा निकालनेका जावा इत्यादिको पकाकर व्रणपर बांधो तो व्रण पक जावेगा.

पक्वव्रणचीरनविधि १– जिस व्रणमें पीव भरगया हो उसे शस्त्रक्रियामें कुशल ऐसा वैद्य शस्त्र (नश्तर)से चीरकर उसमेंका पीव निकाल देवे और पीव स्वच्छ हो जानेपर मरहमकी पट्टी बांध देवे तो व्रण अच्छा हो जावेगा.

शस्त्रक्रिया वर्जन– बालक, वृद्ध, क्षीण पुरुष, भयभीत, शस्त्रक्रिया (चीरफाड) को न सहनेवाला, स्त्री और जिसे मर्मस्थानमें व्रण हुआ हो ऐसे रोगीका व्रण मत चीरो परन्तु नीचें लिखी औषधियोंसे पीव निकालदो.

व्रणभेदन औषध १– कणगच (करंज)की जड, चित्रक, दात्यूणी, भिलावें, कण्हेर और कबूतरकी बिष्ठा, इनमेंसें किसी एककाभी लेप करो तो अवश्यही पक्व व्रण फूटकर पीव निकल जावे.

तथा २– खारानोंन, जवाखार, सज्जी और अपामार्ग (ऊंगो आधाझारा)का खार इनमेंसे किसीएकका लेप करो तो व्रण फूटकर पीव वह जावेगा.

तथा ३– यदि व्रण अति कठोर हो तो उसपर हाथीका दांत पानीमें घिसकर लगादो तो उस व्रणका शोथ उतरकर फूटके पीव वह जावेगा.

व्रणपीडनविधि १– मर्मस्थानके व्रणमें पीव उत्पन्न होगई हो तो उसे मत चीरो किन्तु यव गेहूं और उर्दको पानीमें पीस और पकाके उस व्रणपर बांध दो तो उसमेंसे पीव वहकर हलका हो जावेगा, तब उसपर मरहम लगाकर आरोग्य करलो.

व्रणशोधनविधि १– जो कच्चा व्रण हो तो उसे पटोलके पत्ते या नीमके पत्तोंको पानीमें औटाकर उस पानीसे धोओ तो व्रण अच्छा हो जावेगा.

तथा २– कच्चे व्रणको गूलरके बक्कलके क्वाथसे धोओ तो अच्छा होगा.

तथा ३– कच्चे व्रणको किरमालेके बक्कलके क्वाथसे धोओ तो अच्छा होगा.

तथा ४– कच्चे व्रणको पीपल वृक्ष, गूलर, बड और बील इन चारोंके बक्कलके क्वाथसे धोओ तो व्रणकी सूजन और उपदंश (गर्मी) दोनों दूर हों.

तथा ५– तिल, सेंधानोंन, मुलहटी, नीमके पत्ते, दोनों हल्दी, निसोत

और नागरमोथा इन सबको जलमें पीसकर व्रणपर लेप करो तो व्रण पककर उसमेंका पीव निकल जावेगा.

दुष्टव्रणयत्न १– नीमके पत्ते, तिल, दात्यूणी, निसोत और सेंधानोंनको पीसकर लेप करो तो दुष्ट व्रण अच्छा हो जावेगा.

तथा २– नीमके पत्ते जलमें औंटाकर व्रणपर बांधो तो दुष्ट व्रण दूर हो.

तथा ३– हर्र, निसोत, सेंधानोंन, दात्यूणी और कलहारीकी जडको मधुमें पीसकर इसकी बत्ती व्रणमें चलादो तो दुष्ट व्रण अच्छा हो.

तथा ४– जिस व्रणका मुंह छोटा हो उसमें नीमके पत्तोंके रसकी बत्ती बनाकर चलाओ तो व्रण कुशल होगा.

तथा ५– नीमके पत्ते, घी, मधु, दारुहल्दी, और महुआकी बत्ती बनाकर चलाओ तो व्रण दूर हो.

तथा ६–तिल्लीको औंटाकर बत्ती बनाके व्रणमें चलाओ तो व्रण अच्छा होगा.

व्रणभरणयत्न १– नीमके पत्ते जलमें चुडोकर उस जलसे व्रणको धोओ और मधुयुक्त तेलको फुहा (रुई) उसपर बांधो तो व्रण भरकर अच्छा हो जावेगा.

तथा २– असगंध, लोद, कायफल, मुलहटी, मजीट और धावडेके फूल इन सबको पीसकर व्रणपर बांधो तो व्रण भरकर अच्छा हो जावेगा.

व्रणदाह तथा शूलयत्न १– जौका आटा, मधु, तैल, घी इन सबको इकट्ठे तपाकर व्रणपर लेप करो तो दाह और शूल व्रणसे दूर हों.

व्रणकृमियत्न १– कणगचकी जड, नीमकी छाल, और निर्गुंडीको पीसकर लेप करो तो व्रणकी कृमि निवृत होगी.

तथा २– लहसन पीसकर लेप करो तो व्रणकी कृमि दूर होगी.

तथा ३– हींग और नीमकी छालको पीसकर लेप करो तो व्रणकी कृमि दूर होगी.

व्रणकण्डु-कृमियत्न १– नीमके पत्ते, बच, हींग, सरसों, घी, नोंन, इन सबका चूर्ण एकत्र कर घीमें सानके अग्निपर धूनी दो तो व्रणपर छोत (अशुद्धि, छूत) पडनेके कारण जो खुजाल होकर कृमि पड जाती है सो कृमि और व्रणकी पीडा दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें हैं.

व्रणभरणयत्न १– २ पैसेभर कडुआ तेल और दो पैसेभर पानी कासे (फूल)की थालीमें डालकर १ दिनभर हाथसे मसलो नंतर इसमें ५ पैसेभर रार, १ टकेभर खैरसार, ५ टंक कूट, २ टंक नीला थूथा, १ टंक गंधाविरोजा, और १ टंक काली मिर्च इन सबका कपडछान किया चूर्ण डालकर पुनः हाथसे मसलो, अब जो इस मल्लमकी पट्टी व्रणपर लगाओ तो व्रण तत्काल भर जावेगा.

आगन्तुकव्रणयत्न १– खड्ग (तलवार) आदि नानाप्रकारकी धारके घावसे किसी मनुष्यकी त्वचाका कोई भाग फट जावे तो चतुर वैद्यको चाहिये कि उस घावको रेशमके पक्के धागेसे टांके लगाकर रोगीको निर्वात स्थानमें रक्खे. नंतर गेहूंके मेंदामें जल और घी डालके पकावे और पानी जलकर घृतयुक्त तप्त मेंदा रह जानेपर उस टिकियासे वह टांके लगाहुआ घाव सहता सहता सेके तो वह घाव अच्छा हो जावेगा.

तथा २– कुटकी, मोंम, हलदी मेंहेदी, मुलहटी, करंजके फल पत्ते और जड पटोल चमेलीके पत्ते और नीमके पत्ते इन सबको घीमें डालकर पकाओ, जब ये सब सूखकर घृतमात्र रह जावें तब उस घृतसे व्रणको सेको तो व्रण तत्क्षण कुशल हो जावेगा. ये सब यत्न वैद्यरत्नमें लिखे हैं.

तथा ३– शस्त्रादिके प्रहारसे यदि अधिक रुधिर निकलकर वायु कुपित होनेसे अधिक पीडा होने लगे तो उक्त प्रकारके रोगीको "घी" पिलाओ जिससे वात शमन होकर पीडा दूर हो.

तथा ४– यदि खड्गादिसे गात्र छिन्न हो जावे तो उस घावमें गंगेरणकी जडका रस भरदो तो वह घाव भरकर अच्छा शीघ्रही होगा.

तथा ५– शस्त्र प्रहारवाले रोगीको सर्व शीतल यत्न लाभदायकही हैं.

तथा ६– यदि शस्त्रप्रहारसे आमाशयमें रुधिर एकत्र हो जावे तो उसे वमनद्वारा तथा मूत्राशयमें रुधिर जमगया हो तो विरेचनद्वारा रुधिर निकालकर रोगीको आरोग्य करदो.

तथा ७– वांसकी छाल, अरंडकी छाल, गोखरू, पाषाणभेद, इनके क्वाथमें सिकी हींग और सेंधानोंन, डालकर पिलाओ तो कोठेका जमाहुआ रुधिर निकलकर वह रोगी आरोग्य हो जावेगा.

तथा ८– आगंतुक व्रण रोगीको यव, कुल्थी, सेंधानोंन और सूखा पदार्थ खाना ये लाभजनक होंगे.

तथा ९– चमेलीके पत्ते, नीमके पत्ते, पटोल, कुटकी, दारुहल्दी, गौरीसर, मजीठ, मोंम, हर्रेकी छाल, तज, हल्दी, नीलाथूथा, मधु, करंजबीज इन सबके समान गौका घी, और सब औषधियोंसे अष्टगुणा जल ये सर्व पदार्थ एकत्र कर मंद मंद आंचसे पकाओ, फिर रस जलकर घृत मात्र रह जानेपर छानकर इसकी बत्ती तथा लेप व्रणमें लगाओ तो शारीरिक तथा आगंतुक गम्भीर व्रणभी भर जावेगा. इसे जात्यादिघृत कहते हैं.

तथा १०– चमेलीके पत्ते, नीमके पत्ते, पटोलके पत्ते, किरमालेके पत्ते, महुआ, मोंम, कूट, दारुहल्दी, हल्दी, कुटकी, मजीठ, पद्मारव, (पद्मकाष्ट) हर्रेकी छाल, लोद, तज, कमलगटे, गौरीसर, नीलाथूथा, और किरमालेका गूदा इनके क्काथमें तिलीका तेल पकाकर छानलो जो इस तेलकी बत्ती या फुहा आदि व्रणपर लगाओ तो वह व्रण तत्क्षण भरकर अच्छा हो जावेगा. इसे जात्यादितैल कहते हैं.

तथा ११– चित्रक, लहसन, हींग, सरपंख (यह गौडदेशमें प्रसिद्धही है) कलिहारीकी जड, सिंदूर, अतीस, और कूट इन सबके चूर्णको कडुवे तेलके साथ जलमें डालकर पकाओ जब पानी जलकर तेलमात्र रह जावे तब छानकर रुई आदि द्वारा व्रणपर लगाओ तो आगंतुकव्रण दुष्टव्रण और नाडीव्रण इन सबको समूल नाश कर देवेगा. इसे विपरीत मल्लतैल कहते हैं.

तथा १२– गुरच, पटोलकी जड, त्रिफला, वायविडंग और इन सबके समान गूगल इन सबका २ टंक बारीक चूर्ण नित्य जलके साथ सेवन कराओ तो व्रणमात्र, वातरक्त, गुल्म, उदररोग, ये सब दूर हों, इसे अमृतादि गूगल कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

प्लुष्टीदग्धयत्न १– अग्निसे जले हुएको अग्निसेही तपाओ तो अच्छा होगा.

तथा २– जले स्थानपर अगरादि उष्ण औषधियोंका लेप करो तो जलाहुआ अवयव अच्छा हो जावेगा.

दुर्दग्धयत्न १– औषधियोंका बनाहुवा संशोधित तथा साधारण घृतभी तपाकर ठंडा होनेपर लगाओ तो दुर्दग्ध अच्छा हो जावेगा.

सम्यकदग्धयत्न १– तवाखीर, वडकी जड, रक्तचंदन, सोनागेरू, गुरच इन सबको पीसकर घीके साथ लेप करो तो सम्यकदग्ध कुशल हो.

अतिदग्धयत्न १– बिगडेहुए मांसको निकालकर साठी चांवल और तेंदूको घीमें पीसकर लेप करो और ऊपरसे गुरचके पत्ते बांधो तो अतिदग्ध कुशल हो.

तथा २– मोंम, महुआ, लोद, रार, मजीठ, रक्तचंदन, और मूर्वाको घीमें पकाकर घीका लेप करो तो अतिदग्धकी जलन मिटकर नवीन मांसांकुर उत्पन्न होगा. इसे चित्रकादिघृत कहते हैं.

तथा ३– पटोलके पंचांगके क्वाथमें कडुआ तेल पकाकर क्वाथ जलके तेल मात्र रह जानेपर छानलो जो इसको लेप करो तो अग्निदग्धकी दाह, झरना और फटना ये सब शमन हो जावेंगे, ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ४– पुराना कलीका चूना दहीके पानीमें पीसकर दग्धपर लगाओ तो अग्निदग्ध तथा तैलदग्धका फफोला दोनों शीतल पड जावेंगे.

तथा ५– जौ (यव)को जलाकर तिल्लीके तेलके संयोगसे लेप करो तो दग्ध कुशल होगा.

तथा ६– सिका जीरा, मोंम और रार घीमें पीसकर लगाओ तो दग्ध कुशल होगा.

तैलदग्धयत्न १– पावभर तिल्लीके तेलमें पुराना कलीका ३ पैसेभर चूना १ प्रहरपर्यंत हाथसे मसलकर एक जीव करलो और रुईसे जले स्थानपर लगाओ तो तत्काल अच्छा होगा. (चूना पानीमें भींगाहुवा लेना).

व्रणग्रंथियत्न १– कपीला, वायविडंग, तज और दारुहल्दीको जलमें महीन पीसकर तिल्लीके तेलके साथ मंद आंचसे पकाओ पानी जलकर तेलमात्र रह जानेपर छानकर इस तेलका लेप करो तो व्रणग्रंथि दूर हो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे व्रणशोथ-व्रण-अग्निदग्ध-व्रणग्रंथिरोगाणा यत्न निरूपणं नामैकात्रिंशस्तरंगः ॥ ३१ ॥

॥ भग्नरोग-नाडीव्रणरोग ॥

चिकित्सा भग्नरोगस्य तथा नाडीव्रणस्य हि ।
नेत्ररामामिते भङ्गे लिख्यते च यथाक्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थः— इस ३२ वें तरंगमें भग्नरोग और नाडीव्रणकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

जो चोट आदि लगनेसे हड्डी जोडपरसे उखड जावे या टूट जावे तो उसपर वहीं तुरंत गीले कपडेकी पट्टी बांधकर ऊपरसे ठण्डा पानी डालो, नंतर किसी अस्थिभेद ज्ञाता पुरुषसे यत्न कराओ. इस विकारपर सेक करो या पट्टी बांधो सो सब शीतल उपाय करो. पट्टी बहुत कडी खीचकर मत बांधो क्योंकि ऐसा करनेसे त्वचापर शोथ होकर चमडी पक जावेगी. इसलिये साधारण दशाकी ढीली पट्टी बांधो तो हड्डी यथार्थ जमकर लाभकारी हो.

भग्नरोगयत्न १— भग्नस्थानका शोधकर उसपर गीली औषधियां दर्भा (डाभ एकप्रकारका घास)से कसकर बांधो या कीचड लगाओ तो हड्डी अच्छी हो जावेगी.

तथा २— मजीठ और महुआको ठंडे पानीमें पीसकर अस्थिभंग स्थानपर लगाओ तो वह अच्छा होगा.

तथा ३— १०० वार पानीसे धोये हुए घीमें साठी चांवल पीसकर लेप करो तो अस्थिभंग अच्छा होगा.

तथा ४— बेरीकी लाख, पीपलकी लाख, गेहूं और कहूके बक्कलको घीमें पीसकर दूधके साथ ५ टंक नित्य सेवन कराओ तो अस्थिभंग अच्छा हो.

तथा ५— लाख, कहूके बक्कल, असगंध, खरेंटी और गूगल इनका २ टंक चूर्ण दूधके साथ नित्य सेवन कराओ तो अस्थिभंग दूर हो.

तथा ६— गेहूंको अधजले करके समान फिटकरीके साथ पीसलो और यह ५ टंक चूर्ण १० टंक मधुके साथ ७ दिन चटाओ तो अस्थिभंग दूर हो.

तथा ७— आंवले, मैदालकडी और तिल्लीको शीतल जलमें पीसकर चोटपर लेप करो तो अस्थिभंग कुशल हो.

तथा ८– उत्तम ममाई (जो कि मनुष्यके माससे बनती है) खिलाओ तो उखडी हुई या टूटी हुई हड्डी अच्छी हो.

तथा ९– २ टंक लाखका चूर्ण दूधके साथ १५ दिन पर्यंत पिलाओ तो टूटी हुई हड्डी जुड जावेगी. (लाख पीपल वृक्ष या बेरीकी लेना).

तथा १०– २ या तीन रत्ती पीली कौडीका चूर्ण उष्ण दुग्धके साथ पिलाओ तो टूटीहुई हड्डी जुड जावेगी. ये सब वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ११– बंबूलके बक्कल, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिम्पली और इन सबके समान गूगलका २ टंक चूर्ण १५ दिन पर्यंत दूधके साथ पिलाओ तो अस्थिभंग दूर होकर शरीर वज्रसा दृढ हो जावेगा.

तथा १२– बंबूलके बक्कलका २ टंक चूर्ण १ मास पर्यंत मधुके साथ चटाओ तो शरीर वज्रसा होजावे. यह योगतरंगणीमें लिखा है.

तथा १३– मेंथी, मैदालकडी, सोंठ और आंवलेको गोमूत्रमें महीन पीसकर चोटपर लेप लगाओ तो मुद्गर आदिकी चोटभी दूर हो.

तथा १४– मांस या मांसरस (सोरवा), दूध, घी और सर्व पौष्टिक औषधियां ये सब पदार्थ भग्नरोगवालेको सेवन योग्य है.

तथा १५– नमक, कटु वस्तु, खार खटाई, मैथुन, श्रम, घाममें भ्रमण और रूखा अन्न भक्षण ये इस रोगीको सेवन अयोग्य हैं.

विशेषतः– बालक और तरुणको अस्थिभंग हो तो शीघ्र अच्छा हो. परन्तु वृद्ध तथा रोगीको लगीहुई चोट शीघ्र अच्छी न होगी.

नाडीव्रणरोगयत्न १– छोटे मुखका नाडीव्रण जिसके मुखसे सर्वदा पीव वहती रहती हों उसके मुखपर थूहर या आकके दूधमें भींगीहुई दारुहल्दीको घिसकर बत्ती बनाके धरो तो वह व्रण भरकर अच्छा होगा.

तथा २– किरवारेकी जड, हल्दी, और मजीठको मधुमें पीसकर बत्ती बनाकर व्रणके मुखमें चलाओ तो नाडीव्रण अच्छा हो.

तथा ३– चमेलीके पत्तोंका रस, आकडेकी जड, किरमालेकी जड, दारूणी, सेंधानोंन, सोंचरनोंन और जवाखार, इनको महीन पीसकर छोटे मुखवाले व्रणके मुखपर युक्तिसे धरो तो वह व्रण अच्छा हो जावे.

तथा ४– जात्यादि घृत तथा जात्यादि तैलसेभी नाडीव्रण अच्छा होगा.

तथा ५– त्रिफला, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली और इन सबके समान शुद्ध गूगलका २ टंक चूर्ण नित्य शीतल जलके साथ पथ्यसे ४९ दिन पर्यंत सेवन कराओ तो सर्व प्रकारके नाडीव्रण दूर हों.

तथा ६– गूगल और सिंदूरको महीन पीसकर व्रणमें युक्तिसे भरो तो नाडीव्रण अच्छा हो. ये सर्व भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ७– मधु या नमक या तैलकी बत्ती चलाओ तो दुष्टव्रण अच्छा हो.

तथा ८– सज्जी, जवाखार, कपेला, महदी, सुहागा, श्वेत खैरसारको गोघृतमें १ दिन पर्यंत खरल करके व्रणमें भरो तो व्रणका शोथ, और कृमि दूर होकर व्रण भर जावेगा. यह स्वर्जादिघृत चक्रदत्तमें लिखा है.

तथा ९– सम्भालुके पत्तोंके रसमें पकाये हुए तेलकी बत्ती व्रणमें दो तो व्रण अच्छा हो. यह निर्गुंडीतैल वृंदमें लिखा है.

तथा १०– १ पैसेभर राल, १ पैसेभर सफेदा, २ पैसेभर श्वेत मोंम, १ पैसेभर मुर्दासिंगी, इनमेंसे मोंमको छः पैसेभर उष्ण घीमें पिघलाकर शुद्ध करलो और शेष औषधोंका महीन चूर्ण उसमें मिलाकर कांसेकी थालीमें जलके साथ १०८ बार हाथसे मसमसकर धोओ और इसको व्रणमें भरो तो व्रण अच्छा हो. इसे श्वेत मलहम कहते हैं.

तथा ११– शुद्ध पारा, शुद्ध आंवलसार गंधक, इन दोनोंके समान मुर्दासिंगी, इन तीनोंके समान कपेला, कुछ नीला थोथा, इन सबोंसे चौगुणा घी, और कुछ नीमके पत्तोंका रस इन सबको २ दिन पर्यंत खरल करके व्रणपर लगाओ तो व्रणमात्र अच्छे हों. यह वैद्यरहस्यमें लिखा है.

तथा १२– मस्तंगीकी गोंद, (रूमीमस्तंगी) मैंढल, नीलाथोथा, सज्जी, सुहागा, सिंदूर, कपेला, मुर्दासिंगी, गूगल, काली मिर्च, सोनगेरू, इलायची, गंधाविरोजा, सफेदा, हिंगुल और शुद्ध गंधक इन सबका चूर्ण करो, और इनमेंसें किसी १ के बराबर मोंमको गोघृतमें पिघलाकर शुद्ध करो नंतर उक्त चूर्णमें मिलाकर दोदिन पर्यंत खरल करके व्रणमें भरो तो शारीरिक तथा आगंतुक दुष्टव्रण प्रभृति सर्व अच्छे होवेंगे.

तथा १३– नीलाथोथा, कपेला, मृर्दासिंगी, श्वेत खैरसार, सिंदूर, मोंम, हिंगुल, केशर और उन सबके समान गोघृत लेकर प्रथम गोघृतमें नीलाथोथा और मोंम पिघलाओ और पीछेसे अवशिष्ट औषधोंका चूर्ण डालकर उतार लो नंतर ठंडा हो जानेपर कांसेकी थालीमें जलके साथ १ दिन पर्यंत मंथन करके व्रणपर लगाओ तो व्रणमात्र तथा व्रणका घाव भरके अच्छा हो. ये वैद्यकुतुहलमें लिखे हैं.

तथा १४– ३ पैसेभर हिंगुल, १ पैसेभर मुर्दासिंगी, ३ पैसेभर सज्जी, प्रथम १ पैसेभर नीमके पत्तोंकी टिकियाको गोघृतमें पकाकर उसीमें ३ पैसेभर श्वेत मोंम पिलाओ और शेष औषधोंका चूर्ण इसीमें डालकर व्रणमें भरो तो व्रणमात्र अच्छे हों.

तथा १५– १ पैसेभर राल, १ पैसेभर कत्था, १ पैसेभर काली मिर्च, ४ पैसेभर गोघृत, ४ पैसेभर चमेलीका तेल, इन सबको लोहेकी कडाहीमें पीसकर विंवाई (पांवकी एडीमें फटीहुई दरारें)में भरो तो विंवाई अच्छी हो.

तथा १६– नीमके पत्तोंका सेरभर रस, पावभर गोघृतके साथ कडाहीमें औंटाओ रस जलकर घृतमात्र रह जानेपर उसमें ४ पैसेभर रार, १ पैसेभर नीलाथोथा, १ पैसेभर मुर्दासिंगी, इनका महीन चूर्ण डालकर एक जीव करदो इस मलहमको कपडेकी पट्टीपर लगाकर व्रणपर चिपकाओ तो व्रण निश्चय अच्छा हो.

तथा १७– मैंनसिल, मजीठ, लाख, दोनों हल्दी इन सबको घी और मधुके साथ महीन पीसकर त्वचापर लेप करो तो व्रणजन्य विकारसे काली पडी हुई त्वचाका वर्ण पूर्ववत् हो जावेगा.

तथा १८– अपामार्ग (आधेझारे)के बीजे और तिल दोनोंको महीन पीसकर लेप करो तो वातजन्य नाडीव्रण दूर हो.

तथा १९– तिल, मधु और घीको एकत्र पीसकर लेप करो तो पित्तका नाडीव्रण दूर हो.

तथा २०– तिल, मजीठ, हस्तीदंत, इनको महीन पीसकर जलके साथ लेप करो तो पित्तका नाडीव्रण दूर हो.

तथा २१– तिल, मुलहटी, दात्यूणी, नीमकी छाल या पत्ते, सेंधानोंन इन सबको महीन पीसकर लेप करो तो पित्तका नाडीव्रण दूर हो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे भग्नरोग-नाडीव्रणरोगयत्ननिरूपणं नाम द्वात्रिंशस्तरङ्गः ॥ ३२ ॥

॥ भगन्दर-उपदंश ॥

**भगन्दरस्य रोगस्य चोपदंशस्य वै क्रमात् ।**
**रामाग्निप्रमिते भंगे चिकित्सा लिख्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थः– अब आगे तेतीसवें तरंगमें भगंदर और उपदंश रोगकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

भगंदररोगयत्न १– वैद्यको चाहिये कि भगंदरकी उत्पत्ति होतेही जोंक आदि किसीभी उपायसे वहांका रुधिर इस प्रकारसे निकालदे कि जिसमें फुनसी न पकने पावे तो भगंदर दूर होगा.

तथा २– साठीकी जड, गुरच, सोंठ, मुलहटी और बडके कोमल पत्तोंको महीन पीसकर और पकाके सहता सहता लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा ३– चमेलीके पत्ते, वडके पत्ते, गुरच, सोंठ और सेंधानोंन इन सबको छाछमें महीन पीसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा ४– हल्दी, आकके पत्ते, सेंधानोंन, गूगल और कनेरके पत्ते इन सबका चूर्ण तेलमें पकाकर वह तेल लगाओ तो भगंदर दूर हो.

तथा ५– गूगल, त्रिफला और पिम्पलीका १ टंक चूर्ण जलके साथ सेवन कराओ तो भगंदर, शोथ, गुल्म, अर्श, ये सर्व नाश हों. इसे नवकार्षिगूगल कहते हैं.

तथा ६– चतुर वैद्य या सथिया भगंदरके व्रणके चीरकर उसपर व्रणयत्न लिखित मलहमादि लगावे तो भगंदर दूर हो.

तथा ७– रसोत, दोनों हल्दी, निसोत, मजीठ, नीमके पत्ते, तेजबल और दात्यूणीको महीन पीसकर भगंदरपर लेपकर और इन्हींके जलसे धोओ तो भगंदर दूर हो.

तथा ८– कुत्तेकी हड्डीके चुवे (मज्जा)को गधेके रक्तमें पीसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा ९– बिल्लीकी हड्डी त्रिफलाके रसमें पीसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा १०– बिल्लीकी हड्डीकी राख और कुत्तेकी हड्डीकी राख दोनोंको गोघृतके साथ लोहेके पात्रमें घिसकर लेप करो तो भगंदर दूर हो.

तथा ११– २ भाग शुद्ध पारा और ४ भाग ताम्बेका मैलका कलहरीके रसमें १५ दिन खरल करके ताम्बेके सम्पुटमें बंद करदो और उस सम्पुटको वालू भरी हंडीके बीचमें धरके ८ प्रहर पर्यंत आंचदो स्वांग शीतल हो जानेपर निकालकर उसमें घी, मधु, और सुहागा, मिलाओ नंतर इस मिश्रणको पक्की मूसमें धरकर आंचदो (जैसे सुनार चांदी गलानेमें नलीसे फूंक देता है) जब वह पदार्थ उसीमें घूमने लगे तब निकालकर उसमेंसे ३ रत्तीकी मात्रा मधुके साथ दो और ऊपरसे त्रिफलाका क्वाथ पिलाकर पथ्यसे रक्खो तो भगंदर निश्चय अच्छा होगा. इसे रूपराजरस कहते हैं.

तथा १२– १ भाग पारा, २ भाग आंवरासार गंधक दोनोंकी कजलीको गंवारपाठेके रसमें खरल करके तांबेके सम्पुटमें बंद करो और इस सम्पुटको राखभरी हंडीमें गाडकर १ दिनपर्यंत आंचदो अनंतर स्वांग शीतल (आपही आप ठंडी) हो जानेपर निकालकर जमीरीके रसकी ७ पुट दो जो इसमेंसे १ रत्तीकी मात्रा मधु या घीके साथ चटाकरके ऊपरसे मूली या लहसन पिलाओ तो भगंदर दूर हो. इसके सेवनवालेको मीठा अहार, दिवस निद्रा, मैथुन और शीतल भोजनका बचाव करना चाहियें. इसे रविसुंदर रस कहते हैं, यह रससिंधुमें लिखा है.

तथा १३– तिल्ली, नीमकी छाल, और महुआ इन सबको शीतल जलके साथ पीसकर लेप करो तो पित्तज भगंदर दूर हो.

भगंदरपर वर्जित पदार्थ– श्रम, मैथुन, युद्ध, घोडे आदिपर चढना, और ऊगा हुआ (अंकुरित) अन्न खाना भगंदर अच्छा होनेपरभी १ वर्ष पर्यंत वर्जित हैं. ये सब भावप्रकाशमें लिखे हैं.

उपदंशरोगयत्न १– जोंक, लगाकर रोग स्थानका रक्त निकलवा दो तो उपदंश दूर हो. परन्तु घाव पकना नहीं चाहिये.

तथा २– साठीकी जड, गिलोय, सोंठ, मुलहटी और वडके कोमल पत्तोंको जलमें औंटाकर इस जलसे लिंगेंद्रियको धोओ तो उपदंश दूर हो.

तथा ३– लिंगेंद्रियकी सीर (फस्त) छुडवाओ तो उपदंश अच्छा होगा.

तथा ४– बडके कोमल पत्ते, कहूकी छाल, जामुनकी छाल, लोद, हर्रकी छाल, और हल्दी इन सबको जलमें पीसकर लेप करो तो गर्मी दूर हो.

तथा ५– चतुर्थ यत्नोक्त (ऊपरकों लिखा सो) औषधोंके जलसे धोओ तो लिंगेंद्रियका शोथ तथा पकावभी दूर हो.

तथा ६– त्रिफलाके क्वाथ या भंगरेके रस या कमलके जलसे धोओ तथा लेप करो तो उपदंश दूर हो.

तथा ७– मिझने (मारवाडमें प्रसिद्ध) वृक्षकी छाल, अथवा अनारकी छालको जलमें पीसकर लेप करो तो उपदंश अच्छा हो.

तथा ८– सुपारीको जलमें घिसकर इन्द्रीपर लगाओ तो गर्मी अच्छी हो.

तथा ९– त्रिफलाको कढाईमें जलाकर उस भस्मको मधुके साथ इन्द्रीपर लेप करो तो उपदंश दूर हो.

तथा १०– पटोल, नीमकी छाल, त्रिफला, चिरायता, खैरसार, विजयसार, और गूगल इनका क्वाथ पिलाओ तो गर्मी दूर हो.

तथा ११– चिरायता, नीमकी छाल, त्रिफला, पटोल, कणगचकी जड, आंवला, खैरसार और विजयसारका क्वाथ घृतमें पकाकर इस घीका लेप या भोजनके साथ खिलाओ तो उपदंश दूर हो. इसे भूनिंबादिघृत कहते हैं.

तथा १२– कुष्ट और व्रणयत्नलिखित घृतोंको लेप करो या खिलाओ तो उपदंश दूर होगा.

तथा १३– विरेचन दो तो उपदंश दूर हो.

तथा १४– ८ पैसेभर बडी हर्र, १ पैसेभर श्वेत कत्था, १ पैसेभर नीलाथूथा इन सबको १०० पके नींबूके रसमें खरल करके १ मासे प्रमाणकी

गोलियां बनाओ और प्रतिदिन दहीके साथ १ गोली १५ दिनतक खिलाकर पथ्यसे रक्खो तो गर्मी नाश हो.

तथा १५– १ भाग नीलाथोथा, १ भाग कथ्था, २ भाग मुर्दासिंगी, और २ भाग सुपारीकी राखको महीन पीसकर उपदंशपर भुरकाओ तो छाले सूखकर उपदंश मिट जावेगा.

तथा १६– शुद्ध पारा, शुद्ध गंधक, हरताल, सिंदूर, और मैनसिलको ताम्बेके पात्रमें ताम्बेके घोटेसे घृतके साथ ३ दिनतक घोटकर इन्द्रीपर लेप करो तो उपदंश दूर हो, ये सब भावप्रकाशमें लिखे हैं.

लिंगवर्तीयत्न १– मसे दूर होनेकी औषधोंसे इसकी चिकित्सा करो तो लिंगवर्ती (लिंगार्श) दूर होगा.

शूकरोगयत्न १– १ विष दूर करनेके यत्न करो, २ जोंक लगाकर इन्द्रीका विकारी रक्त निकाल दो, ३ लिंगविरेचन अर्थात् इन्द्री जुलाब दो, ४ अल्पाहार कराओ, ५ त्रिफलाके क्काथके साथ गूगल सेवन कराओ, ६ औषधोंके लेप तथा सेक लगाओ, ७ खेरंटीका तेल मर्दन करो, ८ शीतल प्रयत्न करो, ९ और दारुहल्दी, तुलसी, मुलहटी, धमासा इन्हें तेलमें पकाकर उस तेलका मर्दन करो. ये नवों यत्नमेंसे प्रत्येक यत्न १८ हों प्रकारके शूकरोगोंको नाश कर सक्ता है, ये सब यत्न सर्व संग्रहमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे भगंदरोपदंश-लिंगवर्ती-शूकरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम त्रयस्त्रिंशस्तरंगः ॥ ३३ ॥

## ॥ कुष्टरोग ॥

चिकित्सा कुष्टरोगस्य नराणां सुखदायिनी ।
वेदवैश्वानरे ह्यस्मिन् तरंगे कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब इस चौंतीसवें तरंगमें मनुष्योंको सुख प्राप्त करनेवाली कुष्टरोगकी चिकित्साका कथन करते हैं.

कुष्टरोगयत्न १– हरेकी छाल, कणगचकी जड, सरसों, हल्दी, बावची, सेंधानोंन, और नागरमोथा इन सबको गोमूत्रमें पीसकर कुष्टपर लगाओ तो कुष्ट अच्छा हो. इसे पथ्यादि लेप कहते हैं.

तथा २– बावचीके चूर्णको अदरखके रसकी पुट देकर कुष्टपर उबटन करो तो कुष्ट दूर हो.

तथा ३– निम्बपंचांग, दोनों हल्दी, त्रिफला, सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, ब्राह्मी, गोखरू, शुद्ध भिलावां, चित्रक, वायविडंग, सार, वाराहीकंद, गुरच, बावची, किरमाला, मिश्री, कूट, इन्द्रयव, पाठा और खैरसार इन सबके चूर्णको नागरमोथाके रसकी १ पुट, निम्बपंचांगकी ७ पुट और भंगरेके रसकी ७ पुट देकर छायामें सुखालो नंतर पीसकर इसमेंसे अधेलेभर चूर्ण शुभदिनसे मधु या खैरसारके क्वाथके साथ प्रातःकाल उष्ण जलसे कुष्ठरोगीको यह विरेचन दो और अनुदिन कुछकुछ बढाते बढाते २ टकेतक बढाकर ऊपरसे घृतसहित हलका भोजन कराओ तो विचर्चिका, उदुम्बर, पुंडरीक, दाद, कापालिक, किटीभ, अलस, सतारु, विस्फोटक इतने सब कुष्ठ तथा विसर्परोग ये सर्व दूर होवेंगे. यह निम्बपंचांगावलेह ब्रह्माजीने मार्कण्डेयऋषिजीको बताया है.

तथा ४– ५ टकेभर बावची, ५ टकेभर शुद्ध गूगल, ३ टकेभर शुद्ध सोनामक्खी, २ टकेभर सार, ३ टकेभर गोरखमुंडी, १ टकेभर कणगच, ४ टकेभर खैरसार, २ टकेभर गुरच, २ टकेभर निसोत, २ टकेभर नागरमोथा, १ टकेभर वायविडंग, १ टकेभर हल्दी, १ टकेभर तज, ५ टकेभर निम्बपंचांग, ३ टकेभर त्रिफला और २ टकेभर चित्रक इन सबके चूर्ण घृत और मधुके साथ मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो और प्रतिदिन प्रातःकाल १ गोली गोमूत्रके साथ सेवन कराओ तो कुष्टमात्र, वातरक्त, पांडुरोग, उदररोग, प्रमेह और गुल्म ये सब दूर होकर वृद्धभी तरुणसदृश बलवान हो जाता है. इसे स्वायुम्भुव गूगल कहते हैं.

तथा ५– चित्रक, त्रिफला, सोंठ, मिर्च, पिम्पली, जीरा, कलौंजी, बच, सेंधानोंन, अतीस, चव्य, कूट, इलायची, जवाखार, वायविडंग, अजमोद, नागरमोथा, देवदारु और इन सबके समान शुद्ध गूगल, इन सबके चूर्णको मधुके साथ ४ मासे प्रमाणकी गोलियां बनाकर एक गोली नित्य भोजनके समय खिलाओ तो कुष्टमात्र, व्रणमात्र, कृमि, संग्रहणी, मुखरोग,

अर्श, गृध्रसी और गुल्म ये सब रोग दूर होवेंगे. इसे किशोरगूगल कहते हैं.

तथा ६– १ सेर शुद्ध भिलावां १६ सेर जलमें औंटाकर औंटते समय, २ सेर गुर्च कूटकर डालदो औंटते औंटते चतुर्थांश रह जानेपर उतारकर छानलो और इसमें १ सेर गोघृत, ४ सेर गोदुग्ध, १ सेर मिश्री, ऽ॥ आधसेर मधु मिलाकर मंद मंद आंचसे पकाओ दृढ हो जानेपर उतारकर उसमें बावची, पवारके बीज, नीमकी छाल, हर्रकी छाल, आंवले, सैंधव, नागरमोथा, इलायची, नागकेशर, पित्तपापडा, पत्रज, नेत्रवाला, खश, चंदन, गोखरू, कचूर और रक्तचंदन, ये सब दो दो टंकका महीन चूर्ण मिलादो जो इसमेंसे प्रतिदिन १ टकेभर प्रातःकाल जलके साथ सेवन कराओ तो समस्त कुष्टमात्र, वातरक्त और अर्श ये सर्व रोग दूर होवेंगे. इसके सेवनपर श्रम करना, घाममें विचरना, अग्नि तापना, खटाई, मांस, दही, खाना, तैलमर्दन और मार्गगमन इतने कर्म वर्जित हैं. इसे अमृतभल्लातकावलेह कहते हैं.

तथा ७– नीमकी छाल, गौरीसर, मजीठ, त्रायमाण, त्रिफला, नागरमोथा, पित्तपापडा, बावची, जवासा, बच, खैरसार, रक्तचंदन, पाठा, सोंठ, भारंगी, अडूसा, चिरायता, कूडेकी छाल, इन्द्रायणकी जड, चित्रक, गुरच, निसोत, मूर्वा, वायविडंग, इन्द्रयव, मानपात (रामबाण), बकायन, पटोल, दोनों हल्दी, पिम्पली, किरमालेका गूदा, कलहारीकी जड, सतोन्यू (औषधविशेष) शुद्धवेत, चिरमू, रास्ना, साठीकी जड, दात्यूणी, शुद्ध जमालगोटा, भंगरा, कठसेला[1], अंकोटेक[2], साखोटक (भूतावास) ये सब दो दो टकेभर कूटकर १६ सेर पानीमें औटाओ और चतुर्थांश रह जानेपर उतारकर छानलो नंतर ४ सेर शुद्ध भिलावां १६ सेर जलमें औंटाकर चतुर्थांश रह जानेपर छानलो और पूर्व निर्मित ४ सेर पानीमें मिलाकर इस ८ सेर पानीमें १०० टकेभर गुडकी चासनी बनाओ पश्चात् सोंठ, मिर्च,

---

१ एक प्रकारका कटीला पौधा जिसके पीत पुष्प महादेवजीको विशेष प्रिय होते हैं.

२ एक प्रकारका कटीला वृक्ष जिसके बैंगनीफल जामुन सदृश होते हैं यह वृक्ष "अकोल" नामसे प्रसिद्ध है.

पिम्पली, नागरमोथा, वायविडंग, चित्रक, चंदन, कूट, अजमोद, पत्रज, नागकेशर, इलायची ये सब एक एक टकेभर, सेंधानोंन २ टकेभर, त्रिफला ३ टकेभर इन सबका चूर्णकर उक्त चासनीमें डालदो और शुभ दिन देख इसमें नित्य २ टकेभर खिलाकर खटाई और उष्ण वस्तुओंका पथ्य रक्खो तो कुष्टमात्र, व्रणमात्र, अर्श, कृमि, रक्तपित्त, उदावर्त, कास, श्वास, भगंदर ये सर्व रोग दूर होकर तरुणाई, शरीरकी कांति और क्षुधाकी वृद्धि होवेगी. इसे महाभल्लातकावलेह कहते हैं.

तथा ८– मजीठ, त्रिफला, कुटकी, वच, नीमकी छाल, दारुहल्दी, और गुरच इन सबके ५ टंक चूर्णका क्राथ प्रतिदिन पिलाओ तो कुष्टमात्र, वातरक्त, विस्फोटक और विसर्प ये सर्व रोग दूर होवेंगे, इसे लघुमंजिष्ठादि क्राथ कहते हैं.

तथा ९– मजीठ, बावची, पवांड, नीमकी छाल, हर्रकी छाल, हल्दी, आंवले, अडूसा, सतावरी, खरेंटी, गंगेरणकी छाल, मुलहटी, महुआ, कटियाली, पटोल, खश, गिलोय, रक्तचंदन इन सबके ५ टंक चूर्णका क्राथ प्रतिदिन पिलाओ तो सब कुष्ट और वातरक्त दूर होगा, इसे मध्यम मंजिष्ठादि क्राथ कहते हैं.

तथा १०– मजीठ, इन्द्रयव, गुरच, नागरमोथा, बच, सोंठ, हल्दी, दोनों कटियाली, नीमकी छाल, पटोल, कूट, हल्दी, भारंगी, वायविडंग, चित्रक, मूर्वा, देवदारु, जलभंगरा, पिम्पली, त्रायमाण, पाठ, शतावरी, खैरसार, विजयसार, त्रिफला, चिरायता, बकायन, किरमालेकी गिरी, निसोत, रक्तचंदन, बावची, वरणा, दात्यूणी, सारवोट, अडूसा, पित्तपापडा, गौरीसर, अतीस, जवासा, और इन्द्रायणकी जड, इन सबके ५ टंक चूर्णका क्राथ प्रतिदिन सेवन कराओ तो अठारहों प्रकारका कुष्ट, वातरक्त, रक्तविकार, विसर्परोग और त्वचाशून्य ये सर्व रोग दूर हों, इसे बृहन्मंजिष्ठादिक्राथ कहते हैं.

तथा ११– काली मिर्च, निसोत, नागरमोथा, हरताल, देवदारु, दोनों हल्दी, छड, कलौंजी, आकका दूध, गोवरका रस ये सब धेले धेलेभर, १ पैसेभर सिंगीमोहरा, १ सेर कडुवा तेल, ४ सेर पानी, और ८ सेर गोमूत्र इन सबको एकत्र कर मंदाग्निसे औटाओ और रसादिक जलकर तेल मात्र

रह जानेपर उतार छानके मर्दन करो तो कुष्ठमात्र दूर हो. इसे लघुमरीच्यादि तैल कहते हैं.

तथा १२– काली मिर्च, निसोत, दात्यूणी, आकका दूध, गोवरका रस, देवदारु, दोनों हल्दी, छड, कूट, रक्तचंदन, इन्द्रायणकी जड, कलौंजी, हरताल, मैनसिल, कन्हेरकी जड, चित्रक, नागरमोथा, कलहारीकी जड, वायविडंग, पवाड, कूडेकी छाल, सिरसकी जड, नीमकी छाल, सतोनेकी छाल, गुरच, थूहरका दूध किरमालेका गूदा, खैरसार, बावची, बच, मालकांगनी, ये सर्व टके टकेभर, २ टकेभर सिंगीमुहरा, चार सेर कडुवा तेल, और १६ सेर गोमूत्र इन सबको एकत्र कर मंद मंद आंचसे औंटाओ और गोमूत्रादि जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानके इस तेलका मर्दन करो तो कुष्ठमात्र, खुजली, ब्योंचो, दाद, मुखछाया ये सब रोग दूर होंगे. यह तेल मनुष्य तो क्या वरन हाथी घोडे आदि पशुओंकोभी वातहारक और जीवनप्रद है इसे महामरीच्यादि तैल कहते हैं.

तथा १३– उत्तम हरतालके पत्रोंको चित्रकके रसमें १ दिन और साठीके रसमें १ दिन खरल करके टिकिया बनाकर सुखालो, नंतर यह टिकिया साठीके पंचांग खारमें रखकर इस प्रकारसे दाबो कि जिसमें धुवां न निकलनेपावे और इसे चूल्हेपर चढाकर मंद मंद बढती हुई आंचसे ४ दिन रात्रि निरंतर तपाके स्वांग शीतल हो जानेपर निकाललो जो वह तोलमें पूर्ववत् (पहिलेथी जितनी), निर्धूम, और श्वेतवर्णकी हो आई हो तो उसमेंसे २ रत्तीकी मात्रा गुरचके क्वाथके साथ सेवन कराओ अठारहों प्रकारका कुष्ठ, वातरक्त, उपदंश, फिरंगवाय ये सब रोग दूर होंगे. इसके सेवन करनेवालेको नोंन, खटाई, कटुरस और धूपमें फिरना निषिद्ध है यदि नोंन बिना न रह सके तो सेंधानोंन और मिठाई खिलाओ, इसे तालकेश्वर रस कहते हैं.

तथा १४– पारा, शुद्ध गंधक, ताम्बेश्वर, लोहसार, गूगल, चित्रक, शिलाजीत, कुचला, बच, अभ्रक और किसी १ के प्रमाणसे चौगुणें कणगचके बीज इन सबके चूर्णको पारेगंधककी कजली मिलाकर इसमेंसे २ टंक मिश्रण मधु और घृतके साथ सेवन कराओ, और ऊपरसे चावल दूध

खिलाओ तो गलितकुष्टभी दूर होकर रोगीका शरीर कामदेव सदृश सुन्दर हो जावेगा. इसके भक्षण समयमें स्त्रीप्रसंग करना वर्जित हैं, इसे गलितकुष्ठादि रस कहते हैं.

विभूतिकुष्टयत्न १– कूट, मूलीके बीज, सरसों, केशर और हल्दीको सिरसके जलमें पकाकर लेप करो तो बहुत पुरानी विभूतिभी दूर होगी.

तथा २– केलेका खार, हल्दी, दारुहल्दी, मूलीके बीज, हरताल, देवदारु और शंखका चूना इनको नागरवेलके पानके रसमें महीन पीसकर लेप करो तो विभूति-(से हुआ) दूर हो.

चर्मदलकुष्टयत्न १– अमचूर और सेंधानोंन जलके साथ ताम्रपात्रमें ताम्बेके घोटेसे महीन पीसकर लेप करो तो चर्मदल दूर हो.

पामायत्न (पांव) १– १ टकेभर जीरा और ५ टकेभर सेंदुर कडवे तैलमें पीसकर पकाके लेप करो तो पामा (खुजली) अच्छी हो.

तथा २– मजीठ, त्रिफला, लाख, कलहारीकी जड, हल्दी, और आंवरासार गंधक इन सबको पीसकर घाममें उष्ण करो और लेप करो तो पामा (खुजली) दूर हो.

तथा ३– पारा, दोनों जीरे, दोनों हल्दी, काली मिर्च, सिंदूर, आंवलासार गंधक, इन सब औषधोंके चूर्णको पारेगंधककी कजलीके साथ गोघृतमें १ दिन खरल करके मर्दन करो तो पामा दूर हो.

तथा ४– पारा और आंवलासार गंधककी कजली, नीलाथोथा, हल्दी, महदी, तीत्रा, अजवान, मालकांगनी इन सबका चूर्ण और घृतमें पिघलाया हुआ मोंम इन सबको गौके घृतमें १ दिन पर्यंत खरल करके मर्दन करो तो पामा (खुजली) आदि रुधिर विकार सर्व दूर हो.

तथा ५– २ टंक शुद्ध आंवलासारगंधक और तीन मासे नीलाथोथा दोनों पानीके साथ महीन पीसकर गोली बनाओ और इस गोलीको महीन कपडेमें बांधकर गेहूंके मसले हुए अलौने आटेसे छापदो फिर उस गोलीसहित आटेकी वाटी बनाकर सेक डालो नंतर वह गोली कपडेसहित निकालकर दूसरी वाटीमें धरो इसीप्रकार ४ पांच वाटियां बनाकर घीमें तल डालो

या घीशक्करमें चूरमा (मलीदा) बनालो जो यह चूरमा इसीप्रकार ५ दिन-तक नित्य खिलाओ पामा (खुजली) आदि समस्त रक्तविकार दूर होवेंगे.

तथा ६– सेंधानोंन, पवारके बीज, सरसों और पिम्पलीको कांजीमें महीन पीसकर लेप करो तो पामा नाश हो.

कछदादयत्न १– आकके पत्तोंका रस, हल्दीका क्काथ और कडवा तेल इन तीनोंको एकत्र कर मंदाग्निसे पकाओ रस जलकर तेलमात्र रह जाने-पर छानकर मर्दन करो तो कछदाद दूर हो. यह अर्कतैल कहाता है.

तथा २– मैनसिल, हीराकसी, आंवलासार गंधक, सेंधानोंन, सोनामु-खी, पथ्थरफोडी, सोंठ, पिम्पली, कलहारी, कण्हेर, पवांर, वायविडंग, चि-त्रक, दात्यूणी, और निम्बके पत्ते ये सब अधेले अधेलेभर लेकर जलके साथ महीन पीसो और इस पानीको २ सेर कडवे तेलके साथ पकाकर पकते-ही समय इसमें आकका दूध, थूहरका दूध, छटाक छटाकभर और ४ सेर गोमूत्र डालदो जब जलते जलते रसादिक जलकर तेलमात्र अवशिष्ट रह जावे तब छानकर मर्दन करो तो असाध्य कछदाद, पामा, खुजाल, तथा रुधिरप्रकोपज समस्त रोग दूर होवेंगे इसे कछराक्षसतैल कहते हैं.

दद्रुकुष्टयत्न १– कूट, वायविडंग, पवांडके बीजे, सरसों, तिल, सेंधानोंन इन सबको खटाईसे महीन पीसकर लेप करो तो दद्रु नाश हो.

तथा २– दूब, हर्रकी छाल, सेंधानोंन, पवांरके बीजे, कण्हेरकी छाल इन सबको कांजी या छाछमें पीसकर लेप करो तो दाद, कछदाद, और खुजाल ये सब दूर होवेंगे.

श्वित्रिकुष्टयत्न १– बहेडेकी छाल, हर्रकी छाल, कटूंबर (केथका गूदा) और बावची इनका क्काथ पिलाओ तो श्वित्रिकुष्ट दूर हो.

तथा २– हरताल, मैनसिल, चिरमी और चित्रक इनको गोमूत्रमें मही-न पीसकर लेप करो तो श्वित्रिकुष्ट दूर हो.

तथा ३– विष्णुक्रांति (तिलकंठी) शंखाहोली, बावची, खैरसार, और आंवलेके चूर्णका सेवन करके पथ्यसे रक्खो तो श्वित्रिकुष्ट दूर हो ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ४– ४ टकेभर हल्दी, ६ टकेभर गौका घी, ४ सेर दूध, ५० टकेभर मिश्री, १ टकेभर सोंठ, १ टकेभर काली मिर्च, १ टकेभर पिम्पली, १ टकेभर तज, १ टकेभर पत्रज, १ टकेभर वायविडंग, १ टकेभर नागकेशर, १ टकेभर निसोत, १ टकेभर त्रिफला, १ टकेभर केशर, और १ टकेभर नागरमोथा इन सबको जुदे जुदे पीसकर घीमें सानलो और हल्दीका चूर्ण दूधमें डालकर दूधका खोवा बनालो नंतर मिश्रीकी चासनीमें यह घीयुक्त औषधी और हल्दीयुक्त खोवा डालकर १ टके प्रमाणकी गोली बनालो जो इसकी गोली नित्य खिलाओ कुष्ठ, खुजली, फोडे, और दाद ये सब दूर होवेंगे, इसे हरिद्रखंड कहते हैं.

तथा ५– पवांरके बीज, बावची, सरसों, तिल, कूट, दोनों हल्दी और नागरमोथा इनको छाछमें पीसकर लेप करो तो खाज, ब्योची, ये सर्व दूर हों.

कुष्ठमात्रयत्न १– उत्तम, निर्धूम, श्वेत, और बोझमें पहिलेके समान तबकिया हरतालकी भस्ममेंसे १ रत्तीकी मात्रा पुराने गुडके साथ २१ दिनपर्यंत सेवन करके ऊपरसे चनेकी रोटी, साठी धानके चांवल, और गौका घृत खिलाओ और नोंन, खटाईका पथ्य रखो तो १८ अठारहों प्रकारके कुष्ठ, वातरक्त और फिरंगवात ये सब दूर होंगे.

तथा २– २ टंक पारा, २ टंक शुद्ध गंधक, २ टंक हरताल, २ टंक मैनसिल, ५ टंक बावची, २ टंक धमासा, २ टंक सिंदूर, २ टंक दोनों हलदी इन सबको गौके घीमें महीन पीसकर लेप करो और दो प्रहरपर्यंत धूपमें बिठालकर स्नान कराओ तो कंडु, दद्रु, कृमी और सर्व कुष्टमात्र ३ दिनमें नाश होवेंगे. (धूपमें सक्ती देखके बैठना).

तथा ३– २५ टकेभर पलासकी जडके सूखे बकलोंको जलाकर इनकी राखको दृढ कोरी (नवीन) हंडीमें भरदो और इस राखके बीचमें २५ मासे उत्तम तबकिया हरताल दबाकर हंडीका मुंह सराईसे ढांकदो नंतर इसे कपडमिट्टीसे बंद करके सुखालो इस सूखी हंडीको चूल्हेपर चढाकर ११ ग्यारह प्रहरपर्यंत आंच दो और स्वांग शीतल हो जानेपर हरतालसहित राखको पीसकर कपड छान करके इसमेंसे १ रत्तीकी मात्रा १ मासे कच्चे

(बिनसेके) जीरेके चूर्णके साथ पानमें रखकर खिलाओ और ऊपरसे शीतल जल पिलाकर पवन और धूपके बचावसे चनेकी अलौनी रोटी खिलाओ तो १ मंडल (४० दिनका मंडल) पर्यन्त सेवन करनेसे १८ प्रकारके कुष्ठमात्र, व्रणमात्र, वातरक्त, पिडिका, और वातव्याधि ये सब रोग दूर होवेंगे.

तथा ४– १ टंक नीलाथोथा, १ टंक सुहागा, और ५ टंक बावचीको जलभंगरेके रसकी ७ पुट देकर लेप करो तो कुष्ठमात्र दूर हों. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ५– ५ टंक पारा, शंखका खार, आधेझारेका खार, तिलखार, साठीका खार, हर्रका खार, अडूसेका खार, पटोलका खार, अरंडका खार, जवाखार, सज्जी, सुहागा, नौसादर, आंवलासार गंधक, पांचोंनोंन, कूट, सोंठ, काली मिर्च, पिप्पली, डांसरेकी जड, कणगचकी जड, कलिहारीकी जड, हल्दी, जमीकंद, गोरखमुंडीका खार, कडूका खार, पिप्पलीका खार, राई, सरसों, सिंदूर, शिलाजीत, पापडखार, कपोल, लोद, थूहरकी जड, आककी जड, नीलाथोथा, चित्रक, और अर्कपंचांगखार, इन सबको एक एक टकेभर लेके गोमूत्रके साथ पीसलो नंतर यह औषधिमिश्रण, महिषीमूत्र, अश्वमूत्र, अजामूत्र, हस्तीमूत्र, उष्ट्रमूत्र, नीबूका रस, जंभीरीका रस, विजौरेका रस, नारंगीका रस, चनाखार, मुंगनेका रस और राईके संयोगकी बनी हुई सात धान्यकी कांजी ये सब एक ताम्रपात्रमें एकत्रकर उसका मुख बंदकर दो और २१ दिन रखो रहनेके पश्चात् इसका लेप करो तो समस्त कुष्ठमात्र, गंडमाला, विसर्प, अर्श और वातरोग ये सब १ मासके लेपसे दूर होवेंगे, यह कुष्ठमहालेप रससंग्रहमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे कुष्ठादियत्ननिरूपणं नाम चतुर्दशस्तरंगः ॥ ३४ ॥

## ॥ शीतपित्त-उदर्द-कोढ-उत्कोढ-अम्लपित्त-विसर्प ॥

शीतपित्तादिरोगाणामम्लपित्तविसर्पयोः ।
बाणरामतरङ्गेऽस्मिन् लिख्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

भाषार्थः— इस ३५ वें तरंगमें शीतपित्त, उदर्द, कोढ, उत्कोढ, अम्लपित्त और विसर्प रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे लिखते हैं.

शीतपित्त-उदर्द-कोढ-उत्कोढयत्न १— रोगीको वमन कराओ तो शीतपित्त और उदर्द दूर होंगे.

तथा २— पटोल, निम्बकी छाल, अडूसा, त्रिफला, गूगल और पिम्पलीका क्वाथ पिलाओ तो शीतपित्त, उदर्द दूर होंगे

तथा ३— विरेचन (जुलाब) दो तो शीतपित्त, उदर्द दूर होंगे.

तथा ४— मिश्रीके योगसे कुटकीका विरेचन दो तो शीतपित्त उदर्द जावेंगे

तथा ५— शरीरमें कडवे तेलका मर्दन कर उष्ण जलसे स्नान करो तो शीतपित्त और उदर्द दूर होवेंगे.

तथा ६— मधुके साथ त्रिफलाका चूर्ण खिलाओ तो शीतपित्त उ० दूर होंगे.

तथा ७— गुडके साथ आंवलेका चूर्ण खिलाओ तो शीतपित्त उदर्द दूर होंगे.

तथा ८— अदरकके रसके साथ पुराने गुडका सेवन कराओ तो शीतपित्त उदर्द दूर होंगे.

तथा ९— सोंठ, अजवान, काली मिर्च, पिम्पली और जवाखार इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ ७ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो शीतपित्त और उदर्द दूर होवेंगे.

तथा १०— ५ टंक अजमोद और ५ टंक गुड दोनोंको इकट्ठे खरल करके ५ सात दिनपर्यंत नित्य खिलाओ तो शीतपित्त, उदर्द दूर होवेंगे.

तथा ११— सरसों, हल्दी और पवांरके बीज तीनोंको कडवे तेलमें महीन पीसकर लेप करो तो शीतपित्त उदर्द दूर हों.

तथा १२— बकायनकी शाखाकी ५ टंक छालको पीसकर गोघृतमें लो.

तथा १३— रक्तमोचन (फस्त) कराओ तो शीतपित्त उदर्द दूर होंगे.

तथा १४— आंवले और नीमके पत्ते घीमें तलकर उस घीमेंसे १ टकेभर नित्य १५ दिनपर्यंत खिलाओ तो शीतपित्त, उदर्द, फोडे, पित्त, कृमि, कंडुरोग, कफरोग तथा रक्तदोषके रोगभी नाश होवेंगे.

तथा १५— सेरभर छिलेहुए अदरकके बारीक टुकडे आधसेर गोघृतमें

मिलाकर दो सेर गोदुग्धमें डालदो नंतर इस दूधका खोवा बनाकर सेरभर मिश्रीकी पतली चासनीमें डालदो और पीपलामूल, मिर्च, सोंठ, चित्रक, वायविडंग, नागरमोथा, नागकेशर, तज, पत्रज, इलायची, कचूर ये सब एक एक टंकेभर पीस छानकर चूर्ण बनालो फिर यह चूर्ण उपर्युक्त चासनीमें डालकर एक जीव कर दो जो इसमेंसे १ टंकेभर नित्य सायंकालसमय खिलाओ तो शीतपित्त, उदर्द, कोढ, उत्कोढ, राजरोग, रक्तपित्त, श्वास, कास, अरुचि, वात, गुल्म, उदावर्त, शोथ, खुजाल, कृमि और उदररोग ये सब दूर होकर बल, वीर्य और पुष्टता प्राप्त होवेगी इसे आर्द्रकखंडावलेह कहते हैं. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

पित्तियत्न १६– सेंधानोंन घीमें पीसकर शरीरको मर्दन करो और लाल कम्बल उढाओ तो (शीतपित्तादि उपद्रवरूप पित्तिनाम एक प्रसिद्ध रोग) नाश होवेगा.

तथा १७– गोघृत, गेरू, सेंधानोंन और कुसुम्भ पुष्पोंको खरल करके शरीरमें उवटन करो तो पित्ति शमन हों.

तथा १८– चिरायता, अडूसा, कुटकी, पटोल, त्रिफला, रक्तचंदन और नीमकी छालका क्वाथ सेवन अराओ तो पित्ति, पित्तरोग, फोडे, दाह, ज्वर, मुखशोष, तृषा और वमन ये सब दूर होंगे.

तथा १९– जंगली कंडा (छेना, उपली, गोवरी)का राख (भस्म) शरीरमें मर्दन करो तो पित्ति दूर हो.

तथा २०– नागरवेलके पानके रसमें फिटकरीको महीन पीसकर मर्दन करो तो पित्ति मिट जावे.

तथा २१– १ टंकेभर लहसन खिलाओ, या ५ टंक त्रिफलाका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो पित्ती मिट जावेगी.

तथा २२– १ टंकेभर मेंथीदाने, १ टंकेभर काली मिर्च, १ टंकेभर हल्दी इन तीनोंको महीन पीसकर अदरकके रसकी ३ पुट दो और २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ गोली नित्य खिलाओ तो पित्तीके समस्त विकार दूर होंगे. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

अम्लपित्तयत्न १– पटोल, नीमकी छाल, और अडूसा इनका क्वाथ पिलाकर वमन कराओ तो अम्लपित्त शांत हो.

तथा २– मैंनफल, और सेंधानोंन मधुके साथ चटाकर वमन कराओ तो अम्लपित्त दब जावेगा.

तथा ३– विरेचन देनेसेभी अम्लपित्त दब जाता है.

तथा ४– निसोत और आवला मधुके साथ चटाकर विरेचन कराओ तो अम्लपित्त शांत हो जावेगा.

तथा ५– ऊर्ध्वभागी अम्लपित्त वमनसे और अधोभागी अम्लपित्त विरेचनसे दूर होवेगा.

तथा ६– जौ या गेहूं या चावलका सत्तू मिश्रीके साथ खिलाओ तो अम्लपित्त शांत होवेगा.

तथा ७– जौ (यव), अडूसा, आंवला, तज, पत्रज और इलायचीका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो अम्लपित्त दूर हो.

तथा ८– गुरच, निम्बछाल, पटोलका क्वाथ मधुके संयोगसे पिलाओ तो अम्लपित्तभी दूर होगा.

तथा ९– अडूसा, गुरच, पित्तपापडा, चिरायता, नीमकी छाल, जलभंगरा, त्रिफला, और कुल्थीके क्वाथमें मधु डालकर पिलाओ तो अम्लपित्त दूर हो. इसे दशांगक्वाथ कहते हैं.

तथा १०– भोजनके पश्चात् आंवलेका रस पिलाओ तो अम्लपित्त, वमन, अरुचि, दाह, तिमिर, मोह, और मूत्रदोष ये सर्व रोग दूर होकर वृद्धभी तरुण हो जावेगा.

तथा ११– पक्के पेठेकी छाल और बीज निकालकर कूटके १०० टकेभर रस निकालो, यह रस १०० टकेभर गोदुग्ध, ८ टकेभर आंवलोका चूर्ण, आठ टकेभर मिश्री, और ८ टकेभर गोघृतके साथ मिट्टीके वर्तनमें डालकर मंद मंद आंचसे पकाओ और औंटते औंटते अवलेहकी चासनी सदृश हो जानेपर उतारकर ५ टंकभर या १ टकेभर नित्य खिलाओ तो अम्लपित्त दूर हो.

तथा १२– नारियलका खोपरा छीलकर खरलमें महीन पीसो, और

गौके दूधमें डालकर खोवा बनाओ, और खोपरेसे चौगुणे विनौलेके रसमें शक्करकी चासनी बनाकर उक्त खोवेमें मिलादो, नंतर धनियां, पीपलामूल, तज, पत्रज, नागकेशर और इलायची ये सब एक एक टंक महीन पीसकर इनका चूर्णभी चासनीमें डालदो और सबको भलीभांति मिश्रित कर ५ टंक या एक टके प्रमाणकी गोलियां बनाकर १ गोली नित्य खिलाओ तो अम्लपित्त, रक्तपित्त, और शूल ये सब दूर होंगे. इसे नारिकेलखंड कहते हैं. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १३– १ भाग द्राक्ष (धोकर बीजे निकालदो)का गूदा, १ भाग बडी हर्रोंकी छालका चूर्ण और २ भाग मिश्री इन तीनोंको खरल कर १ टंक प्रमाणकी गोलियां बनाओ और १ गोली नित्य खिलाओ तो अम्लपित्त, हृदय, तथा कंठकी दाह, तृषा, मूर्छा, चक्र, मन्दाग्नि, और आमवात ये सर्व रोग दूर होंगे. इसे द्राक्षादिगुटिका कहते हैं.

तथा १३– सोंठ, काली मिर्च, पिम्पली, त्रिफला, इलायची, नागरमोथा, वायविडंग, और पत्रज ये सब तुल्यभाग, इन सबके समान लौंग, इन सबसे दूनी निसोत तथा इन समस्त औषधोंके समान मिश्री लेकर सबका कपडछान चूर्ण कर डालो जो इसमेंसे २ टंक चूर्ण शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो अम्लपित्त दूर हो. इसे अविपित्तक चूर्ण कहते हैं.

विसर्परोगयत्न १– वमन, विरेचन, रक्तमोचन और औषधोंका लेप औषधियोंका तेल लगाना ये प्रत्येक कार्य विसर्परोगको नाश करनेवाले हैं.

वातविसर्पयत्न २– रास्ना, कमलगटा, देवदारु, खरेंटी, रक्तचंदन, और महुआ, इन सबको दूध या घृतमें महीन पीसकर लेप करो वातजविसर्प दूर हो.

पित्तजविसर्पयत्न ३– किशोरे, सिंघाडे, कमलगटे, जलका सिवार (काई) और रक्तचंदन, इन सबको धोये हुए गोघृतमें खरल करके या शीतल जलमें महीन पीसकर लेप करो पित्तजविसर्प दूर हो.

कफजविसर्पयत्न ४– त्रिफला, कमलगटे, खश, लजनी (लजालू), जवासा, कण्हेरमूल, और नरसलकी जडको जलमें महीन पीसकर लेप करो तो कफका विसर्प दूर हो.

विसर्पमात्रयत्न ५– सिरसकी जड, मुलहटी, रक्तचंदन, इलायची, छड, तगर, तीनों हल्दी, और नेत्रवाला इन सबको जलमें पीसकर लेप करो तो विसर्पमात्र दूर हो.

तथा ६– चिरायता, अडूसा, कुटकी, पटोल, त्रिफला, रक्तचंदन, और नीमकी छाल इनका २ टंक चूर्णका क्वाथ पिलाओ तो विसर्प, दाह, ज्वर, शोथ, खाज, फोडे, और वमन इन सबका शमन होवेगा.

तथा ७– सतोन्यूके बक्कल, कणगच, कलहारीकी जड, थूहरका दूध, आकका दूध, चित्रक, जलभंगरा, हल्दी, सिंगीमुहरा, ये सब टके टकेभर लेकर अधकुचले करो और २ सेर पानी, २ सेर गोमूत्र, सेरभर तिलोका तेलके साथ एकत्र कर मंद मंद आंचसे पकाओ, नंतर रसादिक जलकर तेल मात्र रह जानेपर छानके शरीरमें मर्दन करो तो विसर्प, फोडे, और व्योंचीभी दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ८– वडके जटा (परे) नागरमोथा, केलेका मध्यगर्भ (गाबा) इन तीनोंको धोयेहुए घीमें खरल करके लेप करो तो विसर्प और ग्रंथिभी दूर होंगी.

तथा ९– सिरसकी छालको १०० वारके धोयेहुए घृतमें खरल करके लेप करो तो विसर्पमात्र दूर हों.

तथा १०– जोंक लगाकर रुधिर निकलवा दो तो विसर्प, कोढ और शीतला ये सब रोग दूर होवेंगे. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखा है.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे शीतपित्तोदर्दकोढोत्कोढाम्लपित्तविसर्परोगाणां यत्ननिरूपणं नाम पंचत्रिंशस्तरंगः ॥ ३५ ॥

॥ स्नायुक-विस्फोटक-मसूरिका-फिरङ्गवात ॥

चिकित्सा लिख्यते स्नायुक्-विस्फोटकमसूरिका ।
फिरङ्गवातरोगाणां भङ्गे रसधनंजये ॥ १ ॥

भाषार्थः– इस ३६ वें तरंगमें स्नायुक्, विस्फोटक, मसूरिका और फिरंगवात रोगोंकी चिकित्सा क्रमानुसार लिखते हैं.

स्नायुकरोगयत्न १– ५ टंक हींग शीतल जलके साथ ३ दिनपर्यंत

नित्य सेवन कराओ तो स्नायुक दूर होकर फिर कदापि न होगा.

तथा २– ऽ। पावभर घृत नित्य पान कराओ तो स्नायुकरोग दूर होगा.

तथा ३– तीन चार पैसेभर निर्गुंडीका रस नित्य पिलाओ तो तीनही दिनके सेवनसे स्नायुक (नहरुआ) मिट जावेगा.

तथा ४– कलौंजीको शीतल जलके साथ ७ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो स्नायुकरोग दूर होगा.

तथा ५– अरंडमूलका रस गोघृतके साथ ७ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो स्नायुकरोग मिट जावेगा.

तथा ६– अतीस, नागरमोथा, भारंगी, सोंठ, पिम्पली और बहेडेकी छालका २ टंक चूर्ण नित्य उष्ण जलके साथ सेवन कराओ तो स्नायुकरोग दूर हो.

तथा ७– सहजनेकी जड और पानको कांजीमें पीसकर सेंधेनोंनके साथ स्नायुकपर बांधो तो स्नायुक (नहरुआ) दूर होगा.

तथा ८– कटियाली जालकी जडको जलमें पीसकर बांधो तो स्नायुक (बाला) निश्चय दूर हो. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ९– कूट, सोंठ, सहजनाकी जड इन तीनोंको जलमें महीन पीसकर लेप करो या पिलाओ तो स्नायुकरोग दूर हो.

तथा १०– धतूरेके पत्तोंमें तेल लगाकर नहरुआपर बांधो तो नहरुआ अच्छा हो जावेगा.

तथा ११–बम्बूलके बीजोंको कांजीमें पकाकर बांधो तो नह०अच्छा होगा.

तथा १२– निम्नलिखित मंत्रसे गुडको सातवार मंत्रित करके रोगीको खिलाओ तो उसका नहरुआ अच्छा हो जावेगा.

"ओं विरूपनाथ वामनके पूत सूतकाटि किये बहुत पाके फूटे पीडा करे तो विरूपनाथकी आज्ञा फुरे" इति स्नायुनाशकमंत्र.

तथा १३– मधुके साथ परावत (कबूतर)की विष्ठाकी गोली बनाकर १ गोली नित्य सात दिनपर्यंत निगलवा दो तो नहरुआ कभी न निकलेगा. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १४– सज्जीको मधुके साथ पीसकर लेप करो तो स्नायुक दूर हो.

वातविस्फोटकयत्न १– रास्ना, दारुहल्दी, खश, कटियाली, गुरच, धनियां और नागरमोथा इनका क्काथ पिलाओ तो वातका विस्फोटक दूर होगा.

पित्तविस्फोटकयत्न २– दाख, कुम्भेर, पटोल, खारक, नीमकी छाल, अडूसा, कुटकी, जवाखार और चांवलोंकी लाही इन सबका क्काथ बनाकर पिलाओ तो पित्तविस्फोटक दूर हो.

कफविस्फोटकयत्न ३– चिरायता, बच, अडूसा, त्रिफला, इन्द्रयव, कूडेकी छाल और पटोल इनका क्काथ मधुके साथ पिलाओ तो कफका विस्फोटक दूर हो.

विस्फोटकमात्रयत्न ४– लंघन, वमन, विरेचन और पथ्य भोजन, पुराने चांवल, जौ, गेंहू, मूंग, मसूर और हर्र सेवन ये सर्व कार्य विस्फोटक (शीतला) ग्रस्तित रोगीको लाभकारी हैं.

तथा ५– दशमूलका क्काथ पिलाओ तो विस्फोटक शमन हो.

तथा ६– चिरायता, कुटकी, नीमकी छाल, नागरमोथा, मुलहटी, पटोल, पित्तपापडा, खश, त्रिफला और कूडेकी छाल इनका क्काथ पिलाओ तो सब प्रकारका विस्फोटक दूर हो.

तथा ७– चांवल और कूडेकी छालको जलमें पीसकर विस्फोटकके व्रण (फोलों) पर लेप करो तो विस्फोटक अच्छा हो.

तथा ८– गुरच, पटोल, चिरायता, अडूसा, नीमकी छाल, पित्तपापडा, खैरसार, इन सबका क्काथ पिलाओ तो विस्फोटक रोगजन्य ज्वर दूर होगा.

तथा ९– चंदन, नागकेशर, गौरीसर, चौंलाईकी जड, सिरसकी बक्कल और चमेलीके पत्ते इन सबको जलमें पीसकर लेप करो तो विस्फोटक अच्छा होगा.

तथा १०– कमलगटा, रक्तचंदन, लोद, खश और गौरीसर इनको जलके साथ महीन पीसकर लेप करो तो विस्फोटक अच्छा होगा.

तथा ११– जियापोतेकी भिंगीको जलमें पीसकर लेप करो तो विस्फोटक, कक्षा, गलगंड, कर्णग्रंथि, फोडे, फुनसी मात्र दूर होंगे. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १२– किशोर गूगल, और दशांगका लेपभी विस्फोटक नाशक है.

विशेषतः– यदि विस्फोटक पक जावे तो जंगली कंडोकी राख रोगीकी शय्यापर बिछाकर सुलाओ. नीमकीडाली ( झौंर )से मक्खियां उडाओ. इसके ज्वरमें शीतल जल पिलाओ. पवित्र होकर शीतलादेवीपर शीतल जलकी पवित्र धारा छोडो तथा शीतला देवीकी पूजा करो. विशेष यत्नभी मत करो यदि करनाभी हो तो ये यत्न करो.

शीतलायत्न १– हल्दीको शीतल जलमें घोलकर पिलाओ तो शीतलाके व्रण बहुत थोडे निकलेंगे.

तथा २– श्वेतचंदनको केलेके रसमें, या महुएको अडूसेके रस किंवा मधुमें पीसकर पिलाओ तो शीतला ( विस्फोटक )के व्रण बहुत थोडे निकलेंगे तथा दैवकृपासे नहीभी निकलें. ये दोनों उपाय शीतलाका पूर्वरूप होतेही करना चाहिये.

वर्तमानशीतलायत्न– जिस घरमें शीतला[1]वाला बालक रहे उस घरके सन्मुख नीमके बन्दन वारें बांधो. विस्फोटकजन्य ज्वर दूर करनेके लिये चंदन, अडूसा, गुरच और दाखका क्वाथ पिलाओ. श्रद्धा भक्त भक्तिसमेत जप, हवन, दान, ब्राह्मणभोजन, शिव अभिशेष आदि कराओ. तथा निम्नलिखित शीतलाष्टकका पठन कराओ तो उस बालककी रक्षा होकर शीतला देवीकी कृपा विस्फोटक रोगसे छुटकारा होगा.

अथ शीतलाष्टकम्— स्कंदोवाच ॥

" भगवन् देवदेवेश शीतलायाः स्तवं शुभं । वक्तुमर्हस्यशेषेण विस्फोटकभयापहम् ॥ १ ॥ ईश्वरोवाच ॥ वंदेहं शीतलां देवीं सर्वरोगभयापहाम् । यामासाद्य निवर्तेत विस्फोटकभयं महत् ॥ २ ॥ शीतले शीतले चेति यो ब्रूयाद्दाहपीडितः । विस्फोटकभयं घोरं क्षिप्रं तस्य विनश्यति ॥ ३ ॥ यस्त्वामुदकमध्ये तु धृत्वा सम्पूजयेन्नरः । विस्फोटकभयं घोरं कुले तस्य न जाय-

---

१ पूर्वामृतसागरमें शीतलाका नाम मात्र तथा चिकित्सा निदान विस्फोटकसे पृथक्भी लिखा है परंतु वैद्यकशास्त्रमें विस्फोटक रोगपर शीतलादेवीका आराधन लिखा है इसलिये हमने शीतलाकी निदान चिकित्सा विस्फोटकसे जुदी नहीं लिखी.

ते ॥ ४ ॥ शीतले तनुजान् रोगान् नृणां हर सुदुस्तरान् । विस्फोटकविशीर्णानां त्वमेकामृतवर्षिणी ॥ ५ ॥ गलगंडग्रहरोगा ये चान्ये दारुणा नृणाम् । त्वदनुध्यानमात्रेण शीतले यांति संक्षयम् ॥ ६ ॥ न मंत्रं नौषधं किंचित् पापरोगस्य विद्यते । त्वमेका शीतले त्राहि नान्यां पश्यामि देवताम् ॥ ७ ॥ मृणालतन्तुसदृशीं नाभिहृन्मध्यसंस्थिताम् । यस्त्वां विचंतयेद्देवि तस्य मृत्युर्न जायते ॥ ८ ॥ श्रोतव्यं पठितव्यं वै नरैर्भक्तिसमन्वितैः । उपसर्गविनाशाय परं स्वस्त्ययनं महत् ॥ ९ ॥ शीतलाष्टकमेतच्च न देयं यस्य कस्यचित् । किन्तु तस्मै प्रदातव्यं भक्तिश्रद्धान्विताय च ॥ १० ॥ इति श्रीस्कंदपुराणे शीतलाष्टकं सम्पूर्णम् ॥ इति विस्फोटकयत्न ॥

मसूरिकायत्न १– मसूरिका निकलनेके आरम्भमेंही श्वेतचंदनको भिंगाकर घिसके सात दिनपर्यंत पिलाओ तो बहुत थोडी मसूरिका निकलेंगी.

वातजमसूरिकायत्न १– दशमूल, रास्ना, आंवला, खश, धमासा, गुरच, धनियां और नागरमोथा इनका क्काथ पिलाओ वादीकी मसूरिका दूर हो.

तथा २– मजीठ, वडके अंकूर, सिरसके बक्कल, गुलाबकी छाल, इनको घीके साथ खरल करके या इन सबका घी बनाके लगाओ तो वादीकी मसूरिका अच्छी होंगी.

तथा ३– गुरच, महुआ, दाख, मूर्वा, और अनारके बक्कल इनका क्काथ गुडके साथ पिलाओ तो वादीकी मसूरिका दूर होंगी.

पित्तजमसूरिकायत्न १– पटोलकी जडका क्काथ या महुआका रस पिलाओ तो पित्तकी मसूरिका अच्छी होंगी.

तथा २– नीमकी छाल, पित्तपापडा, पाठ, पटोल, खश, दोनों चंदन, कुटकी, आंवला, अडूसा और जवासेका क्काथ मिश्रीके संयोगसे पिलाओ तो पित्तकी मसूरिका अच्छी हों.

कफजमसूरिकायत्न १– अडूसा, चिरायता, त्रिफला, जवासा, पटोल, नीमकी छाल इनका क्काथ मधुके संयोगसे पिलाओ तो कफकी मसूरिका दूर हों.

रक्तजमसूरिकायत्न १–रक्तमोचन कराओ तो रक्तज मसूरिका अच्छी हो.

मसूरिकामात्रयत्न १– पाठ, पटोल, कुटकी, दोनों चंदन, खश, आंव-

ला, अडूसा और जवाखार इनका क्काथ मिश्रीके योगसे पिलाओ तो मसूरिका दूर हों.

मसूरिकाजन्य कंठस्थव्रणयत्न १– आंवला, और महुअके क्काथमें मधु डालकर इस रसके कुर्ले कराओ तो मसूरिकामें गलेमें व्रण हो गया हो सो अच्छा हो.

मसूरिकाजन्य नेत्ररुद्धयत्न १– महुएके पानीमें अरंड औटाकर इस जलसे मसूरिकामें चिपगई हुई आंखें धो तो आखें खुल जावेंगी.

मसूरिकाजन्य नेत्रव्रणयत्न १– महुआ, त्रिफला, दारुहल्दी, खश, मूर्वा, कमलगटा, लोद, मजीठ इन सबको जलमें पीसकर लगाओ तो मसूरिकासे उत्पन्न हुए आंखोंके फोडे अच्छे हों और वहां पुनः न होंगे.

तथा २– वड, पीपल, और गूलर इन तीनोंके बक्कलोंको पीसकर नेत्रोंपर लेप करो तो नेत्र अच्छे हो जावेंगे.

तथा ३– जंगली कंडोंकी राख लगाओ तो मसूरिकामात्र अच्छी हो.

विशेषतः– मसूरिकाके रोगीको षष्टीतंडूल, मूंग, मसूर, और मिश्री मनमानी दो परंतु नोंनका विशेष बचाव रखो यदि खिलाना चाहो तो चाहे थोडा बहुत सेंधानोंन खिलाओ और सर्व आहार विहार मर्यादा पूर्वक रखोगे तो मसूरिकासे तुरंत आरोग्य होवेगा. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

फिरंगवातयत्न १– ४ रत्ती शुद्ध रसकर्पूरको गेहूंके मसले हुए आटेकी गोली बिचमे दाबके वह गोली लौंगके महीन चूर्णसे लपेठ दो और यह गोली दांतका स्पर्श बचाकर निगलवा दो नंतर नागरवेलके पत्ते (कत्था चूना रहित) खिलाओ रोगीको तेल, खटाई और नोंनसे पथ्य कराके श्रम और धूपका बचाव रखो तो इस विधिपूर्वक रसकर्पूर सेवन करनेसे दो चार दिनमेंही फिरंगवात दूर होगी.

तथा २– १ टंक शुद्ध पारा, १ टंक खैरसार, २ टंक अकलकरा, और ३ टंक मधु इन सबको इकठे खरल करके ७ गोलियां बनालो और १ गोली नित्य प्रातःकाल शीतल जलके साथ सेवन कराके नोंन और खटाईका बचाव रखो तो फिरंगवात दूर होगी. इसे सम्प्रसारणी गुटिका कहते हैं.

तथा ३– २ टंक पारा, २ टंक आंवलासार गंधक और २ टंक चावल इनको खरल करके ७ पुडियां बनालो और प्रतिदिन १ पुडियाकी धूनी इंद्रीको दो तो फिरंगवात ७ दिनमें दूर हो.

तथा ४– पीले फूलवाली खरेंटीके पत्तोंका १ टंक रस और एक टंक पारा दोनोंको रोगीके हाथोंमें (पारा लोप हो जानेतक) मलवाते जाओ और वह पारा मिश्रित खरेंटीका रस हाथोंमें पूर्ण रूपसे भिद जानेपर (कुछ कुछ पसीना निकलनेतक) हाथोंको आंचसे तपाओ और नोंन खटाईका बचाव रखो तो ७ दिनके प्रयत्नमेंही फिरंगवात दूर होगी.

तथा ५– ८ टंक नीबूके पत्ते, ७ टंक हरेंकी छाल, ७ टंक आंवला, १ टंक हल्दी, और १ टंक पारा इन सबको खरल करके प्रतिदिन ४ मासे शीतल जलके साथ सेवन कराओ तो ७ दिनमें बहिरी और भीतरी दोनों ओरकी फिरंगवात दूर होगी.

तथा ६– बावचीका ४ मासे चूर्ण मधुके साथ १५ दिनपर्यंत चटाकर नोंन खटाईका बचाव रखो तो फिरंगवात दूर हो.

तथा ७–१ टंक पारा कठसेला (खठसेरुआ)के रसमें खरल करके अकलकरा, गूगल और गोघृत ये प्रत्येक ५ पांच टंक मिलाओ और इसमेंसे १ टंक चूर्ण, ५ टंक त्रिफलाका चूर्ण और ५ टंक मधुके संयोगसे २१ दिनपर्यंत मर्दन करके चटाकर नोंन और खटाईका बचाव रखो तो फिरंगवात दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ८– विरेचन और रक्तमोचनसेभी फिरंगवात दूर होगी.

तथा ९– पारा, हिंगुल, नीला थोथा, हीराकसी और आंवलासार गंधक इन सबको प्रथम शुद्ध करके खरल करो और इस बुकनीको सूखीही फिरंगवातपर मसलो या जलके साथ लेप करो तो फिरंगवात दूर हो. इसे सूतकादि लेप कहते हैं.

तथा १०– १०० बार धोया हुआ गोघृत लेप करो तो फिरंगवात दूर होगी.

तथा ११– १ टकेभर कटुतैल, ५ टंक मोंम, अधेलेभर बेरजा, अधेलेभर कपेला, २ टंक सिन्दूर, २ टंक शोरा, और २ टंक मुरदासिंगीको महीन

पीसकर पीतलके पात्रमें मंद मंद आंचसे पकाओ नंतर शीतल होनेपर हाथसे मलके कांच या चीनीके पात्र तथा काष्टके डब्बेमें रखलो जो इसकी पट्टी व्रणपर लगाओ तो फिरंगजन्य व्रण, उपदंश और घाव ये सब अच्छे होवेंगे. इसें मलहर मलहम कहते हैं.

तथा १२– आधपाव सिंदूर, और सेरभर गोघृत दोनोंको भलीभांति मथकर शरीरपर लेप करो और ऊपरसे पत्ते लपेटकर केवल क्षीर (खीर) मात्र खिलाओ तो व्रण, विस्फोटक, और फिरंगजन्य फोडे ये सब अच्छे हो जावेंगे.

तथा १३– पारा, और सीसेकी कजली, गेहूंके तुस (भुस्सा) इमलीके बीज (चियें) निम्बके पत्ते, और घरका धुवांसा (धौसा) इन सबको नीबूके रसमें खरल करके २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो और शरीरको वस्त्रसे ढांककर १ गोलीकी धूनी ७ दिनपर्यंत दो और ऊपरसे खीरके व्यतिरिक्त कुछ न खिलाओ तो सर्व फिरंगवात दूर हों.

तथा १४– त्रिफला, खैरसार और जायपत्रीको जलमें औंटाकर इस जलसे मुख धुलाओ (कुरले कराओ) और धुवां (भाक) दो तो फिरंगवात दूर हो.

तथा १५– ३ टंक काला जीरा, ३ टंक कूट और १८ टंक पुराना गुड इन सबको खरल करके १५ गोली बनाओ और इसमेंसे १ गोली प्रभात और एक संध्याके समय खिलाकर घृतयुक्त गेहूंकी रोटी खानेको दो तो फिरंगवात दूर हो. इसे फिरंगगजकेशरीरस कहते हैं.

तथा १६– ६ मासे हिंगुल, १० मासे सुहागा, १० मासे अकलकरा और १० मासे मोंम इन सबको खरल करके १ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाओ और बूई वृक्षके कोयलेकी आग कर नित्य १ गोलीकी धूनी दो तो फिरंगवात दूर हो.

तथा १७– मुंगना, बड, झांऊं, नीम, जलभंगरा, कटियाली, और कचनार इन सबके बक्कलका क्वाथ ७ दिनतक पिलाओ तो फिरंगवात दूर हो.

तथा १८– हिंगूल और मैनसिलकी २ मासे बुकनी वेरीके कोयलोंकी आगपर धूनी देकर निर्वातस्थानमें कपडेसे ढांक दो तो फिरंगवात दूर हो.

रसकर्पूरशांति १– यदि रसकपूरके सेवनसे मुखके मसूडे फूलकर मुंह

आजावे तो पीपल, गूलर छोटी जातिका बड, बडी जातिका बड और वेत इन सबके बक्कलका क्वाथ बनाकर कुरले कराओ तो मसूडे मिटकर मुखका शोथ, पाक और पीडा आदि दूर होवेंगे.

तथा २– ५ टंक जीरा और २ टंक खैरसार इनको जलमें पीसकर मुखके छालोंपर लगाओ तो रसकपूरजन्य मुखपाक शांत होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे स्नायुक-विस्फोटक-मसूरिका-फिरंग-वातरोगाणां यत्ननिरूपणं नाम षट्त्रिंशस्तरङ्गः ॥ ३६ ॥

॥ क्षुद्ररोगाः ॥

अजगल्लिकादिक्षुद्राणामामयानां यथाक्रमात् ।
मुनिरामतरङ्गेऽस्मिन् कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

भाषार्थः– इस ३७ सैंतीसवें तरंगमें अजगल्लिकाप्रभृति क्षुद्ररोगों (छोटे रोगों)की चिकित्सा वर्णन किई जावेगी.

अजगल्लिकादि क्षुद्ररोगयत्न १– अजगल्लिकादि फुनसियोंका रक्तमोचन करानेसे वे सब अच्छी हो जावेंगी.

तथा २– पक्वव्रण यत्नों (पहिले कहेगये हैं)सेभी अजगल्लिकादि फुनसियां शमन होवेंगी.

तथा ३– फिटकरी और सोंफका खार जलमें पीसकर लेप करो तो अजगल्लिकादि फुनसियां अच्छी हो जावेंगी.

तथा ४– मैनसिल, कूट ओर देवदारुको जलमें पीसकर लेप करो तो वे फुनसियां पक जावेंगी तब शस्त्रसे चीरकर पीव निकालके मलहमकी पट्टी लगादो तो अजगल्लिकादि फुनसियां निश्चय अच्छी हो जावेंगी.

विदारिकायत्न १– सहजना और देवदारुको जलमें पीसकर लेप करो तो विदारिका अच्छी होगी.

इरिवेल्लिकायत्न १– पित्तज विसर्पके यत्न इसकोभी नाशकारी होंगे.

पिनसिकायत्न १– प्रथम नीमके पत्तोंको बांधकर इसे पकाओ, नंतर मैनसिल, कूट, हल्दी, और तिल्लीका लेप कर पूर्ण रूपसे पकालो तब श-

स्त्रसे चीरकर पीव निकलवाकर ऊपरसे मलहमकी पट्टी चढादो तो पिन-सिका अच्छी हो जावेगी.

पाषाणगर्दभयत्न १– प्रथम जोंक लगाकर रुधिर निकलवा दो या उष्ण लेप करो नंतर व्रणके समान यत्न करो तो पाषाणगर्दभ अच्छी होगी.

वल्मीकयत्न १– प्रथम पकनेपर चीरकर नोंन और चित्रकका लेप करो और सर्वथा पीव निकल जानेपर अर्बुदरोगके यत्न करो तो वल्मीक अच्छी होगी.

तथा २– जोंकसे रक्तमोचन कराओ तो वल्मीक अच्छी होगी.

तथा ३– कुल्थीकी जड, गुरच, किरमालेकी जड, नोंन, दात्यूणी औ निसोतको जलके साथ पीसकर उष्ण करो और थोडा घी मिलाकर लेप करे तब पक जानेपर चीरकर निर्जीव (मुर्दार) मांस निकाल डालो और व्रणके मलहमपट्टी आदि उपाय करो तो वल्मीक अच्छा होगी.

तथा २– मैंनसिल, इलायची, रक्तचंदन, अगर, कूट, भिलांवा, नीमके पत्ते, चमेलीके पत्ते इन सबको तेलमें पकाकर वह तेल लगाओ तो शोथ-युक्त वल्मीक फुनसीभी अच्छी हो जावेगी.

कक्षा तथा अग्निरोहिणीयत्न १– उत्पन्न होतेही रक्तमोचन कराओ तो दोनों अच्छी होवेंगी.

तथा २– पित्तविसर्पके यत्न करो तो दोनों अच्छी होवेंगी.

तथा ३– देवदारु, मैनसिल और कूट इनको जलमें पीसकर उष्ण करके लेप करो तो बगलबिलाई (कांखोलाई) और अग्निरोहिणी दोनों अच्छी होंगी.

तथा ४– देवदारु, मैनसिल और कूट इनको पीसकर उष्ण करो और सहती सहती बांधो तो बगलबिलाई और अग्निरोहिणी अच्छी होगी.

अवपाटिकायत्न १– चिकनी वस्तुका सहता सहता सेक करो तो अ-वपाटिका अच्छी हो.

निरुद्धप्रकाशयत्न १– चूकेके रसमें तेल पकाकर इस तेलको लगाओ तो निरुद्धप्रकाश अच्छा हो.

तथा २– शूकरकी मेद (चर्बी)का सेक करो तो निरुद्धप्रकाश दूर हो.

संनिरुद्धगुदयत्न १– वातध्वंशक (या साधारण) तेलका सहता सहता सेक करो संनिरुद्धगुद अच्छा हो.

वृषणकच्छुयत्न १– राल, कूट, सैंधानोंन, और सरसोंको जलमें महीन पीसकर उवटन कराओ तो वृषणकच्छुरोग दूर होगा.

गुदभ्रंशयत्न १– गोघृत आदि चिकिने पदार्थोंका सहता सहता सेक करो तो गुदभ्रंश दूर हो.

तथा २– कमलनीके पत्तोंको सुकाकर चूर्ण कर डालो और इसमेंसे २ टंक चूर्ण मिश्रीके साथ नित्य खिलाओ तो गुदभ्रंश अच्छी हो.

तथा ३– चूहेके मांसका घी (चर्बी) निकली हुई कांछपर लेप करो तो कांछ निकलना (गुदभ्रंश) अच्छा हो.

तथा ४– डांसरे, चित्रक, लूणख्या बीलका गूदा, पाठ और जवाखार इनका २ टंक चूर्ण गौकी छाछके साथ सेवन कराओ तो गुदभ्रंश अच्छी हो.

तथा ५– चूहेके मांस और दशमूलके क्राथमें तेल पकाकर इस तेलका लेप करो तो गुदभ्रंश, गुदशूल, और भगंदर ये सब दूर हों. इसे मूषकतैल कहते हैं.

तथा ६– मूषकतैलकी क्रिया है जिसी माफक छछूंदरका तेल बनाकर लेप करो तो गुदभ्रंश दूर हो.

तथा ७– सम्भालुका रस, बेरकी जडका रस, दही, छाछ, सोंठ, जवाखार और घी इन सबको एकत्र कर पकाओ और सर्व रसादिक जलकर घृतमात्र रह जानेपर छानकर इसमेंसे ५ टंक घी नित्य सेवन कराओ तो गुदभ्रंश दूर हो. इसे चांगेषघृत कहते हैं.

शूकरदंष्ट्रयत्न १– जलभंगरेकी जड और हल्दीको जलमें पीसकर सुअरके काटेहुए घावपर लगाओ तो सुअरकी डाढजन्य पीडा दूर हो.

अलसयत्न १– पटोल, मैनसिल, नीबू, गोरोचन, काली मिर्च, तिल्ली, कटियालीका रस, और कांजीमें कडुवा तेल पकाकर इसका मर्दन करो तो अलस (खारुआ) रोग दूर हो.

तथा २– कणगजके बीज, हल्दी, हीराकसी, महुआ, गोरोचन, और हरताल इन सबको मधुके साथ महीन पीसकर लेप करो तो अलसरोग दूर हो.

पाददारिकारोगयत्न १– तेलको तपाकर सहता सहता सेक करो तो व्याऊं (विवांई) अच्छी हों.

तथा २– मोंम और जवाखार घीमें मिलाकर ताते २ विवाईमें भरो तो अच्छी हों.

तथा ३– रार, सेंधानोंन, मधु और घृतको तेलमें मथके व्याऊंमें भरो तो व्याऊं अच्छी हों.

तथा ४– मधु, मोंम, गेरु, घृत, गुड, गूगल और रारको महीन पीसकर व्यांउमें भरो तो अच्छी हो जावेंगी.

तथा ५– धतूरेके बीज और जवाखार इनको कडवे तेलमें पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो विवांई अच्छी होंगी.

कदररोगयत्न १– उष्ण तेलसे सेको या दूधमें गुड मिलाकर बांधो तो पांवमें कांटा या कंकर लगनेसे उत्पन्न हुई गांठ (टांका, या टीपन) अच्छी हो जावेंगी.

तिलयत्न १– तिलको किसी वस्तुसे रगडकर सरसों, सज्जी, हल्दी और केशरको जलके साथ महीन पीसके इसका उस रगडे हुए स्थानपर उबटन करो तो तिल मिट जावेगा.

माषयत्न १– सज्जी, चूना और साबुनको जलके साथ पीसकर मसेपर लगाओ तो मसा दूर हो.

उग्रगंधा (लहसन)यत्न १– लहसनके मंडलको धुरेसे रगडके सरसों, हल्दी, कूट, सज्जी, जवाखार और केशरको जलके साथ खरल करके उबटन करो तो उग्रगंधा (लहसन, लाछन) मिट जावेगा.

तथा २– अधेलेभर हिंगुल, अधेलेभर सिकाहुवा नीलाथोथा, १ टंक सिंदूर, और ७ टंक राल इन सबको ६ टकेभर गोघृतके साथ कांसेके पात्रमें ताम्रदंड या लोहदंडसे तीन दिनपर्यंत रगडकर काजल सदृश हो जानेपर लेप करो तो लहसन, मसे, तिल, फोडे और खुजाल आदि सब दूर होवेंगे.

तथा ३– २ टंक काला जीरा, ५ टंक नोंसादर, ७ टंक सीपका चूर्ण, और २ टंक नीलाथोथाके चूर्णको अरणीके रसकी ७ पुट फिर जलभंगरेके रसकी ३ पुट देकर धूपमें सुखाओ और बछडी (बछिया)के मूत्रमें गोली

बनाकर बछडेके मूत्रमें घिसके लेप करो तो लहसन, मसे, और तिल ये सर्व विकार दूर होवेंगे.

चेप्यारोगयत्न १- जोंक आदि द्वारा रक्त मोचन कराओ तो चेप्या दूर हो.

तथा २- सुपारीकी भस्म, कत्था, कपेला, मुर्दासिंगी, नीलाथोथा इन सबका शुर्का (चूर्ण) करके लगाओ तो चेप्या अच्छा होगा.

तथा ३- हर्रको हल्दीके रसके साथ लोहपात्रमें पीसकर उष्ण करके लगाओ तो चेप्यारोग अच्छा हो.

कुनखरोगयत्न १- एक मासे सार (कांतिसार) मधुके साथ सेवन कराओ या कुटकीका साधन कराओ तो कुनखरोग दूर हो.

कंडूयत्न १- १ भाग आंवलासार गंधक, २ भाग पारा, और तीन भाग नीलाथोथा इन तीनोंको गोघृतके साथ लोहपात्रमें लोहदंडसे घोटकर लेप करो तो शरीरकी खुजाल मात्र दूर होगी.

पलितरोगयत्न १- २ टंक लोहेका चूर्ण, २ टंक आमकी गुठली, २ टंक आंवला, २ टंक बडी हर्रका चूर्ण, १ (एक) बहेडेका चूर्ण इन सबका चूर्ण लोहपात्रमें जलभंगराके रसके साथ २ दिनपर्यंत भिंगाकर बालोंमें लेप करो तो श्वेत बाल काले हो जावेंगे.

तथा २- केतकीकी जड, या केवडेकी जड, सुंगनेके फूल, कुम्भेरकी जड, लोहचूर, जलभंगरा और त्रिफला इन सबको तेलमें पकाकर उस तेलको लोहपात्रमें भर दो और १ मासपर्यंत भूमिमें गडा रहनेदो फिर निकालकर श्वेत बालोंमें लगाओ तो श्याम हो जावेंगे.

तथा ३- त्रिफला, निम्बपत्र, लोहचूर और जलभंगराका रस इन सबको भेडीके मूत्रके साथ पीसकर बालोंपर लेप करो तो श्याम हो जावेंगे.

तथा ४- १ मासे पापडखार, १ मासे सिंदूर, १ मासे मुरदासिंगी, और ८ मासे चूना, इन सबको पानीके साथ पत्थरपर ३ घडी तक रगडके (नखपर लगानेसे श्याम होनेपर) बालोंमें लगाओ तो श्याम हो जावेंगे.

तथा ५- बडे बडे नये माजूफल भभूंदरमें निर्दाग सेको सेकते सेकते फट जानेपर निकाललो नंतर १ मांजूफल, १ मासे शंखजीरा, ४ रत्ती नीला-

थोथा, ३ रत्ती नौंसादर, २ रत्ती लौंग, २ रत्ती फिटकरी और १ मासे लोहचूर इन सबको आंवलेके रसके साथ लोहपात्रमें लोहदंडसे १ प्रहरपर्यंत घोटकर (नखपर लगानेसे काला होनेपर) श्वेत बालोंको प्रथम आंवलेके रससे धोओ और इसका लेप लगाकर ऊपरसे १ प्रहरपर्यंत अरंडके पत्ते बांधके पुनः आंवलेके जलसेही धो डालो तो श्वेत केश श्याम हो जावेंगे.

तथा ६– खानेका चूना, या लुहारकी भट्टीकी राख, या कौडीकी भस्म इनमेंसे किसीएकको सीसेसे रगडकर कुछ गोपीचंदन और १ मासे मुरदासिंगी मिलाओ नंतर पुनः रगडकर (नखपर लगनेसे काला हो जानेपर) श्वेत बालोंपर लगाकर ऊपरसे अरंडके पत्ते बांधदो तो श्वेत बाल श्याम हो जावेंगे.

उंदरीयत्न १– पटोलके पत्तोंके रसमें कुटकी पीसकर लेप करो तो गये-बाल पुनः जम (ऊग) आवेंगे.

तथा २– हाथीदांतकी राखको बकरीके दूधमें मिलाकर लगाओ गये हुए बाल पुनः आवेंगे.

तथा ३– कमलनाल, द्राक्ष, तेल, घी, और दूध इन सबको इकठे खरल करके लगाओ तो बाल पुनः जम आवेंगे.

तथा ४– चमेलीके पत्ते, कणगचकी जड, कण्हेरमूल (जड) और चित्रकको तेलमें पकाकर उस तेलका लेप (या मर्दन) करो तो बाल ऊग आवेंगे.

चांईयत्न १– अधजली चिरोंजीको जलसे पीसकर लेप करो तो चाई दूर होवेगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे अजगलकादि क्षुद्ररोगाणां यत्नपणं नाम सप्तत्रिंशस्तरंगः ॥ ३७ ॥

॥ शिरोरोग-नेत्ररोग ॥

**शिरोरुजां नेत्ररुजां चिकित्साश्च यथाक्रमात् ।**
**वसुवैश्वानरे ह्यत्र तरंगे कथ्यते मया ॥ १ ॥**

भाषार्थः– अब हम इस ३८ वें तरंगमें शिरोरोग और नेत्ररोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमपूर्वक लिखते हैं.

वातजशिरोरोगयत्न १– वातहारी तैल या साधारण तैलके मर्दन और वातहारिणी औषधोंके भक्षण वादीका सिर दुखना शांत होगा.

तथा २– खार कुठार रसका नास (सुंघनी) दो तो सिरकी नानाप्रकारकी पीडा शांत होगी.

तथा ३– उर्दके आटेकी रोटी बनाकर १ प्रहरपर्यंत सिरपर बांधो तो सिरकी वातसम्बन्धी पीडा दूर होंगी.

तथा ४– उर्दके सनेहुए आटेसे सिरपर ८ या १६ अंगुलकी ऊंची वाडी (पार, दीवार) बांधकर उसमें उष्ण तेल भरदो और ४ घडी या १ प्रहर रखकर निकाल डालो तो वातज शिरोरोग, कर्णरोग, ग्रीवारोग और दाढके रोगभी ५ सात दिनके सेवनसे शमन हो जावेंगे. इसे शिरोबस्ति कहते हैं.

पित्तज शिरोरोगयत्न १– चंदन और कमलगटे शीतल जलके साथ पीसकर लेप करो तो पित्तका शिरोरोग शांत होगा.

तथा २– १०० वार धोयेहुए गोघृतको मस्तकपर लेप करो तो पित्तका शिरोरोग शांत होगा.

तथा ३– खार कुठाररस, कपूर, केशर, मिश्री और चंदनको बकरीके दूधमें पीसकर लेप करो तो पित्तका शिरोरोग दूर हो.

कफजशिरोरोगयत्न १– लंघन (भूख) या कफनाशक औषधियोंके उष्ण लेपसे कफका शिरोरोग शांत होगा.

सन्निपातजशिरोरोगयत्न १– सन्निपात नाशक औषधोंके लेप और भक्षणसे सन्निपातका शिरोरोग शांत होगा.

रक्तजशिरोरोगयत्न १– पूर्व लिखित पित्तज शिरोरोगके यत्न कराओ या सिरका रक्तमोचन कराओ तो रक्तका शिरोरोग दूर होगा.

क्षयजशिरोरोगयत्न १– क्षीणता नाशक और बलवर्द्धक औषधोंके सेवन और यत्नोंसे क्षीणताका शिरोरोग शांत होगा.

कृमिजशिरोरोगयत्न १– सोंठ, मिर्च, पिम्पली, किरमालेकी जड और सहजनेके बीजोंको बकरीके दूधमें महीन पीसकर नास दो तो मस्तककी कृमि नाश होकर पीडा शांत होगी.

तथा २– अरंडकी जड, तगर, सौंफ, सैंधानोंन, जीवंती, रास्ना, जलभंगरा, वायविडंग, मुलहटी, सोंठ, इन सबसे चौगुणा जलभंगराका रस, चौगुणा बकरीका दूध और आठगुणा तेल इन सबकों कडाहीमें मंद मंद आंचसे पकाकर रसादिक जलके तेलमात्र रह जानेपर छानलो और इसमेंसे ६ बूंद तेल रोगीकी नाकमें टपकाकर नास (सुंघवा) दो तो शिरोरोग मात्र दूर होकर दंत और नेत्ररोगभी दूर होवेंगे. इसे षट्बिन्दुतैल कहते हैं.

तथा ३– सोंठ और गुड जलमें पीसकर नासदो तो सर्वशिरो० नाश होंगे.

सूर्यावर्तशिरोरोगयत्न १– दूध और घी मिलाकर नास दो तो सूर्यावर्तशिरोरोग (आधासीसी) शांत हो.

तथा २– गुडके योगसे घीमें सेकेहुए अपूप (मालपुआ, या क्षीर खिलाओ तथा तिलींसे सेक करो तो सूर्यावर्त दूर हो.

तथा ३– जलभंगरेका रस और बकरीका दूध धूपमें उष्ण करके नास दो तो सूर्यावर्त दूर हो.

तथा ४– सिंगीमुहरा, अहिफेन (आफू-अफीम) अर्कमूल, धत्तूरेका मूल, सोंठ, कूट, लहसन और हींगको गोमूत्रमें पीसके तपाकर लेप करो तो सूर्यावर्त शांत हो.

तथा ५– विरेचन दो, या उष्ण उष्ण स्निग्ध भोजन कराओ, या मिश्री दूधके योगसे कच्चे नारियलका जल पिलाओ तो सूर्यावर्त दूर हो.

तथा ६–वायविडंग और काले तिल पीसकर लेप करो तो सूर्या० शांत हो.

अनंतवातशिरोरोगयत्न १– सूर्यावर्तके उपर्युक्त सर्व यत्न अनंतवातको लाभदाता हैं.

तथा २– मधुके योगसे घीमें सिके मालपुए खिलाओ, या माथेकी नसोंकी रक्तमोचन कराओ तो अनंतवात शांत हो.

तथा ३– हर्रकी छाल, बहेडा, आंवला, हल्दी, चिरायता, गुरच, नीमकी छाल और गुड इनका क्वाथ पिलाओ या नास दो तो अनंतवात, नेत्रपीडा, कनपट्टी और आधेसिरकी पीडा (आधासीसी) दूर हो. इसे पथ्यादि क्वाथ कहते हैं.

कपालकृमियत्न १– कडवे ककोडे (कठहर सदृश छोटासा फल, जिसके अंगपर गोखरूकेसे काटे होते हैं)के पत्तोंका नास दो तो कपालके कीडे नाश हो जावेंगे. ये सब यत्न वैद्यवल्लभमें लिखे हैं.

शंखकशिरोरोगयत्न १– दारुहल्दी, मजीठ, गौरीसर, खश, हल्दी, कमलगटे इन सबको शीतल जलके साथ महीन पीसकर कनपटीपर लेप करो शंखक (कनपटीकी) पीडा शांत होगी.

तथा २– शीतल जलके साथ शीतल औषधोंका लेप करो तो शंखक दूर हो.

तथा ३– १ भाग सिंगीमुहरा, २ भाग मुलहटी और २ भाग उडद इन तीनोंको पीसकर १ सरसों प्रमाण सुंघाओ तो शंखकादि सर्व शिरोरोग दूर होगे.

शिरोरोगमात्रयत्न १– आंवला, सीपका चूना, और नोसादरको हथेली (करतल)पर मसलकर सुंघाओ तो सर्व शिरोरोग दूर होंगे.

तथा २– सोंठ, मिर्च, पिम्पली, पोकरमूल, हल्दी, रास्ना, देवदारु और असगंधका क्काथ पिलाओ तो सर्व शिरोरोग दूर होंगे.

तथा ३– मिश्री और अनारकी कलीको पीसकर सुंघाओ, या मुचकंदके पुष्पोंको पीसकर लेप करो तो सर्व शिरोरोग दूर होंगे.

तथा ४– कूट और अरंडमूलको कांजीमें पीसकर लेप करो या देवदारु, तगर, कूट, खश, सोंठ और तिलको कांजीमें पीसकर लेप करो तो मस्तककी समस्त पीडा मात्र दूर होगी.

अर्द्धावभेदशिरोरोगयत्न १– मिश्री और केशरको घीमें तलकर नास दो तो अर्द्धावभेद (आधाशीशी) कनपट्टी, भौंह, नेत्र और कानकी पीडा दूर होगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा २– मिश्री और मैनफलको गोमूत्रमें पीसकर नास दो तो आधाशीशी दूर हो.

तथा ३– खरहा (शशा, खरगोश)का मांसरस मिर्चोंके साथ भोजनके पहिले ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो आधाशीशी आदि शिरोरोग नाश हो जावेंगे. ये सब यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ४– चंदन, नोंन, और सोंठको जलमें पीसकर लेप करो तो आधाशीशी आदि शिरोरोग दूर होंगे.

तथा ५– आमकी छालको जलके साथ, या जलभंगरा और कूटको घृतके साथ पीसकर लेप करो तो आधाशीशी दूर हो.

तथा ६– पीपल, मिर्च, लोदको सूखी, या लवंग, मिर्च और हींगको जलके साथ पीसकर नास दो तो आधाशीशी दूर हो.

तथा ७– पीपल, आंवला, आंधाझाडा, सरसों, और आंकडेके बीजोंको शीतल जलमें पीसकर लेप लगाओ तो आधाशीशी आदि शिरोरोग दूर होवेंगे.

तथा ८– अर्द्धावभेद शिरोरोग नाशक सिद्धमंत्र–

"ओं नमो कालिकादेवी किलकिलेवासी मृधोभ्यासे हनुमंत बीर हाकमारे आधाशीशी अधकपाली नाशे, जाजारी पापनी जाजारी हत्यारी न जावे तो तेरे गुरूकी आज्ञा हनुमंत बीरकी आज्ञा गरुडपंखकी आज्ञा मेरी भक्ति गुरूकी शक्ति फुरोमंत्र ईश्वरोवाचा." इस मंत्रको कृष्णपक्षकी चतुर्दशीके दिन शक्त्यनुसार जाप करो तो सदा सिद्ध रहेगा. सो इस मंत्रसे मस्तकको २१ बार मंत्रित कर शनैः शनैः फूंक देते जाओ तो आधाशीशी निश्चय अच्छी हो जावेगी.

तथा ९– "ओंनमो आधाशीशी हूंहूंकारी पहरपछारी मुखमूंद पाटलेमारी अमुकारे शीशरहे मुख महेश्वरकी आज्ञाफुरे ओंठंठंस्वाहा". यह दूसरा मंत्रभी २१ वार पढकर मस्तकपर अंगुली फेरते जाओ तो आधाशीशी दूर हो जावेगी.

केशवृद्धियत्न १– छडछडीला, कूट, काली तिली, गोरीसर, कमलगटे, मधु और दूध इन सबको इकठे खरल करके सिरपर लेप करो बाल बहुत बढेंगे.

तथा २– गुंजा (चिरमू), जलभंगराका रस, इलायची, छड और कूट इन सबको तेलमें पकाकर उस तेलका मर्दन करो तो सिरके बाल बहुत बढेंगे.

तथा ३– छड, खरेंटी, आंवले, कूट और मोरछलीकी छाल इनको जलके साथ महीन पीसकर लेप करो तो बाल बढेंगे.

नेत्ररोगयत्न १– लंघन, लेप, स्वेदकर्म, सिरका रक्तमोचन कराना

और आंच्योतन कर्म इत्यादि यत्नोंसे नेत्रोंके सर्व विकार दूर होवेंगे.

तथा २– पठानीलोद्का चूर्ण घीमें सेककर उसकों उष्ण जलसे ताव (सिकताव) दो तो नेत्रोंका वातरोग दूर होगा.

तथा ३– अरंडकी जड, पत्र और छालका क्काथ बकरीके दूधमें औंटाकर रस जलके दूधमात्र रह जानेपर १०० तक गिननेपर्यंत उस तप्त दूधकी सहती सहती धार नेत्रोंपर मारो तो वातज नेत्ररोग दूर होगा.

तथा ४– पानीके संयोगसे नीबूके पत्तोंका रस निकालकर उसमें लोद् पीसो और उष्ण करके लेप करो तो वात और रक्तपित्तका नेत्रविकार दूर होगा.

तथा ५– नेत्रोंमें स्त्रीके दूधसे आच्योतन (८ बूंद् डालना) कर्म कराओ तो वात और रक्तपित्तका नेत्रविकार दूर होगा.

तथा ६– वातप्रकोपसे नेत्रोंमें खुजाल चलके बहुत यत्नोंसेभी अच्छी न हो तो ललाटका रक्तमोचन कराओ या भौंहके ऊपर दाग दो तो नेत्रोंकी खुजाल बंद् हो जावेगी.

तथा ७– सहजना या नीमके पत्तोंकी पींड (लुग्दी) बांधो तो कफकी खुजाल बंद् होगी.

तथा ८– पठानी लोद् और मुलहटीका चूर्ण घीमें सेककर बकरीके दूधमें पकाओ और इस दूधसे नेत्रोंको तर्पण (धारा मारना) कराओ तो उष्णता और रक्तका नेत्ररोग दूर होगा.

तथा ९– त्रिफला, लोद, मुलहटी, मिश्री और नागरमोथा इनको शीतल जलमें पीसकर इससे तर्पण कराओ तो रक्तज नेत्ररोग दूर होगा.

तथा १०– बकान या आंवलेके पत्तोंकी पींड (लुग्दी) बांधो तो उष्णताकी खुजाल दूर होगी.

---

१ आंख खोलकर औषधके रसकी ८ बूंदें टपका दो, शीतकालमें उष्ण तथा उष्णकालमें शीतल औषधोंका प्रयोग करो, जो वातनेत्र हों तो तीखी और कफजन्य हों तो तीखी, खारी या उष्ण औषध डालो, यह कर्म रात्रिको नहीं वरन दिनको करना योग्य है. इसे आच्योतनकर्म कहते हैं.

२ इसे तर्पणकर्म कहते हैं.– १ सेक, २ आच्योतन, ३ पिंड, ४ विडालकर्म, ५ तर्पण, ६ पुटपाक, ७ अंजन और ८ शस्त्रक्रिया ये आठों काम बडी सावधानीसे करना चा

तथा ११– त्रिफला और लोदको कांजीके जलमें पीसकर घीमें तलो और इसकी पींड आंखोंपर बांधो तो उष्णता और कफकी खुजाल दूर होगी.

तथा १२– सोंठ, नीमके पत्ते और सेंधानोंन पीसकर नेत्रोंपर पींड बांधो तो नेत्रोंकी खुजाल और शोथ दूर होगा.

तथा १३– नेत्रोंकी गुहांजनी (गोहरी, आंखपरकी फुडिया)को शस्त्रसे चीरकर घीसे सेको नंतर ऊपरसे मैनसिल, हरताल, तगर और मधुको पीसकर लेप चढाओ तो गुहांजनी मिट जावेगी.

तथा १४– कमलगटा, सहजनेके बीज और नागकेशर इनोंको पीसकर अंजन दो तो नींद नहीं आवेगी.

तथा १५– काली मिर्चको मधु या घोडेकी लारके साथ पीसकर अंजन दो तो नींद नहीं आवेगी.

तथा १६– मूंगा, काली मिर्च, कुटकी, बच और सेंधानोंन बछियाके मूत्रमें घिसकर अंजन करो तो तंद्रा (झपकी) दूर होगी.

तथा १७– जमालगोटेकी विजीको नीबूके रसकी ३१ पुट देकर गोली बनाओ और मनुष्यकी लारमें गिसकर अंजन करो तो सर्पादिका विषभी दूर होकर मृत मनुष्यभी जीवित होना सम्भव है.

तथा १८– अत्तारकी दवा, और बडी हरोंको पानीमें घिसकर लेप करो तो वात, पित्त, कफ तीनोंका नेत्राभिष्पंद (आंखे आना) दूर होगा.

तथा १९– निर्मलीके फल मधुमें घिसकर कपूरके संयोगसे अंजन करो तो नेत्र निर्मल (स्वच्छ) हो जावेंगे.

तथा २०– निर्मलीके फलोंको जलमें घिसकर अंजन दो तो नेत्रश्राव (वहता हुआ जल) दूर होगा.

तथा २१– बोल (बमूलनी, पागलवमूल, कटवमूल)के पत्तोंके गाढे क्वाथमें मधु मिलाकर अंजन करो तो नेत्रश्राव दूर होगा.

तथा २२– साटीकी जडको स्त्रीके दूधमें घिसकर अंजन करो तो नेत्रोंकी खाज दूर हो इसी प्रकार मधुके साथ आंजने नेत्रश्राव, घृतके साथ

आजनेसे फुली, तेलके साथ आंजनेसे तिमिर और कांजीके साथ घिसकर आंजो तों रत्तोंधीभी दूर होगी.

तथा २३– २ टंक गिलोयका रस, १ मासे सोंठ और १ मासे सेंधेनोंनको महीन पीसकर अंजन करो तो मोतियाविंद, तिमिर, धुंध, और नेत्रकांच आदि समस्त नेत्रविकार दूर होवेंगे.

तथा २४– रार, चमेलीके फूल, मैनसिल, समुद्रफेन, सेंधानोंन, काली मिर्च और गेरूको मधुके साथ महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्रोंकी खुजाल दूर होकर झडे हुए रोम जम आवेंगे.

तथा २५– चीणियांकपूरको वडके दूधमें पीसकर अंजन करो तो २ मासमें फुली कट जावेगी.

तथा २६– नीला थोथा, सोनामुखी, सेंधानोंन, मिश्री शंखकी नाभि, गेरू, काली मिर्च और समुद्रफेनको मधुके साथ पीसकर अंजन करो तो तिमिर, नेत्रकांच और फुली दूर होगी.

तथा २७– आंवलेकी बिजी, बहेडेकी बिजी और हरेंकी बिजीको महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्रोंका वहाव और वातरक्त दूर होगा.

तथा २८– रसोत, दोनों हलदी, चमेलीके पत्ते, (या फूल) और नीमके पत्तोंको गोवरके रसमें पीसकर लेप करो तो रत्तोंधी दूर होगी.

तथा २९– ८० तिलपुष्प, ६० पिम्पली बीज, ५० जवेली (मारवाडमें प्रसिद्ध) पुष्प, और १६ मिर्चको पीसकर गोली बनाओ और जलमें घिसकर अंजन करो तो तिमिर, अर्जुन, फुली, और मांसवृद्धि ये समस्त रोग दूर होवेंगे. इसे रोपणीगुटिका कहते हैं.

तथा ३०– शूकरदंत, गोदंत, गर्दभदंत, शंखकी नाभि, निर्वेदा (बिंधेबिना) मोती, और समुद्रफेनको महीन पीसकर अंजन करो तो फुली आदि समस्त नेत्ररोग दूर होवेंगे. इसे दंतवर्ती कहते हैं.

तथा ३१– कणगजके बीजोंके चूर्णको टेसूके रसकी बहुतसी पुटें देकर गोलियां बनालो और जलमें घिसकर नेत्रोंमें अंजन करो तो फुली आदि समस्त नेत्रविकार दूर होवेंगे. इसे लेपनीगुटिका कहते

तथा ३२– शंखकी नाभि, बहेडेकी बिजी, हरंकी बिजी मैंनसिल, पीपल, मिर्च, कूट, और बचको बकरीके दूधमें पीसकर नेत्रोंमें अंजन करो तो फुली, मांसवृद्धि, नेत्राभिष्पंद, पटल, रतोंधी, और सर्व नेत्ररोग दूर होंगे. इसे चन्द्रोदयगुटिका कहते हैं.

तथा ३३– नेत्ररोगीको निर्वातस्थानमें पीठके बल (चित्ता) सुलाकर उसके नेत्रोंके आसपास उर्दके मसेहुए आटेकी २ अंगुल ऊंची दीवार सी-बना दो और कुछ कुछ तपाहुआ या १०० वारका धोया हुआ घृत तथा दूध इस दीवारके मध्य (आंखोंमें) भरके १०० गिननेके समयपर्यंत भरा रहने दो तो नेत्रवक्रता, पक्ष (वरोनी)का झडाव, अनिमिष (पलक न लगना) तिमिर, फुली, खुजाल, और शिरोरोग ये सर्व विकार दूर होंगे.

तथा ३४– १ मासे पठानी लोद, १ मासे फिटकरी, १ मासे रसोत, १ मासे मुलहटीको गवांरपाठेके रस, या पोस्तेके रस, या जलमें पीसकर पोटली बनाओ और नेत्रोंपर वारंवार फेरो तो नेत्र अच्छे हो जावेंगे.

तथा ३५– मुलहटी, गेरू, सेंधानोंन, दारुहल्दी और रसोतको जलमें पीसकर लेप करो तो सर्व नेत्ररोग दूर होंगे.

तथा ३६– १ मासे अफीम, १ मासे फूलीहुई फिटकरी, और १ मासे लोदको नीबूके रसके साथ लोहेकी कडाहीमें घोटके कुछ गर्म कर नेत्रोंपर लेप करो तो नेत्ररोग तत्काल अच्छा होगा.

तथा ३७– लोहेकी कढाहीमें नीबूका रस घोटकर लेप करो तो नेत्राभिष्पंदरोग अच्छा हो जावेगा.

तथा ३८– हरंकी छाल, सेंधानोंन, सोनगेरू और रसोतके जलमें पीसकर नेत्रोंपर लेप करो तो सर्व नेत्ररोग दूर होंगे.

तथा ३९– काले सांपकी वसा (चर्बी)में शंखकी नाभि और निर्मली-को पीसकर अंजन दो तो मोतियाबिंद और कांच दूर होगा.

तथा ४०– मुर्गीके अंडोंके खोकला (छिलके) मैंनसिल, कांच, शंख-

---

१ यह प्रयोग बादल, उष्णकाल, चिंता और श्रमदशामें कदापि मत करो.

की नाभि, चंदन और सेंधेनोंनको पीसकर अंजन करो तो मोतियाविन्द और फुली आदि समस्त नेत्रविकार दूर होवेंगे.

तथा ४१– काली मिर्च, समुद्रफेन, पिम्पली, सेंधानोंन और सुर्मा ये सब दो दो मासे लेकर अति महीन पीसो और चित्रा नक्षत्रके दिन आंखोंमें अंजन दो तो फुली, खाज, और कांच आदि सर्व रोग दूर हो जावेंगे.

तथा ४२– खपरियाको पीसकर जलमें डुबादो और उसके ऊपरका पानी छानकर नीचेका गाढा भाग सुखालो इस सूखी हुई पपडीको त्रिफलाके रसकी तीन पुटें देकर इससे ($\frac{1}{10}$) दशमांश कपूर मिलाओ नंतर दोनोंको महीन पीसकर अंजन करो तो नेत्रके समस्त रोग दूर हो जावेंगे.

तथा ४३– सुरमाको तपातपाकर ७ वार त्रिफलाके रसमें ७ वार स्त्रीके दूधमें, ७ वार गोमूत्रमें और ५ वार पुनः स्त्रीके दूधमें डुबाकर महीन पीसके अंजन करो तो सर्व नेत्रविकार दूर होवेंगे.

तथा ४४– शुद्ध शीशा, जल, पारा, सुर्मा और इन सबसे दशमांश ($\frac{1}{10}$) भीमसेनी कपूर इन सबको महीन पीसकर अंजन करो तो सर्व नेत्ररोग दूर होंगे. इसे नयनामृतांजन कहते हैं.

तथा ४५– सीसा गलागलाकर १०० वार त्रिफलाके रसमें, ५० वार जलभंगराके रसमें, २५ वार सोंठके रसमें, ५० वार घृतमें, २५ वार गोमूत्रमें, २५ वार मधुमें और २५ वार बकरीके दूधमें डुबाडुबाकर अंतमें इसकी शलाका (सलाई, सींक) बनाओ जो यह शलाका सूखीही नेत्रोंमें प्रतिदिन नेत्रोंमें फेरो तो नेत्रोंके समस्त विकार दूर हो जावेंगे.

विशेषतः– नेत्राभिष्पंद (नेत्र दुःखने आये हो तो ३ दिनतक कच्चे नेत्रोंका यत्न मत करो पश्चात् पक जानेपर चौथे दिन अंजनादि औषध करो तो नेत्र अच्छे हो जावेंगे. हेमन्त और शिशिरऋतुमें मध्यान्हसमय, ग्रीष्म और शरदमें मध्यान्हके पहिले, वर्षामें आकाश स्वच्छ (निर्मेघ) होनेके समय और वसंतऋतुमें चाहे तब अंजन भर सक्ते हैं. अंजन लगानेके लिये प्रथम बांयीं पश्चात् दाहिनी आंखमें अंजन भरो. उपरोक्त प्रथासे अंजन भरो तो नेत्र शीघ्रही आरोग्य हो जावेंगे.

वर्जितकर्म— नेत्रके रोगीको सुर्मा धारण, विशेष घी, कसैली वस्तु, खट्टे पदार्थ और गरिष्ठान्न भक्षण, स्नान और ताम्बूल आदि उष्ण वस्तुओंका सेवन कदापि मत करने दो.

वाग्भट्टके मतसे मोतियाविन्दरोगयत्न— कच्चे मोतियाविन्दका जाला शलाकासे निकलवाना वर्जित है परन्तु पक जानेपर जाला निकलवानेसे कुछ हानि नही बरन लाभही है.

वर्जितरोगी— पीनस, कास, अजीर्ण, शिरोरोग, कर्णरोग और शूलपीडासे पीडित, भयातुर और वमन कियाहुआ इनमेंसे किसीभी दशामें रोगी हो तो उसका जाला मत निकालो.

जालनिष्कासनविधि— श्रावण, कार्तिक और चैत्रसे व्यतिरिक्त मासोंमें नेत्रोंका जाला निकालो किन्तु इन तीनों महिनोंमें मत निकालो. मध्यान्ह समयसे पहिले २ ही जाला निकालो मध्यान्ह पश्चात् मत निकालो. जाला निकालतेसमय निर्वात स्थानका उपयोग करो जिसमें रोगी पवनसे सुरक्षित रहे. जाला निकालनेके पूर्व रोगीको विरेचन (जुलाब) देकर शरीरशुद्धि करलो नंतर सुन्दर हल्का भोजन देकर शरीर निरालस्य हो जाने दो तब रोगीको आसन (पालक) मारकर बिठाओ और उसके पीछे एक चतुर मनुष्यको बिठाकर रोगीको थम्भवाओ जिसमे वह हिलने न पावे, इसप्रकार बिठानेपर अपने मुखकी भापसे नेत्रोंको फूंककर स्वेदित करदो और अंगूठेसे नेत्रको मलकर नेत्रोंका मल इकठा करलो नंतर सधेहुए हाथसे बडी युक्ति चतुराईपूर्वक शलाकासे नेत्रके प्रांतभाग (गार)का जाला विदीर्ण करके समस्त जाला इकठी करनेपर बाहर निकालो. यहांतककि जब पुतलीपरके मोतियाविंदकी डीक (टिकडी, बूंद, पटल) निकलकर रोगीको उसीसमय समस्त वस्तु यथार्थ दीख पडे तब नेत्रोंपर घीके फोहे (रुई) बांधकर चित्ता (सीधा) सुलादो.

उपरोक्त क्रिया होनेपर उस रोगीको कांचके प्रतिबिम्बसे बचाओ, औंधा सोना, शरीर या सिर हिलाना, छींक, खांसी, डकार, थूकना, दंतधावन, स्नान, श्रम और जलपान इन कार्योंकी विशेषता न होनेदो यदि

दैववशात् होगी तो बडी सावधानी और स्वल्पतापूर्वक होनेदो, घृतादि गरिष्ठान्नका परित्याग कर हल्का भोजन खिलाओ इस पथ्यको सात दिन-पर्यंत निवाहते जाओ. तदनंतर कुछ घी डालकर हल्के अन्नका लपटा (पतली दलिया) खिलाकर वातनाशक मिश्री आदि पदार्थ खिलाओ, वायु, तेज (प्रकाश) तथा महीन वस्तु मत देखने दो, नेत्रोंको शीतलता-दायक हरित वस्तुओंपर दृष्टि विशेष पडनेदो और कुपथ्यसे बचाओ यह कृति १ मंडल (४० दिन) पर्यंत करो.

यह सब हो चुकनेपर मोतियाबिंदू सम्बन्धी शीतल उपनेत्र (चश्मा, ऐनक) सदैव लगाते रहो तो उपरोक्त विधिवत् क्रिया होनेपर पुनः मो-तियाबिंद कदापि न होगा. यह सर्व विधान वाग्भट्टमें लिखा है.

नेत्रप्रकाशकांजन १– हींगको दडघलके पत्तोंके रसमें घिसकर अंजन करो तो पांडुरोग (पीलिया) तथा कामलाभी दूर होगा. यह यत्न पांडुरो-गमें लिखना योग्य था परन्तु नेत्रसम्बन्धसे यहां लिख दिया है.

तथा २– बील और तुलसी दोनोंके पत्तोंका रस तथा इन दोनोंके स-मान स्त्रीका दूध इन तीनोंको कांसेकी थालीमें गजवेली (उत्तम लोह)के घोटेसे २ प्रहर और तांम्बेके घोटेसे २ प्रहर घोटकर अंजन लगाओ तो नेत्रशूल और नेत्रपाक दोनों दूर होवेंगे. इसे नारायणाञ्जन कहते हैं.

तथा ३– सोंठ, हर्रकी छाल, कुल्थी, खपरिया, फिटकरी, खैरसार और मांजूफल ये सब एक एक भाग तथा भीमसेनी कपूर, कस्तूरी और अ-विद्ध मोति ये सब आधे आधे भाग लेकर इन सबको महीन पीसो और नीबूके रसमें ५ दिन खरल करके गोलियां बनालो जो इसकी गोलीको जलमें घिसकर अंजन करो तो नेत्रोंका तिमिर, स्त्रीके दूधमें घिसकर अं-जन करो तो फुली और पटल, मधुमें घिसकर अंजन करो तो नेत्रश्राव, गोमूत्रमें घिसकर लगाओ तो रतोंधी और जायपत्रीके रसमें घिसकर अं-जन लगाओ तो नेत्रोंकी मांसवृद्धि दूर होगी. इसे नयनामृतगुटिका कहते हैं.

तथा ४– अपामार्ग (आंधेझाडे)के पत्तोंको गोमूत्रमें पीसकर आधे भाग खपरियाके साथ खरल करो और इस खरल कियेहुए पदार्थको ज-

स्तेके तुकडोंके ऊपर छाप (लपेट) कर ऊपरसे कपड मिट्टी लपेट दो नंतर सूख चुकनेपर जंगली कंडोंकी आंचसे गजपुटमें फूंकदो स्वांग शीतल हो चुकनेपर पीसकर नेत्रोंमें अंजन करो तो झडेहुए पलक (वरौनी) पुनः जम आवेंगे.

तथा ५– गधेकी डाढ घिसकर अंजन करो तो शीतलामें पडीहुई फुली कटकर नेत्र स्वच्छ हो जावेंगे.

तथा ६– आंवले और गंधकसे मारे हुए ताम्बेको महीन पीसकर अंजन करो तो सबलपात और पटल आदि सर्व नेत्ररोग दूर होंगे. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा ७– ५ टंक शुद्ध नीलाथोथा, और ५ टंक फूली हुई फिटकरी ५ टंक पिम्पलीके (जलमें भिंगाकर निकाले हुए) बीज और ५ मासे मिश्रीको महीन पीसकर अंजन करो तो फुली, नेत्रश्राव, और धुंध ये सर्व विकार दूर होवेंगे.

तथा ८– शंखकी नाभि, बहेडेकी बिजी, हर्रकी छाल, मैनसिल, पिम्पली, काली मिर्च, कूट और बचको बकरीके दूधमें खरल करके गोली बनाओ और सूखनेपर जलमें घिसकर लगाओ तो तिमिर, पटल, कांच, रतौंधी, फुली और मांसवृद्धि ये सर्व विकार हीन हो जावेंगे. इसे चन्द्रोदयगुटिका कहते हैं.

तथा ९ हल्दी, नीमके पत्ते, पिम्पली, मिर्च, वायविडंग, नागरमोथा और हर्रकी छालको बकरीके मूत्रमें ३ दिनपर्यंत खरल करके गोलियां बनालो और छायामें सुखने नंतर गोमूत्रके साथ घिसकर अंजन करो तो नेत्रकी कांच, जलमें घिसकर लगाओ तो तिमिर, मधुमें घिसकर लगाओ तो पटल और स्त्रीके दूधमें घिसकरके लगाओ तो फुली दूर हो जावेगी. इसे चन्द्रप्रभागुटिका कहते हैं.

तथा १०– १ भाग हर्रकी छाल, २ भाग बहेडेकी छाल, ४ भाग आवलेकी छाल, २ टकेभर शतावरी, १ टकेभर लोहसार, २ टंक मुलहटी, २ टंक तज, ५ टंक सेंधानोंन, ५ टंक पिम्पली और इन सबके समान मिश्रीका २ टंक चूर्ण मधु और घृतके संयोगसे ४९ दिनपर्यंत खिलाओ तो तिमिर, पटल, नेत्रकांच, रतौंधी, फुली, नेत्रश्राव और सबल वात आदि सर्व नेत्रविकार दूर हो जावेंगे. इसे द्वादशामृतहरीतकी कहते हैं.

तथा ११– सेरभर त्रिफलाका रस, सेरभर गुरचका रस, १ सेरभर आवलेका रस, सेरभर जलभंगरेका रस, सेरभर अडूसेका रस, सेरभर शतावरीका रस, सेरभर बकरीका दूध और आधसेर (कमलगटा, त्रिफला, मुलहटी, पिम्पली, दाख, मिश्री और कटियालीका) क्वाथ, सेरभर गोघृत और २ सेर गोदुग्ध इन सबको पकाकर रसादिक जलके घृतमात्र रह जानेपर छानलो और इस घृतमेंसे नित्य २ टकेभर खिलाओ तो तिमिर, कांच, फुलीआदि नेत्ररोग तथा सर्व वायुजन्य रोग दूर होवेंगे. इसे महात्रिफलादिघृत कहते हैं.

तथा १२– १० मासे शुद्ध सफेदा महीन पीसकर भलीभांति धोओ. नंतर तीनवार धोचुकनेपर सुखाकर पीसलो और लडकीवाली स्त्रीके दूधकी ५ पुटें देकर शुद्ध करलो पश्चात् इसीमें ३ मासे अत्तारकी औषध, १ मासे कपीला, ४ रत्ती भीमसेनी कपूर, १ मासे श्वेत गोंद इन सबको गुलाबजलसे खरल करके बेरके समान गोलियां बनालो और सूखनेपर गुलाबजल या सामान्य जलके साथ घिसकर अंजन करो या लेप लगाओ तो उष्णताजन्य नेत्रविकार सर्वथा नाश हो जावेंगे.

तथा १३– अब हम अंतको समस्त मनुष्योंके सुगमता तथा निष्परिश्रमपूर्वक प्राप्त होनेयोग्य एक साधारण उपाय लिखते हैं.

भुक्त्वा पाणितलं घृष्ट्वा चक्षुषोर्यदि दीयते। जातरोगा विनश्यंति तिमिराणि तथैवच ॥ इत्युक्तं शारंगधरे ॥

भाषार्थः– सारंगधरमें कहा है कि भोजन करके आचमन करने पश्चात् उन गीले हाथोंकी हथेली (करतल) परस्पर घिसकर अपने नेत्रोंपर नित्य फेरा करो तो तिमिरादि सर्व नेत्रविकार दूरही भागते रहेंगे.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे शिरोरोगनेत्ररोगयत्ननिरूपणं नामाष्टत्रिंशस्तरङ्गः ॥ ३८ ॥

## ॥ कर्णरोग-नासारोग ॥

मयात्र कर्णरोगस्य तथा नासामयस्य च ।
तरङ्गे नन्दरामे हि कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

भाषार्थः– अब हम इस ३९ उन्तालीसवें तरंगमें कान और नाकके रोगोंकी चिकित्सा यथाक्रमसे वर्णन करते हैं.

कर्णरोगयत्न १– अकाव (आंकडा)के पत्तोंको खटाईसे पीसकर रस निकालो इस रसमें तेल और नोंन मिलाकर थूहरकी लकडीमें भरदो नंतर इस लकडीको कपडमिट्टी करके पुटपाकरीतिसे उसका रस निकालले जो यह रस उष्णकर सहता सहता कानमें डालो तो कानका शूल दूर होगा.

तथा २– आंकडेके पत्ते घी लगाकर अग्निसे तपाओ और उनका रस निकालकर कुछ उष्ण सहता हुआ कानमें डालो तो कानका शूल दूर होगा.

तथा ३– बकरीके मूत्रमें सेंधानोंन औटाकर सहता सहता कानमें डालो तो कानका शूल दूर होगा.

तथा ४– अरलू (अलाम्बु)के रसमें तेल पकाकर यह तेल सहता हुआ कानमें डालो तो त्रिदोषज कर्णशूलभी शांत होगा.

तथा ५– बीलकी जडका रस, सोंठ, मिर्च, पीपल, पीपलामूल, आंधेझाडेका खार, जवाखार कूट और गोमूत्रको तेलमें मंद मंद आंचसे पकाकर रस जलके तेल मात्र रह जानेपर छानलो और इसे कानमें डालो तो बाधिर्य (बहरापन) कर्णनाद और कर्णश्राव आदि कानके सम्पूर्ण रोग अच्छें हो जावेंगे. इसे बिल्वतैल कहते हैं.

तथा ६– कच्चे बिल्वफलके रसमें सज्जीका चूर्ण डालकर पिलाओ तो कानकी पीडा, बहरापन, कानकी जलन, आदि कर्णरोग अच्छे हो जावेंगे.

तथा ७– मूलीकी जडका रस, मधु और तेलको तपाकर सुहाता सुहाता कानमें डालो तो कानका बहरापन अच्छा होगा.

तथा ८– आंवले, जामुन, महुआ और चमेलीके पत्ते तथा वडकी जडकी छाल इन सबका रस तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानसे पीवका वहाव बंद हो जावेगा.

तथा ९– स्त्रीके दूधमें रसोत घिसकर कुछ मधुके संयोगसे कानमें डालो तो कानसे पीवका वहाव बंद हो जावेगा.

तथा १०– कूट, हींग, दारुहल्दी, सोंफ, सोंठ, सेंधानोंन, इनका चूर्ण

बकरेके मूत्रके साथ तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानसे पीवका वहाव रुक जावेगा.

तथा ११– समुद्रफेन, सुपारीकी राख और कत्थाको पीसकर कानमें डालो तो कानसे पीवका वहाव बंद हो जावेगा.

तथा १२– बडी सीपका चूर्ण तेलमें पककर यह तेल कानमें डालो तो कानका व्रण (फोडा) अच्छा हो जावेगा.

तथा १३– एक एक टकेभर आंवलासार, गंधक, मैंनसिल, हल्दी और धतूरेके पत्तोंका रस इन सबको महीन पीसकर ८ टकेभर तेलके साथ पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानका व्रण अच्छा होगा.

तथा १४– बैंगनकी जडका रस और सरसोंका तेल मिलाकर कानको धूनी दो तो कानकी कृमि गिर जावेंगी. तथा उपरोक्त बारहों यत्नभी कृमिकर्ण रोगकी निवृत्यार्थ उपयोगी होते हैं.

विशेषतः– कर्णशोथ, कर्णार्श, और कर्णार्बुद रोगोंकी चिकित्सा शोथ, अर्श, और अर्बुद रोगोमें कथित यत्नोंसेही करो, ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १५– सोंठ, पिम्पली, सेंधानोंन, कूट, हींग, बच, लहसन, और आकके पके पत्तोंका रस ये सब तिलीके तेलमें पकाकर यह तेल कानमें डालो तो कानकी पीडा दूर होगी.

तथा १६– बडी मोटी सीप, पद्मकाष्ट, हींग, तुम्बरू, सेंधानोंन, कूट, और विनौलोंको चूर्णके क्वाथमें ७ टकेभर कडुवा तेल और इन सबके समान हुलहुलका रस डालकर मंद आंचसे पकाओ और सर्व रसादि जलके तेलमात्र रह जानेपर छानकर कानमें डालो तो कर्णव्रण, कर्णश्राव, बाधिर्य और कर्णनादादि सम्पूर्ण कर्णरोग अच्छे हो जावेंगे.

तथा १७–ऽ। पावभर कूकरभंगरेका रस, हरफारेवडी (आंवले जैसी होती है)का रस, चार पैसेभर लहसनका रस, सोंफ, बच, कूट, सोंठ, मिर्च और लवंग (दो दो टंक) ऽ॥ आधसेर बकरीका दूध, और ५ टकेभर कढवा तेल न सबको एकत्र कर मंद आंचसे औंटाओ, रसादि जलकर तेल मात्र रह

जानेपर छानकर कानमें डालो तो बहिरापन, पीवका वहाव आदि कर्ण-रोग मात्र अच्छे हो जावेंगे. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १८– शताबरी, असगंध, अरंडके बीज और दूधको तिल्लीके तेलमें मंद आंचसे पकाओ और तेलमात्र रह जानेपर छानकर कानकी लोलक (लोंडी)में लगाओ तो लोलकका पकाव तथा पीडा आदि सर्व विकार दूर होकर लोलकका छिद्र बढ जावेगा.

तथा १९– अष्टवर्गमें तेल पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो परिपोटिका नाम कर्णरोग अच्छा हो जावेगा.

तथा २०– जोंक लगाकर रक्तमोचन करादो तो कर्णोत्पातरोग अच्छा हो जावेगा.

तथा २१– सुरमा, काकलहरी, बावची, और कंकपक्षी (मारवाडमें प्रसिद्ध)का मांस ये सब तेलमें पकाकर कानकी लोलकपर लगाओ तो उन्मथरोग अच्छा हो जावेगा.

तथा २२– आम, जामुन, और वडके पत्तोंका क्काथ तेलमें पकाकर यह तेल मर्दन करो तो दुःखवर्द्धन रोग कुशल होगा.

तथा २३– गौके गोवरके अधजले कंडे (छेना, गोवरी, उपली)की आंचसे सेको, या कपूरको दूध तथा गोमूत्रमें पीसकर लेप करो तो कानकी लोलक अच्छी हो जावेगी. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

नाशारोगयत्न १– काली मिर्च, गुड, और दहीको मिश्रित करके खिलाओ तो पीनस नाम नाशारोग अच्छा होगा.

तथा २– कायफल, पोकरमूल, सोंठ, कांकडासिंगी, पिम्पली, काली मिर्च, और कलौंजी इनका २ टंक चूर्ण अद्रकके रसके साथ खिलाओ या इसीका क्काथ पिलाओ तो पीनस, स्वरभंग, कफ, श्वास और सन्निपात ये सर्व रोग अच्छे होवेंगे.

तथा ३– कायफल, हींग, मिर्च, लाख, इन्द्रयव, कूट, बच, वायविडंग और सहजनेकी जडका क्काथ पिलाओ तो पीनस दूर होगी.

तथा ४– सोंठ, काली मिर्च. पिम्पली. चित्रक, तालीसपत्र, डांसरिया.

अमलवेत, चव्य, जीरा, इलायची, तज और पत्रजका चूर्ण इन सबके समान पुराने गुडमें मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो जो इसमेंसे १ गोली नित्य १० दिनपर्यंत खिलाओ तो पीनस काश और अरुचि ये सब दूर होंगे. इसे व्योषादिगुटिका कहते हैं.

तथा ५– कटियाली, दात्यूणी, बच, सहजनेकी छाल, तुलसीपत्र, सोंठ, मिर्च, पीपल और सेंधानोंन इन सबको तेलमें पकाकर इस तेलका नास (सुंघनी) दो तो पीनस दूर होगी. इसे व्याघ्रीतैल कहते हैं.

तथा ६– मुंगनेकी छाल, कटियाली, निसोत, सोंठ, मिर्च, पीपल, सेंधानोंन और बिल्वपत्रका रस इन सबको तेलमें पकाकर इस तेलका नास दो तो पीनस अच्छी होगी. इसे शिग्रुतैल कहते हैं.

तथा ७– वायविडंग, सेंधानोंन, हींग, गूगल, बच और मैनसिलके चूर्णका नास दो तो पीनसरोग अच्छा होगा.

तथा ८– भांगके पत्तोंका रस और सेंधानोंन तेलमें पकाकर तेलका नास दो तो पीनस अच्छी होगी.

तथा ९– जीरेका चूर्ण घी और शक्करके साथ नित्य खिलाओ तो पीनस दूर होगी.

तथा १०– रात्रिको सोनेके समय औंटायाहुआ अर्द्धावशेष जल नित्य पिलाओ तो पीनस अच्छी हो जावेगी.

तथा ११– घी, गूगल और मोमका मिश्रणकर नाकके सन्मुख धूनी दो तो विशेष छींके आना बंद हो जावेगा.

तथा १२– सोंठ, कूट, पिम्पली, बीलका गूदा और दाखके क्वाथमें तेल पकाकर इसका नास दो तो अधिक छींके आना बंद हो जावेगा.

तथा १३– धमासा, पिम्पली, दारुहल्दी, आधेझारेके बीजे, जवाखार, किरमालेकी गिरी (न हो तो बक्कल) और सेंधानोंन इनका चूर्ण तेलमें पकाकर नाकमें लगाओ तो नाशार्श दूर होगा.

विशेषतः– नाशार्बुद, नाशाशोष, नाशार्श, नाशापाकादि शेष नाशारोगोंके यत्न अर्बुद, शोष, अर्श, पाकादि रोगोंमें वर्णित चिकित्सासेही करो.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे कर्णरोग-नासारोगयत्ननिरूपणं नामैकोनचत्वारिंशत्तमस्तरंगः ॥ ३९ ॥

॥ मुखरोग ॥

मयात्राननरोगाणां सुविचार्य यथाक्रमात् ।
तरङ्गेऽभ्रसमुद्रे वै कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब हम इस चालीसवें तरंगमें मुखके रोगोंकी चिकित्सा भलीभांति विचारपूर्वक यथाक्रमानुसार लिखते हैं.

ओष्ठरोगयत्न १— जोंक लगाकर या सीर छुडाकर ओष्टका रक्तमोचन कराओ तो ओष्ठरोग दूर होगा.

तथा २— घृतमें शुद्ध मोंम तपाकर इससे सेक करो तो ओष्ठरोग दूर होगा.

तथा ३— तेल, घृत, मोंम और मेद (चर्बी) आदि स्नेहपदार्थोंमें मोंम तपाकर इससे सेक करो तो ओष्ठरोग दूर होगा.

तथा ४— शीतल औषधोंको लेप करो तो ओष्ठरोग दूर होगा.

तथा ५— प्रियंगुपुष्प, त्रिफला और लोदको स्नेहमें तपाकर सेक करो या मधुके साथ खिलाओ तो ओठोंका रोग दूर होगा.

तथा ६— ओष्ठोंमें व्रण पड जावें तो उनके यत्न पूर्वोक्त व्रण लिखित यत्नोंके समानही करो.

विशेषतः— ओष्ठोंमें चूर्ण अवलेह आदि औषध अंगुलीसे लगाना चाहिये. इस क्रियाको प्रतिसारण कहते हैं.

दंतमूलरोगयत्न १— मुखका रक्तमोचन कराके सोंठ, सरसों, और त्रिफलाके क्वाथसे कुरले कराओ तो दंतमूल (मसूडे) अच्छे हो जावेंगे.

तथा २— हीराकसी, पठानी लोद, प्रियंगुपुष्प, मैनसिल और तेजबल इनको मधुके साथ पीसकर मुंहमें लगाओ तो मसूडे अच्छे हो जावेंगे.

तथा ३— तेल किम्वा घीके कुरले कराओ तो मसूडे अच्छे हो जावेंगे.

तथा ४— मुखका रक्तमोचन कराके पंचलोन, जवाखार, और मधुके क्वाथसे कुरले कराओ तो दंतपुप्पट नाम मसूडोंका रोग अच्छा होगा.

तथा ५— चिकने पदार्थ खिलाओ और तेलके कुरले कराओ तो दंतवेष्टि नाम मसूडोंका विकार दूर होगा.

तथा ६— लोद, पतंग, महुआ, लाख, और मौर सिरीके बक्कलका चूर्ण मुंहमें मसो तो चलदंत नाम मसूडोंका रोग अच्छा होगा.

तथा ७— नागरमोथा, हर्रकी छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल, वायविडंग और नीमके पत्तोंके चूर्णकी गोली गोमूत्रके साथ बनाकर छायामें सुखाओ और सोतेसमय १ गोली मुंहमें रखो तो चलदंतरोग दूर होकर दंत दृढ हो जावेंगे. इसे भद्रमुस्तादिगुटिका कहते हैं.

तथा ८— नीले फूलका कठसेला (खटसेरुआ) धमासा, खैरसार, जामुनकी छाल, आमकी छाल, मुलहटी और कमलगटा ये सब टके टकेभर चूर्णकर १६ सेर जलमें औंटाओ और चतुर्थांश रह जानेपर बकरीके दूध या तेलमें पकाओ नंतर रसादिक जलकर स्नेहमात्र रह जानेपर इसका कुरला २ घडीपर्यंत मुंहमें रखो तो दांत दृढ हो जावेंगे. इसे सहचराध तेल कहते हैं.

तथा ९— मुंहका रक्तमोचन कराके लोद, नागरमोथा और रसोतका चूर्ण मधुके साथ मसूडोंपर लगाओ और उत्तम दूधके कुरले कराओ तो सौषिर नाम मसूडोंका रोग अच्छा होगा.

तथा १०— मसूडोंका रक्तमोचन कराके सोंठ, सरसों, और त्रिफलाके क्काथसे कुरले कराओ तो परिदर और उपकुश नाम मसूडोंके दोनों दूर होवेंगे.

तथा ११— रक्तमोचन कराके गूलरके पत्ते, मधु, नोंन, सोंठ, मिर्च और पीपलके क्काथसे कुरले कराओ और ऊपरसे लवण तथा कोई अन्य क्षार लगादो तो मसूडोंके व्रण अच्छे होकर उनकी कृमि नाश हो जावेंगी.

तथा १२— प्रथम मसूडोंका मांस कटाकर मधुके कुरले कराओ नंतर बच, तेजबल, पाठ, सज्जी, जवाखार, और पिम्पलीका चूर्ण उनपर लगाओ तो खलिवर्द्धन नाभी दंतमूलरोग नाश होगा.

तथा १३— शस्त्रसे मसूडोंका मांस कटाकर पटोल, नीमके पत्ते और त्रिफलाके क्काथसे कुरले कराओ तो पंच नाडीव्रण नाभी मसूडोंके रोग अच्छे हो जावेंगे.

तथा १४— चमेलीके पत्ते, कटियाली, धतूरेके पत्ते, मजीठ, गोखरूका पंचांग, लोद, खैरसार, और मुलहटीके क्वाथमें तेल पकाकर इसके कुरले कराओ तो व्रणादि मसूडोंके समस्त रोग दूर होवेंगे.

दंतरोगयत्न १— लोद, कायफल, मजीठ, कमलगटा, कमलकेशर, रक्त-चंदन और मुलहटी ये सब टके टकेभर लेकर क्वाथ बनाओ नंतर इस क्वाथमें सेरभर लाखका रस, पावभर तिलीका तेल, और पावभर गोदुग्ध डालकर मंद मंद आंचसे औटाओ और रसादिक जलकर तेलमात्र रह जानेपर १ घडीपर्यंत इसका कुरला मुंहमें रखाओ तो दांतोंके आठों रोग दूर होकर दांत दृढ हो जावेंगे. इसे लाक्षादितैल कहते हैं.

तथा २— वातहारी तैलके कुरले कराओ तो दांत दृढ हो जावेंगे.

तथा ३— हींगको उष्ण करके दांतोंके बीचमें दबाये रखो तो दांतोंकी कृमि मर जावेंगी.

तथा ४— काकलहरी, नीलकी जड, और पटोलकी जड इनके चूर्णसे दांतोंका मंजन कराओ तो दांतोंके कीडे मर जावेंगे.

तथा ५— सांभरनोंन नरकचूर, सोंठ और अकलकरा इनका चूर्ण दांतोंमें रगडो तो खट्टे हुए (आंवे) दांत अच्छे हो जावेंगे.

तथा ६— पंचनोंन, नीलाथोथा, सोंठ, मिर्च, पीपल, हीराकशी, पीपलामूल, मांजूफल और वायविडंग इनके चूर्णसे दंतमंजन करवाओ तो सम्पूर्ण दंतरोग अच्छे हो जावेंगे.

तथा ७— हीराकशी, मांजूफल, सोनामक्खी, लोहचूर, मजीठ, त्रिफला, और फूलीहुई फिटकरी इनके १ मासे महीन चूर्णसे प्रतिदिन सात दिन-पर्यंत दंतमंजन कराओ तो सर्व दांतोंके रोग दूर होकर दृढ हो जावेंगे.

तथा ८— सिकी फिटकरी, नीलाथोथा, तेजबल, पपडियाकत्था, सोंठ, मिर्च, पीपल, हीराकशी, आंवला, मांजूफल, मजीठ, रूमीमस्तंगी, सेंधानोंन, चिकनी सुपारी, मौरसिरीके बक्कल और पीपलकी कच्ची लाख इनके चूर्णको मौरसिरीके रसकी २१ पुट और निर्गुंडीके रसकी २१ पुट देकर घाममें सुखालो और कुछ सेंधानोंनके संयोगसे दंतमंजन करो तो सर्व दंतरोग दूर होंगे.

तथा ९– कूट, सोंठ, मिर्च, पीपल, तीव्राजवान, हरेंकी छाल, और कत्था इनके चूर्णसे दंतमंजन करो तो दंतरोग दूर होगा.

तथा १०– अन्तर्वेदी (गंगापारकी) तमाखू, अकलकरा, कायफल, मिर्च, सोंठ, पीपल, नोंन और वायविडंग इनके चूर्णसे दंतमंजन करो तो दांतोंकी सर्व वेदना दूर होगी.

तथा ११– पीपल, सेंधानोंन, जीरा, हरेंकी छाल, और मोचरस इनके चूर्णसे दंतमंजन करो तो दांत दृढ होकर सर्व पीडा दूर होगी.

तथा १२– नागरमोथा, हरेंकी छाल, सोंठ, मिर्च, पीपल, वायविडंग और नीमके पत्ते इनका चूर्ण गोमूत्रके साथ तीन पुटें देकर गोली बनाओ और छायामें सुखाकर १ गोली रात्रिको सोतेसमय मुंहमें धरादो और प्रातः काल थूककर कुरले कराओ तो सर्व दंतरोग दूर होंगे.

तथा १३– फिटकरी, नीलाथोथा, खैरसार पपडिया कत्था, तेजबल, कच्ची लाख, वंशलोचन, मिर्च, आंवला, रूमीमस्तंगी, मजीठ, बौलसिरीके बक्कल, सेंधानोंन माजूफल और चिकनी सुपारी इनके चूर्णको निर्गुंडीके रसकी, चमेलीके रसकी और कुछ बौलसिरीके रसकी बहुतसी पुटें देकर सुखालो नंतर उसका महीन चूर्ण कर दंतमंजन करो तो सर्व दंतरोग दूर होकर दांत दृढ हो जावेंगे.

तथा १४– सेंधानोंन. खैरसार, कूट, धना, सोंठ और सिकेजीरेका चूर्ण कर दंतमंजन करो तो दांतोंसे निकलता हुआ रक्त बंद हो जावेगा.

जिव्हारोगयत्न १– जीभका रक्तमोचन कराओ तो जिव्हारोग दूर होगा.

तथा २– गुरच, पिम्पली, नीमकी छाल, और कुटकी इनके क्काथके कुरले कराओ तो जीभके सर्व रोग दूर होंगे.

तथा ३– ओष्टरोग लिखित चिकित्सासेभी जिव्हारोग दूर होगा.

तथा ४– सोंठ, मिर्च, पीपल, जवाखार और हरेंका चूर्ण जीभपर लगाओ तो जिव्हारोग दूर हो. या इसीको तेलमें पकाकर कुरले कराओ उपजिव्हारोग दूर होगा.

तथा ५– कचनारकी छालके क्काथसे कुरले कराओ तो जीभके सम्पुर्ण रोग दूर हो जावेंगे.

तालुरोगयत्न १– गलशुंडीको चतुराईपूर्वक शस्त्र या विषसे काटदो तो गलशुंडी नाम तालुरोग नाश होगा.

तथा २– कूट, मिर्च, सेंधानोंन, पाठ और नागरमोथा इनका चूर्ण गलशुंडीपर मसो तो गलशुंडी अच्छी हो जावेगी.

तथा ३– पीपल, अतीस, कूट, बच, सोंठ, काली मिर्च, और सेंधानोंन इनका चूर्ण मधुके साथ लगाओ तो गलशुंडी अच्छी होगी.

तथा ४– पीपल, अतीस, कूट, बच, रास्ना, कुटकी और नीमकी छाल इनका क्काथ पिलाओ तो गलशुंडी और तुंडकेशरी आदि समस्त तालुरोग दूर होवेंगे.

कंठरोगयत्न १– जोंक लगाकर गलेका रक्तमोचन कराओ तो रोहिणी नाम कंठरोग दूर होगा.

तथा २– वमन, धूम्रपान, औषधोंके कुरले कराना, सीर छुडाना, लवणका सेक देना, और स्नेहके कुरले कराना ये सर्व कार्य कंठरोगपर अति लाभकारी हैं.

तथा ३– मिश्री, मधु और प्रियंगुपुष्प इनका क्काथ पिलाओ तो पित्तका कंठरोग दूर होगा.

तथा ४– कुटकी और धौंसेका[1] क्काथ दो तो कफका कंठरोग दूर होगा.

तथा ५– कुटकी, सोंठ, पिम्पली, मिरच, वायविडंग, दारूणी, और सेंधेनोंन इनका क्काथ तेलमें पकाकर उसका नाशदो तो कफका कंठरोग अच्छा हो जावेगा.

तथा ६– विष्णुक्रांताका क्काथ पिलाओ तो रोहिणी कंठरोग अच्छा होगा.

तथा ७– विष्णुक्रांता और शंखाहोलीको जलमें पीसकर पिलाओ तो कंठशाल्लूक, तुंडकेशरी, उपजिव्हक, अधिजिव्हक, वृंदगिलायु, और एकवृंद आदि समस्त कंठरोग दूर होवेंगे.

तथा ८– शस्त्रक्रियासे कंठका रक्तमोचन कराओ तो गलविद्रधी आदि सर्व कंठरोग अच्छे हो जावेंगे.

तथा ९– रक्तमोचन कराओ या नास दो तो सर्व कंठरोग दूर होंगे.

---

१ धौंसा=धमासा=रसोईके घरका जाला आदि छत्तका कचडा जो अधर छाया रहता है.

तथा १०– दारुहल्दी, नीमकी छाल, इन्द्रयव, हर्रकी छाल, और तज इनका क्वाथ मधुके साथ दो तो कंठरोग सर्व अच्छे हो जावेंगे.

तथा ११– कुटकी, अतीस, दारुहल्दी, नागरमोथा और इन्द्रयव इनका क्वाथ गोमूत्रके साथ पिलाओ तो सर्व कंठरोग दूर होंगे.

तथा १२– हर्रकी छालका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो सर्व कं० दूर होवेंगे.

तथा १३– द्राक्ष, कुटकी, सोंठ, मिर्च, पीपल, दारुहल्दी, तज, त्रिफला, नागरमोथा, पाठ, रसोत, मूर्वा, तेजबल और हल्दी इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ या इसी क्वाथके कुरले कराओ या इन्हीं औषधोंके चूर्णको मधुके साथ गोलियां बनाकर १ गोली मुंहमें धराओ तो सर्व कंठरोग दूर होवेंगे.

तथा १४– तेजबल, पाठ, रसोत, दारुहल्दी और पीपल इनका चूर्ण मधुके साथ गोलियां बनाकर १ गोली मुंहमें धरो तो सर्व कंठरोग दूर होवेंगे.

सम्पूर्ण मुखरोगयत्न १– लवण और फिटकरीके जलसे कुरले कराओ तो वातके छाले अच्छे होंगे.

तथा २– वातहारी तैलके कुरले कराओ तो वातके छाले दूर होंगे.

तथा ३– मुलहटी और खैरसार इनका क्वाथ बनाकर मधुके साथ कुरले कराओ तो पित्तसे मुखमें आये हुए छाले अच्छे हो जावेंगे.

तथा ४– उष्ण दूधमें घी और मधु मिलाकर कुरले कराओ तो पित्तका मुखरोग अच्छा होगा.

तथा ५– नीलाथोथा और फिटकरीका चूर्ण छालोंपर लगाकर मुंहकी लार वहाते जाओ तो कफके छाले दूर होवेंगे.

तथा ६– मुखकी नशोंकी सीर छुडवाओ तो सन्निपातके छाले अच्छे होंगे.

तथा ७– चमेलीके पत्ते, गिलोय, त्रिफला, जवाखार, दाख और दारुहल्दी इनके क्वाथमें मधु मिलाकर कुरले कराओ तो त्रिदोषके छाले अच्छे हो जावेंगे.

तथा ८– काला जीरा, कूट और इन्द्रयव इनका चूर्ण दांतोंके नीचे दबाकर रस थूंकते जाओ तो त्रिदोषके छाले अच्छे होंगे.

तथा ९– पटोलपत्र, आमलकपत्र और चमेलीपत्र इनके क्वाथसे कुरले कराओ तो त्रिदोषका मुखपाक अच्छा होगा.

तथा १०– पटोलपत्र, त्रिफला और दारुहल्दी इनके क्वाथमें मधु मिलाकर कुरले कराओ तो त्रिदोषका मुखपाक अच्छा होगा.

तथा ११– खश, पटोल, नागरमोथा, हरेंकी छाल, कूट, मुलहटी, किरमालेकी छाल और रक्तचंदन इनके क्वाथके कुरले कराओ तो त्रिदोषका मुखपाक अच्छा होगा.

तथा १२– तिलवृक्ष, कमलनाल, घृत, मिश्री, दूध और मधु इन सबको द्रवकर इस्के क्वाथके कुरले कराओ तो त्रिदोषज मुखपाक दूर होगा.

तथा १३– हल्दी, निम्बपत्र, मुलहटी और कमलनाल इनको तेलमें पकाकर इस तेलसे कुरले कराओ तो त्रिदोषज मुखपाक दूर होगा. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १४– चमेलीके पत्ते, चबाओ तो मुखके छाले मिट जावेंगे.

तथा १५– खैरसार, जायफल, भीमसेनी कपूर, नागकेशर, तज, पत्रज, चिकनी (चोल) सुपारी, इलायची और कस्तूरी इनका चूर्ण खैरसारके क्वाथमें सानकर चनाप्रमाणकी गोलियां बनाओ और रोगीके मुखमें १ गोली दबाये रखो तो जीभ, ओंठ, दांत, कंठ, तालु और समस्त मुखके रोगमात्र नाश हो जावेंगे.

तथा १६– जवाखार, कस्तूरी, भीमसेनी कपूर, सुपारी और इन सबके समान खैरसार इनको महीन पीसकर गोलियां बनाओ और १ गोली मुखमें रखवाओ तो मुखके सम्पूर्ण रोग नाश होंगे.

तथा १७– दारुहल्दी, गिलोय, चमेलीके पत्ते, दाख, अजवान और त्रिफलाके क्वाथमें कुरले कराओ तो मुखके सम्पूर्ण रोग दूर हो जावेंगे. ये सर्व यत्न वैद्यरहस्यमें लिखे हैं.

तथा १८– लोद, धना, बच, गोरोचन और मिर्चको जलके साथ पीसकर मुखमंडलपर लेप करो तो मुखपरकी छाया (श्यामता) मिट जावेगी.

तथा १९– सरसों, बच लोद और सेंधानोंनको जलमें पीसकर मुखपर लेप करो तो मुखकी छाया दूर होगी.

तथा २०– रक्तचंदन, मजीठ, कूट, लोद, बडके अंकुर और प्रियंगुको जलमें पीसकर लेप करो तो छाया दूर होगी.

तथा २१– जायफलको जलमें घिसकर लेप करो तो छाया दूर होगी.

तथा २२– हल्दीको अकावके दूधमें मथकर मुंहपर लेप करो तो छाया मिट जावेगी.

तथा २३– मसूरको दूधमें पीसकर घृतके संयोगसे लेप करो तो छाया मिटकर मुखकी क्रांति बढेगी.

तथा २४– केशर, कमलनाल, रक्तचंदन, लोद, खश, मजीठ, मुलहटी, पत्रज, कूट, गोरोचन, दोनों हल्दी, लाख, नागकेशर टेसूके फूल, प्रियंगु, वडके अंकुर, चमेलीके पत्ते, बच और सरसोंके क्राथमें तेल पकाकर इस तेलका मर्दन करो तो मुखकी छाया, कील, तिल, मसे आदि मुखके सम्पूर्ण विकार दूर होवेंगे. इसे कुंकुमाद्य तेल कहते हैं. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे मुखरोगयत्ननिरूपणं नाम चत्वारिंशस्तरङ्गः ॥ ४० ॥

॥ स्त्रीरोग ॥

**योषामयानां हि मया कथ्यते रुक्प्रतिक्रिया ।**
**भूदेवराजसिंधौ च तरंगेत्र यथाक्रमात् ॥ १ ॥**

भाषार्थः– अब हम इस ४१ इकतालीसवें तरंगमें क्रमानुसार स्त्रीरोगकी चिकित्साका कथन करते हैं.

प्रदररोगयत्न १– सोंचरनोंन, जीरा, मुलहटी और कमलगटे इनका क्राथ मधुके साथ पिलाओ तो वादीका प्रदररोग (पैर) अच्छा होगा.

तथा २– दो टंक मुलहटी और २ टंक मिश्री इनका चूर्ण तण्डुल जलके साथ दो तो पित्तका प्रदररोग अच्छा होगा.

तथा ३– २ टंक रसोत और २ टंक चौंलाईकी जड इनको पीस मधुके साथ ७ दिन पिलाओ तो सर्व प्रदर अच्छे होंगे.

तथा ४– आसापालेकी छालका क्राथ दूधके साथ पिलाओ तो असाध्य प्रदररोगभी दूर होगा.

तथा ५– डाभकी जड तण्डुलजलमें पीसकर तीन दिनपर्यंत पिलाओ तो प्रदररोग अच्छा होगा.

तथा ६– कवीठकी छालका रस और तण्डुलजलमें मधु या मिश्री मिलाकर पिलाओ तो सर्व प्रदररोग अच्छे होंगे.

तथा ७– दारुहल्दी, रसोत, चिरायता, अडूसा, नागरमोथा, रक्तचंदन और अकावके फूलोंका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो लाल, श्वेत, पीत आदि सर्व प्रकारका प्रदर दूर होगा.

तथा ८– गूलरके सूखे फलोंका चूर्ण मिश्री और मधुमें सानकर १ टकेभरकी गोलीयां बनालो १ गोली प्रतिदिन ७ दिनपर्यंत खिलाओ तो प्रदररोग अच्छा होगा.

तथा ९– आंवलेकी ५ टंक विजी जलमें पीसकर मधु और मिश्रीके साथ १५ दिनपर्यंत चटाओ तो श्वेत प्रदर नाश हो जावेगा.

तथा १०– २ टंक मूषककी लेंडी और २ टंक मिश्रीका चूर्ण दूधके संयोगसे पिलाओ तो सर्व प्रदर दूर होंगे.

तथा ११– धावडेके फूल, वीजाबोल, मूषककी लेंडी और मिश्रीका २ टंक चूर्ण जलके साथ दो तो प्रदररोग नाश होगा.

तथा १२– कुह्मारके चकेकी मिट्टी, गेरू, चमेली, मजीठ, रसोत, धावडेके फूल और रार इनका २ टंक चूर्ण मधुके साथ दो तो स्त्रीके प्रदर आदि समस्त रोग नाश हो जावेंगे.

सोमरोगयत्न १– मिश्रीके साथ पक्के केले (कदलीफल) खिलाओ तो सोमरोग दूर होगा.

तथा २– मधुके साथ आंवलेका रस पिलाओ तो सोमरोग दूर होगा.

तथा ३– उडदका आटा, मुलहटी (या विदारीकंद) और इन दोनोंके समान मिश्री इनका १ टकेभर चूर्ण दूधके साथ १० दिनपर्यंत सेवन कराओ तो सोमरोग दूर होगा.

मूत्रातिसारयत्न १– ताडकी जड, खारक, मुलहटी और विदारी कंदका १ टकेभर चूर्ण मधु और मिश्रीके साथ खिलाओ तो मूत्रातिसार दूर होगा.

... ...)की जड तण्डुलजलके साथ पिलाओ तो मूत्रातिसार नाश होगा.

तथा ३– श्वेत मूसली, ताडकी जड, खारक और पक्के केलोंको दूधके साथ सेवन कराओ तो मूत्रातिसार दूर होगा.

वंध्यारोगयत्न १– स्त्रीको नित्य मछलीका मांस, या कांजी, या तिल, या उडद, या दही खिलाओ तो रजोधर्म प्राप्त होकर वंध्या (वांझ) दोष निवृत हो जावेगा.

तथा २– ईक्षु (सांठे)के बीज, कडवी तूंबी, दात्यूणी, पीपल, गुड, मैनसिल, जवाखार, दारुका जावा (मद्यका बेसवार अर्थात् मसाला) और थुहरके दूधकी बत्ती बनाकर यही बत्ती योनिमें धरो तो तत्काल रज प्राप्त होकर वंध्यादोष दूर होगा.

तथा ३– खरेंटी, गंगेरणकी छाल, बडके अंकुर, महुआ और नागकेशरका ५ टंक चूर्ण गोदुग्ध और मधुके साथ १५ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो निश्चय है कि वांझ स्त्रीको पुत्रोत्पन्न होगा.

तथा ४– मालकांगनी, राई, विजयसार, और बचको जलमें पीसकर ५ दिनपर्यंत पिलाओ तो स्त्रीधर्म होकर वंध्यारोग दूर होगा.

तथा ५– काले तिल, सोंठ, मिर्च, पीपल, भारंगी और गुडके १ टंक चूर्णका क्वाथ १४ दिनपर्यंत पिलाओ तो रजोधर्म होकर रुधिर गुल्म और वंध्यादोष दूर होगा.

तथा ६– असगंधका क्वाथ गोदुग्ध और गोघृतके साथ ऋतुप्राप्तकालमें ५ दिनपर्यंत नित प्रातःकाल पिलाओ तो गर्भधारण होगा.

तथा ७– पुष्य नक्षत्रके तीन दिनमें उखाडी हुई श्वेत कटियालीकी जडका २ टंक चूर्ण दूधके साथ ऋतुकालमें ३ दिनपर्यंत पिलाओ तो निश्चय गर्भधारण होगा.

तथा ८– कठसेला (खटसेरुआ)की जड, धावडेके फूल, बडके अंकुर, और कमलगटे इनका ढाई (२½) टंक ऋतुकालमें जलके साथ दो तो निश्चय गर्भधारण होगा.

तथा ९– पार्श्वपीपलकी जड, (या बीज) श्वेत जीरा और सरपंखका २ टंक चूर्ण दूधके साथ ऋतुकालमें पिलाओ तो निश्चय गर्भधा॰होकर पुत्रोत्पत्ति होगी.

तथा १०– वराहीकंद, कवीठ, और शिवलिंगीका २ टंक चूर्ण दूधके साथ ऋतुकालके समय पिलाओ तो निश्चय पुत्रोत्पन्न होगा.

तथा ११– गर्भिणी स्त्रीको प्रतिदिन पलासका १ पत्र गोदुग्धके साथ पिलाओ तो उसे अति पराक्रमी पुत्र होगा. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा १२– गोदुग्धमें विजौरेके बीज सिजा (उबाल चुडो) कर तुल्य घी और तुल्य नागकेशर मिलाओ नंतर इसका ५ टंक चूर्ण मिश्रीके साथ ऋतुकालमें सात दिनपर्यंत खिलाओ तो स्त्रीको गर्भधारण होगा.

तथा १३– एरंडीकी बिजी और विजौरेके बीजोंको घृतमें पीसकर ऋतुकालमें दूधके साथ ३ दिनपर्यंत सेवन कराओ तो स्त्रीको गर्भ धारण होगा.

तथा १४– सोंठ, मिर्च, पीपल, और नागकेशरका चूर्ण घृतके साथ ऋतुकालमें ३ दिनपर्यंत खिलाओ तो स्त्रीको गर्भ धारण होगा. ये सर्व यत्न सर्वसंग्रहमें लिखे हैं.

गर्भनिवारणयत्न १– पीपल, वायविडंग और सुहागेका चूर्ण जलके साथ ऋतुकालमें ५ दिनपर्यंत पिलाओ तो स्त्रीको कदापि गर्भधारण नहीं होगा.

तथा २– १ टकेभर पुराना गुड, जलमें औंटाकर १७ दिनपर्यंत पिलाओ तो उस स्त्रीको कदापि गर्भ धारण न होगा.

तथा ३– नीमके (निंबोलीमेसें निकाले) तेलमें रुई भिंगोकर ५ दिनपर्यंत योनिमें धरो तो वह स्त्री कदापि गर्भ धारण न करेगी. ये सर्व यत्न भावप्र॰लिखे हैं.

योनिरोगयत्न १– सेंधानोंन, तगर, कटियाली और देवदारु इनके क्राथमें तेल पकाकर इस तेलका फुहा (भींगीहुई रुई) योनिमें धरो तो विप्लुता नाम योनिरोग अच्छा होगा.

तथा २– पाटलके पत्ते या छालको सिजाकर उस जलसे योनिको पसीना दो या धोओ तो वातजन्य योनिरोग दूर होगा.

तथा ३– तिलीके तेलमें निबोली (नीमके बीज) तल (चुडो) कर इस तेलसे योनिको सेको तो पित्तका योनिरोग अच्छा होगा.

तथा ४– पित्तनाशक औषधोंके घीसे सेको तो पित्तज योनिरोग दूर होगा.

तथा ५– आंवलेके रसमें मिश्री डालकर १० दिनपर्यंत पिलाओ तो योनिकी दाह दूर होकर शीतल योनि हो जावेगी.

तथा ६– कूकरभंगरेका रस और तण्डुल जलमें मिश्री मिलाकर पिलाओ तो योनिसे पीवका वहाव बंद होगा.

तथा ७– नीमके पत्ते, किरमालेके पत्ते, अडूसेके पत्ते, पटोलके पत्ते और बच इनोंके क्काथसे योनिको धोओ तो योनिकी दुर्गंध दूर होगी.

तथा ८– पीपल, मिर्च, उर्द, सोंफ, कूट और सेंधेनोंनके क्काथसे योनिको धोओ तो योनिके सम्पूर्ण कफजन्यरोग दूर होंगे.

योनिसंकोचनयत्न १– मूंगके फूल, खैरसार, हर्रे, जायफल, मांजूफल, और सुपारीका महीन चूर्ण योनिमें धरो तो स्त्रीकी योनि संकिर्ण हो जावेगी.

तथा २– योनिको केंवच, (कांचकुडी)के क्काथसे धोओ तो योनिसंकीर्ण हो जावेगी.

तथा ३– मोचरस या भंगके चूर्णकी पोटली बांधकर योनिमें धरो तो योनि संकीर्ण (गाढी) हो जावेगी.

तथा ४– आंवलेकी जड, बंबूलनी (बोल, बावराबमूर), टेसूबेरकी जड, अडूसाकी जड, और मांजूफल इनोंके क्काथसे योनिको धोओ तो योनि गाढी हो जावेगी.

तथा ५– दहीसे योनिको धोओ तो योनि गाढी हो जावेगी.

तथा ६– फूली हुई, फिटकरी, धावडेके फूल, और माजूफलके चूर्णकी पोटली योनिमें धरो तो भग संकीर्ण हो जावेगी.

निकंदरोगयत्न १– गेरू, वायविडंग, हल्दी और कायफलका चूर्ण त्रिफलाके क्काथ और मधुमें सानकर योनिमें धरो तो निकंदनाम योनिका रोग अच्छा होगा.

गर्भस्तंभयत्न १– झाउंकी जड, अतीस, नागरमोथा, मोचरस और इन्द्रयव इनका क्काथ पिलाओ तो गिरता हुआ गर्भ ठहर जावेगा.

तथा २– कमलनाल, कमलपुष्प, और मुलहटीको दूधमें औटाकर ग-

र्भिणी स्त्रीको पिलाओ तो गर्भश्राव थंभकर दाह, प्यास, मूर्छा, छर्दि और अरुचि ये समस्त विकार दूर हो जावेंगे.

तथा ३– गोखरू, मुलहटी, कटियाली, और मदनबाणके फूलोंको गोदुग्धमें औंटाकर पिलाओ तो गर्भपात ठहरकर स्त्रीके शरीरकी सम्पूर्ण वेदना दूर होगी.

तथा ४– भौंरीके घरकी मिट्टी, मजीठ, लजनी, किशोरा, और कमलनालको गोदुग्धमें औंटाकर पिलाओ तो गिरता हुआ गर्भ ठहर जावेगा.

तथा ५– मुलहटी, सालवृक्षके बीज, क्षीरकाकोली, देवदारु, काले तिल, लुणख्या, रामपीपल, शताबरी, कमलनाल, जवासा, गौरीसर, रास्ना, कटियाली, सिघाडा, किशोरा, दाख और मिश्रीको औंटाकर ७ मासका गर्भ हो जानेतक प्रतिमास ७ दिन पिलाओ तो सर्व प्रकारके उपद्रव शांत होकर गर्भपातका भय न रहेगा.

तथा ६– कैथ, कटियाली, बील, पटोल और साटी इन सबकी जडें दूधमें पकाकर ८ आठवें मासमें पिलाओ तो गर्भ पुष्ट होकर पतन भय न रहेगा.

तथा ७– अधेले अधेलेभर मुलहटी, जवासा, क्षीरकाकोली, और गौरीसर इनको दूधमें औंटाकर नवमासमें पिलाओ तो गर्भ पुष्ट होकर पतनभय न होगा.

तथा ८– सोंठ, और क्षीरकाकोलीको दूधमें औंटाकर दशम मासमें पिलाओ तो गर्भ गिर जानेका भय न रहेगा.

तथा ९– सोंठ, मुलहटी, देवदारु, क्षीरकाकोली, कमलगटा, और मजीठ, इनका क्वाथ दूधमें औंटाकर दूध रह जानेपर १० वें मासमें पिलाओ तो सर्वोपद्रव शांत होकर गर्भ पुष्ट और आरोग्य रहेगा.

तथा १०– दूध, मासरस और पौष्टिक औषधोंका सेवन कराओ तो वातनाश होकर वातसे सूखाहुआ गर्भ पुष्ट हो जावेगा.

गर्भिणीरोगयत्न १– मुलहटी, रक्तचंदन, गौरीसर, खश, और कमलगटे इनका क्वाथ मिश्री और मधुके साथ पिलाओ तो गर्भिणीका ज्वर दूर होगा.

तथा २– रक्तचंदन, दाख, गौरीसर, खश, मुलहटी, धना, महुआ, नेत्रवाला और मिश्री इनका क्वाथ ७ दिन पिलाओ तो गर्भवतीका ज्वर दूर होगा.

तथा ३– चावलका सत्तू, आम और जामुनकी छाल, इनके क्काथके साथ दो तो गर्भवती स्त्रीका संग्रहणीरोग दूर होगा.

तथा ४– झांउकी छाल, अर्लुकी छाल, रक्तचंदन, खरेंटी, धना, कूडाकी छाल, नागरमोथा, जवासा, पित्तपापडा और अतीस इनका क्काथ पिलाओ तो गर्भिणी स्त्रीका अतिसार, ज्वर और संग्रहणी तीनों रोग शमन होजावेंगे.

तथा ५– डाभ, कास, अरंड और गोखरू चारोंकी जडें दूधमें औंटाकर पिलाओ तो गर्भिणीके हृदयका शूल शांत होगा.

तथा ६– डाभकी जड, दूबकी जड, बच, रसोत, हींग और सोंचरनोंन इनको दूधमें औंटाकर पिलाओ तो गर्भवतीका अफरा उतर जावेगा.

तथा ७– डाभ, दूब, कांस तीनोंकी जडे दूधमें औंटाकर पिलाओ तो स्त्रीका रुका हुआ मूत्र सुखपूर्वक उतरने लगेगा.

तथा ८– मजीठ, मुलहटी, कूट, त्रिफला, मिश्री, पाषाणभेद, असगंध, अजमोद, दोनों हल्दी, प्रियंगु पुष्प, कुटकी, कमलगटा, रक्तचंदन, और दाख ये सब अधेले अधेलेभर लेकर चूर्ण करो और १ सेर गोघृतके साथ चार सेर शताबरीके रसमें मंद मंद आंचसे पकाकर रसादि मिलके घृत-मात्र रह जानेपर छानलो जो इसमेंसे टकेभर घी प्रतिदिन सेवन कराओ तो समस्त योनिरोग दूर हों और पुरुषको खिलाओ तो नपुंसकभी महा-कामी हो जावे तथा इन दोनोंके संसर्गसे बडा पराक्रमी, दीर्घायुर्बलधारी और चतुर पुत्र उत्पन्न होगा.

प्रसूतयत्न १– सापकी कांचली और मरुवाकी धूनी दो तो स्त्रीको त-त्काल सुखपूर्वक प्रसव उत्पन्न होगा.

तथा २– स्त्रीके हाथपावमें काकलहरीकी जड बांधो तो सुखपूर्वक त-त्काल बालक होगा.

तथा ३– स्त्रीके हाथपावमें कूकरभंगरा और पाठकी जड बांधो तो सु- तत्काल बालक होगा.

तथा ४– उपरोक्त जडोंके क्काथमें तेल मिलाकर गर्भको लेप करो तो तत्काल सुखसे उत्पत्ति होगी.

तथा ५– पीपल और बचको जलमें पीसकर भगपर लेप करो तो सुखसे उत्पत्ति होगा.

तथा ६– स्त्रीकी नाभिपर एरंडका तेल लगाओ तो सुखपूर्वक उत्पत्ति होगी.

तथा ७– बिजौरेके जड और महुआको जलमें पीसकर पिलाओ तो सुखसे बालक होगा.

तथा ८– स्त्रीकी कटिमें साटीकी जड बांधो तो सुखसे बालक उत्पन्न होगा. ये सब यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ९– अंधाहोली और कलिहारी दोनोंकी जड, स्त्रीकी कटिमें बांधो तो सुखसे बालक होगा. यह योगचिंतामणिमें लिखा है.

तथा १०– "मुक्ता या सा विमुक्ताश्च मुक्ता सूर्येण रश्मयः। मुक्तः सर्व भयाद्गर्भः देहि माचिर माचिर स्वाहा" इस मंत्रसे जलको ७ वार मंत्रित कर स्त्रीको पिलाओ तो सुख पूर्वक तत्काल बालक उत्पन्न होगा.

तथा ११–

| १६ | ६ | ८ |
|---|---|---|
| २ | १० | १८ |
| १२ | १४ | ४ |

स्त्रीको यह यंत्र दिखाओ तो सुखपूर्वक तुरंत बालक उत्पन्न हो जावेगा.

मूढगर्भयत्न १– यदि स्त्रीके गर्भाशयमें भगके समीप प्रसव कुभांतिसे टेढा मेंढा आन अटका हो तो हाथोंमें[१] घी लगाकर अति चतुराई और सावधानीपूर्वक भगमें हाथ प्रवेश करो नंतर प्रथम बालकको भीतरही सीधा करके तत्काल जीवितही बाहर निकाललो प्रसव और माता दोनोंका प्राण संरक्षण हो सकेगा.

मृतगर्भयत्न १– स्त्रीके गर्भाशयमेंही प्रसव मृत्युको प्राप्त हो गया होतो हाथमें घी लगाकर अति चतुराई और सावधानीपूर्वक एक छोटा और तीक्ष्ण छुरा योनिमार्गसे प्रवेश करो और उदरमेंही उस मृत बालकके अंगोंके खंड खंडकर शनैः शनैः बाहर निकाललो नंतर भगको सहते हुए

---

१ स्त्रीचिकित्साके विशेषकर ऐसे प्रसंगोंपर पुरुष नहीं वरन स्त्रीवैद्यों (दाई)की योजना किई जाती है क्योंकि स्त्रीकी ऐसी लज्जास्पद दशामें प्राणान्त होनेपरभी वे अपनी चिकित्सा पुरुष वैद्यसे नहीं करावेंगी.

उष्ण जलसे धोकर उष्ण घृत या जलसे सेक दो और निम्न लिखीत उपाय करो तो सर्व उपद्रव शांत होकर माताका प्राण संरक्षण हो जावेगा.

तथा २– कडवी तूम्बीके पत्ते और पठानीलोदको जलके साथ पीसकर भगपर लेप करो तो भग ज्योंकीत्यों हो जावेगी.

तथा ३– पलासपापडा और गूलरके पके फल तिलीके तेलमें पीसकर २१ दिनपर्यंत लेप करो तो छिन्न (चिरीहुई) भग गाढी हो जावेगी.

तथा ४– सांपकी कांचली, कुटकी और सरसोंको कडवे तेलमें पीसकर भगको धूनी दो तो पूर्ववत् होकर सर्व पीडा शांत होगी.

तथा ५– कलिहारीकी जडके क्वाथसे हाथ पांव धुलाओ तो मृतगर्भजन्य भगपीडा शांत हो जावेगी.

मल्लकरोगयत्न १– जवाखारको उष्ण जलमें पीसकरके पिलाओ तो मल्लकरोग दूर होगा.

तथा २– पीपली, गजपीपली, पीपलामूल, चव्य, चित्रक, सोंठ, मिर्च, सम्भालु, इलायची, अजमोद, सरसों, पाठ, सिकी हींग, भारंगी, बकायण, इन्द्रयव, जीरा, मूर्वा, अतीस, कुटकी और वायविडंग इनका २ टंक चूर्ण उष्ण जलके साथ दो या क्वाथ बनाकर सेंधेनोंनके साथ दो तो मल्लक, गूल्म, शूल, आम और वात-कफके समस्त रोग दूर होकर क्षुधाकी विशेष वृद्धि होगी.

तथा ३– सोंठ, मिर्च, पीपल, नागकेशर, तज, पत्रज, इलायची और धना इनोंका २ टंक चूर्ण पुराने गुडके साथ दो तो मल्लकरोग दूर हो जावेगा.

वर्जितकर्म– प्रसूता स्त्रीको खेद, मैथुन, क्रोध, शीतमें निवास और मिथ्या आहार विहार मत करने दो.

सूतिकारोगयत्न १– वातनाशक समस्त औषधें विशेषकर सूतिका रोगको नाशकारिणी हैं.

तथा २– दशमूलका क्वाथ पिलाओ तो सूतिकारोग दूर होगा.

तथा ३– गुरच, सोंठ, सहजना, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और नेत्रवालेका क्वाथ मधुके साथ दो तो सूतिकारोग दूर होगा.

तथा ४– देवदारु, कूट, बच, पीपली, सोंठ, चिरायता, कायफल, नागरमोथा, हर्रेकी छाल, गजपीपली, धमासा, गोखरू, जवासा, कटियाली, गिलोय और काला जीरा इनका क्काथ हींग और सेंधेनोंनके संयोगसे दो तो सूतिका, शूल, कास, श्वास, ज्वर, मूर्च्छा, शिरोरोग, तंद्रा, तृषा, प्रलाप, अतिसार और वमन ये सर्व विकार दूर होंगे. इसे देवदर्व्यादिक्काथ कहते हैं.

तथा ५– दोनों जीरे, सोंफ, अजवान, अजमोद, धना, मेथी, सोंठ, पीपल, पीपलामूल, चित्रक, कूठ, झाऊंकी जड, बेरकी बिजी और कपेला ये सर्व टके टकेभर लेकर चूर्ण करो और इस चूर्णको सेरभर गोघृतमें तलकर ४ सेर गोदुग्धमें औंटाओ नंतर कडा खोवा बनाकर १०० टकेभर शक्करकी चासनीमें डालदो और १ टकेभरकी गोलियां बनाकर प्रतिदिन १ गोली प्रसूता स्त्रीको दो तो प्रसूतरोग, ज्वर, क्षयी, श्वास, कास, पांडु, क्षीणता और वातके समस्त रोग दूर हो जावेंगे.

तथा ६– आधसेर सतुआ सोंठका चूर्ण आधसेर गोघृतमें तलकर ५ सेर गोदुग्धमें डालो और कडा खोवा बनाकर ५ सेर शक्करकी चासनीमें मिलादो नंतर इसीमें टके टकेभर वायविडंग, धना, सोंफ, सोंठ, मिर्च, पीपल, नागकेशर और नागरमोथा इनका चूर्ण डालो, पांच पांच टंक अभ्रक और कांतिसार डालो तथा इच्छानुसार खारक बदामादि पौष्टिक फल डालकर १ टंकप्रमाणकी गोलियां बनालो जो इसमेंसे प्रतिदिन १ गोली खिलाओ तो प्रसूत, प्यास, छर्दि, ज्वर, दाह, कास, श्वास, पांडुरोग और मंदाग्नि ये समस्त रोग नाश हो जावेंगे. इसे सौभाग्यसुंठिपाक कहते हैं.

तथा ७– अजमोद, जीरा, वंशलोचन, खैरसार, बिजौरा, सोंफ, धना और मोचरस इन सर्वका २ टंक चूर्णका क्काथ १० दिनपर्यंत पिलाओ तो सूतिकाज्वर दूर होगा.

स्तनरोगयत्न १– १ विद्रधीरोग लिखित यत्न करो, २ स्तनपर गांठ हो तो पित्तनाशक शीतल यत्न करो, ३ स्तनपर जोंक लगाकर रक्तमोचन कराओ, ४ इन्द्रायणकी जड जलमें पीसकर लेप करो, ५ हल्दी और धतूरेकी जड जलमें पीसकर लेप करो, ६ वांझकंकोलीकी जड जलमें घिसके

लेप करो, ७ तप्त लोहा जलमें बुझाकर यह जल स्त्रीको पिलाओ तो इन सातों उपायोंमेंसे प्रत्येक यत्न स्तनरोग नाश करनेकेलिये समर्थ हैं.

इति नूत० चिकित्साखंडे स्त्रीरोगयत्ननिरूपणं नामैकचत्वारिंशस्तरङ्गः ४१

॥ बालरोग ॥

चिकित्सा बालरोगाणां तथा मंथज्वरस्य च ।

नेत्रसिंधौ तरङ्गेऽस्मिन् कथ्यते हि मया क्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब हम इस ४२ ब्यालीसवें तरंगमें बालरोग और मंथज्वरकी चिकित्सा क्रमानुसार वर्णन करते हैं.

ज्वरयत्न १— बालककी माता या धात्री (धाय)को पथ्यपूर्वक हल्का भोजन देकर निम्नलिखित यत्न करो तो बालकका ज्वर दूर होगा.

तथा २— नागरमोथा, हर्रकी छाल, नीमकी छाल और पटोल इनका क्काथ मधुके साथ दो तो बालकका सर्वप्रकारका ज्वर दूर हो जावेगा. इसे भद्रमुस्तादि क्काथ कहते हैं.

तथा ३— एक एक मासे नागरमोथा, हर्रकी छाल, पटोल और मुलहटी इनका क्काथ ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो बालकका ज्वर दूर होगा.

तथा ४— चांवलोंकी लाही, मुलहटी, छड और महुआका चूर्ण मधुके साथ दो तो बालकका ज्वर दूर होगा.

तथा ५— लाक्षादितैल मर्दनसेभी बालज्वर उतर जाता है.

अतिसारयत्न १— अतीस, बीलकी गिरी, धावडेके फूल, इन्द्रयव, लोद, धना और नेत्रवालेका २ मासे चूर्ण इनका क्काथ दो तो ज्वरातिसार दूर होगा.

तथा २— नागरमोथा, पीपल, अतीस और कांकडासिंगी इनका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो ज्वरातिसार, खांसी और वमनभी दूर होंगे. इसे चातुर्भद्रादि चूर्ण कहते हैं.

तथा ३— बीलका गूदा, धावडेके फूल, नेत्रवाला, गजपिम्पली और लोद इनका क्काथ मधुके साथ दो तो अतिसार नाश होगा.

---

१ यदि बालककी माताको दूध न हो तो धात्री और धात्रीकोभी दूधकी अभावदशामें बकरीका दूध पिलाना योग्य है.

तथा ४– मजीठ, धावडेके फूल, लोद, और गौरीसरका क्वाथ मधुके साथ दो तो भयंकर अतिसारभी दूर होगा. इसे समंत्रादिक्काथ कहते हैं.

तथा ५– वायविडंग, अजमोद, और पिम्पलीका चूर्ण तण्डुल जलके साथ दो तो आमातिसार दूर होगा. इसे विडंगादिक्काथ कहते हैं.

तथा ६– मोचरस, मजीठ धावडेके फूल, और कमलकेशरका चूर्ण षष्टी-तण्डुल जलके साथ दो तो रक्तातिसार दूर होगा.

तथा ७– सोंठ, अतीस, नागरमोथा, नेत्रवाला और इंद्रयवका क्वाथ दो तो सर्व प्रकारका अतिसार दूर होगा.

तथा ८– चांवलोंकी लाही, मुलहटी, महुआ, और मिश्रीका चूर्ण मधुके साथ दो तो मुर्रातिसार (मोडानिवाही) दूर होगा.

संग्रहणीयत्न १– हल्दी, चव्य, देवदारु, कटियाली, गजपीपली, सोंफ और पृष्ठपर्णीका चूर्ण मधु और घृतके साथ दो तो संग्रहणी, पांडुरोग, और ज्वरातिसार अच्छे होकर भूख बढेगी. इसे राजन्यादिचूर्ण कहते हैं.

कासयत्न १– नागरमोथा, अतीस, अडूसा, पीपली और कांकडासिंगीका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो पांचोंप्रकारकी खांसी दूर होगी. इसे मुस्तादिचूर्ण कहते हैं.

तथा २– कटियालीकी केशर मधुके साथ चटाओ तो खांसी दूर होगी.

श्वासयत्न १– दाख, अडूसा, हर्रकी छाल, और पिम्पलीका चूर्ण मधु और घृतके साथ दो तो श्वास कास दोनों दूर होंगी. इसे द्राक्षादिचूर्ण कहते हैं.

हिक्कायत्न १– कुटकीका चूर्ण मधुके साथ दो तो हिचकी और उल्टीभी दूर हो जावेगी.

छर्दियत्न १– इमलीकी बिजी, चांवलकी लाही, और सेंधेनोंनका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बालकका दूध डालना बंद होगा.

तथा २– कटियालीके फलोंका रस, पीपल, पीपलामूल, चव्य, चित्रक और सोंठ इनका चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बालक दूध डालनेसे रुक जावेगा.

आध्मानयत्न १– सेंधानोंन, सोंठ, इलायची सिकी हींग और भारंगीका चूर्ण उष्ण जलके साथ दो तो अफरा और शूल दोनों उदररोग दूर होंगे.

मूत्रावरोधयत्न १– पीपल, मिर्च, इलायची, सेंधानोंन और मिश्री इनों-का चूर्ण मधुके साथ चटाओ तो बालकका रुकाहुआ मूत्र उतरने लगेगा.

लालाप्रवाहयत्न १– गौरीसर, तिल और लोद इनका क्वाथ मधुके साथ पिलाओ तो बालकका लार वहना बंद हो जावेगा.

मुखपाकयत्न १– पीपलकी छाल और पत्ते पीसकर मधुके साथ चटा-ओ तो बालकके मुखके छाले अच्छे हो जावेंगे.

नाभिशोथयत्न १– पीली मिट्टीको अग्निसे तपाकर दूध डालके इस मि-ट्टीसे नाभिको सेको तो नाभिकी सूजन अच्छी होगी.

नाभिपाकयत्न १– तप्त घृतसे सहता हुआ सेक करो तो नाभि (शुंडी, टुडी)का पकाव अच्छा होगा.

गुदापाकयत्न १– रसोतको जलमें घिसकर लेप करो तो गुदाका पका-व अच्छा होगा.

तथा २– शंख, मुलहटी और रसोत इनको जलमें पीसकर लेप करो तो गुदाका पकाव अच्छा होगा.

दंतरोगयत्न १– धावडेके फूल और पीपलको आंवलेके रसमें पीसकर दांत निकलनेके प्रथमही मसूडापर लेप करो तो खिडबिंड (दुहरे) उष्णते हुए दांत उत्तम सरल पंक्तिमें ऊगेंगे.

कृमिरोगयत्न १– पलासपापडा, नीमकी छाल, सहजनेकी जड, नागर-मोथा, देवदारु और वायविडंग इनको १ टंक चूर्णका क्वाथ ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो बालकके पेटकी कृमि नाश होकर ज्वर शांत हो जावेगी.

विशेषतः– मनुष्योंके लिये जिस रोगपर जो यत्न कहे गये हैं वह बाल-कोंके लियेभी उन रोगपर वेही चिकित्सा उपयोगी हो सक्ती हैं. औरभी स्मरण रखो कि बालकको एक वर्षकी अवस्थातक औषध एक एक रत्तीके बढावसे और दूसरे वर्षसे एक मासेके प्रमाणसे देना चाहिये.

ग्रहदोषयत्न १– गोरखमुंडी और खशके क्वाथसे बालकको स्नान कराओ या हल्दी और कूटको चंदनसे घिसकर लेप करो तो सर्व ग्रहदोष दूर होगा.

तथा २– सांपकी कांचली, लहसन, सरसों, नीमके पत्ते, बिल्लीकी वि-

ष्ठा, बकरेके बाल, मेंढासिंगी और बचको मधुमें पीसकर धूनी दो तो बालकके सर्व ग्रहदोष दूर होवेंगे.

स्कंदग्रहयत्न १— सरसों, सांपकी कांचली, बच, काकलहरी, ऊंटके बाल, और बकरेके बाल इनके चूर्णको घीमें मिलाकर धूनी दो तो स्कंदग्रहका दोष छूट जावेगा.

स्कन्दापस्मारयत्न १— बीलकी जड, सिरसकी जड, श्वेत दूब श्वेत सरसों, पाठ, मरुवा, राई, श्वेत बावची, कायफल, कुसुम्भ, वायविडंग, सम्भालु, गूलर, खरेंटी, चिरपोटणी, काली तुलसी, बकायण, और भारंगीके क्वाथसे स्नान कराओ तो स्कंदापस्मार ग्रहदोष छूट जावेगा.

तथा २— गाय, भैंस, भेडी, बकरी, घोडा, गधा, और ऊंटके मूत्रमें तेल पकाकर मर्दन करो तो स्कंदापस्मार ग्रहदोष दूर होगा.

तथा ३— सिरके बाल, हाथीके नख और बैलके रोमको घीमें मिलाकर धूनी दो तो स्कंदापस्मार दोष छूट जावेगा.

तथा ४— जवासा, मैंनसिल, कस्तूरी, और कैंवचकी जड इनके चूर्णकी धूनी दो या बालकके गलेमें बांधो तो स्कंदापस्मार दोष दूर होगा.

तथा ५— बालकको चौहटे (चौमार्ग) में स्नान कराओ तो स्कंदापस्मार और विशाषा दोनोंके दोष दूर होंगें.

शकुनीयत्न १— बेतकी लकडी, आमकी जड, और कैथकी जड इनसे बालकको स्नान कराओ तो शकुनीग्रहका दोष दूर होगा.

तथा २— झाउंकी जड, महुआ, खश, गौरीसर, कमलनाल, पद्मकाष्ट, लोद, प्रियंगु पुष्प, मजीठ, और गेरूको जलमें पीसकर उवटन कराओ तो शकुनीग्रहदोषसे बालक छूट जावेगा.

तथा ३— शतावरी या इन्द्रायणकी जड या नागदवणी या कटियाली या सहदेईकी पूजाकर गलेमें बांधो तो शकुनीग्रहदोष मिट जावेगा.

तथा ४— ग्रहको तिल, चावल, माला, हरताल और मैनसिलका विधिवत् बलिदान दो तो शकुनीग्रहदोष छूट जावेगा.

तथा ५— स्कंदापस्मारलिखित यत्नभी शकुनीग्रहदोषको शांत कर सक्ते हैं.

रेवतीयत्न १– असगंध, मेंढासिंगी, गौरीसर, साठीकी जड, सेवतीके फूल और विदारीकंद इनके क्काथसे स्नान कराओ तो रेवतीग्रहके दोषसे बालक अच्छा हो जावेगा.

तथा २– तेलका मर्दन करो, या कूट, रार, गूगल, खश, हल्दी इनके चूर्णकी धूनी दो तो रेवतीग्रहदोष दूर होगा.

तथा ३– सुगंधित श्वेत पुष्प, लाही, दूध, दही और रंधी साल (चुडा-हुआ पोहा) बालकके ऊपर उतारकर स्नान कराओ और इन्हीं पदार्थोंसे गोशालामें धूनी दो तो रेवतीदोष दूर होगा.

पूतनाग्रहयत्न १– नीमकी छाल, विष्णुक्रांता और वणि (रुईका झाड) की छाल इनके क्काथसे बालकको स्नान कराओ तो पूतनाग्रहदोषसे बालक मुक्त होगा.

तथा २– विदारीकंद, श्वेत दाख, हरताल, मैनसिल, राल और कूटके क्काथमें तेल या घृत पकाकर बालकको मर्दन करो तो पूतनादोष दूर होगा.

गंधपूतनायत्न १– नीम, पटोल, कटियाली, गिलोय और अडूसेके पत्तोंके क्काथमें स्नान कराओ तो गंधपूतनाका दोष छूट जावेगा.

तथा २– पीपल, पीपलामूल और दोनों कटियालीके क्काथमें गोघृत पकाकर मर्दन करो तो बालक गंधपूतना दोषसे मुक्त हो जावेगा.

तथा ३– केशर, अगर, कपूर, कस्तूरी और चंदन इनको महीन पीसकर नेत्रोंपर लेप करो तो गंधपूतनाका दोष छूट जावेगा.

तथा ४– कुत्तेकी विष्ठा, बालकके बाल, लहसनकी छाल और घी बालकपरसे उतारकर चौकपर डालदो तो गंधपूतनादोष दूर होगा.

शीतपूतनायत्न १– गोमूत्र, अजा (बकरी) मूत्र, देवदारु, नागरमोथा और चंदनादि सुगंधित पदार्थोंमें तेल पकाकर मर्दन करो तो शीतपूतनाग्रहका दोष दूर होगा.

तथा २– कुटकी, नीमकी छाल, खैरसार, पलासकी छाल और कहूकी छालमें घृत पकाकर बालकको खिलाओ या मर्दन करो तो शीतपूतनाग्रहका दोष छूट जावेगा.

तथा ३– नीमके पत्तोंकी धूनी दो चिरमूकी माला पहिनाओ तो शीतपूतना दोष दूर होगा.

तथा ४– नदीके किनारे शीतपूतनाके नामसे मूंग और चांवल अर्पण करो तो शीतपूतनादोष दूर होगा.

मुखमंडिकाग्रहयत्न १–कैथ, बील, अरण्या (अग्निमंथ), अडूसा, श्वेत अरंड और कूट इनके क्वाथमें स्नान कराओ तो मुखमंडिकाग्रहदोषसे बालक मुक्त होगा.

तथा २– भंगराका रस और बच तेलमें पकाकर मर्दन करो तो मुखमंडिका दूर होगी.

तथा ३– रार और कूट इनके क्वाथमें घृत पकाकर मर्दन करो तो मुखमंडिका दोष दूर होगा.

तथा ४– गोशालामें बलि देकर "अलंकृता कामवती सुभगा कामरूपिणी। गोष्ठमध्यालयरता पातु त्वां मुखमंडिका ॥" इस मंत्रसे मंत्रित जलमें स्नान कराओ तो मुखमंडिकाका दोष दूर होगा.

नैगमेयग्रहयत्न १– बीलकी जडकी बक्कल, अरण्याकी जड, और कणगचकी जड, इनके क्वाथमें बालकको स्नान कराओ तो नैगमेयका दोष निवृत्त होगा.

तथा २– प्रियंगुपुष्प, जवासा, सोंफ और चित्रककी छाल इनका क्वाथ गोमूत्र, दही, और कांजी ये सब तेलमें पकाकर बालकको मर्दन करो तो नैगमेयग्रहका दोष दूर हो जावेगा.

तथा ३– तिल, चांवल, फूलकी माला, और मोदक मिठाई आदि "अजाननश्चलाक्षिभ्रू कामरूपी महायशाः। बाल पलियते देवो नैगमेयोभिरक्षतु ॥" इस मंत्रसे बालकपर ७ वार उतारकर वृक्षकी पीठपर डालो तो बालक नैगमेयग्रहके दोषसे अच्छा हो जावेगा. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

नंदामातृकायत्न १– नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला, चांवल, ७ श्वेत फूल, ७ ध्वजा, ७ दीपक, ७ गुलगुलि (गुलगला), पान, गंध, धूप, मांस, और मद्य ये सर्व एक कोरी सराईमें धरके "ओंनमो भगवते रावणाय हन हन

मुंच मुंच स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके मध्यान्ह समय पूर्व दिशाके चौमार्गपर बलि दो और पीपलका पत्ता बालकके सिरपर धरके स्नान कराने नंतर सरसों, मेंढासिंगी, नीमके पत्ते और शिवनिर्माल्यकी धूनी दो तो इसी भांति चार दिन करनेसे नंदामातृकाका दोष निवारण होगा.

शुभदामातृकायत्न २– सवासेर चांवल, दही, मद्य, तिल और मछलीका मांस ये सब एक कोरी सराईमें धरकर "ओंनमो रावणाय हन हन मुंच मुंच फट् फट् स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके संध्यासमय पश्चिमके चौमार्गपर बलि दो और शीतल जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, खश, बिल्लीके रोम, घृत और दूवकी धूनी दो. इसीप्रकार तीन दिन बलि देकर चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन कराओ तो शुभदामातृका दोषमुक्त होगा.

पूतनामातृकायत्न ३– नदीके दोनों तटोंकी माटीका पुतला, पान, लाल पुष्प, रक्तचंदन, ७ ध्वजा, ७ दीपक, भात, मांस, मद्य ये सब कोरी सराईमें धरकर "ओंनमो रावणाय नमः हन हन मुंच मुंच त्रासय त्रासय स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके तीसरे प्रहर दक्षिण दिशाके चौमार्गपर बलिदो और शिवनिर्माल्य, गूगल, सरसों, नीमके पत्ते, और मेंढासिंगीकी धूनी देकर इसीप्रकार ३ दिन करने नंतर चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करादो तो बालक पूतनामातृकाके दोषसे छूट जावेगा.

मुखमंडिकामातृकायत्न ४– नदीके दोनों तीरोंकी माटीका पुतला, कमलपुष्प, गंध, ताम्बूल, श्वेत पुष्प, ४ दिये, १३ मालपुआ, मछलीका मांस, मद्य, और छाछ ये सर्व वस्तुएं कोरी सराईमें धरकर "ओंनमो रावणाय हन हन मंथ मंथ स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके तीसरे प्रहर उत्तर दिशाके चौमार्गपर बलि दो. इसीप्रकार ३ दिन करने नंतर चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करादो तो मुखमंडिका दोषग्रसित बालक कुशल होगा.

पूतनामातृकायत्न ५– कुम्हारके चक्केकी मिट्टीका पुतला, गंध, ताम्बूल, चांवल, श्वेत पुष्प, पांच ध्वजा, ५ दिये, और ५ बडे (बडे खानेके), ये सब एक कोरी सराईमें धरकर "ओंनमो रावणाय चूर्णय चूर्णय स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके ईशान दिशामें बलि दो और शांति (ग्रहशांति)के

जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, सांपकी कांचली, घी और नीमके पत्तों-की धूनी दो. इसीप्रकार तीन दिन करने नंतर चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करादो तो बालक पूतनादोषसे अच्छा होगा.

शकुनीमातृकायत्न ६– गेहूंके आटेका पुतला, श्वेत पुष्प, लाल पुष्प, पीत पुष्प, मद्य, मांस, १० दिये, १० ध्वजा, १० बडे, और दूध ये सब "ओंनमो रावणाय चूर्णय चूर्णय हन हन स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके मध्यान्हसमय आग्नेयदिशामें बलिदो और शीतल जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, घृत, लहसन, गूगल, सरसों, सांपकी कांचली, और नीमके पत्तोंकी धूनी दो तो शकुनीमातृका दोष शांत हो जावेगा.

शुष्करेवतीमातृकायत्न ७– नदीके तलकी मिट्टीका पुतला, लाल फूल, मद्य, ताम्बूल, लाल चांवलकी खिचडी, १० दिये, १२ ध्वजा, और ये सब "ओंनमो रावणाय तत्तेजसे हन हन मुंच मुंच स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके तीसरे प्रहर पश्चिम दिशामें बलिदो और स्नान कराके शिवनिर्माल्य, सरसों, मेंढेका सींग, खश और घृतकी धूनी दो तो इसी प्रकार तीन दिन करके चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन करादो तो शुष्करेवतीका दोष शांत हो जावेगा.

नानामातृकायत्न ८– लाल फूल, पीली ध्वजा, रक्तचंदन, क्षीर, मांस, और सुराको "ओंनमो रावणाय त्रिलोक्यविद्रावणाय चतुर्दश मोक्षणाय ज्वर हन हन ओं फट् स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके प्रभातसमय बलि दो तो नानामातृकादोष दूर होगा.

सूतिकामातृकायत्न ९– नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला, श्वेत वस्त्र, गंध, ताम्बूल, १२ दिये, और १२ ध्वजा ये सब "ओंनमो रावणाय हन हन स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके उत्तर दिशामें गांवके बाहर बलि दान दो और शीतल जलसे स्नान कराके गूगल, नीमके पत्ते, गौका सींग, सरसों और घृतकी धूनी दो. इसीप्रकार ३ दिन करके चौथे दिन यथाशक्ति ब्राह्मणभोजन कराओ तो सूतिकादोष दूर होगा.

क्रियामातृकायत्न १०– नदीके दोनों तीरोंकी मिट्टीका पुतला, मद्य,

ताम्बूल, लाल फूल, रक्तचंदन, ५ ध्वजा, ५ दिये, मालपुआ और मांस ये सर्व पदार्थ "ओंनमो रावणाय चूर्णितहस्ताय मुंच मुंच स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके वायव्य कोणमें बलिदो और काकविष्ठा, गौका सींग, निम्बपत्र, घृत और बिल्लीके रोमकी धूनी दो तो क्रियामातृका दोष छूट जावेगा.

पिपीलिकामातृकायत्न ११– गेहूंके आटेका पुतला, दूध, रक्तचंदन, पीत पुष्प, गंध, ताम्बूल, ७ दिये, ७ बडे, मालपुआ, मांस और मद्यको "ओंनमो रावणाय मुंच मुंच स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके पूर्व दिशामें बलिदो, नंतर शांतिके जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, गूगल, गौका सींग, सांपकी कांचली और घृतकी धूनी दो और तीन दिन इसीप्रकार करके चौथे दिन ब्राह्मणभोजन कराओ तो बालक पिपीलिकादोषसे मुक्त होगा.

कामुकामातृकायत्न १२– गेहूंके आटेका पुतला, ताम्बूल, गंध, श्वेत पुष्प, ७ ध्वजा और ७ मालपुआ "ओंनमो रावणाय मुंच मुंच हन हन स्वाहा" इस मंत्रसे बालकपर उतारा करके बलि दो और शांतिके जलसे स्नान कराके शिवनिर्माल्य, गूगल, सरसों और घृतकी धूनी दो तो कामुकामातृकाके दोषसे बालक मुक्त हो जावेगा. यह रावणकृत कुमारतंत्रचक्रदत्तमें लिखा है.

मंथज्वरयत्न १– यह रोग सर्व रोगोंका राजा है इसलिये इसके सर्व प्रयत्न बडी पवित्रतापूर्वक करना चाहिये.

रोगीको पवित्र स्थानमें रखो, पवित्र वस्त्र पहिनाओ, पवित्र मनुष्यको परिचर्यामें रखो, दृष्टिमें अपवित्र वस्तुएं न आने दो, स्त्री आदिकी छाया न पडने दो, लाल कम्बल या पीताम्बरकी ओट (पर्दा) बांधो, सुगंध धूप चंदन कर्पूरादिसे गृहको सुगंधित रखो, दरखतोंके कूंडे या हरियाली और मोती आदि रत्न लटकाओ, और स्वधर्मके मनोहर इतिहासादि सुनाओ तो मोतीज्वरा शांत होकर रोगीकी पीडा शांत होगी.

तथा २– चिरायता सोंठ घिसकर पिलाओ, काला अगर घिसकर पिलाओ, तुलसीका रस, गोबरका रस, जीरे और सोनामक्खीकी भस्म घिस-

कर पिलाओ, सांभरका सींग, चंदन, जीरा, नेत्रवाला, नागरमोथा, चिरायता, कूडा, काला जीरा, गिलोय, इलायची और कमलगटाको घिसकर पिलाओ तो मोतीज्वरा शांत होगा.

तथा ३– श्वेत चंदन, लाल चंदन, नेत्रवाला, पित्तपापडा, नागरमोथा, सोंठ, चिरायता और खशका क्काथ पिलाओ तो दाह, ग्लानि, प्रलाप, विकलता, तिमिर और पित्त ये सर्वोपद्रव शांत होंगे.

तथा ४– लघुशिवणी, दाख, नेत्रवाला, चंदन, नागरमोथा, खश, पित्तपापडा और मुलहटी इनका अष्टावशेष क्काथ मधुके साथ दो तो पित्तज्वर, भ्रम, दाह और छर्दिका अतिकोपभी शांत होगा.

तथा ५– रक्तचंदन, धना, काला वाला, पित्तपापडा, नागरमोथा और सोंठ इनका क्काथ दो, वडके पत्ते और बाजरेके आटेका क्काथ दो, पौदीना, वनतुलसी और श्याम तुलसीके रसमें मिश्री डालकर तीन या सात दिन पिलाओ. नागरमोथा, कपूरकाचरी, वनतुलसी, पित्तपापडा और सोंठ इनका क्काथ दो तो मोतीज्वरा शांत होगा.

तथा ६– "ओंनमो अंजनीपुत्र ब्रह्मचारी वाचा अविचल स्वामीन्उकार्य सारिखा क्षांक्षः मगधदेशराय बडेस्थानके तहां मूसलीकंद ब्राह्मणने मधुरा उत्पन्न किया पृथ्वीमें मोकल्यो हनुमंत वाचाबलीपडा हनुमंतजी दृष्टिपडो हनुमंतनामेन गच्छ गच्छ स्वाहा" इस मंत्रको शुद्ध होकर १०८ वार जपो और चंदन, अगर, धूप, श्वेत पुष्पको रखके (मिट्टीके पात्र)में धरके रोगीके माथेपरसे उतार शुद्ध जलमें डालदो तो मंथज्वर शांत होकर रोगी समस्त पीडासे विमुक्त होगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे बालरोग, मंथरज्वरयत्ननिरूपणं नाम द्विचत्वारिंशस्तरङ्गः ॥ ४२ ॥

## ॥ क्लीबरोग ॥

चिकित्सा क्लीबरोगस्य नृणां लज्जाप्रदस्य वै ।
वन्हिवेदे तरंगेत्र कथ्यते च यथाक्रमात् ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब हम इस त्रेतालीसवें तरंगमें मनुष्योंको लज्जा प्राप्त करनेवाले क्लीबरोगकी चिकित्साका वर्णन क्रमानुसार करते हैं.

क्लीबरोगयत्न १— अति सुन्दर स्त्रीकी मनोहर वाणी सुनाओ. ताम्बूल, आसव, दूध, मिश्री, दधि, शिखरण, अमरस, उडद, भीमसेनीकपूर, कस्तूरी, मृगांक, चन्द्रोदय तथा अन्य पौष्टिक स्वादिष्ट मनोहर पदार्थ सेवन कराओ. सुन्दर उपवनमें भ्रमण कराओ. इत्यादि उपभोगोंके विधिवत् सेवनसे नपुंसकता दूर होगी.

तथा २— गोखरू, तालपुखारा, असगंध, शतावरी, कैंवचबीज, श्वेत मूसली, मुलहटी, खरेंटी और गंगेरणकी छालका ५ टंक चूर्ण दूध मिश्रीके संयोगसे खिलाकर पथ्यसे रखो तो नपुंसकपना दूर होगा. इसे गोक्षुरादि चूर्ण कहते हैं.

तथा ३— आधसेर चोलसुपारी, ४ दिन जलमें भिंगाकर टुकडेकर सुकाके चूर्ण करलो इस चूर्णको आधसेर गोघृतमें मिलाकर ४ सेर दूधके संयोगसे खोवा बनालो इस खोवेको ४ सेर मिश्रीकी चासनीमें डालकर टके टकेभर इलायची, लौंग, गंगेरणकी छाल, खरेंटी, जायफल, पीपल, दाख, जायपत्री, पत्रज, सोंठ, शतावरी, मूसली, कौंचबीज, विदारीकंद, जीरा, सालममिश्री, सिंघाडे, गोखरू, छड, वंशलोचन, असगंध, कस्तूरी, केशर, कपूर, चंदन, भीमसेनीकपूर और अगरका चूर्णभी उसीमें डालदो नंतर मृगांक, चंद्रोदय, अभ्रक, बंग, कांतिसार, पौष्टिक फल (मेवे) तथा अन्य सुगंधित द्रव्य मिश्रित करके १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो जो इसमेंसे १ मोदक प्रतिदिन देकर पथ्यसे रखो तो निश्चय है कि नपुंसकत्व निकल जावेगा. इसे वल्लभपूगपाक कहते हैं.

तथा ४— पक्के मीठे आमका १६ सेर रस, ४ सेर मिश्री, और १ सेर घीको मृतिकाके पात्रमें पकाकर गाढा होनेपर चांदीके पात्रमें डालो नंतर आठ टकेभर सोंठ, ८ टकेभर मिर्च, २ टकेभर पीपल, २ टकेभर धमासा, चार मासे कस्तूरी १ टंक भीमसेनीकपूर, सेरभर मधु और १ टकेभर जीरा, चित्रक, पत्रज, दालचीनी, नागकेशर, लौंग, इलायची, जायफल और

केशर इन सबका चूर्ण उपरोक्त चासनीमें एक जीव करके १ टके प्रमाणकी गोलियां बनालो जो इसमेंसे १ गोली नित्य खिलाओ तो नपुंसकत्व, संग्रहणी, क्षयी, श्वास, अरुचि, रक्तपित्त, अम्लपित्त और पांडु ये सब रोग दूर होकर मैथुनमें विशेष शक्ति प्राप्त होगी. इसे आम्रपाक कहते हैं.

तथा ५– ५ टंकभर गोखरूका चूर्ण ५ टंक मधु बकरीके दूधकेसाथ २ मास पर्यंत नित्य चटाओ तो हस्तक्रियासे हुआ नपुंसकत्व दूर होगा.

तथा ६– चार चार मासे रक्तचंदन, पतंग, अगर, देवदारु, चीढ, पद्मकाष्ठ, कपूर, केशर, कस्तूरी, जायफल, जायपत्री, लौंग, इलायची, बडी इलायची, कंकोल, दालचिनी, पत्रज, नागकेशर, नेत्रवाला, खश, छड, दारुहल्दी, मूर्वा, कपूर, शिलाजीत, नागरमोथा, प्रियंगुपुष्प, सम्भालु, लोहवान, गूगल, खश, नख, धावडेके फूल, पीपलामूल, मजीठ, तगर और मोंम इनका क्वाथ चतुरावशेष रखे क्वाथमें सेरभर मीठा तेल पकाकर मर्दन करो तो शरीरके सम्पूर्णरोग दूर होकर वृद्ध मनुष्यभी तरुण समान हो जावेगा. इसे चंदनादि तैल कहते हैं.

तथा ७– सेरभर केवचबीज, सेरभर गोदुग्धमें पकाकर छिलके नीछलो. इन बीजोंका चूर्ण गोदुग्धमें मसकर १० टंक प्रमाणकी टिकियें (कुचियें) बनालो इन बडोंको गोघृतमें तलकर दो. सेर मिश्रीकी चासनीमें पागदो नंतर इन्हें मधुमें डालकर प्रतिदिन १ टिकिया २ मासपर्यंत खिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर विशेष कालपर्यंत वीर्य स्तंभन होगा. इसे वानरीगुटिका कहते हैं.

तथा ८– अधेले अधेलेभर अकलकरा, सोंठ, लवंग, केशर, पीपल, श्वेत चंदन, जायफल, जायपत्री, और १ टकेभर अहिफेन (अफीम) इनका चूर्ण मधुमें मिलाकर उडद प्रमाणकी गोलियां बनालो जो १ गोली नित्य रात्रिकालमें खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर वीर्य बहुत कालतक पात नहीं होगा. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ९– तिलोंको मुर्गीके अंडेके पानीमें ११ वार भिंगोकर सुखाओ

और प्रतिदिन ५ टंक खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर स्त्री प्रसंगमें शक्ति बढेगी.

तथा १०– सूखे विदारीकंदके चूर्णको गीलें विदारीकंदके रसकी २१ पुटें देकर सुखाते जाओ नंतर मिश्री, मधु और घृतके साथ प्रतिदिन २ टंक चूर्ण खिलाके ऊपरसे दूध पिलाओ तो वृद्धभी तरुण समान हो जावेगा. यह वृन्दमें लिखा है.

तथा ११– सूखे आंवलेके चूर्णको गीले आंवलेके रसकी २१ पुटें दे-देकर सुखाते जाओ, और मिश्री, मधु, और घृतके साथ २ टंक प्रतिदिन खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो वृद्धभी तरुणताको प्राप्त हो जावेगा. यह चक्रदत्तमें लिखा हैं.

तथा १२– सोंठ, मिर्च, पीपलके चार भाग, १ भाग पारा, २ भाग वंग, ७ भाग शतावरी, और दो दो भाग तज, पत्रज, नागकेशर, इलायची, जायफल, सोंठ, मिर्च, पीपल, लौंग और जायपत्री इन सबका महीन चूर्ण मिश्री मधु और घृतमें मिलाकर ५ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो इसकी एक गोली प्रतिदिन खिलाके ऊपरसे दूध पिलाओ तो वृद्धभी तरुण समान हो सकेगा. यह मदनमंजिरीगुटिका योगतरंगिणीमें लिखा हैं.

तथा १३– अफीम और पारेको धतूरेके बीजोंके तेलमें ३ दिन पर्यन्त खरल करके समान मिश्री और भंगमें मिलादो जो प्रतिदिन १ रत्ती खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो नपुंसकत्व दूर होकर वीर्य दृढ हो जावेगा. यह सारसंग्रहमें लिखा हैं.

तथा १४– जायफल, अकलकरा, लोंग, सोंठ, केशर, पीपल, कस्तूरी, भीमसेनीकपूर, अभ्रक और इन सबके समान अफीमको खरल करके मूंगप्रमाणकी गोलियां बनालो जो इसकी १ या दो गोलियां खिलाकर ऊपरसे दूध पिलाओ तो वीर्य महादृढ हो जावेगा.

तथा १५– चीनीकपूर, सुहागा और पारेको अगस्तके रस और मधुके साथ १ दिनपर्यंत खरल करके लिंगपर लेप करो और १ प्रहर रखकर धो

डालो नंतर स्त्री प्रसंग करो तो वीर्य विशेष विलम्बसे स्खलित होगा. इसे नागार्जुनी लेप कहते हैं.

तथा १६– श्वेत कनेरकी जडके बक्कल, अकलकरा, अजमोद, काले धतूरेके बीज, और जायफलको जलमें पीसकर उर्दप्रमाणकी गोलियां बनालो जो इसमेंसे १ गोली मनुष्योंके मूत्रमें घिसकर लिंगपर लेप करो तो नपुंसकत्व दूर होकर वीर्य स्तंभित होगा.

तथा १७– शूकरकी मेद और घीको खरल करके लिंगपर लेप करो तो सर्व विकार दूर होकर पौरुष प्राप्त होगा.

तथा १८– श्वेत कन्हेरकी जडकी छाल दूधमें डालकर दूधको जमादो इस दहीको विलोकर घी निकालो और घृतमें मोहरा, जायफल, अफीम और शुद्ध जमालगोटेका चूर्ण मिलाकर लिंगपर लेप करो नंतर ऊपरसे पान (ताम्बूल) बांधकर ब्रह्मचर्य रखो तो प्रतिदिन ऐसा करनेसे नपुंसकत्व दूर होगा.

विशेषद्रष्टव्य– अब आगे धातुओंको दग्धकर उनकी भस्मसे रस बनानेमें अति क्लिष्टता है इसके निर्माणमें बडी सावधानीसे क्रिया करनी चाहिये. इसका विशेष ध्यान रखो कि इस विषयमें जिन धातु उपधातु तथा वत्सनाग प्रभृति विषोंका उपयोग करो वे सब विचारखंड लिखित विधानसे शुद्ध करके योजित करो और पारेको जितना शुद्ध कर सको उतनाही अच्छा होगा. इनमेंसे किसीभी धातुके शोधन संस्कारमें क्वचित न्यूनताभी रही तो वह रस यथेष्ट गुणको प्राप्त नहीं होगा.

मृगांकनिर्माणविधि १– स्वर्णके पतले पत्तोंको दूने पारेके साथ खटाईके संयोगसे खरल करके गोला बनाओ इस गोलेके समान आंवलासार, गंधकका चूर्ण गोलेके ऊपर नीचे सरावसम्पुटमें धरकर कपडमिट्टीसे लपेट दो और इसी भांति ३ पुट देकर ३ वार गजपुटमें फूंक दो तो उत्तम मृगांक बन जावेगा.

तथा २– स्वर्णपत्र और सोलहवें भाग सीसेको खटाईके साथ खरल करके गोला बनाओ इस गोलेके समान आंवलासार गंधकका चूर्ण गोलेके ऊपर नीचे सरावसम्पुटमें धरकर कपडमिट्टीसे लपेटके गजपुटमें फूंक दो इसी भांति ७ वार पुट देदेकर फूंक देनेसे उत्तम मृगांक बन जावेगा.

तथा ३– स्वर्णपत्र और समान पारेको खटाईके साथ खरल करके कचनारके रसकी १ पुट, अग्निझालके रसकी ३ पुट और कलिहारीकी जडके रसकी १ पुट दो नंतर स्वर्णपत्रसे चतुर्थांश मोती मिलाकर पुनः खरल करो तब इन सबके समान गंधकके साथ २ दिनपर्यंत खरल करके गोला बनालो इस गोलेको सरावसम्पुटमें धरके कपडमिट्टी करके गजपुटमें फूंक दो तो उत्तम मृगांक बन जावेगा.

मृगांकभक्षणविधि १९– १ रत्ती मृगाक १ रत्ती पिम्पलीके चूर्ण और २ टंक मधुके साथ देकर खटाई आदिके पथ्यसे रखो तो श्वास, कास, क्षयी, और अरुचि आदि समस्त रोग दूर होकर २ मास सेवनसे शरीर पुष्ट हो जावेगा.

रूपरसनिर्माणविधि १– ३ भाग चांदीके पत्र और १ भाग हरतालको खटाईसे खरल करके गोला बनाओ और इस गोलेको सरावसम्पुटमें धरकर गजपुटमें फूंक दो इसप्रकार १४ वार पुट देकर फूंकनेसे अत्युत्तम रूपरस बन जावेगा.

तथा २– चांदीके समान रूपामक्खीके चूर्णको चांदीके पत्तोंके ऊपर नीचे रखकर सरावसम्पुटमें धर दो और कपडमिट्टी करके गजपुटमें फूंक दो तो उत्तम रूपरस बन जावेगा.

रूपरसभक्षणविधि २०– १ रत्ती रूपरसको नित्य सेवन कराओ तो वह मनुष्य सर्व रोगरहित और पूर्ण बल वीर्ययुक्त हो जावेगा.

ताम्बेश्वरनिर्माणविधि १– ताम्रपत्रके समान रूपामक्खीका चूर्ण उनके ऊपर नीचे सम्पुटमें धरकर गजपुटमें फूंक दो तो ताम्बेश्वर बन जावेगा.

ताम्बेश्वरभक्षणविधि २१– रतिभर ताम्बेश्वर नित्य १ मास पर्यंत सेवन कराओ तो श्वास, कास आदि सर्व रोग दूर होकर बल बढेगा.

नागेश्वरनिर्माणविधि १– सीसेको कढाईमें चूल्हेपर चढाकर गलाओ इससे चतुर्थांश पीपलकी छालका चूर्ण और इमलीकी छालका चूर्ण पिघलते हुए सीसेमें थोडा थोडा डालकर लोहेकी करछुलीसे १ दिनभर चलाते जाओ नंतर जम्भीरीके रसमें खरल करके गजपुटमें फूंक दो इसीप्रकार जंभीरीके रसकी १० पुटें देकर फूंको. नागरवेलके पानके रसकीभी १० पुटें देकर

फूंको और इसी सीसेको समान मैनसिलके साथ कांजीमें खरलके टिकिया बनाओ इस टिकियाको सुखाकर सम्पुटसे गजपुटमें फूंकदो जो इसी विधिसे इसे ६० आंच दो तो उत्तम नागेश्वर बन जावेगा.

तथा २– सीसेको कढाईमें पिघलाकर १ दिन भर केवडेके घोटेसे घोटते हुए नीचेसे आंच देते जाओ तो लाल भस्मका नागेश्वर बन जावेगा.

नागेश्वरभक्षणविधि २२– १ या १½ डेढ रत्तीकी मात्रा २१ दिनपर्यंत दो तो समस्त रोग दूर होकर बलवृद्धि हो जावेगी.

बंगेश्वरनिर्माणविधि १– रांगेको कढाईमें चढाकर नीचेसे आंच देते जाओ और इसपर चौथाई पीपलकी छाल और चौथाई इमलीकी छालका चूर्ण डालते हुए दो प्रहरपर्यंत करछुलीसे हिलाते जाओ पश्चात इसको समान हरतालके साथ खटाईमें खरल करके गजपुटमें फूंकदो तो शुद्ध बंगेश्वर बन जावेगा.

तथा २– पावभर रांगेको गलाकर गलनेपर उसमें पावभर पारा मिला दो और ढालकर पत्र बनालो नंतर एक कंडे (गोवरी) पर कसैलाका चूर्ण तथा चूर्णपर बेरांगेके टुकडे उनपर पुनः चूर्ण और चूर्णपर दूसरा कंडा जमाकर निर्वात स्थानमें गजपुटसे फूंक दो तो बेरांगेके टुकडे श्वेत भस्म होकर फूल जावेंगे यही बंगेश्वर रस कहते हैं. (बजन पूरा उतरना चाहिये).

बंगेश्वरभक्षणविधि २३– १ रत्ती बंगेश्वरकी मात्रा खिलाओ तो वीर्यको अति दृढता और शरीरको पराक्रम प्राप्त होगा.

कांतिसारनिर्माणविधि १– गजवेली लोहचूरको आकके दूधकी ७, थूहरके दूधकी ७, त्रिफलाके रसकी ७, और अनारपत्रके रसकी ७ पुटें देदेकर प्रति पुटपर भस्म करते जाओ नंतर खरल करके जलपर तैराओ तो उत्तम कांतिसार बन जावेगा.

तथा २– गजवेलि लोहचूर्णको नौसादर और नींबूके रसकी २१ पुटें देदेकर प्रति पुटपर गजपुटमें फूंकते जाओ तो उत्तम कांतिसार बन जावेगा.

कांतिसारभक्षणविधि २४– जो इसकी १ रत्तीकी मात्रा दो तो श्वास, कास, क्षयी आदि सर्व रोग दूर करके कांति बढावेगा.

सोनामक्खीभस्मविधि १– सोनामक्खीको कुल्थीके क्वाथ, या तेल, या छाछ, या बकरीके दूध (इनमेंसे किसीएक)में खरल करके गजपुटमें फूंक दो तो सोनामक्खीकी शुद्ध भस्म हो जावेगी.

सोनामक्खीभक्षणविधि– जो इसकी १ रत्तीकी मात्रा दो तो प्रमेहादिक विकारभी दूर हो जावेंगे.

अभ्रकनिर्माणविधि १– श्याम अभ्रकके पत्र महीन पीसकर सुखादो और कम्बलके टुकडोंपर डालकर तण्डुल जलके साथ मसल मसलके पानी निकालते जाओ नंतर आकके दूधमें खरल कर टिकियाको सुखालो और आकके पत्तोंमें लपेटकर कपडमिट्टी करके फूंक दो इसीप्रकार आकके दूधकी ७, थूहरके दूधकी ७, गवांरपाठेके रसकी ७ पुटें दो नंतर चौलाईके रस, या नागरमोथाके क्वाथ, या कांजी, या चित्रकके क्वाथ, या जमीरीके रस, या त्रिफलाके रस, या गोमूत्रकी ७ पुटें देकर पश्चात् वडके जटाके क्वाथकी ७ और मजीठके क्वाथकी ७ पुटें दो इसी विधिसे प्रतिपुटपर फूंकते जाओ तो उत्तम अभ्रक बन जावेगा.

तथा २– श्वेत अभ्रकके पत्रोंपर समान गुड पानीमें गलाकर गाढासा लगादो और इसके साथही अभ्रकसे आधे शोरेका चूर्ण उन पत्रोंपर भुरकाके एकपर एक ऐसी घिडीसी बनालो नंतर इस घिडीको जंगली कंडोकी आंचमें फूंकके निश्चंद्र (चमकरहित) होनेतक फूंकते जाओ तो अभ्रकभस्म बन जावेगी.

अभ्रकभक्षणविधि २५– एक या दो रत्ती अभ्रक दो मांसपर्यंत सेवन कराओ तो प्रमेहादि अनेक रोग दूर होकर शरीर पुष्ट और नपुंसकताका नाश हो जावेगा. इन दोनों विधियोंमें प्रथम श्रेष्ठ और द्वितीय उससे कुछ न्यूनतालिये रहेगा.

हरतालभस्मनिर्माणविधि १– पीली हरतालको दूधीके रसमें दो दिन और खरेंटीके रसमें खरल करके गोला बनालो इसे छायामें सुखाकर पलासकी राखके बीच हंडीमें दबादो उस हंडीको चूल्हेपर चढाकर प्रथम मंद फिर मध्यम नंतर विशेष आंचदो आंच देते समय इसमेंसे धुवां न निक-

लने पावे जो निकलेभी तो छिवला (पलास-खांकर)की राखसे मूंदते जाना चाहिये. इसीप्रकार ३ दिन पर्यंत आंच देकर स्वांग शीतल हो जानेपर निकालले तो निर्धूम श्वेत वर्ण और बोझमें पूर्ववत् होकर शुद्ध हरतालभस्म हो जावेगी.

तथा २– पीली हरतालको गवांरपाठेके रसमें ३ दिन खरल करके टिकिया बनाकर छायामें सुखालो और छिवलेकी राखके मध्य हंडीमें दबाकर ४ प्रहरकी आंच दो और स्वांग शीतल होनेपर निकालो तो श्वेत, निर्धूम तथा बोझमें पूरी होकर उत्तम हरतालभस्म बन जावेगी.

तथा ३– पीली हरतालको दशमांश सुहागेके साथ चौघडी कपडेकी पोटलीमें बांधकर जमीरीके रसमें, कांजीमें, पेठेके रसमें और त्रिफलाके रसमें डोलायंत्रसे प्रतिरसमें दो दो प्रहरपर्यंत आंचदो नंतर खटाईसे धोकर पलासके रसके साथ २ दिनपर्यंत खरल करो और गोला बनाकर धूपमें सुखालो इस गोलेके सरावसम्पुटसे गजपुटमें फूंकके स्वांग शीतल होनेपर निकालले पुनः बकरीके दूधसे १ दिन खरल करके गोला बनालो और धूपमें सुखाकर ४ सेर पलासकी राखके मध्य हंडीमें दाबदो इस हंडीको चूल्हेपर चढाकर ३२ प्रहरकी आंचदो आंच देते समय धूवांको पलासकी राखसे मूंदते जाओ और स्वांग शीतल हो जानेपर निकालो तो श्वेत, निर्धूम, और बोझमें पूरी उत्तम हरतालभस्म बन जावेगी.

हरतालभस्मभक्षणविधि २६– हरताल भस्मकी १ रत्ती पानके साथ दो तो कुष्ट आदि समस्त रोग दूर होकर अतिशय बलप्राप्ति होगा इस भस्मपर मोठ और चनेकी अलोनी रोटी पथ्य हैं.

चन्द्रोदयनिर्माणविधि १– १ टकेभर स्वर्णपत्र, ८ टकेभर पारा, और १६ टकेभर गंधकको नंदनवन (कपास)के फूलोंके रसमें ३ दिन और गवांरपाठेके रसमें ३ दिन खरल करके सुखालो और इसे आतशी (दृढ) शीशीमें भरके कपडमिट्टीके सात पुट देके सुखालो नंतर शीशीका मुख बंद करके वालुका यंत्रसे ३२ प्रहर आंच दो जो स्वांग शीतल हो जानेपर निकालो तो हिंगुल सदृश लाल वर्णका चन्द्रोदय बन जावेगा.

चन्द्रोदयभक्षणविधि २७– १ रत्ती चन्द्रोदयकी मात्रा जायफल, भीमसेनी कपूर, समुद्रशोष, लौंग और कस्तूरीके चूर्णके साथ देके ऊपरसे मिश्रीयुक्त औंटा दूध पिलाओ तो नपुंसकता दूर होकर विशेष मैथुन शक्ति प्राप्त होगी. इसका भक्षण प्रभात या रात्रिको तथा सेवन पर्यंत पौष्टिक पदार्थोंका ग्रहण और खटाई आदि कुपथ्यका त्याग रखना चाहिये.

रससिंदूरनिर्माणविधि १– ५ टंक पारा, ५ टंक गंधक, २ टंक नौसादर, और २ टंक फिटकरीको ३ दिन खरल करके आतिशी (दृढ) शीशीमें भरो और कपडमिट्टीके सात पुट देकर वालुका यंत्रसे ३२ प्रहरकी आंच दो नंतर शीतल होजानेपर शीशीमेंसे निकाललो वह रससिंदूर बन जावेगा. इसे हरगौरीरसभी कहते हैं.

तथा २– पारे और गंधकको वडकी जटाके रसमें १ दिन खरल करके दृढ शीशीमें भरदो इस शीशीको सात कपडमिट्टीमें लपेटकर वालुका यंत्रसे २१ प्रहरकी आंच दो तो हिंगुलके सदृश लाल वर्णका रससिंदूर बन जावेगा.

रससिंदूरभक्षणविधि– १ रत्ती रससिंदूरकी मात्रा पानके साथ खिलाओ तो सर्व रोग दूर होकर अति पुष्टता प्राप्त होगी.

पारदभस्मनिर्माणविधि १– पारेको गूलरके दूधमें प्रहर खरल करके गोली बनाओ नंतर हींगको गूलरके दूधमें पीसकर २ मूंस (घरिया) बनाओ इन दोनों मूसोंके भीतर गोली रखकर बंद करदो और सुखाकर १ सेर कंडोंकी भभूदर (आग)में फूंक दो नंतर स्वांग शीतल होजानेपर निकालली तो सुंदर पारदभस्म बन जावेगी.

तथा २– पारेको गूलरके दूधमें खरलकर गोली बनाओ और आधेझारेके बीजोंके चूर्णकी २ मूंसें बनाकर इन दोनोंमें दडघलपुष्प, वायविडंग और खैरके चूर्णके मध्य पारेकी गोली धर दो नंतर मूंसको भलीभांति बंद करके कोयलोंकी आंचमें माथी (धमन)से धोंकदो फिर इस मूंसपर कपडमिट्टी देकर गजपुटमें फूंक दो तो श्वेत शुद्ध और तोलमें पूर्ववत् उत्तम पारदभस्म बन जावेगी.

पारदभस्मभक्षणविधि— यह पारदभस्म जुदे जुदे अनुपानोंसे समस्त रोगोंको निवृत करती है इस सर्वोत्तम रसके सेवनसे बल, वीर्य, और तेज बढकर दिव्य देह हो जाती है.

वसंतमालतीरसनिर्माणविधि १— १ मासे स्वर्णपत्र, २ मासे मोती, ३ मासे हिंगुल, ४ मासे मिरच, ८ मासे सूरती खपरा, और ८ मासे चांदी लेकर खपरेको गोमूत्रमें दोलायंत्रसे १६ प्रहर पकाओ और सर्व पदार्थ मक्खनके साथ खरल करके माखन सूखके चिकनाहट दूर हो जानेपर टिकिया बनालो यह वसंतमालतीरस बन जावेगा.

वसंतमालतीभक्षणविधि— १ रत्ती वसंतमालनीकी मात्रा २ पिम्पली और मधुके साथ नित्य दो तो विषमज्वरादि समस्त रोग दूर होकर शरीर पुष्ट हो जावेगा.

हिंगुलभस्मनिर्माणविधि १— ४ पैसेभर हिंगुलको छोटी कढाईमें रखकर आंच देतेहुए २ सेर नीबूका रस और ३ सेर कांदे(प्याज)का रस डालकर शनैः शनैः सुखादो नंतर इस डलीको १ सेरभर कांदेकी लुब्दी मध्य कडाहीमे रखकर पकाओ फिर १ सेर कुचला, १ सेर राई, १ सेर मालकांगनी, १ सेर कांदा, १ सेर घी और १ सेर मधु इनको कूट पीसकर लुब्दा बनाओ इस लुब्देमें वह हिंगुलकी गोली रखकर ८ प्रहर आंच दो तो लालवर्ण, निर्धूम और बोझमें पूरी हिंगुलभस्म होगी.

हिंगुलभक्षणविधि— १ या आधी रत्ती हिंगुलभस्म पानके साथ दो तो सर्व रोग दूर होकर भूख और पुंसत्वशक्तिकी विशेषता होगी.

दशमूलासवनिर्माणविधि १— पैसे पैसेभर शालपर्णी, पृष्टपर्णी, दोनों कटियाली, गोखरू, बील, अरणी, अरलु, कुंभेर और पाडलकी जडें. २५ पचीस टकेभर चित्रक, पोकरमूल. वीस वीस टकेभर लोद, और गिलोय. १६ टकेभर आंवला. १२ बारह टकेभर धमासा, खैरसार, विजयसार, और हरेकी छाल. ८६ टकेभर कूट. २ दो टकेभर मजीठ, देवदारु, वायविडंग, भारंगी, कैथ, बहेडेकी छाल, साठीकी जड, छड, पद्मकाष्ट, नागकेशर, नागरमोथा, प्रियंगुपुष्प, चव्य, काला जीरा, गौरीसर, निसोत, सम्भालु, रा-

स्ना, पीपल, सुपारी, कपूर, सौंफ, हल्दी, इन्द्रयव, कांकडासिंगी, विषम मेद, महामेद, क्षीरकाकोली, काकोली, रिद्धि और वृद्धि. ६० टकेभर दाख, ३२ टकेभर मधु, पांच ५ सेर धावडेके फूल, बेरकी झडी और बौलकी छाल इन सर्व पदार्थोंका ८ गुणें जलमें औंटाकर चतुर्थांश रखलो या सबको कूटकर जलके साथ १ बडे मटकेमें डालदो और इसीमें पक्के मनभर गुड डालकर मुंह भलीभांति बंद करदो नंतर इस मटकेको खातकी धरतीमें गाडकर २१ दिन पश्चात् दो दो टकेभर खश, चंदन, जायफल, लौंग, दालचिनी, इलायची, पत्रज, केशर, पीपल और ४ मासे कस्तूरीके चूर्णकी पोटली मद्य उतारनेके यंत्रकी नलीके मुखपर धरके इसी यंत्रमें उस मटकेका पदार्थभी डाल दो नंतर मद्य उतारनेकी विधिसे इसका आसव उतारकर शुद्ध पात्रमें धरलो.

आसवभक्षणविधि— जो पुराना आसव मदात्यय प्रकरणमें लिखी हुई विधिसे सेवन कराओ तो क्षयी, छर्दि, पांडुरोग, शूल, अरुचि, संग्रहणी, काश, श्वास, भगंदर, कुष्ट, अर्श, प्रमेह, अश्मरी, मंदाग्नि, मूत्रकृच्छ्र, नपुंसकत्व, उदररोग और सर्व वातरोग नाश होकर क्षुधा, वीर्य, पुष्टता और बलकी विशेष वृद्धि होगी.

मूसलीपाकनिर्माणविधि १— पावभर श्वेत मूसली, दो दो टकेभर केवचबीज, विदारीकंद, गोखरू, शतावरी, एक एक टकेभर सोंठ, तज, गंगेरणकी छाल और खरेंटीके बीज इन सबका चूर्ण ३२ टकेभर घीमें तलकर १० सेर दूधके साथ औंटाओ नंतर इस चूर्णसहित दूधका खोवा बनाकर ७ सेर शक्करकी चासनीमें डालदो और इसीके साथ दो दो टकेभर मिर्च, पीपल, सोंठ, दालचिनी, पत्रज, नागकेशर, जायफल और जायपत्री. एक एक टकेभर लौंग, इलायची और वंशलोचन. ४ मासे कस्तूरी तथा थोडे थोडे वंगेश्वर, अभ्रक, मृगांक, हरगौरी आदि रस और इच्छापूर्वक खारक, बदामादि पौष्टिक फल (मेवा)भी इसीमें मिलादो पश्चात इन सबको भलीभांति एक जीव करके टके प्रमाणकी गोलियां बांधलो. जो इसमेंसे १ गोली प्रभात और १ संध्यासमय प्रतिदिन खिलाओ तो प्रमेहादिक सर्व रोग दूर होकर शरीर पुष्ट होवेगा.

यवाक्षारनिर्माणविधि— गर्भ (गवोट) पर आये हुए जौं (यव) काट काट-कर सुखालो उन्हें जलाकर सजीव राखको २ दिन पर्यंत पात्रमें भिंगो रखो नंतर उस जलको वस्त्रसे छानकर औंटाओ जब आंच देते देते सर्व जल उडकर तलीमें नोंनके समान खार जम जावे उसे निकाललो यही यवक्षार (जवाखार) बन गया.

चणक्षारनिर्माणविधि १— माघ मासमें तीन चार घडी पिछली रात्रि रहे चनेके खेतपर महीन वस्त्र चतुराईसे फेरो जिसमें वह चनेके वृक्षोंपर पडी हुई क्षारयुक्त ओससे भींग जावे नंतर इस वस्त्रको सुखाकर इसी भांति १५ दिन-पर्यंत भिंगाते सुखाते जाओ अंतको पानीमें मसकर छानलो और औंटा-कर गाढा करलो तो अति खट्टा उत्तम चनाखार बन जावेगा.

विशेषतः— उपरोक्त विधियोंसे औरभी भस्म, आसव, पाक और क्षार आदि पदार्थ निर्माण कर सकोगे.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे क्लीबरोगयत्ननिरूपणं नाम त्रिचत्वारिंशस्तरङ्गः ॥ ४३ ॥

॥ विषरोग ॥

द्विविधस्य विषस्यात्र स्थावरस्यास्थिरस्य च ।
चिकित्सा सिन्धुवेदेऽस्मिन् तरंगे कथ्यते मया ॥ १ ॥

भाषार्थः— अब हम इस अंतके चवालीसवें तरंगमें स्थावर और जंगम दोनों प्रकारके विषोंकी चिकित्सा वर्णन करते हैं.

स्थावरविषरोगयत्न १— स्थावरविष खानेवालेको वमन कराओ, या घृत मधुके साथ शीतल यत्न करो, या साठी चांवलको दो और सेंधानोंन खिलाओ और खट्टे तीक्ष्ण पदार्थोंका बचाव रखो तो विष उतर जावेगा.

तथा २— प्रियंगुपुष्प, कागनीका पंचांग और सिरसका पंचांग गोमूत्रमें पीसकर लेप करो तो विष उतर जावेगा.

तथा ३— पीपल, छड, लोद, इलायची, काली मिरच, नेत्रवाला और सोनगेरूको जलमें पीसकर लेप करो तो दूसी विष उतर जावेगा.

तथा ४– चौंलाईकी जडको तण्डुल जलमें पीसकर पिलाओ तो स्थावर विष उतर जावेगा. ये सर्व यत्न भावप्रकाशमें लिखे हैं.

तथा ५– हल्दीको दूधमें पीसकर मिश्रीके साथ पिलाओ तो कन्हेरका विष उतर जावेगा.

तथा ६– चौंलाईकी जड या कपासका पंचाङ्ग या गिलोयको जलमें पीसकर पिलाओ तो धतूरेका विष उतर जावेगा.

तथा ७– तिल और दूबको बकरीके दूधमें पीसकर लेप करो तो अ-कावका विष उतर जावेगा.

तथा ८– घृतका मर्दन करो तो कैंवचकी खुजाल मिट जावेगी.

तथा ९– १०० वार धोयेहुए घृतका मर्दन करो तथा चिरोंजी या ना-रियलकी गिरी पीसकर मर्दन करो तो भिलावांका विष उतर जावेगा.

जंगमविषयत्न १– हरेंकी छाल, गोरोचन, अर्कपुष्प, कमलनाल, नर-सलकी जड, वेतकी जड, तुलसी, इन्द्रयव, मजीठ, जवासा, शतावरी और सिंघाडेके क्काथमें गोघृत पकाकर समान मधुके साथ शरीरमें मर्दन करो, या खिलाओ, या नास दो तो (सर्प्पादि) विषमात्र उतर जावेंगे. यह मृत्युपासछेदि घृत भावप्रकाशमें लिखा है.

तथा २– घृत, मधु, मक्खन, पिम्पली, अद्रक, मिर्च और सेंधेनोंनको जलमें पीसकर पिलाओ तो काले सर्पका विषभी उतर जावेगा.

तथा ३– सहजनेके बीजोंको सिरसके फूलोंके रसकी ७ पुटें देकर अं-जन दो तो सर्पदंश शांत हो जावेगा.

तथा ४– पुष्यार्क (पुष्य नक्षत्रसे सम्बंधित सूर्य)के दिन लाईहुई श्वेत साठीकी जड, तण्डुल जलमें पीसकर पिलाओ तो सर्पका काटाहुआ विष उतर जावेगा.

तथा ५– जमालगोटेकी विजीको नीबूके रसकी ७ पुटें और लाखके रसकी १ पुट देकर धूपमें सुखालो नंतर पीसकर अंजन करो तो सर्पका विष उतर जावेगा.

तथा ६– जमालगोटा पानीके साथ, या नौसादर और हरताल पानीके

साथ, या पलासपापडा अकावके दूधके साथ, या सिरसके बीजे बकरीके दूधके साथ घिसकर विच्छूके डंक (घाव) पर लगाओ तो विच्छूका विष उतर जावेगा.

तथा ७– "ओं आदित्यरथवेगेन विष्णोर्बाहुबलेन च। सुपर्णपक्षपातेन भूभ्यां गच्छ महाविष ॥ क्रोपक्षजोगपदज्ञ श्रीशिवोत्तमप्रभुपदाज्ञा भूभ्या गच्छ महाविष" इस मंत्रसे डंकपर २१ वार झाडादो तो विच्छूका विष उतर जावेगा.

तथा ८– केशर, तगर और सोंठ जलमें पीसकर लेप करो तो मक्खीका विष उतर जावेगा.

तथा ९– सोंठ, कबूतरकी विष्ठा, हरताल और सेंधानोंन विजौरेके रसमें पीसकर लेप करो तो मधुमक्खीका विष उतर जावेगा.

तथा १०– धमासा, मजीठ, हल्दी और सेंधेनोंनको जलमें पीसकर लेप करो तो मूषक (चूहे) का विष उतर जावेगा.

तथा ११– थूहरके दूधमें सिरसके बीज पीसकर लेप करो तो मेंडक (मंडूक) का विष उतर जावेगा.

तथा १२– जलते हुए दीपकके तेलका लेप करो तो कनसला (कनखजूरा) का विष उतर जावेगा.

तथा १३– दंशित व्रणका रक्तमोचन कराओ. या उस व्रणको तप्त लोहेसे दग्ध करदो तो बावरे कुत्ते या स्यारका विष उतर जावेगा.

तथा १४– १ टकेभर धतूरेका रस, १ टकेभर अकावका रस और १ टकेभर घृत इन तीनोंको खरल करके लेप करो तो उन्मत्त स्वानका विष उतर जावेगा.

तथा १५– धतूरेके फल, चौंलाईकी जडके रसमें, या गोभी, या मधुके साथ पीसकर लेप करो तो बावरे कुत्तेका विष उतर जावेगा,

तथा १६– मक्खन, अकावका दूध, तेल, गुड और चाख्याका चूर्ण कर १ टकेभरकी गोलियां बनाओ और सात दिन पर्यंत १ गोली नित्य खिलाओ तो कुत्तेका विष उतर जावेगा.

तथा १७– चौमार्ग या नदीके तीरपर चौकेमें पवित्रतापूर्वक बैठकर

"अलकाधिपते यक्ष सारमेयगणाधिप। अलर्कजुष्टमेतंमे निर्विशं कुरु मा-चिरात् स्वाहा" इस मंत्रसे १०८ वार आहुती देकर रोगीको डाभसे झाडा दो तो बावरे कुत्तेका विष उतर जावेगा.

तथा १८– गुड, तेल और अकावको दूधमें मिश्रित कर लेप करो तो कुत्तेका विष उतर जावेगा.

तथा १९– मुर्गेकी विष्ठाका लेप करो, या गवारपाठेकी गिरी और सेंधानोंन ५ दिनतक व्रणपर बांधो तो कुत्तेका विष उतर जावेगा.

तथा २०– चौलाईकी जड, तुलसीकी जड, और बचको तण्डुल जलके साथ पीसकर सात दिन पिलाओ तो कुत्तेका विष उतर जावेगा.

तथा २१– चौलाईकी जड और चोरबको घृतमें पीसकर ७ दिनपर्यंत पिलाओ तो कुत्तेका विष उतर जावेगा.

तथा २२– चार टंक कडवी तुंबीकी जड, चार टंक सोंठ, ४ टंक नीमके फल, ८ टंक शुद्ध जमालगोटा, ७ टंक निसोत और ४ टंक मिर्चका चूर्ण गुडमें मिलाकर २ टंक प्रमाणकी गोलियां बनालो और १ गोलि नित्य खिलाओ तो ७ या १४ दिनमें स्वानविष उतर जावेगा.

तथा २३– कडवी तुंबीकी जड, हिंगुल, शुद्ध जमालगोटा, मिर्च और फूले हुए सुहागेको चौलाईके रसमें खरल करके २ रत्ती प्रमाणकी गोलियां बनाओ जो १ गोली मूत्रसे घिसकर दंशव्रणपर लगाओ और १ गोली जलके साथ खिलाओ तो ७ दिनमेंही मूत्रके साथ कृमि गिरकर उन्मत्त स्वानका विष उतर जावेगा.

इति नूतनामृतसागरे चिकित्साखंडे विषरोगयत्ननिरूपणं नाम चतुश्चत्वारिंशस्तरङ्गः ॥ ४४ ॥

मुन्यब्धिनन्दचन्द्रेऽब्दे मार्गशीर्षेऽसिते दले।
पञ्चम्यां विधुवारे च ग्रंथः पूर्णमगादयम् ॥ १ ॥

**समाप्तोयं ग्रन्थः।**

---

१ ये सब चिकित्सा बावरे कुत्ते (उन्मत्त स्वान)के काटनेपर हैं. सामान्य कुत्तेके काटनेसे विष नहीं चढता.

## अन्तिमप्रस्ताव.

उस जगद्वैद्य परिब्रह्म परमेश्वरको असंख्यात् प्रणामके पश्चात् श्रीधन्वंतरि सुश्रुतादि महर्षियोंको निरंतर धन्यवाद है कि जिनकी महद्कृपाकटाक्षसे आजदिन यह "नूतनामृतसागर" सरल नागरीभाषामें बनकर सिद्ध हो गया.

इस ग्रंथके निर्माणका मुख्योद्देश यही रखा गया है कि हमारे वहुतिक भारतनिवासी जन जो विदेशनिर्मित औषधियोंको पवित्रापवित्रका विचार त्याग गंगोदक सदृश मान्यपूर्वक पानकर स्वधर्मच्युत होते हैं सो स्वहस्त तथा स्वदेश निर्मित औषधियोंका सेवन और विदेशियोंका परित्याग कर अपने शिखा व सूत्रका अभिमान रखें.

इस विषयमें अनेक महात्माओंको यही विचार दृढ हो गया है कि भारतीय चिकित्सासे हमारे विकार बढकर विदेशी चिकित्सासेही हम आरोग्य होवेंगे; परन्तु यह नहीं विचारते कि प्रत्येक देशकी वस्तुऐं वहांके जल पवनकी अनुकूलताके कारण वहीं वालोंको गुणदायक होती है सो भारतोद्भव पदार्थ हमें तथा विदेशोद्भव विदेशियोंकोही लाभकारी होवेंगे. चाहे वे लोग यही जानते होंगे कि संस्कृत आयुर्वेदीय ग्रंथोंमें शस्त्रक्रिया हैही नहीं. उन महात्माओंसे सविनय निवेदन है कि वे शस्त्रक्रिया (चीरफाडका काम) देखना चाहें तो "सुश्रुत"को देख स्व भ्रमोच्छेदन कर लेवें कि इस ग्रंथमें शस्त्रक्रियाका विधान कैसे उत्तम प्रकारसे लिखा है जो वर्तमानिक चमकीली कलाको लज्जित करता है और महत्से क्षुद्रपर्यंत ऐसा कौन रोग है जो निदान, चिकित्सासहित हमारे संस्कृत आयुर्वेदीय ग्रन्थोंमें नहीं और विदेशीय ग्रंथोंमें वर्णन किया गया हो.

तद्पश्चात् वैद्यविद्या रहित मूर्ख वैद्य और मूर्खा स्त्रियोंको शिक्षा है कि आपलोग अपनी कपोल कल्पित चिकित्साद्वारा स्वदेशी वैद्यकसे विचारे नवशिक्षित रोगियोंका विश्वास उठाकर इस भारतको धर्म और धनसे क्यों हीन करे देते हैं, अबतक तो आपलोग कहते थे कि संस्कृतमें सब कुछ है सो हम क्या करें नागरीमें तो कोई ग्रंथही नहीं जिसके आधारसे हम चिकित्सा कर सके. पर अब यह "नूतनामृतसागर" आपही लोगोंके मिष (बहाने) मिटाने और उत्तेजन देकर स्वधर्मपूर्वक सरल मार्ग दर्शानेके हेतु निर्मित होकर प्रस्तुत है जो आपलोग ध्यानपूर्वक इसे देख सुनकर चिकित्सा करनेको कटिबद्ध होंगे तो शीघ्रही भारतके धर्म और धनकी रक्षा कर उपहास्यकारकोंके दांत खट्टे करनेमें कृतकृत्य होवेंगे.

अंतको समस्त विद्वज्जन मण्डलीसे उभय करसम्पुट कर प्रार्थना है कि इस ग्रंथमें जहां कहीं भाषादोष हुआ हो उसे मेरी क्षुद्रवुद्धि जान क्षमा करें.

सद्वैद्यानुयायी— दयाराम बालकृष्ण.
नागरी शिक्षक जिलास्कूल,
कामठी.